



CTET

CENTRAL TEACHER ELIGIBILITY TEST

बाल विकास

एवं

शिक्षा शास्त्र

**Text Book Approach to
Child Development & Pedagogy**

USEFUL FOR : DSSSB, REET, BTET, JTET,
CGTET, MPTET, UPTET, HTET, SUPER TET,
KVS एवं अन्य शिक्षक भर्ती परीक्षाओं के
लिए उपयोगी



17 CHAPTERS

Special Education



Himanshi Singh

Free में E-book ,Notes
Download करने के लिए
Youtube चैनल को 
Subscribe करे  **Subscribe**
CLICK HERE

हमारे Telegram चैनल से जुडने
यहाँ Click करे 



कोचिंग के नोट्स **TELEGRAM** पर मिलेंगे –

Telegram Channel कैसे Join करें –

- 1-गूगल प्ले स्टोर से Telegram App डाउनलोड करें
- 2-अपना मोबाइल नंबर डालकर telegram को चालू करें
- 3-फिर सर्च बार में बिना स्पेस दिए @SarkariPdf सर्च करें
- 4-और channel जो join पे क्लिक करके join करें
- 5-या फिर नीचे दिए link पर क्लिक करें

यहाँ पर CLICK करें



My Channel Logo

हमारे साथ सरकारी EXAM की तयारी करें

JOIN Telegram - [Click Here](#)



UPSC

CLICK HERE



UPPSC

CLICK HERE



CLICK HERE



CLICK HERE



CLICK HERE



CLICK HERE



CLICK HERE



CLICK HERE

जो भी Telegram पर चैनल को ज्वाइन करेगा उसको कोचिंग के नोट्स सभी फ्री में दिए जायेंगे

India का एक ऐसा
एकमात्र Youtube चैनल जो
Competition Exam के लिए
Free में Ebook और Notes
 **Provide करता है।**
जो गरीब बच्चे Book नहीं खरीद पाते।

Pdfking Youtube चैनल

चैनल पर जाने के लिए यहां Click करें



CTET

CENTRAL TEACHER ELIGIBILITY TEST

बाल विकास

एवं शिक्षा शास्त्र

**Text Book Approach to
Child Development & Pedagogy**

USEFUL FOR : DSSSB, REET, BTET, JTET,
CGTET, MPTET, UPTET, HTET, SUPER TET,
KVS एवं अन्य शिक्षक भर्ती परीक्षाओं के
लिए उपयोगी

17 CHAPTERS

Special Education



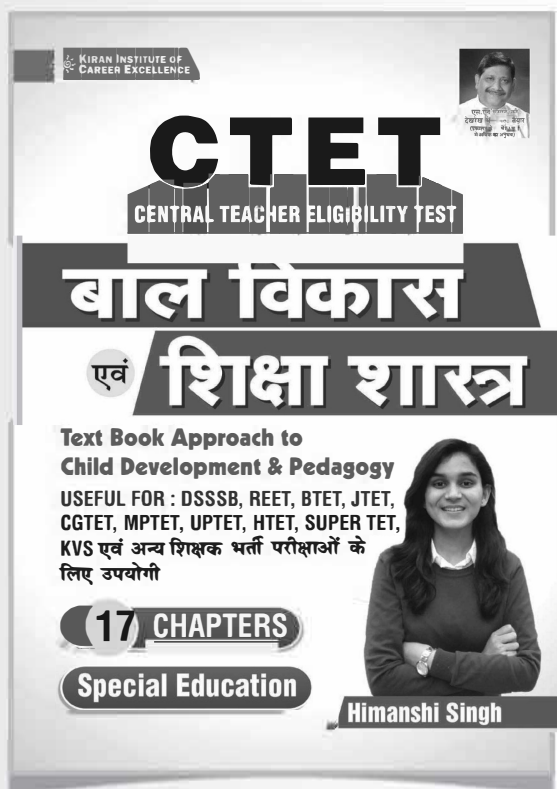
Himanshi Singh



KIRAN INSTITUTE OF CAREER EXCELLENCE PVT. LTD. (KICX), DELHI PRESENTS

RU-67, Pitampura, Delhi-110034, Ph.: 9821874015, 9821643815

www.kicx.in



New Edition

The copyright of this book is entirely with the Kiran Institute of Career Excellence Pvt. Ltd. The reproduction of this book or a part of this will be punishable under the Copyright Act.

All disputes subject to Delhi jurisdiction.

Every possible effort has been made to ensure that the information contained in this book is accurate at the time of going to press, and the publishers and authors cannot accept responsibility for any errors or omissions, however caused.

No responsibility for loss or damage occasioned to any person acting, or refraining from action, as a result of the material in this publication can be accepted by the editor, the publisher or any of the authors.

*Maps used in this book are not to scale
All Maps are Notional*

© COPYRIGHT
KIRAN INSTITUTE OF CAREER EXCELLENCE PVT. LTD.

COMPILED BY
Think Tank of KICX

EDITING
Dr. L.B. Singh

ASSISTANCE
Sanket Sah, Achal Gupta

DESIGN & LAYOUT
KICX COMPUTER SECTION, New Delhi.

KIRAN INSTITUTE OF CAREER EXCELLENCE PVT. LTD.
RU-67, Opposite Power House Pitampura,
Delhi-110034,
Ph. : 9821874015, 9821643815
E-mail: sanket2000_us@yahoo.com
www.kiranprakashan.org
www.kiranprakashan.com

अनुक्रमणिका

क्रम.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	मनोविज्ञान एवं शिक्षा मनोविज्ञान (Psychology & Education Psychology)	7-15
2.	प्राथमिक एवं प्रारंभिक स्कूली बच्चों का विकास (Primary & Elementary School Child Development)	16-30
3.	बुद्धि एवं सृजनात्मकता (Intelligence and Creativity)	31-43
4.	भाषा एवं विचार (Language & Thought)	44-52
5.	अधिगम : प्रक्रिया और सिद्धान्त (Learning : Process & Theory)	53-68
6.	शिक्षण प्रविधि एवं मूल्यांकन (Teaching Methodology & Evaluation)	69-86
7.	मनोभाव (संवेग) और अभिप्रेरणा (Emotion & Motivation)	87-100
8.	समावेशी शिक्षा की संकल्पना एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समझ (Concept of Inclusive Education and Understanding Children with Special Needs)	101-123
9.	तंत्रिका तंत्र और शिक्षा मनोविज्ञान (Nervous System and Education)	124-139

10.	मानसिक विकृतियाँ एवं मनोचिकित्सा (Mental Disorders and Psychotherapies)	140-159
11.	चिंतन एवं समस्या-समाधान (Thinking and Problem Solving)	160-167
12.	मानव स्मृति एवं विस्मृति (Human Memory & Forgetting)	168-177
13.	मार्गदर्शन और परामर्शन (Guidance & Counselling)	178-190
14.	व्यक्तित्व (Personality)	191-205
15.	मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध और सांख्यिकी का अध्ययन (Study of Research and Statistics in Psychology and Education)	206-217
16.	सामाजिक व्यवहार का मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological Base of Social Behaviour)	218-233
17.	भारतीय शिक्षा प्रणाली : इतिहास एवं नीतियाँ (Educational System in India : History and Policies)	234-256



पुस्तक के बारे में

किरण बाल मनोविज्ञान आपके हाथ में है। शिक्षकों की नियुक्ति सम्बद्ध पाठ्यक्रम में मनोविज्ञान (बाल मनोविज्ञान/शिक्षाशास्त्र) अनिवार्य रूप से रखा गया है। शिक्षकों की नियुक्ति सभी राज्य सरकारों की प्राथमिकता और विशेषता रही है। इसलिए **B.ED**, एकीकृत **B.Ed**, से लेकर **CTET, UP-TET, H-TET, MP-TET, Bihar-TET** और **REET** आदि शिक्षा संबद्ध सभी परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में एक तरह की समरूपता और एकात्मकता पायी जाती है। उदाहरण स्वरूप **CTET** के पाठ्यक्रम सम्बंधी मनोविज्ञान विषयान्तर्गत बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र में (प्राथमिक एवं प्रारंभिक स्कूली विद्यार्थी), समावेशी एवं विशेष शिक्षा, अधिगम, संवेग, अभिप्रेरणा, बुद्धि, भाषा एवं विचार, अधिगम के सिद्धान्त एवं विधियाँ, मूल्यांकन और पर्यावरण विज्ञान-सामाजिक विज्ञानों से संबंधित जो टॉपिक प्राधिकार द्वारा प्रदत्त है कमोवेस वे सभी टॉपिक अन्य सरकारों के सम्बद्ध अधिकरणों द्वारा शिक्षक नियुक्ति परीक्षा में पूछे जाते हैं।

इसी विषयवस्तु को ध्यान में रखकर हमने इस पुस्तक का विषयक्रम इस प्रकार रखा है :

1. मनोविज्ञान एवं शिक्षा मनोविज्ञान
2. प्राथमिक एवं प्रारंभिक स्कूली बच्चों का विकास
3. बुद्धि एवं सृजनात्मकता
4. भाषा एवं विचार
5. अधिगम : प्रक्रिया और सिद्धान्त
6. शिक्षण प्रविधि एवं मूल्यांकन
7. मनोभाव (संवेग) और अभिप्रेरणा
8. समावेशी शिक्षा की संकल्पना एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समझ
9. तंत्रिका तंत्र और शिक्षा मनोविज्ञान
10. मानसिक विकृतियाँ एवं मनोचिकित्सा
11. चिंतन एवं समस्या-समाधान
12. मानव स्मृति एवं विस्मृति
13. मार्गदर्शन और परामर्शन
14. व्यक्तित्व
15. मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध और सांख्यिकी का अध्ययन
16. सामाजिक व्यवहार का मनोवैज्ञानिक आधार
17. भारतीय शिक्षा प्रणाली : इतिहास एवं नीतियाँ

अंतः शिक्षण की शैली और सीखने की प्रवृत्ति अनुसार यथासंभव डायग्राम, ग्राफ्स, सारणी और रेखाचित्रों के माध्यम से प्रस्तुतीकरण को आकर्षक बनाया गया है। कुछ पारिभाषिक शब्दावलियों एवं पदों की प्रस्तुति बॉक्स के अन्दर भी ध्यातव्य रूप से दी गई है। चैप्टर वाइज प्रश्नों और उनकी व्याख्यात्मक उत्तर की प्रस्तुति इस पुस्तक की परीक्षोपयोगी विशेषता है। इससे प्रतियोगी विद्यार्थी अपनी मनोविज्ञान सम्बन्धी समझ की कसौटी व बेसलाइन भी मान सकते हैं, क्योंकि ये प्रश्न (25) संख्या में थोड़े कम लग सकते हैं किंतु प्रदत्त प्रश्न पाठ्यक्रमानुसार और सटीक व्याख्यानुसार दिए गए हैं। पुस्तक पढ़ने-पढ़ाने के दौरान शिक्षक और विद्यार्थी स्वयं के मनोविज्ञान की जांच-परख भी कतिपय अध्यायों के आलोक में कर सकते हैं जैसा की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 के दर्शन में वांछित है।

—प्रकाशक

उतिष्ठत।

utisthata

जाग्रत।

jāgrata

प्राप्य

prāpya

वरान्निबोधत।

varānnibodhata

Arise!

Awake!

**And stop not till
the goal is reached.**



- Swami Vivekanand

मनोविज्ञान एवं शिक्षा मनोविज्ञान (Psychology & Education Psychology)

मनोविज्ञान मन (Mind) का विषय है। विशेष ज्ञान को विज्ञान कहते हैं। मन-मस्तिष्क से सारे व्यवहार निर्देशित होते हैं। इसीलिए मनोविज्ञान व्यवहारों का अध्ययन करने वाला विज्ञान है। यह दो शब्दों Psyche + logos अर्थात् आत्मा का अध्ययन से बना है।

हम मनोविज्ञान क्यों पढ़ते हैं, यह वह पहला प्रश्न है, जिसे व्यक्ति को स्वयं से पूछना चाहिए। मनोविज्ञान प्राणियों के व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है। कुछ लोग सोचते हैं कि मनोवैज्ञानिक लोगों की आवश्यकताओं को समझ नहीं पाते पर वास्तव में वे सभी बातों और व्यवहार का अवलोकन करते हैं। अपने अवलोकनों से, वे व्यवहार के कारणों का पता लगाने की कोशिश करते हैं। सभी प्रकार की शारीरिक और मानसिक क्रियाएँ व्यवहार के ही रूप हैं। इसी कारण व्यवहार को व्यवस्थित करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने इसे चार व्यापक कारकों में विभाजित किया है—

(1) शारीरिक कारक—जैसे शरीर का आकार, लिंग, रूप रंग, जन्मजात गुण, पैतृक विशेषताएँ किसी के व्यवहार के शारीरिक या भौतिक पक्षों में सम्मिलित होती हैं।

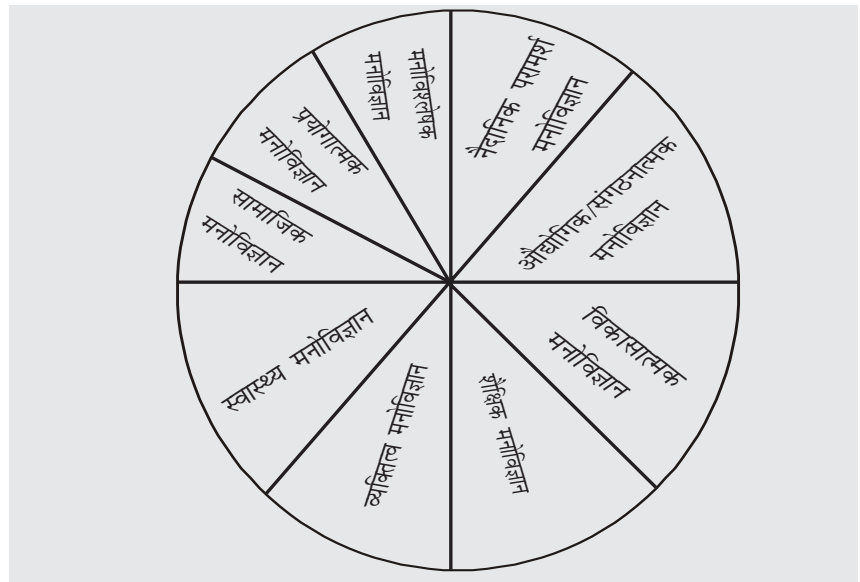
(2) संज्ञानात्मक कारक (बौद्धिक या विचार)—ये क्रियाकलाप कारण पूछने, समस्याओं का समाधान करने, नए व्यवहार को समझने और एक-दूसरे से संप्रेषण करने में सहायक हैं। ये उदाहरण मानव के व्यवहार के विचारणीय पक्ष हैं।

(3) भावनात्मक कारक—गुस्सा, डर और प्रेम आदि भाव महसूस करने वाली स्थितियाँ भावनात्मक व्यवहार के प्रकार हैं।

(4) सामाजिक और वातावरणीय कारक—ये हमारे व्यवहार को बनाते हैं। जैसे कि हम कैसे समाज में रहते हैं, हमारे परिवार का माहौल कैसा है, हम पर कौन-कौन से बाहरी प्रभाव पड़ते हैं क्योंकि मानव सामाजिक पशु है और ये कारक हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उपरोक्त चारों क्षेत्र एक-दूसरे पर निर्भर हैं। उदाहरण के लिए—समाज में भौतिक रूप से व्यवहार करते हुए हम एक ही समय पर अनेक कार्य भी करते हैं और सोचते भी हैं।

मनोविज्ञान की अन्तर्विषयी प्रकृति और कुछ प्रमुख शाखाओं को निम्नलिखित वृत्तचार्ट से दर्शाया जा सकता है :



शैक्षिक मनोविज्ञान

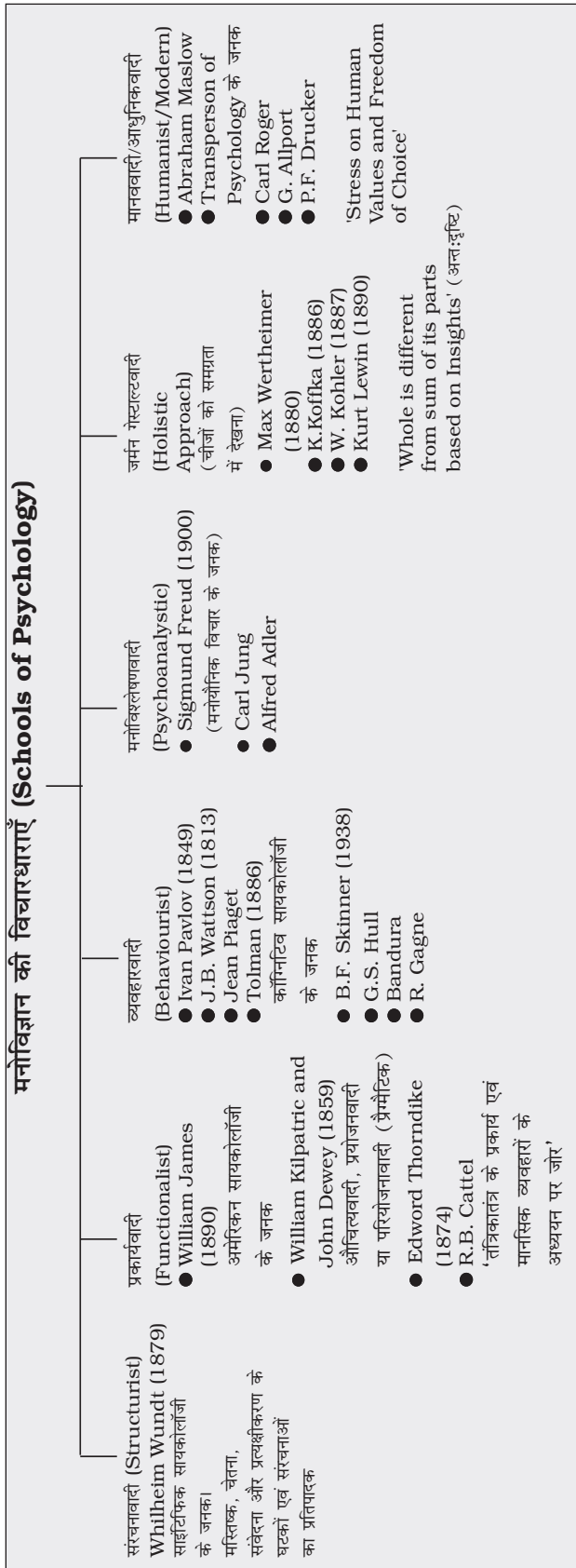
यह किए गए अध्ययन को समझने और बुद्धि को जीवन की वास्तविक व्यवहार में लाने आदि पर केन्द्रित है। यह जीवन भर व्यक्तिगत प्रगति और व्यवहारात्मक परिवर्तन पर केन्द्रित रहता है। शैक्षिक मनोविज्ञान का उद्देश्य प्रक्रिया और शिक्षा के उत्पादों को बेहतर बनाना है।

चाहे आप मनोवैज्ञानिक हों, परामर्शदाता हों या शैक्षणिक और व्यवसायिक मार्गदर्शन सलाहकार आदि के तौर पर कार्य करते हों आप अपने प्रयत्नों हेतु आय की माँग कर सकते हैं। मनोविज्ञान के चार महत्वपूर्ण उद्देश्य मनोवैज्ञानिक पूरा करते हैं—

(1) अपने लिए व्यवहार की मूलभूत जानकारी को प्राप्त करना : परामर्शदाता/विशेष अध्यापक/मनोवैज्ञानिक/शैक्षणिक और व्यवसायिक मार्गदर्शन सलाहकार के कार्य को जानना उत्सुकतापूर्ण है। लोगों को क्या प्रोत्साहित करता है?

- दृष्टिकोण कैसे बनते हैं?
- आयु बढ़ने के साथ-साथ लोग किस तरह बदलते हैं?
- व्यक्तित्व का निर्माण कैसे होता है?

मनोविज्ञान की विचारधाराएँ (Schools of Psychology)



- वे हमेशा पहले क्या और कैसे पूछते हैं न कि क्यों। वे महत्वपूर्ण संबंधों और व्यवहार के कारणों को पता लगाते हैं।

(2) विशेष परिस्थितियों में मूलभूत जानकारी का अनुप्रयोग करना : उदाहरण स्वरूप, वास्तुकार अब भवन का निर्माण लोगों के व्यवहार को ध्यान में रख कर करते हैं न कि आकर्षण और लागत के अनुसार। अध्ययन की प्रभावी तकनीकों के विकास में अध्ययन के नियमों की महत्वपूर्ण भूमिका है। विकासात्मक मनोविज्ञान में अनुसंधान बच्चों की परिवार को बेहतर बनाने में सहायक है।

(3) बच्चों में मानसिक और भावनात्मक समस्याओं हेतु मूलभूत जानकारी प्रदान करना : जीवन में कई बार बच्चों को मानसिक या भावनात्मक समस्याओं से गुजरना पड़ता है। अधिकतर बच्चों की समस्या चिकित्सक या मार्गदर्शक या विशेष शिक्षकों द्वारा हल की जा सकती है। इस क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण बात यह होती है कि मानसिक और भावनात्मक रूप से टूटने से बचने के लिए मनोविज्ञान 'पूर्व चेतावनी प्रणाली' प्रदान कर सकता है।

उदाहरणस्वरूप—विद्यालय में विद्यार्थियों की विशेष आवश्यकताओं को देखते हुए विशेष शिक्षक उनकी मदद करते हैं और विशेष सहायता देते हैं।

(4) सामाजिक समस्याओं के लिए मूलभूत जानकारी का प्रयोग करना : उन मनोवैज्ञानिक कारकों पर काफी अनुसंधान किए गए हैं जो बच्चों में क्रोध और हिंसा या डराने व धमकाने की प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं।

विद्यालय के परामर्शदाता बच्चों के परिवार को परामर्श देकर रचनात्मक भूमिका निभाते हैं।

शैक्षिक मनोविज्ञान का अध्ययन करने का मुख्य कारण व्यवहार के त्रुटिपूर्ण प्रचलित कारणों को सुधारना है। उदाहरण के लिए—एक प्रचलित मत है कि "विशेष जरूरतों वाले बच्चे लाभकारी नहीं होते।" विशेष विद्यालयों और स्वतंत्र संगठन का सफल चल पाना अनसुनी कहानियों को व्यक्त करता है।

मनोविज्ञान के सिद्धांत

मनोविज्ञान पढ़ने की आवश्यकता क्यों है? हम कभी-कभी लोगों को कहते देखते हैं कि यह केवल सिद्धांतों का समूह मात्र है। मनोविज्ञान के कई सिद्धांत हैं। यदि कोई सिद्धांत तय नहीं होंगे, तो व्यवहार का अध्ययन करने में बहुत कम प्रगति हो पाएगी।

आधुनिक मनोविज्ञान की मुख्य विचारधाराएँ व उपागम—

(1) बाहर से व्यवहार का अध्ययन करना (प्रकट व्यवहार)

इस दृष्टिकोण को व्यवहारवाद कहा जाता है। इस कार्य को सबसे उत्कृष्ट ढंग से बी.एफ. स्किनर ने दर्शाया है। व्यवहारवाद व्यवहार को बनाने में पर्यावरण की भूमिका पर बल डालता है।

(2) अंदर से व्यवहार का अध्ययन करना (अप्रकट व्यवहार)

मनोवैज्ञानिक इसकी गैर मापन योग्य व मापन योग्य दोनों तरीकों

से जाँच करते हैं। यह आमतौर पर **संज्ञानात्मक** मनोविज्ञान की दृष्टि है। इस विचारधारा के मुखिया जीन प्याजे हैं, जिन्होंने बच्चों में सोचने की शक्ति के विकास पर अध्ययन किया है।

(3) व्यवहार के भागों का अध्ययन करना

यह भौतिक मनोवैज्ञानिकों और कुछ प्रज्ञ सिद्धांतवादियों का तरीका है। वे **अनुभवों** को सरल भागों में विश्लेषित करते हैं और फिर प्रत्येक भाग का अध्ययन करते हैं।

(4) संपूर्ण व्यवहार का अध्ययन

यह संपूर्ण दृष्टिकोण समष्टि के सिद्धांत से समझा जा सकता है।

यही तो **गेस्टाल्ट** की अवधारणा है। उदाहरण के लिए, आप किसी कार के इंजन के कार्य को केवल कैब्युटर, स्पार्क प्लग्स या पिस्टन की क्रिया को देखकर समझ सकते। केवल इन भागों के साथ में कार्य करने की प्रक्रिया से ही आप समझ सकते हैं कि गाड़ी का इंजन कैसे चलता है।

समष्टि दृष्टिकोण का विकास करना मानवतावादी मनोविज्ञान है। जो किसी की आत्मिक समझ, सृजनात्मकता और क्षमता के विकास पर बल देता है।

मानवतावादी मनोवैज्ञानिक 'मुक्त होने' और गैर-मौखिक संप्रेषण के विभिन्न रूपों के लिए अनुभव की संपूर्णता तक पहुँचने हेतु तर्क करते हैं।

(5) अवलोकन किए गए व्यवहार की गहराई तक अध्ययन

सामान्य स्थिति में, इसे **मनोविश्लेषण** का सिद्धांत कहते हैं। मनोविश्लेषक किसी के मस्तिष्क में पलने वाले उद्देश्य तथा बल के साथ व्यवहार करते हैं। ये वे विचार हैं जो किसी के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए कभी-कभी किसी मित्र को चोट पहुँचाने की भावना केवल इसीलिए उत्पन्न होती है कि क्योंकि कोई मित्र गृहकार्य की कॉपी अपने घर ले गया था तो उसकी वजह से कक्षा में सजा मिली परन्तु वास्तव में ऐसा कर्म नहीं किया। ऐसा देखा गया है कि कोई व्यक्ति ऐसा अपनी प्रबल आवश्यकताओं के कारण सोचता है। ये बाल्यावस्था के अनुभव हैं जो आपको कार्य करने हेतु निर्देशित करते हैं। इस विचारधारा के जनक सिग्मंड फ्रायड और अन्य मनोविश्लेषक जैसे अन्ना फ्रायड, कार्ल जुंग, कैरन हॉर्नी, एलफर्ड एल्डर हैं।

अब हमें समझ आ चुका है कि मनोविज्ञान क्या है और किस भाग पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

व्यक्ति विशेष व संबंधित घटना का अध्ययन

शुभ लक्ष्मी तीन वर्ष की एक फुर्तीली बच्ची थी। वह स्वयं व अपनी बड़ी बहन धन लक्ष्मी के साथ खेलती थी, जो कि पाँच वर्ष की थी पर पिछले दो महीनों से उसके माता-पिता व पड़ोसी शुभ लक्ष्मी के व्यवहार में कुछ बदलाव देखने लगे। वह छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा होने लगती। और उसे सोने में भी परेशानी होने लगी। उसके माता-पिता को लगता था कि ऐसा उसकी नानी जी के आकस्मिक

निधन के कारण हो रहा है, जो उनके बहुत करीब थीं। उन्होंने बताया कि जबसे मेरी माँ का निधन हुआ है, तब से शुभ लक्ष्मी ऐसा व्यवहार कर रही है। धन लक्ष्मी की बालवाड़ी अध्यापिका की इस स्थिति पर अलग टिप्पणी थी। उन्होंने बताया कि ऐसा होना साधारण है कि, जब किसी बच्चे का बड़ा भाई या बहन विद्यालय जाना शुरू कर देता है। वे कहने लगीं कि आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि शुभ लक्ष्मी कभी धनलक्ष्मी के बिना नहीं रहती थी।

शुभ लक्ष्मी को उसके माता-पिता बालमनोवैज्ञानिक/परामर्शदाता के पास ले गए, यह जानने के लिए कि :

- उसके व्यवहार में क्यों बदलाव आया?
 - किन कारकों के कारण उसके व्यवहार में बदलाव आ गया?
 - उसने किन नई चीजों को सीखा?
 - वह क्यों हम पर निर्भर नहीं थी?
- जिससे आगे प्रश्न उठने लगे—**
- व्यवहार क्या है? बाल मनोविज्ञान क्या है?
 - कौन से कारक विकास को प्रभावित करते हैं?
 - अध्ययन क्या है? स्मरणशक्ति की क्या भूमिका है? आदि।

मनोविज्ञान का आरंभ कहाँ से होता है?

उल्लेखनीय है कि जब हमें **उद्दीपन** प्राप्त होता है तो हम **अनुक्रिया** देते हैं। उदाहरण के लिए, जब हम किसी मित्र से सड़क पर मिल जाते हैं (उद्दीपन) तो हम उससे मिलने के लिए रुकते हैं और उससे बात करते हैं (प्रतिक्रिया)। जब हमारी आँख में कुछ चला जाता है (उद्दीपन) तब पानी आने लगाता है और जब हमारी आँख में कुछ चुभ जाता है तो हम उसे पानी से धोने लगते हैं (प्रतिक्रिया)। जब गलती से हम किसी गरम प्लेट को छू लेते हैं (उद्दीपन) तो हम अपना हाथ वहाँ से हटा लेते हैं (अनुक्रिया)

तो उद्दीपन और प्रतिक्रिया की प्रक्रिया क्या है? यह हमारे जीवन में मनोविज्ञान की महत्ता को किस तरह बताती है?

तो इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जब भी कोई व्यक्ति किसी स्थिति में होता है तो वह बहुत सी अनुक्रियाएँ दे सकता है, जो कि इस बात पर निर्भर करती हैं कि उसने अपने जीवन में क्या सीखा है, क्या अनुभव किया है, उसी के आधार पर वह अनुक्रिया देता है और ये सभी कारक इन कारकों पर निर्भर करते हैं जैसे भूलने की प्रवृत्ति, सूचनाओं का नष्ट होना, हस्तक्षेप आदि। अतः मनोविज्ञान एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तो इसे समझना चाहिए और ताकि इस तरह के परेशान करने वाले प्रभावों को कम किया जा सके जो कि किसी व्यक्ति या समाज के क्रियाकलापों में बाधा डालते हैं।

तब क्या होता है जब हम उद्दीपन का सामना करते हैं?

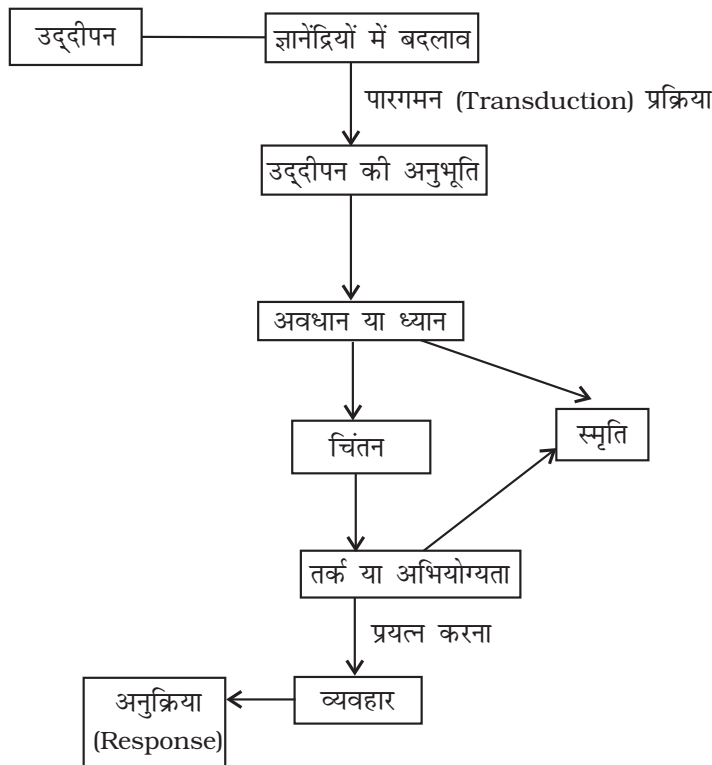
उत्तर यह है कि सबसे पहले हम अपनी इंद्रियों में बदलाव देखते हैं और फिर हम अपनी स्मरणशक्ति या पिछले अनुभवों के आधार पर चीजों को समझते हैं और फिर अपने मस्तिष्क में से उस स्थिति के लिए सबसे बेहतर अनुक्रिया को चुनते हैं।

उदाहरण के लिए :

हम किसी अजनबी को स्वयं को घूरते हुए देखते हैं तो हममें क्या बदलाव दिखाई देने लगते हैं?

सबसे पहले हमारी इंद्रियों में बदलाव आया फिर हम समझेंगे कि ओह! कोई मेरी तरफ देख रहा है, फिर हम पहचानने का प्रयास करेंगे कि यह कौन है? वह क्यों मुझे देख रहा है? क्या मैं उसे जानता हूँ या वह मुझे जानता है? भूतकाल में मिले कई लोगों से मिलें तरह-तरह के अनुभवों के अनुसार हम इसका उत्तर खोजने का प्रयास करेंगे और हमें अनुभव के आधार पर इसका उत्तर मिल जाएगा। (कि, पिताजी ने बताया था कि अजनबियों से बात करना ठीक नहीं है) हम स्थान के अनुसार अनुक्रिया देना सीखते हैं और मस्तिष्क के आधार पर हम पहचानने की कोशिश करेंगे कि क्या यह वह व्यक्ति है जिससे मैं अपने चचेरे भाई के विवाह में एक बार मिला था, यदि हाँ तो आप उसे देखकर मुस्कुरा देंगे और उससे बात करेंगे और यदि आप उसे याद नहीं कर पाते और वह व्यक्ति अजनबी है तो आप उस स्थान से दूर चले जाएँगे और इस पर सोचना बंद कर देंगे। क्योंकि हम अन्य बहुत से उद्दीपनों से घिरे होते हैं।

मनोवैज्ञानिक व्यवहार के प्रमुख चरण



विषय वस्तु (Subject Matter)

उद्दीपन—वह वस्तु या घटना जिससे हमारे किसी अंग या न्यूरोन्स में विशिष्ट व्यवहारात्मक प्रतिक्रियाएँ होने लगती हैं।

पारगमन (Transduction)—यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा न्यूरोन्स द्वारा ग्रहीता की उद्दीपन (विद्युत क्षमता) ऊर्जा में परिवर्तित करती है।

यह महसूस की गई संवेदना को तंत्रिका संदेश में अनुवादित करने की प्रक्रिया है जिसे मस्तिष्क समझ सके। यह (Inductive-Deductive) का मिश्रित रूप है। पारगमन पंचज्ञानेंद्रियों द्वारा होता है।

अनुभूति—यह संवेदनात्मक उद्दीपन को पहचानने और समझने की प्रक्रिया है। उद्दीपन की व्याख्या की प्रक्रिया को अनुभूति कहा जाता है।

- अनुभूति वह प्रक्रिया है जिसमें हम अपने पर्यावरण से संवेदनात्मक सूचना प्राप्त करते हैं और उस सूचना को अपने पर्यावरण से व्यवहार करने में प्रयोग करते हैं।
- अनुभूति से हम संवेदनात्मक सूचना प्राप्त कर पाते हैं और उससे कुछ अर्थपूर्ण बना पाते हैं।
- संवेदनाएँ मस्तिष्क से संबंधित भाग में प्रेषित होती हैं। फिर मस्तिष्क इन संवेदनाओं को समझता है। मस्तिष्क के संदेश के बाद ही हम उद्दीपन को समझ पाते हैं।

अतः अपने आसपास के वातावरण को समझने के लिए सबसे पहले जागरुकता आवश्यक है, फिर संवेदना और फिर अंत में मस्तिष्क द्वारा की गई व्याख्या।

ध्यान—अन्य समझने योग्य सूचनाओं की उपेक्षा करते हुए यह व्यक्तिपरक या वस्तुनिष्ठ सूचना कुछ चयनित अलग पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करने वाली व्यवहारात्मक और संज्ञानात्मक प्रक्रिया है।

- ध्यान का अर्थ सीमित प्रसंस्करण स्रोतों के आवंटन से भी लिया जा सकता है।
- ध्यान जागरुकता की वह स्थिति है जिसमें इंद्रियाँ केवल पर्यावरण के पहलुओं पर केन्द्रित हैं। इसीलिए, तंत्रिका तंत्र प्रतिक्रिया देने के लिए तैयार रहता है। क्योंकि मनुष्य सीमित रूप से जागरुक होने की क्षमता रखता है, वे अन्यो से ध्यान हटा कर कुछ निश्चित चीजों पर ध्यान केन्द्रित करता है।

स्मृति—वर्तमान काल में इस सूचना का प्रयोग करते हुए हम अपने पुराने अनुभवों से इसका प्रयोग करते हैं (स्टर्लिंग, 1999)।

- स्मृति उन संरचनाओं और प्रक्रियाओं को कहा जाता है जो मस्तिष्क में संचित व पड़ी हुई सूचनाओं का भंडार है।

चिंतन—यह ज्ञान और सूचनाओं की वह मानक प्रक्रिया है, जिसका प्रयोग योजनाएँ बनाने, व्याख्या करने तथा विश्व में आदर्श स्थापित करने के लिए किया जाता है और सामान्य रूप से विश्व से संबंधित बातों पर भावी अनुमान लगाने के लिए किया जाता है।

- चिंतन उद्दीपन और प्रतिक्रिया के संबंध को मजबूत करने हेतु मानव द्वारा कारण जानने का भी क्रियाकलाप है।
- चिंतन ज्ञान सहित विचारों का तार्किक कार्य है जो कि मस्तिष्क में किसी नवीन सूचना के आ जाने तक संचित रहता है।
- विचार को किसी चीज को स्मरण रखने और प्रश्न करने तथा प्रयोजन से संबंध जोड़ने के रूप में विवेचित किया जा सकता है।
- चिंतन मानवीय तर्कणा का मूल आधार है। बिना इसके मनोविज्ञान की विकासशील की रणनीति कार्य नहीं करती है। इसीलिए चिंतन को मनोविज्ञान के मूल की संज्ञा दी जाती है।

तर्कशास्त्र व शक्ति—यह लोगों द्वारा कारण-परिणाम जानने का अध्ययन है।

यह निष्कर्ष निकालने की प्रक्रिया है जिसमें यह देखा जाता है कि लोग कैसे समस्याओं का समाधान करते हैं और निर्णय लेते हैं।

व्यवहार—यह किसी व्यक्ति, जीव द्वारा किए गए कार्यों और उसके तौर-तरीकों के विभिन्न रूप हैं, जो वह किसी स्थिति को दर्शाता है।

- मानवीय व्यवहार की अवधारणा किसी व्यक्ति के कार्य या आचरण का वर्णन करने के लिए प्रयोग की जाती है।

प्रतिक्रिया—किसी भी घटना, स्थिति या व्यवहार के संबंध में की गई **अनुक्रिया** प्रतिक्रिया कहलाती है। यह किसी भी प्रकार का व्यवहार कहा जा सकता है जो उद्दीपन के परिणामस्वरूप उभर कर आता है।

ये कारक मानव की प्रगति में महत्वपूर्ण हैं और व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि सभी प्रक्रियाएँ बाधाओं से मुक्त होंगी तो मानव तनाव और समस्याओं से मुक्त हो जाएगा और यदि ऐसा न हो तो यह दुख की स्थिति में डाल देगा। ऐसे बहुत से कारक हैं जो उपर्युक्त प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करते हैं जैसे आवश्यकता, उद्दीपन की प्रकृति, भागीदारी, नवीनता और पुराने अनुभव। तो ये सभी कारक कम किए जा सकते हैं या इनके प्रभावों को कम किया जा सकता है ताकि कोई दुख से मुक्त हो सके और जीवन में आगे बढ़ सके।

ऐसी अवधारणाओं की शैक्षिक व्यवस्था में क्या महत्व है?

मनोविज्ञान शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया सभी क्षेत्रों को प्रभावित करता है। किसी भी शिक्षक के लिए अपने विद्यार्थियों की मानसिक योग्यता को ध्यान में रखते हुए पढ़ाना बहुत ही महत्वपूर्ण है।

बिल्कुल आसान भाषा में कहा जाए कि विद्यार्थियों के अध्ययन और अधिगम उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है। जैसे शैक्षिक मानसिकता का विकास हुआ, अनुभूति, सचेतता से विचार करना, स्मृति और संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ हैं जो प्रत्येक मनुष्य में होती हैं जिससे उसका व्यवहार, चेतना और व्यक्तित्व बनता है और जो उसे दूसरों से अलग बनाता है।

मनोविज्ञान की प्रमुख शब्दावलि

- **संज्ञान**—विचार, अनुभव और इंद्रियों से ज्ञान और समझ का विकास करने की मानसिक प्रक्रिया।
- **स्कीमा**—मनोविज्ञान में रूपरेखा, विचार या व्यवहार की योजना का वर्णन करती है, जो सूचनाओं के वर्गीकरण को संगठित करती है और उनमें संबंध स्थापित करती है। लोग रूपरेखा का प्रयोग वर्तमान ज्ञान को संगठित करने और भावी समझ हेतु ढाँचा तैयार करने के लिए करते हैं।
- **दृष्टिकोण या मनोवृत्ति**—किसी गहरे विश्वास या भावों के कारण किसी निश्चित ढंग से प्रतिक्रिया देने की सीखी गई प्रवृत्ति।
- **शारीरिक भाषा व हाव-भाव**—ये संप्रेषण के वे निश्चित तरीके हैं जो शारीरिक हाव-भाव जैसे भौंहे उभारना, आँखों के हाव-भाव से व्यक्त किए जाते हैं।
- **सामूहिक व्यवहार**—यह वह तरीका है जिसके द्वारा कोई समूह का सोचना, महसूस करना या कोई तर्कहीन बल के आधार पर काम करता है। जैसे भीड़, पंथ, समुदाय।
- **अवधारणा**—यह एक मानसिक वर्गीकरण है जो किसी समान क्रियाओं या समान दिखने वाली वस्तुओं को दर्शाता है।

- **सचेतन**—महसूस या अनुभूति कर पाना, मस्तिष्क का वह भाग जो उनसे व्यवहार करता है जिसके बारे में हम सचेत होते हैं।
- **चेतना**—वह परिमाण जिससे कोई अपने व आसपास के पर्यावरण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है।
- **अचेतन**—मानव मस्तिष्क का एक बड़ा भाग जो उद्देश्यों, आवश्यकताओं और उन भावों से मिल कर बनता है जिससे कोई व्यक्ति सचेत नहीं होता है।
- **अन्तर्नोद या चालक (ड्राइव)**—वह बल जो आवश्यकता से उत्पन्न होता है और किसी भी जीव की आवश्यकता को पूरा करने की ओर ले जाता है।
- **साधारणीकरण**—किसी निश्चित धारणा के अनुसार जब दो या इससे अधिक उद्दीपन समान हों, उन सभी के प्रति प्रतिक्रिया भी समान होगी।
- **प्रतिभाशाली**—जिसका आईक्यू 150 से अधिक हो।
- **परिकल्पना**—कुछ मान लिया गया क्योंकि वह सत्य तार्किक व्याख्या जैसा लग रहा हो।

- **स्मृति सहायक डिवाइस (Mnemonic)**—संकेत जैसे ट्रिक्स, जिंगल, कविता या किसी भी प्रकार का संपर्क जो कुछ याद रखने में सहायक हो।
- **रूपिम (Morpheme)**—भाषा की सबसे छोटी इकाई जिसका अर्थ हो।
- **स्वनिम (Phoneme)**—ध्वनि की सबसे छोटी इकाई जिसे भाषण की पृथक ध्वनि के रूप में पहचाना जाता है।
- **मानक**—समाज में व्यवहार के वांछित स्तर।
- **वस्तुनिष्ठ परीक्षण**—व्यक्तिगत के मानदंड की विचारधारा जो किसी व्यक्तित्व की मूलभूत विशेषताएँ, दृष्टिकोण, रुचियाँ, अभिलाषाओं जिसे आमतौर पर साक्षात्मक या स्वयं-सूची के रूप में व्यक्त किया गया है।
- **मित्र मण्डली**—समान आयु का व्यक्ति या कोई अन्य।
- **पक्षपात**—वह दृष्टिकोण जो किसी तर्कशील प्रमाण के बिना सहायक हो, जो समय के साथ बना रहे और यह किसी व्यक्ति या समूह के प्रति भावनात्मक अनुभूति हो।
- **प्रक्षेपी परीक्षण**—व्यक्तित्व को जाँचने के लिए सतह के नीचे और व्यक्ति के अंदर की व्यापक विशेषताओं को बाहर निकालना।
- **पुनःस्मरण**—स्मृति का वह मानदंड जिसमें, कुछ संकेतों के द्वारा कोई व्यक्ति पहले सीखी प्रतिक्रिया के अनुसार व्यवहार करता है।
- **अभिज्ञान (Recognition)**—स्मृति का वह मानदंड जिसमें कोई व्यक्ति पहले दर्शायी गई वस्तुओं को पहचान पाता है।
- **पुनः अधिगम**—स्मृति का वह मानदंड जिसमें कोई व्यक्ति कार्य पर विशेषज्ञता प्राप्त करने और कुछ समय निकल जाने के बाद (आमतौर पर पहले से अधिक शीघ्र) दूसरी बार कार्य सीखता है।
- **विसंबंधन (Alienation)**—किसी समाज या समूह का अंग न होने की भावना।
- **अभिक्षमता (Aptitude)**—ऐसी क्षमताओं का संयोग जो व्यक्ति की शिक्षण द्वारा कुछ विशिष्ट कौशलों को अर्जित करने की समर्थता का सूचक है।
- **विश्वसनीयता**—यदि कोई व्यक्ति दो बार परीक्षा दे रहा है तो उसे दोनों बार समान अंक प्राप्त करने चाहिए। यदि स्थिति ऐसी न हो तो परीक्षा विश्वसनीय नहीं कही जा सकती।
- **आत्म-सिद्धि (Self Actualization) की अवस्था**—अपनी पूर्ण शक्ति का अहसास होना।
- **आत्म-अवधारणा**—एक समग्र चित्र जिसमें कोई अपने व्यक्तित्व को स्वयं देखता है।
- **व्यवहार साकार करना (Shaping)**—व्यवहार को सद्गु करने की प्रक्रिया जो कि इच्छित प्रतिक्रिया के जैसी हो और केवल उसके जैसी प्रतिक्रियाओं को सद्गु करना है जब तक कि इच्छित प्रतिक्रिया सीख नहीं ली जाती।
- **सामाजिक मानक**—संविधान, कर्तव्य, मानक और रीति-रिवाजों से बने व्यवहार के निर्धारित मानक हैं जो कि एक निश्चित समाज का निर्माण करते हैं।
- **प्रतीक**—जो कुछ दर्शाता हो जैसे अधिकतर शब्द चिह्न हैं, जो अवधारणाओं को दर्शाते हैं।
- **निष्कर्षान्तरण**—अध्ययन करने की वह प्रक्रिया जिसमें कोई उद्दीपन को पहचानता व उसका विश्लेषण करता है, इसके बाद अपना दृष्टिकोण स्थापित करता है और भावनाएँ संचित करता है और फिर समान स्थितियों में ऐसे व्यवहार का स्थानान्तरण करता है।
- **शैक्षिक समाजशास्त्र का संबंध शिक्षा मनोविज्ञान और समाजशास्त्र दोनों से है।**
- **अतः शिक्षा के समाजशास्त्रीय सरोकारों का संबंध सामुदायिकता, सामाजिकता और समाजीकरण से लेकर संस्कृति-सभ्यता से प्रतिमानों तक है।**
- **जॉर्ज पेन को शैक्षिक समाजशास्त्र का पिता माना जाता है।**
- **शिक्षा मनोविज्ञान का जनक होने का श्रेय ई.एल. थॉर्नडाइक को है। जबकि वास्तविक जनक एडवर्ड थॉर्नडाइक है।**
- **संवेग, बुद्धि-विवेक, अधिगम, व्यक्तित्व, अभिवृत्ति, सृजनात्मकता, बाल विकास जैसे महत्वपूर्ण विषय शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत आते हैं।**
- **जॉन पेस्टालॉजी (Johann Pestalozzi) जिनका पूरा नाम जॉन हेनरिक पेस्टालॉजी (1746-1827) था वे शैक्षिक मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने शिक्षण विधियों को विद्यार्थी स्वरूप बनाने पर जोर दिया।**

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- “मनुष्य जन्म से स्वतंत्र होता है लेकिन हर जगह जंजीर से बंधा रहता है।” यह कथन किसका है?
 (1) अब्राहम मैस्लो (2) जीन जैक्स रूसो
 (3) जॉन डीवी (4) डब्ल्यू.आई.आई. किलपैट्रिक
- “मुझे एक दर्जन स्वस्थ बच्चे दे दो, मैं उन्हें डॉक्टर, न्यायाधीश, भिखारी और यहां तक कि चोर भी बना सकता हूँ।”, किसकी टिप्पणी है?
 (1) जे.बी. वाटसन (2) हल
 (3) जंग (4) गुथरी
- शिक्षा की द्विध्रुवीय प्रक्रिया का विचार द्वारा विकसित है।
 (1) सर जॉन डीवी (2) सर जॉन एडम्स
 (3) सर आइजक न्यूटन (4) सर रिचर्ड ब्रेन्सन
- शैक्षिक समाजशास्त्र का प्रणेता निम्नलिखित में से कौन है?
 (1) जॉर्ज पेन (2) जॉन एडम्स
 (3) जॉन डीवी (4) विलिहेम वुण्ट
- शिक्षा मनोविज्ञान का जनक किसे कहा जाता है?
 (1) जे.बी. वाटसन
 (2) ई.एल. थॉर्नडाइक
 (3) बी.एफ. स्कीनर
 (4) जॉन एडम्स
- शिक्षा की त्रिध्रुवीय प्रक्रिया द्वारा चलाई गई।
 (1) चार्लोट मैसन (2) फ्रेडरिक फ्रोबेल
 (3) जॉन डीवी (4) मरिया मोंटेसरी
- किस दार्शनिक का विचार है कि, शिक्षा मानव विकास के सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए?
 (1) डीवी (2) वाटसन
 (3) रूसो (4) थॉर्नडाइक
- 19वीं शताब्दी के अंत में किस दार्शनिक ने सीखने के नियम जानवरों के साथ अपने प्रयोगों के परिणामस्वरूप तैयार किए?
 (1) गिलफोर्ड (2) वाटसन
 (3) एडवर्ड थॉर्नडाइक (4) जॉन डीवी
- शैक्षिक मनोविज्ञान शैक्षिक विकास का एक व्यवस्थित अध्ययन है। यह कथन किसका है?
 (1) बी.एफ. स्कीनर (2) सी.वी. गुड
 (3) जे.एम. स्टीफन (4) सी.एच. जुड
- निम्न में से कौन-सा अधिगम का साहचर्यवाद का सिद्धांत नहीं है?
 (1) अनुकूलित अनुबद्धता का सिद्धांत
 (2) गेस्टाल्ट का सिद्धांत
 (3) उद्दीपन-अनुक्रिया का सिद्धांत
 (4) क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का सिद्धांत
- गेस्टाल्ट सिद्धांत की अभिधारणा है कि तत्वों को स्वरूप के अनुसार समूह में रखना चाहिए। यह का सिद्धांत है।
 (1) सामीप्य (2) समानता
 (3) सादगी (4) समापन
- वैज्ञानिक मनोविज्ञान का जनक माना जाता है :
 (1) विल्हेम वुण्ट
 (2) विलियम जॉस
 (3) विलियम जेम्स
 (4) सिग्मण्ड फ्रायड
- तंत्रिकातंत्र के प्रकार्य और मानसिक व्यवहारों के अध्ययन पर जोर दिया गया था:
 (1) संरचनावादी में
 (2) प्रकार्यवाद में
 (3) व्यवहारवाद में
 (4) मनोविश्लेषणवाद में
- संज्ञानात्मक मनोविज्ञान ‘स्कूल’ के जनक माने जाते हैं:
 (1) जीन प्याजे (2) जे.बी. वाटसन
 (3) बर्दाइमर (4) अब्राहम मैस्लो
- मानसिक स्तर पर सूचना एवं विचार का संगठन मनोविज्ञान में कहलाता है।
 (1) अनुभूति (2) स्किमा
 (3) स्मृति (4) बुद्धि
- आत्मसिद्धि (Self-Actualization) का तात्पर्य है:
 (1) आत्म शक्ति की अनुभूति
 (2) कार्यसिद्धि अवस्था
 (3) आत्म सम्मान
 (4) स्वसुरक्षा
- मनोयौनिक और मनोविश्लेषणवाद के जनक हैं—
 (1) सिग्मण्ड फ्रायड (2) अब्राहम मैस्लो
 (3) जे.बी. वाटसन (4) लेव वाइगोत्स्की

18. वह विषय वस्तु या घटना जो व्यवहारिक प्रतिक्रिया का जनक होती है, कहलाती है।

- (1) पारगमन (2) उद्दीपन
(3) व्यवहार (4) अनुभव

19. शिक्षा को सर्वांगीण विकास का साधन मानते थे—

- (1) महात्मा गांधी (2) स्वामी विवेकानंद
(3) अब्राहम मैस्लो (4) जॉन डीवी

20. “स्वास्थ्य ही जीवन है” सूत्रवाक्य किसने कहा है?

- (1) सुकरात (2) प्लेटो
(3) अरस्तू (4) मैकेनियस

21. “मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है” किसका कथन है?

- (1) सुकरात (2) प्लेटो
(3) अरस्तू (4) कोलमैन

22. व्यवहारवाद के पर्याय माने जाते हैं?

- (1) औचित्यवाद (2) प्रयोजनवाद
(3) प्रकार्यवाद (4) उपरोक्त सभी

23. ‘ज्ञान के बजाय कर्म’ पर जोर देने वाला मनोवैज्ञानिक स्कूल है:

- (1) अस्तित्ववाद
(2) व्यवहारवाद
(3) मनोविश्लेषणवाद
(4) आदर्शवाद

24. मनोविज्ञान की पहली प्रयोगशाला निम्नलिखित में से किस मनोवैज्ञानिक द्वारा स्थापित की गई?

- (1) विल्हेम वुण्ट (2) विलियम स्टर्न
(3) विलियम जेम्स (4) विलियम जॉन्स

25. मनोविज्ञान किसका अध्ययन माना जाता है?

- (1) मन (Mind) का
(2) आत्मा (Soul) का
(3) हृदय (Heart) का
(4) अचेतन (Uncounsions) का

उत्तर व्याख्या सहित

1. (2) मनुष्य की जन्मजात स्वतंत्रता और जन्मोपरांत परतंत्रता का विचार रूसो ने व्यक्त किया है। रूसो ने अपने सामाजिक समझौते के सिद्धांत का आरंभ इसी पंक्ति से किया है। इस सिद्धांत के द्वारा समाज के उदय व उनके सदस्यों के मध्य संबंधों की व्याख्या की गई है।

2. (1) जे.बी. वाटसन व्यवहारवाद के प्रवर्तक थे। व्यवहारवादियों ने केवल महसूस करने योग्य तथा मापने योग्य व्यवहार अधिगम, अभिप्रेरणा एवं पुनर्बलन पर ध्यान केंद्रित किया।

3. (2) सर जॉन एडम्स ने अपनी पुस्तक ‘इवोल्यूशन ऑफ एजुकेशन थ्योरी’ में कहा है कि शिक्षा एक द्विध्रुवीय प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्तित्व दूसरे व्यक्तित्व के विकास को संशोधित करने के लिए एक-दूसरे पर कार्य करता है। यह मानता है कि शिक्षा की प्रक्रिया में दो व्यक्ति शामिल हैं: एक शिक्षक है और दूसरा शिष्य है।

4. (1) शैक्षिक समाजशास्त्र का संबंध शिक्षा मनोविज्ञान और समाजशास्त्र दोनों से है।

अतः शिक्षा के समाजशास्त्रीय सरोकारों का संबंध सामुदायिकता, सामाजिकता और समाजीकरण से लेकर संस्कृति-सभ्यता के प्रतिमानों तक है। जॉर्ज पेन को शैक्षिक समाजशास्त्र का प्रणेता माना जाता है।

5. (2) शिक्षा मनोविज्ञान का जनक एडवर्ड थॉर्नडाइक है। संवेग, बुद्धि, अधिगम, व्यक्तित्व, अभिवृत्ति, सृजनात्मकता, बालविकास जैसे महत्वपूर्ण विषय शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत आते हैं।

6. (3) शिक्षा की त्रिध्रुवीय प्रक्रिया जॉन डीवी द्वारा मानी गई है। वह शिक्षा को विकास की प्रक्रिया मानते हैं। इस तरह, शिक्षा की प्रक्रिया में तीन ध्रुव होते हैं: (1) शिक्षक, (2) बच्चा, (3) समाज।

7. (3) रूसो प्रकृतिवादी थे। प्रकृतिवादी का दृष्टिकोण पूर्णतः भौतिक और यांत्रिक हैं। प्रकृतिवादी के अनुसार मानव विकास के नियम प्राकृतिक एवं बालक की स्वतंत्रता पर जोर देता है।

8. (3) थॉर्नडाइक ने ही सीखने के नियम जानवरों के साथ अपने प्रयोगों में बताया। इन्होंने संयोजनवाद सिद्धांत और सीखने की प्रयास एवं त्रुटि विधि का प्रतिपादन किया।

9. (3) स्टीफन के अनुसार, “शिक्षा मनोविज्ञान शिक्षा की वृद्धि एवं विकास का विधिवत अध्ययन है। वृद्धि शारीरिक और विकास शारीरिक-मानसिक दोनों तरह से संबंधित है।

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(1)	3.	(2)	4.	(1)	5.	(2)
6.	(3)	7.	(3)	8.	(3)	9.	(3)	10.	(3)
11.	(2)	12.	(1)	13.	(2)	14.	(1)	15.	(2)
16.	(1)	17.	(1)	18.	(2)	19.	(1)	20.	(1)
21.	(3)	22.	(2)	23.	(2)	24.	(1)	25.	(1)

10. (3) व्यावहारिक साहचर्य सिद्धांतों के अनुसार अधिगम प्रक्रिया विभिन्न उद्दीपनों एवं अनुक्रियाओं का परस्पर संबंध है। थॉर्नडाईक, वाटसन, पैवलव, स्किनर, मिल्लर, हल तथा गुथरी आदि इसके प्रमुख समर्थक हैं।
11. (2) गेस्टाल्टवादी विचार के अनुसार वस्तुओं में समानता होती है तथा विशेषताओं में वे एक दूसरे के समान होती हैं। वे एक समूह के रूप में प्रत्यक्षित होती हैं। इसमें आकार, रंग, बनावट (टेक्सचर) की समानताओं के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है।
12. (1) संरचनावादी (Structurist): Wilhelm Wundt (1879) साइंटिफिक सायकोलॉजी के जनक हैं जो मस्तिष्क, चेतना, संवेदना और प्रत्यक्षीकरण के घटकों एवं संरचनाओं का प्रतिपादक हैं।
13. (2) प्रकार्यवादी (Functionalist) William James (1890) अमेरिकन सायकोलॉजी के जनक हैं जो तंत्रिकातंत्र के प्रकार्य एवं मानसिक व्यवहारों के अध्ययन पर जोर देते हैं।
14. (1) संज्ञान वस्तुतः विचार, अनुभव और इन्द्रिय जनित ज्ञान-समझ की मानसिक प्रक्रिया है। इस मनोवैज्ञानिक शाखा के प्रणेता जीन प्याजे हैं।
15. (2) स्किमा-मनोविज्ञान में रूपरेखा, विचार या व्यवहार की योजना का वर्णन करती है, जो सूचनाओं के वर्गीकरण को संगठित करती है और उनमें संबंध स्थापित करती है।
16. (1) मनोविज्ञान 'मानववादी स्कूल' के महत्वपूर्ण वैज्ञानिक अब्राहम मैस्लो ने आवश्यकता सोपानक्रम सिद्धांत की उच्चतम अवस्था 'आत्मसिद्धि' को बताता है। यह स्वात्म शक्ति-सिद्धि की अवस्था है।
17. (1) सिग्मण्ड फ्रायड मनोवैज्ञानिक विचारधारा : मनोयौनिक एवं मनोविश्लेषणवाद के प्रणेता हैं। चेतन-अवचेतन-अचेतन और इड-इगो-सुपरइगो इस विचार के प्रमुख घटक हैं।
18. (2) उद्दीपन से विषय वस्तु को समझने की प्रक्रियान्तर्गत हमारे किसी अंग या न्यूरोन्स में विशिष्ट व्यवहारात्मक प्रतिक्रियाएं होने लगती हैं।
पारगमन (Transduction) : यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा न्यूरोन्स द्वारा ग्रहीता की उद्दीपन (विद्युत क्षमता) ऊर्जा में परिवर्तित करती है।
19. (1) महात्मा गांधी शिक्षा को सर्वांगीण विकास का साधन मानते थे।
वे कहते थे—“शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के अन्तर्निहित शक्तियों के सर्वोत्तम प्रकटीकरण से है।”
20. (1) सुकरात, प्लेटो और अरस्तू यूनानी विचारक थे। सुकरात ने ही यह विश्व प्रसिद्ध सूत्रवाक्य व विचार “स्वास्थ्य ही जीवन है” व्यक्त किया था। प्लेटो ने अपनी चर्चित पुस्तक ‘रिपब्लिक’ में राज्य-समाज के नियामक सिद्धांतों और दार्शनिक राजा के बारे में सारगर्भित विचार दिए हैं।
21. (3) ‘मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।’ यह विचार अरस्तू की ही युगांतकारी देन है।
22. (2) व्यवहारवाद पश्चिमी शैक्षिक दर्शन है जिसके प्रणेता जॉन डीवी हैं। व्यवहारवाद व्यवहार-कर्मगत व्यवहार पर बल देता है इसीलिए यह प्रकार्यवाद है।
23. (2) प्रैग्मेटिस्ट (व्यवहारवादी) ज्ञान-विज्ञान ने बजाय कर्म-व्यवहार को प्राथमिकता देते हैं। यह करके सीखने पर जोर देता है। इसीलिए अभिप्रेरणा एवं अभ्यास उसके प्रमुख चरण हैं।
24. (1) मनोविज्ञान की पहली प्रयोगशाला जर्मनी के लिपजिंग शहर में विल्हेम वुण्ट द्वारा 18वीं सदी में स्थापित की गई है।
25. (1) मनोविज्ञान को प्रथमतः मन का विज्ञान (Science of Mind) कहा जाता है। मनोविज्ञान में मानव मन की अवस्थाओं एवं व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।

□□□

शिशु और बच्चे

जन्म के समय बच्चा माँ के नियंत्रित और सुरक्षित गर्भ से निकल कर अविश्वसनीय पर्यावरण में प्रवेश करता है। हालाँकि नवजात शिशु इस बाहरी दुनिया में कई पूर्व निर्धारित अनुक्रियाओं के साथ जन्म लेता है। नवजात शिशु अपनी आँखों से धीरे-धीरे चलने वाली वस्तुओं को देखते हैं।

वे अनेक ध्वनियों को समझ पाते हैं और कई लयात्मक ध्वनियों को सुनकर अच्छा महसूस करते हैं। वे कड़वे और नमकीन स्वाद में अंतर महसूस कर पाते हैं। नवजात शिशु सुगंध व दुर्गंध, तापमान के तेजी से बढ़ने या घटने या छूने पर प्रति भी प्रतिक्रिया देते हैं। बाहरी दुनिया के प्रति उनकी प्रतिक्रियाएँ तेजी से बढ़ती हैं।

हम ऐसा समझते हैं कि बच्चे असहाय होते हैं। उन्हें स्वयं खिलाना चाहिए और सुरक्षित रखना चाहिए। परन्तु जन्म के 6 महीने तक वे स्वयं से बहुत कुछ सीखते हैं।

वृद्धि का अर्थ शारीरिक वृद्धि से है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं उनमें शरीर का विकास भी उसी अनुपात में बढ़ता है और माता से उनके संबंधों की पूर्णपीठिका तैयार होती है।

हारलो की (Harlow's) मंकी स्टडी

हैरी हारलो ने 1958 में बंदर के बच्चे और उसकी माँ के मध्य के प्रेम के संबंधों पर अपना प्रयोग किया था। इसी आलोक में विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिकों ने बाल्यावस्था में माँ के प्रेम पर अध्ययन किया। इसके अभाव में बंदरों के बच्चों के समूह में भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को देखा। हालाँकि यह जानवरों में देखा गया परन्तु यह इरीकोन के सिद्धान्तों से मेल खाता था जिसमें दोनों माँ (आमतौर पर सबसे पहले पालन करने वाली) का बच्चे के साथ संबंध पर जोर डालते हैं। ये मनोचिकित्सक मानते हैं कि भावनात्मक विकास पहले आरंभ होता है और यह किसी बच्चे के विकास में महत्वपूर्ण होता है।

विकासात्मक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की एक शाखा है जिसमें अंतः वैयक्तिक और अंतरवैयक्तिक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है।

विकासात्मक स्वरूप के अंतर्गत किसी निश्चित समय का अध्ययन उस समय की किसी व्यवहारात्मक समस्या का समाधान करने की इच्छा से बहुत प्रभावित होता है।

विकासात्मक मनोविज्ञान के मुख्य उद्देश्य

- (क) किसी एक विकासात्मक काल से दूसरे काल तक विशेषताओं में होने वाले समान अंतरों को पहचानना जैसे रूप, व्यवहार, रुचि में परिवर्तन होना।

- (ख) यह पहचानना कि ये परिवर्तन कब आते हैं?

- (ग) यह पहचानना कि इसका कारण क्या है?

- (घ) यह पहचानना कि कैसे व्यवहार को प्रभावित करते हैं?

- (ङ) यह पहचानना कि क्या इनका अनुमान लगाया जा सकता है या नहीं?

- (च) यह पहचानना कि क्या ये वैयक्तिक हैं या सार्वभौमिक?

विकासात्मक परिवर्तन-

इसका अर्थ प्रगतिशील ढंग से होने वाले ये परिवर्तन जो परिपक्वता और अनुभव के परिणामस्वरूप होते हैं।

उदाहरण स्वरूप-मानव स्थिर नहीं है। वह जन्म से मृत्यु तक व्यापक है। शारीरिक और मनोवैज्ञानिक क्षमताओं में लगातार परिवर्तन हो रहे हैं। जैसा कि प्याजे ने व्याख्या की है, संरचनाएँ स्थिरता से कहीं आगे हैं वहीं बोवर ने इस बात पर ध्यान दिलाया है कि यह दक्षता विकास की चक्रीय प्रक्रिया है, जो कि लुप्त हो रही है और बाद में नजर आती है। यह सतत नहीं है क्योंकि यह निरंतर बढ़ रही है।

जॉन लॉक के अनुसार जन्म के समय बालक का मस्तिष्क एक कोरी स्लेट (Tabula Russa) के समान होता है। जिस पर कुछ भी लिखा जा सकता है। अर्थात् जन्म के बाद जिस प्रकार के पर्यावरण में वह रहता है उसका प्रभाव उस पर अवश्य पड़ता है। लॉक ने पर्यावरण को वैयक्तिक भिन्नता का प्रमुख कारण माना है।

किशोर बच्चों का विकास कैसे होता है?

माँ के गर्भ में जो भी होता है वह बच्चे के विकास में महत्वपूर्ण तरीकों से प्रभाव डालता है।

प्रसवपूर्व अवस्था में, विसंक्रमित डिंब बढ़ता है और विकसित होता है। भ्रूण बहुत छोटा होता है और तेजी से बच्चे का विकास होता है, जिसे माँ की गर्भनाल से पोषण प्राप्त करता है। जन्म के समय बच्चे का स्वास्थ्य माँ के गर्भावस्था के दौरान स्वास्थ्य हेतु महत्वपूर्ण है। जन्म से पहले कुपोषण का शिकार होना भ्रूण के विकास को कम करता है। माँ का कोई विशेष रोग भ्रूण को नष्ट भी कर सकता है।

उदाहरणस्वरूप-यदि एक महिला को गर्भावस्था के तीसरे माह में खसरा हो जाए तो बच्चा नेत्रहीन, बहरा हो सकता है या ऐसा भी हो सकता है कि जन्म के समय उसका मस्तिष्क या हृदय काम न करता हो। आजकल चिकित्सक गर्भवती महिलाओं को बहुत सोच-समझ कर कोई औषधि देते हैं। इसके अतिरिक्त, वे गर्भवती महिला को सिगरेट व शराब व अन्य किसी दवाई का सेवन करने से मना करते हैं। गर्भावस्था के दौरान माँ के तनाव के प्रभाव को अब तक ज्यादा नहीं समझा गया जो कि बच्चे के आरंभिक भावनात्मक विकास को प्रभावित करता है। बच्चों का बहुत अधिक रोना माँ का गर्भावस्था के दौरान तनावपूर्ण रहने का संकेत होता है।

संस्थान विकास को कैसे प्रभावित करते हैं?

तब क्या होता है यदि कोई शिशु अपनी माँ से अलग हो जाता है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए ब्रिटिश मनोचिकित्सक **जोन बॉलबाय** ने अनाथालयों में अनेक बच्चों पर अध्ययन किया है।

उन्होंने उन बच्चों में अवसाद को समान पाया। उन्होंने बताया कि इन बच्चों में दुख के वही लक्षण मिले जैसे किसी बड़े में तब मिलते हैं जब उनके किसी अपने का निधन हो जाता है।

अन्य मनोवैज्ञानिकों ने सोचा कि जो उन्होंने खोया है वे उनकी प्रतिक्रियाओं द्वारा वर्णित नहीं किया जा सकता। वे सोचते थे कि अवसाद का कारण अपनी माँ और सामान्य स्थितियों के स्थान पर किसी अन्य अभिभावक के साथ रहना है।

विश्वास अथवा अविश्वास

मनोचिकित्सक **इरीक इरीक्सन** मानते हैं कि बच्चे के जीवन का आरंभिक समय उसके विकास हेतु महत्वपूर्ण होता है जिसे वह विश्वास कहते हैं। बच्चे की जरूरतों को सरलता से पूरा करने वाला देखभालकर्ता बच्चे के लिए विश्वास का पात्र होता है। इरीक्सन के अनुसार वह बच्चा जो अपने जीवन के आरंभ के कुछ वर्षों में एक साधारण अनुमानित स्थितियों में नहीं रहता उसमें अविश्वास आ जाता है जो उसके स्वास्थ्य को भावनात्मक रूप से बहुत प्रभावित करता है।

अगले छह महीनों में, बच्चा प्रारंभिक देखभालकर्ता के रूप में अपनी माँ से सामाजिक संबंध स्थापित करता है, जिसमें शारीरिक जुड़ाव भी सम्मिलित है, जो पहले से ही होता है। प्रारंभिक देखभालकर्ता के साथ लंबे समय से अलग रहने पर बच्चे के भावनात्मक विकास को बहुत क्षति पहुँचती है।

नौ माह के बाद नये और अपरिचित पर्यावरण के कारण भी माँ से अविश्वास बढ़ने लगता है। एरीक्सन के अनुसार बाल्यावस्था के उत्तर काल के बाद माँ या कोई अन्य आरंभिक देखभालकर्ता ही होता है जिस पर बच्चा अपनी सुरक्षा के लिए निर्भर रह सकता है। जब प्रेम और देखभाल की यह स्थिति एक दम से दूर हो जाती है, तो कुछ बच्चे अवसाद में चले जाते हैं। बच्चे प्राकृतिक रूप से ही पहले देखना और समझना आरंभ करते हैं उसके बाद रेंगना-घिघियाना शुरू कर देते हैं। एक वर्ष के बीच में या एक वर्ष तक अधिकतर बच्चे अपनी अस्थिर टाँगों से बहुत सारी चीजों तक पहुँच जाते हैं। वे चीजों और लोगों दोनों को नियंत्रित करना सीख जाते हैं। वे खिलौनों के साथ खेलते हैं और उन्हें खराब कर देते हैं। वे उसे अच्छी-अच्छी ध्वनि निकालने के लिए खोल-बंद करते रहते हैं। एक वर्ष का होने के बाद बच्चा अपने शरीर, भावनाएँ आवश्यकताओं और विचारों में अंतर कर सकता है और अन्य लोगों और चीजों में अंतर कर सकता है।

आमतौर पर पहला और दूसरा वर्ष दो शारीरिक परिवर्तनों, चलना और शौच जाना में चला जाता है। बच्चे तब चलना शुरू करते हैं जब उनका इंद्रियगामक सामंजस्य और मांसपेशियों के विकास से चलना संभव हो पाता है। शौच जाने के लिए उन्हें अपने शरीर में पहले से

निहित शारीरिक गतिविधि को नियंत्रित करना सीखना होता है। कार्य को करने के लिए प्रशिक्षण सकारात्मक या नकारात्मक मजबूती देता है। विकासात्मक मनोवैज्ञानिक ऐसा मानते हैं कि शौच जाना सिखाने के लिए आसपास का वातावरण अनुकूल होना चाहिए और छोटे-छोटे प्रयासों पर भी प्रशंसा करनी चाहिए।

शैशवकाल में भावनात्मक विकास

कुछ रिपोर्टें दर्शाती हैं कि बच्चे भी अभिभावकों को प्रभावित करते हैं। हँसते-खेलते बच्चे को अधिक प्यार-दुलार मिलने की संभावना होती है। जिद्दी व हमेशा माँग करते रहने वाले बच्चों की तरफ ध्यान भले दिया जाए पर यह अभिभावकों के धैर्य को खत्म कर सकता है। स्वीकृत व अस्वीकृत करने का यह चक्र संपूर्ण बाल्यावस्था में चलता रहता है। हालाँकि बच्चा व उसका पालनकर्ता एक दूसरे को प्रभावित करते हैं जो कि उसकी खोई माँ को किसी अन्य देखभाल करने वाले व्यक्ति और सामान्य स्थितियों से प्रतिस्थापित नहीं कर सकता। बहुत से अनुसंधानकर्ताओं ने पाया कि समाज में रहने वाला बच्चा भूख से अपनी ओर ध्यान खींचता है और प्रेम का पात्र बनता है।

जब अनाथालय में स्थितियाँ अच्छी थीं, सामाजिक और संज्ञानात्मक विकास सामान्य स्तर से आगे बढ़ रहा था। उन बहुत से बच्चों को जिन्हें संस्थानों में अच्छी देखभाल मिल रही थी या जो अपने परिवार के साथ रहते थे बहुत ही कम अंतर था। माँ का अभाव वहाँ इतना महत्वपूर्ण कारक नहीं दिखता था। बच्चे के विकास में प्रेम, देखभाल, अच्छा आहार, आसपास का वातावरण एक महत्वपूर्ण अंतर दर्शा सकता है।

पूर्वस्कूली विकास

तीन से चार वर्ष का होने तक, कोई बच्चा व्यस्क होने की लंबाई का आधा जितना लंबा हो जाता है। जैसे-जैसे बच्चा स्कूल जाने से पहले बड़ा होता है वह नई-नई चीजें सीखता है जैसे गेंद फेंकना, भागना, चढ़ना, चित्र बनाना और स्वयं कहीं पहुँच जाना और तैयार होना। स्कूल से पहले बच्चों को अपनी मांसपेशियों का प्रयोग करने के लिए नई-नई चीजें सीखनी होती हैं, वह भागना सीखता है, तेज-तेज चिल्लाना और नई-नई बातें सीखता है। स्कूल जाने से पहले बच्चा स्वतंत्र होता है।

खेलने का व्यवहार

औसतन चार से पाँच वर्ष का बच्चा बाहर निकल कर अन्य बच्चों के साथ खेलना चाहता है। स्कूल जाने से पहले वाले बच्चे अपने बड़ों के कामों की नकल करते हैं। विकास की नजर से, ऐसे अनुकरण करने वाले खेल बच्चों के प्रति जिम्मेदारी का अहसास कराती हैं। ऐसे खेल चाहे किसी व्यस्क के लिए बिल्कुल अनुपयोगी हों परन्तु बच्चे के लिए आवश्यक हैं। मनोवैज्ञानिक **एल जोसफ स्टोन और जोसफ स्टोन चर्च** ने ऐसे निम्नलिखित प्रमुख से तरीके बताए हैं जिनसे स्कूल जाने से पहले किसी बच्चे के व्यवहार का विकास किया जा सकता है—

- (1) लगभग सभी बच्चे अपने काम स्वयं कर पाते हैं, तैयार होना, सोने के लिए बिस्तर पर जाना, घूमना, शौच जाना। बहुत से सामान्य क्रियाकलाप माता-पिता के लिए भले ही सामान्य हों परन्तु बच्चे के लिए उसे करना मजेदार है।
- (2) खेलना अधिक उद्देश्यपूर्ण और निर्देशित बनता है। बच्चे अधिक गंभीर बनते हैं।
- (3) बच्चे दुनिया में भरोसा कर पाते हैं जो कि वास्तविक दुनिया से भिन्न है जहाँ लोग अपनी ताकत का प्रयोग करते हैं।
- (4) खेलने से बच्चा अधिक कल्पनाशील और सामाजिक बनता है। नये कौशलों और ज्ञान से बच्चा अधिक रचनात्मक बनता है।
- (5) खेलना नाटकीय होता है, बच्चे परिवार या समाज की वास्तविक दुनिया से ही भूमिकाओं की कल्पना करते हैं। जैसे वे माता-पिता का अनुकरण करते हैं या डॉक्टर व मरीज की भूमिका निभाते हुए खेल खेलते हैं।

पाँच वर्ष तक बच्चे वे खेल खेलते हैं जो उन्हें आसपास की दुनिया में नजर आता है। बच्चे वास्तविक खिलौनों से खेलने लगते हैं जैसे डॉक्टर का बैग, गुड़िया, रसोई के बरतनों के खिलौने, गाड़ियों के खिलौने जो कि आधुनिक जीवन का संकेत देते हैं।

बच्चे की वृद्धि एवं बौद्धिक विकास

बच्चों में सोच कैसे विकसित होती है, इस बात में सबसे अधिक योगदान मनोवैज्ञानिक जीन प्याजे का है। प्याजे ने स्वयं के बच्चे का शुरू से 50 वर्ष तक अवलोकन किया। उन्होंने पहचाना कोई बच्चा अपने बौद्धिक व संज्ञानात्मक विकास के दौरान अनुक्रमिक चरणों में ऐसा कैसे कर सकता है या नहीं कर सकता है। उन्होंने महसूस किया कि सीखने के लिए, सोचने के लिए बच्चे को नए रूपों में सूचना का विकास करना जरूरी है। ऐसा केवल तभी हो सकता है जब बच्चा ऐसा करने के लिए बौद्धिक रूप से तैयार हो।

उदाहरण के लिए, एक बच्चा जो रात को सैर के लिए जाए तो वह चाँद को देखकर सोच सकता है कि शायद चाँद उसका पीछा कर रहा है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होगा वह समझने लगेगा कि जो दिख रहा है जरूरी नहीं उस पर विश्वास किया जा सके।

उनके लिए किसी चीज का दिखाई न देना का अर्थ यह नहीं है कि वास्तव में उसका अस्तित्व नहीं है। जबकि एक साल से छोटे बच्चे के लिए जो उसे दिखाई नहीं देता, वह मान लेता है कि वह है ही नहीं। किसी खिलौने को भी दिखाकर बार-बार उससे दूर किया जा सकता है।

उदाहरण के लिए दस से ग्यारह महीने के बच्चे के साथ लुका-छुपी का खेल खेलते हुए जब आप अपना चेहरा उससे छिपाते हैं और फिर दिखाते हैं तो वह हैरानी से देखता है। अपना चेहरा छिपाने से उसे लगता है जैसे आप हैं ही नहीं। बारह माह के बच्चे में वस्तुओं की स्थिरता की समझ का विकास होता है।

अनुभव और विचार

बच्चों के विकास के दौरान होने वाले कुछ आकस्मिक बदलाव जो आमतौर पर एक निश्चित समय पर ही होते हैं जिनमें से प्रत्येक संज्ञानात्मक विकास की ओर जाता है। प्याजे ने समझाया है कि कैसे एक बात दूसरे से संबंधित है और बच्चे के विकास में भागीदारी करती है। बच्चे अपनी समझ के साथ परिस्थितियों से मिले अनुभवों से सीखते हैं और उन अनुभवों को नए-नए तरीकों से समझने की क्षमता रखते हैं। पिछले अनुभव और विचार दोनों ही महत्वपूर्ण हैं।

संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ

प्याजे ने संज्ञानात्मक विकास को चार अवस्थाओं में विभाजित किया है। ये शैशवकाल से लेकर पूर्व किशोरावस्था तक हैं। प्याजे के अनुसार बच्चा एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश करता है और यह क्रम बच्चों व संस्कृति के अनुसार बदलता नहीं है :

अवस्था-1 इंद्रिय-गामक (0-2 वर्ष)

अवस्था-2 पूर्व संक्रियात्मक (2-7 वर्ष)

1. पूर्व प्रत्ययात्मक काल

2. आंतप्रज्ञा काल

● अवस्था-3 मूर्त संक्रियात्मक (7-11 वर्ष)

● अवस्था-4 औपचारिक संक्रियात्मक (11 वर्ष और इससे अधिक)

अवस्था-1

दो वर्ष की आयु तक, बच्चा छूकर दुनिया के बारे में बहुत कुछ सीख जाता है। इस ज्ञानेन्द्रिय काल में कुछ भी अमूर्त नहीं होता, सब कुछ अनुभव करके सीखता है। इस काल में बच्चा सीखता है कि कम के परिणाम होते हैं।

उदाहरण—एक गेंद केवल तब नहीं उछलती जब वह उसे उछालता है जबकि कोई भी उसे उछालेगा तो वह उछलेगी। यह अवस्था सामयिक विचार की शुरुआत को दर्शाता है।

जब बच्चा अपनी ही दुनिया में होता है। तब बच्चे से यदि पूछा जाता है कि आपने क्या देखा और मैंने क्या देखा? दो वर्ष का बच्चा बताएगा कि उसने क्या देखा, प्याजे इस अनुभव को इस तरह मानते हैं कि बच्चा यह समझ नहीं पाता कि पर्यावरण दूसरों के लिए अलग हो सकता है, इसे **आत्मकेन्द्रित** होना कहते हैं।

जिस बच्चे को शैशवकाल में प्यार और देखभाल मिलती है उसकी भावनाओं का मजबूती से विकास होता है।

अवस्था-2

दूसरी अवस्था में बच्चे की मुख्य उपलब्धि बाहरी दुनिया को अपने मस्तिष्क में प्रदर्शित करने की है। ज्ञानेन्द्रिय अवस्था में जो बच्चा ब्लॉक्स से खेल रहा है वह जानता है कि दो में दो ब्लॉक्स जोड़ने से चार ब्लॉक्स बन जाते हैं क्योंकि वह उन्हें देख सकता है। दूसरी अवस्था में, पूर्ववर्ती विचार की अवस्था में, किन्हीं भी वस्तुओं के लिए निश्चित मात्रा का चिह्न।

पाँच या छह वर्ष की आयु तक बच्चा संख्या, किसी वस्तु को किसी साँचे में डालना, उनकी व्यवस्था को समझ जाता है। क्षेत्र का संरक्षण और भार जैसे विषय वह सात से दस वर्ष का होने पर समझता है।

बच्चे को बिना देखे ज्ञात नहीं होगा कि मकान क्या होता है। इन्हीं चिह्नों के द्वारा बच्चे भूत और भविष्य की घटनाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं कभी-कभी अवस्था 2 में बच्चा सीखने के लिए तैयार नहीं होता। इनमें से एक विषय है संरक्षण। इसका अर्थ है कि किसी चीज की मात्रा समान रहती है चाहे उसका आकार परिवर्तित हो जाए। उदाहरण के लिए-यदि किसी लंबे वर्तन के पानी को चौड़े वर्तन में डाल दिया जाए तो बच्चा चौड़े वर्तन के पानी को कम कहता है क्योंकि वह कारण और परिणाम को अलग नहीं कर पाता है।

अवस्था-3

मूर्त कार्यों की इस अवस्था में निर्मित तर्क का विचार संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बच्चे माप, वर्ग और संबंध और स्थान की अवधारणा को समझने के लिए छलांग मारते हैं।

इसमें, बच्चे संरक्षण का विचार भी समझ जाते हैं। ग्यारह वर्ष का बच्चा जानता है कि उसने मक्खन का आधा कप पकड़ा है। वह इसे कप में डालकर माप सकता है। इस अवस्था तक बच्चा मापने की विधि को समझ जाता है।

अवस्था-4

औपचारिक कार्यों में सक्षम व्यक्ति बिना किसी गति के किसी समस्या को कई स्थितियों से देख सकता है। यद्यपि अवस्था-3 में किसी बच्चे में प्रमाण के आधार कारण जानने की योग्यता होती है। पर जैसे-जैसे बच्चे किशोरावस्था की ओर बढ़ते हैं वे अधिक आदर्श रूप में सोचने लगते हैं।

किशोरावस्था से पहले कोई बच्चा उन चीजों को जोड़कर जिनमें समान गुण हैं, विषय को समझता है। चिह्न, शब्द, संख्या या अन्य चिह्न चिंतन करने में अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किशोरों के पास कई विषय होते हैं और वे वयस्क की तरह तथ्यों और कार्यों को संगठित कर सकते हैं। वे संभावित कार्य और उसके परिणामों का अंदाज लगा सकते हैं।

उदाहरण के लिए-शतरंज खेलना, किसी बच्चे के लिए शिक्षा नर्सरी की कविताओं को सुनना भी हो सकता है, इससे उसकी भाषा का विकास होगा।

बौद्धिक विकास : उत्प्रेरक एवं अवस्था

कई मनोवैज्ञानिक अनुसंधान दर्शाते हैं कि शिशु और बच्चे कई अनौपचारिक तरीकों से प्रेरित किए जा सकते हैं जो उनके बौद्धिक विकास के लिए लाभकारी होगा और बाद में उनके विद्यालय जीवन में।

हॉवर्ड के मनोवैज्ञानिक **बुर्टन एल वाइट्स** ने दस वर्षों से सौ से अधिक शिशुओं पर उनके घर के वातावरण में अध्ययन किया। वाइट के अनुसंधान ने उनके सामने निष्कर्ष रखा कि किसी भी बच्चे को 18 से 36 माह तक उस प्रकार शिक्षा नहीं मिली जिसकी वह क्षमता रखता था।

इसमें यह भी सम्मिलित है कि कोई उनसे सहज ढंग से कह रहा है कि उन वस्तुओं का भी उल्लेख करे जिसे एक बच्चा संभाल सकता है। रात को सोते समय बच्चे को सरल कहानियाँ सुनाने का सुझाव दिया गया है। बच्चे को किसी सुरक्षित स्थान पर घूमने देना चाहिए ताकि वह नई-नई चीजों से परिचित हो सके।

उदाहरण—लुका-छुपी का खेल खेलना। बच्चे के पसंदीदा खिलौने छिपा देना और ढूँढ़ने के लिए कहना।

इससे ऊपर यह बच्चों में जिज्ञासा को प्रेरित करता है और उनमें से कुछ उनमें शीघ्र संवेदनशील मोटर कौशल को विकसित करने में सहायक रहती हैं। खेलते समय उनकी निगरानी की आवश्यकता होती है जैसे एक सामान को उठा कर दूसरी जगह रखना।

8 से 14 महीनों तक बच्चे की समझ और कौशल का विकास बहुत तेजी से होता है। माता-पिता उनके सामने बड़ों की तरह बात करते हैं। परन्तु वे ऐसे शब्द सीखने के लिए उन्हें बाध्य नहीं करते। वाइट्स मानते हैं कि उन्हें बच्चों के साथ नए-नए खेल खेलने चाहिए जिसमें उनके अधिक कौशलों का विकास हो सके परन्तु आवश्यकता होने पर उनकी मदद करें।

चौदह महीने का होने के बाद बच्चा साधारण कारण और परिणाम संबंध को समझने लगता है और अधिक कठिन खेल भी खेलने लगता है और अधिक कठिन खेल भी खेलने लगता है। सबसे ऊपर, माता-पिता को बच्चों में सीखने के नैसर्गिक उत्साह को बनाना चाहिए जैसा कि एक वर्ष से दो वर्ष और आधे वर्ष से दो वर्ष तक देखने को मिलता है। सीखने के उत्साह को बढ़ाने से बच्चे द्वारा नवीन जानकारी को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है जो उनके लिए लाभकारी होता है।

तीसरे वर्ष में माता-पिता बच्चे को कई तरीकों से सीखने में प्रोत्साहित कर सकते हैं। माता-पिता को बच्चे के सामने नये-नये शब्दों का प्रयोग करना चाहिए और उन्हें उनका प्रयोग कराने में मदद करनी चाहिए। शब्दों की छोटी-छोटी बातों पर उनका ध्यान दिलाना चाहिए और कारण और परिणाम समझाना चाहिए तथा उन्हें थोड़ी मुश्किल चीजों को करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

एक कारक जो बच्चों के संज्ञानात्मक विकास के लिए महत्वपूर्ण है वह है पोषक आहार। पहले दो वर्षों में मस्तिष्क का विकास तेजी से होता है। इस दौरान एक सामान्य बच्चे में मस्तिष्क की कोशिकाएँ तेजी से बढ़ती हैं। पर्याप्त आहार में कमी बच्चे की प्रगति को कम करता है। जो बच्चे ठीक से खाना नहीं खाते उनमें भाषा संबंधी और बौद्धिक विकास की समस्या देखने को मिलती है। यह एक विवाद का विषय है। टेलीविजन बच्चों का शब्द ज्ञान बढ़ाता सा प्रतीत होता है परन्तु अन्य क्रियाओं से मिलने वाले लाभ को त्याग कर अधिक टेलीविजन देखना हानिकारक है।

छह साल की आयु तक बच्चा मानसिक संरक्षण की समस्या से गुजरता है। प्याजे ने इसे दर्शाने के लिए नींबू का प्रयोग किया। उसने नींबू के रस को दो एक जैसे गिलासों में एक जितनी मात्रा में डाला। पाँच, छह और सात वर्ष के बच्चों ने मान लिया कि इसकी

मात्रा समान है। फिर उन्होंने उसी नींबू के रस को लंबे और पतले गिलासों में पलट दिया। परीक्षण करने वाले ने स्वयं के लिए नींबू का रस पहले वाले गिलास में ही रखा फिर पूछा किसके पास अधिक है? पाँच वर्ष के बच्चे ने कहा कि उनके लंबे गिलासों में वह रस ज्यादा है। छह वर्ष के बच्चे निश्चित रूप से कुछ नहीं कह पाए लेकिन उन्हें लगा उनके पास अधिक है। सात वर्ष का बच्चा समझ गया था कि इन दोनों में कोई अंतर नहीं है।

आनुवंशिकता और पर्यावरण

सनास्टैसी के अनुसार पर्यावरण वह हर चीज है जो व्यक्ति के जीवन के अलावा उसे प्रभावित करती है।

वुडवर्थ कहते हैं, वातावरण में वे समस्त तत्व आ जाते हैं जिन्होंने जीवन प्रारंभ करने के समय से व्यक्ति को प्रभावित किया है। हम सभी की कुछ शारीरिक विशेषताएँ हैं। ये कुछ हद तक हमारे माता-पिता से मिलती हैं। आँखों और बालों का मिलना किसी बच्चे की पहली झलक देखकर ही देखा जा सकता है। बाद में बच्चा कई तरीकों से अपने माता-पिता जैसा दिखने लगता है। उदाहरण के लिए घुंघराले बाल होना पैतृक गुण हैं, इसी तरह से किसी का गंजा होना आनुवंशिकता है।

वे विशेषताएँ जो पीढ़ी दर पीढ़ी देखने को मिलती हैं, वे आनुवंशिकता के कारण होती हैं। उदाहरण के लिए, आनुवंशिकता किसी का कद निर्धारित करती है, कोई बच्चा कद में छोटा रहेगा या औसत या बड़ा ये उसके माता-पिता और दादा-दादी या नाना-नानी की शारीरिक संरचना पर निर्भर करता है।

आनुवंशिक लक्षण के उदाहरण जैसे कर्णपाली का निचला मांसल भाग या जीभ को घुमा पाना या न घुमा पाना। कुछ रोगों के विकसित होने की प्रवृत्ति जैसे दरांती कोशिका अरक्तता। इसकी जानकारी पहले से हो जाने पर इस स्थिति को स्थिर रखा जा सकता है।

अतीत के वारिस

आनुवंशिकता की महत्ता के बावजूद यह नहीं कहा जा सकता कि कोई बच्चा अपने मातापिता की तरह हूबहू दिखेगा। ऐसा कई बार देखने को मिलता है कि बच्चों की आँखों तथा बालों का रंग उनके माता-पिता से नहीं मिलता। क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि उनका चेहरा परिवार में किसी और से मिले। नवजात शिशु का चेहरा उनके पूर्वजों से भी मिल सकता है। ऐसा भी कभी-कभी देखा गया है कि कुछ पीढ़ियों के बाद जन्म लेने वाले किसी शिशु का चेहरा एक या दो पीढ़ियों से पहले रहे पूर्वजों से मिले। ऐसा भी हो सकता है कि कोई बच्चा लंबा हो, जबकि उसके माता-पिता की लंबाई कम हो और वह इस संबंध में अपने दादा-दादी या नाना-नानी या फिर परदादा-परदादी व परनाना-परनानी पर गया हो जो लंबे थे।

जीन और गुणसूत्र

वे बहुत से गुणसूत्र जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे पहुँचते हैं, जीन कहलाते हैं। जीन शरीर की कोशिका की सबसे छोटी इकाई होती है। वैज्ञानिक केवल इस बात पर ही सहमत नहीं होते हैं कि

आनुवंशिकता किसी व्यक्ति के विकास में कितनी महत्वपूर्ण है। वे वैज्ञानिक जो आनुवंशिकता की महत्ता पर जोर देते हैं उन्हें **नेटिविस्ट** कहा जाता है। वे जो विकास में सामाजिक व सांस्कृतिक कारकों पर जोर डालते हैं, उन्हें **पर्यावरणविद्** कहा जाता है। सदियों से, नेटिविस्ट और पर्यावरणविद् आनुवंशिकता, वैयक्तिक विशेषताओं, आनुवंशिकता और पर्यावरण की महत्ता पर वाद-विवाद करते रहे हैं।

सदियों से वैज्ञानिक मानते थे कि आनुवंशिकता मुख्य कारक हैं। शरीर के तरल पदार्थ विशेषरूप से महत्वपूर्ण होते हैं। पित्तस वह तरल पदार्थ है, जो आमतौर पर हरा होता है, जो लीवर से निकलता है। पहले वैज्ञानिक मानते थे कि जिस व्यक्ति को आसानी से गुस्सा आ जाता है उसका पित्तस अधिक निकलता है, जो लोग अधिकतर समय उदास रहते हैं उनका पित्तस काला होता है। पर आज इस विचार को कोई मनोवैज्ञानिक नहीं मानता।

पर्यावरण का प्रभाव

जो मनोवैज्ञानिक अध्ययन पद्धतियों पर अध्ययन करते हैं ऐसा मानते हैं कि पर्यावरण में बदलाव व्यक्तित्व में बदलाव कर सकता है। पर्यावरणविद् मानवीय व्यवहार के संबंध में माना जाता है कि इसे बनाया जा सकता है। वे ये नहीं मानते कि बुरे स्वभाव का व्यक्ति सदैव बुरा ही रहता है। शीघ्र मिलनसार रहने वाले पूर्वज यह मानते हैं कि आने वाली पीढ़ियाँ मिलनसार ही रहेंगी जब तक कि पर्यावरण में उन्हें बदलने वाली स्थितियाँ उत्पन्न न हों।

संस्कृति का प्रभाव

कई मानोविज्ञानी किसी के व्यक्तित्व की विशेषताओं का निर्धारण करने में आनुवंशिकता की महत्ता को कम माना है। मानोविज्ञानी संपूर्ण वातावरण का अध्ययन करते हैं न कि केवल व्यक्तियों का। वे संस्कृति शब्द का प्रयोग किसी व्यक्ति के समूह द्वारा जीने के संपूर्ण तरीके का वर्णन करने के लिए करते हैं।

मनोविज्ञानी जैसे मार्गरेट मीड और रुथ बेनीडिक्ट ने कुछ वर्षों पहले दर्शाया था कि किसी का व्यक्तित्व, विशेषताएँ किसी समूह की संस्कृति के कारण बनते हैं। कुछ इस बात पर भी वाद-विवाद करते हैं कि व्यक्तित्व का निर्माण करने में आनुवंशिकता का कोई महत्व नहीं होता। वे मानते हैं कि मानव जन्म के समय शून्य स्थिति में होता है। बच्चे का व्यक्तित्व उसके पालन पोषण पर निर्भर करता है।

मध्यवर्ती विचारधारा

सबसे प्रचलित स्थिति वह है जब व्यक्तित्व की विशेषताओं को निर्धारित करने के लिए आनुवंशिकता और पर्यावरण साथ में व्यवहार में आते हैं। उदाहरण के लिए कोई शिशु जन्म से ही कोई विशेषता जैसा काफी मुस्कुराने की आदत को लेकर पैदा होता है।

लेकिन बच्चे के अनुभव उसकी वैयक्तिक विशेषताओं को प्रभावित करेंगे जैसे यदि लोग बच्चे को देखकर मुस्कुरा देंगे तो वह विकसित होगी।

कभी किसी का अनुभव उस विशेषता को बदल भी देता है जो उसे अपने वंश से मिली हो।

उदाहरण के लिए—ऐसा भी हो सकता है कि, जन्म के समय कोई बच्चा शारीरिक रूप से औसत हो परन्तु बाद में उसे सर्वश्रेष्ठ आहार मिले और अच्छा वातावरण मिले जो उसके जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जो अनुभव हम निर्धारित करते हैं वे हैं, हम कौन-सी भाषा बोलते हैं, कैसा खाना खाते हैं और कैसा संगीत सुनते हैं या अन्य कई विशेषताएँ।

मनोवैज्ञानिक अलबर्ट बंडूरा मानते हैं कि केवल पर्यावरण के कारक ही किसी के व्यक्तित्व को प्रभावित नहीं करते। ये सामाजिक अध्ययन के नियम वैयक्तिक कारक, हमारे चयन और पर्यावरण पर प्रभाव पर बल देते हैं। अपना पर्यावरण हम स्वयं बनाते हैं। यह दृष्टि इस बात को नकारता है कि लोग या तो आनुवांशिक बल या स्वास्थ्य की समीक्षा से प्रभावित होते हैं। जबकि वे अपने व्यवहार को प्रभावित करते हुए अपने जीवन का पूरा उत्तरदायित्व स्वयं पर लेते हैं।

मनोवैज्ञानिक किस तरह विकास का अध्ययन करते हैं

मानव विकास दोनों बातों पर निर्धारित होता है कि कोई जन्म के समय कैसा है और जन्म के बाद हमारे साथ क्या होता है। मानव विकास का विषय इस बात का अध्ययन करना है कि लोग किस तरह बढ़ते और बदलते हैं। वे परिवर्तन जो किसी के जीवन में आते हैं और व्यक्तियों में परिवर्तन का अंतर दोनों ही मानव विकास के विद्यार्थी की रुचि का विषय हैं। मनोवैज्ञानिक किसी व्यक्ति के व्यवहार, शरीर और मन पर पढ़ने वाले बदलावों का अध्ययन इसमें सम्मिलित है कि मानव कैसे सीखता है। कैसे सोचता है, कैसे याद रख पाता है और कैसे अपनी समस्याओं का समाधान कर पाता है। उन्होंने कुछ अध्ययनों और अनुभवों से यह ढूँढ़ा कि कोई किस तरह विकसित होता है और विकास के संदर्भ में क्यों कुछ लोग किसी से अलग होते हैं। इसके साथ-साथ मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि लोगों का अधिकतर विकास पर्यावरण की स्थितियों या उपचार से होता है।

विकास का अध्ययन करने में प्रयोग होने वाली पद्धति

मनोवैज्ञानिक विकास को दो तरीकों से देखते हैं : तुलनात्मक पद्धति और अधोमुखी पद्धति (Comparative & Downward Method) तुलनात्मक पद्धति में, वैज्ञानिक एक ही समय में तीन वर्ष के कई बच्चों पर काफी अध्ययन करते हैं। इस अध्ययन के अनुसार वे इन बच्चों में समान कौशलों और भावनात्मक विशेषताओं को देखते हैं।

तीन साल की आयु तक बच्चा 1000 शब्द जान पाता है, लेकिन वह उन्हें पढ़ नहीं पाता। वह साईकिल चला पाता है लेकिन खुद से नहीं चला पाता। यदि हम इन बच्चों की छह साल के बच्चों से तुलना करें तो हम इनके विकास के स्तर को समझ पाएँगे। छह साल का बच्चा पढ़ना और लिखना सीखना शुरू कर देता है। वह स्वयं कपड़े पहन पाता है और अपने अन्य निजी कार्य कर पाता है

वैयक्तिक विभिन्नताएँ : बच्चे एक समान दर से नहीं बढ़ते। जैसे कोई एक वर्ष में चलना सीख जाता है तो कोई अठारह महीनों में भी नहीं सीख पाता।

भाषा को सीखने में भी अंतर होता है। यदि बच्चा सामान्य है तो वह सरल से कठिन कई तरह के कार्य सीख पाता है।

हालाँकि तुलनात्मक पद्धति हमें यह तो समझाती है कि आमतौर पर किसी बच्चे के विकास स्तर से क्या अपेक्षा रखनी चाहिए, परन्तु यह विश्वसनीय प्रमाण नहीं है। ऐसा भी हो सकता है कि किसी जगह तो किसी बच्चे को उठाना पड़ता हो, वहीं दूसरे स्थान पर कोई चलना सीख चुका हो। ऐसे बच्चे जो बड़ों से बातचीत करते हैं वे पाँच वर्ष की आयु में भी उनकी तुलना में काफी शब्द बोलना सीख जाते हैं जो बड़ों से बातचीत नहीं करते। किसी बच्चे के विकास की गति तेज व धीमी हो सकती है। जब हम किसी बच्चे की प्रगति को सामान्य मानते हैं, हम उसे किसी विशेष तरह की संस्कृति के लिए सामान्य मानते हैं।

अधोमुखी दृष्टिकोण (Downward Approach)

अधोमुखी दृष्टि एक समय आमतौर पर कई वर्षों या दशकों में एक बच्चे या बच्चों के विकास का अनुसरण करती है। क्योंकि इसमें लोगों का ध्यान रखना मुश्किल होता है क्योंकि वे चले जाते हैं इसीलिए इस तरह के अनुसंधान सामान्य रूप से कम हैं।

अधोमुखी दृष्टि का लाभ यह है कि यह बच्चों का अध्ययन विशिष्ट व्यक्ति के रूप में करता है न कि बच्चों की विकासात्मक अवस्थाओं की तरह। क्या ऐसा बच्चा जो शांत रहता है वह हँसमुख व्यवहार का बनेगा? क्या चिंतित रहने वाले बच्चे आगे चल कर बदमिजाज बनेंगे या सचेत बच्चे बुद्धिमान बनेंगे?

मनोवैज्ञानिक अब सोचते हैं कि स्वभाव की ये विशेषताएँ बहुत जल्दी निहित या निर्मित हो जाती हैं। अधोमुखी अनुसंधानों के प्रयोग से वे कुछ हद तक प्रारंभिक या बाद के अनुभवों के प्रभावों को माप सकते हैं।

बच्चों का पालन-पोषण संबंधी कार्य एवं उनके प्रभाव पूर्व बाल्यावस्था (जन्म से 5 वर्ष)

बच्चों की अपेक्षाएँ : जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं और उनमें परिवर्तन आते हैं उनके लिए मनोवैज्ञानिकों ने उन तरीकों को खोजा है, जिनसे बच्चों की मदद की जा सकती है। यदि पहले से ही यह पहचान लिया जाए कि आने वाले समय में बच्चों में क्या-क्या परिवर्तन अपेक्षित है, इस समस्या के समाधान के बारे में पहले से ही सोचा जा सकता है जैसे दृष्टि व श्रवण समस्या या सीख पाने में अक्षमता की समस्या।

इस तरह व्यवहार को पहचानने से प्रशिक्षण कौशल को बच्चे और प्रशिक्षक दोनों के लिए आसान बनाया जा सकता है। पहले से ही इस बात को जान लेना कि बच्चा अलग-अलग आयु के दौरान किस तरह का व्यवहार करता है, इससे व्यवहारिक सामूहिक क्रियाकलापों चाहे वे पड़ोसियों के साथ हों, प्ले स्कूल में हों या बच्चे का जन्मदिन का समारोह हो, की योजना बनाने में मदद मिलती है।

बच्चे के व्यवहार के अध्ययन का एक लाभ संक्रास (Panic) से बचना भी है। प्रगति के पैटर्न में यह भी सम्मिलित होता है कि

जैसे यदि कोई बच्चा खेल में कुछ समय तक प्रगति नहीं कर पा रहा तो यह कोई अधिक चिंता का विषय नहीं है, इसकी जानकारी पहले से ही अभिभावक को दी जा सकती है।

मध्य बाल्यावस्था (6-12 वर्ष)

यह अवस्था आमतौर पर दो अस्थिर कालों शैशवकाल और किशोरावस्था के मध्य एक स्थिर समय माना जाता है। जबकि मध्यम बाल्यावस्था में कई विकास होते हैं। शिक्षाविद् **रोबर्ट हैवीगस्ट** ने नौ क्रियाओं के बारे में बताया है जो शारीरिक, संज्ञानात्मक और सामाजिक विकास के साथ व्यवहार में हैं :

- (1) सरल खेलों द्वारा शारीरिक कौशलों को सीखना।
- (2) पढ़ने, लिखने और अंकगणित में मूलभूत कौशलों का विकास करना।
- (3) प्रतिदिन जीवन में विकास हेतु कार्य करना।
- (4) विकास की दिशा में अपनी दृष्टिकोण का विकास करना।
- (5) नैतिकता और मूल्यों का विकास करना।
- (6) समान आयु के बच्चों से सीखना।
- (7) पुरुष व महिलाओं की सही सामाजिक भूमिका सीखना।
- (8) सामाजिक समूहों और संस्थानों के प्रति दृष्टि का विकास करना।
- (9) वैयक्तिक आत्मनिर्भरता को प्राप्त करना।

अतः मध्य बाल्यावस्था वह समय होता है जब बच्चा कम ज्ञान से कई तरह की भूमिकाओं को निभाता है।

मनोवैज्ञानिक एल जोसफ और जोसफ चर्च ने बाल समाज कहा है— ‘प्रमाण का ऐसा मैदान जहाँ बच्चा व्यस्कों से अलग रहकर जीना सीखता है।’

इस समय के दौरान सामाजिक संबंधों को बनाने की तीव्र इच्छा होती है।

लड़के और लड़कियाँ छोटे-छोटे समूह बनाकर घनिष्ठ मित्र बन जाते हैं। ऐसे समूह में बच्चे अपनी गुप्त भाषा का प्रयोग भी करते हैं, जिन्हें केवल वही समझ सकते हैं। अपने मित्रों के समूह में रहना उनकी प्रबल इच्छा होती है वहीं उनसे अलग होने पर वे दुखी हो जाते हैं। इस काल के दौरान लड़के और लड़कियों का संबंध किशोरावस्था तथा व्यस्कों से संबंधों जैसा गंभीर नहीं होता। यह धारणा वर्ष 6 से 9 के बीच में निश्चित रूप से उचित मानी जाती है। चौथी कक्षा का विद्यार्थी अक्सर ऐसी बातें कर सकता है कि “लड़के अच्छे होते हैं” या मैं केवल एक ही महिला को पसंद करता हूँ, अपनी माँ को।” हालाँकि मध्य बाल्यावस्था की शुरुआत में लड़के और लड़कियों के बीच में प्रेमालाप होती देखने को मिलती है।

इस अवस्था में पर्यावरण के अनुसार व्यवहार में बदलाव आता है। शहरी मध्यवर्गीय परिवारों के बच्चों को सुरक्षा के बंधन के कारण छोटे शहरों व ग्रामीण बच्चों की तुलना में कम स्वतंत्रता मिलती है। छोटे क्षेत्रों के बच्चे परिवार की आर्थिक स्थिति को विशेष रूप से समझते हैं जब वे इस कार्य में भाग लेते हैं। बच्चों की दुनिया का वातावरण उस समाज से बनता है जहाँ सभी रहते हैं।

लैंगिक भूमिकाओं की समझ

- कम समय में बच्चे पुरुष या महिला की तरह व्यवहार करना सीख जाते हैं। मध्य बाल्यावस्था के दौरान वे पुरुष व महिला की तरह व्यवहार करना सीखते हैं। लिंग की भूमिका उसके पुरुष या महिला होने पर निर्भर होती है। किस तरह इसे सीखा जा सकता है?
- विद्वान मानते हैं कि बच्चे इसे अपने बड़ों से सीखते हैं। कोई लड़का अपने पिता और अन्य पुरुष सदस्यों से सीखता है कि पुरुष कैसे व्यवहार करता है वहीं माँ व अन्य स्त्रियाँ किसी लड़की को महिला की भूमिका सिखाने में महत्वपूर्ण है।
- कुछ मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि लिंग की भूमिका विपरीत लिंग पर निर्भर करती है। उदाहरण के तौर पर कोई माँ जो खाना पकाती है, पुत्र उससे प्रभावित होकर खाना बनाने में रुचि ले सकता है।
- कुछ लोग पारम्परिक रूप से चली आ रही भूमिकाओं से ही खुश हैं जिसमें पुरुष बाहर जाकर कार्य करता है और महिला घर पर रहती है। जबकि संपूर्ण दृष्टि से देखने पर समाज में बदलाव आया है। पुरुष और महिलाओं की भूमिका को **सामूहिक लिंग भूमिका** के नाम से माना जाने लगा है। इस बदलते दौर में किसी की भूमिका निभाना उसके व्यक्तिगत चयन पर निर्भर करता है। आज कुछ बच्चे पारंपरिक भूमिकाओं को सीख रहे हैं वहीं कुछ सामूहिक और अधिकतर बच्चे कुछ इन दोनों स्थितियों के आसपास का ही सीख रहे हैं।

नैतिक विकास (Moral Development)

मध्य बाल्यावस्था के दौरान बच्चा मूल्यों, विचार और दृष्टिकोण विकसित करता है जो कि अन्य लोगों द्वारा संचलित किए जाते हैं। सामाजिक विकास के इस पहलु के संबंध में नैतिक धारणाएँ महत्वपूर्ण हैं जो कि कोई स्वयं व अन्यो के व्यवहार के प्रति निर्मित करता है। ऐसी धारणाएँ इस बात पर इतना निर्भर नहीं करती हैं कि हम किसी दी गई स्थिति में कैसा व्यवहार करते हैं बल्कि हम जैसा मानते हैं कि वैसा करना चाहिए इस पर निर्भर करती है।

उदाहरण के तौर पर—आमतौर पर हम किसी छोटे बच्चे पर हाथ नहीं उठाते, भले ही इसके लिए हमें सजा न मिले परन्तु हम मानते हैं कि नैतिक रूप से ऐसा करना गलत है।

बच्चा किस प्रकार नैतिक धारणाएँ बनाना सीखता है?

यह साधारण रूप से सही और गलत का अंतर सीखना है। हॉवर्ड मनोवैज्ञानिक लॉरेंस कोलबर्ग (Lawrence Kohlberg) ने इस बात पर गहराई से अध्ययन किया है कि किन आधारों पर बच्चे और युवा नैतिक निर्णय लेते हैं। वह मानते हैं कि नैतिक प्रगति शीघ्र हो जाती है और अवस्थाओं में आगे बढ़ती है।

- नैतिक मूल्य किसी व्यक्ति की आवश्यकता व इच्छाओं में निहित होता है।
- नैतिक मूल्य अच्छी व सही भूमिका निभाने में और दूसरों को खुश रखने में निहित होते हैं।
- नैतिक मूल्य सिद्धांतों में निहित होते हैं, उनसे अलग होते हैं जो उन्हें पकड़े रखते हैं और बाध्य करते हैं और जो किसी व्यक्ति की पहचान से बाध्यता से अलग होते हैं।
- कोलबर्ग ने तीन अलग-अलग स्तरों पर तीन भिन्न धारणाएँ दर्शायी हैं। हालांकि कोलबर्ग के अनुसार बहुत से लोग दूसरे स्तर से आगे नहीं बढ़ेंगे।
- कोलबर्ग के नियमों की उन लोगों द्वारा आलोचना की गई जो मानते थे कि धार्मिक आस्था के कारण लोग शुद्ध नैतिक मूल्यों पर चलते हैं।

कोलबर्ग का नैतिक विकास का स्तर

I. पूर्व परम्परागत स्तर

II. परम्परागत स्तर

III. उत्तर परम्परागत स्तर

कोलबर्ग मानते हैं कि ये अवस्थाएँ एक क्रम में चलती हैं और उम्र से जुड़ी हुई हैं। 9 साल की उम्र से पहले बच्चे पहले स्तर पर काम करते हैं। अधिकतर किशोर तीसरी अवस्था में सोचते पाए जाते हैं पर उनमें दूसरी अवस्था और चौथी अवस्था के इस अवस्था में नैतिक आचरण संपूर्ण रूप से आंतरिक नियंत्रण में होता है। यह नैतिकता का उच्च स्तर होता है। कोलबर्ग ने यह बताया कि जैसे-जैसे बालक परिपक्व होता है वैसे-वैसे उसकी नैतिकता का स्तर बढ़ता है। व्यक्ति नैतिकता के किसी भी चरण को छोड़कर आगे नहीं बढ़ सकता है। प्रत्येक क्रम को उसे पार करना होता है।

I. पूर्व परम्परागत या पूर्वनैतिक

(Pre-Conventional or Amoral) विकास (4-10 वर्ष)

यह नैतिक विकास का सबसे निचला चरण है। इस चरण में क्या सही और गलत है, पर बाहर से मिलने वाली सजा और उपहार का प्रभाव पड़ता है।

चरण 1. आज्ञा एवं दण्ड की अवस्था : नैतिकता इस पूर्व परम्परागत अवस्था का पहला चरण है। यहां नैतिक सोच, सजा से बंधी होती है। जैसे बच्चे यह मानते हैं कि उन्हें बड़ों की बातें मानी चाहिए नहीं तो बड़े उन्हें दण्डित करेंगे।

चरण 2. अहंकार की अवस्था

- इस अवस्था का कार्यकाल तीसरे वर्ष से शुरू वर्ष के शुरू होकर 6 वर्ष तक का होता है।
- इस अवस्था के बालक की सभी व्यवहारिक क्रियाएँ अपनी वैयक्तिक आवश्यकता और इच्छाओं की पूर्ति के चारों ओर केंद्रित रहते हैं बालक के लिए वही नैतिक होता है जो उसके स्व अथवा आत्म कल्याण से जुड़ा हुआ हो।

व्यक्ति केन्द्रित, एक-दूसरे का हित साधने पर आधारित नैतिक विकास : यह पूर्व परम्परागत अवस्था का दूसरा चरण है यहां बच्चा सोचता है कि अपने हितों के अनुसार कार्य करने में कुछ गलत नहीं है, पर हमें साथ में दूसरों को भी उनके हितों के अनुरूप काम करने का मौका देना चाहिए। अतः इस स्तर की नैतिक सोच यह कहती है कि वही बात सही है जिसमें बराबरी का लेन-देन हो रहा हो। अगर हम दूसरे की कोई इच्छा पूरी कर दें तो वे भी हमारी इच्छा पूरी कर देंगे।

II. परम्परागत (Conventional) स्तर (10-12 वर्ष)

यह कोलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांतों की दूसरी अवस्था है। इस अवस्था में लोग एक पूर्व आधारित सोच से चीजों को देखते हैं। जैसे देखा गया है कि अक्सर बच्चों का व्यवहार उनके मां-बाप या किसी बड़े व्यक्ति द्वारा बाए गए नियमों पर आधारित होता है।

चरण 3. प्रशंसा की अवस्था : यह कोलबर्ग के नैतिक विकास की इस स्थिति में लोग विश्वास, दूसरों का ख्याल रखना, दूसरों के निष्पक्ष व्यवहार को अपने नैतिक व्यवहार का आधार मानते हैं। बच्चे और युवा अपने माता-पिता द्वारा निर्धारित किए गए नैतिक व्यवहार के मापदण्डों को अपनाते हैं जो उन्हें उनके माता-पिता की जरूरत में एक “अच्छा लड़का या अच्छी लड़की” बनाते हैं।

चरण 4. सामाजिक व्यवस्था के प्रति सम्मान की अवस्था

- 7 वर्ष से लेकर किशोरावस्था के प्रारंभिक काल तक यह अवस्था होती है।
- इस अवस्था का बालक सामाजिकता के गुणों को धारण करता हुआ देखा जाता है। अतः उसमें समाज के बनाए नियमों परंपराओं तथा मूल्यों को धारण करने संबंधी नैतिकता का विकास होता हुआ देखा जा सकता है।
- इस अवस्था में उसे अच्छाई बुराई का ज्ञान हो जाता है और वह यह समझने लगता है कि उसके किस प्रकार के आचरण या व्यवहार से दूसरों का हित या ठेस पहुंच रही है।

सामाजिक व्यवस्था आधारित नैतिक विकास : यह कोलबर्ग के सिद्धांतों की चौथी इस अवस्था में लोगों के नैतिक विकास की अवस्था सामाजिक आदेश, कानून, न्याय और कर्तव्यों पर

आधारित होती हैं। जैसे किशोर सोचते हैं कि, समाज अच्छे से चले इसके लिए कानून के द्वारा बनाए गये दायरे के अन्दर ही रहना चाहिए।

III. उत्तर परम्परागत (Post-Conventional) स्तर (13 से 19 वर्ष)

कोलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांतों के तीसरे स्तर में व्यक्ति द्वारा वैकल्पिक रास्ते खोजे जाते हैं और फिर अपना एक व्यक्तिगत नैतिक व्यवहार का रास्ता ढूंढा जाता है।

चरण 5. सामाजिक समझौते की अवस्था

- यह अवस्था किशोरावस्था से जुड़ी हुई अवस्था होती है।
- इस अवस्था में बालकों का सामाजिक शारीरिक तथा मानसिक विकास अपनी ऊंचाइयों को छूने लगता है। और उसमें आत्म चेतना की शुरुआत हो जाती है।
- यह मेरा आचरण है, मैं ऐसे व्यवहार करता हूँ इसकी उसे अनुभूत होने लगती है तथा अपने व्यवहार आचरण और व्यक्तित्व संबंधी गुणों की स्वयं ही आलोचना करने की प्रवृत्ति उसमें पनपने लगती है।
- पूर्णता की चाह स्वयं से असंतुष्ट रहने का मार्ग प्रशस्त करती है। यही असंतुष्टी उसे समाज परिवेश में जो कुछ गलत हो

रहा है सदा उसे बदल डालने व परंपराओं के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाने को प्रेरित करती है।

सामाजिक अनुबंध, उपयोगिता और व्यक्तिगत अधिकारों पर आधारित नैतिक विकास

यह कोलबर्ग के सिद्धांत की इस अवस्था में व्यक्ति यह सोचने लगता है कि कुछ मूल्य, सिद्धांत और अधिकार कानून से भी ऊपर हो सकते हैं। व्यक्ति वास्तविक सामाजिक व्यवस्थाओं का मूल्यांकन इस दृष्टि से करने लगता है कि वे किस हद तक मूल अधिकारों व मूल्यों का संरक्षण करते हैं।

चरण 6. विवेक की अवस्था

- नैतिक व चारित्रिक विकास की यह चरम अवस्था है परिपक्वता ग्रहण करने के बाद ही इस अवस्था का विकास संभव है।
- जिस प्रकार के नैतिक आचरण और चारित्रिक मूल्यों की बात बालक विशेष में की जाती है। उसके पीछे केवल उसकी भावनाओं का प्रवाह मात्र ही नहीं होता। बल्कि वह अपनी मानसिक शक्तियों का उचित प्रयोग करता हुआ। अच्छी तरह सोच समझकर इसी व्यवहार विशेष को अपने व्यक्तित्व गुणों में धारण करता हुआ पाया जाता है।

किशोरावस्था का काल

12 से 14 वर्ष की आयु में बच्चा बचपन से निकल कर किशोरवस्था में प्रवेश करता है। इस अवस्था में उस पर सामाजिक दबावों और शारीरिक बदलावों के चलते व्यवहार में अलग तरह के परिवर्तन होने लगते हैं :

किशोरावस्था में बालक को अनेक शारीरिक परिवर्तनों से गुजरा पड़ता है। इसलिए स्टेनले हॉल ने कहा है कि, 'किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तनाव, तूफान तथा विरोध की अवस्था है।' किशोरावस्था मनुष्य के जीवन का बसंतकाल माना गया है। यह काल तेरह से उन्नीस वर्ष तक रहता है, परंतु किसी किसी व्यक्ति में यह बाईस वर्ष तक हो सकता है। यह काल भी सभी प्रकार की मासिक शक्तियों के विकास का समय है। भावों के विकास के साथ-साथ बालक की कल्पना का विकास होता है। उसमें सभी प्रकार के सौंदर्य की रुचि उत्पन्न होती है और बालक इसी समय नए-नए और ऊंचे आदर्शों को अपनाता है। बालक भविष्य में जो कुछ होता है, उसकी पूरी रूपरेखा उसकी किशोरावस्था में बन जाती है।

शारीरिक परिवर्तन

औसत रूप से लड़कियों में शारीरिक परिवर्तन साढ़े 10 से साढ़े 12 वर्ष के अंतराल पर, वहीं लड़कों में साढ़े 12 से साढ़े 14 वर्ष के दौरान देखने को मिलते हैं। इसके आगे दो वर्ष के दौरान लड़कों में लंबाई बढ़ने लगती है, चेहरे पर हल्की दाढ़ी आने लगती है व आवाज में पिता के समान भारीपन आने लगता है व यौन अंगों का विकास होने लगता है। लड़कियों में महिला की आकृति का विकास होने लगता है। उनका वक्ष विकसित होने लगता है। शारीरिक विकास यौन परिपक्वता का आरंभ होता है। शरीर में अचानक ये परिवर्तन क्यों आते हैं? मस्तिष्क में पीयूष ग्रंथि से खून के माध्यम से हॉर्मोन का स्राव पहुँचने लगता है। मुख्य ग्रंथि पीयूष कई ग्रंथियों को नियंत्रित करती है।

- पीयूष ग्रंथि द्वारा नियंत्रित होने वाली अधिवृक्क, थाइराइड और जननग्रंथियाँ हैं। अधिवृक्क ग्रंथि तनाव संबंधी स्थितियों से प्रभावित होती हैं। थाइराइड ग्रंथि शरीर का पाचन, ऑक्सीजन का प्रयोग और साधारण गतिविधियों को नियंत्रित करती है। जननग्रंथियाँ यौन परिवर्तन करती हैं। ये प्रजनन में सहायक वीर्य और डिंब को उत्पन्न करने में सहायक हैं। ये सभी छोटे-छोटे अंग आपस में कार्य करते हैं। जरूरत पड़ने पर यह अंग दूसरों को संकेत देते हैं और हॉर्मोन आसानी से सक्रिय हो जाते हैं।
- इसी कारण से किशोर खतरे को देखकर शीघ्र प्रतिक्रिया देते हैं और शारीरिक रूप से आकर्षक व्यक्ति को देखकर उसकी तरफ ध्यान देने लगते हैं।

सारणी 1. इरीक इरीक्सन द्वारा दी गई विकास की अवस्थाएँ

	अवस्था	अनुमानित आयु (वर्ष)	विकास का परिणाम अच्छा है	विकास का परिणाम संदिग्ध है
I.	शैशवकाल	0-1	विश्वास	अविश्वास
II.	बाल्यावस्था	2-3	स्वायत्ता	शर्म एवं संदेह
III.	खेलने की उम्र	4-5	पहल	अपराध बोध
IV.	विद्यालय जाने की उम्र	6-11	परिश्रम	हीनता
V.	किशोरावस्था	12-20	पहचान	भूमिका का संदेह
VI.	वयस्क	21-35	अंतरंगता	अलगाव
VII.	मध्यम आयु	35-65	उत्पादक	आत्मावलोकन
VIII.	वृद्धावस्था	65+	संपूर्णता	निराशा

- हालाँकि हॉर्मोन जीवन-भर सक्रिय रहते हैं। परन्तु यह तरुणावस्था (Puberty) लड़कियों में तेजी से गतिशील हो जाते हैं और इसका प्रभाव किशोरावस्था पर पड़ता है। अचानक से लड़के व लड़कियों के शरीर में बदलाव देखने को मिलते हैं, चाहे तब भी विचार और भाव बच्चों जैसे हों। हालाँकि किशोरावस्था में शारीरिक उत्तेजनाओं का होना जैविक क्रिया है परन्तु इसे महसूस करने को अनुचित मानना हमारी संस्कृति की अपेक्षा मानी जाती है।

पारिवारिक प्रभाव

कई अध्ययन ऐसा दर्शाते हैं कि किशोर का व्यवहार आरंभ में घर पर मिले अनुभव पर निर्भर करता है। ये अनुभव आमतौर पर ऐसे तरीकों पर ध्यान दिलाते हैं कि बच्चे का पालन-पोषण सख्ती से किया गया है या उदारता से, प्रेम से किया है या अस्वीकृति से या प्रोत्साहन से किया है या उदासीनता से। ऐसा माना गया है कि जैसे कोई किशोर तभी विश्वसनीय बनता है जब उसे प्यार मिलता है और संभवतः देखा गया है कि जो किशोर अपराध करते हैं, उन्हें असंगत ढंग मिले हों और उनके साथ एकपक्षीय ढंग से व्यवहार किया गया हो।

किशोरावस्था के आयाम

कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी, बर्कली की डायना बामरिंड, ने किशोरों और उनके परिवार पर कई विचारों पर अध्ययन किया। उनके निष्कर्ष, ने पालन-पोषण के तरीकों और किशोरों में संस्कारों के विकास में मजबूत संबंध स्थापित किया। उनकी कुछ स्थापनाएँ निम्नलिखित हैं—

(1) सामाजिक रूप से सक्षम किशोर ऐसे घरों से आते हैं जिनका सामाजिक स्तर और आत्म सम्मान बहुत ऊँचा होता है। किशोर स्वयं को अपने परिवार के आदर्श के रूप में दिखाते हैं।

(2) सफल और आत्मनिर्भर किशोरों के अभिभावक उन्हें कुछ बड़ा परन्तु व्यवहारिक करने के लिए बाध्य करते हैं। यदि बच्चा माता-पिता की उम्मीद पूरी नहीं कर पाता तब बाध्यता में आलोचना और विरोध शामिल होता है वहीं जब बच्चा सफल हो जाता है तो कार्य और सहयोग सम्मिलित होता है।

(3) जो किशोर अपने माता-पिता से बात कर पाते हैं उनमें आत्मविश्वास होता है कि वे जिस पर विश्वास रखते हैं, वे उस कार्य को आत्मनिर्भरता व अहिंसा से कर सकते हैं। जो अभिभावक अपनी माँगों की व्याख्या नहीं करते उनके बच्चे आत्मनिर्भर होते हैं।

बामरिंड परिवारों के पालन-पोषण और किशोरों के व्यवहार के बारे में कई विचार व्यक्त करती हैं। वे मानती हैं कि जो बच्चे परेशानी में होते हैं उनके परिवारों में अनुशासनहीनता और भावनात्मक रूप से अलगाव देखने को मिलता है। जब माता-पिता बेटियों से अधिक अपेक्षा रखने लगते हैं लड़कियाँ आत्मनिर्भर होकर रहना चाहती हैं। वे चाहती हैं कि अभिभावक उन्हें आवश्यकता से अधिक सुरक्षा न दें।

किशोरावस्था के व्यक्तित्व

स्टोन और चर्च, ने कई अवलोकन किए और किशोरावस्था के व्यक्तित्व को निम्नलिखित चार भागों में वर्गीकृत किया—

(1) परंपरावादी—कभी-कभी ही कुछ अलग सोचते हैं। उनका उद्देश्य समाज के अनुसार चलना ही होता है। ये धार्मिक प्रवृत्तियों को स्वीकार करते हैं और इनके पारिवारिक संबंध अच्छे होते हैं इनके तौर तरीके अच्छे होते हैं और ये स्वयं इच्छा से कार्य करते हैं। हालाँकि इन्हें मजा करना पसंद होता है। ये केवल उन्हीं स्थानों पर भागीदार बनते हैं जिन्हें सामाजिक रूप से स्वीकृति प्राप्त होती है या जो उचित माने जाते हैं।

(2) आदर्शवादी—समाज में बदलाव लाना चाहते हैं। वे अन्याय के प्रति संवेदनशील होते हैं। वे विश्व को बदलने के लिए अध्यापन, चिकित्सा जगत में कार्य चुनते हैं या समुदायिक कार्यों में सम्मिलित रहते हैं।

(3) सुखवादी—भविष्य की चिंता न करते हुए वर्तमान में जीते हैं। इनका जीवन सुख से भरा होता है और ये किसी ऐसे कार्य की तलाश में रहते हैं जो इन्हें आगे बढ़ते के लिए दबाव बनाए। हालाँकि ये जीवन का आनंद लेते हुए प्रतीत होते हैं। ऐसे लोग स्वयं व बाहरी दुनिया दोनों से अलग रह कर मस्त स्वभाव के होते हैं।

(4) मनोरोगी—इस बात से अनजान होते हैं कि वे दूसरों पर अपना दबाव बनाते हैं। वे दूसरों के लिए नैतिक रूप से सजग नहीं होते और उनके कोई सिद्धांत नहीं होते। वे स्वार्थी होते हैं और उन्हें

इस बात का अपराधबोध भी नहीं होता। इसीलिए, परवाह किए बिना दूसरों को नुकसान पहुँचाने में भी नहीं चूकते। वे क्रूर स्वभाव के होते हैं और खतरनाक भी।

उल्लेखनीय है कि परंपरावादी समाज के लिए आदर्शवादी हो सकते हैं और आदर्शवादी मन से परंपरावादी हो सकते हैं। हममें से कुछ के अंदर सुखवादियों के लक्षण होते हैं और कुछ के अंदर मनोरोगियों के लक्षण भी होते हैं। जब हम अपनी चेतना में नहीं होते, हम दूसरों का बुरा करने पर भी अपराधबोध महसूस नहीं करते। किशोरावस्था के ये व्यवहार 20 या 21 वर्ष के होने पर एकदम से समाप्त नहीं हो जाते। बहुत सी धारणाएँ व्यस्क होने तक रहती हैं। उदाहरण के तौर पर परंपरावादी किशोर जब बड़े भी हो जाते हैं तब भी उनका व्यवहार ऐसा ही रहता है।

मनोसामाजिक विकास (Psycho-Social Development) हेतु एरिक्सन का नियम

मनोविश्लेषक **इरीक इरीक्सन** मानव विकास को मनोसामाजिक अवस्थाओं की श्रेणी के रूप में सोचते हैं। प्रत्येक अवस्था में किसी बच्चे के व्यक्तित्व की कुछ निश्चित विशेषताएँ उभरती हैं। ये विशेषताएँ जीवन भर बनी रहती हैं जब तक आगे चलकर कुछ अलग तरह का अनुभव न हो।

एरीक्सन कहते हैं बच्चों द्वारा आरंभिक देखभाल-कर्ता पर विश्वास किया जाना आवश्यक है, जो आमतौर पर उसकी माँ होती है। यदि ऐसा न हो तो भविष्य में वह संबंधों पर विश्वास करने में समस्या का अनुभव करेगा।

- एरीक्सन के अनुसार, प्रत्येक अवस्था व्यक्ति के विकास संकट को दर्शाती है। इरीक्सन ने संकट शब्द प्रयोग सामान्य विकास के संबंध में किया है। हम सभी जीवन में संकट का अनुभव करते हैं। यदि हम उसे सकारात्मकता से सुलझा लेते हैं तो हमारे व्यक्तित्व का विकास हो जाता है। यदि नहीं कर पाते तो नकारात्मक विशेषताएँ आ जाती हैं। अधिकतर लोग न तो 100 प्रतिशत सफल होते हैं और न ही 100 प्रतिशत असफल। वे इन दोनों स्थितियों के बीच में होते हैं। इरीक्सन मानते हैं कि आरंभ में चिकित्सा के जरिए इसे सुलझाया जा सकता है।
- एरीक्सन की अवस्थाओं को **सारणी-1** में दर्शाया गया है। प्रत्येक अवस्था में लगभग आयु के बारे में बताया गया है। इरीक्सन ने देखा कि अलग-अलग लोग अलग अवस्थाओं में अलग-अलग अनुभव करते हैं।
- एरीक्सन के मतानुसार शैशवकाल से किशोरावस्था तक बच्चे की प्रगति निर्भर करती है। दो से तीन वर्ष का होने पर बच्चा दुविधाओं से ऊपर उठने लगता है। अपने आसपास की चीजों के साथ खेलकर वह नियंत्रण स्थापित करना सीख जाता है। वह स्वयं शौच जाना सीखता है जो उसे आत्मनिर्भरता का बोध कराता है।

- चार से पाँच की आयु में पहुँच कर वह प्रोत्साहित करने पर आगे सोचता है। इस अवस्था में वह पहल करना सीखता है और बड़ों को यह समझना मुश्किल हो जाता है कि चार या पाँच वर्ष का बच्चा यह समझ पा रहा है कौन सा काम उसके लिए करना सुरक्षित है।
- छह से ग्यारह वर्ष के दौरान वह दुर्बलता से उठकर विद्यालय व अन्य सामाजिक संस्थानों में मूलभूत कौशलों का विकास कर पाता है। घर से बाहर मिलने वाले लोगों का प्रभाव उसके जीवन के लिए महत्वपूर्ण बन जाता है। यदि वे बाहर निकल कर क्रियाकलापों को करने में सफल हो जाता है तो उसके मन में सफलता का अहसास होता है अन्यथा वह स्वयं को हीन समझने लगता है।

अन्तर्मन में झांकना

इससे आगे जाकर यदि हम अस्तित्व के संकट की बात करें, एरीक्सन मानते हैं कि यह इस भावना का विकास है कि तुम कौन हो? जिसका संबंध व्यक्ति के अस्तित्व से हो। यह आमतौर पर चरण 5 में होता है। किशोरावस्था में यह सामने आना कि वास्तव में आप वैसे नहीं हैं जैसा कि आप सोचते हैं जिसे जानकर आप अकसर हैरान हो जाते हैं। ऐसा भी हो सकता है कि कोई बच्चा हाई स्कूल तक फुटबॉल का बहुत अच्छा खिलाड़ी रहा हो लेकिन बाद में उसे सख्त शारीरिक क्रियाकलाप करना अच्छा न लगे, क्योंकि उसने अपना संवेदनशील और कलात्मक पक्ष अब पहचाना हो, जिसके बारे में उसे भी पता न हो कि वह ऐसा भी सोच या कर सकता है। कोई शर्मीली या घबराई हुई लड़की आगे चलकर आत्मविश्वासी महिला बन जाए। परिवर्तन कई दिशाओं में संभव होते हैं।

अस्तित्व बनने के साथ या इसके तुरंत बाद कोई किशोर आत्मनिर्भर बन सकता है या किसी की नकल करने लगता है। तब भी अकसर स्वतंत्रता आती है जब किशोर अपने घर व माता-पिता से अलग रहने लगता है लेकिन मनोविज्ञानिक स्तर पर आत्मनिर्भरता या तो पहले आ सकती है या काफी बाद में। किशोरावस्था में बच्चों की आत्मनिर्भरता को लेकर वाद-विवाद होना कई परिवारों में आम बात है।

पहचान का संकट

इरीक्सन के अनुसार, इस भावना का विकास करना कि आप कौन हैं? संभवतः उत्तर किशोरावस्था का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण विकास कार्य है। इस काल में अधिकतर किशोर अपने तत्व पर प्रश्न करने लगते हैं। कुछ पक्ष यह होते हैं कि माता-पिता किसी से क्या अपेक्षा रखते हैं पर अस्तित्व की खोज अकसर व्यक्ति को विशिष्ट तथा मजबूत बनाती है।

मूल्यों पर प्रश्न उठाना

किशोरावस्था के दौरान अकसर अभिभावकों द्वारा दिए गए संस्कारों पर प्रश्न किए जाते हैं। जो माता-पिता धार्मिक प्रवृत्ति के होते हैं वे अपने पुत्र या पुत्री को यदि धर्म से दूर होते देखते हैं तो उन्हें निराशा होती है।

कभी-कभी इस समय में भविष्य में आजीविका के लिए क्षेत्र चुनने पर भी प्रश्न उठाए जाते हैं। यदि किसी लड़की की माँ चाहती है कि उसकी बेटी नर्स बने पर वह बेटी अचानक से मेडिकल/नर्सिंग स्कूल जाने का भी सोच सकती है और छोड़ने का भी सोच सकती है और वह यह भी निर्णय कर सकती है कि उसे मित्रों के साथ कुछ समय के लिए घर से दूर रहना है। भविष्य को लेकर मातापिता और बच्चों में आमतौर पर वाद-विवाद देखने को मिलते हैं और ऐसी बातें करना बहुत ही आम है कि “यह मेरी जिंदगी है। मैं जो चाहता/चाहती हूँ, वही करूँगा/करूँगी।”

“बेवकूफ मत बनो। तुम्हारी माँ और मैं यूँ ही चुप खड़े रह कर तुम्हें अपनी जिंदगी बेकार नहीं करने देंगे।”

ऐसा जानना शायद थोड़ी राहत दे कि माता-पिता बच्चों की भविष्य के लिए बनाई गई योजना को स्वीकार कर लेते हैं। वहीं माता-पिता के लिए यह एक राहत की बात होती है कि बच्चे किशोरावस्था में स्थिरता से नहीं सोच पाते और इसीलिए उनकी बात मान लें।

उत्तर किशोरावस्था वह समय होता है जब कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति से घनिष्टता रखने लगता है। किसी से घनिष्टता रखने का अर्थ स्वयं को प्रक्रिया में शामिल करना। इरीक्सन महसूस करता है कि घनिष्टता पहचान के बाद आती है, सबसे पहले आपको स्वयं को जानना होता है ताकि आप दूसरों से भी अपनी बात कर सकें। कुछ मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि किसी के साथ घनिष्ट संबंध जैसे पहला पुरुष या महिला मित्र बनना किसी के अस्तित्व के निर्माण का महत्वपूर्ण अंश होता है।

साथियों (Peer Group) के साथ संबंध

मनोवैज्ञानिक **जेम्स कोलमेन** ने अपने अनुसंधान में एक परिणाम निकाला कि किशोरों की अपनी ही एक उपसंस्कृति होती है। इसमें व्यस्कों के जीवन से अलग अन्य पक्षों पर बल दिया जाता है। **कोलमेन** तर्क करते हैं कि माता-पिता, शिक्षक और उनके बड़े चाहते हैं कि वे अच्छे विद्यार्थी बनें लेकिन किशोर अन्य चीजों को महत्वपूर्ण समझते हैं। लड़कों में, कोई सोच सकता है कि वह अच्छा खिलाड़ी बनें और लड़कियाँ आकर्षक दिखना चाहती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक इन मामलों में पिता का उपस्थित न होना भी महत्वपूर्ण कारक मानते हैं। ऐसे अधिकतर मामलों में कहा जाता है “पिता घर पर रहते होंगे”, “पर वह पैसे कमाने में बहुत व्यस्त रहते हैं जिसके कारण उनके पास बच्चों के लिए समय ही नहीं रहता”। संगति का प्रभाव मजबूत होने लगता है और आप देखेंगे कि सामाजिक स्वीकृति हेतु संपन्न परिवारों के किशोर भी चोरी करते पाए होंगे।

मनोविज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों ने **कोलमेन** के दृष्टिकोण के बचाव तथा आलोचना में लेख लिखे हैं। बहुत से समाज शास्त्री कोलमेन किशोरावस्था के जीवन की अलग स्थितियों की व्याख्या करने में बहुत आगे तक चले गए। इनका मानना है कि बहुत से किशोर अधिकतर बातों में अपने बड़ों को देखकर ही व्यवहार करते हैं और कुछ ही स्थितियों में वे अपने बड़ों की अपेक्षाओं के विरुद्ध जाते हैं।

बाल अपराधी (Delequent) अथवा किशोरापराधी की संकल्पना

- बाल अपराधी सामान्यतः 9 से 18 वर्ष का बच्चा माना जाता है। समाज के नियमों और व्यवहार के तय मानकों को स्वीकार न करने पर यह स्थिति उत्पन्न होती है। कुछ समाज शास्त्री कहते हैं कि कभी-कभी समाज के नियम अस्पष्ट होते हैं या कभी-कभी निर्धारित भी नहीं होते।
- कुछ सामाजिक वैज्ञानिक मानते हैं कि बाल अपराध का मुख्य कारण उन बच्चों के व्यक्तित्व में ही छिपा है जो इन अपराधों को करते हैं।
- किशोरों द्वारा किए जाने वाले अपराध देश में चली आ रही लंबे समय से एक समस्या है। बहुत से वर्षों से सामाजिक शास्त्री बाल अपराध की सामाजिक आर्थिक व्याख्या करते रहे हैं। अधिकतर बाल अपराध वाद-विवाद के विषय हैं, जिन्हें निम्न आय वाले के शहरी किशोर लड़कों ने अंजाम दिया होता है। वे इसका वर्णन इस तरह करते हैं कि उन्होंने ये अपराध अपने जीवन के बचाव और साथियों में अपने आत्मसम्मान को बढ़ाने व गरीबी से लड़ने के लिए किया।
- इसके बाद समाजशास्त्री इस नियम में मनोवैज्ञानिक तथ्य भी जोड़ देते हैं। घर में किशोरों द्वारा तभी अपराध होते हैं जब पिता नहीं होते।
- गरीबी और पिता का न होना इस मामले को सहयोग करता है। लेकिन ऐसे बहुत से निम्नवर्गीय परिवार भी हैं, जहाँ पिता नहीं होते परन्तु वे तो ऐसे अपराध नहीं करते, जो इस नियम को पूरी तरह सत्य होने के लिए नकारता है।
- इसके अतिरिक्त, संपन्न परिवारों में भी बात अपराधों की संख्या बढ़ने लगी है। इनमें से अधिकतर अपराधों में सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारकों को सम्मिलित किया जाता है। सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा इन अपराधों के लिए दी गई व्याख्याएँ उनके अलग-अलग विचारों को दर्शाती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक व्याख्याएँ देते हैं कि कुछ लोगों का व्यक्तित्व हिंसात्मक होता है। कुछ सामाजिक व्याख्याएँ देते हैं कि हम हिंसात्मक समाज में रहते हैं।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- विकास शुरू होता है—
 (1) गर्भावस्था से (2) शैशवावस्था से
 (3) पूर्व बाल्यावस्था से (4) बाल्यावस्था के बाद से
- मानव विकास को इन क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है—
 (1) संवेगात्मक, संज्ञानात्मक, आध्यात्मिक और सामाजिक मनोवैज्ञानिक
 (2) मनोवैज्ञानिक, संज्ञानात्मक, संवेगात्मक और शारीरिक
 (3) शारीरिक, आध्यात्मिक, संज्ञानात्मक और सामाजिक
 (4) शारीरिक, संज्ञानात्मक, संवेगात्मक और सामाजिक
- नैतिक विकास को समझने में एक महत्वपूर्ण अवधारणा समावेश है, किसने कहा है?
 (1) कोहलबर्ग (2) सिग्मंड फ्रॉयड
 (3) मार्टिन हॉफमैन (4) इनमें से कोई नहीं
- बाल विकास की किस अवस्था में बालक का आकर्षण विषमलिंगी के प्रति अधिक हो जाता है?
 (1) शैशवावस्था (2) बाल्यावस्था
 (3) किशोरावस्था (4) प्रौढ़ावस्था
- निम्न में से कौन-सा विकास का सिद्धान्त नहीं है?
 (1) विशिष्ट से सामान्य क्रियाओं का सिद्धान्त
 (2) निरन्तरता का सिद्धान्त
 (3) विभिन्नता का सिद्धान्त
 (4) एकीकरण का सिद्धान्त
- पियाजे के अनुसार, संज्ञानात्मक विकास के किस चरण पर बालक 'वस्तु निष्पादन' को प्रदर्शित करता है?
 (1) औपचारिक सक्रियात्मक चरण
 (2) संवेदीगामक चरण
 (3) पूर्व-सक्रियात्मक चरण
 (4) मूर्त सक्रियात्मक चरण
- बच्चों के बौद्धिक विकास के चार विशिष्ट चरणों को प्रतिपादित किया गया—
 (1) कोहलबर्ग द्वारा (2) एरिक्सन द्वारा
 (3) स्किनर द्वारा (4) पियाजे द्वारा
- निम्नलिखित में से किस चरण में बच्चे अपने समवयस्क समूह के सक्रिय सदस्य बन जाते हैं?
 (1) किशोरावस्था (2) वयस्कावस्था
 (3) शैशवावस्था (4) बाल्यावस्था
- विकास को साकार करने वाले पर्यावरणीय कारक में निम्नलिखित में से किसके अलावा सभी शामिल हैं?
 (1) संस्कृति
 (2) शिक्षा की गुणवत्ता
 (3) शारीरिक सौष्ठव
 (4) पोषण की गुणवत्ता
- “विकास अनवरत प्रक्रिया है”, यह विचार संबंधित है—
 (1) अन्तर्संबंध का सिद्धान्त
 (2) निरन्तरता का सिद्धान्त
 (3) एकीकरण का सिद्धान्त
 (4) अंतः क्रिया का सिद्धान्त
- बच्चों के भाषायी विकास का महत्वपूर्ण चरण कौन-सा होता है?
 (1) शिशु अवस्था में
 (2) बाल्यावस्था में
 (3) किशोरावस्था में
 (4) वयस्क अवस्था में
- एल्बर्ट बैन्डूरा—
 (1) दंड का भय सकारात्मक नैतिक विकास की कुँजी है।
 (2) अच्छी शिक्षा सकारात्मक नैतिक विकास की कुँजी है।
 (3) स्वः नियमन सकारात्मक नैतिक विकास की कुँजी है।
 (4) अमूर्त तर्क सकारात्मक नैतिक विकास की कुँजी है।
- एक बालक की सिर से पैर की ओर विकास की दिशा कहलाती है।
 (1) सिफेलो-कॉडल (2) समीप से दूर
 (3) कोडो-सिफेलिक (4) दूर से समीप
- प्रारंभिक शिशु देखभाल एवं शिक्षा को कहा जाता है :
 (1) ICDS (2) ECCE
 (3) MDMS (4) DIET
- “किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तनाव, तूफान तथा विरोध की अवस्था है।”—यह कथन है :
 (1) रम्सफील्ड का (2) ई.ए. किल्पैट्रिक का
 (3) सिम्पसन का (4) स्टेनली हॉल का

प्राथमिक एवं प्रारंभिक स्कूली बच्चों का विकास

16. बाल्यावस्था को 'संवेगात्मक विकास का अनोखा काल' कहा है—

- (1) ई. एल. थॉर्नडाइक
- (2) जे.बी. वाटसन
- (3) बी.एफ. स्कीनर
- (4) कोल एवं ब्रुश

17. तीव्र शारीरिक विकास की अवस्था मानी जाती है—

- (1) शैशवावस्था
- (2) बाल्यावस्था
- (3) किशोरावस्था
- (4) वयस्कावस्था

18. प्युबर्टी (Puberty) का तात्पर्य किस अवस्था से सम्बद्ध है?

- (1) शैशवावस्था
- (2) बाल्यावस्था
- (3) किशोरावस्था
- (4) वयस्कावस्था

19. विकास का सम्बन्ध होता है—

- (1) मात्रात्मक
- (2) गुणात्मक
- (3) भावात्मक
- (4) इनमें से सभी

20. मानवीय विकास कुछ निश्चित सिद्धान्तों पर आधारित होता है। इनमें से कौन-सा सिद्धान्त मानवीय विकास का नहीं है?

- (1) शृंखलाबद्ध
- (2) सामान्य से विशेष
- (3) प्रतिवर्ती
- (4) निरंतरता

21. अवधारणाओं का व्यवस्थित प्रदर्शन निम्न में से किन सिद्धान्तों के विकास से संबंधित है?

- (1) विकास प्रगति की ओर ले जाता है।
- (2) विकास अधीनता से स्वायत्ता की तरफ ले जाता है।
- (3) बच्चे विभिन्न दरों से विकसित होते हैं।
- (4) विकास अपेक्षाकृत व्यवस्थित है।

22. ब्लूम का वर्गीकरण श्रेणीबद्ध संगठन है—

- (1) उपलब्धि लक्ष्य
- (2) पाठ्यक्रम घोषणाएँ
- (3) पठन कौशल
- (4) संज्ञानात्मक उद्देश्य

23. डे केयर क्या है?

- (1) बच्चों की देखभाल की प्रक्रिया
- (2) बच्चों के लिए निवास केन्द्र
- (3) बच्चों के अधिगम की प्रक्रिया
- (4) शिशुओं के लिए निवास केन्द्र (0-10 वर्ष)

24. एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक से विशेषताएँ पहुँचती हैं।

- (1) आनुवंशिकता
- (2) जीन
- (3) पर्यावरण
- (4) गुणसूत्र

25. लिंगों की पारम्परिक भूमिका से तात्पर्य है—

- (1) पुरुष कार्य करने के लिए बाहर जाता है और महिला घर संभालती है।
- (2) पुरुष घर संभालता, और महिला कार्य करती है।
- (3) पुरुष-महिला दोनों कार्य पर जाते हैं।
- (4) इनमें से कोई नहीं

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(4)	3.	(1)	4.	(3)	5.	(1)
6.	(4)	7.	(4)	8.	(1)	9.	(3)	10.	(2)
11.	(3)	12.	(3)	13.	(1)	14.	(2)	15.	(4)
16.	(1)	17.	(1)	18.	(3)	19.	(4)	20.	(3)
21.	(4)	22.	(4)	23.	(2)	24.	(1)	25.	(1)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (2) विकास निरंतर और जीवनपर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है। यह शैशवावस्था अर्थात् शिशु के जन्म के साथ आरंभ होता है और व्यक्ति की मृत्यु के साथ समाप्त होता है। इसमें व्यक्ति का संपूर्ण जीवन-काल शामिल है।
2. (4) मानव विकास के प्रमुख क्षेत्र हैं—शारीरिक, बौद्धिक (संज्ञानात्मक), संवेगात्मक, (भावात्मक), नैतिक, सौंदर्यात्मक और सामाजिक विकास।
3. (1) कोहलबर्ग के अनुसार नैतिकता विकास की सार्थक समावेशी समझ पैदा करती है जो कि आंतरिक मानकों व सिद्धान्तों द्वारा नियंत्रित होता है।
4. (3) किशोरावस्था विकास तथा समायोजन का वह समय है जो बचपन तथा प्रौढ़ अवस्था में अन्तरकालीन समय होता है। किशोर-किशोरियों में इसी अवस्था में एक-दूसरे के प्रति बहुत आकर्षण उत्पन्न होता है।
5. (1) सामान्य से विशिष्ट की ओर का सिद्धान्त चिंतन-तर्क से सम्बद्ध है। बालक पहले सामान्य वस्तुएँ और बाद में विशिष्ट या विशेष बातें सीखता है। उदाहरण के लिए शब्दावली का निर्माण करने में बालक पहले सामान्य शब्द और बाद में विशिष्ट शब्द सीखता है।
6. (4) इस अवस्था की एक विशेषता है बालक की वस्तुओं को वर्गीकृत करने, समूह बनाने तथा उन्हें क्रमिक रूप से व्यवस्थित करने एवं उनके बीच संबंध को समझने में समर्थ हो जाता है।

7. (4) जीन पियाजे के बौद्धिक विकास की अवधारणा की चार अवस्थाएँ हैं : (1) ज्ञानेन्द्रियगामक अवस्था (2) पूर्व क्रियात्मक अवस्था (3) मूर्त क्रियात्मक अवस्था (4) औपचारिक क्रियात्मक अवस्था।
8. (1) किशोर व्यक्ति अपने मित्रों एवं साथियों (Peer group) के साथ रहना अधिक पसंद करते हैं। किशोर जिस समूह का सदस्य होता है उसके प्रति वह बहुत वफादारी प्रदर्शित करता है।
9. (3) वंशानुगत एवं पर्यावरणीय कारक : संस्कृति, शिक्षा एवं पोषण की गुणवत्ता। विकास को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं। शारीरिक सौष्ठव वंशानुगत कारक है जो विकास को प्रभावित नहीं करता है।
10. (2) निरंतरता के सिद्धान्त के अनुसार विकास निरंतर जारी रहता है। शारीरिक और मानसिक गुणों का विकास धीरे- धीरे तब तक जारी रहता है। जब तक इन गुणों की वृद्धि अधिकतम तक न पहुँच जाए।
11. (2) भाषायी विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण चरण व रोना, तुतलाना, वर्णयुग्म एवं शब्दोचरण इसी चरण में संभव होते हैं।
12. (3) एल्बर्ट बैन्डूरा का मानना है कि नैतिक विकास को सामाजिक व संज्ञानात्मक कारकों के संयोजन विशेषकर उन कारकों जिनमें आत्म नियंत्रण शामिल है, विचार करके समझा जा सकता है।
13. (1) इस विकास का अर्थ है Cephalo-Caudal जिसमें विकास क्रम लम्बवत् रूप में सिर से पैर की ओर होता है। सबसे पहले बालक अपने सिर और भुजाओं की गति पर नियंत्रण करना सीखता है, और उसके बाद टाँगों का इसके बाद वह अच्छी तरह बिना सहारे खड़ा होना और चलना सीखता है।
14. (2) ECCE अर्थात् एलिमेंटरी चाइल्ड केयर एण्ड एजुकेशन वस्तुतः पूर्व बाल्यावस्था की शिक्षा है जो प्राथमिक शिक्षा का पूर्ववर्ती संस्करण एवं आधार है।
प्रारंभिक शिशु देखभाल एवं शिक्षा : (ECCE) की सर्वोच्च प्राथमिकता राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में दी गई थी।
अतः नयी शिक्षा नीति-1986 का यह आयाम बालस्वास्थ्य एवं पोषण को सुनिश्चित करता है।
15. (4) किशोरावस्था तनाव (Stress) और तूफान (Storm) की अवस्था है। यह स्टेनली हाल नामक मनोवैज्ञानिक का कथन विश्वव्यापी चर्चा का विषय रहा है: “किशोरावस्था बड़े मानसिक तनाव, तूफान और विरोध की अवस्था है।”
16. (1) बाल्यावस्था जिज्ञासा, अवलोकन और प्रयोग का काल होता है। इस अवस्था में बच्चा चलना, दौड़ना, कूदना और गेंद के खेलना सीखता है। इस अवस्था में ही बच्चा अच्छे और बुरे में अंतर करना शुरू कर देता है। इसे दल, टोली की उम्र के रूप में भी जाना जाता है। कोल तथा ब्रुश ने इस अवस्था को ‘संवेगात्मक विकास का अनोखा काल कहा है’।
17. (1) जन्म से 2 वर्ष तक शारीरिक विकास की गति अत्यन्त तीव्र रहती है। शैशवावस्था में शारीरिक विकास बहुत तेजी से होता है। बालक की तुलना में बालिकाओं में विकास अधिक शीघ्र होता है। इसे शैशवावस्था की पुनरावृत्ति माना जाता है।
18. (3) किशोरावस्था में यौवन आरंभ (Puberty) के लक्षण प्रकट होते हैं। यहीं किशोरावस्था की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता कामइन्द्रियों की सक्रियता एवं परिपक्वता है।
19. (4) जिसमें नवीन क्षमताएँ प्रकट होती हैं। वृद्धि का संबंध शरीर के समस्त अंगों में आए परिवर्तनों के संगठन से है, जबकि विकास का संबंध मात्रात्मक व गुणात्मक दोनों से है।
20. (3) मानव विकास में लोगों की स्वतंत्रता और अवसरों को विस्तृत करने और उनके स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की प्रक्रिया प्रतिवर्त्य व प्रतिवर्ती क्रिया तंत्रिका तंत्र जनित क्रिया है।
21. (4) व्यवस्थित अधिगम में तर्कशील अवधारणाओं जैसे $1+1=2$ की अनुक्रमशीलता की संरचना सम्मिलित है। यह व्यवस्थित विकास की परिणति है।
22. (4) यह तीन अनुक्रमिक नमूनों का समूह है जो कठिनाता और विशिष्टता के स्तर पर शैक्षिक अधिगम उद्देश्यों का वर्गीकरण ज्ञान, कर्म एवं भाव पर आधारित है।
23. (2) डे केयर वह स्थान है जहाँ बच्चों की देखभाल किसी व्यक्ति द्वारा की जाती है जो उसका संवैधानिक अभिभावक नहीं है। आमतौर पर यहां पारिवारिक सदस्य नहीं होता।
24. (1) पीढ़ी दर पीढ़ी विशेषताओं का पाया जाना आनुवंशिकता कहलाता है।
25. (1) आजकल, लिंग की सामूहिक भूमिका को ही बदलते दौर के कारण अपनाया जाने लगा है। लिंग की पारस्परिक भूमिका कार्य सहभागिता और श्रम विभाजन पर आधारित है।

□□□

बुद्धि की संकल्पना

बुद्धि शब्द अंग्रेजी के Intelligence से बना है जो Inter और Legere से मिलकर बना है। इसके तीन पक्ष होते हैं : कार्यात्मक, संरचनात्मक और क्रियात्मक।

यदि किसी से पूछा जाए कि बुद्धि की परिभाषा क्या है, तो ऐसा देखा गया है कि विभिन्न लोग विभिन्न उत्तर देंगे।

“बुद्धि सोचने और सीखने की योग्यता है।”

“बुद्धि अनुभव से प्रतिफल प्राप्त करने की योग्यता है और ज्ञात से अज्ञात तक पहुँचने का कारण है”

“बुद्धि संबंधों को देखने और समझने की योग्यता है।”

“बुद्धि पर्यावरण में नवीन और बदलती स्थितियों को अपनाने की योग्यता है।”

स्टर्न के अनुसार, “नई स्थिति में समायोजित होने की योग्यता बुद्धि है”। टर्मेन के अनुसार, “बुद्धि अमूर्त विचारों के बारे में सोचने की योग्यता है।”

बिनेट के अनुसार, “अच्छे चिंतन, अच्छे निर्णय तथा आत्मालोचना की योग्यता है।”

बुद्धि वस्तुतः अमूर्त विचार है। बुद्धि को हम देख या स्पर्श नहीं कर सकते। यह मस्तिष्क के किसी विशेष हिस्से में नहीं है। मनोविज्ञान के अनुसार, इसे किसी व्यक्ति के व्यवहार या निष्पादन में ही अनुमानित किया जा सकता है। कुछ ने बौद्धिक निष्पादन के सही माप को विकसित करने का प्रयास भी किया है। कुछ ये तर्क करते हैं कि बुद्धि की एकमात्र विश्वसनीय परिभाषा है कि बुद्धि जिसका ‘परीक्षण’ करे इसका ‘परीक्षण’ करो।

बुद्धि के विभिन्न सिद्धान्त

अधिकतर बौद्धिक परीक्षण सामान्य ज्ञान पर आधारित कार्य होते हैं जिनसे ‘बौद्धिक व्यवहार’ बनता है। इनमें से कई कार्य कई चीजों की परीक्षा लेते हैं जैसे शब्दों, अंकों और स्थानिक पैटर्नों, स्मृति कौशलों, सामान्य ज्ञान और विश्व संबंधी तथा समस्या समाधान कौशलों में संबंध को समझने की योग्यता का परीक्षण करना।

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने बुद्धि परीक्षण के निष्कर्षों का विश्लेषण करने का काम किया है जिससे इस बात के प्रति हमारी समझ का विकास हुआ है कि बुद्धि है क्या।

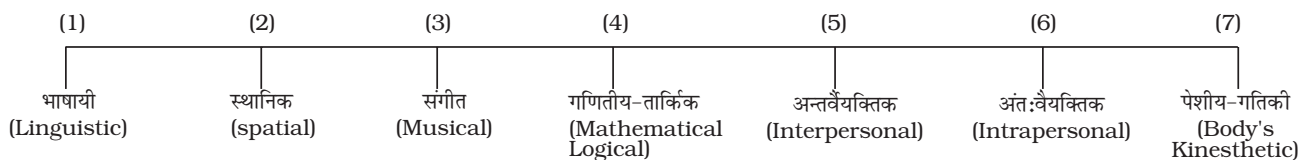
I. चार्ल्स स्पीयरमैन (1927) ने बुद्धि के द्विकारकीय सिद्धांत (Two Factor theory) के बारे में बताया है। वे मानते हैं कि बुद्धि को मापने वाले सामान्य कारक और विशिष्ट कारकों (General & Specific factor) में अंतर है। वे मानते हैं कि सामान्य कारक (General factor-G) वे हैं जो एक तरह की ‘मानसिक ऊर्जा’ है जो जिसे विशिष्ट कारकों Specific factors द्वारा सामान्य ऊर्जा को व्यक्त करने के लिए निर्देशित किया जाता है। इसके बाद कुछ मनोवैज्ञानिकों ने माना कि ये दो कारक सभी प्रकार की बुद्धि के बारे में विस्तार से बताने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।

II. एल.एल. थर्स्टन द्वारा समूहकारकीय सिद्धांत (Group factor theory) को बताया गया है। इसके अंतर्गत बुद्धि को व्यापक रूप से स्वीकृत किया है। उन्होंने बुद्धि को नौ विशिष्ट कारकों में वर्गीकृत किया है—

- (1) संख्या कारक—अंकों की गणना संबंधी समस्याओं को हल करने की योग्यता।
- (2) स्थान कारक—चीजों को तीन आयामों में देख पाने और विभिन्न वस्तुओं के मध्य संबंधों को देख पाने की योग्यता रखना।
- (3) मौखिक प्रवाह—संवाद करने और ऐसे शब्दों का उपयोग कर पाने की योग्यता रखना जिसे कोई समझ सके।
- (4) शाब्दिक तत्व—शब्दों का समझने की योग्यता।
- (5) स्मृति कारक—भूतकालीन अनुभवों को याद करने की योग्यता।
- (6) निगमन कारक—निगमन तर्क के आधार पर समस्याओं को हल करने की योग्यता।
- (7) आगमन तर्क—चिंतन की आगमन प्रक्रिया।
- (8) समस्या समाधान संबंधी योग्यता तत्व।
- (9) अवधारणात्मक कारक—छोटी-छोटी बातों को देख पाने और उद्दीपन (स्थिति) के अंतर्गत शीघ्र अंतर ढूँढ पाने की योग्यता।

नोट—प्रत्येक व्यक्ति के पास यह योग्यता अलग-अलग मात्रा में होती है। कोई व्यक्ति किसी एक कारक में बेहतर है तो कोई किसी और कारक में।

III. जे.पी. गिलफोर्ड का बुद्धि सिद्धान्त—मॉडल ऑफ इंटेलिक्ट (त्रिआयामी अथवा श्री डायमेंशनल-3D) मनोवैज्ञानिक जे.पी. गिलफोर्ड ने 1967 में 150 विभिन्न बौद्धिक कारकों को पहचाना। उन्होंने बुद्धि के क्षेत्र को व्यापक बनाने हेतु रचनात्मकता और काल्पनिकता को कारकों के रूप में सम्मिलित किया। चूँकि वे मानते थे कि सभी के पास रचनात्मक योग्यता का सम्बंध तीन आधारभूत बौद्धिक आयामों से है :



संक्रिया (Operation) = 5 तत्व

विषयवस्तु (Content) = 5 तत्व

उत्पाद (Product) = 6 तत्व

इस आधार पर बुद्धि को पहचाने एवं परिभाषित करने पर जोर है। इन विशिष्ट तत्वों या कारकों की अन्तःक्रिया के माध्यम से $5 \times 4 \times 6$ कारकों की उपस्थिति दर्शायी गई है। देखें—

इस प्रकार गिलफोर्ड के अनुसार बुद्धि के कुल = $5 \times 5 \times 6 = 150$ कारक या तत्व होते हैं।

संक्रिया	विषयवस्तु	उत्पाद
1. संज्ञान (Cognition)	1. आकृति जन्य-दृश्यात्मक (Figurative and Visual)	1. इकाइयों की वर्ग श्रेणी (Class)
2. स्मृति (Memory)	2. आकृति जन्य-श्रव्य (Figurative-Audible)	2. सूचना की इकाई (Units)
3. बहुविध (Divergent)	3. संकेतात्मक (Symbolic)	3. इकाइयों में संबंध (Relation)
4. अभिसारी (Convergent)	4. शब्दार्थ (Semantic)	4. सूचना प्रणाली (System)
5. मूल्यांकन (Evaluation)	5. व्यवहारगत (Behavioural)	5. रूपांतर प्रणाली (Transformation)
		6. अनुप्रयोग (Implication)

गिलफोर्ड बुद्धि का त्रि-आयाम सिद्धांत

IV. गार्डनर के बहु-बुद्धि सिद्धांत (Multiple theory of Intelligence) के अनुसार सात प्रकार की बुद्धि होती है। व्यक्ति की बौद्धिक कार्य प्रणाली के स्तर के सच्चे मूल्यांकन के लिए बुद्धि के सभी सातों प्रकारों का ज्ञान आवश्यक है।

V. बहुकारक सिद्धान्त (Multifactor theory or Aonarchic theory) — इस सिद्धान्त के मुख्य समर्थक थॉर्नडाइक थे। जैसा कि नाम से स्पष्ट होता है, इस सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि कई तत्वों का समूह होती है और इसमें कोई सूक्ष्म योग्यता निहित होती है। अतः सामान्य बुद्धि नाम की कोई चीज नहीं होती बल्कि बुद्धि विशिष्ट योग्यताएँ निहित रहती हैं जो विभिन्न कार्यों को सम्पादित करती है।

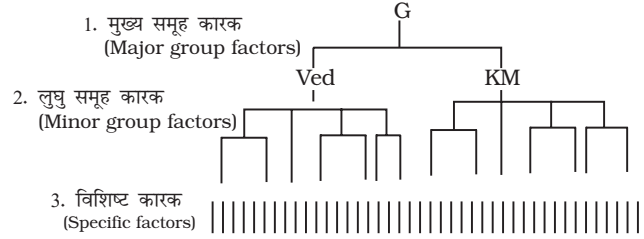
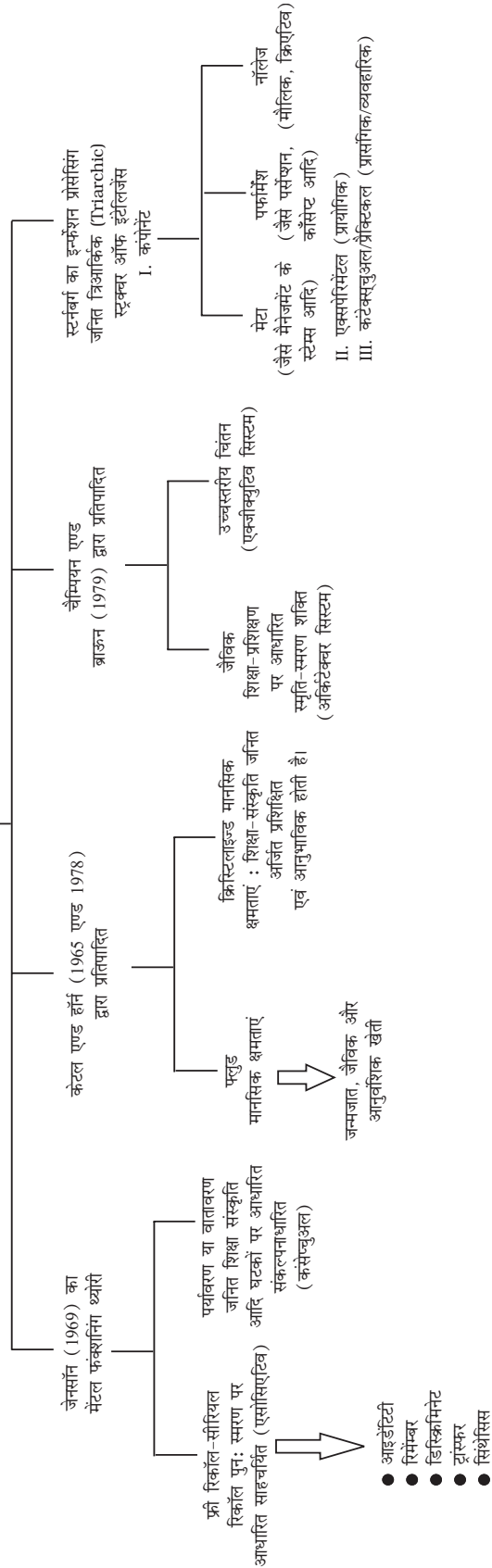
VI. जी.एच. थॉमसन कृत सैम्पलिंग सिद्धान्त (G.H. Thomson's Sampling theory) — इस सिद्धान्त के अनुसार तत्वों से बनी होती है। कोई विशिष्ट परीक्षण या विद्यालय संबंधी क्रिया में इनमें से कुछ तत्व स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं। यह भी हो सकता है कि दो या अधिक परीक्षाओं में एक ही प्रकार के तत्व दिखाई दें—तब तत्व की विद्यमानता मानी जाती है। यह भी संभव है कि अन्य परीक्षाओं में विभिन्न तत्व दिखाई भी तत्व सामान्य नहीं होगा और प्रत्येक तत्व अपने आप में विशिष्ट होगा। इस सिद्धान्त में बुद्धि की विभिन्न सिद्धान्तों की कुछ मान्यताएँ विद्यमान हैं, जैसे—थॉर्नडाइक (Thorndike) के सिद्धान्त के समान दिखाई देता है—सिवाय इस बात के कि इसमें G तत्व को व्यावहारिक उपयोगिता माना गया है।

थर्स्टन (Thurstone) के ग्रुप-तत्व (Group Factor) की व्यावहारिक उपयोगिता को भी यहां प्रमुख माना गया है।

VII. हेरार्किकल सिद्धान्त (Vernon's Hierarchical theory) — ब्रिटेन के मनोवैज्ञानिक पी.ई. वर्नन P.E. Vernon ने संरचना को समझने हेतु एक श्रृंखलाबद्ध प्रारूप प्रस्तुत किया जिसे अग्रांकित चित्र के आधार पर जाना जाता है।

परिणामस्वरूप जैसा कि वर्नन का विचार है मानव बुद्धि की संरचना श्रृंखलाबद्ध रूप में इस प्रकार है कि शुरुआत 'G' नामक कारक Factor) से होती हैं यह बहुत ही महत्वपूर्ण आधारभूत मानसिक योग्यता का प्रतिनिधित्व करता है जिसका निदान बुद्धि परीक्षणों के द्वारा प्रारम्भिक चरण में ही कर दिया जाता है। इस कारक के अन्तर्गत दो मुख्य समूह कारक, जिन्हें क्रमशः Ved तथा KM नाम दिया जाता है, विद्यमान रहते हैं। Ved का संबंध मौखिक (Verbal) योग्यता, संख्या संबंधी योग्यता (Numerical ability) तथा शैक्षिक योग्यता (Educational ability) से होता है। जबकि KM का संबंध प्रयोगात्मक (Practical), यांत्रिक (Mechanical), स्थान संबंधी (Spatial) तथा शारीरिक (Physical) योग्यताओं से होता है। Ved तथा KM नामक दो मुख्य समूह कारक (Major group factors) सकता है और फिर इन्हें लघु कारकों एवं योग्यताओं से जुड़े हुए विभिन्न विशिष्ट कारकों (Specific factors) में विभाजित किया गया है।

बुद्धि के विभिन्न संज्ञानात्मक सिद्धान्त



संज्ञान क्या है?

संज्ञान (Cognition) का शाब्दिक अर्थ 'बुद्धि द्वारा जानने की प्रक्रिया' है सामान्यतया यह जानने, समझने, प्रक्रियाओं और सूचनाओं के उपयोग करने से संबंधित है तथा इनको मानसिक योग्यता या बुद्धिमत्ता के घटक के रूप में समझा जाता है संज्ञानात्मक विकास वाले के बौद्धिक विकास में जुड़ी हुई अवस्थाओं व प्रक्रियाओं से संबंधित है।

मानव प्रसंस्करण तंत्र की एक सामान्य विशेषता जिसके बारे में हमें सोचना है यह एक ऐसा तंत्र है जो केवल सीखना ही नहीं है परन्तु कैसे सीखना (सीखने के तरीकों) है यह भी सिखाता है।

जब कोई व्यक्ति या विद्यार्थी अपने सोचने समझने व सीखने के तरीकों से अवगत रहता है जिसे अमेरिकन मनोवैज्ञानिक 'अधिबोधन' (Metacognition) कहते हैं, तो वह अपने क्रियाओं और सीखने की प्रक्रिया पर नियंत्रण करके अधिक योग्यता अर्जित करता है।

कृत्रिम बुद्धि (Artificial Intelligence)

कम्प्यूटर-इंटरनेट के एडवांस वर्जन जनित मशीनी बुद्धि जो भविष्य में मानव बुद्धि का पर्याय बनेगा।

बुद्धि परीक्षण का उद्गम

आज प्रयुक्त होने वाले बुद्धि परीक्षण फ्रेंचमैन, अल्फ्रेड बिनेट के कार्यों पर आधारित हैं। फ्रेंच शिक्षा मंत्रालय द्वारा बिनेट को फ्रेंच विद्यालयों में ऐसे बच्चों को पहचानने के तरीके खोजने के लिए कहा गया जो मानसिक रूप से मंद थे, जिन्हें सामान्य विद्यालयों में पढ़ाया जा सके और जिन्हें विशेष शिक्षा की आवश्यकता है। ये परीक्षण उनमें अंतर करने के लिए किए गए जो मात्र नेत्रहीन थे और जो वास्तव में मानसिक रूप से मंद हैं।

बिनेट तथा साइमन के विशेष योगदान से प्रथम बुद्धि परीक्षण का निर्माण 1905 ई. में हुआ। बुद्धिमापन की सफलता से उत्साहित बिनेट तथा साइमन ने 1908 ई. बुद्धि परीक्षण में सुधार करके नवीन रूप में प्रस्तुत किया। वर्ष 1911 में बिनेट-साइमन परीक्षण का रूपान्तरण अंग्रेजी में गोडार्ड द्वारा किया गया।

बिनेट ने पहला परीक्षण 30 ऐसे सामान्य कार्यों पर किया जो दैनिक अनुभवों पर आधारित थे। ये कार्य समूहों में आयु के अनुसार व्यवस्थित हैं। बिनेट ने यह निर्णय किया कि किस आयु वर्ग के लिए कौन सा कार्य उचित है, फिर उसी के अनुसार विभिन्न आयु वर्गों के बच्चों को कार्य दिए गए। यदि किसी दिए गए कार्य को समान आयु वर्ग के समूह के सभी बच्चों की संख्या की आधी संख्या के बच्चे भी परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते हैं तो यह मान लिया जाता है कि यह कार्य किसी निश्चित आयु वर्ग के लिए उचित है।

बुद्धिलब्धि : आई क्यू (IQ : Intelligent Quotient) का निर्धारण

बिनेट ने समान आयु के बच्चे द्वारा किए जाने वाले सामान्य कार्य को किसी बच्चे द्वारा उचित रूप से किए गए कार्य की तुलना की है। इसे उन्होंने बच्चे की मानसिक आयु (MA) बताया है। बिनेट ने इस अंक को आई क्यू तक पहुँचने तक उसकी तिथिगत (वास्तविक आयु-CA) से तुलना की है। इसे मानसिक आयु को तिथिगत आयु से विभाजित करके खंड या दशमलव को हटाने के लिए 100 से गुणा किया जाता है।

$$\frac{MA}{CA} \times 100 = I.Q$$

यदि बच्चे की मानसिक और तिथिगत आयु समान हो तब उसका आई क्यू 100 होगा। यथा

$$\frac{6(MA)}{6(CA)} \times 100 = 100$$

यदि कोई बच्चा समान आयु जितने बच्चे की तुलना में कुछ कार्य करने में सफल हो जाता है तब उसका आई क्यू 100 से कम होगा।

यह सूत्र व्यक्तों पर लागू नहीं होता क्योंकि किशोरावस्था में तिथिगत आयु में वृद्धि के अर्थ से मानसिक आयु में वृद्धि होना आवश्यक नहीं है। तो वयस्कों के लिए आई क्यू को किसी व्यक्ति को समान आयु के व्यक्ति की तुलना में प्राप्त किए गए अंकों से आकलित किया जा सकता है। यदि व्यक्ति किसी समूह में औसत अंक प्राप्त करता है तो उसका आई क्यू औसत (100) होगा। आई क्यू का यह अंतर हमें बताता है कि कोई व्यक्ति औसत से कितना ऊपर या नीचे है।

उत्कृष्ट बुद्धि (Superior Intelligence)

उत्कृष्ट बुद्धि क्या है। आई क्यू के अंकों को उत्कृष्ट बुद्धि को एक माप में के रूप में प्रयोग किया जाता है। 140 की आई क्यू या उससे अधिक के लोगों को गुणवान कहा जाता है। प्रवीण एक ऐसी अवधारणा है, जिन्हें 150 या उससे अधिक की आई क्यू वाले लोगों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। किस तरह के लोग बौद्धिक रूप से गुणवान माना जाता है? वे किस तरह के हैं और वे क्या करते हैं?

गुणवान बच्चे समान आयु के किसी औसत बच्चे से पहले पढ़ना, लिखना और गणना संबंधी समस्याओं को हल करना सीख जाते हैं। अध्ययन दर्शाते हैं कि गुणवान बच्चे आमतौर पर विद्यालय में सीखने की कोशिश करते हैं। वे अन्य अधिकतर बच्चों से पहले अपने आसपास की सामाजिक समस्याओं से कम आयु में ही परिचित हो जाते हैं। ऐसे बच्चों की अलग रूचियाँ होती हैं और ये औसत लोगों से बेहतर ढंग से व्यवस्थित हो पाते हैं। इस वर्ग के लोगों में आत्महत्या और तलाक के मामले कम देखने को मिलते हैं।

बुद्धि लब्धि का वर्गीकरण (Classification of I.Q.)

स्टर्न द्वारा दिये गये बुद्धि लब्धि के सूत्र का प्रयोग करते हुए टरमैन ने अपने बुद्धि परीक्षणों के द्वारा बहुत से व्यक्तियों तथा बालकों की (विभिन्न आयु वर्गों के) बुद्धि परीक्षाएँ लीं। उसने पाया कि बुद्धि

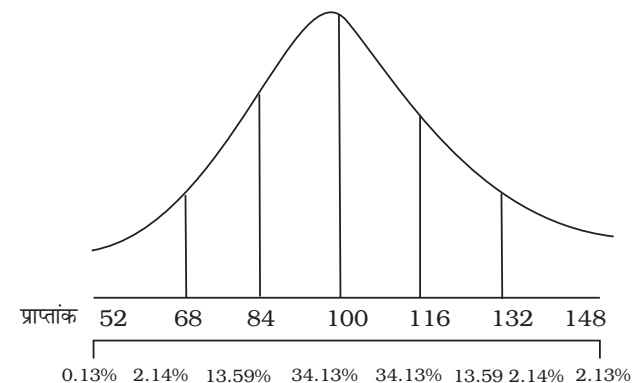
की दृष्टि से व्यक्तियों तथा बालकों में बहुत अधिक भिन्नताएं पाई जाती हैं। अगर इन भिन्नताओं का ध्यान से अवलोकन किया जाए तो व्यक्तियों को उनकी बुद्धि लब्धि के हिसाब से विभिन्न बुद्धि समूहों में विभाजित किया जा सकता है जिसमें उन्हें औसत से कम या अधिक बुद्धिमान बताया जा सके। इस प्रकार का एक वर्गीकरण जिससे बुद्धि की दृष्टि से वैयक्तिक भेदों को समझने में मदद मिल सकती है, टरमैन के अनुसार यह निम्न प्रकार का हो सकता है—

बुद्धि-लब्धि (I.Q.)	बुद्धिमत्ता का स्तर (Level of Intelligence)
140 और उससे ऊपर	प्रतिभाशाली (Gifted or Genius)
120-140	बहुत अधिक या प्रखर बुद्धि वाला (Very Superior)
110-120	औसत से अधिक बुद्धि वाला (Superior)
90-110	औसत या सामान्य बुद्धि वाला (Normal or Average)
75-90	मेधा सीमा पर और अल्पबुद्धि (Border Lined and Dull)
50-75	मूर्ख (Morons)
25-50	मूढ़ (Imbecile)
25 से कम	महामूर्ख या जड़ बुद्धि (Idiot)

बुद्धिलब्धि का सामान्य वक्र

बुद्धिमत्ता का वितरण एक घंटी के आकार के वक्र द्वारा दिखाया जाता है जिसमें अधिकतर स्कोर औसत के आस-पास रखते हैं।

यदि किसी समूह के लिए आई क्यू के अंकों का विभाजन बेतरतीब ढंग से आयोजित किया जाता है, तो ग्राफ दिए गए सामान्य वक्र की तरह बनेगा। आई क्यू के अंकों को क्षैतिज रेखा पर ऊपर दर्शाया गया है:

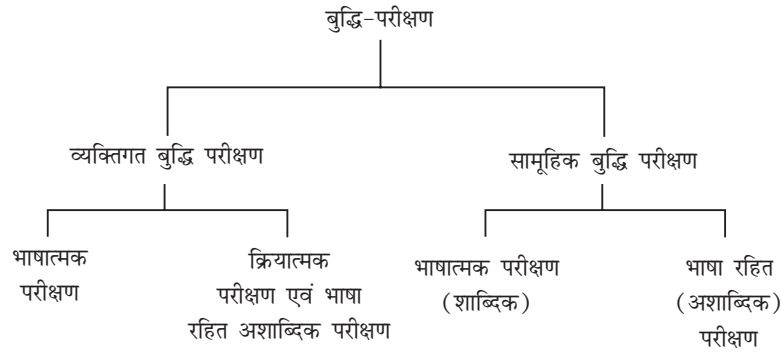


प्राप्तांकों का प्रतिशत एवं रेंज

एक बड़े समूह में लोगों के परीक्षणों के अंकों को सामान्य वक्र में दर्शाया गया है। इसका अर्थ है कि अधिकतर लोग 84-116 के बीच में औसत अंक प्राप्त करते हैं। ये अंक औसत कहे जाते हैं। यदि अंक 84 से कम हो तो औसत से कम तथा 116 से अधिक हों तो उसे उत्कृष्ट (Superior) कहा जाता है।

बुद्धि एवं सृजनात्मकता

बुद्धि-परीक्षण के तमाम वर्गों को रेखा चित्रानुसार इस प्रकार दिखाया जा सकता है—



अब हम इन पर अलग-अलग विचार करेंगे—

व्यक्तिगत परीक्षण (Individual Verbal Tests)

व्यक्तिगत भाषात्मक परीक्षण (Individual Verbal Tests)

जो परीक्षण व्यक्तिगत रूप से ली जाएं और जिनमें भाषा का प्रयोग होता है—वे इसी वर्ग में आती हैं। जैसे—स्टेनफोर्ड बने परीक्षण (Stanford Binet Test)।

वास्तव में फ्रैंच मनोवैज्ञानिक एल्फ्रेड-बिने (Alfred Binet) बुद्धि परीक्षणों का जन्मदाता हैं। उन्होंने थियोडोर साईमन (Theodore Simon) के साथ 1905 में एक परीक्षण तैयार की। इसमें विभिन्न स्तरों के लिए उत्तरोत्तर कठिन होती हुई रिक्त स्थान पूर्ति परीक्षण (Completion Test) हैं जैसे—

तीन वर्ष की अवस्था (At age-3)—नाक, कान और मुँह की ओर इशारा करना।

सात वर्ष की अवस्था (At age 7)—अपूर्ण चित्र में क्या कमी है?

सन् 1916 में स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के टर्मैन (Terman) ने इसका संशोधन किया और 1937 में मैरिल (Merril) के सहयोग से इसका नया रूप तैयार किया गया। इसे और 1960 में तैयार किए गए परीक्षण को स्टेनफोर्ड बने स्केल (Stanford Binet Scale) कहा जाता है।

इस स्केल की परीक्षाएं 2 से 22 वर्ष तक के व्यक्तियों के लिए बनाई गई हैं। इसमें सरल परीक्षा से जटिल परीक्षा तक क्रमानुसार विभिन्न परीक्षाएं सम्मिलित हैं। इन परीक्षाओं को उपयुक्त संशोधन कर विभिन्न देशों में अपनाया गया है। भारत में यह प्रयास सन् 1922 में डॉ. सी. एच. राइस (Dr. C.H. Rice) द्वारा किया गया जब उन्होंने हिन्दुस्तानी बने-परफार्मेंस-स्केल (Hindustani Binet Performance Scale) को प्रकाशित कराया।

निष्पादन परीक्षण (Performance Tests)

यह भी भाषा रहित परीक्षाएं होती हैं। इन परीक्षाओं की मुख्य विशेषताएं निम्न होते हैं—

इस परीक्षण की सामग्री ठोस वस्तुओं पर आधारित होती है।

इन परीक्षणों में जो कुछ व्यक्ति को करना होता है उसे परीक्षक द्वारा संकेतों या इशारों से समझाया जा सकता है।

वैयक्तिक निष्पादन परीक्षण (Individual Performance Tests)

यह परीक्षण सामग्री तथा उनके उत्तर (Responses) क्रियाओं में होते हैं और इनमें भाषा का प्रयोग बिल्कुल नहीं होता। इनमें गामक या गत्यात्मक-क्रियाओं (Motor-activities) से संबंधित पूर्तियां सम्मिलित की जाती हैं। निम्नलिखित क्रियाएं इन परीक्षाओं में देखने को मिलती हैं—

घनों द्वारा निर्माण (Block building or Cube construction)

—इसमें परीक्षकों को कक्षाओं द्वारा बिल्डिंग डिजाइन बनाने को कहा जाता है। मैरिल पामर ब्लॉक बिल्डिंग (Merril Palmer Block Building) कोह कृत ब्लॉक डिजाइन परीक्षा (Koh's Block Design Test) एलैक्जैण्डर कृत पास-एलांग परीक्षा (Alexander's Pass-along Test) आदि इस प्रकार की परीक्षा के कुछ उदाहरण हैं।

छेदों में ब्लॉक लगाना (To fit the blocks in the holes)

—इस प्रकार की परीक्षण में परीक्षार्थी को कुछ ब्लॉक द्वारा छेदों से युक्त एक बोर्ड दिया जाता है। परीक्षार्थी को इन विभिन्न छेदों से संबंधित ब्लॉक लगाने को रखा जाता है। सैगुइन फॉर्म बोर्ड परीक्षण (Seguin Form Board Test) तथा गोडार्ड फॉर्म बोर्ड परीक्षण (Godard form Board Test) इस परीक्षा के प्रसिद्ध उदाहरण हैं।

भूल भुलैया को खोजना (Tracing a maze)

—परीक्षण-सामग्री में क्रमानुसार कठिन होती हुई भूल-भुलैया सम्मिलित होती हैं। ये भूल-भुलैया अलग-अलग कागजों पर छपी होती हैं। परीक्षार्थी को प्रवेश से अन्त तक इनका रास्ता ढूंढना होता है। 'पोर्टीयस-भूल-भुलैया-परीक्षण' इसका उदाहरण है।

चित्र पूर्णता (Picture completion)

—इसमें परीक्षार्थी को प्रत्येक चित्र के कुछ कटे हुए भाग देकर उस चित्र को पूरा करने के लिए कहा जाता है। 'हीली चित्र-पूर्णता परीक्षण' (The Healy Pictorial Completion Test) इस प्रकार की परीक्षण का अच्छा उदाहरण है।

उपरोक्त परीक्षाओं से स्पष्ट है कि इन परीक्षाओं में किसी न किसी प्रकार की क्रियाओं पर बल दिया गया है। इसमें मानसिक योग्यता की पूर्ण बौद्धिक परीक्षा करने के लिए एक या दो परीक्षाओं की बजाय क्रियात्मक

परीक्षाओं के समूह को जिसे स्केल या बैटरी (Battery) में संगठित किया जाता है, प्रयोग किया जाता है।

इनमें से प्रमुख स्केल निम्नलिखित हैं—

- पिंगर पेटर्सन स्केल (Pinter Pattersen Scale)
- आर्थर प्वाइंट स्केल (Arthur Point Scale)
- पर्फार्मेंस-परीक्षाओं की एलैक्जेंडर बैटरी (Alexander's battery of Performance)

हमारे देश में इस प्रकार के स्केल या बैटरियों का निर्माण के प्रयत्न किए गए हैं। डॉ. चन्द्रमोहन भाटिया द्वारा इस दिशा में किया गया प्रयास काफी उल्लेखनीय है। उन्होंने भाटिया परफोमेंस टैस्ट बैटरी के नाम से एक बुद्धि तैयार किया है, जिसमें निम्न पांच उप-परीक्षण हैं—

- (a) कोह ब्लॉक डिजाइन परीक्षा (Koh's Block Design Test)
- (b) अलैक्जेंडर पास-एलांग परीक्षा (Alexander Pass-along Test)
- (c) पैटर्न ड्राइंग परीक्षण (Pattern Drawing Test)
- (d) अंकों से संबंधित तात्कालिक स्मृति परीक्षण (Immediate memory test for digits)
- (e) चित्र निर्माण-परीक्षण (Picture construction)

इस बैटरी की अंतिम तीन परीक्षाएं श्री भाटिया ने स्वयं विकसित की हैं जबकि पहली तीन अनुकरणात्मक हैं।

वेक्सलर बैलिव्यू बुद्धि स्केल (Wechsler Bellevue Intelligence Scale)

यह परीक्षण 1939 में किया गया जो दो रूपों में मिलता है : पहला रूप बच्चों के लिए (WISC) प्रयोग किया जाता है और दूसरा रूप (WAIS) प्रौढ़ों के लिए प्रयोग किया जाता है। यह व्यक्तिगत परीक्षा है जिसमें भाषात्मक (Verbal) एवं क्रियात्मक (Performance) दोनों स्केलों की विशेषताएं विद्यमान हैं।

इस स्केल में 12 उप-परीक्षाएं हैं। 6 उप-परीक्षाएं भाषात्मक-स्केल का निर्माण करती हैं और क्रियात्मक-स्केल का निर्माण करती हैं। क्रमानुसार ये परीक्षाएं निम्नलिखित हैं—

भाषात्मक स्केल (Verbal Scale)

1. सामान्य ज्ञान का परीक्षण (Test of General Information)
2. सामान्य बोधगम्यता (Comprehension) का परीक्षण
3. गणितीय-तर्क (Arithmetic Reasoning) का परीक्षण
4. अंक-विस्तार (Digit span) का परीक्षण
5. समानताओं (Similarities) में भेद कर सकने का परीक्षण
6. शब्द-ज्ञान का परीक्षण (Test of Vocabulary)

क्रियात्मक स्केल (Performance Scale)

7. अंक-प्रतीक (Digit Symbol) परीक्षण
8. चित्र-पूर्ति (Picture Completion) परीक्षण
9. ब्लॉक-डिजाइन (Block Design) परीक्षण
10. चित्र-व्यवस्था क्रम (Picture Arrangement) परीक्षण।
11. वस्तु-संकलन (Object Assembly) परीक्षण।
12. मैट्रिक्स रिजनिंग

व्यक्ति की बुद्धि को मापने के लिए इन उप-परीक्षण में प्राप्त अंकों को जोड़ा जाता है।

इसके अलावा इसमें एक पूरक खोज भी है जिसे सिम्बल सर्च की संज्ञा दी जाती है।

सामूहिक परीक्षण (Group Tests)

सामूहिक भाषात्मक बुद्धि-परीक्षण (The Group Verbal Intelligence Tests)

ये परीक्षाएं एक साथ कुछ व्यक्तियों के समूह में ली जाती हैं और इसमें भाषा का प्रयोग आवश्यक होता है। इनमें से कुछ पुरानी परीक्षाएं अग्रलिखित हैं—

आर्मी अल्फा परीक्षण (Army Alpha Tests)—ये प्रथम विश्व-युद्ध में निर्मित की गई थीं।

आर्मी सामान्य वर्गीकरण (Army General Classification)—यह दूसरे विश्व-युद्ध में निर्मित किया गया था।

सामूहिक गैर-शाब्दिक बुद्धि-परीक्षण (The Group Non-Verbal Intelligence Tests)

इसमें भाषा प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती और इनके द्वारा एक साथ कई व्यक्तियों की बुद्धियों का परीक्षण है।

आर्मी बीटा परीक्षण (Army Beta Test)—यह परीक्षा प्रथम विश्व युद्ध में उन सैनिकों की बुद्धि परीक्षा के लिए विकसित की गई थी जो अनपढ़ थे और अंग्रेजी भाषा नहीं जानते थे।

शिकागो भाषा रहित परीक्षण (Chicago non-verbal Test)—यह परीक्षा 12 और 13 वर्ष के बच्चों के लिए उपयोगी सिद्ध हुई है।

रैवेन्स कृत प्रोग्रेसिव मैट्रिसेज टैस्ट (Raven's progressive matrices Test)—यह परीक्षा यू.के. में निर्धारित हुई। यह अत्यंत लोकप्रिय भाषा रहित सामूहिक बुद्धि परीक्षा है। इसे परीक्षार्थी की निम्नलिखित योग्यताओं की परीक्षा के लिए विकसित किया गया है—

1. रेखागणित के चित्रों या डिजाइनों में परस्पर संबंध देखना।
2. डिजाइन के ढांचे को समझना ताकि उसे पूरा करने के लिए उसके उचित भाग को चुना जा सके।

संवेगात्मक बुद्धि-अर्थ एवं परिभाषा (Emotional Intelligence-Meaning and Definition)

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अगर अवलोकन किया जाये तो संवेगात्मक बुद्धि पद का प्रयोग 1990 में सबसे पहले दो अमेरिकन प्रो. डॉ. जॉन मेयर (John Mayer) तथा डॉ. पीटर सेलोवे (Peter Salovey) द्वारा एक ऐसा वैज्ञानिक प्रमाण तैयार करने हेतु किया गया था जिससे लोगों की संवेगात्मक क्षेत्र में विद्यमान वैयक्तिक योग्यताओं में विभेदीकरण किया जा सके। परन्तु जिस रूप में आज संवेगात्मक बुद्धि पद की सर्वत्र चर्चा की जाती है, उसे इस तरह से लोकप्रिय बनाने का श्रेय केवल मात्र एक अमेरिकन मनोवैज्ञानिक डेनियल गोलमैन (Daniel Goleman) को ही जाता है। उसी ने अपनी 1995 में प्रकाशित एक पुस्तक 'संवेगात्मक बुद्धि: बुद्धि लब्धि से अधिक महत्वपूर्ण क्यों' (Emotional Intelligence : Why it can matter more than I.Q.) के माध्यम से इसे विशेष चर्चा का विषय बनाया है।

संवेगात्मक बुद्धि के मापन परिणामों को व्यक्त करने के लिए हम जिस इकाई विशेष का प्रयोग करते हैं उसे ही संवेगात्मक लब्धि (Emotional Quotient) और संक्षेप में ईक्यू (E.Q.) कहा जाता है। सामान्य बुद्धि के बारे में यह अच्छी तरह कहा जा सकता है कि यह वंशक्रम और वातावरण दोनों की ही उपज हैं। एक बालक अपने जन्म के समय कुछ न कुछ बुद्धि लेकर ही इस धरती पर आता है जिसे आगे चलकर अनुभव और परिपक्वता की प्रक्रिया द्वारा अपेक्षित ऊँचाइयों पर पहुँचाने के प्रयत्न किये जाते रहते हैं। इसी रूप में सभी बालकों में अपने जन्म के समय कुछ न कुछ संवेगात्मक बुद्धि भी पाई जाती है और इसे भी अनुभव प्रशिक्षण और परिपक्वता के माध्यम से आगे विकास की दिशा प्राप्त होती रहती है।

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक डॉ. डेनियल गोलमैन की बहुचर्चित पुस्तकों (Emotional Intelligence – Why it can matter more than I.Q. and Working with Emotional Intelligence) ने संवेगात्मक बुद्धि की उपयोगिता एवं महत्व को बहुत ही प्रभावशाली ढंग से जनमानस के समक्ष रखने का प्रयत्न किया है। संवेगात्मक बुद्धि की उपयोगिता एवं महत्व के बारे में व्यक्त गोलमैन के इन विचारों को संक्षेप में निम्न प्रकार लिपिबद्ध किया जा सकता है :

1. कोई व्यक्ति जीवन में कितना सफल होगा इसकी भविष्यवाणी करते हेतु संवेगात्मक लब्धि (E.Q.) बुद्धि लब्धि (I.Q.) की तरह ही और बहुत सी परिस्थितियों में उसे अधिक सामर्थ्यवान सिद्ध हो सकती है। बुद्धिलब्धि (I.Q.) का तो जीवन में मिलने वाली सफलताओं में केवल 20 प्रतिशत ही योगदान रहता है शेष 80 प्रतिशत योगदान का श्रेय उसकी संवेगात्मक बुद्धि, प्रारब्ध तथा उसके सामाजिक स्तर आदि को आता है।

2. देखा जाये तो व्यक्ति की बुद्धिलब्धि (I.Q.) नहीं बल्कि उसकी संवेगात्मक लब्धि (E.Q.) को ही पूरी तरह से उससे भविष्य के बारे में उद्घोषणा करने वाला सही प्रमाण माना जा सकता है। जिस व्यक्ति में यथेष्ट संवेगात्मक बुद्धि होती है वह जीवन में किसी भी क्षेत्र में इच्छित सफलता अर्जित कर सकता है।

संवेगात्मक बुद्धि का मापन (Measurement of Emotional Intelligence)

सामान्य बुद्धि के मापन हेतु हम किसी न किसी प्रकार के बुद्धि परीक्षण (शाब्दिक या अशाब्दिक) का प्रयोग करते हैं उसी रूप में संवेगात्मक बुद्धि की जांच हेतु हम भली-भाँति निर्मित परीक्षण जैसे संवेगात्मक बुद्धि परीक्षण का प्रयोग कर सकते हैं।

कुछ उपलब्ध परीक्षणों का निम्न प्रकार उल्लेख किया जा सकता है:

1. मेयर इमोशनल इन्टेलीजेंस स्केल (MEIS) इसे अमेरिका की न्यू हैम्पशायर यूनिवर्सिटी में कार्यरत का जॉन मेयर द्वारा बनाया गया है।
2. मेयर सेलोवे एण्ड कारूसो इमोशनल इन्टेलीजेंस टैस्ट (MSCEIT) अमेरिका के जॉन मेयर, डॉ. बीटा सेलोवे तथा डॉ. डेविड कारूसो द्वारा निर्मित।
3. बार ऑन इमोशनल कोशेन्ट इनवेन्टरी (BEQI) अमेरिका के डॉ. रैयूबेन बार ऑन द्वारा निर्मित एवं हैल्थ सिस्टम यू.एस.ए. द्वारा प्रकाशित।

रचनात्मकता (Creativity)

मनोवैज्ञानिकों ने रचनात्मकता और बुद्धि के संबंध को अस्वीकार किया है। जिन लोगों ने रचनात्मकता के क्षेत्र में सफलता प्राप्त की है, उनका अध्ययन करने से पता चलता है कि ये लोग औसत लोगों से अधिक बुद्धिमान थे। हालांकि यह स्थिति का केवल एक भाग है। ऐसा भी हो सकता है कि बहुत अधिक बुद्धिमान व्यक्ति रचनात्मकता के परीक्षण में बहुत अधिक अंक न प्राप्त कर पाए। रचनात्मक क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करने के लिए बुद्धिमान होना आवश्यक है परंतु वह स्वयं में पर्याप्त नहीं है।

रचनात्मकता क्या है?

कई अनुसंधान रचनात्मकता को परिभाषित करने के लिए किए गए और यह निर्धारण किया गया कि कौन व्यक्ति रचनात्मक हैं। बहुत से लोग रचनात्मकता को विशेष गुणों से जोड़ कर देखते हैं जैसे मेरी क्यूरी, लुडविंग वैन, बीथोवन, अलबर्ट आइन्स्टाइन या पबलों पिकासो। वास्तव में, हम यह देख पाएँ या नहीं लेकिन हम सभी किसी न किसी तरीके से रचनात्मकता का प्रयोग कर रहे हैं। हम में और क्यूरी या पिकासो में अंतर है कि हम में से वे सब अधिक रचनात्मक हैं परंतु इसका विश्व पर कोई प्रभाव दिखाई नहीं देता।

इसी के कारण ये हमें लोकप्रिय लोगों की तुलना में कम माननीय दर्शाते हैं परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि हम रचनात्मक नहीं हैं। मनोवैज्ञानिकों ने जब रचनात्मकता का अध्ययन किया तब उन्होंने चार मुख्य पक्षों के बारे में जाना (क) रचनात्मकता की प्रक्रिया (ख) वह उत्पाद जिसमें रचनात्मकता है। (ग) वे कारक जो रचनात्मकता को प्रभावित करते हैं। (घ) रचनात्मक व्यक्ति की प्रकृति।

मौलिक चिंतन $\Rightarrow$ वैचारिक लचीलापन $\Rightarrow$ सिद्ध करने की क्षमता $\Rightarrow$ प्रवाहिता $\Rightarrow$ नवाचारी विचार

रचनात्मक बनने की प्रक्रिया के आधार हैं। किसी व्यक्ति के विचारों या भावों को व्यक्त करने का नवीन तरीका सम्मिलित है। परिचित सामग्री जैसे शब्द, पेंट, संगीत के सुर, गणित के तथ्यों को विशिष्ट उत्पाद बनाने के लिए पुनः व्यवस्थित किया जाता है जो कि किसी विशिष्ट व्यक्ति की क्षमताओं को व्यक्त करता है।

रचनात्मक प्रक्रिया में स्वयं को नकारते हुए भी कुछ अलग करने का काम किया जाता है। यदि आप किसी व्यक्ति की पेंटिंग की नकल करते हैं और दूसरों के विचार में कुछ भी नहीं जोड़ते, तो आपका कार्य रचनात्मक नहीं कहलाएगा। इस बात का महत्व नहीं कि आप कितने कुशल हैं परंतु बुरी दिखने वाली पेंटिंग या कोई वाक्य भी रचनात्मक हो जाता है, यदि उसमें कुछ नवीनता हो।

सृजनात्मकता (Creativity) से अभिप्राय व्यक्ति विशेष की उस विलक्षण संज्ञानात्मक क्षमता या योग्यता से होता है जिसके द्वारा वह किसी नवीन विचार या वस्तु का सृजन करने, उसकी खोज या उत्पादन करने में कामयाब रहता है। इसके अंतर्गत व्यक्ति की वह योग्यता भी शामिल रहती है जिसके द्वारा वह पूर्ण ज्ञान का पुनर्गठन करता है।

सृजनात्मक प्रकृति और विशेषताओं के सन्दर्भ में हम यह कह सकते हैं कि यह सार्वभौमिक (Universal) होती है, तथा प्रकृति प्रदत्त होने के साथ-साथ प्रशिक्षण द्वारा भी इसे विकसित किया जा सकता है। यह प्रक्रिया भी है और उसका परिणाम भी। इसमें बंधा हुआ चिन्तन नहीं होता है और इसकी अभिव्यक्ति का क्षेत्र बहुत अधिक व्यापक होता है। इसके प्रमुख अवयवों तथा तत्वों के रूप में हम प्रवाहात्मक विचारधारा, मौलिकता, लचीलापन, विविधतापूर्ण चिन्तन, आत्म-विश्वास, संवेदनशीलता, सम्बन्धों को देखने तथा बनाने की योग्यता आदि की चर्चा कर सकते हैं। अपने कुछ विशेष गुणों के आधार पर सृजनात्मकता तथा बुद्धि को एक ही प्रक्रिया नहीं माना जाता।

सृजनात्मक प्रक्रिया में कुछ विशिष्ट एवं निश्चित सोपानों का समावेश रहता है। जैसे-

तैयारी $\Rightarrow$ इनक्यूबेशन $\Rightarrow$ सहजबोध $\Rightarrow$ परीक्षण $\Rightarrow$ पुनरावृत्ति

इन सोपानों का इसी क्रम में उपस्थित रहना आवश्यक नहीं है फिर भी इनके द्वारा सृजनशील चिंतनकों द्वारा अभिव्यक्त उच्चतम सृजनात्मक प्रक्रिया के स्वरूप का विधिवत् प्रतिनिधित्व हो सकता है।

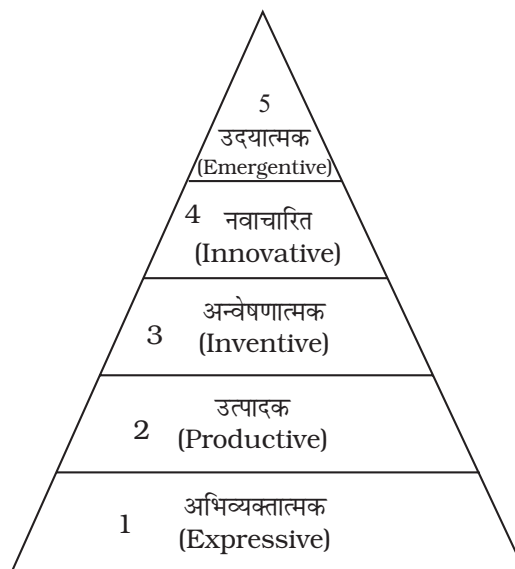
सृजनात्मक बालकों की पहचान हेतु दो प्रकार के साधनों जैसे- सृजनात्मक परीक्षण तथा सृजनात्मक व्यवहार को जाँचने वाली अन्य तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। सृजनात्मक परीक्षणों से सृजनात्मकता का निदान उसी रूप में संभव है जैसे कि बुद्धि-परीक्षणों द्वारा बुद्धि की जाँच के लिए किया जाता है।

ऐसे परीक्षणों के उदाहरण रूप में हम टॉरेंस के सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण, बकर मेंहदी सृजनात्मक चिन्तन परीक्षण और पासी सृजनात्मक परीक्षण आदि का नाम ले सकते हैं। गैर परीक्षण, तकनीकों के रूप में हम प्रमुख रूप से निरीक्षण विधि, रेटिंग स्केल साक्षात्कार, परिसूचियों तथा प्रक्षेपी तकनीकों का नाम ले सकते हैं। इन तकनीकों से हमें सृजनात्मक व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताओं का पता चलता है जिनके आधार पर कौन बालक किस सीमा तक सृजनशील है, इसका निदान हो सकता है।

विशेष प्रयत्नों तथा उचित शिक्षा-दीक्षा से बालकों में अन्तःनिहित सृजनात्मकता को भली-भाँति विकसित किया जा सकता है ऐसे कुछ उपायों में हम जिनका प्रमुख रूप से उल्लेखनीय कर सकते हैं। वे हैं-डर तथा झिझक को दूर कर बालकों को उत्तर देने की स्वतंत्रता प्रदान करना, उन्हें अपने अहं तथा सृजनात्मक अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करना, उनकी मौलिकता तथा लचीलेपन को प्रोत्साहित करना, सृजनात्मक चिन्तन के अवरोधों से बचाना, पाठ्यक्रम के उचित आयोजन, शिक्षण विधियों तथा मूल्यांकन प्रणाली में सुधार पर ध्यान देना, समुदाय के सृजनात्मक साधनों का प्रयोग करना तथा अपना उदाहरण एवं आदर्श प्रस्तुत करना तथा सृजनात्मकता के विकास से सम्बन्धित नवीनतम तकनीकों जैसे मस्तिष्क उद्देलन आदि की सहायता लेना।

सृजन के सिद्धान्त (Theory of Creativity)

सृजनात्मकता का स्तर सिद्धान्त (Level Theory of Creativity) - इस सिद्धान्त का प्रतिपादन आई.ए. टेलर (I.A. Taylor) ने किया। इनके अनुसार सृजनात्मकता को पांच क्रमिक स्तरों वाले पदानुक्रम (Hierarchy) के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-



सृजनात्मकता का स्तर सिद्धान्त (टेलर)

- (1) **अभिव्यक्तात्मक स्तर (Expressive Level)**—यह सृजनात्मकता का सबसे निम्न स्तर है। इसमें मौलिकता तथा गुणवत्ता पद पर जोर दिए बिना व्यक्ति के द्वारा अपने विचारों की स्वतः अभिव्यक्ति (Spontaneous Expression) होती है।
- (2) **उत्पादक स्तर (Productive level)**—इस स्तर पर व्यक्ति किसी नई (नूतन) वस्तु उत्पन्न करने में सक्षम होता है।
- (3) **अन्वेषणात्मक स्तर (Inventive level)**—यह स्तर पुरानी वस्तुओं के नए-नए प्रयोग से संबंध रखता है।
- (4) **नवाचारित स्तर (Innovative level)**—उच्च स्तर के प्र. त्यक्षात्मक कौशल के आधार पर नए विचार अथवा सिद्धान्त को उत्पन्न करना।
- (5) **उदयात्मक स्तर (Emergentive level)**—यह सृजनात्मकता का सबसे उच्च स्तर है। इस स्तर पर व्यक्ति किसी कार्य में निहित समस्त अमूर्त सिद्धांतों या मान्यताओं के आधार पर उच्च स्तरीय सृजनात्मक कार्य प्रस्तुत करता है।

मस्तिष्क उद्वेलन (Brain storming)

मस्तिष्क उद्वेलन एक ऐसी तकनीक एवं विधि है जिसके द्वारा किसी समूह विशेष से बिना किसी रोक-टोक, आलोचना, मूल्यांकन या निर्णय की परवाह किए बिना किसी समस्या विशेष के हल के लिए विभिन्न प्रकार के विचारों एवं समाधानों को प्रस्तुत करने के लिए कहा जाता है फिर विचार-विमर्श के बाद उचित हल एवं समाधान तलाशने का प्रयत्न किया जाता है। मस्तिष्क उद्वेलन तकनीक को काम में लाने हेतु बालकों को एक समूह के साथ बिठाकर किसी समस्या विशेष का समाधान ढूँढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है। उदाहरण के लिए कुछ समस्याएँ इस प्रकार की हो सकती हैं, यथा—‘विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता’, देश में बढ़ती जनसंख्या आदि।

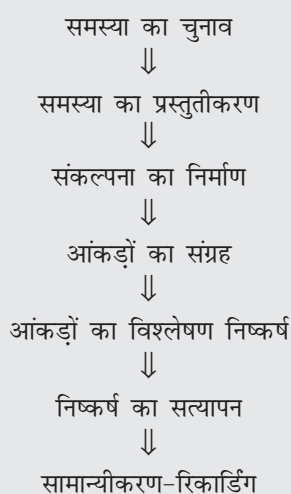
सृजनात्मकता के विकास में सहायक इस तकनीक से उचित लाभ उठाने की दिशा में कुछ निम्न बातों पर ध्यान देना विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकता है—

1. समूह में सभी को अपने विचार एवं सुझाव प्रस्तुत करने की पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। कोई भी विचार पर सुझाव सही या गलत है, बालकों को यह समझाकर पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए तथा साथ में यह भी बता देना चाहिए कि जिस समय सुझाव आमंत्रित किए जा रहे हों तब बीच में रोका टोकी या आलोचना आदि कदापि नहीं की जानी चाहिए।
2. कोई भी बालक समस्या समाधान के लिए जितने विचार एवं विविध तरीके प्रस्तुत करना चाहे, कर सकता है। परम्परागत प्रतिमानों से हटकर असाधारण विचारों (Unusual ideas), समाधान और सुझावों को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

3. बालकों द्वारा सर्वथा नये विचार और बिल्कुल ही अलग प्रकार के समाधान प्रस्तुत किए जाएँ, यह आवश्यक नहीं। वे दूसरों के द्वारा दिए गए विचारों में जितना भी फेर-बदल और परिवर्तन कर सकें अथवा पुराने विचारों एवं समाधानों को नवीन ढंग से प्रस्तुत कर सकें, ये भी सृजन में शामिल होता है। अतः ऐसा करने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

4. अन्त में मूल्यांकन और समालोचन का कार्य मिल बैठकर किया जाना चाहिए। जितने भी विचार एवं समाधान बालकों द्वारा प्रस्तुत किए जाएँ उन्हें लिखित रूप में समूह के सामने रखा जाना चाहिए और उन पर निष्पक्ष रूप से खुलकर चर्चा होनी चाहिए। ताकि समस्या समाधान में सहायक उपयुक्त युक्तियों एवं विचारों का ठीक चयन हो सके।

समस्या समाधान पद्धति के विभिन्न चरण हैं—



शिक्षण प्रतिमानों का प्रयोग (Use of Teaching Models)

शिक्षा शास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित कुछ विशेष शिक्षण प्रतिमानों का प्रयोग भी बालकों की सृजनशीलता के विकास में पर्याप्त योगदान दे सकता है।

उदाहरण के लिए **ब्रुनर (Bruner)** का संप्रत्यय-उपलब्धि प्रतिमान संप्रत्ययों को ग्रहण करने के अलावा बालकों को सृजनशील बनाने में भी सहयोग देता है। इसी तरह **सचमैन** का पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान (Suchman's inquiry Training Model) वैज्ञानिक ढंग से पूछताछ करने के कौशल को विकसित करने के अतिरिक्त सृजन में सहायक विशेष गुणों को विकसित करने में पर्याप्त सहायता करता है।

सृजनात्मकता का परीक्षण

सृजनात्मकता के लिए देश में भी विभिन्न मानकीकृत उपयोगी परीक्षण मौजूद हैं—

1. मानकीकृत विदेशी परीक्षण (Standardized Tests : Abroad)

- (i) मिनीसोटा सृजनात्मक चिंतन परीक्षण
(Minnesota Tests of Creative Thinking)
- (ii) गिलफोर्ड का बहु-विध चिंतन उपकरण
(Guilford's divergent thinking tools)
- (iii) रिमोट एसोशिएशन परीक्षा (Remote Association Tests)
- (iv) वॉलैस एवं कॉर्गन का सृजनात्मकता उपकरण
(Wallach and Korgan Creativity tools)
- (v) सृजनात्मक योग्यता का टॉरेन्स जनित परीक्षण
(Torrance Tests of Creative Thinking)

2. भारत में मानकीकृत परीक्षण (Standardized Tests in India)

- (i) बाकर मेहंदी सृजनात्मक चिंतन परीक्षण-हिंदी एवं अंग्रेजी
(Baquer Mehndi's Tests of Creative Thinking – Hindi and English)
- (ii) पासी सृजनात्मक परीक्षण (Passi's Tests of Creativity)
- (iii) शर्मा बहु-विध उत्पादन योग्यता परीक्षण
(Sharma's Divergent Production Abilities Tests)
- (iv) सक्सेना सृजनात्मक परीक्षण
(Saxena's Tests of Creativity)

ई.पी. टॉरेन्स (E.P. Torrance) के अनुसार सृजनात्मकता की प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण क्रमशः हैं—

1. समस्याओं के प्रति सजग होना (Becoming aware of problems)
2. उपलब्ध सूचनाओं को संकलन करना (Bringing together available informations)
3. समाधान की खोजना (Searching for solutions)
4. परिणामों का संचरण (Communication of the results)

सृजनात्मकता का मापन (Measurement of Creativity)

— सृजनात्मकता एक मानसिक प्रक्रिया है फिर भी अन्य मानसिक प्रक्रियाओं की तुलना में इसका मापन जटिल है। सृजनात्मकता के मापन का प्रयास किया गया है जो निम्नवत है—

I. टोरेन्स का सृजनात्मक चिंतन परीक्षण (Torrances Test of Creativity Thinking)–इस परीक्षण में दो परीक्षण होते हैं।

(a) शाब्दिक परीक्षण (Verbal Test) तथा (b) आकृतिक परीक्षण (Figural Test)

इस परीक्षण में चार प्रकार के कार्य सम्मिलित किए जाते हैं—

1. किसी चित्र के संबंध में अधिकाधिक प्रश्न करना।
2. किसी खिलौने में सुधार के लिए परिवर्तन सुझाना।
3. किसी सामान्य वस्तु के अधिकाधिक प्रयोग बताना।
4. किसी दी गई वक्र्रीय रेखा के चारों ओर कोई चित्र बनाना तथा चित्र को शीर्षक देना।

II. पासी का सृजनात्मकता परीक्षण (Passi's Test of Creativity)–इसका निर्माण इन्दौर के बी.के. पासी (B.K. Passi) द्वारा किया गया। इस परीक्षण में छः परीक्षण सम्मिलित हैं—

1. समस्या जांच परीक्षण (Seeing Problem Test)
2. असामान्य उपयोग परीक्षण (Unusual uses Test)
3. परिणाम परीक्षण (Consequences Test)
4. प्रश्नात्मक योग्यता परीक्षण (Test of Inquisitiveness)
5. वर्ग पहेली परीक्षण (Square Puzzle Test)
6. ब्लाक परीक्षण (Blocks Tests)

III. बाकर मेहंदी का सृजनात्मक चिंतन परीक्षण (Baquer Mehndi's Tests of Creative Thinking)–अलीगढ़ के बाकर मेहंदी के इस परीक्षण में दो परीक्षण सम्मिलित हैं—

- (a) शाब्दिक परीक्षण
- (b) चित्रों द्वारा परीक्षण।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- मानसिक आयु की संकल्पना का सर्वप्रथम प्रयोग किया गया था—
 (1) बिने-साइमन मापनी-1905
 (2) बिने-साइमन मापनी-1908
 (3) बिने-साइमन मापनी-1911
 (4) बिने-साइमन मापनी-1916
- यदि एक बालक की वास्तविक आयु 12 वर्ष हैं, तथा उसकी बुद्धि-लब्धि स्तर 75 है, तो उसकी मानसिक आयु होगी—
 (1) 8 वर्ष (2) 9 वर्ष
 (3) 10 वर्ष (4) 12 वर्ष
- “बच्चे दुनियाँ के बारे में अपनी समझ का निर्माण सक्रियता से करते हैं।” यह कथन है—
 (1) प्याजे (2) पावलॉव
 (3) कोहलबर्ग (4) स्किनर
- बहुविकल्पीय बुद्धिमत्ता सिद्धान्त के अनुसार जानवरों, खनिजों तथा पौधों की सभी किस्मों की पहचान करने तथा वर्गीकृत करने की योग्यता कहलाती है—
 (1) प्राकृतिक बुद्धिमत्ता (2) भाषागत बुद्धिमत्ता
 (3) स्थानिक बुद्धिमत्ता (4) तार्किक गणितीय बुद्धिमत्ता
- हॉवर्ड गार्डनर के बहु बुद्धिमत्ता सिद्धान्त के अनुसार, विद्यालयों में बुद्धिमत्ता के किस रूप का सम्मान नहीं किया जाता?
 (1) स्थानिक (2) भाषा-संबंध
 (3) तार्किक (4) उपर्युक्त में से कोई नहीं
- यदि एक बच्चे की कालानुक्रमिक आयु 60 माह है और उसकी मानसिक आयु 66 माह है, उसका आईक्यू (IQ) है:
 (1) 90 (2) 100
 (3) 110 (4) निर्धारित नहीं किया जा सकता
- बुद्धि की व्याख्या की गयी है :
 (1) एक ‘गुण’ के रूप में
 (2) एक ‘उत्पाद’ के रूप में
 (3) एक ‘प्रक्रिया’ के रूप में
 (4) एक ‘प्रक्रिया’ एवं ‘उत्पाद’ के रूप के
- एक प्रतिभाशाली बच्चे को कभी भी परिभाषित नहीं किया जा सकता है :
 (1) उसकी बुद्धि लब्धि-120 या उससे अधिक है।
 (2) संगीत, कला, सामाजिक नेतृत्व और अभिव्यक्ति के अन्य रूपों में उसका प्रदर्शन लगातार उल्लेखनीय है।
 (3) उसकी क्षमता आबादी के ऊपरी दो प्रतिशत से तीन प्रतिशत की सीमा के भीतर है।
 (4) जो अपनी उम्र के अन्य लोगों से बेहद अलग है।
- निम्न में से कौन-सी प्रतिभावान बालक की विशेषता है?
 (1) अपनी आयु के बालकों से काफी पिछड़ जाते हैं।
 (2) निम्न बुद्धि-लब्धि होती हैं।
 (3) तीव्र निर्णय लेने की क्षमता तथा आत्मविश्वासी होते हैं।
 (4) दूसरों से अन्तर्क्रिया करने में असमर्थ होते हैं।
- ‘स्पीयरमैन के अनुसार सामान्य कारक अर्थात् G’
 (1) जन्मजात एवं अपरिवर्तनीय होता है।
 (2) जन्मजात एवं परिवर्तनीय होता है।
 (3) अर्जित एवं परिवर्तनीय होता है।
 (4) अर्जित एवं अपरिवर्तनीय होता है।
- बहुप्रकारीय बहुबुद्धि का सिद्धान्त दिया था—
 (1) हॉवर्ड गार्डनर ने
 (2) थर्स्टन ने
 (3) गिल्फोर्ड ने
 (4) जे.बी. वाटसन ने
- बुद्धिलब्धि और शैक्षिक निष्पादन के बीच संबंध है—
 (1) गहरा (2) सीधा
 (3) समानुपाती (4) उपरोक्त सभी
- “‘‘लोगों का बहुभाग औसत है, कुछ अधिक बुद्धिमान हैं और कुछ बहुत मंद बुद्धि हैं’’ यह कथन स्थापित सिद्धान्त पर आधारित है—
 (1) बुद्धिमत्ता का वितरण
 (2) बुद्धिमत्ता का विकास
 (3) बुद्धिमत्ता तथा लिंग भिन्नता
 (4) बुद्धिमत्ता तथा प्रजाति भिन्नता
- एक शिक्षिका अपने शिक्षार्थियों की विभिन्न अधिगम-शैलियों को संतुष्ट करने के लिए वैविध्यपूर्ण कार्यों का उपयोग करती है। वह से प्रभावित है।
 (1) गार्डनर के बहुबुद्धि सिद्धान्त
 (2) वाइगोत्स्की के सामाजिक-सांस्कृतिक सिद्धान्त
 (3) प्याजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त
 (4) कोहलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धान्त
- साइकोमेट्रिक परीक्षण में, ‘g का कारक’ का अस्तित्व द्वारा प्रस्तावित किया गया।
 (1) बिनेट (2) बैबेज
 (3) थोर्नडाइक (4) स्पीयरमैन
- “‘‘बुद्धि तार्किक चिन्तन है।’’ बुद्धि की यह परिभाषा दी है—
 (1) स्टर्न ने (2) टर्मन ने
 (3) स्पीयरमैन ने (4) बिनेट ने

17. बुद्धि-लब्धि ज्ञात करने का सूत्र है—

$$(1) \text{ बु.ल.} = \frac{\text{वास्तविक आयु}}{\text{मानसिक आयु}} \times 100$$

$$(2) \text{ बु.ल.} = \frac{\text{वास्तविक आयु}}{\text{शैक्षिक आयु}} \times 100$$

$$(3) \text{ बु.ल.} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

$$(4) \text{ बु.ल.} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{शैक्षिक आयु}} \times 100$$

18. विपिन एक दिवा-स्वप्न दृष्टा, पुस्तकें पढ़ने में रूचि रखने वाला, अपने विचारों को दूसरों के समक्ष अभिव्यक्त करने में असमर्थ, अमिलनसार और आदर्शवादी बालक है। तब उसके व्यक्तित्व का प्रकार है—

- (1) बहिर्मुखी (2) अन्तर्मुखी
(3) उभयमुखी (4) उद्यमशील

19. “शिक्षा मनोविज्ञान शैक्षिक अभिवृद्धि का व्यवस्थित अध्ययन है।” शिक्षा मनोविज्ञान की यह परिभाषा दी गई है—

- (1) बी.एफ. स्किनर द्वारा (2) सी.वी. जुड द्वारा
(3) जे.एम. स्टीफन द्वारा (4) सी.एच. जुड द्वारा

20. यदि एक बालक की वास्तविक आयु 12 वर्ष है, और वह 15 वर्ष की आयु वाले बालक के लिए बनाया गया बुद्धि परीक्षण हल कर सकता है, तो उसकी बुद्धि-लब्धि होगी—

- (1) 150 (2) 100
(3) 125 (4) 120

21. सृजनात्मकता (creativity) में मूल रूप से निहित है—

- (1) अभिसारी चिन्तन (2) साहचर्यात्मक चिन्तन
(3) अपसारी चिन्तन (4) प्रतिबिम्बात्मक चिन्तन

22. सृजनात्मकता अनुसंधान (creativity research) में अग्रणी थे?

- (1) गाल्टन (Galton)
(2) गिलफोर्ड (Guilford)
(3) वालैक (Wallach)
(4) टॉरेन्स (Torrance)

23. निम्नलिखित में से कौन-सा विकास का सिद्धान्त है?

- (1) विकास हमेशा रेखीय होता है।
(2) यह निरंतर चलने वाली प्रक्रिया नहीं है।
(3) विकास की सभी प्रक्रियाएँ अंतः सम्बन्धित नहीं हैं।
(4) सभी की विकास-दर समान नहीं होती है।

24. एक शिक्षिका पाठ्य-वस्तु और फल-सब्जियों के कुछ चित्रों का प्रयोग करती है और अपने विद्यार्थियों से चर्चा करती है। विद्यार्थी इस जानकारी का अपने पूर्व ज्ञान से जोड़ते हैं और पोषण की संकल्पना को सीखते हैं। यह उपागम पर आधारित है।

- (1) पुनर्बलन के सिद्धान्त
(2) अधिगम के सक्रिय अनुबन्धन
(3) ज्ञान के निर्माण
(4) अधिगम के शास्त्रीय अनुबन्धन

25. जब बच्चे की दादी उसे उसकी माँ की गोद से लेती है, तो बच्चा रोने लगता है। बच्चा के कारण रोता है।

- (1) संवेगात्मक दुश्चिन्ता (2) अजनबी दुश्चिन्ता
(3) वियोग दुश्चिन्ता (4) सामाजिक दुश्चिन्ता

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(3)	2.	(2)	3.	(1)	4.	(1)	5.	(4)
6.	(3)	7.	(4)	8.	(3)	9.	(3)	10.	(1)
11.	(1)	12.	(4)	13.	(1)	14.	(1)	15.	(4)
16.	(4)	17.	(3)	18.	(2)	19.	(4)	20.	(3)
21.	(1)	22.	(2)	23.	(4)	24.	(3)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (3) मानसिक आयु की संकल्पना 1911 में प्रयुक्त की गई। यह 1908 के स्केल का ही परिवर्द्धित संस्करण था। यह स्केल यूरोप के लगभग सभी देशों—अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका, चीन, जापान और रूस में अधिक प्रयुक्त की गई।

2. (2) बुद्धिलब्धि = 75

$$\text{वास्तविक आयु} = 12$$

$$\text{मानसिक आयु} = \frac{12 \times 75}{100} = 9$$

3. (1) प्याजे अनुसार बच्चे छोटे वैज्ञानिक हैं, जो दुनिया के बारे में अपनी समझ का सक्रियता से निर्माण करते हैं। वे ये भी कहते हैं कि सूचना बच्चों के मस्तिष्क में उड़ेली नहीं जा सकती।

4. (1) प्राकृतिक बुद्धिमत्ता गार्डनर की बहुविकल्पीय बुद्धिमत्ता का एक भाग है। इस प्रकार की बुद्धिमत्ता के धारक पौधे उगाने अथवा जानवरों की देखभाल करने में रूचि लेते हैं।

5. (4) 1983 ई. में हॉवर्ड गार्डनर ने बहुबुद्धि नामक एक नए सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। गार्डनर ने बताया कि बुद्धि का

- स्वरूप एकाकी न होकर बहु-प्रकारीय होता है। गार्डनर ने 9 प्रकार की बुद्धि बनाई जो परस्पर एक-दूसरे से स्वतंत्र हैं तथा प्रत्येक के क्रियाशील होने के ढंग अलग-अलग होते हैं।
6. (3) बुद्धिमत्ता = $\frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$
 $= \frac{66}{60} \times 100 = 110$
7. (4) बुद्धि व्यक्ति में समायोजन की क्षमता है जिसका परिणाम सकारात्मक होता है। इसीलिए यह मानसिक प्रक्रिया और परिणाम (उत्पाद) का रूप माना जाता है।
 बुद्धि गणितीय, कलात्मक, तार्किक, प्रमाणित और समस्या-समाधान की अभिव्यक्ति है।
8. (3) बाकी तीनों विकल्प प्रतिभाशाली बच्चे की विशेषता को प्रदर्शित करते हैं। लेकिन हम यह नहीं कह सकते हैं कि उनकी आबादी 2 या 3% ही है। यह ज्यादा भी हो सकती है। प्रतिभाशाली विद्यार्थी को संवर्धन संबंधी कार्य देने चाहिए ताकि उनका विकास अधिक हो सके।
9. (3) प्रतिभावान बालकों में बुद्धिलब्धि 120 से अधिक होती है। दूसरों से अंतर्क्रिया आसानी से कर लेते हैं। तीव्र बुद्धि और आत्मविश्वास विशेषताओं में भी उत्तम होते हैं।
10. (1) स्पीयरमैन ने बुद्धि के द्विकारक सिद्धान्त दिया। प्रथम कारक G और दूसरा कारक g से सूचित किया।
 स्पीयरमैन के सामान्य कारक G है जो जन्मजात और अपरिवर्तनीय होता है जबकि विशेष कारक g परिस्थित्यानुसार समायोजन की कला है।
11. (1) हॉवर्ड गार्डनर ने बहुबुद्धि नामक एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। 1998-95 में उसमें संसोधन किया। गार्डनर ने बताया कि बुद्धि का स्वरूप एकाकी न होकर बहु-प्रकारीय होता है।
12. (4) IQ प्राप्तांकों के साथ शैक्षिक निष्पादन का संबंध प्रत्यक्ष, समानुपातिक एवं बहुत गहरा है। बुद्धिमत्ता का स्तर ज्यादा होने पर शैक्षिक निष्पादन ये प्रदर्शन उच्च दिखाई देता है। इसी प्रकार बुद्धिमत्ता का स्तर निम्न होने पर शैक्षिक निष्पादन में भी प्रदर्शन निम्न दिखाई देता है। एक-दूसरे से स्वतंत्र होती है। तथा प्रत्येक के क्रियाशील होने के ढंग भिन्न-भिन्न होते हैं।
13. (1) बुद्धिमत्ता अथवा बुद्धि का वितरण आयु और शिक्षा तथा समाजीकरण और प्रशिक्षण के रूप में फलीभूत होता है। बुद्धिलब्धि के स्तरों में मंद, औसत, उत्तम और प्रतिभाशाली बुद्धि विचारणीय रहा है।
14. (1) हॉवर्ड गार्डनर ने गणित, संगीत, तर्क, स्थान, कार्य आदि अनेक कारकों के आधार पर बुद्धि के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है।
15. (4) सायकोमेट्रिक बुद्धिमापन में स्पीयरमैन ने द्विकारक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसमें से सामान्य बुद्धि G और उसे विशेष बुद्धि को g से सूचित किया।
16. (4) स्पीयरमैन के अनुसार “बुद्धि नई स्थिति में समायोजित होने की योग्यता है” जबकि बिनेट के अनुसार बुद्धि तार्किक चिंतन एवं नियंत्रण संबंधी योग्यता है।
17. (3) बुद्धिलब्धि (Intelligence Quotient : IQ) ज्ञात करने का सूत्र

$$IQ = \frac{MA}{CA} \times 100$$
 जहाँ MA = मैटल एज (मानसिक आयु), CA = क्रोनोलॉजिकल एज (वास्तविक आयु)
18. (2) अर्न्तमुखी व्यक्तित्व शर्मिला, अलग-थलग रहने वाला और मूक होता है। मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व के प्रकार (Type) सिद्धान्त के अंतर्गत अन्तर्मुखी, बहिर्मुखी और उभयमुखी को प्राथमिक रूप में रखा है।
19. (4) सी.एच. जुड (Judd) के अनुसार शिक्षा मनोविज्ञान शैक्षिक अभिवृद्धि का व्यवस्थित अध्ययन है। शैक्षिक अभिवृद्धि से बुद्धि का मार्ग प्रशस्त होता है।
20. (3) $IQ = \frac{15}{12} \times 100 = 125$
21. (1) अभिसारी चिंतन और अपसारी चिंतन वस्तुतः चिंतन के दो प्रकार हैं। दोनों का सम्मिलन सृजनात्मकता का कारण है। अभिसारी चिंतन निगमनात्मक चिंतन है जो सरल से जटिल की ओर अग्रसर होता है।
22. (2) मनोवैज्ञानिक गिल्फोर्ड सृजनात्मक अनुसंधान के लिए अग्रण्य हैं। उन्होंने सृजनशीलता हेतु दो चिंतन सिद्धान्त का प्रतिपादन : अभिसारी एवं अपसारी चिंतन के रूप में की है।
23. (4) विकास का अनियमित व भिन्नता सिद्धान्त बताता है कि सभी व्यक्तियों में विकास एक समान नहीं होता।
24. (3) ज्ञान के निर्माण की संकल्पना वास्तविक जीवन के अनुभवों के माध्यम से प्रायोगिक अधिगम पर आधारित शिक्षा का एक परिप्रेक्ष्य है।
25. (3) अपनी माँ से अलग करने या अजनबियों द्वारा उठाए जाने पर नवजात शिशुओं द्वारा व्यक्त किया जाने वाला डर-वियोग दुश्चिन्ता कहलाता है।

भाषा किस प्रकार सीखी जाती है?

बच्चे बड़ों से सुनकर शब्दों को बोलना व समझना सीखते हैं। धीरे-धीरे जैसे-जैसे बच्चा **एक साल** का हो जाता है उसका अपना एक छोटा सा शब्द भंडार बन जाता है। **18 माह** के होने पर बच्चा दो रूपियों को मिलाकर दो शब्दों के वाक्यों को बनाते हैं। **दो वर्ष** का होने पर अधिकतर बच्चे 50 शब्दों को सीख जाते हैं और वे तीन या चार शब्दों से वाक्य बनाते हैं फिर समय के अनुसार तीन साल के होने पर उनका शब्द भंडार 1000 शब्दों से अधिक का हो जाता है। **पाँच वर्ष** का होने पर बच्चा भाषा के जटिल नियमों को बिना किसी औपचारिक निर्देश के सीख जाता है।

बी.एफ. स्कीनर और अन्य व्यवहारशास्त्री सोचते हैं कि **अनुकरण** और देख-सुन कर अधिकतर बच्चे भाषा सीख जाते हैं। बच्चे अपने बड़ों की बातों का अनुकरण करते हैं और बड़ों द्वारा सही बोलने पर उनकी प्रशंसा की जाती है।

हालांकि **अनुकरण** और **सदृहीकरण** से पूर्ण ज्ञान नहीं मिलता, बच्चों को सीखने के लिए संस्थानों में भेजना होता है क्योंकि बड़े उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते और उन्हें सही बात करने पर प्रशंसा भी कम मिलती है। हालांकि वे बोलना सीख जाते हैं। परंतु इनकी गति बहुत धीरे होती है।

अनुसंधान बताते हैं कि बच्चे स्वयं ही व्याकरण विकसित कर दो-तीन शब्दों के वाक्य बनाना सीख जाते हैं। कई अध्ययन बताते हैं कि दो से तीन वर्ष के बच्चों की वाकशक्ति का आकार काफी संरचित होता है और उनकी भाषा का तरीका उनके बड़ों से थोड़ा मिलता-जुलता होता है।

ये और अन्य प्रमाण यह दर्शाते हैं कि, व्याकरण के औपचारिक नियमों को सीखने से पहले बच्चा भाषा की मूलभूत और गहन संरचना को सीख जाता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों का नियम है कि, भाषा सीखने की योग्यता जन्म के समय बन जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई बच्चा स्वयं ही कोई भाषा जैसे मातृभाषा सीख जाता है बल्कि वे मानते हैं कि, हम सभी किसी न किसी विचारधारा व भाषा की मूलभूत संरचना के साथ जन्म लेते हैं।

भाषा किस प्रकार समझी जाती है?

संरचना के अलावा, अन्य बातें भी इसमें सम्मिलित हैं कि हम भाषा को किस प्रकार सीखते हैं। श्रोता या पाठक की रुचियाँ और मूल्य उसकी समझ को प्रभावित करते हैं। शब्द या वाक्य के **संदर्भ** (Sense & Reference) भी महत्वपूर्ण हैं जो स्थिति के अनुसार बताए जाते हैं। लिखित और कही गई सूचना को समझने के लिए **मस्तिष्क** **संदर्भ** के रूप में अन्य तरीकों का प्रयोग करता है।

आपको सुने या पढ़े गए वाक्यों के सटीक अर्थ कभी-कभी ही याद रह पाते हैं और आप उसके सामान्य अर्थ को याद रख पाते हैं।

भाषा, भावों को निसंदेह स्पष्ट रूप से प्रभावित करती है और कुछ हद तक वातावरण की तत्कालिक समझ से बनती है। **वोर्फ** की परिकल्पना ने भाषा वैज्ञानिकों, मानवविज्ञानी, दार्शनिक और मनोवैज्ञानिकों में वाद-विवाद पैदा कर दिया है। इस पर सूक्ष्म प्रयोगात्मक अनुसंधान किए गए हैं।

भाषा-संरचना की पृष्ठभूमि

भाषा को समझने हेतु एक अन्य महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसे वाक्यांश **संरचना** (Syntax) कहा जाता है। वाक्यांश संरचना बताती है कि वाक्य सोपानकृत संरचना से बनता है जो लघुतम इकाईयों पर आधारित हैं जिसे **अवयव** कहा गया है।

भाषा का स्वरूप **मनोविज्ञान**, **व्याकरण** और **सामाजिक** विज्ञान से निर्धारित है। भाषा की संरचना को समझने वाले भाषा वैज्ञानिक उसे एक शब्दकोष व एक व्याकरण का योग भर मानते हैं। वास्तव में ये दोनों ही परिभाषाएं भाषा के दायरे को बहुत सीमित कर देती हैं। इन दोनों परिभाषाओं में यह मान लिया जाता है। कि भाषा पहले है और मनुष्य बाद में है। यह समझने में कोई मुश्किल नहीं होनी चाहिए कि यह सच नहीं है। लोग नहीं होंगे तो भाषा कहां से होगी और भाषा नहीं होगी तो शब्दकोश किसका लिखेंगे और व्याकरण किसका लिखेंगे। पहले लोग होते हैं, एक समाज होता है और वे लोग मिल जुलकर अपनी भाषा को बनाते हैं।

भाषा का मनोवैज्ञानिक पक्ष

मानसिक दृष्टिकोण से भी भाषा का विशेष महत्व है। यह देखकर सचमुच बहुत आश्चर्य होता है कि संसार का हर बच्चा चाहे वह किसी भी समाज में पलता हो और किसी भी भौगोलिक स्थिति में रहता हो **चार वर्ष की उम्र तक कम से कम भाषा की दृष्टि से वह एक वयस्क बन** जाता है। यानी चार वर्ष की आयु तक हर बच्चा भाषा की एक आधारभूत शब्दावली और वाक्य संरचना का नियम पालन सीख जाता है।

यह एक मनोवैज्ञानिक कारण और उपचार से संबंध विधि है। मन के प्रकार्य का अन्वेषण करना ही **मनोचित्रण** कहलाता है। इसे ब्रेनमैपिंग कहा जाता है। मनोविज्ञान के अनुसार **स्कीमा** (मस्तिष्क में प्रतिबिम्बित विचार) के आधार पर बालक की सोच प्रतिबिम्बित होती है। मन-मस्तिष्क में दैनिक जीवन के दृश्य-श्रव्य माध्यम से यह प्रतिमांकन ज्यादा होता है।

भाषा का इंसान के दिमाग से कोई न कोई गहरा संबंध जरूर है। अक्सर देखा गया है कि सिर के किसी खास हिस्से में चोट लगने से और सब तो ठीक रहता है लेकिन भाषा कई बार विचलित हो जाती है। कभी समझ आना बंद हो जाता है तो कभी बोलना अस्थिर हो जाता है। कभी शब्द-निर्माण प्रक्रिया में परेशानी हो जाती है तो कभी वाक्य बनाने में उलझन।

भाषा का व्याकरणिक पक्ष

संरचना के दृष्टिकोण से भी भाषा की कई विशेषताएँ हैं। भाषा को एक समग्र दृष्टिकोण से समझने के लिए यहाँ जरूरी है कि भाषा ध्वनि, शब्द, वाक्य और बातचीत के स्तर पर पूरी तरह से नियमबद्ध होती है। ऐसा नहीं हो सकता कि हम जिन ध्वनियों को चाहें उनको जोड़कर शब्द बना लें और शब्दों को किसी भी मनचाहे क्रम में रखकर वाक्य बना लें, और वाक्यों को किसी भी मनचाहे क्रम में रखकर एक संवाद की रचना कर लें।

ध्वनि संरचना

ध्वनि विज्ञान ही ऐसा क्षेत्र है जहाँ हम प्रथम भाषा के हस्तक्षेपों को वास्तव में देख सकते हैं। एक चीज जो भाषा सीखने वाले के ध्वनियों को सीखने की क्षमता को प्रभावित करती है वह है उसकी आयु। जब हमारा मुख का जबड़ा स्थायी हो जाता है तो कुछ वाणियों को उच्चरित करने में कठिनाई होती है नई ध्वनियों को समझने की क्षमता भी एक निश्चित आयु के बाद घटने लगती है।

हर भाषा की अपनी ध्वनिगत व्यवस्था होती है लेकिन ध्वनि के कुछ नियम ऐसे भी होते हैं जो हर भाषा में पाये जाते हैं। उदाहरण के लिए हर भाषा में स्वयं और व्यंजन होते हैं। वे अनेक हो सकते हैं और बहुत कम भी। संसार में शायद ही कोई ऐसी भाषा हो जिसमें 3 से कम स्वर हों, अधिक से अधिक 20 हो सकते हैं। व्यंजन 8-10 से लेकर 50-60 तक हो सकते हैं। आम भाषाओं में ध्वनियों की संख्या कुछ मिलाकर 40-50 तक होती है। अंग्रेजी और हिन्दी के विविध स्वरूपों में इनकी संख्या इस प्रकार है—

	स्वर	व्यंजन	कुल
अंग्रेजी	20	24	44
हिन्दी	10	33	43

शब्द का श्रवण, वाचन और उच्चारण वाली पद्धति अर्थात्-शब्द ज्ञान पद्धति के लिए शिक्षण अधिगम समस्या का निवारण शुद्ध उच्चारण के द्वारा होता है। शुद्ध उच्चारण संबंधी दोष 'वर्तनी' के अन्तर्गत आते हैं। वर्तन का अभिप्राय ध्वनि और ध्वनि से सम्बद्ध पात्र (अंग) से है। उच्चारण, साक्षरता और विचार अभिव्यक्ति सा है।

जब बच्चे शब्दों के लिए स्वयं वर्तनी का निर्माण करते हैं तो वे उनका सही उच्चारण नहीं जानते। तब वे आविष्कार वर्तनी का प्रयोग करते हैं। आविष्कार वर्तनी बच्चों की मानक वर्तनी के विकास में सहायता करती है।

अवस्थाजन्य भाषा का विकास

● **कूड़ंग/गूड़ंग**—6 सप्ताह के आसपास बच्चे कूड़ंग और गूड़ंग शुरू कर देते हैं। प्रारम्भ में ये ध्वनियाँ स्वरों के गुच्छ जैसे—उउउउ, इइइ की तरह लगती हैं। चार महीने के आसपास इन स्वर गुच्छों के आरंभ में व्यंजन ध्वनियाँ जुड़ जाती हैं और वे बहुत हद तक कूऊऊऊ, गुऊऊऊ की तरह सुनायी देते हैं।

● **बैब्लिंग**— 6 महीने के आसपास जब बच्चे सामान्यतः बैठना शुरू कर देते हैं तब वे बैब्लिंग करने लगते हैं। इस अवस्था में वे कई प्रकार के स्वरों और व्यंजनों का उच्चारण करने लगते हैं जो कि एक व्यंजन और एक स्वर के गुच्छ के रूप में होते हैं। जैसे—गि-गि-गि, का-का-का, मा-मा-मा, पा-पा-पा, मि-मि-मि आदि।

● नौ से दस महीने के आसपास इस मिश्रण में परिवर्तन आने लगते हैं। जैसे—बा-बा गा-गा और यह आगे के महीनों में और जटिल होता जाता है, जैसे—मिम-मिम-माइ-या आआआ।

● इस तरह बच्चे अपनी भावनाओं को व्यक्त करने लगते हैं, किसी चीज पर जोर देने लगते हैं तथा अनुकरण करने लगते हैं। माता-पिता को लगता है कि बच्चे उनसे बातें कर रहे हैं। इसीलिए प्रतिक्रिया स्वरूप माता-पिता भी उनसे बातें करने लगते हैं। इससे बच्चों को भाषा की संवादात्मक या सम्प्रेषणात्मक भूमिका का कुछ अनुभव हो जाता है।

● **एक शब्द की अवस्था**—एक वर्ष के आसपास बच्चे पहली बार ऐसे शब्द बोलते हैं जिन्हें पहचाना जा सकता है। इनमें से बहुत सारे शब्द ऐसे होते हैं जिन्हें वे अपने आसपास सुनते हैं। जैसे—व्यक्तियों और वस्तुओं के नाम—मामा, पापा, भइया, दीदी, चिड़िया, गुड़िया आदि। इस अवस्था में वे आ खत्म और देदो जैसे शब्द भी बोलने लगते हैं।

● इस अवस्था में **होलोफ्रेस्टिक अवस्था** भी कहा जाता है क्योंकि इसमें एक शब्द का प्रयोग एक पूरे पद या वाक्य के रूप में किया जाता है। बच्चे इस अवस्था में अतिसामान्यीकरण (जैसे सभी जानवरों के लिए कुत्ता शब्द करने लगता है।)

● प्राथमिक स्तर का भाषा पुस्तकों में (प्रथम कक्षा) सर्वप्रथम वर्णमाला तत्पश्चात् दो अक्षर वाले शब्द, तदोपरान्त तीन अक्षर वाले शब्द तथा कविताएँ दी गई होती हैं।

● यह पद्धति पुस्तक में **ऊर्ध्वगामी पद्धति (Bottom up Approach)** का अनुसरण करती है।

● **दो शब्द की अवस्था**—डेढ़ साल की आयु तक बच्चे के पास सामान्यतः 50 शब्दों की एक सक्रिय शब्दावली हो जाती है और वह दो-दो शब्दों को एक साथ रखना शुरू कर देता है। जैसे—दूध नहीं, खाना नहीं, दूध खत्म, बॉल दे दो आदि। हालाँकि इन शब्दों के अर्थ एक शब्द की अवस्था में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ के समान

ही हैं लेकिन बाद में इस अवस्था में बच्चा नये अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग भी करने लगता है। जैसे मम्मी खाना, जीजी मारा, घूमी जाना, पापा फोन, दुदु पीना आदि।

● इस अवस्था में बच्चों की अभिव्यक्ति से उनकी घरेलू भाषा की वाक्य संरचना झलकने लगती है। इस अवस्था को **टेलिग्राफिक स्पीच** भी कहा जाता है क्योंकि इसमें प्रयुक्त वाक्य टेलिग्राफ संदेश की तरह केवल मूल शब्दों से निर्मित होते हैं।

शब्द संरचना

शब्दों के स्तर पर भी भाषा सुव्यवस्थित है। एकवचन से बहुवचन कैसे बनेगा या संज्ञा से विशेषण कैसे बनेगा। यह सब शब्द निर्माण संबंधी नियमों से ही निर्धारित होता है यह सच है कि अलग-अलग तरह के शब्द-समूहों के लिए अलग-अलग तरह के नियम होंगे-यथा व्यंजनांत संज्ञा के लिए एक नियम तो आकारान्त संज्ञा के लिए दूसरा। लेकिन होगा सब नियमों के आधार पर ही।

मनोभाषाविज्ञान (Psycholinguistics)

भाषा संज्ञानात्मक प्रक्रिया से परस्पर संबंधित है। उदाहरण के लिए, भाषा के मनोभाषावैज्ञानिक या मनोवैज्ञानिक यह जाँचते हैं कि लोग कैसे अपने विचारों का आदान-प्रदान करने हुए भाषा सीखते हैं।

भाषा की प्रकृति

ध्वनिम और रूपिम (Phonemes and Morpheme)

ध्वनिम (Phoneme) बोली (बोली गई भाषा) की मूलभूत इकाई हैं जैसे ध्वनियाँ a, k, ab.

● अपनी जीभ को आगे के ऊपर के दाँत पर दबाएँ और आराम से मुख से हवा छोड़ें। जी की आवाज़ निकलेगी। अब अपने होठों को बंद कर फिर एक दम से खोलें, प की ध्वनि आएगी। अंग्रेजी भाषा में 45 स्वनिम या ध्वनिम हैं। स्वनिम को भिन्न ध्वनियों में पहचाना जा सकता है।

● स्वनिमों का स्वयं में कोई अर्थ नहीं होता। ये वे इकाइयाँ हैं, जिनसे हम ऐसे शब्द बनाते हैं जिनसे आवाज़ें निकलती हैं। मि(मी)बी के स्वनिमों को मिला कर हमें मिजबी शब्द प्राप्त होता है। यह रूपिम है। रूपिम भाषा की सबसे छोटी इकाई है जिसका अर्थ होता है। ऐसा भी हो सकता है कि ये शब्दों के रूप में न हों। जैसे उपसर्ग tele का अर्थ है दूर जो कि एक शब्दांश है और यह अन्य शब्दांश phone या Pathy के आगे लग कर शब्द बना सकते हैं। रूपिमों से हम 20,000 शब्द बना सकते हैं और अधिकतर ऐसे हैं जिन्हें हम दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं और अंग्रेजी के 50,000 से अधिक शब्द शब्दकोश में देखे जा सकते हैं।

रूपिम का अर्थ (Meaning of Morpheme)

यह भाषा की मूलभूत इकाई है।

● उदाहरण हेतु शब्द Proactived में वास्तव में चार शब्दांश है pr, active, ed इनमें से प्रत्येक का अर्थ है। कुछ रूपिम जैसे girafee स्वयं में पूर्ण हैं लेकिन कुछ अन्य शब्दांश ऐसे भी होते हैं जिन्हें अपना अर्थ बताने के लिए दूसरों से जुड़ना पड़ता है जैसे re, repeated (दोहराए गए कार्य) को दर्शाता है।

● 1999 में कैरोल ने बताया कि अर्थविज्ञान (Semantics) मनोभाषाविज्ञान का वह क्षेत्र है जो शब्दों और वाक्यों के अर्थ को जाँचता है

● मनोभाषाविज्ञान का दूसरा भाग है वाक्य विन्यास (Syntax)। यह व्याकरण के नियमों से संबंधित है जो कि बताता है कि शब्दों को जोड़ कर वाक्य किस तरह बनाया जाता है।

● 1971 में जारवेला द्वारा किए गए अध्ययन विशेष रूप से भाषा के अवयवों की संरचना की मनोवैज्ञानिक वास्तविकता को दर्शाती है, उन्होंने दर्शाया कि लोग शब्दों को बेहतर ढंग से याद रख पाते हैं यदि शब्द पुराने अवयवों (Companents) की बजाए वर्तमान प्रयोग में लाए जाने वाले अवयवों से बने हों।

नोम चॉमस्की (Noam Chomsky) ने वाक्यांश संरचना को रूपांतरण व्याकरण (Transformational Grammar) में विकसित किया।

चॉमस्की के रूपांतरण व्याकरण के अनुसार, आमतौर पर लोग ऐसे वाक्य के बारे में सोचते हैं जो शब्दों को व्यवस्थित क्रम दर्शाता हो जिसे कागज पर लिखा जा सकता हो। चॉमस्की ने मनोवैज्ञानिकों और भाषावैज्ञानिकों में इस बात के उत्साह भर दिया कि वाक्य उससे कहीं अधिक बढ़कर है जिसे हम पढ़ते हैं और संरचना से समझते हैं। व्यवहारवादियों (Behaviourist) ने भाषा व्यवहार के अवलोकनकारी पक्षों (Ubservational) पर जोर दिया। इसके विपरीत चॉमस्की ने तर्क दिया कि भाषा की योग्यता को केवल मानवीय मस्तिष्क में दर्शाए गए नियमों और सिद्धांतों की जटिल व्यवस्था के रूप में वर्णित किया जा सकता है।

चॉमस्की ने बताया कि मनुष्यों में भाषा कौशल स्वाभाविक होता है यानी भाषा के अमूर्त सिद्धांतों को समझने की जन्मजात समझ होती है। जिसे लोग अपने तौर तरीके से सेट कर बोलना समझ जाते हैं। अन्य संज्ञानात्मक प्रक्रिया (उदाहरण हेतु स्मृति और निर्णय करना) के सिद्धांतों, का अनुसरण नहीं करती।

● बहुत से मनोवैज्ञानिक रूपांतरण व्याकरण द्वारा वाक्य विन्यास या औपचारिक संरचना पर दिए जाने वाले महत्व को देख कर हतोत्साहित हो जाते हैं। उन्होंने ऐसे नियमों को बनाना शुरू कर दिया जो अर्थविज्ञान या भाषा के अर्थ पर जोर डालती है। हाल ही के वर्षों में, अर्थविज्ञान पर ध्यान देने से मनोवैज्ञानिकों को यह समझने में मदद मिली है कि लोग किस तरह भाषा की वाक्य से बड़ी इकाई को समझ पाते हैं। संज्ञानात्मक प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण (Cognitive Functional Approach) यह दर्शाता है कि मानव भाषा का कार्य अन्य लोगों से संप्रेषण करना भी है।

तंत्रिकाभाषा विज्ञान (Neurolinguistics)

भाषा के तंत्रिका संबंधी आधार को निर्मित करने में महत्वपूर्ण माने जाने वाले चार क्षेत्र हैं—

(क) मस्तिष्क (गोलाद्ध) में भाषा के स्थान संबंधी विशिष्टता (Linguistic specificity in Hemispheric region)

(ख) स्वरलोप

(ग) लोगों पर किए गए न्यूरो इमेंजिंग रिसर्च

(घ) विशिष्ट भाषा के ज्ञान का संचय

मस्तिष्क में भाषायी स्थान संबंधी विशिष्टता

● भाषा समझने के लिए मानव मस्तिष्क अनिवार्य अंग है। अन्य बहुत से जानवरों की तरह मनुष्य का मस्तिष्क दो भागों में बंटा हुआ है। निम्न भाग को मस्तिष्क और उच्च भाग को प्रमस्तिष्क (Cerebrum) कहा जाता है। मस्तिष्क-स्तंभ (Brainstem) जो कि रीढ़ की हड्डी से जुड़ा होता है, सांस और धड़कन को नियंत्रित करते हुए शरीर को जिंदा रखता है। प्रमस्तिष्क हालांकि जीवन के लिए जरूरी नहीं होता है लेकिन जीव को उनके परिवेश से जोड़ने में सहायता करता है। प्रमस्तिष्क भी दो प्रमस्तिष्कीय गोलाद्ध (Cerebral Hemisphere) में बंटा होता है। बायां गोलाद्ध (Left Hemisphere) और दाएं गोलाद्ध (Right Hemisphere) ये अद्भुत आपस में बहुत सारे पुलों के माध्यम से जुड़े होते हैं। ऐसा माना जाता है कि भाषा मस्तिष्क के दाईं गोलाद्ध में स्थित होती है।

● इस बात पर जोर दिया गया है कि अधिकतर लोगों में मस्तिष्क के दाईं तरफ भाषा संबंधी प्रक्रियाएँ चलती हैं। मस्तिष्क के बाईं गोलाद्ध में विशेष रूप से वाचन संबंधी अनुभव होते हैं। यह भाग शीघ्रता से ध्वनियों को चुन लेता है। यह जटिल शब्दों को आसान अर्थों में विभाजित करता है। बहुत वर्षों से लोग ऐसा मानते रहे कि भाषा संबंधी प्रक्रियाओं में दाईं भाग की कोई भूमिका नहीं है। जबकि अब ऐसा माना जाता है कि दायाँ भाग संदेश की भावना, अलंकारों को समझने और छिपे अर्थ को जानने, अनेक अर्थों को समझने और अनेक वाक्यों से अर्थ को जोड़ने के सहयोग करता है।

बहुत सारे अध्ययनों से यह पता चला है कि हमारे शरीर के दाहिने हिस्से में जो अनुभव होते हैं उनका बोध हमें बाएँ प्रमस्तिष्कीय गोलाद्ध से होता है और शरीर के बाएँ हिस्से में जो अनुभव होते हैं उनका बोध दाएँ प्रमस्तिष्कीय गोलाद्ध से होता है। अध्ययन हमें यह भी बताते हैं कि बाएँ हाथ से काम करने वाले 90 प्रतिशत बाएँ प्रमस्तिष्कीय गोलाद्ध से तथा बाएँ हाथ से काम करने वाले 70 प्रतिशत लोगों की भाषा बोलने और समझने में क्षमता मस्तिष्क के दाएँ गोलाद्ध में होती है।

भाषा का सामाजिक पक्ष

बच्चे एक जन्मजात भाषाई क्षमता लेकर पैदा होते हैं जो उनके सामाजिक परिवेश के छूते ही एक समृद्ध और जटिल भाषा के रूप में खिल उठती है। इस जन्मजात क्षमता में एक **सार्वभौमिक व्याकरण** की छवि रहती है और भाषा सीखने की यात्रा में बच्चा एक पूर्व

विदित पड़ावों की लड़ी से गुजरता है। दूसरी बात यह है कि शायद हर बच्चा भाषा का एक सार्वभौमिक स्वरूप लेकर पैदा होता है जैसे हम देखने, सुनने व चलने की शारीरिक व मानसिक तैयारी के साथ पैदा होते हैं, वैसे ही शायद भाषा की एक छवि हमारे दिमाग में रहती है। संसार की सभी भाषाओं में संज्ञा, क्रिया विशेष जैसे शब्दों के समूह पाये जाते हैं। सभी में कर्ता, कर्म जैसे संबंध और सभी में कोई न कोई संबंध विद्यमान है।

बच्चे में जन्म से ही भाषा सीखने की अपार क्षमता होती है। स्कूल में आने से पहले ही चार वर्ष की बालिका अपनी भाषा के व्याकरण को पूरी तरह से आत्मसात कर लेती है और उसके समझने और बोलने में कोई त्रुटि नहीं करती। इसलिए स्वाभाविक तरीके में इस बात पर जोर दिया गया कि बच्चों के भाषा सीखने का माहौल चिंतामुक्त हो, पठन सामग्री उनके स्तर की तथा उनके लिए रोचक और चुनौतीपूर्ण हो।

संप्रेषणात्मक विधि (Communicative Method)—भाषा सिखाने के आधुनिक तरीकों में संप्रेषणात्मक विधि (Communicative Method) और प्राकृतिक उपागम (Natural Approach) का जिक्र करना जरूरी है। संप्रेषणात्मक विधि, भाषा विज्ञान में निरन्तर हो रहे शोधों से समाज भाषा विज्ञान ने यह स्पष्ट कर दिया कि भाषा को सीखने का मतलब केवल भाषागत संख्या को ही सीखना नहीं है बल्कि संदर्भ के अनुसार उपयुक्त भाषा का प्रयोग सीखना है।

स्वाभाविक या प्राकृतिक उपागम यह है कि इस सोच से प्रभावित भाषा सिखाने के तरीकों में सम्प्रेषण का सम्पूर्ण संदर्भ आधार है।

भाषा किसी समाज में रहने वाले व्यक्तियों के आपसी रिश्तों को बयान करती है और जमात तरह की सामाजिक आर्थिक ऊँच-नीच को दर्शाती है।

भाषा परिवर्तनशील है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की और एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र की भाषा थोड़ी भिन्न होती है।

द्वितीय भाषा शिक्षण : भाषा वैज्ञानिक क्रेशन के शब्दों में द्वितीय भाषा सीखने में बच्चों को बोधगम्य सामग्री (Comprehensible input) की आवश्यकता होती है। इससे तात्पर्य यह है कि उस भाषा का प्रयोग हेतु समृद्ध वातावरण उपलब्ध कराया जाये। जिस भाषा को समझने में बच्चे सक्षम हों और जो उनके लिए चुनौतीपूर्ण भी हो। ऐसी भाषा स्वाभाविक रूप से सम्प्रेषणपरक स्थिति में उपलब्ध करायी जानी चाहिए जो कि उनके लिए अतिपूर्ण हों और जो उन्हें इस चुनौती को मात देने में मदद करें।

इसी क्रम में **अनुवाद विधि (Translation Method)** कारगर समझी एवं अपनायी जाती है। बोधगम्य सामग्री के अतिरिक्त कुछ अन्य कारक भी द्वितीय भाषा सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। जैसे—विद्यार्थी की प्रेरणा, उसका आत्मविश्वास, उसकी उत्सुकता/चिंता और भाषा सीखने के प्रति उसका रवैया। ये कारक द्वितीय भाषा सीखने की प्रक्रिया को बाधित या प्रोत्साहित कर सकते हैं।

द्वितीय भाषा शिक्षण की परम्परागत विधियों : अनुवाद विधि-ट्रांसलेशन मेथड आदि के विपरीत ध्यान केन्द्रीय विधि भाषा सीखने को अर्थ से संरचना की ओर ले जाती हैं तथा यह विधि ध्यान से सुनने पर बल देती है और भाषा में पर्याप्त दक्षता अर्जित कर लेने के बाद ही बोलने पर जोर देती हैं। क्रेशन ने साफ कहा है कि 'धारा प्रवाह बोलना (Fluency) प्रत्यक्ष रूप से नहीं सिखाया जा सकता। यह समय के साथ अपने आप आता है।'

स्वरलोप

स्वरलोप (मस्तिष्क में वाक्क्षेत्रों की क्षति) से संवाद करने में कठिनाई होती है। मस्तिष्क के आगे की क्षति होने से बोलने में अस्थिरता और कठिनाई आती है। इसे बोक्रा (Broca's area) का स्वरलोप कहा जाता है। इसे प्राथमिक रूप से भावनात्मक भाषिक कमी या भाषा निर्माण में कठिनाई या भाषा को समझने में होने वाली कठिनाई के रूप में भी देखा जाता है। अन्य प्रकार का मुख्य स्वरलोप वर्निक क्षेत्र (Wernicke area) के अध्ययन में भाषा संबंधी उन गंभीर समस्याओं को बताया गया है जिसमें कोई मूलभूत निर्देश भी नहीं समझ पाता जैसे टेलीफोन को पहचानना, या मुझे घड़ी का चित्र दिखाओ।

ब्रेन इमेजिंग और विशिष्ट भाषा ज्ञान : ब्रेन इमेजिंग तकनीक के प्रयोग से अनुसंधानकर्ताओं ने साधारण और स्वरलोप में ग्रसित गंभीर लोगों पर परीक्षण किए गए हैं।

अनुसंधानकर्ताओं द्वारा तंत्रिकाभाषाविज्ञान के बारे में खोजी गई यह सूचना स्वरलोप से ग्रसित लोगों पर आधारित है।

वाक् अनुभूति (Speech Perception)

वाक् अनुभूति बहुत अधिक जटिल प्रक्रिया है जो कि मनुष्य के प्रभावी संज्ञानात्मक कौशल दर्शाते हैं। किसी विशिष्ट स्वनिम के उच्चारण में बहुत अधिक अंतर होता है जो कि वक्ता की वाक् विशेषताओं अनुचित उच्चारण तथा ग्रंथियों के संयोजन से होने वाले वाक् परिवर्तनों पर निर्भर होता है। और यदि वाक् में ध्वनि न हो तो श्रोता स्वनिमों की पुनः प्राप्ति दर्शाते हैं। संदर्भ के उपयोग से वे अनुपस्थित ध्वनि को समझते हैं।

वाक् अनुभूति की दृष्टि से विशिष्ट प्रक्रिया के अनुसार, मनुष्य के पास विशिष्ट बुद्धि है जो उन्हें स्वनिमों को समझने में मदद करती है। वर्तमान काल में वाक् अनुभूति को समझने हेतु प्रमाण सहयोग करता है। अनुसंधान में बताया गया है कि मनुष्य उसी तरह से वाक् ध्वनियों को समझता है जिस तरह अवाक् ध्वनियों और स्वनिमों को समझता है जो अन्य संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं द्वारा प्रभावित होती हैं।

वाइगोत्स्की के अनुसार अधिगम और विकास की पारस्परिक प्रक्रिया में बालक का सक्रिय भागीदारी होता है जिसमें संज्ञान पर भाषा का सीधा प्रभाव होता है। अधिगम और विकास अन्तर्सम्बन्धित प्रक्रियाएँ हैं जो छात्र के जीवन के पहले दिन से प्रारम्भ हो जाती है। वाइगोत्स्की के अनुसार विभिन्न बालकों के अलग-अलग विकास स्तर पर अधिगम की व्यवस्था समरूप तो हो सकती है किन्तु एक रूप नहीं, क्योंकि सभी बच्चों का सामाजिक अनुभव अलग होता है। उनके अनुसार अधिगम विकास को प्रेरित करता है।

वाइगोत्स्की का सामाजिक दृष्टिकोण संज्ञानात्मक विकास का एक प्रगतिशील विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वस्तुतः वाइगोत्स्की ने बालक के संज्ञानात्मक विकास में समाज एवं उसके सांस्कृतिक संबंधों के बीच संवाद को एक महत्वपूर्ण आयाम घोषित किया। जीन प्याजे की तरफ वाइगोत्स्की भी यह मानते थे कि बच्चे ज्ञान का निर्माण करते हैं। किन्तु इनके अनुसार संज्ञानात्मक विकास एकाकी नहीं हो सकता, यह भाषा-विकास, सामाजिक-विकास, यहां तक कि शारीरिक-विकास के साथ-साथ सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में होता है।

वाइगोत्स्की के अनुसार बच्चे के संज्ञानात्मक विकास को समझने के लिए एक विकासात्मक उपागम की आवश्यकता है जो कि इसका शुरु से परीक्षण करें तथा विभिन्न रूपों में हुए परिवर्तन को ठीक से पहचान पाए। इस प्रकार एक विशिष्ट मानसिक कार्य जैसे आत्म-भाषा को, विकासात्मक प्रक्रियाओं के रूप में मूल्यांकित किया जाए, न कि एकाकी रूप से।

बोलना सिखाने का उत्तम तरीका और संभवतः एकमात्र तरीका इस मत के अनुसार बोधगम्य सामग्री उपलब्ध कराना है। प्राथमिक वाक् (Primary speech) तब आएगा जब सीखने वाला स्वयं को तैयार महसूस करेगा। तैयारी की यह स्थिति अलग-अलग लोगों के लिए

स्नायुचित्र (Neuroimaging)

कई अनुसंधान पोजीट्रान एमिशन टोमोग्राफी (PET) तकनीक का प्रयोग करती हैं, जो मस्तिष्क की क्रियाओं के चित्रों को प्राप्त करने के लिए उसके अंदर रक्त के बहाव को मापता है।

स्मरणीय तथ्य

मेटा-लैंग्वेज (अधिभाषा) : यह भाषायी जागरूकता का एक भाग ध्वनि जागरूकता है जो अपनी सामग्री से अलग रूप में भाषा के रूप के बारे में सोचने की क्षमता है।

भाषा की शैली और अनुभव-अनुभूति

वॉर्फ की परिकल्पना :

1950 में वॉर्फ ने परिकल्पित किया था कि भाषा प्रत्यक्ष रूप से अनुभूति (Perception) को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के तौर पर वॉर्फ शब्द को देखने के लिए कहते हैं, जो उनके शब्दकोष में तीन तरह की snow के लिए एक अलग शब्द के रूप में दर्ज है। इससे नए वाक्यांश बन सकते हैं जैसे good skin snow जिससे उनकी विभिन्न विशेषताओं का पता चलता है। तीन तरह की snow के लिए आसान व विभिन्न विशेषताओं का पता चलता है। तीन तरह की snow के लिए आसान व विभिन्न नामों से Eskimos शब्द के अन्यो से अलग किया जा सकता है। हालाँकि अलग-अलग शब्द समान प्रयोग दिखाते हैं परिणामस्वरूप ऐसे शब्दों को भाषा में उनकी विशेषताओं को देखते हुए श्रेणीबद्ध किया जाता है। ऐसी संभावना कम है कि Eskimos शब्द को snow के रूप में उपयोग किया जाए।

अलग-अलग समय पर उत्पन्न होती है। यद्यपि ज्यादातर प्राथमिक वाक् व्याकरणिक दृष्टि से शुद्ध नहीं होते। शुद्धता समय के साथ विकसित होती है। जब सीखने वाला सामग्री (Input) को अधिक सुनता और समझता है।

भाषा का संवैधानिक एवं राजनीतिक पक्ष

ब्रिटिश भारत में सरकार की राजभाषा अंग्रेजी होते हुए भी अंग्रेजों के लिए हिंदी का ज्ञान आवश्यक था जिसका प्रारंभ 1800 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज, कोलकाता की स्थापना के साथ ही हो गया था। 1878-79 में ही इंग्लैण्ड से भारत आने वाले प्रत्येक अधिकारी के लिए हिंदी-हिन्दुस्तानी का ज्ञान अनिवार्य था।

हिन्दी की साहित्यिक पत्रकारिता ने भी हिन्दी के स्वरूप को स्थिर करने में अहम भूमिका निभायी। 1826 में कलकत्ता से प्रकाशित हिन्दी का पहला समाचार पत्र उदन्त मार्तण्ड, (संपादक : युगल किशोर मिश्र) तथा दूसरा पत्र बंगदूत इस दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय है। हिन्दी पत्रकारिता के विकास में कलकत्ता तथा अहिन्दीभाषी बंगालियों का विशेष योगदान रहा।

संविधान सभा ने 14 सितम्बर, 1949 के दिन हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। इसका तात्पर्य यह नहीं कि इससे पूर्व प्रादेशिक भाषा के रूप में हिन्दी का कोई अस्तित्व ही नहीं था। कई देशी रियायतों : ग्वालियर, जयपुर आदि में सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में ही किया जाता था। 1925 में कांग्रेस ने यह तय किया कि कांग्रेस की महासमिति का कामकाज आमतौर पर हिन्दुस्तानी : हिन्दी एवं उर्दू में चलाया जाएगा।

विद्यालय पाठ्यक्रम में अंग्रेजी भाषा का स्थान—माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने अंग्रेजी के महत्व पर जोर दिया। भारतीय शिक्षा आयोग और कोठारी आयोग (1964-66) ने दसवीं तक त्रिभाषी सूत्र की अनुशंसा की जिसके अंतर्गत—

प्रथम भाषा—स्कूल में पहली भाषा जो पढ़ाई जाए वह मातृभाषा हो या क्षेत्रीय भाषा हो।

द्वितीय भाषा—हिन्दी भाषी राज्यों में द्वितीय भाषा कोई भी अन्य आधुनिक भाषा या अंग्रेजी हो। गैर हिन्दी भाषी राज्यों में द्वितीय भाषा हिन्दी या अंग्रेजी होगी।

तृतीय भाषा—हिन्दी भाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी या कोई भी एक आधुनिक भारतीय भाषा होगी जो द्वितीय भाषा के रूप में न पढ़ी जा रही हो।

● गैर हिन्दी भाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी होगी या एक आधुनिक भारतीय भाषा जो द्वितीय भाषा के रूप में न पढ़ी जा रही हो।

● संविधान निर्माताओं ने भाषा के मसल की महत्वपूर्ण मानते हुए गंभीर विचार विमर्श के बाद संविधान के भाग-XVII में भाषा संबंधी प्रावधानों को रखा। परिशिष्ट में इन प्रावधानों को आप विस्तार से पढ़ सकते हैं। भारत के बहुभाषिक परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने केवल एक या दो भाषाओं को प्रमुखता न देते हुए कई भाषाओं को संविधान में जगह दी।

● संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार देवनागरी लिपि में लिखा हिन्दी का संघ (भारत) की राजभाषा व अंग्रेजी को सह-राजभाषा को दर्जा दिया गया। अंग्रेजी को यह दर्जा शुरुआत में 15 वर्षों तक दिया गया था हालांकि 1963 के Official Language Act के माध्यम से अंग्रेजी को हमेशा के लिए सह-राजभाषा का दर्जा दे दिया गया।

● भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल भाषाएं अनुसूचित भाषाएं कहलाती हैं। आठवीं अनुसूची में 1950 में 14 भाषाओं को शामिल किया गया है। ये 14 भाषाएं हैं—असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु और उर्दू। इस सूची में इक्कीसवें संविधान संशोधन (1967) द्वारा सिंधी भाषा को जोड़ा गया।

● इसी तरह इकहत्तरवें संविधान संशोधन (1992) द्वारा कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली तथा 92वां संविधान संशोधन (2003) द्वारा बोड़ो, संथाली, मैथिली और डोगरी भाषाओं को भी अनुसूचित भाषाओं का दर्जा दिया गया। इस तरह वर्तमान में संविधान में कुल 22 भाषाएं अनुसूचित भाषाओं के रूप में सूचीबद्ध (Listed) हैं।

● **राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 की समीक्षा (राममूर्ति समिति), 1990** की महत्वपूर्ण संस्तुतियों में एक है—ग्रामीण छात्र उच्च शिक्षा प्राप्त करने की ओर प्रवृत्त नहीं हो पाते, इसका एक गंभीर कारण यह भी है कि आज भी अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व कायम है। इसलिए समय की मांग है कि शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा के माध्यम से रूप में क्षेत्रीय भाषाओं को प्रोत्साहित किया जाए।

● राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 ने त्रिभाषा सूत्र को प्रभावी रूप से लागू करने का सुझाव दिया है जिसमें आदिवासी भाषाओं सहित बच्चों की मातृभाषाओं को शिक्षा के माध्यम से रूप में स्वीकृति देने पर जोर है। प्रत्येक बच्चे में बहुभाषिक प्रवीणता विकसित करने के लिए भारतीय समाज के बहुभाषिक चरित्र को एक संसाधन के रूप में देखना चाहिए जिनमें अंग्रेजी में प्रवीणता भी शामिल है यह तभी मुमकिन है जब भाषा शिक्षण का पूरा शिक्षाशास्त्र मातृभाषा के उपयोग पर आधारित हो।

● **भारत का औसत मिजाज बहुभाषिकता है**—बहुभाषी होना व्यक्तिगत या सामाजिक स्तर पर भारत के लिए समस्या का विषय नहीं है बल्कि यह हमारे लिए एक संसाधन का काम करता है और हमारी सांस्कृतिक सम्पन्नता को दर्शाता है।

● भारत के बहुभाषी समाज में अंग्रेजी एक वैश्विक भाषा है। जिनको एक से अधिक भाषाएं आती हैं उनकी भाषा की प्रवीणता तो निःसन्देह बढ़िया होती ही है, समाज के प्रति उनका नजरिया भी स्पष्ट तौर उदार होता है।

● बहुभाषिकता की एक समग्र विवरण हमें 1961 की भाषाई सर्वे में भी मिलता है। इस गणना में कुल 1652 मातृभाषाएं गिनी गई हैं जिनमें 193 भाषाओं के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। हमारा देश कई मायनों में बहुभाषी है। बहुभाषिकता का एक आयाम यह है कि हमारे संविधान की आठवीं सूची में आज 22 भाषाएं दर्ज हैं।

● बहुभाषिकता का, भाषाई प्रवीणता, स्कूली उपलब्धि, संज्ञानात्मक लचीलेपन और सामाजिक सहिष्णुता के साथ बहुत नजदीकी सहसंबंध है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- एक भाषा में सबसे छोटी इकाई का अर्थ है—
 - वाक्य-विन्यास (Syntax)
 - रूपिम (Morpheme)
 - प्रगमैटिक्स (Pragmatics)
 - फोनिम्स (Phonemes)
- भाषा कौशल में सबसे कठिन है?
 - सुनना
 - बोलना
 - पढ़ना
 - लिखना
- सामान्य लोग भाषा को केवल के माध्यम के रूप में पहचानते हैं।
 - संप्रेषण
 - व्याकरण अध्ययन
 - विद्यालय में अध्ययन
 - एक शब्दकोष प्रयोग करना
- हमारे संविधान की आठवीं अनुसूची भाषाओं को भारत की मुख्य भाषाओं के रूप में नामित करता है।
 - 14
 - 16
 - 20
 - 22
- जब विषयवस्तु का वाक्य बंधारण के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है, वह कहलाता है—
 - स्वनिम (Phonetic) वर्गीकरण
 - व्याकरणिक वर्गीकरण
 - शब्दगत (Lexical) वर्गीकरण
 - अर्थ विषयक (Semantic) वर्गीकरण
- बच्चे का पहला शब्द सबसे अधिक निम्न में से किससे संबंधित होता है?
 - अमूर्त विचारों से
 - मूर्त वस्तुओं से
 - समय से
 - उपरोक्त सभी
- भारतीय समाज के बहुभाषी चरित्र को देखा जाना चाहिए :
 - शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के अवरोध के रूप में
 - विद्यालयी जीवन के संवर्धन के संसाधन के रूप में
 - छात्रों को सीखने के लिए अभिप्रेरित करने में शिक्षक की क्षमता को चुनौती के रूप में
 - शिक्षार्थी के लिए विद्यालयी जीवन को जटिल बनाने वाले कारक के रूप में
- एक बच्चा "CAT" शब्द को उसके घटक ध्वनिग्राम /C/ + /A/ + /T/ में करने में खंडित करने में सक्षम है। वह किसके गहरे स्तर का प्रदर्शन करता है?
 - ध्वनि जागरूकता
 - प्रिंट कार्य
 - विलोपन
 - इनमें से कोई नहीं
- बच्चे भाषा अधिग्रहण डिवाइस के साथ पैदा होते हैं, यह किसने कहा था?
 - स्किनर
 - प्याजे
 - वायगोत्स्की
 - इनमें से कोई नहीं
- बच्चों के भाषा अध्ययन में एक महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाता है।
 - ध्वनि संयोजन के लिए अध्ययन नियम
 - संवादमूलक पैटर्न के लिए अध्ययन नियम
 - वयस्क भाषण की नकल
 - वाक्य संरचना के लिए अध्ययन नियम
- मेटा भाषाई जागरूकता :
 - सोचने की क्षमता
 - भाषा के बारे में सोचने और बात करने की क्षमता
 - भाषा के बारे में निखने की क्षमता
 - अन्य दृश्यक चिह्नों से लिखने की योग्यता
- जब बात को वाक्य संरचना के आधार पर समूहीकृत किया जाता है, तो इसे कहा जाता है?
 - ध्वन्यात्मक समूहीकरण
 - व्याकरण ग्रुपिंग
 - लेक्सिकल ग्रुपिंग
 - सिमेंटिक ग्रुपिंग
- कोई छात्र बोलने की कला कैसे सीखता है?
 - कठिन पाठ्य सामग्रियों को पढ़कर।
 - जीवन की वास्तविकताओं पर चर्चा करके।
 - शिक्षक द्वारा उपलब्ध कराए गए पाठ्य सामग्रियों को पढ़कर।
 - बोलते समय सभी गलतियों को नजर अंदाज करके।
- शिक्षक छात्रों को कौन-सा गुण सिखाना चाहते हैं?
 - चीजों को अलग-अलग करने का गुण
 - सोचने का तरीका
 - भावनात्मक सोच विकसित करना
 - अवलोकन का गुण विकसित करना

15. बोधगम्य टेक्स्ट पढ़ने का एक अच्छा तरीका क्या है?
 (1) टेक्स्ट में प्रयोग किए गए शब्दों और संरचना पर ध्यान देना।
 (2) टेक्स्ट की पूरी जाँच करने।
 (3) भावनात्मक सोच विकसित करना।
 (4) टेक्स्ट का जाँच कर उसकी व्याख्या एवं मूल्यांकन करना।
16. व्याकरण पढ़ना महत्वपूर्ण क्यों है?
 (1) शुद्धता के लिए
 (2) प्रवाह के लिए
 (3) पढ़ने लिखने की योग्यता के लिए
 (4) संख्यात्मक कार्यों को करने हेतु
17. चित्र किस चीज को समझाने में सहायक होता है—
 (1) कलाकार के कौशल को
 (2) बोलने का कौशल
 (3) सुनने का कौशल
 (4) लिखने का कौशल
18. प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी सबसे अधिक कठिनाई महसूस करते हैं?
 (1) वर्कशीट्स के लेखन में
 (2) स्व-अध्ययन में
 (3) लम्बे उत्तर के प्रश्न में
 (4) पहली भाषा सीखने में
19. भाषाओं का समझना और उपयोग करना बच्चों को सक्षम बनाता है :
 (1) विचारों के बीच संबंध बनाने हेतु
 (2) लोगों और वस्तु संबंध बनाने में
 (3) परिवेश को अपने आसपास से संबंधित करना
 (4) इनमें से सभी
20. किस प्रकार का शिक्षण अर्थ संदर्भ पर जोर देता है न कि भाषा सीखने में रूपों और पैटर्न पर?
 (1) संप्रेषणीय भाषा शिक्षण
 (2) प्रतिस्पर्धात्मकता आधारित भाषा शिक्षण
 (3) सहयोगी अध्ययन
 (4) सहकारी भाषा शिक्षण
21. एक भाषा जो हमारे घर, स्कूल और सामाजिक परिवेश में संप्रेषण के लिए प्राथमिक रूप से प्रयुक्त होती है, वह कहलाती है।
 (1) मातृभाषा
 (2) प्रथम भाषा
 (3) घरेलू भाषा
 (4) उपर्युक्त में से कोई नहीं
22. भाषाविदों के लिए निम्नलिखित में से कौन-सा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है?
 (1) शब्द और वाक्य
 (2) ध्वनि प्रणाली और वाक्य
 (3) शब्दकोष और व्याकरण
 (4) ध्वनि प्रणाली और व्याकरण
23. एक बालक की आयु में अपनी भाषा विकसित करता है जो एक भाषा के उपर्युक्त शब्दों और व्याकरण के सही नियमों से मिलती है।
 (1) 4 वर्ष (2) 5 वर्ष
 (3) 6 वर्ष (4) 7 वर्ष
24. भारत के संविधान के अनुच्छेद के अनुसार, देवनागरी लिपि में लिखी गई हिंदी भारत की राजभाषा है।
 (1) 343 (2) 345
 (3) 351 (4) 377
25. कोई जानकारी पाने के लिए त्वरित पढ़ने को कहा जाता है—
 (1) स्कimming (Skimming)
 (2) तेज पढ़ना
 (3) स्कैनिंग (Scanning)
 (4) मूक पढ़ना

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(4)	2.	(4)	3.	(1)	4.	(4)	5.	(2)
6.	(2)	7.	(2)	8.	(1)	9.	(4)	10.	(3)
11.	(2)	12.	(2)	13.	(2)	14.	(4)	15.	(4)
16.	(1)	17.	(1)	18.	(4)	19.	(3)	20.	(1)
21.	(2)	22.	(3)	23.	(1)	24.	(1)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (4) फोनिम्स (ध्वनिचिह्न) भाषा की सबसे छोटी ईकाई होती है।
2. (4) भाषा कौशल में सुनना, बोलना, पढ़ना तथा अन्त में लिखना आता है। यह अधिगम का बढ़ता स्तर होता है जिसमें विद्यार्थी आसान क्रियाओं को सीखता है। उसके बाद कठिन क्रियाओं को।
3. (1) संप्रेषण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच मौखिक, लिखित, सांकेतिक या प्रतीकात्मक माध्यम से विचार एवं सूचनाओं के प्रेषण की प्रक्रिया है।
4. (4) भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में भारत गणराज्य की आधिकारिक 22 भाषाओं की सूची है। संविधान लागू किया गया था, इसे सूची में शामिल करने का मतलब था कि यह भाषा आधिकारिक स्तर पर प्रतिनिधित्व के लिए हकदार थी जो हिंदी को समृद्ध करने के लिए तैयार की जाएगी।

5. (2) एक पूर्ण विचार व्यक्त करने वाला शब्द समूह वाक्य कहलाता है। व्याकरण में वाक्य, पद, शब्द, वर्ण की प्रकृति, रचना व प्रयोग विधि का ज्ञान कराया जाता है।
6. (2) बच्चों का बौद्धिक विकास मूर्त से अमूर्त की ओर बढ़ता है।
7. (2) NCF-2005 के अनुसार बहुभाषिकता को विद्यालयीय संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए। भाषा कौशल बोलना, सुनना, लिखना, पढ़ना आदि को विद्यालय विषय के रूप में नहीं बल्कि बच्चों के ज्ञान के निर्माण में इनकी प्रमुख भूमिका की पहचान की आवश्यकता है।
8. (1) ध्वनि जागरूकता मौखिक भाषा के खंडों को सुनने की योग्यता है। इसमें भाषा अंशों को सुनने, विचार करने तथा प्रयोग करने की योग्यता निहित है।
9. (4) नॉम चोमस्की का सहज ज्ञानवादी सिद्धान्त बताता है कि भाषा एक अंतर्निहित मानवीय गुणवत्ता है। बच्चे भाषा अर्जन की डिवाइस के साथ जन्म लेते हैं जो उन्हें आवश्यक शब्द भंडार सीखने के बाद भाषा उत्पन्न करने की अनुमति देती है।
10. (3) चोमस्की इस ओर इशारा करते हैं कि बालक केवल अनुकरण से संभवतः भाषा को नहीं सीख सकते क्योंकि उनके आस-पास बोली जाने वाली भाषाएँ अनियमित होती हैं।
11. (2) मेटा-भाषाई जागरूकता अपनी सामग्री से अलग रूप में भाषा के बारे में सोचने एवं बोलने की क्षमता है।
12. (2) एक पूर्ण विचार व्यक्त करने वाला शब्द समूह वाक्य कहलाता है। व्याकरण में वाक्य, पद, शब्द, वर्ण की प्रकृति, रचना व प्रयोग विधि का ज्ञान कराया जाता है।
13. (2) कोई छात्र बोलने की कला तब सीखता है, जब वह जीवन की वास्तविकताओं पर चर्चा करता है। इसके माध्यम से छात्र जीवन की वास्तविकताओं को बोलने के माध्यम से अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।
14. (4) अवलोकन के माध्यम से विद्यार्थी के तर्क क्षमता का विकास होता है। अवलोकन के माध्यम से वैज्ञानिक दृष्टिकोण से वातावरण को समझने और सीखने की इच्छा भी जागृत होती है।
15. (4) कॉम्प्रिहेंशन पढ़ने का एक अच्छा तरीका है टेक्स्ट की जाँच कर उसकी व्याख्या अपनी भाषा में अनुवाद करके उसका मूल्यांकन करना।
16. (1) व्याकरण के माध्यम से शब्दों की शुद्धता तथा शब्दों को सही तरीके से सही क्रम से लिखा जाता है, जिसके कारण शुद्धता बनी रहती है।
17. (1) चित्र के माध्यम से कलाकार की अभिव्यक्ति प्रस्तुत होती है, कि कलाकार किस विषय को किस तरह प्रस्तुत कर रहा है। किसी विषय को समझाने के लिए किस तरह के चित्र बना रहा है।
18. (4) ऐसे शिक्षार्थी जिनके माँ-बाप तथा अन्य पूर्वज अशिक्षित एवं अनपढ़ रहे हों और उन्हें अपनी नयी पीढ़ी के सदस्य के रूप में पहली बार शिक्षा का अवसर प्राप्त हो रहा है, वैसे बालक प्रथम पीढ़ी के अधिगमकर्ता बालक हैं। ये अपने विचारों को व्यक्त नहीं कर पाते हैं तथा इनमें आत्मविश्वास की कमी पाई जाती है।
19. (3) भाषा संचार का एक माध्यम होता है जिसके कारण ही हम एक-दूसरे के विचारों को समझ सकते हैं। यह परिवेश के आस-पास के माहौल से अवगत कराता है तथा उससे संबंध जोड़ने में मदद भी करता है।
20. (1) संप्रेषणात्मक भाषा शिक्षण (सीएलटी) (Communicative Language Teaching), या संवादात्मक दृष्टिकोण, भाषा शिक्षण के लिए एक दृष्टिकोण है जो बातचीत के साधनों और अंतिम लक्ष्य पर जोर देता है।
21. (2) प्रथम भाषा वह मूल भाषा है जो बच्चों द्वारा सीखी जाती और एक पीढ़ी से अगले पीढ़ी तक जाती है।
22. (3) भाषाविद् भाषा को आमतौर पर व्याकरण और शब्दकोश को संसाधन के रूप में देखते हैं।
23. (1) बच्चे भाषा सीखने के लिए अनंत क्षमता के साथ पैदा होते हैं और जब तक वे 3-4 वर्ष के होते हैं, वे भाषा का प्रभावी ढंग से उपयोग करना शुरू करते हैं। बहुत ही कम समय में वे नए वाक्यों को समझने और उत्पन्न करने लगते हैं जिससे हमें सबूत मिलते हैं कि भाषा की संरचना को उनके अन्तःकरण में बनी है।
24. (1) संविधान का अनुच्छेद 343 (1) घोषित करता है कि संघ की आधिकारिक भाषा देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी होगी।
25. (3) स्कैनिंग वाचन संबंधी एक तकनीक है जिसमें वाचक विस्तृत जानकारी के स्थान पर किसी विशेष जानकारी को प्राप्त करने के लिए शीघ्रता से पढ़ता है।

□□□

अधिगम : प्रक्रिया और सिद्धान्त

(Learning : Process & Theory)

अनुभव के रूप में मिलने वाले प्रशिक्षण से ही कोई जानवर या व्यक्ति किसी निश्चित स्थिति (स्थान, समय) में किसी निश्चित तरीके से व्यवहार करता है।

मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम की परिभाषाएँ दी हैं। कई परिभाषाओं में निम्न विचार सम्मिलित हैं-

- (क) अधिगम मस्तिष्क की स्थिति में वह परिवर्तन है जो विद्यार्थी के अंदर चल रहा है।
- (ख) अधिगम को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा जा सकता, यह विद्यार्थी के व्यवहार का अवलोकन करने पर ही दिखता है।
- (ग) अधिगम में व्यवहार का परिवर्तन सम्मिलित होता है।
- (घ) अधिगम अपेक्षाकृत स्थायी होता है।
- (ङ) अधिगम अनुभव के परिणामस्वरूप होता है।
- (च) अधिगम का स्थिति से दूसरी स्थिति पर अनुप्रयोग किया जाता है। इसके कारण विद्यार्थी नई स्थितियों को अनुकूल हो जाते हैं।
- (छ) अधिगम दूसरों के देखने और सुनने या विचारों व अवधारणाओं को पढ़ने-समझने से आ जाता है।

अधिगम की एक सर्वमान्य परिभाषा है जो मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि : यह व्यवहार में स्थायी परिवर्तन है।

डॉ. बी.एस. ब्लूम (1956) के अनुसार व्यवहारगत परिवर्तन तीन पक्षों में विभाजित है तथा इसी आधार पर इन्होंने सीखने के प्राप्य उद्देश्यों को तीन श्रेणियों में बाँटा-

1. संज्ञानात्मक उद्देश्य
2. मनोप्रेरणा/मनोशारीरिक उद्देश्य
3. भावात्मक/भावनात्मक उद्देश्य

इवान पावलोव का प्राचीन अनुबंधन विचारधारा

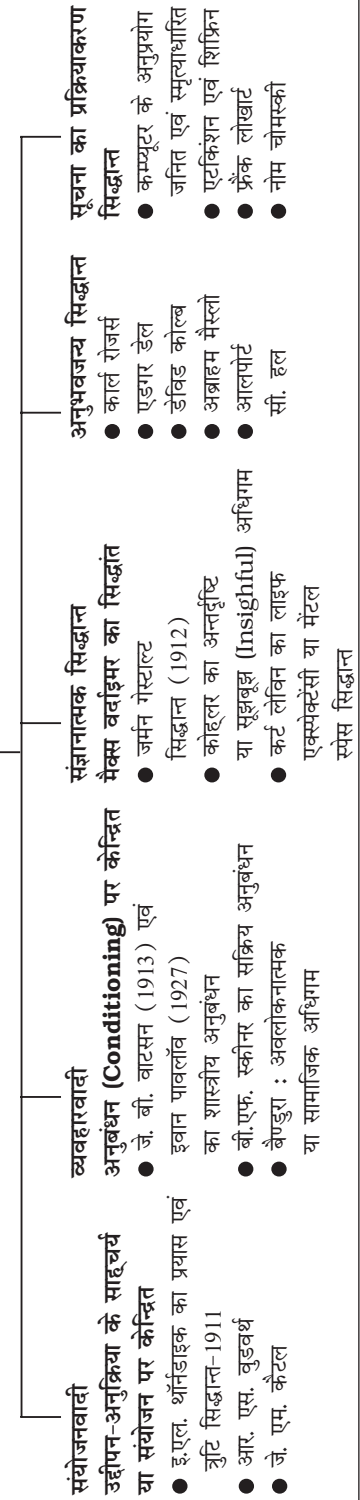
अधिगम का अध्ययन सर्वप्रथम ईवान. पी. पावलोव द्वारा किया गया था। उनका मुख्य उद्देश्य शरीर की पाचन प्रक्रियाओं का अध्ययन करना था। उनके अनुसार-

● अधिगम या सीखने के सिद्धांत हमें यह बताते हैं कि हम कैसे सीखते हैं। इनमें से अधिकांश को मुख्य रूप से उद्दीपक-अनुक्रियात्मक संयोजनवादी सिद्धांत तथा गैस्टाल्ट या संज्ञानात्मक सिद्धांतों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। शेष की गिनती सूचना प्रक्रियात्मक सिद्धांत, अनुभवजन्य तथा मानवतावादी अधिगम सिद्धांतों में की जा सकती है।

थोर्नडाइक की विचारधारा

थोर्नडाइक (1913) द्वारा प्रतिपादित अधिगम सिद्धांत जिसे प्रयत्न एवं त्रुटि सिद्धांत अथवा संयोजनवाद के नाम से जाना जाता है हमें यह बताता है कि सीखने के दौरान हम जो प्रयास करते हैं उनमें त्रुटि होनी नितान्त स्वाभाविक है। परन्तु प्रयास करते करते यह त्रुटियाँ कम होती जाती हैं। गलत अनुक्रियाओं के स्थान पर हम सही अनुक्रियाओं को व्यक्त करने लगते हैं तथा अन्त में इस प्रकार हम किसी भी बात को सही ढंग से कहना और करना सीख जाते हैं। थोर्नडाइक ने अपने इस अधिगम सिद्धांत के माध्यम से अधिगम से तीन महत्वपूर्ण नियमों को भी प्रतिपादित किया जिन्हें तत्परता का नियम (सीखने वाला तभी सीखता है जब वह इसके लिए तत्पर हो), अभ्यास का नियम

अधिगम के सिद्धांतों का वर्गीकरण



(सीखने में अभ्यास का बहुत अधिक हाथ रहता है) तथा प्रभाव का नियम (अधिगम के भाग्य का निर्णय उसके परिणामों पर टिका होता है) के नाम से जाना जाता है।

थोर्नडाइक के उपरोक्त तीन नियमों—तत्परता, प्रभाव तथा अभ्यास के नियम—का अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। कुछ जानी-मानी सूक्तियाँ और कहावतें इन्हीं नियमों की सत्यता को प्रकट करती हैं—

- (क) एक घोड़े को पानी के पास ले जाया जा सकता है परन्तु पीने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। (You can lead a horse to water but you cannot make him drink)
- (ख) सफलता से बढ़कर कोई पुरस्कार नहीं। (Nothing succeeds like success)
- (ग) करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान (Practice makes a man perfect)

सहचारी स्थान-परिवर्तन का नियम (Law of Associative shifting)—यह नियम सीखने वाले की अनुक्रिया के स्थान परिवर्तन से संबंधित है। इस नियम के अन्तर्गत थोर्नडाइक ने यह घोषणा की कि कोई भी संभव अनुक्रिया (Response) किसी भी उद्दीपन (Stimulus) से प्रतिबद्ध या अनुबन्धित की जा सकती हैं अपने विचारों को स्पष्ट करने के लिए थोर्नडाइक ने एक प्रयोग प्रस्तुत किया।

इस प्रयोग में एक भूखी बिल्ली को खाना देने के साथ 'खड़े हो जाओ' कहने से ही बिल्ली खड़ी हो जाती है। इस तरह जो अनुक्रिया प्रारंभ में खाने और आदेश दोनों के लिए थी वह केवल आदेश के प्रति होने लगी। थोर्नडाइक के सहचारी स्थानपरिवर्तन के इस नियम ने ही आगे जा कर अनुबन्धन सिद्धांत (Theory of Conditioning) को जन्म दिया।

सक्रिय और शास्त्रीय अनुबन्धन में अंतर	
सक्रिय (Operant) अनुबन्धन	शास्त्रीय (Classical) अनुबन्धन
● स्कीनर के अनुगामी कहते हैं कि उन पशुओं को देखो जो किसी निश्चित स्थिति में दी गई प्रतिक्रियाओं को सक्रियता से दोहराते हैं। उद्दीपन-उद्दीपन (S—S) पर आधारित पैटर्न। (दोहराव से कोई पशु किसी स्थिति से जुड़ाव महसूस करेगा)	● पावलोव के अनुगामी, ऐसी निश्चित स्थिति में दी गयी प्रतिक्रिया पशुओं की भागीदारी को प्राथमिक रूप से देखते हैं।
पुनर्बलन की अवधारणा	
● पुनर्बलन को समझने का एक तरीका प्रोत्साहन के रूप में समझने का है उदाहरण के लिए कोई चूहा भूख की वजह से कोई आवाज करता है और खाने के लिए फिर से आवाज करता है। तब हम पाते हैं कि भोजन पशु को संतुष्ट कर रहा है और इसीलिए बार-बार वह वैसा व्यवहार कर रहा है।	● प्रतिक्रिया पर आधारित उद्दीपन का पैटर्न व्यवहार (प्रतिक्रिया और उसके प्रभाव (उद्दीपन) के संबंध या संपर्क (S—S) से क्या सीखा। - यहां पुनर्बलन पर कोई स्पष्ट अवधारणा नहीं है।

उद्दीपन-प्रतिक्रिया (अनुक्रिया) संबंध (Stimulus-Response Relationship)

अधिगम के अधिकतर नियम मनोवैज्ञानिकों द्वारा उद्दीपन और प्रतिक्रियाओं के संबंधों पर आधारित हैं। उद्दीपन पर्यावरण में मानव और जानवर की प्रतिक्रिया को दर्शाने से संबंधित है। प्रतिक्रिया मानव या जानवर की क्रिया है जो उद्दीपन के कारण होती है। उद्दीपन प्रतिक्रिया को दर्शाने से संबंधित है। प्रतिक्रिया मानव या जानवर की क्रिया है जो उद्दीपन के कारण होती है। उद्दीपन प्रतिक्रिया संबंध आमतौर पर दोनों में से एक तरीके का अनुसरण करते हैं।

(1) उद्दीपन के बाद प्रतिक्रिया होती है। उदाहरण हेतु भूख लगने की स्थिति में बच्चा रोता है। कक्षा की घंटी बजने से आपके पढ़ने की प्रतिक्रिया का कारण है।

(2) मनोवैज्ञानिक ऐसा कहते हैं कि इस स्थिति में उद्दीपन से प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। यह प्रक्रिया अकसर S-R के रूप में व्यक्त की जाती है। कभी-कभी प्रतिक्रिया उद्दीपन से पहले उत्पन्न हो जाती है।

उदाहरण के लिए वह बच्चा जिसे भूख लग रही है। लार टपकाते हुए कुत्तों पर पावलोव द्वारा परीक्षण-अधिगम का लोकप्रिय अध्ययन उद्दीपन-अनुक्रिया के संयोजन पर आधारित (Based on the Stimuli Association) है जिसे स्पष्टतः मनोवैज्ञानिक ने नहीं बल्कि रूस के जीव विज्ञानी पावलोव ने स्थापित किया है। उसने 1900 से पहले पशु व्यवहार पर परीक्षण करना आरंभ कर दिया था। अधिगम के प्रति यह अनुभव अधिक असाधारण था जब हम इस पर विचार करते हैं कि वह इस पर अध्ययन कर रहा है कि कुत्ते किस तरह अपने भोजन को पचाते हैं।

पावलोव के परीक्षण प्रतिमान बन गए जिन्हें पारंपरिक अनुबन्धन (Classical Conditioning) कहा जाता है। (पारंपरिक इसीलिए क्योंकि इन परीक्षणों के बाद के अनुसंधानों पर परीक्षण किए। पारंपरिक अनुबन्धन में विभिन्न प्रकार के उद्दीपन-स्वाभाविक और अनुबन्धित सम्मिलित है।

स्वाभाविक उद्दीपन (भोजन) (Unconditional Stimulus : UCS e.g. Food)	स्वाभाविक प्रतिक्रिया (लार बनना/टपकना) (Unconditional Response: UCR e.g. Slivation)
अनुबन्धित उद्दीपन (घंटी) (Conditioned Stimulus e.g. Bell)	स्वाभाविक प्रतिक्रिया (लार बनना/टपकना) (Unconditional Response: UCR e.g. Slivation)
स्वाभाविक उद्दीपन (Unconditional Stimulus : UCS)	
अनुबन्धित उद्दीपन (घंटी) (Conditioned Stimulus : e.g. Bell)	अनुबन्धित प्रतिक्रिया (लार बनना/टपकना) (Conditioned Response: CR)

समरूप या युग्म उद्दीपनों से प्राप्त अनुभव (Experience with Paired Stimuli)

- अनुबन्धन के प्रति पावलोव (Ivan Pavlov) की वैज्ञानिक दृष्टि उद्दीपन के साथ मिल कर अपने दैनिक जीवन के बारे में व्याख्या करते हैं।
- उदाहरण हेतु जब आप फिल्म देखने जाते हैं और अचानक में प्रकाश कम होने लगता है तब आप अपने मित्रों से बातचीत करना बंद कर देते हैं और फिल्म शुरू होने की प्रतीक्षा करने लगते हैं।
- वाहन चलाते समय, जब आप साइरन सुनते हैं, तब आप सड़क के किनारे हो जाते हैं क्योंकि आप जानते हैं कि वह स्थिति आपातकालीन है, पीछे से वाहन आ रहा है।
- जो व्यक्ति कभी फिल्म देखने नहीं गया या उसने सायरन नहीं सुना, वह ऐसी प्रतिक्रिया नहीं देगा।
- हम सभी दैनिक जीवन के बहुत से संकेतों को समझते हैं। कुछ नैसर्गिक हैं और कुछ मानव-निर्मित हैं। परंतु इनमें दो बातें उभयनिष्ठ (Common) हैं-

(1) संकेत (उद्दीपन) और संकेत का अनुगामी (प्रतिक्रिया) ने स्थान पर समय का साथ में अनुभव किया है, जिसमें हम संबंध स्थापित कर सकते हैं।

(2) ये अक्सर अनुकूल और विश्वसनीय (Consistents and Reliable) पैटर्न को साकार करते हैं। ये अध्ययन हमें दिन से रात तक दृश्य और ध्वनियों का अनुभव करने व सीखने में सहायक हैं।

पावलोव का कार्य अन्य मनोवैज्ञानिकों को अपने परीक्षण करने में प्रोत्साहित किया है। ये परीक्षण अनुबन्धित अधिगम के बारे में अनेक खोजों को करने में मदद किया। ऐसी निम्नलिखित प्रमुख संकल्पनाएं खोजी गई हैं :

I. साधारणीकरण (Generalization)

मनोवैज्ञानिकों ने माना है कि जब एक या अधिक उद्दीपन समान होते हैं तो जानवर सभी स्थितियों में एक जैसा व्यवहार करते हैं, जिसे साधारणीकरण माना जाता है। उदाहरण हेतु

(क) यदि पावलाव का कुत्ता किसी विशेष घंटी की आवाज को पहचानता है, तो वह उसी के जैसी घंटी की आवाज को पहचान कर भी समान प्रतिक्रिया देगा।

(ख) जो बच्चा गणित पढ़ने से डरता है, तो अन्य विकल्प होने पर वह गणित पढ़ने से बचने की कोशिश करेगा।

(ग) यदि कोई बच्चा जो अपने दाढ़ी वाले शिक्षक से भयभीत है, वह अन्य दाढ़ीदार व्यक्तियों से भी डरेगा।

- यह उपयोगी है क्योंकि इससे हम उस व्यवहार का पालन करने की कोशिश करते हैं जैसा हमने एक जैसी अन्य स्थितियों में जो सीखा और व्यवहार किया।

- उदाहरण के लिए किसी साइरेन के बजने से हमें किसी आपात स्थिति का पता चलता है, हमें किसी एक साइरेन की आवाज को दूसरे से अलग करने में थोड़ी मुश्किल का सामना करना होगा। हम साधारणीकरण के नियम को एक व्यक्ति से किसी समूह तक प्रयोग कर सकते हैं, यदि कोई ऐसा व्यक्ति हमें नापसंद है जिसके बालों का रंग लाल है तो ऐसा भी हो सकता है कि हम उन सभी लोगों को नापसंद करने लगे जिनके बालों का रंग लाल है।

- इसे समुदाय आधारित निर्देशन को **अधिगम हस्तांतरण (Transfer of Learning)** के नाम से भी जाना जाता है। उदाहरण के लिए राम जमा और घटा करना जानता है लेकिन जब वह स्थानीय किराने की दुकान पर जाता है तो इस कौशल का साधारणीकरण नहीं कर पाता।

- 'स्थानान्तरण में एक उपस्थिति में अर्जित ज्ञान, प्रशिक्षण और आदतों का किसी दूसरी परिस्थिति में स्थानान्तरित किये जाने का उल्लेख होता है।

(Transfer refers to the transfer of knowledge, training and habits acquired in one situation to another situation, 1948)

- इस प्रकार अधिगम या प्रशिक्षण स्थानान्तरण को एक ऐसी प्रक्रिया माना जा सकता है जिसके अन्तर्गत किसी एक परिस्थिति में सीखे हुए ज्ञान अथवा कौशल को अन्य समान परिस्थितियों में अथवा जीवन के अन्य क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के ज्ञान अथवा कौशल के उपार्जन को प्रभावित करता हुआ देखा जा सकता है।

अधिगम के स्थानान्तरण के प्रकार

(Types of Learning's Transfer)

इस दृष्टि से अगर ध्यान से सोचा जाये तो सीखने अथवा प्रशिक्षण स्थानान्तरण के प्रायः तीन रूप देखने को मिलते हैं –

1. सकारात्मक स्थानान्तरण (Positive transfer)
2. नकारात्मक स्थानान्तरण (Negative transfer)
3. शून्य स्थानान्तरण (Zero transfer)

1. जब एक परिस्थिति में प्राप्त किया हुआ ज्ञान अथवा कौशल दूसरी परिस्थिति में ज्ञान अथवा कौशल अर्जित करने के कार्य में सहायक सिद्ध होता है तब स्थानान्तरण को सकारात्मक कहा जाता है और अगर वह सहायक न होकर बाधक सिद्ध हो तब स्थानान्तरण को नकारात्मक कहा जाता है। संस्कृत भाषा पर अधिकार करने के पश्चात् हिन्दी भाषा सीखने में आसानी होती है। साईकल चलाना सीखने से स्कूटर या मोटर साईकल चलाना सीखने में सहायता मिलती है। सितार सीखने के पश्चात् वायलिन तथा सरोद सीखना सुविधाजनक हो जाता है। यह सब सकारात्मक स्थानान्तरण के उदाहरण हैं।

2. दूसरी ओर संस्कृत भाषा सीखने पर उर्दू या फारसी सीखने में कठिनाई होती है। एक विशेष प्रकार के की-बोर्ड (Key-Board) पर टाइप सीखने के पश्चात् किसी दूसरे प्रकार के की-बोर्ड पर टाइप करना बहुत असुविधाजनक होता है। इन उदाहरणों में नकारात्मक स्थानान्तरण देखने को मिलता है।

3. एक तीसरी परिस्थिति भी हो सकती है जिसमें पहले सीख हुआ कार्य नये कार्य को करने या सीखने में न तो सहायता पहुंचाता है और न बाधक ही होता है। दूसरे शब्दों में उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसी परिस्थिति में कोई स्थानान्तरण नहीं होता और हम इसे शून्य स्थानान्तरण की संज्ञा देते हैं।

- उदाहरण हेतु विशिष्ट शिक्षक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे इस तरह निर्देशों को तैयार करेंगे कि वे साधारणीकरण कर सकें।
- मुद्रा (Money) का पाठ पढ़ाने के लिए वास्तविक मुद्रा (Original Currency) का प्रयोग करें। यदि कक्षा में आपके पास शिक्षक और सामग्री या दोनों हों तो यह सुनिश्चित कर लें कि पूरा दिन बच्चों को इनके प्रयोग से एक विषय को पढ़ाया जाए।
- यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि साधारणीकरण हमेशा लाभदायक नहीं होता। वह कभी-कभी लोगों और स्थितियों के प्रति गलत धारणाएँ भी पैदा कर देता है।

II. विभेदन (Descrimination)

हर स्थिति में हम साधारणीकरण नहीं कर सकते। उदाहरण हेतु-हम आपातकालीन साइरन को स्कूल की घंटी या खाने के लिए मिलने वाली समान ध्वनियों में अंतर करना सीख जाते हैं और दो विभिन्न चीजों में अंतर कर सकते हैं।

अंतर करना लोगों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यदि हमें सभी स्थितियों में बिना अर्थ जाने एक जैसे तरीके से प्रतिक्रिया देते हैं तो हमारा अधिकतर समय और ऊर्जा बेकार जाएगा। हम परिवर्तित स्थिति में प्रतिक्रिया में बदलाव नहीं कर पाएँगे। लोगों का व्यवहार स्थितियों के अनुसार बदल जाता है। हम नई स्थिति में उस तरह व्यवहार नहीं करते जैसे किसी और जगह पहले किया था। अंतर करने का यह अन्य उदाहरण हमारी लचीलेपन को दर्शाता है।

स्वाभाविक या स्वतः स्फूर्त रीकवरी या प्रतिलाभ (Spontaneous Recovery)—क्या प्रतिक्रिया लुप्त होने का मतलब यह है कि यह प्रतिक्रिया सदा के लिए समाप्त हो गई। नहीं। प्रतिक्रिया को दबाया या छिपाया जा सकता है परंतु इसे पूरी तरह समाप्त (Extinct) नहीं किया जा सकता। पावलाँव ने पहले भोजन के साथ घंटी बजाने व बाद में भोजन के बिना घंटी बजाई तब भी लार उतनी ही मात्रा एवं स्थिति में बना एवं टपका अतः लोगों में स्वयं की रक्षा करने की प्रवृत्ति सामने आई। एक गैर प्रतिक्रिया अवधि के बाद (After a Non-Responding Period) प्रतिक्रिया को स्वाभाविक पुनः प्राप्ति कहा जाता है।

ऐसा अकसर देखा गया है कि जिन लोगों को कभी बुरे या भयानक अनुभव मिलते हैं, कई सालों के बाद भी वह डर उनमें रहता है। जब वे किसी नई खतरनाक स्थिति में आते हैं तो उनकी पुरानी प्रतिक्रिया वापस आ जाती है, यद्यपि नई स्थिति इतनी भयावह न हो।

III. विलोपन (Extinction)

साधारणीकरण और विभेदन करने की प्रक्रियाएँ पारम्परिक अनुबंधन की एकमात्र विविधताएँ नहीं हैं।

उदाहरणस्वरूप-तब क्या होगा जब कुत्ते घंटी सुन कर मुँह से लार टपकाते हैं और तब मनोवैज्ञानिक निष्कर्ष निकालते हैं कि घंटी की आवाज सुनने के बाद जानवरों को नहीं खिलाना चाहिए? पावलाँव ने ऐसा प्रयास किया। लार टपकना कम हो गया और कुत्तों ने घंटी की आवाज सुनकर प्रतिक्रिया देना भी बंद कर दिया।

लोगों के लिए यह प्रक्रिया कुछ कारकों जैसे स्मृति, इच्छा, कल्पना आदि के कारण थोड़ी जटिल थी। फिर भी 'दृष्टि से बाहर या बुद्धि से बाहर' का सिद्धांत आमतौर पर हमारे लिए प्रचलित है। मनोवैज्ञानिक इसे प्रक्रिया के लोप का कमजोर होना (Weaking or Fading Process of extinction) कहते हैं।

जे.बी. वॉटसन की व्यवहारवादी विचारधारा

वॉटसन के अनुसार मानव व्यवहार पर वातावरण का प्रभाव एक महत्वपूर्ण विचार है। 1920 तक अधिकतर मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि अंतः प्रेरणा ही मानव व्यवहार निर्धारित करता है। वे सोचते थे कि लोगों का जीवन जन्म से ही निर्धारित हो जाता है।

मानते हैं कि हम सभी अपने वातावरण के अनुसार ढल जाते हैं। उन्होंने एक बार लिखा था कि "मुझे कुछ स्वस्थ बच्चे दो और किसी भी एक बच्चे को प्रशिक्षण दूँगा और उसे किसी भी क्षेत्र में विशेषज्ञ बनाया जा सकता है। उनकी प्रतिभा, रुचि, पूर्वजों के व्यवसाय

और जाति को ध्यान में रखे बिना मैं डॉक्टर, वकील, व्यापारी, रसोईया या तक कि भिखारी भी चुन सकता हूँ।”

“मनोविज्ञान एक विज्ञान है जिसका उद्देश्य सभी प्रकार से किसी प्राणी के व्यवहार का नियंत्रण करने और उसे अच्छी तरह समझने में सहायता प्रदान करना है।

(Psychology is a science which aims to give us better understanding and control of the behaviour of the organism as a whole — McDougall, 1949)

इन्हीं दिनों एक अमेरिकन प्रोफेसर वाल्टर बोअर्स पिल्सबरी (Walter Bowers Pilsbury) ने अपनी सन् 1911 में प्रकाशित एक पुस्तक ‘मनोविज्ञान के मूल तत्व (Essentials of Psychology)’ में मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान बताते हुए इसे निम्न शब्दों में परिभाषित करने का प्रयत्न किया :

‘मनोविज्ञान को अत्यधिक संतोषजनक रूप में मानव व्यवहार के विज्ञान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।’

(Psychology may be most satisfactorily defined as the science of human behaviour)

इसके पश्चात् सन् 1913 में व्यवहारवादी विचारधारा के जनक जे.बी. वाटसन (Walter Bowers Pilsbury) ने व्यवहारजन्य परिभाषाओं की कड़ी में एक नया अध्याय जोड़ते हुए, ‘व्यवहार’ शब्द को अधिक विस्तृत बनाने का प्रस्ताव सामने रखा और परिणामस्वरूप मनोविज्ञान विषय के अध्ययन में मानव मात्र के व्यवहार का अध्ययन ही शामिल न होकर संपूर्ण प्राणियों के व्यवहार के अध्ययन को शामिल किया जाने लगा।

वाटसन के द्वारा ‘व्यवहार’ शब्द को एक नया अर्थ देने के साथ ही अन्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा मनोविज्ञान की व्यवहारपरक परिभाषाएं प्रस्तुत करने का एक तरह से रास्ता सा ही खुल गया और परिणामस्वरूप समकालीन तथा आने वाले मनोवैज्ञानिकों में मनोविज्ञान को व्यवहार के विज्ञान के रूप में परिभाषित करने की होड़ सी लग गई।

अपने 11 माह के पुत्र अलबर्ट पर किए गए लोकप्रिय परीक्षण से निष्कर्षित हुआ कि किसी पशुओं के प्रति किसी बच्चे के डर को कम किया जा सकता है। माहौल या वातावरण महत्वपूर्ण हैं वातावरण जनित व्यवहार कारणजनित प्रभाव है।

सक्रिय अनुबंधन का नियम

सकारात्मक और नकारात्मक पुनर्बलन : उद्दीपन का पुनर्बलन जो किसी को सुख देता है उसे सकारात्मक पुनर्बलन कहा जाता है (भागीदार) उदाहरण हेतु-अच्छे अंक लाने पर लोग बच्चों की प्रशंसा करते हैं ताकि वे अगली बार भी अच्छे अंक लाने की कोशिश करें।

दर्दनाक या बुरे उद्दीपन को रोकने से नकारात्मक सदृढीकरण होता है। उदाहरण के लिए, आईस्क्रीम खाने पर संक्रमण होने से लोग आईस्क्रीम खाना छोड़ देंगे क्योंकि इससे उनमें डर और दुख आएगा।

हॉवर्ड मनोवैज्ञानिक बी एफ स्कीनर अधिगम के अपने सक्रिय अनुबंधन (Operant Conditioning) सिद्धांत से लोकप्रिय हैं।

सक्रिय अनुबंधन किस तरह कार्य करता है?

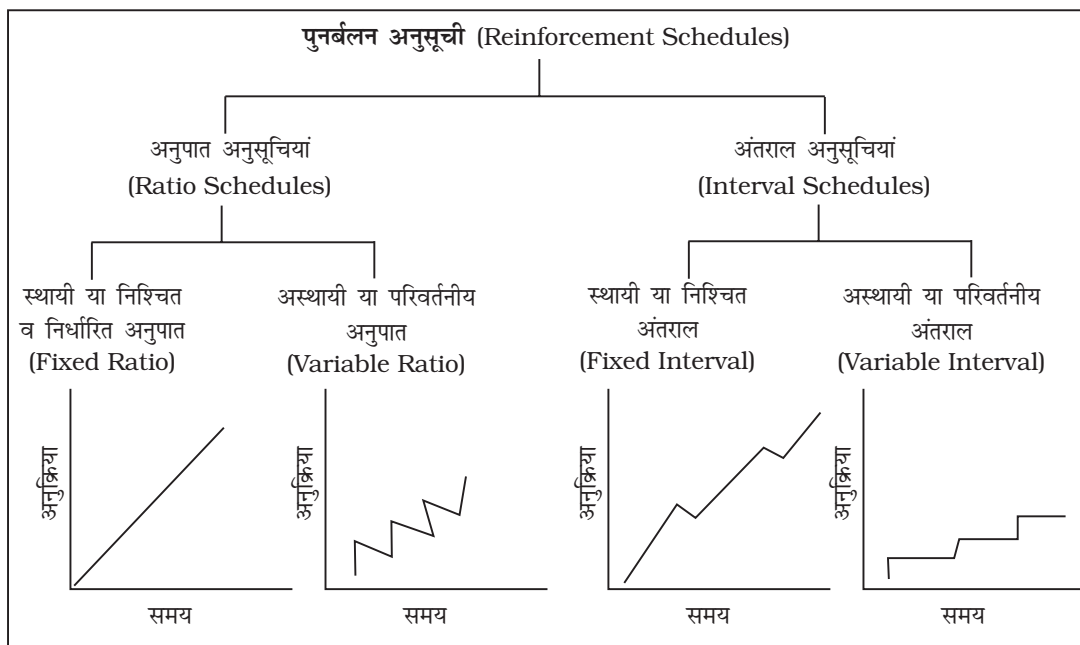
- पहला, स्कीनर ने कबूतरों पर कई परीक्षण-परिस्थितियों में अवलोकन किया कि वे किस तरह व्यवहार करते हैं।
- दूसरा, पहले की तरह महत्वपूर्ण, स्कीनर ने **कबूतरों** से बहुत कुछ सीखा। जब वे दाहिनी ओर एक चक्कर लगाकर बॉक्स के एक निश्चित स्थान पर चोंच मारते हैं तब भोजन आता है।
- स्कीनर ने अपने परीक्षणों को आगे ले जाने का निर्णय किया कि भोजन केवल तब आएगा जब बॉक्स में हरी बत्ती चलेगी। क्या कबूतर इस हरी बत्ती को भोजन से जोड़ कर देखेंगे जैसे कि वे पहले कर चुके हैं। अन्य शब्दों में क्या वे भेद कर पाएँगे।
- स्कीनर ने भोजन तभी दिया जब कबूतरों ने हरी बत्ती के समय चोंच मारी। अब पक्षी केवल तभी चोंच मारने लगे जब हरी बत्ती जलती। इस मामले में स्कीनर ने कबूतरों को सिखाया कि कब प्रतिक्रिया देनी है। हरी बत्ती विवेकशील उद्दीपन है जिसमें चोंच मारने पर (प्रतिक्रिया) कार्य का पुनर्बलन (भोजन) होता है। यहां Re-Reinforcement : री-पुनर्बलन-ये सक्रिय व्यवहार (Operant Behaviour) एवं पुनर्बलन (Reinforcement) उत्पन्न करने में माध्यम/यंत्र/उपकरण (Instrument) का कार्य करता है, इसीलिए ऑपरेट कंडीशनिंग को **इन्ट्रमेंटल कंडीशनिंग** भी कहते हैं।

प्राथमिक और द्वितीयक पुनर्बलक (Primary and Secondary Reinforcers)

कबूतरों के लिए भोजन के गोले स्वयं में संतोषजनक हैं क्योंकि इसका उनमें प्राथमिक मूल्य है। अतः भोजन की उपलब्धता प्राथमिक पुनर्बलक बन गया है।

भोजन प्राप्त करने के लिए कबूतरों को हरी बत्ती देखकर चोंच मारनी थी। ऐसा तब हो सकता है जब वे वस्तुओं और भोजन में संबंध जोड़ कर देख पाएँ। ये अंत तक पहुंचने का साधन बन पाएँ। ऐसी स्थिति को द्वितीयक पुनर्बलक कहते हैं।

भोजन, यौन संबंध, दर्द से बचना, अपनेपन का भाव प्राथमिक पुनर्बलक हैं। प्राथमिक इसलिए क्योंकि हम इन्हें पसंद करना या नापसंद करना नहीं सीखते। मान लीजिए आप नीली जींस पहनते हैं, इसलिए नहीं कि यह आपको गर्म रखती है बल्कि ये आपकी कक्षा के साथियों में लोकप्रिय है। यदि ये कटी-फटी व फीकी हों तो आपको कक्षा के सदस्य होने का अहसास कराएँगी। द्वितीय पुनर्बलक का मूल्य स्वयं में कम होता है। वे तभी महत्व रखते हैं जब वे उस चीज से जुड़ते हैं जो महत्वपूर्ण होती है। अधिकतर लोगों में धन एक द्वितीयक पुनर्बलक है क्योंकि ये विभिन्न प्राथमिक पुनर्बलक को प्राप्त करने के काम आता है।



अनुबन्धित अधिगम के नियम (Law of Conditioned Learning)

सबसे रोचक तथ्य यह है कि चाहे वे पावलोव, वॉटसन या स्कीनर के अनुगामी हों वे सभी अनुबन्धित अधिगम के नियमों पर स्वीकृति दिखाते हैं-

(क) अनुबन्धन मूल रूप से एक दूसरे से संपर्क का नियम है, चाहे वे घंटी और भोजन (पावलोव की स्थिति) हो डराने वाला शोर और रोमदार वस्तुएँ (वाटसन स्थिति) समय के अनुसार हम एक समय पर होने वाली उस स्थिति से जोड़ना या सम्बद्ध होना सीख जाते हैं।

(ख) दोहराव (Repetition) अनुबन्धन का भाग है। यह सत्य है कि किसी बात को जानने के बाद जैसे गर्म तवे से हाथ जल सकता है, आप उसे हाथ नहीं लगाएंगे। हालांकि ये भी हो सकता है कि यदि ऐसी स्थिति बार-बार आए तो आपका संपर्क इस बात से लंबे समय तक बना रहे।

(ग) अनुबन्धित अधिगम के बारे में एक कहावत के अनुसार तीसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि 'आपको यदि मधुमक्खियाँ पकड़नी हैं तो शहद चाहिए न कि सिरका' यानी मीठी बोली से आप किसी को भी अपना बना सकते हो। अतः प्राणी वही करना पसंद करते हैं जो उन्हें अच्छा लगता है और बुरा करने से बचते हैं।

सक्रिय अनुबन्धन के परिवर्तन व प्रकार : पुनर्बलन अनुसूचियाँ (Reinforcement Schedules)

स्कीनर ने पाया कि एक बार प्रतिक्रिया सीख लेने के बाद इसे फिर से सद्दृष्टि किए बिना किसी भी समय दोबारा व्यवहार में लाया जा सकता है।

मूलरूप से पुनर्बलन के दो प्रकार हैं- (1) अनुपात अनुसूची (2) अंतराल अनुसूची

(1) अनुपात अनुसूची

(क) **स्थायी अनुपात अनुसूची**-दिए गए स्वीकृत प्रतिक्रियाओं की संख्या हेतु प्रोत्साहन देना उदाहरण हेतु, फैक्टरी में कार्य करने वाले कर्मचारियों को वस्तुओं की निर्मित संख्याओं (सुनिश्चित उपस्थिति) के हिसाब से भुगतान किया जाता है।

उदाहरण हेतु-लोग अतिरिक्त धन कमाने के लिए अतिरिक्त कार्य करते हैं। अंत में, वे आराम को गौण रूप से देखने लगते हैं और धन उनके लिए अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है और वे अपनी प्रक्रियाओं के दर को कम करने लगते हैं।

(ख) अस्थायी अनुपात अनुसूची

किसी कार्य के प्रति आवश्यक प्रतिक्रियाओं की संख्या बदली जा सकती है।

यह अनुसूची अनुमानित प्रोत्साहन के रूप में सद्दृष्टि रूप में सामने आती है। सीखने वालों को पता नहीं चलता कि कब उन्हें इसका भुगतान करना पड़ जाए, तो वे प्रतिक्रिया देते रहते हैं। सट्टेबाजी के कई रूप इसके उदाहरण हैं क्योंकि इसमें कई बार भुगतान बहुत अधिक करना पड़ता है।

(2) अंतराल अनुसूची

(क) स्थायी अंतराल अनुसूची

यदि आपके पास कोई कुत्ता या बिल्ली है तो आपने यह जरूर देखा होगा कि जब भी भोजन का समय पास आने लगता है तो वे आपको परेशान करना शुरू कर देते हैं। ऐसा स्थायी अंतराल पुनर्बलन के कारण होता है जो समयानुसार निर्धारित होती है। ये प्रतिक्रिया स्थायी समय अंतराल के दौरान ही लाभदायक रहती है तो आपका पालतू पशु भी यह जान जाएगा कि किसी निश्चित समय पर दी गई प्रतिक्रियाएँ ही पुरस्कृत होती हैं।

बच्चे कभी-कभी सिर्फ अपने जन्मदिन या किसी अन्य छुट्टी पर उत्साहित हो जाते हैं क्योंकि वे जानते हैं उन्हें इस दिन तोहफे मिलेंगे। आपने कभी-कभी देखा होगा कि आप तब तेज वाहन चलाते हैं जब आप किसी लंबी यात्रा को बस समाप्त करने वाले होते हैं या आपको बहुत तेज भूख लगी होती है अब चाहे आपके पास पर्याप्त नाश्ता रखा हो।

(ख) अस्थायी अंतराल अनुसूची

जब प्रतिफल का समय अलग-अलग हो। आपको यह नहीं पता हो कि आपको अपने कार्य का प्रतिफल कब मिलेगा। इससे आपकी प्रतिक्रिया की दर धीरे हो जाती है परंतु प्रयास निरंतर होने चाहिए।

जैसे किसी व्यक्ति द्वारा मछली पकड़ना अस्थायी अंतराल अनुसूची का उदाहरण है। ऐसा भी हो सकता है कि आप एक बार में दो मछली पकड़ लें और यह भी हो सकता है कि आपको घंटों इंतजार करना पड़े। इस योजना के अनुसार कोई भी पल आपके लिए भाग्यशाली हो सकता है। आप कभी-कभी इससे प्रतिफल प्राप्त कर सकते हैं।

दण्ड (सजा) एवं पुरस्कार द्वारा व्यवहार का शेपिंग एवं चेनिंग (Shaping and Chaining of Behaviour) : व्यवहार का साकार व रूपांकन और श्रृंखलाबद्ध होना।

दंड व सजा किसी प्रतिक्रिया के बाद बुरी स्थिति का एक प्रदर्शन है। इससे दी गई प्रतिक्रिया को कम करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण के लिए-बच्चों के आग के पास जाने पर आप उन्हें तमाचा मारते हुए उनके हाथ पीछे कर लेते हैं। जब कोई कुत्ता मेज के नीचे जाकर मांस खाने लगता है तो हम उसकी गर्दन को पट्टे से खींचते हैं और डाँटते हैं।

दंड किसी विशिष्ट व्यवहार को रोकने का एक प्रभावी तरीका है जैसे कक्षा के दौरान चिल्लाना।

किसी साधारण तरीके के व्यवहार को रोना कम प्रभावी होता है जैसे 'सहयोग न देने की प्रवृत्ति'।

दंड व सजा के शैक्षिक परिणाम

अनुसंधान दर्शाता है कि दंड के कुछ निश्चित प्रभाव हैं-

(क) दंड मिलने से सीखने की प्रवृत्ति कम हो जाती है। सीखने वाले को सही और गलत उत्तरों में अंतर करना सीखना चाहिए लेकिन इस उद्देश्य के लिए दंड देना केवल चिंता पैदा करता है।

(ख) बुरे व्यवहार के लिए दंड देने से किसी व्यक्ति को न केवल बुरा, बल्कि अच्छा व्यवहार भी प्रभावित होता है। उदाहरण हेतु कक्षा में यदि किसी बच्चे को शरारत करने पर बार-बार दंड दिया जाए तो उसमें शिक्षकों को खुश रखने की इच्छा समाप्त हो जाएगी और उसका व्यवहार ऐसा बन जाएगा कि 'हमेशा मैं ही क्यों प्रयास करूँ'।

शास्त्रीय अनुबन्धन (Classical or Traditional Conditioning) के प्रतिपादकों के रूप में अमेरिकन मनोवैज्ञानिक जे.बी. वाटसन तथा रशियन मनोवैज्ञानिक इवान पैवलोव का नाम लिया जाता है। पैवलोव ने कुत्तों के साथ किए जाने वाले अपने प्रयोगों के आधार पर यह प्रदर्शित करने की चेष्टा की कि एक कृत्रिम उद्दीपक (जैसे घंटी) को अगर किसी प्राकृतिक उद्दीपक (जैसे भोजन) के साथ प्रस्तुत किया जाय और कुछ समय बाद प्राकृतिक उद्दीपक हटा लिया जाए तो यह देखा जा सकता है कि कृत्रिम उद्दीपन भी वही अनुक्रिया (मुंह में लार आना) करने में समर्थ सिद्ध होता है जो प्राकृतिक उद्दीपन द्वारा होती है। पैवलोव ने इसके द्वारा यह स्थापित करने का प्रयत्न किया कि कुत्ते का यह सीखना कि जब घंटी बजती है तब खाना मिलता है यह दोनों प्रकार के उद्दीपनों (प्राकृतिक और कृत्रिम) के भली-भाँति समन्वयन तथा उसके परिणामस्वरूप अनुक्रिया का कृत्रिम उद्दीपन के साथ अनुबन्धित होने का ही परिणाम कहा जा सकता है। वाटसन ने भी अधिगम को इसी प्रकार के अनुबन्धन का परिणाम बताया। वह 11 माह के अपने बालक अलबर्ट को अनुबन्धन के द्वारा पालतू खरगोश तथा फर वाले खिलौनों से डरना सिखाने में कामयाब रहा।

स्किनर द्वारा प्रतिपादित सक्रिय या क्रियाप्रसूत अनुबन्धन (Operant Conditioning or Instrumental Conditioning) में शास्त्रीय अनुबन्धन की तरह, उद्दीपक की भूमिका केन्द्रीय नहीं होती बल्कि इसके स्थान पर अनुक्रिया की भूमिका ही केन्द्रीय होती है। स्किनर ने चूहों एवं कबूतरों पर किए जाने वाले अपने प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध किया कि हमारा अधिगम व्यवहार सक्रिय अनुबन्धन द्वारा संचालित होता है, शास्त्रीय अनुबन्धन द्वारा नहीं। अपनी बात को स्पष्ट करते हुए उसने कहा कि हमारे व्यवहार की कुंजी उद्दीपन के हाथ में न होकर अनुक्रिया या व्यवहार द्वारा उत्पन्न उसके परिणामों के पास होती है। सीखने हेतु सीखने वाले को पहले कोई न कोई क्रिया करनी पड़ती है, सक्रिय होना पड़ता है इस व्यवहार को जब कोई उचित पुनर्बलन प्राप्त हो जाता है तो उसे उसी रूप में दोहराने की संभावना बढ़ती जाती है और फलस्वरूप उसे सीख लिया जाता है। इस तरह सीखने में सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वांछित व्यवहार को उपयुक्त पुनर्बलन प्रदान करते हुए उसका भली-भाँति निरूपण किया जायेगा सक्रिय अनुबन्धन का सिद्धांत शैक्षिक जगत में अपनी उपयोगिता को लेकर काफी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। व्यवहार परिमार्जन तकनीक, अभिक्रमिक अनुदेशन तथा कम्प्यूटर निर्देशित शिक्षण आदि को जन्म देने का श्रेय इसी सिद्धान्त को जाता है।

(ग) यदि दंड नियमतः रूप से दी जाती है ताकि बच्चे अच्छा व्यवहार करें, बच्चे अच्छा व्यवहार करना सीखते हैं और दूसरों को नुकसान नहीं पहुँचाते। वे दंड को बड़ों के उचित व्यवहार के रूप में देखते हैं तो जब वे बड़े होते हैं, वे उसी तरह अपने बच्चों से व्यवहार करते हैं। अध्ययन दर्शाते हैं कि जिन बच्चों को दंड मिलता है वे स्वयं को बुरा कहते हैं।

व्यवहार में संशोधन व परिवर्तन की पद्धतियाँ (Behaviour Modification Methods)

- शिक्षा शास्त्रीयों ने इच्छित व्यवहार की आवृत्ति को बढ़ाने और व्यवहारिक समस्याओं को कम करने हेतु अनेक (Reward) पद्धतियों का विकास किया है। ऐसी तकनीकें व्यवहार संशोधक कहलाती हैं।

- उदाहरण हेतु कुछ नर्सरी स्कूल और प्रारंभिक विद्यालय पुरस्कार व्यवस्था का भी प्रयोग करते हैं जिसे 'टोकन इकोनॉमी' (Token Economy) कहा जाता है जो स्कीनर के विचार पर आधारित है। बच्चों को कक्षा में प्रश्नों के सही उत्तर देने पर टोकन मिलते हैं। बाद में इन टोकनों से अलग-अलग पुरस्कार प्राप्त किए जाते हैं।

- स्कीनर के अनुप्रयोग का अन्य उदाहरण है शिक्षण मशीन (Teaching Machine)। सीखने में पुरस्कार इतने महत्व नहीं रखते जितना कि यह संतोष कि आपने सही उत्तर दिया है, यह मानवीय व्यवहार का सबसे उत्तम व्यवहार है।

- अनुबंधन (Conditioning) से अवांछित या अनैच्छिक व्यवहार को अधिक स्वीकृत व्यवहार में परिवर्तित किया जाता है। इस विचारधारा से होने वाले तनाव को कम समय में मदिरापान से परिवर्तित किया है। कारावास, स्वास्थ्य संस्थानों के साथ-साथ डे-केयर सेंटर, उपचारात्मक क्लीनिक और अन्य शैक्षिक संस्थानों में भी इन ऑपरेन्ट तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।

सीखने के स्थानान्तरण संबंधी सिद्धान्त

मानसिक अनुशासन या शक्तियों के उपरोक्त सिद्धान्त को सबसे पहले विलियम जेम्स (William James) द्वारा आलोचना का शिकार होना पड़ा। विलियम जेम्स ने मानसिक शक्तियों के सिद्धान्त की जांच करने के प्रयत्न में यह देखना चाहा कि किसी एक लेखक द्वारा लिखी गई कविता की पंक्तियों को याद करने से दूसरे लेखक द्वारा लिखी गई कविता की पंक्तियों को याद करने में कुछ सहायता मिलती है अथवा नहीं। प्रयोग उसने अपने ऊपर ही किया।

जेम्स ने अपने इस प्रकार के प्रयोगों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि अपनी स्मरण शक्ति को एक बार प्रशिक्षित कर दूसरे कार्यों के प्रयोग में नहीं लाया जा सकता।

इसी प्रकार के बहुत से प्रयोग कई मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये जिनसे मानसिक शक्तियों के सिद्धान्त की जांच करने का प्रयत्न किया गया। इनमें से डॉ. स्लाइट (Slight) और ब्रिग्स (Briggs) के प्रयत्न काफी उल्लेखनीय हैं। इस संबंध में निम्नलिखित सिद्धान्त प्रचलन में हैं :

(i) **समरूप तथ्यों का सिद्धान्त (Theory of Identical elements)**—इस सिद्धान्त के मुख्य प्रतिपादकों में सबसे पहला नाम थोर्नडाइक (Thorndike) का आता है। उसके पश्चात् वुडवर्थ (Woodworth) ने भी इस सिद्धान्त के पक्ष में अपना मत दिया और तत्वों (Elements) के स्थान पर अवयव (Components) शब्द

का प्रयोग किया। इस कारण इस सिद्धान्त को समरूप अवयवों का सिद्धान्त (Theory of Identical Components) भी कहा जाता है।

यह सिद्धान्त बताता है कि किसी एक परिस्थिति में अधिगम या प्रशिक्षण का स्थानान्तरण उस सीमा तक हो सकता है जहां तक दोनों परिस्थितियों में कुछ समान या समरूप तत्व उपस्थित रहते हैं। जितने अधिक तत्व दोनों परिस्थितियों में समरूप होंगे, स्थानान्तरण भी उतना ही अधिक होगा।

उदाहरण के लिए, गणित के क्षेत्र में किये जाने वाले अध्ययन की भौतिक शास्त्र के क्षेत्र में स्थानान्तरण होने के संभावनायें उतनी ही अधिक होंगी जितनी कि दोनों विषयों में चिन्ह, सूत्र समीकरण और गणनाओं के रूप समान तत्व उपस्थित होंगे। इसी प्रकार टाइप सीखने के कौशल का पियानो में स्थानान्तरण सम्भव हो सकता है क्योंकि दोनों कार्यों में दृष्टि और अंगुलियों के संचालन में पूरा तालमेल रहता है। इस प्रकार सीखने संबंधी दो अनुभवों में विषय सामग्री, कौशल, अभिवृत्ति, सीखने की विधि, उद्देश्य, आदतों तथा रुचियों के रूप में जितनी अधिक समानता पायी जाती है, उनमें स्थानान्तरण की संभावना उतनी ही अधिक देखने को मिलती है।

(ii) **सामान्यीकरण का सिद्धान्त (Theory of Generalisation)**—इस सिद्धान्त को चार्ल्स जुड (Charles Judd) ने प्रकाश में लाया। इस सिद्धान्त ने नवीन परिस्थितियों के समरूप तत्वों के स्थान पर सामान्यीकरणों के स्थानान्तरण की बात सामने रखी। अपने कुछ अनुभवों के आधार पर एक व्यक्ति कोई सामान्य सिद्धान्त पर पहुंच जाता है। दूसरी परिस्थितियों में कार्य करते हुए अथवा कुछ सीखते हुए वह अपने निकाले हुए इन्हीं निष्कर्षों अथवा सिद्धान्तों को प्रयोग में सर्वव्यापी समझ लिया जाता है।

I. अधिगम का संज्ञानात्मक सिद्धान्त

(1) **डोलार्ड और मिल्लर** : जॉन डालोर्ड और नील मिल्लर ने परीक्षण किया कि व्यक्तिगत और सामाजिक व्यवहार के मूलभूत विचारों की व्याख्या मूलभूत सिद्धान्तों से की जा सकती है। हम जब किसी कार्य को करने या नज़रदाज करने के बीच में दुविधा में होते हैं तो हम तर्क करने लगते हैं। इस तरह की स्थितियों में पहले किसी कार्य को करने की प्रवृत्ति अक्सर उसे नज़रदाज करने की प्रवृत्ति से मजबूत होती है।

(2) **अन्तःदृष्टि या सूझ द्वारा सीखने के सिद्धान्त (Insightful Learning)** को प्रतिपादित करने का श्रेय गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों को जाता है। इन्हीं में से एक मनोवैज्ञानिक कोहलर ने अपने चिम्पैंजियों द्वारा अर्जित व्यवहार (अधिगम) के लिए सर्वप्रथम Insight यानी अन्तःदृष्टि शब्द का प्रयोग किया। अपने प्रयोगों के आधार पर उसने यह निष्कर्ष निकाला कि हम अपनी समस्या को हल करने हेतु उल्टे-सीधे हाथ नहीं मारते बल्कि अपनी अन्तःदृष्टि या सूझबूझ का प्रयोग करते हुए बुद्धिमानी से इसका समाधान तलाश करते हैं। ऐसा करने हेतु हम परिस्थिति का समग्र रूप में प्रत्यक्षीकरण करते हुए यह देखते हैं कि हमारी समस्या क्या है तथा उसे हल करने हेतु हमारे पास क्या साधन हैं तथा फिर इन दोनों बातों में तालमेल बिठाते हुए समस्या का बौद्धिक समाधान ढूँढ़ लिया जाता है और इस तरह हम उस तरह की समस्याओं को हल करने का तरीका सीख लेते हैं।

(3) कर्ट लेविन द्वारा प्रतिपादित मनोवैज्ञानिक व्यक्ति के मानसिक क्षेत्र सिद्धान्त (Mental Space theory) : यह बताता है कि अधिगम व्यक्ति और वातावरण दोनों का प्रतिफल है व्यक्ति से लेविन का तात्पर्य जैविक प्राणी से नहीं बल्कि मनोवैज्ञानिक व्यक्ति से है और वातावरण से तात्पर्य उस दायरे से होता है जिसमें मनोवैज्ञानिक रूप से व्यक्ति विशेष किसी परिस्थिति और समय विशेष में विचरण कर रहा होता है। इस तरह लेविन के अनुसार अधिगम और कुछ नहीं बल्कि एक ऐसी प्रक्रिया है जिसे द्वारा परिस्थिति और समय विशेष में व्यक्ति विशेष द्वारा अपनी आवश्यकताओं के संदर्भ में किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अपने जीवन दायरे (Life spaces) की संज्ञानात्मक संरचना में अपेक्षित परिवर्तन लाने के प्रयत्न किये जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक सी. हल, व्यवहार को प्रभावित करने वाली मध्यवर्ती बातों का अध्ययन करने में इच्छुक थे जैसे आरंभिक इच्छा और हल-प्रोत्साहन, अवरोधकों और समरूप प्रशिक्षण (स्वभाव की शक्ति) का अध्ययन करते हैं। हल का सैद्धांतिक कार्य कई तत्वों का समावेश है जिसका गणितीय रूप में परीक्षण किया जाता है। इसमें सम्मिलित हैं: (1) आवश्यकताओं के क्रम का संगठन जो प्रेरणा और इच्छा की स्थितियों में सम्मिलित है। (2) सशक्त स्वभाव उद्दीपन द्वारा सक्रिय होती है, जबकि जो मूल रूप से अनुबंधित होती है वह अंतर करने पर दूसरे उद्दीपन की निकटता पर निर्भर होती है।

II. अधिगम का अवलोकन सिद्धान्त

बैंडुरा (1977) के अनुसार, निम्न चार विशेषताएँ व प्रक्रियाएँ अवलोकन व्यवहार से जुड़ी हुई हैं—

ध्यान प्रक्रिया—हम आदर्श के पूरे व्यवहार की नकल नहीं करते, बल्कि केवल व्यवहार के विशेष पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, जो सीखने में हमें अच्छा लगता है। हम व्यवहार के उन्हीं महत्वपूर्ण लक्षणों की ओर ध्यान देते हैं, जो हम सीखना चाहते हैं। उदाहरणतया—एक बच्चा अच्छा सुलेख लिखना सीखने के लिए अध्यापक को ध्यानपूर्वक देखता है और बारीकी से उसके पेंसिल पकड़ने के तरीके पर ध्यान केन्द्रित करता है, वह कैसे अपनी अंगुलियाँ घुमाती है, कहाँ पर वह बड़े अक्षरों का उपयोग करती है अतः उसका धन अध्यापक के पहनावे पर एवं चलने के तरीके पर नहीं जाता।

स्मृति की प्रक्रिया—सूचना को दिमाग में एकत्रित करने की योग्यता भी अधिगम प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग है स्मृति को कई प्रकार के कारक प्रभावित कर सकते हैं। एकत्रित सूचनाओं को बाद में प्रयोग में लाना और उस पर अमल करना अवलोकन अधिगम का महत्वपूर्ण अंग है। हमें अवलोकन की गयी वस्तुओं को कुछ चिहनों के उपयोग के तरीके के द्वारा, समझ के द्वारा और उनका संगठन करके, याद रखने की आवश्यकता है।

व्यवहार कार्यान्वयन—अवलोकन किये गए व्यवहार को क्रियान्वयन करने का दूसरा पहलू उस कार्य शृंखला का वास्तव में अभ्यास करना है। दृश्याकृति की कल्पना और दिमागी रूप से अभ्यास करना भी अवलोकनकर्ता को उस कार्य के प्रदर्शन को स्वाभावित बनाने में सदैव सहयोगी नहीं होगा।

प्रभावशाली प्रदर्शन के लिए लगातार अभ्यास और अभ्यास पर लगातार ही पृष्ठपोषण और प्रत्येक अभ्यास के बाद गलतियों में सुधार करना आवश्यक है।

अवलोकनात्मक अधिगम सीखने की वह विधि है जिसमें किसी दूसरे के व्यवहार या भूमिका का अवलोकन या पर्यवेक्षण किया जाता है। अल्बर्ट बैंडुरा ने जोर दिया है कि व्यक्ति सामान्यतः किए गए व्यवहारों से सीखता है बनिस्पत नकल या अनुकरण करके। उन्होंने जोर देकर कहा था कि अवलोकन एवं अभिनय मॉडलिंग के किसी भी रूप में कुछ स्थितियाँ जरूरी होती हैं, जैसे—ध्यान, ग्राह्यक्षमता, पुनरूपादन और अन्तःप्रेरणा।

III. अधिगम का अनुभव जन्य सिद्धान्त

यह मानव स्वभाव के सकारात्मक व आशावादी दृष्टिकोण को दर्शाता है। ये नियम व्यक्तिगत अनुभवों पर केंद्रित है। तीन सर्वाधिक प्रभावी मानवीय विज्ञानी हैं—कार्ल रोजर्स, मैस्लो और आलपोर्ट।

1. कार्ल रोजर्स द्वारा प्रतिपादित अनुभवजन्य अधिगम सिद्धान्त (Experiential Learning theory) को ज्ञान प्राप्ति यानी संज्ञानात्मक अधिगम के स्थान पर अनुभवों से जुड़े हुए तथा ज्ञान को प्रयोगात्मक रूप से उपयोग कर सकने वाले अधिगम यानी अनुभवजन्य अधिगम के अर्जन पर बल देता है। रोजर्स मानते हैं कि व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण घटक होता है—स्व (Self)। रोजर्स इस अवधारणा को व्यक्ति की स्व (Self) की व्यक्तिगत विचारधारा को बताते हैं और तो यह लोगों की स्व के प्रति व्यक्तिगत विचारधारा से भी करीब है। स्व में किसी के गुण और अवगुण तथा शुद्धता और अशुद्धता दोनों सम्मिलित हैं।

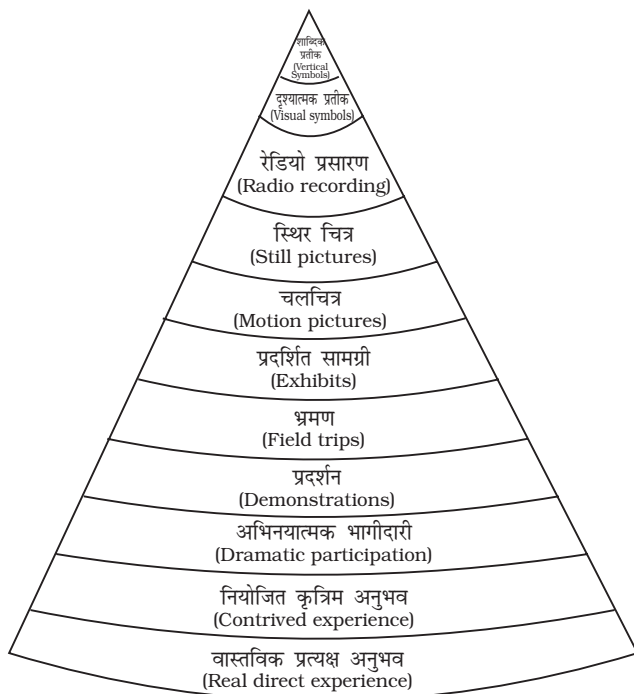
सीखने के अनुभवात्मक चक्र में पांच महत्वपूर्ण चरण होते हैं जो सार्थक सीखने का मार्ग प्रशस्त करते हैं —	
1. अनुभव करना	2. अनुभव साझा करना
3. प्रक्रियाकरण	4. सामान्यीकरण और
5. अनुप्रयुक्त	

2. डेविड कोल्ब के अधिगम मॉडल के अनुसार चार प्रकार के अधिगम तरीके हैं जोकि दो ग्राह्य अनुभूति तक दो उपागमों पर आधारित है। ये हैं मूर्त अनुभव (Concrete Experience-CE) और अमूर्त अवधारणात्मक (Abstract conceptualization-AC) । इसके अतिरिक्त परिवर्तनीय अनुभव पर आधारित दो उपागम हैं—चिंतनात्मक अवलोकन (Reflective observation-RO) और सक्रिय प्रयोगीकरण (Active experimentation-AE)। ये चार अधिगम तरीके इस प्रकार से हैं—

- (क) देखना और महसूस करना (CE/RO)
- (ख) देखना और सोचना (AC/RO)
- (ग) करना और सोचना (AC/AE)
- (घ) करना और महसूस करना (CE/AE)

IV. एडगर डेल का अनुभव शंकु (Edger Dale's Cone of Experiences)

1. अनुभव शंकु (Cone of Experiences) छात्र 11 प्रकार से सीखने के अनुभव प्राप्त करता है। (Child gets 11 types learning experiences)
2. बहु इंद्रिय अनुदेशन (Multy Sensory Instruction)



अधिगम या सीखना : प्रकृति व स्वरूप

सीखने की प्रक्रिया (Learning process)—विद्यार्थी से परिचित होने और यह तय करने के बाद कि कौन से सीखने संबंधी अनुभव उसे दिए जाने हैं, इन अनुभवों को आसानी से और सफलतापूर्वक ग्रहण कराने की समस्या सामने आती है। इसलिए इस धुरी के इर्द-गिर्द शिक्षा मनोविज्ञान सीखना क्या है और कैसे सीखा जाता है, इस तथ्य को लेकर आगे बढ़ता है। फलस्वरूप इसमें कुछ इस प्रकार के प्रकरण जैसे सीखने के विभिन्न नियम एवं सिद्धांत मानसिक छवि (Schema), स्मृति एवं विस्मृति (Remembering and Forgetting), प्रत्यक्षीकरण (Perception), संप्रत्यय निर्माण (Concept Formation), सोचने एवं विचारने की प्रक्रिया (Thinking and Reasoning Process), समस्या समाधान (Problem Solving), प्रशिक्षण स्थानान्तरण (Transfer of Training) आदि सम्मिलित होते हैं।

● अधिगम की आरंभिक अवस्था में मानसिक छवि बनाना (Schema) और आपसी अंतः संबंधों की मुख्य प्रक्रिया है। मानसिक छवि बनाना ही ज्ञान की संरचना है।

● **संवेदना और प्रत्यक्षीकरण (Sensation and Perception)**—संवेदना और प्रत्यक्षीकरण, दोनों ही मानसिक विकास के महत्वपूर्ण पहलू माने जाते हैं। आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा आदि ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा हमें जो कुछ भी अनुभूति होती है उसे संवेदना (Sensation) कहा जाता है। जब संवेदनाओं से कोई निश्चित अर्थ निकालने की चेष्टा की जाती है तो वे प्रत्यक्षीकरण (Perception) का रूप धारण कर लेती है।

● **सम्बोध या संप्रत्यय निर्माण (Concept formation)**—बच्चों में सम्बोधों या संप्रत्ययों का निर्माण होना भी उनके मानसिक विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है। सम्बोध या संप्रत्यय एक प्रकार से ऐसे सामान्यीकृत विचार हैं जो एक व्यक्ति द्वारा विभिन्न प्रत्यक्षीकरण अथवा प्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से आगमनात्मक तर्क प्रणाली का प्रयोग करते हुए विभिन्न व्यक्तियों तथा प्रक्रियाओं के बारे में बना लिए जाते हैं।

संप्रत्यय निर्माण में विभेदीकरण (Discrimination) और सामान्यीकरण (Generalisation) से सम्बन्धित दोनों प्रकार की योग्यताओं का उपयोग होता है। वस्तुओं अथवा मनुष्यों को पहचान कर विभेदीकरण कर सकने की योग्यता बच्चे में बहुत शीघ्र विकसित होने लगती है। बाद में जब वह अपने प्रत्यक्षीकरण संबंधी अनुभवों के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करना प्रारंभ कर देता है तब संप्रत्यय निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है संप्रत्यय निर्माण में सभी प्रकार के पूर्व तथा वर्तमान अनुभव बहुत अधिक महत्व रखते हैं। बाल्यावस्था के प्रारंभ में वास्तविक वस्तुओं के द्वारा ग्रहण किए गए स्थूल अनुभव संप्रत्यय निर्माण में बहुत सहयोग देते हैं। इनकी सहायता से बच्चों के अन्दर विभिन्न संप्रत्ययों का निर्माण हो जाता है।

● **अधिगम एक सतत् प्रक्रिया है**—बचपन से ही प्रत्येक मनुष्य अपने सोच, प्रवृत्ति, रुचि आदि से अपने व्यवहार में परिवर्तन की कोशिश करता है। वह ऐसा जीवन के परिवर्तनशील स्थितियों में स्वयं को निरंतर फिट रखने के लिए करते हैं।

● **अधिगम प्रत्यक्षतः लक्ष्यबद्ध है**। प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने की अभिलाषा करता है। इन लक्ष्यों को अधिगम के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यदि प्राप्त करने के लिए कोई उद्देश्य नहीं है, तब वहां अधिगम की कोई आवश्यकता नहीं होगी।

● **अधिगम व्यक्तिवादी है**—आपने कक्षा में ये अवलोकन किया होगा कि कुछ बच्चे अधिक शीघ्रता से सीखते हैं और अन्य धीरे-धीरे सीखते हैं। वास्तव में विभिन्न व्यक्तियों की अधिगम की गति भिन्न-भिन्न होती है।

● **अधिगम एक व्यक्ति की वातावरण के साथ परस्पर क्रिया का परिणाम है**—एक शिक्षक के रूप में, बच्चों को प्रोत्साहित करने के लिए सावधानीपूर्वक वातावरण का संगठन करना है। प्रायः जब वे आपसे परस्पर क्रिया करते हैं, आपस में अपने साथियों से परस्पर क्रिया करते हैं तथा शिक्षण अधिगम सामग्री से परस्पर क्रिया करते हैं।

● **मानसिक स्तर में अनुभूति एवं दृष्टिकोणों महत्वपूर्ण है**। बच्चों की अनुभूतियों को प्रोत्साहित करना चाहिए। बच्चों को स्वतंत्र चिन्तन करने और प्रश्न पूछने—असहमति जताने को प्रोत्साहित करें। यह सभी सहभागी शिक्षण विधि का मूलधार है। विद्यार्थी एवं अध्यापक दोनों की भावना एवं अनुभूति से अधिगम को पूर्णता प्राप्त होती है। अध्यापन की दृष्टि में यही समालोचनात्मक (क्रिटिकल) एवं विवेचनात्मक (Analytical) अध्यापन है जिसमें खुले दिल से विचार-विमर्श एवं बहु विचारों को प्रश्न दिया जाता है।

शिक्षा दर्शन : प्रकृतिवाद, प्रयोजनवाद, आदर्शवाद तथा यथार्थवाद का तुलनात्मक अध्ययन
(Comparative study of Naturalism, Pragmatism, Idealism and Realism)

प्रकृतिवाद (Naturalism)	प्रयोजनवाद /उपयोगितावाद (Pragmatism)	आदर्शवाद (Idealism)	यथार्थवाद (Realism)
समर्थक विद्वान			
1. अरस्तु (Aristotle) 384-322BC 2. रूसो (Rousseau) 1712-1778 AD 3. फ्रोबेल 4. बेकन 5. पेस्टालॉजी 6. टी.पी. नन 7. मारिया मंटेसरी 8. रवीन्द्रनाथ टैगोर 9. अरविंद घोष	1. चार्ल्स पीयर्स (Charles Pierce) संस्थापक (अमेरिका) 2. विलियम जेम्स (William James) संस्थापक (अमेरिका) 3. शिलर (Schiller) इंग्लैंड 4. जॉन डीवी (John Dewey) (अमेरिका) 5. किलपैट्रिक (W.H. Kilpatrick) (अमेरिका)	1. सुकरात (Socrates) 469-399BC 2. प्लेटो ((Plato) 427-347 BC 3. फिक्टै 4. काण्ट 5. महात्मा गांधी 6. विवेकानंद	1. जॉन लॉक 2. इरेस्मस 3. मिल्टन
आधारभूत सिद्धान्त (Fundamental Principles)			
1. प्रकृति ही पूर्ण वास्तविकता (Reality) 2. प्रकृतिवादियों का दृष्टिकोण पूर्णतया भौतिक और यांत्रिक (Materialistic) 3. प्रकृतिवादी परमात्मा के अस्तित्व को बिल्कुल स्वीकार नहीं करते। 4. प्रकृतिवाद के अनुसार वास्तविक सत्ता (Ultimate reality) प्रकृति है। 5. प्रकृतिवाद के अनुसार ब्रह्माण्ड एक प्राकृतिक रचना है। 6. प्रकृतिवाद मूल्यों (Values) की उपेक्षा करता है। नैतिकता, परलोक, व्यक्तिगत अमरत्व आदि सभी भ्रम हैं 7. प्रकृतिवाद के अनुसार भौतिक और प्राकृतिक नियम सार्वभौमिक (Universal) है।	1. वास्तविकता प्रक्रिया में है और प्रयोग पर निर्भर करती है। 2. प्रयोजनवादियों का दृष्टिकोण पूर्ण सामाजिक (Social) है। 3. प्रयोजनवादी परमात्मा के अस्तित्व को तय तक स्वीकार करते हैं जब तक ईश्वर की मान्यता द्वारा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। 4. प्रयोजनवाद के अनुसार वास्तविक सत्ता उपयोगिता है। 5. प्रयोजनवाद के अनुसार ब्रह्माण्ड मानवीय तथा सामाजिक रचना है। 6. प्रयोजनवाद के अनुसार कोई भी नियम मूल्य परिवर्तनशील हैं। वे मानव-निर्मित होते हैं। अर्थात् मूल्य शाश्वत नहीं बल्कि सापेक्ष होने चाहिए।	1. मन विचार और आत्मा वास्तविक है। 2. आदर्शवादियों का दृष्टिकोण पूर्णतया आध्यात्मिक (Spiritual) है। 3. आदर्शवादी परमात्मा पर जोर देते हैं। 4. आदर्शवाद के अनुसार वास्तविक सत्ता आध्यात्मिक है। 5. आदर्शवाद के अनुसार ब्रह्माण्ड ब्रह्मा द्वारा निर्मित है। 6. आदर्शवाद शाश्वत मूल्यों (Eternal values) में विश्वास रखता है। मूल्य स्थायी तथा अपरिवर्तनशील है। सत्यं, शिवं, सुन्दरं अमर मूल्य है। 7. आध्यात्मिक नियम सार्वभौमिक हैं।	1. भौतिक व प्राकृतिक विज्ञानों को माना जाता है। 2. विश्व मन से स्वतंत्र है। (Universe: independent of mind) 3. वास्तविकता ही सत्य है। 4. वर्तमान जीवन पर ही बल

शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Education)

प्रकृतिवाद (Naturalism)	प्रयोजनवाद / उपयोगितावाद (Pragmatism)	आदर्शवाद (Idealism)	यथार्थवाद (Realism)
1. आत्माभिव्यक्ति (Self-expression)। 2. व्यक्ति का स्वायत्त विकास (Autonomous Development of individual) 3. मानवीय मशीन की पूर्णता (Perfection of human machine) 4. प्रवृत्तियों की विराटता (Sublimation of instincts) 5. जीवन व अस्तित्व के लिए संघर्ष की तैयारी (Preparation for the struggle of existence) 6. वातावरण के साथ अनुकूलन (Adjustment with environment) 7. वर्तमान तथा भविष्य की प्रसन्नता प्राप्त करना (Attainment of present and future happiness)	1. पूर्व-निश्चित उद्देश्यों की अस्वीकृति 2. परिवर्तनशील उद्देश्य। 3. सामाजिक कुशलता पर बल (Emphasis on social efficiency) 4. नये मूल्यों और आदर्शों का निर्माण (Creation of new values and ideals) 5. व्यक्ति की अपेक्षा समाज को अधिक महत्व (More emphasis on society rather than individual) 6. वर्तमान के साथ अनुकूलन तथा वर्तमान में परिवर्तन लाना (Adjustment with the present and to change the present) 7. साधनपूर्ण तथा साहसपूर्ण मस्तिष्क का विकास (Development of resourceful and enterprising mind)	1. आत्म-अनुभूति (Self-realization) 2. आध्यात्मिक विकास (Spiritual development) 3. नैतिक भावना का विकास (Development of moral sense) 4. आविष्कारक तथा रचनात्मक शक्तियों का विकास (Development of inventive and creative powers) 5. पूर्ण मनुष्य का विकास (Development of complete man) 6. सांस्कृतिक वातावरण की सुरक्षा तथा समृद्धि (Preservation and enrichment of cultural environment). 7. सादा जीवन तथा उच्च विचार (Simple living and high thinking).	1. ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करना जो वातावरण में अपने आप को ढाल सकें। 2. मनुष्य का सर्वांगीण विकास

अध्यापक (Teacher)

1. प्रकृतिवादी अध्यापक की उपेक्षा करते हैं। वह पर्दे के पीछे रहने वाले के रूप में हैं। प्रकृति ही उत्तम शिक्षक है।	1. प्रयोजनवाद में अध्यापक का महत्वपूर्ण स्थान है। उसका कार्य सामाजिक वातावरण तथा परिस्थितियों का निर्माण करना है।	1. आदर्शवाद में अध्यापक का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। वह आत्म-बोध अध्यापक की ओर अग्रसर कराने वाला है। अतः वह पथ-प्रदर्शक है। अध्यापक माली के रूप में है।	1. यथार्थवादी अध्यापक के महत्व को स्वीकार करते हैं परन्तु उसकी सर्वोच्चता को नहीं करते। 2. अध्यापकों को चाहिए कि वे वास्तविक रूप में तथ्यों को प्रकट करें। उन्हें अपनी से कुछ नहीं जोड़ना चाहिए।
--	---	--	---

विद्यालय (School)

1. प्राकृतिक या स्वाभाविक वातावरण के रूप में है। 2. स्वच्छन्द वातावरण।	1. समाज का लघु रूप। 2. सामुदायिक जीवन की प्रयोगशाला।	1. मानवी क्रियाओं का आदर्श रूप (भगवान की लीला-भूमि)। 2. उद्यान (बाग) के समान।	1. विद्यालय व्यावहारिक शिक्षा का स्थान है।
---	---	--	--

शिक्षा-सिद्धान्त (Education-Principles)

प्रकृतिवाद (Naturalism)	प्रयोजनवाद /उपयोगितावाद (Pragmatism)	आदर्शवाद (Idealism)	यथार्थवाद (Realism)
1. प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा का आधार प्रकृति हैं यह भौतिक वातावरण पर जोर देता है। 2. प्रकृतिवाद शिशु-केन्द्रित शिक्षा पर जोर देता है। इसके अनुसार शिक्षा विद्यार्थी की प्रकृति के अनुसार दी जानी चाहिए। यह मूल प्रवृत्तियों तथा संवेगों को महत्व देता है। 3. प्रकृतिवाद बालक की अनियंत्रित स्वतंत्रता (uncontrolled freedom) पर जोर देता है। 4. प्रकृतिवाद शिक्षा में पुस्तकीय ज्ञान का विरोध करता है। 5. प्रकृतिवाद बालक की वर्तमान जीवन की शिक्षा पर जोर देता है। 6. प्रकृतिवाद निषेधात्मक शिक्षा (Negative educational) में विश्वास करता है। जो बच्चे को बुराई से अप्रभावित रखती है (रूसो)। 7. प्रकृतिवाद के अनुसार शिक्षा दर्शन का गत्यात्मक रूप है।	1. प्रयोजनवाद के अनुसार शिक्षा का आधार समाज है। यह सामाजिक और भौतिक वातावरण पर जोर देता है। 2. प्रयोजनवाद भी शिशु-केन्द्रित शिक्षा पर जोर देता है। इसके अनुसार शिक्षा वास्तविक जीवन के स्थितियों के अनुसार दी जानी चाहिए। यह प्रयोग और अनुभव पर जोर देता है। 3. प्रयोजनवाद बालक की सीमित स्वतंत्रता (Restricted freedom) पर अधिक जोर देता है। 4. प्रयोजनवाद प्रयोग तथा अनुभव पर बल देता है। 5. प्रयोजनवाद बालक की पूर्ण जीवन की शिक्षा पर जोर देता है। 6. प्रयोजनवाद सकारात्मक शिक्षा, प्रयोग और अनुभव पर आधारित शिक्षा में विश्वास करता है। 7. प्रयोजनवाद के अनुसार शिक्षा के दर्शन का जन्म हुआ है।	1. आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा का आधार अध्यात्मवाद है। यह आध्यात्मिक और नैतिक वातावरण पर जोर देता है। 2. आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा में बालक का गौण स्थान है। यह बालक के उन्नयन पर जोर देता है। यह चिन्तन और मानकों पर जोर देता है। 3. आदर्शवाद बालक के अनुशासन (Discipline) पर जोर देता है। 4. आदर्शवाद पुस्तकीय ज्ञान पर बल देता है। 5. आदर्शवाद बालक की परमात्मा की ओर विकास करने वाली शिक्षा पर जोर देता है। 6. आदर्शवाद सकारात्मक शिक्षा में विश्वास करता है। 7. आदर्शवाद के अनुसार शिक्षा दर्शन का गत्यात्मक रूप है।	प्रत्यक्ष, सूचनात्मक एवं सुपरिभाषित विषय जैसे ICT (Information and Communication Technology) द्वारा शिक्षा।

पाठ्यक्रम (Curriculum)

1. विज्ञान पर जोर। 2. पाठ्यक्रम में वैज्ञानिक विषयों को मुख्य स्थान तथा मानवीय विषयों को गौण स्थान। 3. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय शारीरिक विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, भौतिक विज्ञान, नवस्पति विज्ञान, गणित आदि। 4. विद्यार्थी की प्रकृति, रुचियों अभिरुचियों तथा योग्यताओं से सम्बन्धित। प्रकृतिवाद के पाठ्यक्रम में आध्यात्मिकता का कोई स्थान नहीं।	1. उपयोगी विषयों पर जोर। 2. सामाजिक तथा वैज्ञानिक विषयों को मुख्य स्थान। 3. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय-स्वास्थ्य विज्ञान, शारीरिक विज्ञान, गृह विज्ञान, समाज विज्ञान, इतिहास, भूगोल, कृषि शास्त्र आदि। 4. सामाजिक उपयोगिता से संबंधित तथा एकीकरण के सिद्धांत पर आधारित ।	1. नीति-शास्त्र (Ethics) पर जोर। 2. मानवीय विषयों को मुख्य स्थान। 3. पाठ्यक्रम के मुख्य विषय-धर्म, नीति-शास्त्र, कला, संगीत, आध्यात्म-शास्त्र, दर्शन-शास्त्र, साहित्य आदि। 4. मानवीय आदर्शों, विचारों तथा शाश्वत मूल्यों से संबंधित।	1. वैज्ञानिक विषय 2. व्यावसायिक शिक्षा 3. शारीरिक शिक्षा या स्वास्थ्य विकास 4. मातृभाषा 5. अन्य विषय-गणित, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, भूगोल, इतिहास, कानून आदि।
--	--	---	--

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

1. अधिगम पूरी तरह एवं मात्र “अवलोकनात्मक व्यवहार पर निर्भर” इस सिद्धान्त का संबंध अधिगम के सिद्धांत से है।
 - (1) संज्ञानात्मक
 - (2) विकासात्मक
 - (3) व्यवहारात्मक
 - (4) निर्माणात्मक
2. निम्नलिखित में से कौन-सा जोड़ा सुमेलित नहीं है?
 - (1) समतात्विक सिद्धान्त-थॉर्नडाइक
 - (2) सामान्यीकरण का सिद्धान्त-सी.एच.जुड
 - (3) औपचारिक अनुशासन का सिद्धान्त-कोह्लर
 - (4) विशिष्ट एवं सामान्य तत्वों का सिद्धान्त-स्पीयरमैन
3. जब पूर्ववर्ती अधिगम नई स्थिति में सीखने की प्रक्रिया को आसान बनाता है, तो यह कहलाता है-
 - (1) अधिगम का सकारात्मक अंतरण
 - (2) अधिगम का निरपेक्ष अंतरण
 - (3) अधिगम का नकारात्मक अंतरण
 - (4) अधिगम का शून्य अंतरण
4. पुनर्बलन या सुदृढीकरण का प्रकार जो विलोपन की धीमी गति उत्पन्न करता है :
 - (1) निरंतर सुदृढीकरण
 - (2) निश्चित अनुपात सुदृढीकरण
 - (3) निश्चित अंतराल सुदृढीकरण
 - (4) चर अनुपात सुदृढीकरण
5. वाइगोत्स्की बच्चों के सीखने में निम्नलिखित में से किए कारक की महत्वपूर्ण भूमिका पर बल देते हैं?
 - (1) नैतिक
 - (2) शारीरिक
 - (3) सामाजिक
 - (4) आनुवंशिक
6. प्रगतिशील शिक्षा का केन्द्र है-
 - (1) विद्यार्थी
 - (2) शिक्षक
 - (3) सत्ता
 - (4) संरचना
7. सीखना एक तरह के व्यवहार का
 - (1) बचाव है।
 - (2) विस्तार है।
 - (3) संशोधन है।
 - (4) प्रसार है।
8. शिक्षा के क्षेत्र में ‘पाठ्यचर्या’ शब्दावली की ओर संकेत करती है।
 - (1) शिक्षण-पद्धति एवं पढ़ाई जाने वाली विषय-वस्तु
 - (2) विद्यालय का सम्पूर्ण कार्यक्रम, जिसमें विद्यार्थी प्रतिदिन अनुभव प्राप्त करते हैं।
 - (3) मूल्यांकन-प्रक्रिया
 - (4) कक्षा में प्रयुक्त की जाने वाली पाठ्य-सामग्री
9. निम्नलिखित में से कौन-सी प्रगतिशील शिक्षा की विशेषता है?
 - (1) समय-सारणी और बैठने की व्यवस्था में लचीलापन
 - (2) केवल प्रस्तावित पाठ्य-पुस्तकों पर आधारित अनुच्छेद
 - (3) परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त करने पर बल
 - (4) बार-बार ली जाने वाली परीक्षाएँ
10. शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए-
 - (1) विद्यार्थियों में व्यावसायिक कुशलता का विकास करना
 - (2) विद्यार्थियों में सामाजिक जागरूकता का विकास करना
 - (3) विद्यार्थियों को परीक्षा के लिए तैयार करना
 - (4) व्यावहारिक जीवन के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना
11. चरित्र का विकास होता है-
 - (1) इच्छाशक्ति द्वारा
 - (2) बर्ताव एवं व्यवहार द्वारा
 - (3) नैतिकता द्वारा
 - (4) इन सभी के द्वारा
12. बाल्यावस्था में किसी विद्यार्थी की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है :
 - (1) उत्तरदायित्व की अनुभूति
 - (2) ईमानदारी
 - (3) सहभागिता
 - (4) आज्ञाकारिता
13. निम्नलिखित में से कौन-सा गुण अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के नहीं हैं?
 - (1) नियमित जीवन, संवेगात्मक परिपक्वता
 - (2) आत्मविश्वास, सहनशीलता
 - (3) बहुत विनीत, स्वयं में सीमित
 - (4) वास्तविकता की स्वीकृति, स्व-मूल्यांकन की योग्यता
14. ‘अधिगम का अंतर्दृष्टि सिद्धान्त’ प्रतिपादित किया गया-
 - (1) ‘गेस्टाल्ट’ सिद्धांतवादियों द्वारा
 - (2) पावलोव द्वारा
 - (3) जीन पियाजे
 - (4) वायगोत्स्की
15. पियाजे के अधिगम के संज्ञानात्मक सिद्धान्त के अनुसार, वह प्रक्रिया जिसके द्वारा संज्ञानात्मक संरचना को संशोधित किया जाता है, कहलाती है-
 - (1) समायोजन
 - (2) समावेशन
 - (3) स्किमा
 - (4) प्रत्यक्षण

16. बैन्दुरा के सामाजिक अधिगम के चरणों का सही क्रम हैं—
 (1) अवलोकनात्मक, अवधानात्मक, धारणात्मक एवं अभिप्रेरणात्मक
 (2) अवलोकनात्मक, अवधानात्मक, अभिप्रेरणात्मक एवं धारणात्मक
 (3) अवलोकनात्मक, धारणात्मक, अवधानात्मक एवं अभिप्रेरणात्मक
 (4) अवलोकनात्मक, धारणात्मक, अभिप्रेरणात्मक एवं अवधानात्मक
17. “अनुभव और प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन होना ही अधिगम है।” अधिगम की यह परिभाषा दी गई है—
 (1) स्किनर द्वारा
 (2) हिलगार्ड द्वारा
 (3) गेट्स एंड अन्य द्वारा
 (4) जे.पी. गिलफोर्ड द्वारा
18. धार्मिक शिक्षा के प्रखर समर्थक हैं।
 (1) व्यवहारवादी (2) आदर्शवादी
 (3) यथार्थवादी (4) अस्तित्ववादी
19. निम्नलिखित में से कौन-सी शिक्षा प्रणाली वैज्ञानिक प्रगति का समर्थन करती है?
 (1) यथार्थवादी शिक्षा (2) आदर्शवादी शिक्षा
 (3) प्राकृतिक शिक्षा (4) इनमें से कोई नहीं
20. “प्रयत्न एवं त्रुटि” सिद्धान्त के प्रवर्तक कौन थे?
 (1) हेगार्टी (2) थॉर्नडाइक
 (3) गेस्टाल्ट (4) इनमें से कोई नहीं
21. कोहलर ने किस सिद्धान्त का विकास किया?
 (1) प्रयत्न एवं त्रुटि का सिद्धान्त
 (2) अनुकरण का सिद्धान्त
 (3) अन्तर्दृष्टि का सिद्धान्त
 (4) संबंध प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त
22. रूसी मनोवैज्ञानिक पॉवलव (Pavlov) का सिद्धान्त क्या है?
 (1) निरीक्षण एवं तर्क सिद्धान्त
 (2) शास्त्रीय अनुबन्धन का सिद्धान्त
 (3) समस्या समाधान
 (4) इनमें से कोई नहीं
23. किस शिक्षाविद ने “तत्परता का नियम, अभ्यास का नियम और प्रभाव का नियम” प्रस्तुत किया है?
 (1) हिलगार्ड (2) थॉर्नडाइक
 (3) स्पेंसर (4) रूसो

24. नेडप्लैण्डर का शिक्षण संबंधी सिद्धान्त सम्बद्ध है—
 (1) अन्तःक्रिया विश्लेषण
 (2) संसाधन विश्लेषण
 (3) संस्था विश्लेषण
 (4) इनमें से कोई नहीं
25. सक्रिया अनुकूलन संबंधी अधिगम सिद्धान्त के प्रतिपादक हैं—
 (1) पॉवलव (2) स्कीनर
 (3) कोहलर (4) थॉर्नडाइक

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(3)	2.	(3)	3.	(1)	4.	(4)	5.	(3)
6.	(1)	7.	(3)	8.	(2)	9.	(1)	10.	(4)
11.	(4)	12.	(4)	13.	(3)	14.	(1)	15.	(1)
16.	(1)	17.	(4)	18.	(2)	19.	(1)	20.	(2)
21.	(3)	22.	(2)	23.	(2)	24.	(1)	25.	(2)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (3) व्यवहारवादी दर्शन पूरी तरह अवलोकनात्मक व्यवहार पर निर्भर है और दिमागी क्रियाओं को नहीं प्राथमिकता देता। व्यवहारवादी मानते हैं कि अधिगम नए व्यवहार को अपनाने से अधिक कुछ नहीं है।
2. (3) कोहलर का औपचारिक अनुशासन सिद्धान्त नैतिकता के सम्बद्ध है। शेष तीन स्थानांतरण के सिद्धान्त से सम्बद्ध है।
3. (1) प्रायः एक परिस्थिति में सीखा गया ज्ञान अन्य परिस्थिति में उपयोगी सिद्ध होता है। उस ज्ञान का सुविधापूर्वक उपयोग किया जा सकता है। ज्ञान के इस प्रकार के उपयोग को धनात्मक या सकारात्मक या अनुकूल शिक्षा का स्थानांतरण कहते हैं।
4. (4) चर अनुपात सुदृढ़ीकरण : इसमें बच्चों को पुनर्बलन या प्रबलन दिया जाता है और कभी नहीं। यह विलोपन की गति को कम करता है, विलोपन को सबसे ज्यादा देर तक रोक सकता है जो अधिगम इसमें होता है, वह लम्बे समय तक याद रहता है।
5. (3) वाइगोत्स्की के अनुसार बालक वैज्ञानिक की भाँति अकेले काम नहीं करता बल्कि प्रशिक्षु की भाँति अन्यो के साथ मिलकर सामाजिक रूप से सीखता है।
6. (1) यह शिक्षा का एक ऐसा वातावरण तैयार करती है, जिसमें शिक्षार्थियों को सामाजिक विकास करने का पर्याप्त अवसर मिलता है।

7. (3) सीखने का सर्वाधिक उपयुक्त अर्थ है—व्यवहार में परिमार्जन। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, एक व्यक्ति किसी तथ्य या बदलाव से कुछ सीखकर स्वयं में परिवर्तन लाता है। इससे उसके व्यवहार में परिमार्जन भी होता है।
8. (2) शिक्षा के क्षेत्र में 'पाठ्यचर्या' शब्दावली विद्यालय का सम्पूर्ण कार्यक्रम, एवं पाठ्यक्रम जिसमें विद्यार्थी प्रतिदिन अनुभव प्राप्त करते हैं, की ओर संकेत करती है।
9. (1) समय-सारणी और बैठने की व्यवस्था में लचीलापन प्रगतिशील शिक्षा की विशेषता है क्योंकि यह शिक्षा यह बताती है कि शिक्षा बालक के लिए है न कि बालक शिक्षा के लिए।
10. (4) व्यावहारिक जीवन के लिए विद्यार्थियों को सक्षम तथा योग्य बनाना ही शिक्षा का सर्वोपरि उद्देश्य होता है।
11. (4) किसी बालक के चरित्र का विकास उसकी नैतिकता, बर्ताव एवं इच्छाशक्ति के द्वारा किया जा सकता है साथ ही उसके सामाजिक एवं पारिवारिक पर्यावरण का प्रभाव भी चारित्रिक विकास पर पड़ता है।
12. (4) आज्ञाकारिता, किसी विद्यार्थी की सबसे बड़ी विशेषता होने के साथ-साथ सर्वश्रेष्ठ गुण भी होता है।
13. (3) बहुत विनीत तथा स्वयं में सीमित जैसे गुण एक अच्छे मानसिक स्वास्थ्य के नहीं हैं। ऐसे व्यक्ति को दबू स्वभाव का माना जाता है।
14. (1) बर्दीमर, कोफका एवं कोह्लर इस सिद्धान्त के मनोवैज्ञानिक हैं। उनके अनुसार जब कोई प्राणी संपूर्ण स्थिति समझ लेता है तो सीखने संबंधी समस्या आसान हो जाती है।
15. (1) वह प्रक्रिया जिसके द्वारा संज्ञानात्मक संरचना और वृद्धि संशोधित की जाती है जीन प्याजे के अनुसार 'समायोजन' कहलाती है।
16. (1) बैडुरा के सामाजिक अधिगम के सिद्धान्त का निम्नलिखित चरण है :
अवलोकनात्मक → अवधानात्मक → धारणात्मक और अभिप्रेरणात्मक।
17. (4) जे.पी. गिल्फोर्ड के अनुसार 'अनुभव एवं प्रशिक्षण' द्वारा व्यवहार में परिवर्तन होना ही अधिगम है और अधिगम की यही संकल्पना सार्वदेशिक स्तर पर मानक रूप में स्वीकार्य हो गई।
18. (2) आदर्श धर्म-संस्कृति के कारण एवं परिणाम हैं। आदर्शवादी दर्शन में धार्मिक शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। गुरु-शिष्य संबंध, चरित्र निर्माण, गुरु-आश्रम, और राष्ट्रधर्म रक्षार्थ शिक्षा आदर्शवाद के घटक हैं।
19. (1) विज्ञान और तकनीकी यथार्थ एवं मूर्त विचार पर आश्रित है। तर्क एवं भौतिक रूप यथार्थ के आधार हैं। जिससे प्रगति व तरक्की पसंद शिक्षा फलीभूत होती है।
20. (2) अधिगम के प्रयत्न एवं त्रुटि प्रक्रिया का प्रतिपादन थॉर्नडाइक ने किया था। इन्होंने उद्दीपक अनुक्रिया सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार जब कोई उद्दीपक उपस्थित होता है। तो उसके प्रति अनुक्रिया करता है। अगर परिणाम अच्छे प्राप्त होते हैं। तो अनुक्रिया उस उद्दीपक के साथ जुड़ जाती है।
21. (3) कोह्लर का (Insightful Learning) इन्साइटफूल लर्निंग (अन्तर्दृष्टिपूर्ण अधिगम) में विद्यार्थी की अन्तर्दृष्टि अन्तर्दर्शन को प्राथमिकता दी गई है। अन्तर्दृष्टि निरीक्षण की भी एक लोकप्रिय एवं व्यवहारिक विधि है।
22. (2) रूसी मनोवैज्ञानिक पॉवलव ने अधिगम जनित शास्त्रीय अनुबंध का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। शास्त्रीय अनुबंध का यह सिद्धान्त कुत्ते, उसकी लार एवं घंटी प्रयोग से सम्बद्ध व प्रमाणित था।
23. (2) थॉर्नडाइक ने अधिगम के त्रिनियम : तत्परता, अभ्यास एवं प्रभाव के रूप में सृजित किया। सीखने की तत्परता, सीखने के उपरांत उसका अभ्यास व्यवहार में करना और तत्जनित प्रभावों का आंकलन आवश्यक बताया है।
24. (1) शिक्षण में अंतः क्रिया विश्लेषण श्रेणी पद्धति का विकास नेड फ्लैन्डर ने 1955-1960 के मध्य किया। यह तकनीक शिक्षक व शिष्य के मध्य केवल मौखिक अंतःक्रिया तक ही सीमित थी।
25. (2) **संक्रिया अनुकूलन** : संक्रिया अनुकूलन, विस्तृत रूप से B.F. Skinner (1940) द्वारा चूहों और कबूतरों पर किये गये असंख्य प्रयोगों का निष्कर्ष है। साधारण शब्दों में, संक्रिय अनुकूलन शारीरिक इन्द्रियों द्वारा किया गया व्यवहार का पुनर्बलन है जिससे कि इसकी ग्रहण करने की शक्ति बढ़ती है।

□□□

शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारक

(1) **समुचित नियोजन**— जब कोई शिक्षक पढ़ाने से पहले पाठ योजना तैयार कर लेता है तो शिक्षक को पढ़ना चाहिए, वह जितना अध्ययन करेगा, उतना अधिक पढ़ा पाएगा।

(2) **विद्यार्थियों की संलग्नता**— यदि विद्यार्थी प्रभावी रूप से सीखने में भाग लेता है तो शिक्षण के मिशन को पूरा किया जा सकता है। बच्चा तब सीख पाता है, जब उसे सीखने के लिए प्रेरित किया जाता है।

(3) **कक्षा का वातावरण**—यह बेहतर शिक्षण हेतु बड़ी बात है। यदि कक्षा का पर्यावरण शांत है तो शिक्षण को सफल बनाया जा सकता है।

(4) **शिक्षक की योग्यता/कौशल और अनुभव**—यदि शिक्षक को यह नहीं पता कि पढ़ाना क्या और कैसे पढ़ाना है, वह कक्षा में बेहतर और प्रभावी ढंग से नहीं पढ़ा सकता।

शिक्षण के उद्देश्य

शिक्षण के उद्देश्य वे देखे जाने वाले बदलाव हैं जो हम विद्यार्थी में देखना चाहते हैं। वे बदलाव शिक्षा में देखे जाने चाहिए जो इस तरह प्रदर्शित किए जाते हैं—

(1) बच्चों को खुश, आत्मविश्वासी और उत्साहित रहने में मदद करना।

(2) कौशल के विकास को प्रोत्साहित करना और जीवन भर सीखते रहने की विचारधारा को बढ़ाना।

(3) यह सुनिश्चित करना कि राष्ट्र निर्माण की पृष्ठभूमि में किसी भी तरह के भेदभाव को सहन नहीं किया जाएगा।

(4) रचनात्मकता एवं सृजनशीलता को प्रोत्साहित करना।

(5) सभी विद्यार्थियों के लिए समान अवसरों को सुनिश्चित करना।

(6) उच्च गुणवत्ता वाले शिक्षण और अधिगम के अनुभव को प्रदान करना जिससे विद्यार्थी पाठ्यक्रम के सभी क्षेत्रों को व्यापक नियंत्रित शिक्षा और विभिन्नताओं के साथ समझ पाएँगे।

मूल्य आधारित शिक्षा—यह आध्यात्मिक और सांस्कृतिक अवधारणाओं के अंतर्गत, नैतिक और नवीन शिक्षा व्यवस्था का मेल देखने को मिलता है। ज्ञान को प्रदान करने की यह पुरानी परंपरा है।

(1) इससे विद्यार्थियों को अपनी प्रतिभाओं को खोजने में मदद मिलती है और यह अवसर उन्हें पूर्ण रूप से विकसित करने में सहायक है।

(2) उत्कृष्टता और निर्देशन द्वारा तैयार प्रतिस्पर्धा का माहौल देना।

शिक्षण की प्रकृति

शिक्षण की प्रकृति किसी के मस्तिष्क में पूरी तरह से स्पष्ट होनी चाहिए। शिक्षण की प्रकृति में सम्मिलित है—

(1) **शिक्षण, जिसे पढ़ाया जाना चाहिए**—मूलभूत अवधारणा यह है कि बच्चा उससे सीखता है कि उसे शिक्षक द्वारा क्या पढ़ाया जा रहा है क्योंकि वह शिक्षक के पढ़ाने में रुचि रखता है और अभिप्रेरित है।

(2) **शिक्षण सूचना प्रदान करती है**—बहुत से तथ्य जिन्हें विद्यार्थियों को जानना होता है, वे शिक्षक प्रदान करते हैं। शिक्षक इस तरह से पढ़ाते हैं कि वह कम महत्ता वाले भाग को भी बिना कठिनाई से पढ़ा दें जो कि महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। न केवल पुस्तक के संबंध में शिक्षक कई नैतिक मूल्य भी प्रदान करते हैं।

(3) **शिक्षण उत्प्रेरक व अभिप्रेरक है**—बिना ज्ञान के मनुष्य पशु की तरह है। मनुष्य की सहज प्रकृति है कि जो भी वह इच्छा रखता है, उसे प्राप्त करे। अभिप्रेरित शिक्षक वे अभिप्रेरक हैं जो अधिगम को प्राप्त करने हेतु अभिप्रेरित हैं।

(4) **शिक्षण वातावरण के साथ सामंजस्य बैठाता है**—शिक्षक का प्राथमिक लक्ष्य बच्चों को व्यवहार करना सिखाना है जैसे किस तरह से प्रतिक्रिया देनी चाहिए और किस तरह से नहीं। ताकि उन्हें परिस्थितियों में प्रतिक्रिया देना समझ आ सके। शिक्षक के अभाव में पर्यावरण या विद्यालय में रह पाना संभव नहीं हो पाता है।

(5) **शिक्षण अधिगम की व्यवस्था है**—अधिगम का संगठन शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में संबंध स्थापित करना और कई प्रक्रियाओं को जोड़ना है। अतः शिक्षण को अधिगम की व्यवस्था के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है।

मूल रूप से पाठ को कैसे तैयार करना है, कौन से उदाहरण और कहानियों का प्रयोग करना है, नियोजित रूप से यह जानकारी देना शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया है।

(6) **शिक्षण सृजनात्मक प्रक्रिया है**—जैसा कि कहा जाता है कि बच्चा जन्मजात रचनाकार होता है। वह रचनाकार या विनाशकर्ता बनेगा, यह उसकी शिक्षा पर निर्भर है।

शिक्षण मस्तिष्क के छोटेपन को कम करता है और बच्चे को कई जीवन में विकल्प लेने के लिए तैयार करता है। इस तरह बच्चा कई अवसरों का प्रयोग कर सकता है और रचनाकर्ता बन सकता है।

(7) **शिक्षण निर्देशन है**—बहुत सी किताबी बातें बच्चा ग्रहण नहीं कर पाता यदि शिक्षक उसकी व्याख्या न करें। शिक्षक विद्यार्थियों के मस्तिष्क की बाधाओं को तोड़ने में सहयोग करता है।

शिक्षक व्यवहार के परिमार्जन हेतु प्रमुख प्रणाली
(Systems for modification of Teachers Behaviour)

(क) सूक्ष्म शिक्षण (Micro Teaching)	सूक्ष्म शिक्षण विधि का विकास स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ऐलन द्वारा शिक्षकों में विभिन्न शिक्षण कौशल विकसित करने के लिए 1963 ई. में किया गया। सूक्ष्म शिक्षण समस्त शिक्षण प्रक्रिया को लघु क्रियाओं में बाँटना है।
(ख) अनुरूपित प्रशिक्षण या भूमिका निर्वहन (Simulated Teaching or Role Playing)	प्रो. नेड ए. फ्लेंडर्स (1959) का बहुचरणीय अन्तःक्रियात्मक मॉडल।

अच्छे शिक्षक के लक्षण

विषय का ज्ञान और प्रस्तुति की कला :

शिक्षक का स्थान इस प्रक्रिया में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। विषय का ज्ञान होना शिक्षण और कक्षा को प्रभावित करता है। इसके अभाव में कोई शिक्षक प्रभावी ढंग से नहीं पढ़ा सकता जिससे विद्यार्थी अपना ध्यान खो देते हैं। इसीलिए शिक्षक को मनोविज्ञान, बाल मनोविज्ञान और शैक्षिक मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए।

शिक्षक को अच्छा कौशल, शिष्टाचार का विकास करना चाहिए, क्योंकि शिक्षण का उद्देश्य इच्छित अधिगम है। शिक्षक की गुणवत्ता को निम्न आधारों से मापा जा सकता है—

- (1) शिक्षक को कक्षा में घनिष्ठता स्थापित करनी चाहिए।
- (2) शिक्षक को अपने सभी विद्यार्थियों को एक समान समझना चाहिए।
- (3) शिक्षक को प्रत्येक विद्यार्थी के अंतर को समझना चाहिए।

- (4) शिक्षक को समन्वित व समावेशी होना चाहिए।
- (5) शिक्षक चेतना से भरा और रुचिपूर्ण होना चाहिए।
- (6) विद्यार्थियों को देखते हुए शिक्षक को शिक्षण पद्धतियों और अच्छी विचारधारा का प्रयोग करना चाहिए।
- (7) शिक्षक को स्वयं पढ़ने और पढ़ाने के तरीके व व्यवहार में अंतर को कम करना चाहिए।
- (8) शिक्षक को नरम हृदय व सहानुभूति से भरा होना चाहिए।
- (9) शिक्षक का उद्देश्य बच्चे के जीवनस्तर में सुधार लाना होना चाहिए।
- (10) शिक्षक को बच्चे को जिज्ञासु बनाना, अभिप्रेरित करना चाहिए व चुनौतियों का सामना कराना सिखाना चाहिए।
- (11) शिक्षक की सोच व्यापक होनी चाहिए।
- (12) शिक्षक को उत्पादकता पर ध्यान देना चाहिए।

(12) पाठ योजना का निष्पादक—कक्षा मुख्य रूप से पाठ योजना पर निर्भर होती है। जब पाठ-योजना को अच्छी तरह तैयार नहीं किया जाता तब उससे कक्षा में अशांति उत्पन्न होती है और पढ़ाया नहीं जा सकता। पाठ योजना में उद्देश्य, विषय का चुनाव, पूछे जाने वाले प्रश्न, विषय की सरलता, कार्य, गृहकार्य, शिक्षा सामग्री दिखाने से पहले के प्रश्न सम्मिलित हैं। शिक्षण के उद्देश्यों को पूरा करने हेतु पाठ योजना महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

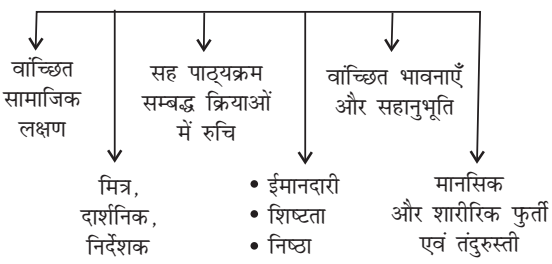
एक पाठ योजना की सभी क्रियाओं को तीन चरणों में विभाजित किया गया है—शिक्षण अधिगम के पूर्व क्रियाएं, शिक्षण अधिगम के दौरान क्रियाएं तथा शिक्षण अधिगम के पश्चात क्रियाएं। ये क्रियाएं पारम्परिक क्रियाओं/कदमों से मिलती-जुलती हैं। जैसे—प्रस्तावना, प्रस्तुतीकरण तथा मूल्यांकन।

‘बच्चे कैसे सीखते हैं’ तथा ‘अधिकतम अधिगम को बढ़ावा देने के क्या रास्ते हैं’ कक्षा प्रक्रियाओं के विभिन्न प्रतिस्पर्धी मुद्दे चर्चा का केन्द्र रहे हैं। शिक्षण, शिक्षण-अधिगम सामग्री, कक्षा प्रबंधन, निर्धारण एवं मूल्यांकन तथा अन्य ऐसे मुद्दे जो कि कक्षा प्रक्रियाओं से संबंधित हैं जिसको ऐसे तत्वों के रूप में पेश किया गया है जो अध्येताओं के अधिगम के लिए प्रेरणादायक स्थितियां हैं।

शिक्षण की अवधारणा में परिवर्तन—वर्तमान समय में प्रवृत्ति ‘अध्यापक-प्रशिक्षण’ को छोड़ अध्यापक-शिक्षा की ओर बढ़ी है जिसके फलस्वरूप प्रशिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों को ‘शिक्षण का अधिक ज्ञान एवं कौशल’ देने से संतुष्ट नहीं है। शिक्षण एक पूरी तरह शिक्षित तथा पूर्ण विकसित मनुष्य, योग्य नागरिक और व्यावसायिक हो इसको प्रशिक्षण संस्थाओं के कार्यक्रम में जोड़ा जा रहा है। अध्यापकीय शिक्षा के क्षेत्र में जो अत्यधिक ज्ञान का विस्तार हुआ है, इसकी मांग बढ़ रही है। अवयव-विधि (Component/Factor Method) की अवस्था अध्यापकीय शिक्षा के क्षेत्र में नये आयाम लायी है। शिक्षण की अवधारणा बदल रही है। आज शिक्षा केवल ज्ञान देने तथा सूचना प्रदान करने तक ही सीमित नहीं है। वह सीखने वालों को इस तरह से सहायता कर रही है कि वे स्वयं ही बदलते हुए समाज में अपना कौशल विकसित कर सकें।

शिक्षण को पेशेवर के रूप में देखने से पहले की पूर्वापेक्षाएँ

- (1) विषय पर विशेषज्ञता
- (2) बाल मनोविज्ञान की जानकारी
- (3) विभिन्न शिक्षण पद्धतियों का ज्ञान
- (4) शिक्षण के प्रति उत्साह
- (5) आपके पास निम्न गुण होने चाहिए:



शिक्षण की आचार संहिता (Ethics or Code of Conduct)

इसका अर्थ है कि किसी भी कार्य में निष्पक्षता, स्पष्टता और पारदर्शिता होनी चाहिए।

डॉक्टर, समाज सेवक और अन्य पेशों की तरह शिक्षकों को भी कुछ नैतिक मानकों का पालन करना होता है। संहिता में शिक्षकों का विद्यार्थियों, माता-पिता, सहकर्मियों और स्वयं के लिए कुछ सामाजिक बाध्यताएँ होती हैं।

शिक्षकों के लिए नैतिकता क्यों महत्वपूर्ण है?

क्योंकि वे बच्चों के दैनिक जीवन पर बहुत प्रभाव डालते हैं अपने उत्तरदायित्वों के बीच वे आदर्श बनते हैं और उन्हें विद्यार्थियों, अभिभावकों, सहकर्मियों के सामने नैतिक व्यवहार को दर्शाना होता है जिसे वे हर समय पर निम्न बातों पर ध्यान रखते हुए कर सकते हैं—

(1) कोई भावनात्मक जुड़ाव नहीं अर्थात् निष्पक्षता—शिक्षक का कार्य सभी विद्यार्थियों को उत्तम शिक्षा देना होता है इसीलिए उन्हें निष्पक्ष होना चाहिए और पक्षपात नहीं करना चाहिए। कक्षा से बाहर विद्यार्थियों के संपर्क में कम से कम रहना चाहिए और केवल कक्षा गतिविधियों पर ध्यान देना चाहिए।

(2) विद्यार्थी की सुरक्षा—इसके अतिरिक्त, शिक्षक का कार्य विद्यार्थियों को नैतिक मूल्य सिखाना और उन्हें सुरक्षित रखना भी है। शिक्षक को उन्हें किसी भी प्रकार के शोषण से बचाना है। यदि शिक्षक को शोषण का संदेह हो तो उसे उचित प्राधिकरण में इस मामले को लेकर जाना चाहिए।

(3) सहकर्मियों के साथ सम्यक व्यवहार—सुरक्षित और सकारात्मक अनुभवों के लिए शिक्षक को अन्य सहकर्मियों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। सकारात्मक उदाहरणों को स्थापित करने के लिए उन्हें किसी भी प्रकार की असहमति को अकेले में चर्चा करनी चाहिए और अन्य शिक्षकों की बुराई विद्यार्थियों के सामने नहीं करनी चाहिए।

पाठ योजना के विभिन्न उपागम
(Various Approaches to Lesson Planning)

(क) इकाई उपागम (गेस्टाल्ट विचारधारा पर आधारित) (Unit Approach Based on Gestalt Approach)	एच.सी. मॉरीसन (H.C. Morrison)
(ख) पंच चरण उपागम (Five Steps Approach)	हरबर्ट (Herbert)
(ग) मूल्यांकन उपागम (Evaluation Approach)	बी.एस. ब्लूम (B.S. Bloom)
(घ) ग्लोवेरियन उपागम (Glover's Approach)	ए.एच.टी. ग्लोवर (A.H.T. Glover)

शिक्षण के तीन स्तर (Three levels of Teaching) और सम्बद्ध शिक्षा शास्त्री (Educationists associated 3)

(क) स्मृति स्तर (Memory Level)	बिगी (Biggie)
(ख) अवबोधन स्तर (Understanding Level)	हरबर्ट (Herbert)
(ग) चिंतन अथवा मनन स्तर (Reflective Level)	मोरिसन (Morrison) हण्ट (Hunt)

अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की वर्गीकरण प्रणाली से जुड़े शिक्षा शास्त्री
(Educationist Associated with Taxonomy of Instructional Objectives)

(क) ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive Objectives)	बी.एस. ब्लूम व अन्य, 1956 (B.S. Bloom & Others, 1956)
(ख) भावात्मक उद्देश्य (Affective Objectives)	क्रैथवोहल व मासिया, 1964 (Krathwohl and Masia, 1964)
(ग) मनोशारीरिक/मनोगामक उद्देश्य (Psychomotor or Conative Objectives)	सिंपसन, 1966 तथा हेरो, 1972 (Simpson, 1966 & Harrow)

शिक्षण के विभिन्न सिद्धांत (Various Theory of teaching)	
(i) अनुदेशन संबंधी संज्ञानात्मक सिद्धांत (Theory of Instruction)	जे. एस. ब्रूनर (J.S. Bruner)
(ii) भूमिका निर्वहन प्रतिमान (Role Playing Model)	फैनी एवं जॉर्ज शेफल (Fannie & George)
(iii) दुहराव एवं अभ्यास का शिक्षण सन्नियम (Principle of Repetition and Exercise)	थॉर्नडाइक (Thorndike)
(iv) प्रतिपुष्टि और पुनबर्लन का सन्नियम (Principle of Feedback and Reinforcement)	स्किनर (Skinner)
(v) बुनियादी प्रतिमान (Basic Teaching Model)	राबर्ट ग्लेसर, 1962 (Rober Glaser, 1962)
(vi) संज्ञानात्मक विकास प्रतिमान (Congnitive Development Model)	जीन पियाजे-स्विटजरलैंड (Jean Piaget - Switzerland)
(vii) समूह अन्वेषण प्रतिमान (Group Investigation Model)	जॉन ड्यूवी (John Dewey)
(viii) आगमन प्रतिमान (Inductive Model)	हिल्डा ताबा (Hilda Taba)
(ix) सक्रिय अनुबंधन के द्वारा आत्मनियंत्रण प्रतिमान (Self Control Through Operant Conditioning)	बी.एफ. स्किनर (B.F. Skinner)
(x) पूछताछ या अन्वेषण प्रशिक्षण प्रतिमान (Inquiry Training Model)	रिचर्ड सचमैन (Richard Suchman)
(xi) सम्प्रत्यय उपलब्धि प्रतिमान (Concept Attainment Model)	जे. ब्रूनर (J. Bruner)
(xii) अग्रिम संगठन प्रतिमान (Advance Organizer Model)	ऑसुबेल (Ausubel)
(xiii) स्वामित्व अधिगम प्रतिमान (Mastery Learning Model)	जॉन बी. कैरोल (John B. Carrol)
(xiv) प्रयोगशाला विधि प्रतिमान (Laboratory Method Model)	बैथेल एवं मेने (Bethal and Maine)
(xv) सिनेक्टिक्स प्रतिमान (Synectics Model)	विलियम जे.जे. गोर्डन (William J.J. Gordan)

भारत में शिक्षण पद्धतियों का उद्गम

उद्देश्य—किसी को आंतरिक प्रगति, चरित्रता और आत्मसंतोष को प्राप्त करने की प्रक्रिया के रूप में लोगों के व्यक्तित्व का विकास करना।

प्राचीन भारत में शिक्षा तीन प्रक्रियाओं में है—

निर्देशात्मक, व्याख्यान एवं विमर्श विधि निर्देश पद्धति में गुरु ऊपर बैठते हैं और शिक्षक नीचे।

वाचन-श्रवण—सत्य को सुनना जो भी गुरु बोले। इस ज्ञान को स्तुति कहते हैं जो कानों से सुनी जाती है और जो लेखन के रूप में देखने को नहीं मिलती यही इसका सार है।

मनन—यह लोगों को सोचने पर बाध्य करती है। यह शिक्षकों द्वारा प्रदान की जाती है परन्तु ग्रहण लोगों पर निर्भर करता है।

निदिध्यासन—यह लोगों द्वारा ग्रहण किए गए अर्थ पर पूरी तरह निर्भर है। वे सत्य पर आधारित जीवन जीते हैं जिनको शब्दों में नहीं बताया जा सकता है।

प्राचीन भारत में शिक्षण की विषयवस्तु

शुरु में मुख्य विषय वेदों का ज्ञान प्राप्त करना था जिसमें कई घंटों तक जब तक कि विशेषज्ञता प्राप्त न हो जाए विद्यार्थी छंदों को

दोहराते थे। यह स्मृति की उपयुक्तता को सुनिश्चित करता था। बाद में निष्कर्ष को छह सिद्धांतों द्वारा बताया गया है—

- (1) धर्मशास्त्रों का अध्ययन
- (2) सम्यक उच्चारण (शिक्षा)
- (3) छंदशास्त्र का ज्ञान
- (4) शब्दोत्पत्ति विज्ञान
- (5) व्याकरण
- (6) पंचांग (क्योंकि पंचांग पढ़ने का विषय था)

भारत में पूर्व आधुनिक शिक्षण विधियां

- शिक्षक केन्द्रित कक्षा
- शिक्षक ज्ञान देने का माध्यम है, फिर सहायक
- चॉक और संवाद (टॉक) पद्धतियाँ
- अनुशासित कक्षा
- सामूहिक अधिगम
- परीक्षा और परिणामों पर अधिक बल देना न कि अवधारणा की समझ पर

उद्देश्यपरक क्रियाकलाप और आंकलन के मध्य अनुचित सामंजस्य

शिक्षण विधियाँ (Methods of Teaching)			
प्रकृतिवाद	प्रयोजनवाद	आदर्शवाद	यथार्थवाद
1. करके सीखना (Learning by doing) 2. अपने अनुभव द्वारा सीखना (Learning through self-experience) 3. खेल द्वारा सीखना (Playway methods) 4. इंद्रियों द्वारा सीखना (Education through senses) 5. अवलोकन तथा प्रयोग द्वारा सीखना (Learning through observation and experimentation) 6. प्रत्यक्ष विधि (Direct method) 7. ह्यूरिस्टिक विधि (Heuristic method) 8. डाल्टन विधि (Dalton method) 9. माण्टेसरी विधि (Montessori method) 10. प्रयोगात्मक अभ्यास (Practical exercise) 11. सह-शिक्षा (Co-Education) 12. कुछ सूत्रों (Maxims) का प्रयोग जैसे सरल से जटिल की ओर (Simple to complex), निश्चित से अनिश्चित की ओर (Definite to indefinite) प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर (Direct to indirect) अनुभव से विचारशील की ओर (Empirical to rational)	1. क्रिया द्वारा सीखना (Learning by doing) 2. अनुभव द्वारा सीखना (Learning through experience) 3. प्रोजेक्ट विधि (Project method) 4. प्रयोगात्मक विधि (Experimental method) 5. एकीकरण की विधि (Method of integration)	1. प्रश्न-विधि (Question method) 2. वार्तालाप विधि (Conversational method) 3. निगमन तथा आगमन विधि (Inductive and deductive method) 4. खेल-कूद विधि (Playway method) 5. भाषाण, वाद-विवाद तथा गोष्ठी विधियाँ (Lecture, Debate and discussion methods) 6. कथा-विधि तथा नाटक (Story telling and Dramatics) 7. प्रयोग तथा अभ्यास विधि (Exercise and practice) 8. पत्र-व्यवहार द्वारा शिक्षा (Education through Correspondence) 9. पुस्तक पठन विधि 10. किण्डर गार्टन विधि 11. बुनियादी तालिम	1. निगमन विधि (Inductive method) 2. सहसम्बन्ध-विधि (Correlation Method) 3. निरीक्षण एवं प्रयोगात्मक विधि 4. ज्ञानेन्द्रियों, प्रत्यक्ष-अनुभव तथा यात्राओं द्वारा शिक्षा। (Sensation, Direct-Experience & Field-Trips)

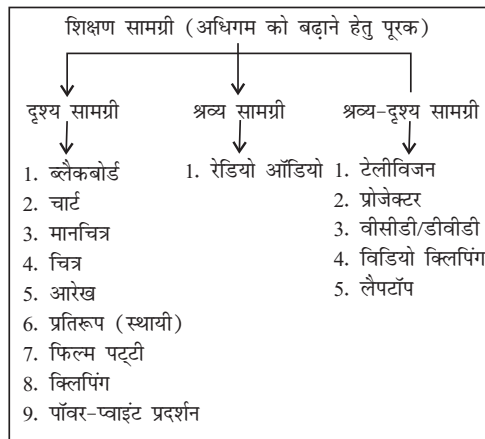
भारत में आधुनिक शिक्षण

- तकनीक प्रयुक्त कक्षा (ICT)
- सतत और व्यापक मूल्यांकन (CCE)
- परस्पर पाठ्यक्रम संबंध (शैक्षिक तथा गैर शैक्षिक)
- अन्वेषण आधारित अधिगम
- कौशल निर्माण (Skills Building) पर जोर देना
- संक्षिप्त एवं अंतःक्रियात्मक सत्रों का प्रयोग (Interactive sessions)
- सहकारी अधिगम
- विभेदपूर्ण अधिगम
- क्रियाकलाप आधारित अधिगम
- समस्या आधारित अधिगम

मैरीलेन वाइमर के अनुसार सीखने की अधिगम-केन्द्रित उपागम में विषय वस्तु विद्यार्थी को समझ विशेष के अनुकूल विशेष चिंतन या प्रश्न के सम्बद्ध व्यावहारिक विषय और विषयोन्मुख अधिगम को विकसित करने तथा इसके अर्थ व तात्पर्य की छानबीन से सम्बद्ध है।

शिक्षण की खोजी विधि को अन्वेषी विधि भी कहते हैं। अन्वेषणात्मक या अन्वेषी विधि विद्यार्थी को अनुदेशित करने की वह विधि या उपागम है जिससे विद्यार्थी अपने परिवेश व वातावरण से अन्तःक्रिया के आधार पर छानबीन, अन्वेषण विषय वस्तु को जोड़-तोड़ कर प्रश्नों के समाधानों, विविध विवादों या प्रयोग द्वारा निष्पादित करता है।

उक्त शिक्षण पद्धति को कैसे प्राप्त किया जा सकता है—शिक्षण सहायक सामग्रियां (TLM) द्वारा :



शिक्षण सहायक सामग्री का वर्गीकरण कुछ अन्य तरीकों पर भी आधारित है। जो इस प्रकार है—1. प्रक्षेपित सहायक सामग्री, 2. अप्रक्षेपित सहायक सामग्री, 3. अनुभव आधारित सहायक सामग्री :

- (क) प्रक्षेपित सहायक सामग्री—चलचित्र, एपीडियास्कोप, माइक्रो प्रोजेक्टर, ओवर हेड प्रोजेक्टर, एलसीडी प्रोजेक्टर आदि।
- (ख) अप्रक्षेपित सहायक सामग्री—चॉक बोर्ड, फैंल्ट बोर्ड, बुलेटिन बोर्ड, फोटोग्राफ, पोस्टर, मानचित्र, चार्ट, ग्लोब, नमूने और व्याख्या सहित पाठ्यपुस्तकें आदि अप्रक्षेपित सहायक सामग्री के उदाहरण हैं।
- (ग) अनुभवात्मक सहायक सामग्री—क्षेत्रीय भ्रमण, शैक्षिक दौरा, महत्वपूर्ण संस्थानों की यात्रा, अनुप्रयोगों का अवलोकन, प्रदर्शन और प्राकृतिक असाधारण दृश्य आदि अनुभवात्मक सहायक सामग्री के उदाहरण हैं।

- शब्द *Realia* यह पुस्तकालय वर्गीकरण प्रणाली से रूपांतरित शब्द है। शब्द *Realia* का तात्पर्य (सम्बन्ध) यथार्थ या वास्तविक (*Real*) जगत की उन त्रिविमीय आकृतियों जैसे सिक्के, औजार और वस्त्र आदि से है जिनका प्रकाशित सामग्री के क्रम में सरलता से वर्गीकरण नहीं किया जा सकता। ये या तो मानव निर्मित (शिल्पकृति, औजारों, बर्तन आदि) या प्रकृति प्रदत्त (निदर्शन नमूने आदि), प्रायः पुस्तकालय या संग्रहालय के लिये उधार लिये गये, खरीदे गये या विद्यालय को दान के रूप में प्राप्त, शिक्षक द्वारा, कक्षा शिक्षण अथवा प्रदर्शनी में प्रयोग किये जा सकते हैं। पुरालेख और पाण्डुलिपि संग्रह, प्रायः प्राप्त किये जाने वाले स्मृति चिह्न जैसे बिल्ले (बैच), प्रतीक चिह्न, पदचिह्न, आभूषण, चमड़े का सामान, सूची शिल्प आदि, उपहारों से जुड़े व्यक्तिगत प्रपत्र।
 - चित्रावली—"*Diorama*" का तात्पर्य, शैक्षिक या मनोरंजन के उद्देश्य से प्रयोग किये जाने वाले ऐतिहासिक घटनाओं को पारम्परिक रूप से दर्शाने वाले दृश्य, प्राकृतिक दृश्य या नगरचित्र, के अंशतः त्रि-विमीय, पूर्ण आकार प्रतिरूप या मानक प्रतिरूप से लिया जाता है। *Diorama* का निर्माण कैसे किया जाता है?
- Diorama* का निर्माण गते, थर्माकोल, मिट्टी, रेडीमेड कृत्रिम सामग्री जैसे पौधे, झाड़ियों, शाकों आदि की सहायता से किया जाता है। भूगोल की अधिकांश पुस्तकों में *Diorama* के प्रयोग के लिये पर्याप्त सम्भावनाएँ उपलब्ध हैं। उदाहरण के लिये रेगिस्तानों में जीवन।

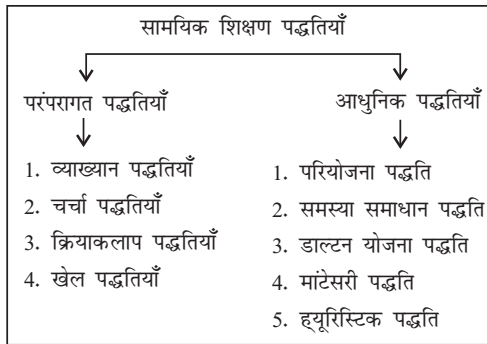
शिक्षण सामग्री की महत्ता

- यह सभी प्रकार के विद्यार्थियों को सम्मिलित करता है—जैसे धीमे-औसत-उत्तम/उत्कृष्ट विद्यार्थी।
- यह अधिगम संबंध को मजबूत बनाता है जिससे ज्ञान को आसानी से ग्रहण किया जा सकता है।
- अभिप्रेरण—यह विद्यार्थियों के लिए पाठ को आसानी से सीखपाने के लिए अच्छा अभिप्रेरण है।

- स्पष्टीकरण—यह सहज रूप है और सभी इंद्रियों का उपयोग करता है।
- यह रटने की आदत को कम करता है।
- यह कक्षा को जीवंत बनाता है। यह ध्यान को भटकाने से बचाता है।
- यह अधिगम के प्रत्यक्ष अनुभव का रूप है अतः इससे सहयोग मजबूत बनता है।

शिक्षण की सामयिक विधियाँ

शिक्षण का उद्देश्य अधिगम को सुविधाजनक बनाना है। शिक्षण तकनीकों में वृद्धि करने के लिए सामयिक पद्धतियों को जानना आवश्यक है—



शिक्षण हेतु परम्परागत पद्धतियाँ

व्याख्यान पद्धति : प्राचीनतम विधि

- यह सभी संस्थानों में प्रयुक्त होने वाली सबसे पुरानी पद्धति है।
- यह सूचनाओं के प्रसार का एकमार्गीय तरीका है।
- विद्यार्थियों के सम्मेलन में श्रवण और अवधारणाओं व तथ्यों को प्राप्त करना है।

व्याख्यान पद्धति के लाभ

- इस पद्धति में एक समय में कई विषयों को पढ़ाया जा सकता है।
- इसमें प्रयोगशाला या अन्य उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती।
- इसमें सामग्री की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि विद्यार्थी पूर्ण रूप से शिक्षक पर विश्वास करते हैं।
- विद्यार्थियों के श्रवण कौशल का विकास होता है।
- इस पद्धति में मौखिक व्याख्यान तर्कपूर्ण ढंग से दिया जाता है और विषय को समझाना आसान होता है।
- यह भाषा को सीखने और उसका विकास करने में सहायक है।

व्याख्यान पद्धति की हानियाँ

- मनोवैज्ञानिक रूप से विद्यार्थियों में कक्षा में अंतर देखने को मिलता है और प्रत्येक विद्यार्थी अलग होता है। यह पद्धति सभी के लिए लाभदायक नहीं होती।

- कक्षा में सभी का ध्यान खींचना मुश्किल होता है।
- जरूरी नहीं सभी विद्यार्थी उनका अनुसरण करें।

परिचर्चा पद्धति

यह विद्यार्थियों को पढ़ाने, उनकी समस्याओं को सुलझाने और शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से शिक्षक और विद्यार्थी के मध्य विचारों के खुले आदान-प्रदान की पद्धति है।

- यह छोटे समूह में प्रयुक्त होती है। पूरी कक्षा छोटे विषयों पर बातचीत करती है।
- विद्यार्थी एक-दूसरे से ज्ञान का आदान-प्रदान करते हैं।

परिचर्चा पद्धति के लाभ

- (1) शिक्षण के स्थान पर अधिगम पर बल देती है अतः यह अधिक प्रभावी है।
- (2) चर्चा से नए विचारों और मतों का मार्ग खुलता है और यह सोचने और निष्कर्षों तक पहुँचने का एक स्वतंत्र तरीका है।
- (3) चर्चा के दौरान विद्यार्थियों को अपने विचारों को देख पाने का प्रशिक्षण मिलता है जिससे अवधारणाओं की समझ गहरी होती है।
- (4) चर्चा के दौरान विद्यार्थी अपने विचार और मत रखते हैं जिससे विद्यार्थियों को स्वयं को व्यक्त करने का अवसर मिलता है।
- (5) उसमें विद्यार्थियों को अलग-अलग लोगों के विचार में अंतर को समझने का मौका मिलता है जिससे उनमें सहनशक्ति का भी विकास होता है।

- (6) यह कक्षा को जीवंत बनाती है और विद्यार्थियों को सक्रिय रूप से जोड़ती है और सीखना रुचिपूर्ण बनाती है।

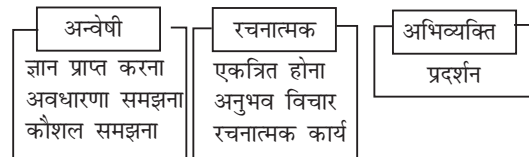
परिचर्चा पद्धति की हानियाँ

- इसके द्वारा सभी विषयों को नहीं पढ़ाया जा सकता।
- यह प्राथमिक स्तर के बच्चों के लिए प्रभावी नहीं है।
- सभी विद्यार्थी एक समय पर भाग नहीं ले सकते।
- कक्षा में शिक्षक का अधिकार असफल होता है।
- विद्यार्थियों द्वारा चर्चा के सभी नियमों का पालन नहीं किया जाता।

शिक्षण की क्रियाकलाप पद्धति

यह वह तकनीक है जिसे शिक्षकों द्वारा अपने शिक्षण की पद्धतियों पर क्रियाकलापों द्वारा बल दिया जाता है जिसमें विद्यार्थी सख्ती के साथ भागीदार बनते हैं। यह विद्यार्थी केन्द्रित धारणा है।

क्रियाकलापों के प्रकार



क्रियाकलाप जिन पर ध्यान दिया जाता है :

अनुभव	स्मृति	समझ-बोध	प्रस्तुतीकरण
देखना	● क्रम करना	● संरचना	यह आधारित हैं:
अवलोकन	● नियमित	● क्रम	● पाठ्यक्रम
तुलना	● पैटर्न ढूँढ़ना	● वर्गीकरण	● आवश्यकता
वर्णन	● ज्ञान से	● निर्माण	● विचार
प्रश्न करना	● संबंधित	● समाधान	● रुचि
चर्चा	● होना	● योजना	● ज्ञान
अनुसंधान	● ग्रहण करने	● अनुमान	● कौशल
रिपोर्ट	● के विभिन्न	● प्रतिपादन	● अभिनय
संकलन	● माध्यमों का	● ग्रहण	● संवाद
चयन	● प्रयोग।	● सार	● नाटक मंचन
परीक्षण		● मूल्यांकन	● लेखन
श्रवण		● जाँचना	● सुनना
चित्रण		● व्याख्या	● महसूस करना
पठन		● शिक्षण	● चखना
आंकलन			● कल्पना
अनुकरण			

क्रियाकलाप आधारित पद्धति में शिक्षक की भूमिका

- नियोजक, संस्थापक, मूल्यांकनकर्ता
- सहयोगी
- निर्णायक
- ज्ञान देने वाला
- अनुशासन में लाने वाला

क्रियाकलाप आधारित अधिगम के लाभ

- करके सीखने (Learn by doing) के क्रम में ज्ञानेंद्रियां प्रयुक्त
- यह मनोवैज्ञानिक नियमों पर आधारित पद्धति है।
- यह विद्यार्थी केन्द्रित गतिविधि आधारित पद्धति है।
- यह विद्यार्थियों में समाधान करने की पद्धति का विकास करता है।
- यह प्राकृतिक और मानवनिर्मित अभिप्रेरण की रुचि को बढ़ाता है।
- यह आत्मविश्वास और आत्म अनुशासन और सहयोग की भावना का विकास करने में मदद करता है।
- यह वास्तविक अनुभवों को कराता है। यह बच्चों में आत्मनिर्भरता लाता है।
- यह सामाजिक गुणों का विकास करने में सहायक है।
- यह व्यवस्था, नियोजन और क्रम से विषय को समझने में सहायक है।

क्रियाकलाप आधारित अधिगम की हानियाँ

- इसमें आवश्यक सामग्री को जुटाना मुश्किल होता है। सभी कक्षाओं में सामूहिक क्रियाकलाप नहीं हो पाते।
- इसके लिए लंबी योजना और प्रक्रिया की आवश्यक होती है।

- इसे करने से पहले शिक्षकों को विषय संबंधी पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए व इस कार्य को करने के लिए कौशल की आवश्यकता है।

- इसकी प्रक्रिया का उद्देश्य केवल तभी पूर्ण किया जा सकता है जब योजना को बिना किसी त्रुटि के किया जाए।

खेल पद्धतियाँ (प्ले-वे या किंडरगार्टन या बालवाड़ी पद्धति)

यह हेनरी काल्डवेल कुक के दार्शनिक विचार पर आधारित है उनके अनुसार अच्छा कार्य अक्सर सहज प्रयासों और मुक्त रुचियों का परिणाम होता है न कि बलपूर्वक किए गए कार्य का।

- इसमें खेल की भावना से पढ़ाया जाता है। इसमें बच्चों को स्वतंत्र रह कर सहजता से क्रियाकलापों में सम्मिलित किया जाता है और पढ़ाया जाता है।
- इन्हीं विशेषताओं के कारण इसे खेल पद्धति कहा जाता है।
- इस पद्धति का उद्गम फ्रोबेल ने किया था “खेलना किसी मनुष्य का सबसे पवित्र और सर्वाधिक आध्यात्मिक क्रिया. कलाप है। इस स्थिति में, एक समय में मनुष्य की आंतरिक छिपा हुआ प्राकृतिक जीवन संपूर्ण रूप में सामने आता है। इसीलिए इससे खुशी, संतोष, आंतरिक शांति का अनुभव होता है। यह सभी का स्रोत है।

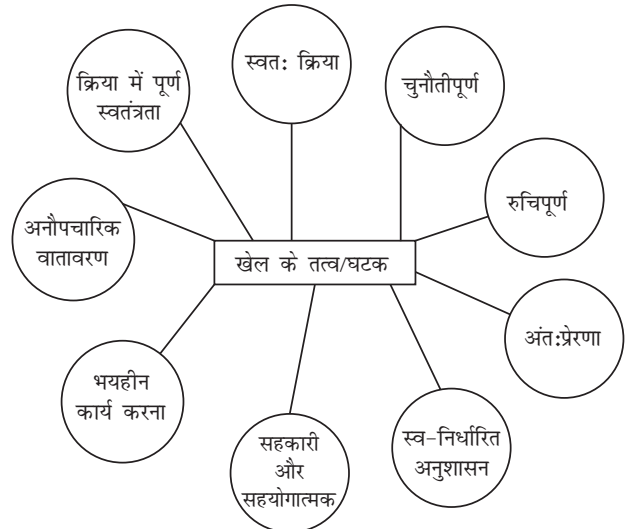
फ्रेड्रिक फ्रोबेल

फ्रोबेल ने इस पद्धति को चार मूल विचारों से परिपूर्ण बताया है—

1. पूर्ण आत्माभिव्यक्ति
2. रचनात्मकता
3. समाज में भागीदारी
4. प्रेरणा

● किण्डर गार्टन पद्धति के प्रवर्तक फ्रोबेल हैं। फ्रोबेल प्रकृतिवादी थे। फ्रोबेल बाग-बगीचे-उपवन व गार्डन वाली परिवेश में प्राथमिक शिक्षा के कट्टर समर्थक थे जिसे क्रियान्वित करते हुए उन्होंने खुद का एक स्कूल खोला।

● किण्डर गार्टन एक मौलिक विचार था जिसकी लोकप्रियता विश्वव्यापी रूप से मिली। के.जी. इसका संक्षिप्ताक्षर है।



पूर्ण स्वतंत्रता का नियम : यदि एक बच्चे को उसके कार्य करने में पूर्ण स्वतंत्रता दी जाये तो वह अपने अंतःशक्तियों को अभिव्यक्त करता है और अधिक नये अनुभव कम समय में प्राप्त करता है। बच्चे के ऊपर किसी भी प्रकार का प्रतिबंध लगाने से उसकी स्वाभाविक वृद्धि रुक जाती है।

बच्चों को पूर्ण-स्वतंत्रता प्रदान करना खेल विधि का मुख्य सिद्धांत है। शिक्षा और मनोविज्ञान में किये गये शोध कार्यों ने यह तथ्य स्थापित किया है कि एक बच्चा बेहतर ढंग से सीखता है, यदि वह सक्रिय रूप से किसी कार्य में भाग लेता है।

जॉन डीवी

प्रगतिशील शिक्षा (Progressive Education) के जनक

- परिणामवाद की वजह से शिक्षा प्रदान करने की शुरुआती योजना पद्धति की परियोजना पद्धति नाम दिया जाता है।
- परियोजना विधि व पद्धति से शिक्षा प्रदान करने की हिमायती प्रयोजनवादी है।
- प्रयोजनवाद ही व्यवहारवाद (प्रैग्मैटिज्म) है जिसके सूत्रधार विलियम किलपैट्रिक और जॉन डीवी है।
- शिक्षा का सम्बन्ध समाज विज्ञान से है क्योंकि शिक्षा और समाज में अन्योन्याश्रय संबंध है।

खेल पद्धतियों के लाभ

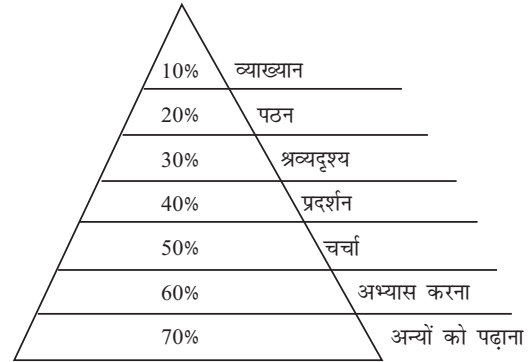
- (1) यह विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करती है और भावी आवश्यकताएँ पैदा करती है।
- (2) यह शिक्षक और बच्चे में अंतर को कम करती है।
- (3) यह उचित अधिगम पर्यावरण की रचना करती है।
- (4) यह भागीदारी को प्रदान करती है और प्रत्येक बच्चे को अवसर देती है।
- (5) इससे रचनात्मक कौशलों का विकास होता है।
- (6) बच्चे, बच्चों को देखने व सुनने से नए विचारों को सीखते हैं।
- (7) यह स्वयं को जानने और नियमितता को बनाए रखने में सहयोगी है।
- (8) यह संज्ञानात्मक, प्रभावी, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक विकास को बढ़ावा देता है।
- (9) यह अन्यो के साथ सहयोग करने के व्यवहार को बढ़ावा देती है।
- (10) यह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में सहायक है।
- (11) यह ज्ञान के साधारणीकरण का विकास करती है।

खेल पद्धतियों की हानियाँ

इस पद्धति में सीखने की संभाव्यता अंदर निहित होती है। इसमें भागीदार इतने जुड़े जाते हैं कि अपनी वस्तुनिष्ठा खोने लगते हैं।

खेल विधि की सीमाएं—इस विधि को पूर्ण प्राथमिक और प्राथमिक कक्षा स्तर के लिए उचित समझा जाता है। सभी विषयों के विषय वस्तुओं और अवधारणाओं को इस विधि द्वारा परिचित नहीं कराया जा सकता है। कभी-कभी कुछ बच्चे सिर्फ खेल खेलने में रुचि रखते हैं तथा खेल विधि से सीखने में रुचि नहीं रखते हैं।

कतिपय शिक्षण विधियों की अधिग्राह्यता का प्रतिशत स्तर

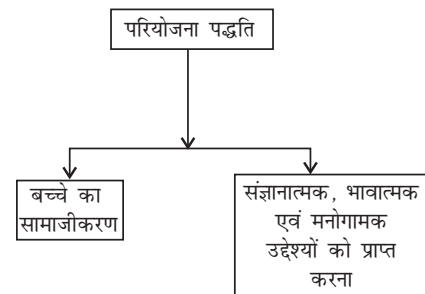


यह चित्र विद्यार्थियों की अधिगम की औसत दर को दर्शाता है

शिक्षण की नवीन पद्धतियाँ

1. परियोजना पद्धति

- यह एक अनुभव केन्द्रित (Experience- Centric) पद्धति है।
- यह जॉन डीवी द्वारा दी गई पद्धति है जो एक अमरीकन दर्शनशास्त्री और शिक्षाविद् हैं। इस पद्धति में विद्यालय के पाठ्यक्रम और विषयों को बच्चे की दृष्टि से देखा जाता है, उसकी आवश्यकताएँ, उसकी रुचियाँ, वास्तविक जीवन स्थितियों जो कि उसके दैनिक जीवन से संबंधित हैं, उन पर विचार किया जाता है।



परियोजना पद्धति के लाभ

- (1) **उपयोगिता**—ऐसी परियोजना चुनना जो किसी के सामाजिक जीवन से संबंधित हो और सामाजिकरण प्रक्रिया और शर्तों को सिखाती हो। इससे सहयोग और सामूहिक रूप से कार्य करने को महत्ता दी जाती है। यह सामाजिक मूल्यों के विकास में सहायक है।

- (2) **तत्परता**—इसमें समस्या का समाधान करने और उनकी सक्रिय भागीदारी सम्मिलित है।
- (3) **करते हुए सीखना**—इसमें नए अनुभव प्राप्त करते हैं जिससे ज्ञान में वृद्धि होती है।
- (4) **अंतःविषयक दृष्टिकोण**—इसमें अनुप्रयोग और सामाजिक समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है। यह ज्ञान का हस्तांतरण करने हेतु मंच देती है। यह ज्ञान को बढ़ाने में मदद करती है।

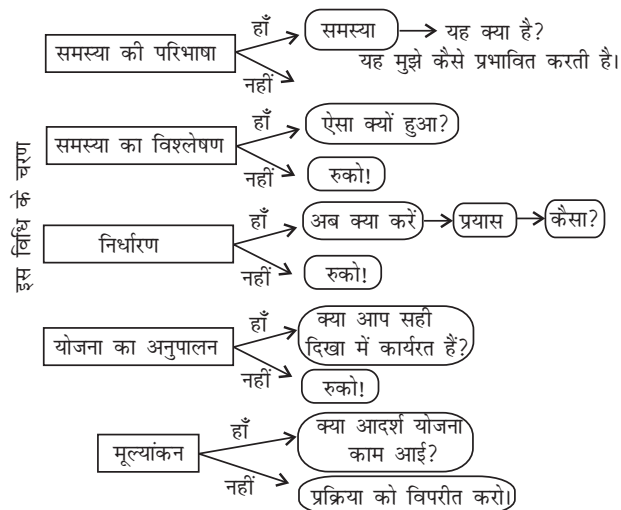
परियोजना पद्धति की हानियाँ

- यह पद्धति सभी विषय के लिए लाभदायक नहीं है और संपूर्ण विषय इसके द्वारा नहीं पढ़ाया जा सकता।
- यह समय लेने वाला लंबा कार्य है।
- शिक्षक के लिए इसकी योजना बनाना और इसका अनुपालन करना और विद्यार्थियों को समझाना बहुत मुश्किल कार्य है।

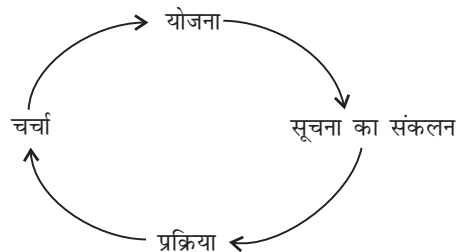
2. समस्या समाधान पद्धति (Problem-solving method)

- यह एक निर्देशात्मक पद्धति है जिसमें शिक्षक का उद्देश्य शैक्षिक समस्याओं का समाधान करने हेतु चेतन्य, योजित और गंभीर प्रयास है।
- यह नियोजित प्रतिक्रिया है जो (ज्ञान मूलक मनोवृत्ति) किसी विद्यार्थी के जीवन में समस्याओं पर कार्यरत है।
- यह एक उद्देश्य सहित प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थी की छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दिया जाता है।

लेव वाइगोत्स्की के अनुसार सामाजिक-सांस्कृतिक विकास मानसिक विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। इसमें ढांचा/पाड़-सीखने एवं समस्या समाधान में दिया अस्थायी सहयोग स्कैफोल्डिंग माना जाता है। यह सहयोग पुनः स्मरण एवं प्रशंसा करने के रूप में हो सकता है।



समस्या समाधान पद्धति का चक्र (साईकल)



समस्या-समाधान पद्धति की प्रक्रिया

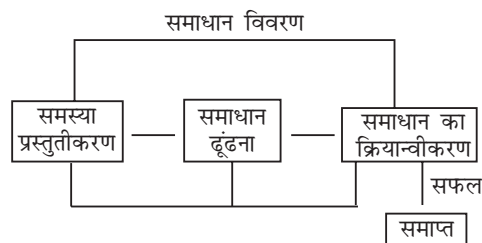
- (1) आगमनात्मक (2) निगमनात्मक

समस्या समाधान आगमनात्मक पद्धति से—हम सामान्य से विशिष्ट की ओर बढ़ते हैं। पहले हम साधारण समस्याओं का समाधान करते हैं फिर जटिल की तरफ बढ़ते हैं। उदाहरण हेतु, सबसे पहले हम सीधी रेखाएँ बनाते हैं फिर आगे शब्द फिर वाक्य बनाते हैं।

समस्या समाधान निगमनात्मक पद्धति से—यह आगमनात्मक से विपरीत है इसमें हम विशिष्ट से साधारण की ओर बढ़ते हैं। उदाहरण हेतु किसी खराब आदत को संशोधित करते हुए आरंभिक व्यवहार की ओर उन्मुख होना।

1983 में मेयर ने समस्या समाधान को एक बहुचरणीय प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है जहाँ पर समाधानकर्ता को अपने पूर्व के अनुभवों और वर्तमान समरूपों के बीच संबंध को ढूँढ़ना आवश्यक है और फिर उसके बाद समाधान प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

बार-बार उपयोग किए जाने वाले समस्या समाधान का मॉडल निम्नांकित आकृति में दिखाया गया है—



समस्या-समाधान पद्धति के लाभ

- यह विद्यार्थी को सक्रिय रूप से सम्मिलित करता है।
- यह विद्यार्थियों को पढ़ने और व्यवस्थित रहने में मदद करता है।
- यह विद्यार्थियों को वैज्ञानिक ढंग से सोचने की ओर उन्मुख करता है।
- इससे विद्यार्थियों की रुचि बनी रहती है और वे प्रेरित रहते हैं।
- ये उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ाता है।
- इससे वैज्ञानिक ढंग से समस्याओं का सामना निडरता से करने में मदद मिलती है।

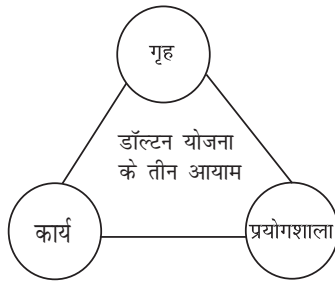
समस्या-समाधान पद्धति की हानियाँ

- इसमें बहुत समय लगता है।

- यह सभी विषयों के लिए उचित नहीं है।
- यह बच्चों पर अतिरिक्त भार डालता है।
- इससे मूल्यांकन जटिल बनता है।
- समस्या का समाधान करने के लिए आवश्यक सामग्री को प्रदान करना कठिन है।

3. डॉल्टन योजना पद्धति

इसे प्रायोगिक योजना भी कहा जाता है जिसे विश्व शिक्षा प्रयोगशाला में हेलन परकवर्ट (1887-1937) द्वारा काफी महत्ता दी गई है जो कि इसके संस्थापक हैं।

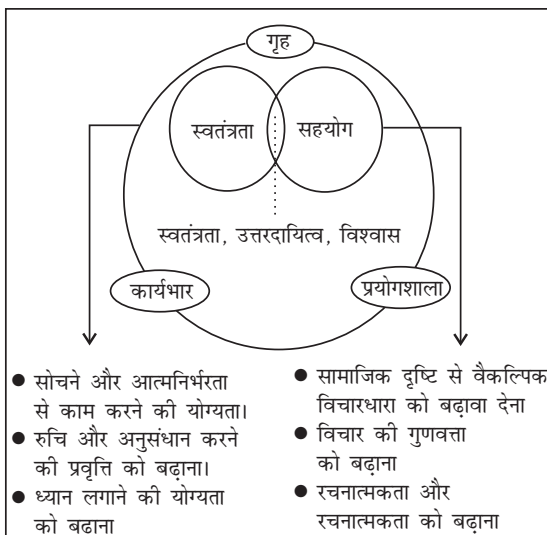


डॉल्टन योजना के लाभ

- इसमें गति की स्वतंत्रता और विद्यार्थी द्वारा सामग्री के चुनाव की स्वतंत्रता है।
- इसमें विद्यार्थियों में सहयोग और संवाद बढ़ता है।
- कक्षा में विषय की प्रयोगशाला।

डॉल्टन योजना का उद्देश्य

बच्चे की प्रतिभा और समुदाय की आवश्यकताओं में नियंत्रण करना।



अतः शैक्षिक योजना विद्यार्थी की प्रतिभा और समुदाय की आवश्यकता के बीच में संतुलन हेतु तैयार की गई है।

4. मोंटेसरी पद्धति

इसे डॉ. मारिया मोंटेसरी द्वारा विकसित किया गया है। यह विद्यार्थी केन्द्रित विचारधारा है जो जन्म से व्यस्क होने तक बच्चों के वैज्ञानिक अवलोकन (Observation) पर निर्भर है। यह मानवीय आत्मा और बच्चे के शारीरिक, सामाजिक, भाव, संज्ञानात्मक पहलुओं के विकास में सहायक है।

यह स्वनिर्देशित गतिविधि पर आधारित है। सहजक्रिया और समूह में खेलना। इसमें बच्चे सीखने के रचनात्मक तरीकों का चुनाव करते हैं और शिक्षक प्रक्रिया को निर्देशित करने हेतु उचित क्रियाकलाप देते हैं।

मोंटेसरी पद्धति के सिद्धांत व लाभ

- (क) समूह के बजाय वैयक्तिक विकास का सिद्धांत
- (ख) स्वतंत्रता का सिद्धान्त
- (ग) स्वशिक्षा का सिद्धान्त
- (घ) स्व प्रशिक्षण का सिद्धान्त
- (ङ) मांसपेशियों व संवेदी-गामक प्रशिक्षण का सिद्धांत
- (च) मूर्त पुरस्कार और दंड का अभाव
- (छ) कल्पनाओं के अभाव का सिद्धांत
- (ज) जीवन से सीखना

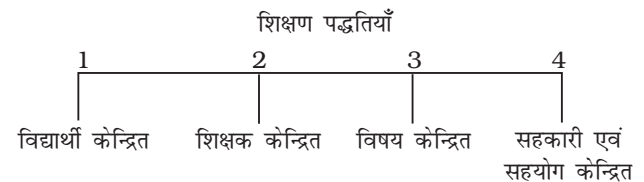
(झ) छोटे बच्चों के लिए प्रासंगिकता वह अपने विद्यालय को मंदिर और बच्चों को ईश्वर समझती है। व्यवहारात्मक अभ्यास जिसमें बच्चे अच्छी आदतें जैसे सफाई, स्वयं सेवा और श्रमिकों का सम्मान करना सीखते हैं।

मोंटेसरी पद्धति की हानियाँ

- (1) यह बहुत महंगी है।
- (2) यहाँ रचनात्मकता का स्थान नहीं है।
- (3) यह पद्धतियाँ वैसे शिक्षक पर निर्भर हैं जिसे बच्चों के मनोविज्ञान का अच्छा ज्ञान है।

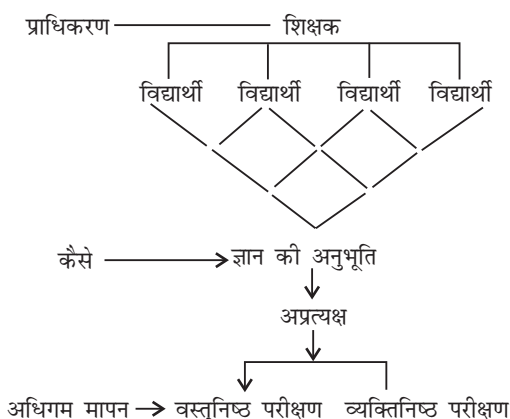
शिक्षण के उपागम

शिक्षण उपागम को मौटे तौर पर निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है—



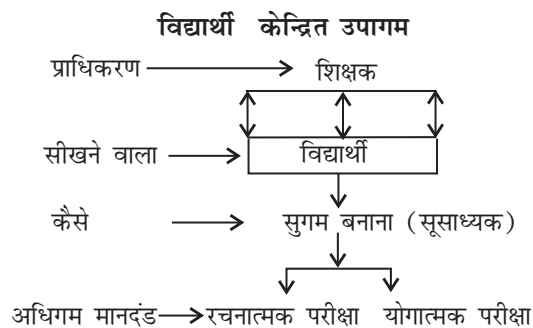
शिक्षक-केन्द्रित दृष्टिकोण व उपागम

- इसके अंतर्गत मुख्य अधिकार शिक्षकों के पास हैं और आंकलन और मूल्यांकन के उद्देश्य से विद्यार्थी की भूमिका साधारण है जिनका उद्देश्य जानकारी को अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करना है।



अधिगम मापन → वस्तुनिष्ठ परीक्षण व्यक्तिनिष्ठ परीक्षण

- शिक्षकों का प्राथमिक उद्देश्य योजना बनाना और विद्यार्थियों को ज्ञान देना है।
- इस विचारधारा में शिक्षण और आंकलन को दो अलग-अलग रूपों में देखा जा सकता है।
- इसके अंतर्गत विद्यार्थियों के ज्ञान को वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं और अंत में आंकलन से मापा जा सकता है।
- इसके अंतर्गत अधिकार शिक्षक के पास होते हैं परन्तु शिक्षक और विद्यार्थी दोनों सक्रिय होते हैं।
- शिक्षक का प्राथमिक लक्ष्य विद्यार्थियों को संपूर्ण रूप से सिखाना है।



अधिगम मानदंड → रचनात्मक परीक्षा योगात्मक परीक्षा

- विद्यार्थियों का अधिगम आंकलन के अनौपचारिक और औपचारिक रूपों से मापा जा सकता है।
- इसके अंतर्गत शिक्षण और अधिगम को एक रूप में जोड़ कर देखा जा सकता है।
- विद्यार्थी अधिगम को शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के भीतर व अंत में मापा जा सकता है। जैसे कक्षा परीक्षा, इकाई परीक्षा, रचनात्मक परीक्षा और योगात्मक परीक्षा।

विद्यार्थी-केन्द्रित शिक्षण उपागम का मुख्य जोर विद्यार्थी क्या पढ़ रहे हैं, कैसे सीख रहे हैं, किस वातावरण में सीख रहे हैं, धारण एवं व्यवहार में इस्तेमाल कर रहे हैं और अद्यतन अधिगम स्थितियां विद्यार्थी हेतु कैसे भविष्योन्मुख है।

विषय केन्द्रित उपागम

विषय केन्द्रित उपागम में, विद्यार्थियों के ग्रहण करने के लिए अध्यापक के द्वारा मुख्य रूप से विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण पर ध्यान दिया जाता है। उदाहरण के लिए विषय में शामिल प्रकरण/अवधारणा को महत्व दिया जाता है जिसके चारों ओर सभी शिक्षण एवं अधिगम क्रियाकलाप परिक्रमण करते हैं। शिक्षण एवं अधिगम के लिए पाठ्यपुस्तक एवं पाठ्यक्रम का दृढ़ता से अनुकरण करना अधिकांश विद्यालयों में एक सामान्य अभ्यास है। सभी विषयों में पाठ्यपुस्तक को भी आवश्यक अवधारणा, उदाहरण एवं अभ्यास के भंडार गृह के रूप में माना जाता है।

पाठ्यपुस्तक पाठ्य क्रम का मूर्तरूप बन जाती है, जो पढ़ाया जाता है वो सब इसी में हैं, यह एक विधिपूर्वक गाइड बन जाती है। इससे प्रत्येक पाठ के अंत में दिए गए प्रश्नों को मूल्यांकन के लिए निर्धारित किया गया है जिसका मौखिक रूप से उत्तर देना है और लिखते समय इसे दोहराना है।

विषय केन्द्रित उपागम की विशेषताएं—विषयवस्तु पर ही ध्यान केन्द्रित होता है। अतः कक्षा में पाठ्यपुस्तक का आदान-प्रदान ही सभी कक्षा क्रियाकलापों का मूल होता है। इन विद्यार्थियों की अधिगम आवश्यकताओं को पाठ्यपुस्तक के द्वारा ही पूरा हुआ माना जाता है।

कक्षा में विषय वस्तु को प्रस्तुत करते समय वास्तविक जीवन की स्थितियों को मुश्किल से ही स्थान दिया जाता है।

कक्षा की सभी परस्पर क्रियाएं पाठ्य-पुस्तक केन्द्रित होती हैं।

सहकारी उपागम

सहकारी अधिगम मॉडल का विकास कम से कम तीन मुख्य अनुदेशात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया गया है ये लक्ष्य हैं शैक्षणिक उपलब्धि विभिन्नता की स्वीकृति और सामाजिक कौशल का विकास। यह एक विशेष छोटी समूह उपागम है। जिसमें प्रजातांत्रिक प्रक्रिया, व्यक्तिगत जिम्मेदारी, सामाजिक अवसर व सामूहिक पारितोषक निहित है। आधुनिक कक्षा में कई प्रकार के सहकारी अधिगम क्रियाकलापों और मॉडल ओर उपयोग किया जाता है। जैसे विद्यार्थी टीम का उपलब्धि विभाजन, और सामूहिक अन्वेषण। सभी सहकारी अधिगम पाठों में हालांकि निम्नांकित मुख्य विशेषताएं होती हैं—

- शैक्षणिक सामग्रियों में सिद्धहस्त होने के लिए विद्यार्थी समूह में कार्य करते हैं।
- जहां तक संभव हो समूह में विभिन्न जाति, लिंग और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थियों का समावेश होती है।
- पुरस्कार के नियम व्यक्तिगत आधारित न होकर समूह आधारित होता है। अध्ययनों से पता चला है कि सहकारी उपागम शैक्षणिक उपलब्धि, सहयोगात्मक व्यवहार। अतः सांस्कृतिक समझ व संबंध तथा विकलांग विद्यार्थियों के प्रति दृष्टिकोण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सहयोगात्मक उपागम

सहकारी अधिगम उपागम से अधिक सामान्यीकृत उपागम है। इस उपागम में दो या उससे अधिक व्यक्तियों को सीखने में या एक साथ सीखने के लिए प्रयासरत होने के लिए अवसर उपलब्ध कराता है। व्यक्तिगत अधिगम से भिन्न इस अधिगम उपागम में व्यक्ति एक दूसरे के संसाधन और कौशलों का लाभ उठाते हुए सीखते हैं। जैसे सूचना के लिए एक दूसरे से पूछना, एक दूसरे के विचारों का मूल्यांकन और एक दूसरे के कार्य का निरीक्षण करना।

सहयोगात्मक अधिगम अधिक गुणात्मक उपागम है—जैसे, विद्यार्थी के बातचीत, साहित्य में किसी स्थान या इतिहास में मुख्य स्रोत के संदर्भ का विश्लेषण करना। दूसरी ओर सहकारी अधिगम में परिमाणात्मक विधियों का उपयोग होता है जोकि उपलब्धि की ओर दिखाता है।

ह्यूरिस्टिक विधि

शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर उपयोगी अनुमानी शिक्षण विधि को ह्यूरिस्टिक विधि भी कहते हैं। इसे हेनरी एडविन आर्मस्ट्रॉंग ने खोजा था। यह विधि हर स्तर के विद्यार्थी के लिए उपयुक्त समझी जाती है जिसमें विद्यार्थी स्व-अनुभव द्वारा सीखें। अनुमानी शिक्षण विधि में छात्र की भावना होती है कि मैं स्वयं खोज सकता हूँ। इसमें करके सीखने का सिद्धांत, उपयोगिता का सिद्धांत, स्वतंत्रता का सिद्धांत शामिल है।

स्वायत्त शिक्षार्थी वे होते हैं जो सीखने के लिए स्वयं को उत्तरदायी स्वीकार करते हैं अर्थात् जो छात्र स्वयं से सीखते हैं तथा किसी की सहायता नहीं लेते हैं वे सस्वायत्त छात्र होते हैं। वे अपने अधिगमन के लिए स्वयं को उत्तरदायी मानते हैं।

कोलिन्स, ब्राउन व न्यूमैन ने छः शिक्षण विधियों को विकसित किया। इनमें से प्रथम तीन मॉडलिंग, कोचिंग, स्कॉफोल्डिंग संज्ञानात्मक कौशल की मूल है।

मूल्यांकन (Evaluation)

● मूल्यांकन से अभिप्राय है किसी घटना का मूल्यात्मक निर्णय करना। एक समय या अवधि में एकत्र की गई मात्रात्मक एवं गुणात्मक सूचनाओं के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन में मापन एवं आकलन दोनों समाविष्ट है।

मापन (Measurement)

● मापन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी वस्तु या घटना की विशेषताओं या पक्षों को मात्रात्मक आकलन की जाती है। मापन उपलब्धि (Achievement) का होता है। यह शिक्षक के हाथ में स्थित एक उपकरण है जिससे किसी निश्चित कार्य हेतु कोई शिक्षक दूसरों से विद्यार्थियों की तुलना कर सकते हैं। मापदंड मूल रूप से कितना, कितनी जल्दी, कितने अंक दिए गए हैं और क्या लाभ मिला है, को मापता है।

आंकलन (Assessment)

यह वह प्रक्रिया है जिसमें शिक्षक विद्यार्थियों के प्रदर्शन के बारे में प्रासंगिक सूचना प्राप्त करते हैं और फिर उसका प्रयोग करते हैं (शिक्षक तक सीमित नहीं) यह द्विमागीय प्रक्रिया है जो विद्यार्थी और शिक्षक दोनों के लिए लाभकारी है।

आकलन या निर्धारण का अर्थ है विभिन्न विधियों का प्रयोग कर विभिन्न स्रोतों से आंकड़ें एवं प्रमाण एकत्रित करना, जबकि मूल्यांकन से अभिप्राय है एकत्रित आंकड़ों में प्रतिपादन, विश्लेषण एवं चिंतन द्वारा कोई अर्थ निकालना।

आकलन प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित करता है :

- क्या हम पढ़ा रहे हैं? हम क्या सोचते हैं हम क्या पढ़ा रहे हैं?
- क्या विद्यार्थी वे समझ पा रहे हैं जो उनसे अपेक्षित है?
- क्या कोई तरीका है कि और बेहतर ढंग से पढ़ाया जाए?
- आज विद्यार्थियों को न केवल मूलभूत पठन व अंकों की गणना करना ही आवश्यक नहीं है परन्तु उन कौशलों को भी विकसित करता है जो उन्हें निरंतर बदलती दुनिया का सामना करने के लिए भी आवश्यक है। उन्हें निष्कर्ष निकालने हेतु और ज्ञान प्राप्त करने व कौशल में बदलाव करने के लिए गहनता से सोचने व विश्लेषण करने की आवश्यकता है। हमारे विद्यार्थियों को नए लक्ष्य प्राप्त करने की आवश्यकता है जिससे आकलन और निर्देशों (Instructions) के बीच में संबंधों के बदलने की आवश्यकता है। शिक्षक को आकलन और आकलन हेतु सामग्री के उद्देश्य का निर्णय करने के लिए सक्रिय भूमिका की आवश्यकता है।

एक छात्र का पोर्टफोलियो छात्र के कार्य तथा संबंधित सामग्री होता है जो एक या अधिक विद्यालयी विषयों में छात्र की गतिविधि, उपलब्धियों को दर्शाता है।

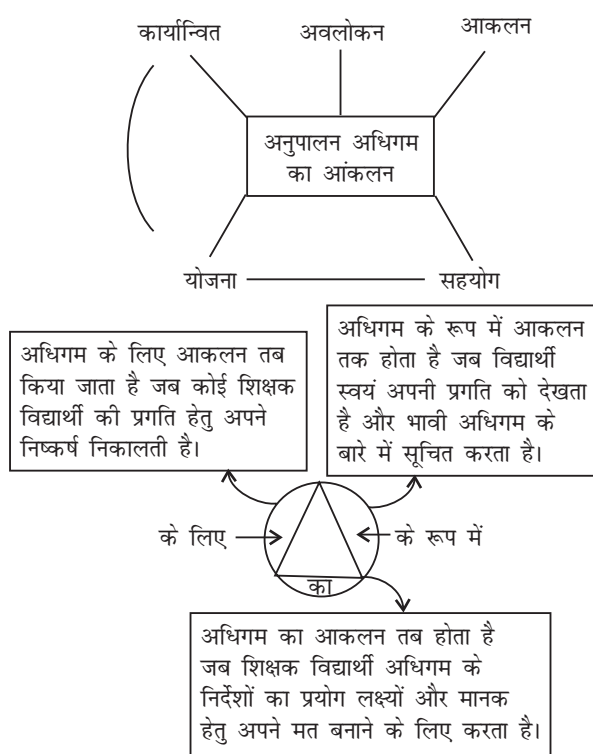
विद्यार्थी हेतु : निदानात्मक पक्ष	शिक्षक हेतु : मानक शिक्षण पक्ष
● मैं कैसे बेहतर कर सकता हूँ, यदि मैं विषय को अच्छी तरह समझता होता? ● इसके अलावा क्या मुझे सीखना चाहिए? ● मैं जानता हूँ, मुझे सीखना चाहिए पर मैं कैसे सीख सकता हूँ?	● मैं कैसे विद्यार्थियों के साथ कार्य कर सकता हूँ? ● मैं कैसे विद्यार्थियों की मदद कर सकता हूँ? ● किस दिशा में कार्य करना चाहिए?

आकलन के रूप में अधिगम

- यह विद्यार्थियों पर केन्द्रित है और ज्ञान की प्रक्रिया के रूप में ज्ञानपर बल देता है।
- विद्यार्थी स्वयं अपने कार्य पर ध्यान देते हैं और जानते हैं कि आगे क्या करना चाहिए।
- स्वयं सीखने के उत्तरदायित्वों को निभाने और भावी अधिगम को सीखने में विद्यार्थियों के लिए सहायक होना।

अधिगम के रूप में आकलन

- इसकी प्रकृति योगात्मक है यानी इसका मुख्य उद्देश्य उपलब्धि की श्रेणी निर्धारित करना है।
- यह अधिगम काल के अंत में आता है।
- अधिगम का आकलन अधिगम प्रक्रिया का आकलन करता है और यह साधारण शिक्षण सूत्रों का प्रयोग करने के लिए किया जाता है।
- यह विद्यार्थियों को अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए और प्रतिक्रिया प्राप्त करने में सहायक है ताकि वे सुधार ला सकें।
- यह रचनात्मक प्रक्रिया है।



आकलन के नियम

- आकलन शैक्षिक मानकों से जुड़े होने चाहिए। यह तकनीकी सक्षमता है।
- रूपात्मक आकलन विद्यार्थियों के योगात्मक आकलन हेतु बनाने में सहायक है।

- आकलन निर्देशों की तरह अधिक होना चाहिए।
- आकलन के परिणामों को शिक्षकों द्वारा प्रयोग किया जाना चाहिए।
- शिक्षकों को बेहतर आकलन हेतु पेशेवर अधिगम समुदाय (PLC) में सम्मिलित होना चाहिए।
- ये सिद्धान्त महत्वपूर्ण पक्षों पर केन्द्रित हैं। सभी शिक्षकों को इसका प्रयोग करना चाहिए।

निर्माणात्मक या रूपात्मक आकलन (Formative Assessment)

लक्ष्य : विद्यार्थियों के अधिगम की जाँच करना और उन्हें फीडबैक देना, जिसका प्रयोग शिक्षण और ग्रहण करने की क्षमता को बढ़ाने में किया जा सकता है। यह विद्यार्थियों को उनकी कमियों और खूबियों को पहचानने में मदद करता है।

विशेषताएँ : यह एक नियमित व सक्रिय कार्य है।

- यह मूल्यांकन सीखते समय भी होता है।
- यह शिक्षक के अनुसार समय-समय पर प्रयोग होता है।
- शिक्षक विद्यार्थियों की समस्याओं का समाधान करने का प्रयास करते हैं।
- यह पाठ (Lesson) की संतुष्टि पर कम ध्यान देता है।

उद्देश्य—विद्यार्थियों के अधिगम को सुधारना

उदाहरण—कक्षा परीक्षा, यूनिट परीक्षा

योगात्मक या संकलनात्मक आकलन(Summative Assessment)

लक्ष्य : कक्षा के अंत में उपलब्धियों का सार करना और विद्यार्थियों का मूल्यांकन करना।

विशेषताएँ : यह शिक्षण के अंत में होता है।

- मूल्यांकन अधिगम प्रक्रिया के अंत में होता है जो कि एक बार होता है।
- यह पाठ से संबंधित होता है।
- यह अंतिम उपलब्धि मापदंड है।

उद्देश्य : विद्यार्थी की उपलब्धि को मापना

उदाहरण — वार्षिक परीक्षा

सतत एवं व्यापक मूल्यांकन (CCE : Continuous & Comprehensive Evaluation)

उद्देश्य

- मूल्यांकन में निरंतरता और आकलन आधारित अधिगम और व्यवहारात्मक अधिगम
- यह आकलन की वह प्रक्रिया है जो शिक्षा के अधिकार अधिनियम, 2009 के अंतर्गत अनिवार्य है।
- **कक्षा 6 से 10 और 12 तक**
- परीक्षा की संरचना : चार (4) : रूपात्मक आकलन—अधिभार 40%

- दो (2) : योगात्मक आकलन-अधिभार 60%
- पहुँच-आइसीएसई, सीबीएसई, राज्य बोर्ड
- कक्षा-ग्रेड्स : 9 तक (जैसे A, A⁺, B, B⁺ E)

विद्यार्थियों पर भार को कम करने के उद्देश्य से साल के अंत में एक परीक्षा लेने की बजाय छोटी-छोटी परीक्षाओं को वर्ष भर आयोजित करना।

यह **शैक्षिक** और **गैर शैक्षिक** सभी पक्षों : पाठ्यगत, पाठ्यसहगामी, पाठ्येतर को सम्मिलित करता है जैसे खेल, कला, संगीत, नाट्य आदि।

अवधारणा : सतत एवं व्यापक	
सतत	व्यापक
योजना-अधिगम ● अधिगम प्रक्रिया दो इकाईयों में विस्तृत की जाती है। ● आकलन की आवृत्ति की नियमितता की ओर जाना। बार-बार यूनिट परीक्षा लेना, लिए ● सुधारात्मक मानदंडों का उपयोग और फीडबैक उद्देश्य धीरे-धीरे सत्रों में अधिगम प्राप्ति	योजना-उपागम ● योग्यताओं पर केन्द्रित ● योजना-विकास हेतु शैक्षिक और गैर शैक्षिक पक्षों को पूरा करना ● उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग ● उद्देश्य-विभिन्न क्षेत्रों में विद्यार्थी के विकास का आकलन

सीसीई पैटर्न हेतु शिक्षकों द्वारा ध्यान दी जाने वाली बातें-

- विभिन्न सामग्री का प्रयोग
- विभिन्न शैलियों और योग्यताओं का प्रयोग
- सुधार दर्शाने हेतु समय देना
- स्व-आकलन करना
- सीसीई को समझना

सतत एवं व्यापक मूल्यांकन क्या करता है?

- नियमित अंतराल में विद्यार्थियों की अधिगम प्रगति को समझना।
- विद्यार्थी के निष्पादन के बारे में नकारात्मक बातों को सीमित करना।
- भिन्न शिक्षण सामग्री और तकनीकों से अधिगम को बढ़ाना
- विद्यार्थियों को सक्रिय बनाना
- शिक्षण आवश्यकताओं और विद्यार्थियों की क्षमता को ध्यान में रखते हुए सुधार करना।
- विशिष्ट निश्चयात्मक योग्यताओं को प्रोत्साहित करना

मूल्यांकन की व्यवस्था या प्रणाली

मूल्यांकन शिक्षण और अधिगम का अभिन्न अंग है। इसका उद्देश्य केवल उपलब्धियों को मापना नहीं बल्कि अधिगम में सुधार लाना है। यह विकास हेतु विद्यार्थियों में निहित गुणों को उभारता है जैसे प्रशंसा करना, समझना, चतुराई। इन परम्परागत बातों के अलावा ज्ञान को बढ़ाता है।

- (1) मूल्यांकन करने के लिए यह पता होना चाहिए कि शुरुआत में विद्यार्थी का स्तर क्या था। ताकि हम बदलावों को जान सकें।
- (2) उन्नति को जांचने के उचित तरीकों द्वारा बदलावों का पूरा ब्योरा रखा जाना चाहिए।
- (3) यह निर्णय करना आना चाहिए कि आने वाले बदलाव कितने उत्तम है।
- (4) मूल्यांकन से शिक्षण तकनीकों और अधिगम तकनीकों में भी बदलाव हो सकता है।

यह योजना के समय होती है जब शिक्षण उद्देश्यों को खोजा जाता है। अधिगम के प्रत्येक पहलू पर स्थितियों में सीखने की प्रभावित को जानने के लिए मूल्यांकन महत्वपूर्ण है।

कम ज्ञान भी निष्क्रिय पड़े व्यापक ज्ञान से कई ज्यादा मूल्यवान है। ज्ञान, ज्ञान का उद्देश्य और अनुप्रयोग से तीनों ही कार्य करने के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण हैं।

परफॉर्मेंस सूचकों का प्रदर्शन रिपोर्टिंग कार्ड में स्पष्ट रूप से उल्लेखित होना चाहिए। यह पांच बिन्दुओं के रेटिंग स्केल की शक्ल में हो सकता है जो निम्नलिखित शैक्षणिक स्तर का अनुसरण करता है :

- ग्रेड ए 80% और ऊपर श्रेष्ठ
- ग्रेड बी 85% से 79% बहुत अच्छा
- ग्रेड सी 50% से 64% अच्छा
- ग्रेड डी 35% से 49% औसत
- ग्रेड ई 35% से नीचे विशेष सहायता की आवश्यकता

Rubrics की प्रक्रिया

Rubrics एक मूल्यांकन उपकरण होता है जिसका निर्माण विद्यार्थी का किसी क्षेत्र, जिनमें पाठ्यचर्या विषया, पाठ्यचर्या गतिविधियों और सामाजिक एवं व्यक्तिगत गुणों को सम्मिलित किया जा सकता है, में प्रदर्शन का आकलन करते हुए किया जाता है। प्रदत्त कार्य आरम्भ करने से पहले इसे विद्यार्थियों को सौंपा जाता है जिससे कि वे उन मानदंडों पर विचार कर सकें जिन पर उनके कार्य का आकलन /मूल्यांकन किया जायेगा। Rubrics शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के लिये सहायक होते हैं। वे विद्यार्थियों के अन्तिम उत्पाद में सुधार करते हैं और इसलिए अधिगम में वृद्धि होती है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- शिक्षण की नवाचार विधि जिसमें छात्र अपनी स्वयं की सीखने के गति से सीखता है, कहलाती है:
 - (1) आगमन विधि
 - (2) निगमन विधि
 - (3) अभिक्रमिit अनुदेशन
 - (4) ह्यूरिस्टिक विधि
- छात्रों के अर्जित ज्ञान की जाँच करने के लिए प्रयोग में ली जाने वाली प्रविधि है—
 - (1) परीक्षण विधि
 - (2) प्रयोजन विधि
 - (3) प्रश्नोत्तर विधि
 - (4) निरीक्षण विधि
- कौन-सी एक अच्छे व्याख्यान की विशेषता नहीं है?
 - (1) चित्रों और उदाहरणों का प्रयोग
 - (2) मौजूदा ज्ञान पर ही आगे बढ़ना
 - (3) एक ही व्याख्यान में कई परिकल्पनाएँ बताना
 - (4) अत्यधिक लंबा नहीं होना चाहिए।
- निगमनात्मक विधि के माध्यम से शिक्षण क्या है?
 - (1) सामान्य से विशिष्ट
 - (2) विशिष्ट से सामान्य
 - (3) मैक्रो से माइक्रो
 - (4) आसान से कठिन
- प्याजे के सिद्धान्त में, वस्तु स्थायित्व चरण के अंत में विकसित किया जाता है।
 - (1) ज्ञानेंद्रिय
 - (2) पूर्व सक्रियागत
 - (3) मूर्त सक्रियागत
 - (4) औपचारिक सक्रियागत
- समस्या निवारण विधि के जनक हैं?
 - (1) जॉन डीवी
 - (2) कार्ल मार्क्स
 - (3) विलियम एडम
 - (4) सुकरात
- उपचारात्मक शिक्षण का क्या उद्देश्य है?
 - (1) भाषा को सीखना
 - (2) कम से कम समय में हल खोजना
 - (3) उस भाषा को पढ़ाना जो ठीक से ना पढ़ाया गया हो
 - (4) उस भाषा को पढ़ाना जो पहले पढ़ाया जा चुका हो
- गठनात्मक आंकलन हेतु निम्नलिखित में से कौन-सा साधन उचित नहीं है?
 - (1) दत्त कार्य
 - (2) मौखिक प्रश्न
 - (3) सावधिक जाँच परीक्षा
 - (4) प्रश्नमंच एवं खेल
- विद्यालय-आधारित आंकलन मुख्य रूप से किस सिद्धान्त पर आधारित होता है?
 - (1) किसी भी कीमत पर विद्यार्थियों को अच्छे ग्रेड मिलने चाहिए।
 - (2) विद्यालय, बाह्य परीक्षा निकायों की अपेक्षा ज्यादा सक्षम है।
 - (3) आंकलन बहुत किफायती (मितव्ययी) होना चाहिए।
 - (4) बाह्य परीक्षकों की अपेक्षा शिक्षक अपने शिक्षार्थियों की क्षमताओं को बेहतर जानते हैं।
- एक शिक्षक प्रश्न-पत्र बनाने के बाद, यह जाँच करता है कि क्या ये प्रश्न, परीक्षण के विशिष्ट उद्देश्यों की परीक्षा ले रहे हैं। वह मुख्य रूप से प्रश्न-पत्र की/के के बारे में चिंतित है।
 - (1) प्रश्नों के प्रकार
 - (2) विश्वसनीयता
 - (3) वैधता
 - (4) संपूर्ण विषय-वस्तु को शामिल करने
- किस देश में शिक्षा के क्षेत्र में बौद्धिक उद्देश्य पर बल दिया गया है?
 - (1) भारत
 - (2) ग्रीक
 - (3) स्पार्टा
 - (4) अथीनियन
- स्कूली अंतर के बीच शिशुओं के लिए स्कूली प्रभावशीलता का आंकलन करने का सबसे आम तरीका कौन-सा है?
 - (1) मैट्रिक्स
 - (2) ग्रेड दृष्टिकोण के मध्य
 - (3) सांख्यिकीय नियंत्रण
 - (4) इनमें से कोई नहीं
- माध्य-ग्रेड डिजाइन कार्य बिंदु (प्वाईंट) पद्धति से बेहतर है क्योंकि
 - (1) स्कूली शिक्षा में माध्य-ग्रेड अंतराल अन्य उपलब्धि से संबंधित चर के अंतर से संबंधित नहीं है।
 - (2) सांख्यिकीय नियंत्रण द्वारा प्राप्त प्रभावशीलता का अनुमान शून्य के बराबर होता है।
 - (3) यह दृष्टिकोण अपेक्षित उपलब्धि का अनुमान लगाने के लिए स्कूल के छात्रों की सामाजिक-आर्थिक विशेषताओं का उपयोग करता है।
 - (4) छात्रों के शरीर की विशेषताएँ स्थिर रहती हैं; वे साथियों द्वारा हासिल उपलब्धि को प्रभावित नहीं करती हैं।
- माप का पहला चरण क्या है?
 - (1) निर्णय लेना कि क्या मापना है
 - (2) परीक्षण का विकास
 - (3) परीक्षण का प्रबंधन
 - (4) कोई नहीं
- निम्नलिखित में से किस उपकरण का इस्तेमाल प्रायः योगात्मक मूल्यांकन में किया जाता है?
 - (1) अध्यापक अवलोकन
 - (2) परीक्षण
 - (3) असाइनमेंट
 - (4) उपरोक्त सभी
- कुडर रिचर्डसन विधि का इस्तेमाल का अनुमान लगाने के लिए किया जाता है।
 - (1) वैधता
 - (2) विश्वसनीयता
 - (3) प्रयोज्यता
 - (4) वस्तुनिष्ठता

17. विविधता : विविधता देने के लिए, विविध बनाने के लिए।
..... : स्थिति या गुणवत्ता की निष्पक्षता के लिए, सौदे में निष्पक्षता के लिए।
(1) समानता (2) अपक्षपात
(3) समावेश (4) इनमें से कोई नहीं
18. शिक्षा के यथार्थवाद में निम्न में से कौन सी आलोचना नहीं की गई है?
(1) सह-पाठ्यचर्या संबंधी गतिविधियों के मूल्य को नकारने वाले शिक्षकों की
(2) पुस्तकों से रट्टा मार कर परीक्षा में पुनः प्रस्तुत करने वाले कुठित छात्रों की
(3) स्कूलों को ऐसे तरीके से संगठित करना जो नागरिकों के व्यावहारिक प्रशिक्षण के लिए अनुकूल हो
(4) शिक्षण जो बच्चे को जीवन से दूर ले जाता है।
19. इनमें से किस शिक्षाविद् को किंडरगार्टन प्रणाली के उद्भवकर्ता का श्रेय दिया जाता है?
(1) फ्रेडरिक फ्रोबेल (2) मारिया मोंटेसरी
(3) हेरिक पेस्टालॉजी (4) जॉन डीवी
20. शिक्षा की डॉल्टन प्रणाली द्वारा विकसित की गई है।
(1) मारिया मोंटेसरी (2) जॉन डीवी
(3) हेलेन पार्करस्ट (4) टी. रेमोन्ट
21. शिक्षण की प्रदर्शन विधि में, प्रदर्शन के दौरान, एक विद्यार्थी को के अवसर प्राप्त होते हैं।
(a) अवलोकन (b) नोट बनाने
(c) प्रश्न करने (d) आरेख बनाने
(1) (b), (c) तथा (d)
(2) (a), (c) तथा (d)
(3) (a), (b), (c) तथा (d)
(4) (a), (b) तथा (c)
22. कोल्ब मॉडल के अनुसार, सीखने की किस विधि में, शिक्षार्थी समूह में काम करना सीखते हैं, पूर्वाग्रह-मुक्त होकर औरों को सुनते हैं तथा व्यक्तिगत तौर पर फीडबैक प्राप्त करते हैं?
(1) अपसारी विधि (2) अभिसारी विधि
(3) आत्मसातीकरण विधि (4) अनुकूलन विधि
23. सहयोगात्मक अधिगम के/का क्या लाभ हैं?
(a) विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ काम सीखते हैं
(b) विद्यार्थी अपने सहपाठियों तथा अन्य शिक्षार्थियों के साथ समूह में कार्य करते हुए अपने आपको उनसे जोड़ना सीखते हैं।
(c) विद्यार्थी अपनी सामग्री को अधिक अपना मानते हैं तथा एक टीम के रूप में कार्य करते हुए संबंधित मुद्दों पर गहन विचार-विमर्श करते हैं।
(1) (a), (b) तथा (c) (2) (a) तथा (b)
(3) (b) तथा (c) (4) (a) तथा (c)

24. एक बच्चा जो अवबोधन करता है वह काफी हद तक उसके पर निर्भर करता है।
(a) पूर्व अनुभव
(b) मान्यताओं
(c) उद्देश्यों
(1) (b) तथा (c) (2) केवल (a)
(3) (a), (b) तथा (c) (4) केवल (c)
25. निम्नलिखित में से कौन-सा/से शिक्षण की खोज-विधि के लाभ हैं जिनका प्रयोग विज्ञान शिक्षण के लिए कक्षा में किया जाता है?
(a) शिक्षार्थी सीखने में आनंद का अनुभव लेते हैं क्योंकि वे स्वयं से ज्ञान की खोज करते हैं।
(b) शिक्षार्थियों में सूचना-प्रसंस्करण क्षमता के विकास के लिये कंटेंट, शिक्षक और शिक्षार्थियों के बीच सतत अंतर्क्रिया होती है।
(1) केवल (a) (2) केवल (b)
(3) (a) तथा (b) दोनों (4) ना ही (a) ना ही (b)

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(3)	2.	(1)	3.	(3)	4.	(1)	5.	(1)
6.	(1)	7.	(3)	8.	(3)	9.	(4)	10.	(4)
11.	(2)	12.	(3)	13.	(1)	14.	(1)	15.	(2)
16.	(1)	17.	(2)	18.	(3)	19.	(1)	20.	(3)
21.	(3)	22.	(1)	23.	(1)	24.	(3)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

- (3) यह शिक्षण की नई तकनीकी विधि है। यह छात्रों द्वारा अभिक्रमिit अनुदेशन के लिए प्रयुक्त होती है जिसमें छात्र सक्रिय होता है तथा स्वतः सीखता है। इसमें शिक्षक की शारीरिक अनुपस्थिति अनिवार्य नहीं होती।
- (1) परीक्षण विधि छात्रों के अकादमिक पक्ष का अंकन करती है। यह निश्चित अवधि के बाद होती है। परीक्षा उपलब्धि परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों पर निर्भर करती है।
- (3) व्याख्यान विधि में बालकों को ध्यान केन्द्रित करने की आदत पड़ती है। इसमें समय की बचत होती है। थोड़े समय में अधिक विषय वस्तु का बोध सुगमता से कराया जाता है। एक व्याख्यान केवल एक ही परिकल्पना पर आधारित होना चाहिए।
- (1) सामान्य से विशिष्ट प्रक्रियान्तर्गत पहले ही पूर्व अनुभवों, प्रयोगों तथा उदाहरणों द्वारा बने हुए नियम तथा सूत्र बतला दिए जाते हैं। इन नियमों का प्रयोग करके प्रश्न हल किए जाते हैं।

5. (1) यह ज्ञानात्मक (बौद्धिक) विकास का प्रथम अवस्था है। जन्म से 2 वर्ष तक चलती है। इस अवस्था में बालक देखने, पहुँचने, पकड़ने, चूसने आदि की स्वतः सहज क्रियाओं से व्यवस्थित प्रयासरत क्रियाओं की ओर अग्रसर होता है। वस्तु स्थायित्व का ज्ञान इस अवस्था तक हो जाता है।
6. (1) समस्या निवारण विधि जॉन डीवी ने दिया। इसमें उन्होंने बताया कि समस्या किस प्रकार हल करेंगे तथा इसमें हल करने के लिए किन-किन चरणों का इस्तेमाल किया जायेगा।
7. (3) उपचारात्मक पक्ष के अंतर्गत शैक्षिक दोष शिक्षण, अधिगम की दोष-पूर्ण प्रविधियों, शैक्षिक कमियों आदतों, अस्वस्थ अभिवृत्तियों और त्रुटिपूर्ण अर्जित कौशलों का पुनः शिक्षण करना है।
8. (3) सार्वधिक जाँच-परीक्षण योगदेय या संकलनात्मक मूल्यांकन में है। यह एक निश्चित कालावधि के बाद में होता है। रूपात्मक मूल्यांकन विद्यार्थियों की सीखने की कठिनाईयों को जानने में अधिक सहायता प्रदान करता है जबकि योगदेय मूल्यांकन में शिक्षण की प्रभावशीलता की अधिक जाँच होती है।
9. (4) विद्यालय आधारित आंकलन में शिक्षक की भूमिका मुख्य होती है। यह सामान्य कक्षाओं में आयोजित किए जाते हैं।
10. (4) विषयवस्तु जो बच्चों को पढ़ाई गई है, के सभी भागों को उनके महत्व के अनुसार प्रमुखता दी जानी चाहिए।
11. (2) ग्रीक दार्शनिक इस बात पर बल देते थे कि वस्तुएँ जैसी दिखाई देती हैं उससे वह बहुत भिन्न होती हैं। केवल प्रशिक्षित मस्तिष्क द्वारा ही वे वस्तुएँ वैसी दिखाई देती हैं जैसी सतह के नीचे हैं।
12. (3) सांख्यिकी नियंत्रण वह तकनीक है जो एक बहुभिन्न रूपी विश्लेषण में निर्भर चर पर शेष चर के प्रभाव से स्वतंत्र चर के प्रभाव को अलग करती है।
13. (1) माध्य ग्रेड डिजाइन रणनीति; स्कूली शिक्षा की संकल्पना, एक विशुद्ध रूप से मात्रात्मक चर के अंतर के बजाय एक संचयी प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत करती है।
14. (1) किसी व्यक्ति में क्या गुण हैं, इसकी जानकारी करना मापन कहलाता है। मापन में एक व्यक्ति या वस्तु में निहित विशेषताओं की संख्यात्मक व्याख्या की जाती है।
15. (2) परीक्षण औपचारिक कक्षा परीक्षण जैसे कि इकाई परीक्षा रचनात्मक मूल्यांकन के और सत्रांत परीक्षा योगात्मक मूल्यांकन के महत्वपूर्ण उपकरण हैं।
16. (1) यह एक विधि है जिसका प्रारंभ में प्रयोग विश्वसनीयता का अनुमान लगाने के लिए किया जाता था। आजकल इसका प्रयोग वैधता गुणांक के रूप में किया जाता है।
17. (2) कक्षा कक्ष में विविधता प्रशिक्षकों की जागरूकता व अपक्षपात के मुद्दों पर भाग लेने की जरूरत पर बल देती है।
18. (3) यथार्थवाद के अनुसार विद्यालय व्यवहारिक शिक्षा प्राप्त करने के स्थान है। यथार्थवादी अनुशासन की स्थापना के लिए किसी प्रकार के दण्ड में विश्वास नहीं रखते, अच्छे भौतिक वातावरण की स्थापना द्वारा ही अनुशासन का समर्थन करते हैं।
19. (1) फ्रेडरिक विल्हेम अगस्त फ्रोबेल; जर्मनी के प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री थे। वे पेस्टालॉजी के शिष्य थे। उन्होंने किंडरगार्टन (बालवाड़ी) की संकल्पना दी। उन्होंने शैक्षणिक खिलौनों का विकास किया जिन्हें 'फ्रोबेल उपहार' के नाम से जाना जाता है।
20. (3) हेलेन पार्करस्ट की डॉल्टन विधि में बालक को पूर्ण स्वतंत्रता दी जाती है और सारी सुविधाएँ भी दी जाती हैं यह विधि अवबोधन स्तर पर अपनायी जाती है।
21. (3) शिक्षण की प्रदर्शन विधि प्रौद्योगिकी एवं प्रशिक्षण महाविद्यालयों एवं शिक्षक शिक्षा में प्रयुक्त एवं परम्परागत कक्षा-कक्ष विधि है। अवलोकन, नोट मेकिंग, प्रश्नावली और ड्राफ्टिंग के अवसर इसी विधि में शामिल हैं। इस बात से प्रशिक्षु भली-भाँति अवगत रहते हैं।
22. (1) कोल्ब (Kolb) के मॉडल (उपागम) के अनुसार निगमनात्मक या अपसारी अधिगम शैली मूर्त अनुभव एवं उद्भाषित अवलोकन पर जोर देता है। काल्पनिक क्षमता और अर्थ एवं मूल्यों के प्रति सतर्कता इस विधि व प्रक्रिया का महत्वपूर्ण गुण हैं।
23. (1) सहयोगी अधिगम शिक्षण-अधिगम का ऐसा उपागम है जिसमें विद्यार्थी समूहबद्ध होकर समस्या का समाधान करते हैं। इसमें विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के सहपाठियों के बीच काम करना सीखते हैं। वे खुद को सहपाठियों से कक्षाकक्ष में व्यस्त करते और समूह में काम करने का गुण गहन विचार-विमर्श आदि द्वारा सीखते हैं।
24. (3) एक बच्चे का प्रत्यक्षीकरण व अवबोधन उसके पूर्ववर्ती अनुभवों, विश्वासों एवं उद्देश्यों पर निर्भर करता है। मन-मस्तिष्क में ग्रहण करने, संगठित-संयोजित करने और सम्बन्धी सूचनाओं को विश्लेषण करने की प्रक्रिया प्रत्यक्षीकरण कहलाती है। एक शिशु अपनी मनोगामक क्षमता को प्रत्यक्षबोध से प्राप्त सूचना से आगे बढ़ाता व विकसित करता है जिससे रूचिपूर्ण क्रियाओं का बोध होता है।
25. (3) अन्वेषी अधिगम विधि संरचनावादी सिद्धान्त वाली विधि है। यह उस विचार पर आधारित है जिसमें विद्यार्थी खुद की समझ और ज्ञान विषय के प्रति अपने अनुभवों एवं उनके प्रदर्शन द्वारा निर्मित करता व सीखता है। अन्वेषी विधि के अन्तर्गत सामान्यतः शिक्षक एवं विद्यार्थी के बीच और विशेषकर विद्यार्थियों में सूचना प्रक्रियाकरण अभिवृत्तियों के विकास हेतु नियमित अंतःक्रिया होती है।

□□□

मनोभाव (संवेग) और अभिप्रेरणा (Emotion & Motivation)

ऑक्सफोर्ड शब्द कोश के अनुसार, 'कोई भी अल्पकालीन मूल्यांकन, प्रभावी, साभिप्राय स्थिति, जिसमें खुशी, उदासी, घृणा और अन्य आंतरिक भाव सम्मिलित हों, संवेग कहलाती हैं।

हालांकि 1872 में, चार्ल्स डार्विन ने यह सिद्धांत दिया था कि संवेग को मानव जाति के विकास से पहले के हमारे पूर्वजों के विक.। सवादी अवशेषों के तौर पर देखे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए गुस्से में चेहरे के हाव-भाव बनाने की उत्पत्ति गुस्से के संवेग से हुई हो और चेहरे के हाव-भाव सीखे गए हों। सर्वव्यापी संवेग की संख्या हैं-

- (i) खुशी (ii) दुख (iii) हैरानी (iv) डर (v) घृणा (vi) क्रोध

संवेग क्या है? (What are Emotions ?)

संवेग शब्द अंग्रेजी के इमोशन (Emotion) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। शब्द व्युत्पत्ति के अनुसार Emotion शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Emovere से मानी जाती है जो 'उत्तेजित करने', 'हलचल मचाने', 'उथल-पुथल' या 'क्रान्ति उत्पन्न करने' जैसे अर्थों में प्रयुक्त होता है।

वुडवर्थ (Woodworth) ने संवेग को निम्न शब्दों में परिभाषित करने का प्रयत्न किया है-

'संवेग किसी प्राणी की गतिमय और हलचलपूर्ण अवस्था है। व्यक्ति को स्वयं यह अपनी भावनाओं को उत्तेजनापूर्ण स्थिति प्रतीती होती है। दूसरे व्यक्ति को यह उत्तेजित अथवा अशांत मांस-पेशियों और ग्रन्थियों की एक क्रिया के रूप में दिखाई देती है।'

(Emotion is a 'moved' or 'Stirred up' state of an organism. It is a stirred up state of feeling, that is the way it appears to the individual himself. It is a disturbed muscular and glandular activity that is the way it appears to an external observer.)

क्रो व क्रो (Crow and Crow) के अनुसार, 'संवेग वह भावात्मक अनुभूति है जो व्यक्ति की मानसिक और शारीरिक उत्तेजनापूर्ण अवस्था तथा सामान्यीकृत आंतरिक समायोजन के साथ जुड़ी होती है और जिसकी अभिव्यक्ति व्यक्ति द्वारा प्रदर्शित बाह्य व्यवहार द्वारा होती है।

(Emotion is an affective experience that accompanies generalised inner adjustment and mental and physiological stirred up state in the individual and that shows itself in his overt behaviour.)

संवेग : व्यवहार से पहले व बाद में?

यदि आप एक साधारण व्यक्ति से पूछें कि पहले क्या आता है, संवेग या व्यवहार, यह संभवतः कहेगा, "शारीरिक बदलाव (हृदय की बढ़ती गति, स्पंद की बढ़ती दर, मांसपेशियों को खिंचना) संबंधित भावों (डर, गुस्सा आदि) के कारण यह बाद में दिखाई देता है। यह दृष्टि सर्वव्यापी नियमों में से एक है।

संवेग के सिद्धान्त

I. जेम्स लैंगे का सिद्धान्त (James-Lange theory)

विलियम जेम्स एवं कार्ल लैंगे (1884) मानते हैं कि शारीरिक बदलाव भावों से पहले दिखाई देते हैं। लोग इसलिए नहीं काँपते क्योंकि वे डरे हुए होते हैं, बल्कि वे डरे हुए होते हैं क्योंकि वे काँप रहे होते हैं। जेम्स ने इसे एक ऐसे व्यक्ति के उदाहरण से समझाया है जो लकड़ियाँ लेकर जा रहा होता है और उसे रास्ते में भालू दिख जाता है। वह व्यक्ति पहले डरेगा और फिर नहीं भागेगा। बल्कि वह पहले भागेगा और बाद में उसे डर का अनुभव होगा।

जेम्स मानते हैं कि पहले शारीरिक प्रतिक्रियाएँ जैसे दूर भागना, रोना, हँसना दिखाई देती हैं और फिर संवेग अनुसरण करते हैं। इसी समय पर डैनिस वैज्ञानिक कार्ल लांगे भी इसी से काफी मिलते हुए निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

II. डब्ल्यू. बी. कैन्नन एवं फीलिप बार्ड का सिद्धान्त (Cannon-Bard theory)

अमरीकन मनोवैज्ञानिक, वॉल्टर ब्रॉडफोर्ड कैन्नन एवं फीलिप बार्ड (1929) ने दर्शाया कि समान शारीरिक स्थिति से विभिन्न संवेग जुड़े होते हैं।

उदाहरण के तौर पर काँपने से डर कैसे लग सकता है जब वह अन्य संवेग जैसे उत्तेजना या क्रोध से जुड़ती है तब तो इसमें डर सम्मिलित नहीं होता। कैन्नन ने कारण सहित बतलाया शारीरिक (थैलेमस में) बदलाव बहुत हल्के होते हैं और भावनाओं के तेजी से बदलने की तुलना में ये बहुत धीरे होते हैं (Thalamus theory)।

वे बताते हैं कि शारीरिक बदलावों के धीमे व पूरी तरह रुक जाने पर भी हम अपने संवेग अनुभव करते रहते हैं।

III. संवेग का संज्ञानात्मक सिद्धान्त

स्कैक्टर सिंगर का सिद्धान्त
(Schachter-Singer theory)
1962

संवेग की उत्पत्ति के लिए दैहिक उत्तेजन
(Physiological Arousal)
अनिवार्य है जिसकी संज्ञानात्मक आधार पर
व्याख्या होनी चाहिए ताकि
विशिष्ट संवेग का पता चल सके।

रिचर्ड-लैज़रस का सिद्धान्त
(Richard Lazarus theory)
1992

संवेगात्मक क्रिया का पहला चरण संज्ञानात्मक
मूल्यांकन (Cognitive Appraisal)
होता है।
इसमें संवेग की उपस्थिति-अनुपस्थिति
और उसका प्रकार एवं स्तर का मूल्यांकन होता है।
यह मूल्यांकन धनात्मक या ऋणात्मक होता है न कि
शून्य या तटस्थ।

हम क्रोध के संकेत जैसे चेहरा लाल होना, हाथों का काँपने
के समाप्त होने के काफी समय बाद भी किसी बात पर गुस्से का
अनुभव कर सकते हैं। यदि शारीरिक कारक संवेग का कारण होते,
तो संवेगों को भी शारीरिक प्रतिक्रिया के समाप्त होने के बाद समाप्त
हो जाना चाहिए।

हमारे संवेग किस प्रकार हमारे व्यवहार को प्रभावित करते हैं?
इसका उत्तर है, संवेगों के हमारे व्यवहार पर सकारात्मक व नकारात्मक
प्रभाव पड़ते हैं। सकारात्मक संवेग हमारे व्यवहार को व्यवस्थित करने
में सहायक होते हैं। जब आप किसी चीज को करने में आनंद लेते
हैं और उसे करने में अच्छा महसूस करते हैं, तब आप उसे करने
में बहुत सावधानी रखते हैं।

डर का अर्थ बचे रहने से समझा जा सकता है वह किसी व्यक्ति
को खतरे से बचने या उसका मुकाबला करने में मदद करता है।

मैकडूगल (McDugall, 1949) ने मूल प्रवृत्तियों (Instincts)
को जन्मजात प्रवृत्तियाँ मानते हुए उन्हें सभी प्रकार के संवेगों को
जन्म देने वाला कहा है। उनके अनुसार मूल प्रवृत्तिजन्य व्यवहार के
तीन पक्ष होते हैं:

- (1) ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Aspect)
- (2) भावात्मक पक्ष (Affective Aspect)
- (3) क्रियात्मक पक्ष (Conative Aspect)

उदाहरण के रूप में जब बच्चा किसी सांड को अपनी ओर
आता हुआ देखता है जब उसके मूल प्रवृत्तिजन्य व्यवहार में उपरोक्त
तीनों पक्ष देखने को मिलते हैं। पहले तो वह सांड का प्रत्यक्षीकरण
करता है। यह जानकर कि यह सांड है और उसे भय नामक संवेग की
अनुभूति होती है। इस अनुभूति के परिणामस्वरूप वह भाग कर अपनी
प्राण-रक्षा करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार के उदाहरणों के आधार
पर **मैकडूगल** ने यह निष्कर्ष निकाला कि मूल प्रवृत्तिजन्य उत्तेजना
के समय होने वाली भावात्मक अनुभूति को ही संवेग कहा जाता है।

उसने मुख्य रूप से 14 मूल प्रवृत्तियों की चर्चा की और स्पष्ट
रूप से संवेगों को इन मूल प्रवृत्तियों से विकसित होते हुए दिखाया।
कौन से संवेग के साथ कौन-सी मूल प्रवृत्तियाँ जुड़ी हैं, इसका ज्ञान
तालिका से हो सकता है—

तालिका : मूल प्रवृत्तियाँ एवं सम्बन्धित संवेग

क्र.सं. (S.No.)	मूलप्रवृत्ति (Instinct)	सम्बन्धित संवेग (Emotion accompanying it)
1.	पलायन या भागना (Escape)	भय (Fear)
2.	युयुत्सा, युद्धप्रियता (Combat)	क्रोध (Anger)
3.	निवृत्ति (Repulsion)	घृणा (Disgust)
4.	जिज्ञासा (Curiosity)	आश्चर्य (Wonder)
5.	शिशुरक्षा (Parental)	वात्सल्य, स्नेह (Tender emotion, Love)
6.	शरणागति (Appeal)	विषाद (Distress)
7.	रचनात्मकता (Construction)	संरचनात्मक भावना (Feeling of creativity)
8.	संचयप्रवृत्ति (Acquisition)	स्वामित्व का भावना (Feeling of ownership)
9.	सामूहिकता (Groupness)	अकेलापन की भावना (Feeling of loneliness)
10.	काम (Sex, Mating)	कामुकता (Lust)
11.	आत्मगौरव (Self-assertion)	श्रेष्ठता की भावना (Positive self-feeling or Elation)
12.	दैन्य (Submission)	आत्महीनता (Negative self-feeling)
13.	भोजनान्वेषण (Food-seeking)	भूख (Appetite)
14.	हास (Laughter)	आमोद (Amusement)

बच्चों के संवेगों को प्रशिक्षित करने की विधियाँ (Methods for the Training of Emotions)

संवेगात्मक विकास को भी उचित दशा एवं दिशा प्रदान करने में प्रशिक्षण का यथेष्ट योगदान रहता है। मार्गान्तरणीकरण (Redirection), उद्दार्तीकरण या शोधीकरण (Sublimation), विरेचन (Catharsis), पुनः केन्द्रीकरण (Refocussing), उदाहरण एवं दृष्टांत (Examples and Illustration), मॉडलिंग (Modelling) और अन्य विशेष तकनीकों तथा उपचार पद्धतियों द्वारा बालकों को अवांछित संवेगात्मक व्यवहार से मुक्ति पाने तथा संवेगात्मक रूप से परिपक्व व्यक्तित्व एवं व्यवहार को ग्रहण करने में उचित सहायता प्रदान की जा सकती है।

संवेग बालकों के व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा नैतिक, सभी प्रकार का विकास और व्यवहार उनके संवेगों द्वारा प्रभावित होता है। पूर्व-अनुभव और प्रशिक्षण के अभाव में संवेग अपने उन्मुक्त रूप में व्यक्ति और समाज, दोनों के लिए अहितकर सिद्ध हो सकते हैं। इन्हें समाज और व्यक्ति दोनों के लिए उपयोगी बनाने के लिए इनको भली-भाँति प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक है। साधारण तौर पर इस कार्य के लिए कुछ निम्न विधियाँ अपनाई जाती हैं—

1. दमन या विरोध (Repression or Inhibition)—इस विधि में बच्चे के अवांछित संवेगात्मक व्यवहार की रोकथाम और उसमें परिवर्तन लाने के लिए दंड और कठोर नियंत्रण का प्रयोग किया जाता है। संवेगों की असामाजिक और असंयमित अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध लगाए जाते हैं। इन प्रतिबन्धों को तोड़ने पर डांट फटकार, दण्ड और अन्य दमनात्मक तरीकों को काम में लाया जाता है।

2. परिश्रमशीलता या मानसिक व्यस्तता (Industriousness or Mental occupation)—खाली दिमाग शैतान का घर माना जाता है। बेकार बैठे हुए, मन, गलत रास्तों पर भटकता है। अतः किसी उपयोगी कार्य में लगे रह कर शारीरिक या मानसिक रूप से व्यस्त रहना संवेगों को नियंत्रित और संयमित करने का एक अच्छा साधन बन सकता है।

इस विधि में सी बात का ध्यान रखकर बालकों को घर और विद्यालय में रचनात्मक और उपयोगी कार्यों में व्यस्त रखा जाता है।

3. मार्गान्तरणीकरण और शोधन (Redirection and Sublimation)—मार्गान्तरणीकरण और शोधन के द्वारा संवेगात्मक शक्ति के प्रबल प्रवाह को अनुकूल दिशा में मोड़ने का प्रशंसनीय कार्य किया जाता है। इन दोनों प्रक्रियाओं में साधारण सा अंतर है। जहाँ मार्गान्तरणीकरण में संवेगों की प्रकृति और स्वभाव बदल कर नवीन रूप धारण कर लेते हैं और उनकी अभिव्यक्ति की दिशा भी बदल जाती है। तुलसी और कालीदास की कामुकता का भक्तिभाव में परिवर्तित होने की प्रक्रिया शोधन का एक बहुत अच्छा उदाहरण है। संवेगात्मक प्रशिक्षण की सभी विधियों में मार्गान्तरणीकरण और शोधनविधि ही सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है क्योंकि इस विधि द्वारा बच्चे के व्यक्तित्व को बिना कोई हानि पहुँचाये उसकी संवेगात्मक शक्तियों को एक उचित रचनात्मक मोड़ प्रदान किया जा सकता है।

4. रेचन या विरेचन (Catharsis)—इस विधि में संवेगात्मक शक्ति पर प्रतिबन्ध या अंकुश न लगाकर उसे स्वतंत्र अभिव्यक्ति के उपयुक्त अवसर प्रदान किये जाते हैं। जब तक बच्चे को स्वतंत्र अभिव्यक्ति का अवसर नहीं मिलता उसमें विभिन्न संवेग, घटनाओं की भाँति उमड़ते-धुमड़ते रहते हैं। स्वतंत्र अभिव्यक्ति के माध्यम से बच्चे अपने संवेगों का प्रकाशन कर अपनी सहज और स्वाभाविक अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। परिणामस्वरूप उनमें कोई मनोविकार और अनावश्यक मनो-ग्रन्थियाँ जन्म नहीं लेतीं और वे मानसिक रूप में घटित अनावश्यक तनाव तथा संघर्ष से बच जाते हैं।

रक्षा तंत्र (Defence Mechanism)

रक्षात्मक युक्तियाँ-रक्षात्मक युक्तियों के अर्थ, प्रकृति और प्रकार :

- रक्षात्मक युक्तियाँ हमारे विशिष्ट प्रकार के व्यवहार और प्रतिक्रियाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं।
- हमारे अहं तथा आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाने वाली हर बात से हमारी रक्षा करना ही इनका उद्देश्य है।
- रक्षात्मक युक्तियों का प्रयोग व्यक्ति द्वारा अर्धचेतन या अचेतन अवस्था में ही होता है। व्यक्ति इनका प्रयोग चेतन अवस्था में जानबूझ कर नहीं करता। जिस प्रयोजन से इनका प्रयोग किया जा रहा है इसके बारे में उसे स्पष्ट ज्ञान नहीं होता।
- हमारी ऐसी आवश्यकताएँ तथा इच्छाएँ हैं, जिनकी पूर्ति किसी कारण से नहीं हो पाती और जिनकी पूर्ति के लिए हम काफी चिन्तित रहते हैं। उनकी अप्रत्यक्ष ढंग से पूर्ति करना इनका मुख्य प्रयोजन होता है।
- रक्षात्मक युक्तियों के माध्यम से व्यक्ति को संवेगात्मक आघातों, कुण्ठाओं तथा अन्तर्द्वन्द्वों के फलस्वरूप जो हानि पहुँच सकती है उससे अपनी अस्थायी रूप से रक्षा करने में मदद मिलती है।
- रक्षात्मक युक्तियों का प्रयोग करने वाले व्यक्तियों को असामान्य व्यक्ति (Abnormal person) या मानसिक रोगी (Mentally ill) की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। इनका प्रयोग तो किया ही इसलिए जाता है कि व्यक्ति का मानसिक संतुलन जैसे-तैसे बना रहे। यह बात अलग है कि इनका आवश्यकता से अधिक उपयोग मानसिक व्याधियों को जन्म देने वाला बन सकता है।

महत्वपूर्ण रक्षात्मक युक्तियाँ (Important Defence Mechanisms)

1. तर्कसंगतीकरण या युक्ति संगतीकरण (Rationalization)

— इसे औचित्यस्थापन भी कहा जाता है क्योंकि इसमें युक्ति का सहारा लेकर व्यक्ति अने किए हुए कार्य या व्यवहार की उचितता सिद्ध करने का प्रयत्न करता है। इसे तर्कसंगीतकरण इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसमें व्यक्ति विभिन्न प्रकार के तर्क देकर अपने व्यवहार को उपयुक्त ठहराने का प्रयत्न करता है। वैसे वास्तव में उसका यह व्यवहार ठीक नहीं होता और वह यह जानता भी है और इसी कारण वह इस रक्षा युक्ति की आड़ लेता है। इस युक्ति के सहारे अब वह विभिन्न प्रकार के बहाने बनाता है, सामाजिक रूप से स्वीकृत कारणों की मदद से अपने अनुचित व्यवहार को उचित ठहराने की कोशिश करता है।

अंगूर खट्टे प्रकार का तर्कसंगतीकरण (Sour Lemon Type Rationalization) ऐसी रक्षा युक्ति है जिसमें व्यक्ति प्रयत्न करने में जब असफल हो जाता है तो वह अंगूरों को खट्टा कहने वाली लोमड़ी की तरह तर्क संगतीकरण युक्ति का सहारा लेकर यह कहते हुए पाया जा सकता है कि नौकरी उसके योग्य नहीं है।

2. प्रतिक्रिया या प्रतिक्रियाकरण (Reaction Formation)

— कई बार किसी व्यक्ति की इच्छाएं या आवश्यकताएं इस तरह की होती हैं कि उन्हें सामाजिक रूप से प्रकट करना या उनकी पूर्ति होना व्यक्ति के अपने हित में नहीं होता क्योंकि इससे उसके सम्मान तथा अहं को चोट पहुंचाने का खतरा होता है तथा सामाजिक रूप से उसे तिरस्कार या अपयश झेलना होता है।

3. दमन (Repression)—हमारे दुःखद अनुभव, कटु स्मृतियाँ, मानसिक संघर्ष और अतृप्त आकांक्षाओं को अचेतन मन के किसी कोने में दबा दिया जाता है। इस प्रकार के हम अपनी बहुत-सी बातों को जो हमें चिन्तित और बेचैन कर सकती हैं जान-बूझकर भूल जाने का प्रयत्न करते हैं। इस अवस्था में हमें इस कारण से तनावों और संघर्षों से थोड़ी बहुत अस्थायी मुक्ति मिल जाती है क्योंकि इन तनावों और चिन्ताओं को उत्पन्न करने वाली परिस्थितियाँ चेतन मन में विरामजमान नहीं हैं।

4. प्रतिगमन (Regression)—प्रतिगमन का शाब्दिक अर्थ पीछे की ओर लौटना अथवा भूत में वापिस जाना (Flashback) होता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत कोई व्यक्ति अपने को मानसिक तनावों और संघर्षों से बचाने के लिए अपनी आयु स्तर से नीचे के स्तर का व्यवहार करने लगता है। उदाहरण के लिए एक मनुष्य प्रेम व्यापार में असफल हो जाने के पश्चात् उस समय प्रतिगमन करता हुआ पाया जाता है जबकि वह गुड़ियों के साथ खेलने अथवा उन्हें सजाने का प्रयत्न करता है। इसी प्रकार एक बड़ा बालक उस समय प्रतिगमन कर शिशु के समान व्यवहार करता पाया जाता है जब उसका नया भाई जन्म लेता है और वह अपने आपको उपेक्षित अनुभव करता है।

5. विस्थापन (Displacement)—कभी-कभी ऐसा होता है

कि एक व्यक्ति किसी विशेष व्यक्ति या वस्तु के प्रति अपने विचारों व भावनाओं को खुलकर व्यक्त करने में अपने आपको असमर्थ पाता है तो वह अपनी अभिव्यक्ति के लिए किसी दूसरे वस्तु या व्यक्ति का माध्यम बनाकर अपनी दबी हुई कुण्ठित भावनाओं तथा आक्रोश को निकालने का प्रयत्न करता है और इस तरह अपने अहं और स्व को आघात लगाने से बचा लेता है। बचाव की इस युक्ति को विस्थापन युक्ति की संज्ञा दी जाती है। अपनी दमित भावनाओं तथा आक्रोश के लिए किस को माध्यम बनाया जाए इस बात का ध्यान भी यहां उसके द्वारा रखा जाता है।

इस युक्ति का प्रयोग करते हुए इस प्रकार के विद्यार्थी अपनी असफलता के लिए अपने अध्यापक, माता-पिता अपनी अस्वस्थता या अपने भाग्य को दोषी ठहरा कर अपने 'आत्म' (Self) का बचाव कर सकते हैं। एक क्रिकेट खिलाड़ी बार-बार अपने बल्ले की तरफ यह संकेत दे सकता है कि उसके ठीक प्रकार न खेलने का कारण उसका यह बेकार सा बल्ला ही है। एक बच्चा कुर्सी पर ठीक से न बैठने के कारण गिर जाने पर कुर्सी को लात मारकर दिखाना चाहता है कि क्या खराब कुर्सी है इस पर बैठने वाला तो गिरेगा ही।

6. आक्रामकता (Aggression)—किसी भी कारण से अपने क्रोध पूर्ण व्यवहार को हिंसात्मक (शाब्दिक या क्रियात्मक) ढंग से अभिव्यक्त करना आक्रामकता कहलाता है। बहुत से लोग समायोजन या रक्षा युक्ति के रूप में इस हिंसात्मक अभिव्यक्ति को अपनाता पसन्द करते हैं। परिस्थितियों, व्यक्तियों तथा समस्याओं से निबटने का यह तरीका उन्हें उन पर हावी रहने में मदद करता है। आक्रामकता का रुख अपना कर बहुत से लोग अपने कार्यों को करने तथा उनमें सफलता प्राप्त करने कामयाब भी रहते हैं। जैसे जो ठीक आक्रामक रुख (Aggressive attitude) अपनाता है वह कई बार अपनी इस आक्रामकता की परिणिति सफलता या जीत में देखता है।

7. प्रक्षेपण (Projection)—प्रक्षेपण की क्रिया के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी कमजोरियों और दोषों की झलक दूसरों में देखने का प्रयत्न करता है। एक कुरूप व्यक्ति को दूसरों में कुरूपता दिखाई देती है और वह उसके कुरूप होने के लिए आलोचना करता रहता है। इसी प्रकार नकल करते हुए पकड़ा जाने वाला विद्यार्थी यह कह कर अपने को बचाने या संतोष देने का प्रयत्न करता है कि दूसरे भी नकल कर रहे हैं। व्यक्ति जिसकी यौन भावनाएं अथवा कामेच्छाएं अतृप्त हैं दूसरों को अधिक कामी और विषयी होने के लिए आलोचना करते हुए देखा जा सकता है। इसी कारण एक लम्पट पति अपनी सती सावित्री पत्नी पर दुराचारिणी होने का लांछन लगाता रहता है तथा एक दिल फेंक स्त्री अपने पति के चरित्र को लेकर चिन्तित रहती है।

अभिप्रेरणा (Motivation)

मूवर लैटिन शब्द Motoum या Movere से बना है। जिसका अर्थ है, Move, Motor या Motion. इसमें अभिप्रेरणा का तात्पर्य उस अवस्था से है, जो व्यक्ति को किसी क्रिया की ओर प्रेरित करे। यह एक आन्तरिक अवस्था कही जाती है।

जिसे पहले अन्तर्नोद (Drive) कहा जाता था, आज की मनोवैज्ञानिक शब्दावली में उसे ही अभिप्रेरक (Motive) कहा जाता है। इन्हें परिभाषा की दृष्टि से व्यक्ति में निहित ऐसी आन्तरिक शक्ति तथा दशा के रूप में जाना जा सकता है जिसके द्वारा व्यक्ति विशेष को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के सन्दर्भ में एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को अभिप्रेरित किया जाता है। बालकों की तरह इन्हें भी शारीरिक, जैविक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरकों में वर्गीकृत किया जा सकता है। भूख, प्यास, काम, सम्मान तथा उपलब्धि से सम्बन्धित अभिप्रेरक इनके उदाहरण हैं।

अभिप्रेरणा के तीन घटक हैं—(1) आवश्यकता (2) अन्तर्नोद (3) प्रोत्साहन।

आवश्यकता व्यवहारों को शक्ति प्रदान करती है। ड्राइव (अन्तर्नोद) ऐसे व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है। यह आन्तरिक तथा जैविक रूप उत्पन्न होती है तथा प्रोत्साहन कार्य की गति में तीव्रता लाता है।

अभिप्रेरणा से तात्पर्य किसी बुनियादी अभिप्रेरक से संचालित, व्यवहारिक स्थिति है जिससे वशीभूत होकर व्यक्ति किसी समय विशेष पर अपनी किसी मूलभूत आवश्यकता की पूर्ति हेतु किसी विशेष प्रकार की लक्ष्य निर्देशित व्यवहार करने के लिए मजबूर रहता है। अभिप्रेरणा के फलस्वरूप व्यक्ति के द्वारा किए जाने वाले इस प्रकार के व्यवहार को ही अभिप्रेरणात्मक व्यवहार की संज्ञा दी जाती है।

आमतौर पर, अभिप्रेरणा दो वर्गों में विभाजित होती है। पहला, जैविक अभिप्रेरणाएँ हैं। कुछ अभिप्रेरणाएँ हमारे जीवन के लिए आवश्यक होती हैं जैसे भूख, प्यास, नींद की आवश्यकता। आप को यह सीखना नहीं पड़ता कि आप खाना, पीना या सोना चाहते हैं। ये जन्मजात होती हैं।

अन्य सभी अभिप्रेरणाएँ दूसरी श्रेणी में आती हैं, ये हैं सामाजिक और मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरणाएँ जो हमारे व्यवहार को प्रभावित करती हैं। इनमें से अधिकतर सीखी जाती हैं। हालाँकि आपको यह समझना चाहिए कि सीखी गई और जन्मजात अभिप्रेरणाओं को पूरी तरह से अलग नहीं किया जा सकता है।

जैविक अभिप्रेरणा

प्रत्येक जीव को जीवित रहने के लिए भोजन, पानी और सोने की आवश्यकता होती है। प्रत्येक जीव को किसी तरीके से शरीर को स्थिर तापमान बनाए रखना होता है, स्वयं को ऑक्सीजन लेने-देने होते हैं और स्वयं को शारीरिक क्षति से बचाना होता है। (दर्द हमें बताता है क्योंकि वह शरीर का संकेत देने का तरीका होता है।)

आवश्यकताओं से जन्में ये जैविक शक्तियाँ किसी भी प्राणी को उसकी जरूरतों को पूरा करने की और अग्रसर करते हैं। ये इच्छाएँ किसी भी जीव को उसके अपने आन्तरिक पर्यावरण से प्रतिक्रिया करने हेतु उत्प्रेरित करती हैं। उन्हें जब भूख लगती है तो वे खाते हैं, प्यास लगती है तो पानी पीते हैं और थकावट होती है तो वे सोते हैं। वह इच्छा जो हमारे शरीर की स्थितियों को स्थिर रखती है उन्हें, **समवस्थान (Homeostasis)** कहा जाता है।

परन्तु जैविक आवश्यकताओं को पूरा करना केवल अल्पकालिक प्रक्रिया है। खाने के बाद आपको भूख नहीं लगेगी, आपकी खाने की इच्छा कुछ समय के लिए कम हो जाएगी जब तक कि आपको फिर से भूख न लगे। इस तरह जैविक अभिप्रेरणा चक्रीय है।

उदाहरण के तौर पर, गिलहरी पतझड़ के मौसम में सर्दियों के लिए भोजन जमा करना शुरू कर देती है। भालू पतझड़ के समय इतना खा लेता है कि उस पर चरबी की मोटी परतें जम जाएँ, जिससे कि वह सर्दियों में **शीत निष्क्रियता (Hibernation)** के दौरान स्वयं को ऊर्जा प्रदान कर सके।

होमियोस्टेसिस शब्द का प्रयोग मनोविज्ञान में आजकल ऐसी प्रक्रिया के लिए किया जाता है जिसके द्वारा जब व्यक्ति विशेष का अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के सन्दर्भ में मानसिक संतुलन बिगड़ने लगे तो इस असंतुलन को दूर करने हेतु किसी विशेष अभिप्रेरक की उत्पत्ति हो और इस अभिप्रेरक के वशीभूत अभिप्रेरित व्यवहार के संपादन द्वारा व्यक्ति अपनी पूर्व शारीरिक एवं मानसिक मनोदशा को प्राप्त कर सके।

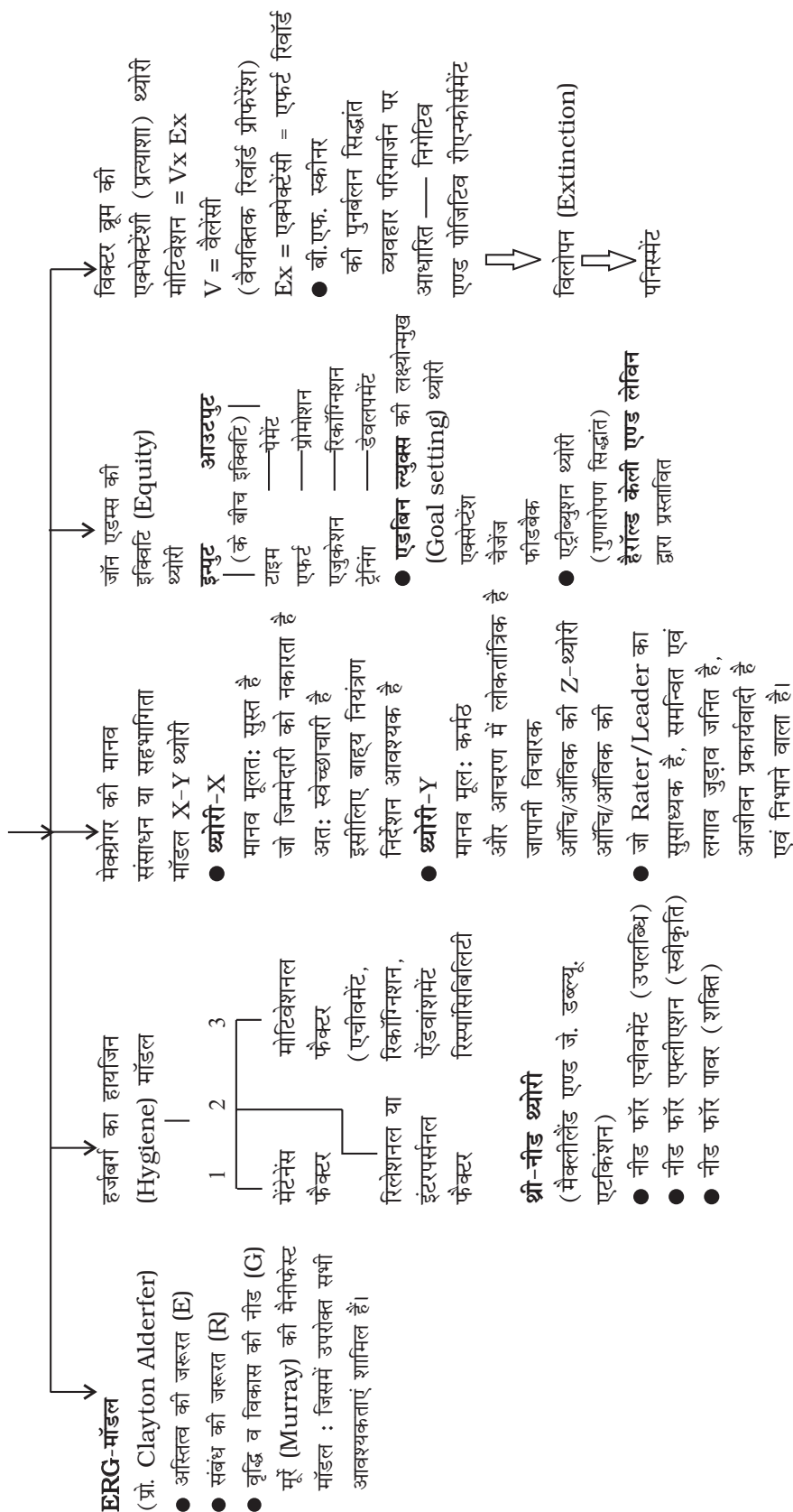
प्रेरणा के अन्य प्रकार

प्रेरणा दो प्रकार की होती है : आन्तरिक प्रेरणा और बाह्य प्रेरणा।

1. **आन्तरिक प्रेरणा**—आन्तरिक प्रेरणा रुचि व आनन्द से स्वतः उत्पन्न होती है न कि किसी बाहरी बल के कारण आन्तरिक प्रेरण 11 किसी क्रियाकलाप में प्राप्त होने वाले आनन्द पर आधारित होती है और न ही किसी बाहरी पुरस्कार के उदाहरण—विज्ञान/गणित के प्रोजेक्ट विद्यार्थी को शायद इतना आनन्द प्रदान करें कि इसके फलस्वरूप विद्यार्थी स्वयं ही वैसे क्रियाकलाप करने के लिए प्रेरित हो जाये।

2. **बाह्य प्रेरणा**—किसी बाह्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्य करना बाह्य प्रेरणा है। उदाहरण—यदि छात्र माता-पिता की डांट से बचने के लिए या उन्हें नाराज न करने के कारण गृहकार्य करता है तो वह बाहरी प्रभावों से प्रेरित है। अधिकतर बाहरी प्रेरणा के स्रोत ईनाम, प्रशंसा जैसे पैसे व अंक आदि हो सकते हैं। यदि माता-पिता व अध्यापक प्रायः अपने बच्चों के सफलता से कार्य संपूर्ण करने पर कुछ ईनाम या तोहफा आदि देते हैं, तो वह बाह्य प्रेरणा है।

अभिप्रेरणा के उपागम/सिद्धांत/प्रतिमान (Approach/Theory/Model)



अभिप्रेरणा के सिद्धान्त (Theory of Motivation)

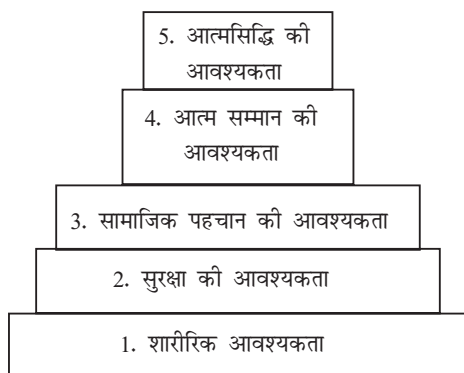
I. सोपानीकृत सिद्धान्त (Hierarchical theory)

आवश्यकताओं और इनके महत्व को आंकते हुए सोपानीकृत करने का प्रयास प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक अब्राहम मैस्लो द्वारा किया गया। उसने प्रथम स्तर पर शारीरिक आवश्यकताओं को स्थान दिया और फिर आगे के बढ़ते हुए स्तरों पर क्रमशः सुरक्षा, स्नेह या प्रेम, प्रतिष्ठा सम्बन्धी आवश्यकताओं को रखते हुए सबसे ऊपर के स्तर पर आत्माभिव्यक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं को स्थान दिया और कहा कि सामान्य रूप से हम निचले स्तर की आवश्यकताओं के बारे में प्रयत्न करते हैं।

अभिप्रेरणा के आवश्यकता सिद्धान्त का प्रतिपादन 1954 ई. में अब्राहम मैस्लो ने किया। इस सिद्धान्त के अनुसार जब व्यक्ति अपने अस्तित्व के लिए किसी वस्तु की कमी या आवश्यकता महसूस करता है तो वह क्रियाशील हो जाता है। मैस्लो ने मानव आवश्यकताओं की व्याख्या एक सोपानक्रम (Hierarchy) के रूप में की है।

यह नीचे से बढ़ते क्रम में होती है।

मैस्लो के सिद्धान्त के अनुसार यह सामाजिक आवश्यकता कहते हैं। इस आवश्यकता में व्यक्ति विद्यालय, परिवार, समाज एवं राजनीतिक पार्टी आदि के साथ सामंजस्य बनाने का प्रयास करता है। यह प्रथम दो आवश्यकताओं के पूर्ण होने पर ही होता है।



अभिप्रेरणा या आवश्यकता का सिद्धान्त

II. क्लार्क हल (C. Hull) का अन्तर्नोद हास सिद्धान्त (Drive Reduction theory)

यह सिद्धान्त अभिप्रेरित व्यवहार की व्याख्या करते हुए बताता है कि भूख या प्यास आदि जैविक आवश्यकताओं से क्षुब्ध व्यक्ति की उत्तेजना या अन्तर्नोद बढ़ जाती है। फलस्वरूप ऐसी आवश्यकता की संतुष्टि अथवा उसमें कमी व पूर्ति के लिए व्यवहार करता है। इसी के विपरीत ड्राइव एरॉसल थ्योरी का जन्म हुआ।

कई मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि अभिप्रेरणा चक्र (Cycles) का अनुसरण करती है जो किसी प्राणी के अनुभव स्वरूप उत्पन्न होना और आवश्यकताओं को पूर्ण करने में संपन्न होना है।

जो इच्छाएँ किसी जीव को अपनी जैविक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की ओर उत्तेजित करती हैं उन्हें प्राथमिक (Primary) इच्छाएँ कहा जाता है। ये जन्मजात होती हैं जैसे खाना, सोना या पीने की इच्छा।

सामाजिक और मनोवैज्ञानिक इच्छाओं को द्वितीय (Secondary) इच्छाएँ कहा जाता है। ये आमतौर पर अधिगम हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि द्वितीय इच्छाओं को कम करने की इच्छा प्राथमिक इच्छाओं को कम करने से अधिक शक्तिशाली हो सकती है।

III. व्यवहार सिद्धान्त (Behaviour theory)

स्किनर के व्यवहार सिद्धान्त के अंतर्गत मानव के कर्म पुरस्कार और दंड से शासित होते हैं। व्यवहार का उद्देश्य सुख (भोजन, साथी) को प्राप्त करना और दर्द (सामाजिक अस्वीकृति) और शारीरिक हानि और भोजन की कमी से बचना है। व्यवहार का सिद्धान्त मानता है कि किसी भी कर्म का परिणाम व्यवहार को तय करता है। हम उन अनुभवों को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं जिनसे भूतकाल में हमें प्रतिफल मिले थे तथा उनसे बचने की कोशिश करते हैं जिनके परिणाम अच्छे नहीं थे।

व्यवहारात्मक शास्त्रियों ने अभिप्रेरणा के अन्य मुख्य पक्षों को भी खोजा है। अधिकतर अनुसंधान इस बात से संबंधित हैं कि लोगों को 'क्या' उनके लक्ष्यों के प्रति अग्रसर करता है। वहीं यह विपरीत प्रकार का अभिप्रेरणा है कि क्या आपको लक्ष्यों से दूर ले जाता है। असफलता, शारीरिक दर्द और अपर्याप्त प्रतिफल, ये सभी नकारात्मक उत्तेजक तत्व हैं।

IV. मनोगत्यात्मक सिद्धान्त (Psychodynamic theory)

इस सिद्धान्त को सिग्मण्ड फ्रायड ने विकसित किया है। मनोगत्यात्मकता का सिद्धान्त अभिप्रेरण के प्रति अधिक जटिल दृष्टि को दर्शाता है। हमारे कुछ सर्वाधिक शक्तिशाली उद्देश्यों में से एक है अचेतावस्था (Unconsciousness)। जब कोई व्यक्ति अपनी अभिप्रेरण या दबी हुई इच्छाओं से सचेत नहीं होता। ये हमारे अचेतन मन में रहती हैं और किसी भी कारण से नियंत्रित नहीं की जा सकती।

V. संज्ञानात्मक सिद्धान्त (Cognitive theory)

अभिप्रेरणा का यह सिद्धान्त तर्कसंगत विकल्पों के परिणामस्वरूप व्यवहार करना से विकसित है। न तो यह अचेतन और नहीं जन्मजात इच्छाओं को अभिप्रेरणा के महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में देखा जा सकता है। कोई व्यक्ति केवल लक्ष्य के प्रति अग्रसर नहीं हो जाता परंतु किसी निश्चित समय और अवस्था में विकल्पों का चयन करता है और फिर उस लक्ष्य को चुनता है जो उसकी इच्छित आवश्यकताओं के लिए सबसे उचित प्रतीत होता है। यह अन्य विकल्पों का मूल्यांकन करके के चयन करने और कई लक्ष्यों में से कुछ का चयन की योग्यता है जो मनुष्य को अन्य जानवरों से अलग बनाता है।

- जीन प्याजे मानते हैं कि परिणाम या उत्तर पर ध्यान केंद्रित करने की बजाय कई चरणों पर ध्यान देने से अंतिम उत्पाद तक पहुँचा जा सकता है।

- प्रत्येक विद्यार्थी की रुचियों, योग्यताओं और सीमाओं का सम्मान करें।
- चूँकि प्रत्येक बच्चा अलग समय पर अलग-अलग अवस्थाओं तक पहुँचता है ऐसे में प्रत्येक बच्चे पर किसी एक तरीके को सीखने के लिए दबाव बनाने की बजाय प्रत्येक बच्चे की विकास की अवस्थाओं पर ध्यान देना चाहिए और उसी के अनुसार पाठों को रूपांतरित करना चाहिए।

उपलब्धि अभिप्रेरणा क्या है?

(What is a Achievement motivation?)

उपलब्धि-अभिप्रेरणा का आधारभूत लक्ष्य उपलब्धि होता है। जो उपलब्धि के लिए कोई काम करते हैं उन्हें उपलब्धि अभिप्रेरणा द्वारा प्रेरित माना जाता है। हम जानते हैं कि अभिप्रेरकों (Motives) को विभिन्न वर्गों में बांटा जा सकता है। जब कोई व्यक्ति विपरीत लिंग के साथ सम्बन्ध रखने का प्रयास करता है तो कहा जा सकता है कि उसका अभिप्रेरक 'काम' (Sex) है। यदि कोई विद्यार्थी कक्षा का मॉनीटर बनना चाहता है या फुटबाल की टीम का कैप्टन बनना चाहता है तो इसका अर्थ है कि शक्ति प्राप्त करना ही उसका अभिप्रेरक है। इसी प्रकार स्कूल में अपने कार्य को सुधारने की इच्छा या अच्छा ग्रेड प्राप्त करने की इच्छा इंजीनियर बनने की इच्छा आदि उपलब्धि अभिप्रेरकों के अन्तर्गत आते हैं।

अतः हमारी उपलब्धि अभिप्रेरणा के पीछे उपलब्धि अभिप्रेरकों का ही हाथ होता है। अभिप्रेरकों के वशीभूत कोई भी व्यक्ति ऐसा व्यवहार करने में कार्यरत या उसके लिए बेचैनी से आतुर रहता है जिसके द्वारा उसे किसी भी प्रकार की सफलता या उपलब्धि प्राप्त हो सके।

उपलब्धि अभिप्रेरक के विपरीत मनुष्य में 'पलायन अभिप्रेरक' (Avoidance Motive) की प्रवृत्ति देखी जाती है अर्थात् असफलता

से बचाव की प्रवृत्ति-ताकि असफल होने पर कहीं लज्जित न होना पड़े या अपमान न उठाना पड़े। उपलब्धि लक्ष्य में किसी प्रकार की संतुष्टि को अत्यधिक महत्व मिलता है जबकि 'पलायन लक्ष्य' में पीड़ा को अत्यधिक महत्व देखकर उससे बचने का प्रयास किया जाता है।

अभिप्रेरणा और अधिगम

अधिगम की कुंजी अभिप्रेरणा के हाथ में रहती है। विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने हेतु प्रमुख रूप से हम जिन सिद्धान्तों या विनियमों का प्रयोग करते हैं वे हैं-अधिगम हेतु तत्परता, आवश्यकताओं और प्रेरकों से लाभ उठाना, सक्रिय भागीदारी, रुचि तथा ध्यान की बनाए रखना, लक्ष्य एवं उद्देश्यों की निश्चितता एवं स्पष्टता, अनुदेशन सामग्री का उचित चयन, संगठन तथा उसे प्रदान करने की उचित विधियाँ, उपयुक्त शैक्षिक वातावरण, उचित प्रोत्साहन तथा पुनर्बलन तथा विद्यार्थियों के सामने उचित उदाहरण एवं आदर्श उपस्थित करने का सिद्धान्त।

अभिप्रेरित करने के सिद्धान्तों को अनुपालन करने के अतिरिक्त अध्यापकों को विशेष कक्षा परिस्थितियों में विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने के उपायों तथा तकनीक पर भी ध्यान देना चाहिए। इन तकनीकों तथा उपायों में प्रमुख रूप से जिनका उल्लेख हो सकता है वे हैं-बाल केन्द्रित दृष्टिकोण, नये ज्ञान को पूर्ण ज्ञान से जोड़ना, शिक्षण में प्रभावशाली विधियों तथा सहायक साधनों का प्रयोग, उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की निश्चितता, परिणाम एवं प्रगति का ज्ञान, कुछ विशेष तकनीकों जैसे प्रशंसा एवं आलोचना, पुरस्कार एवं एण्ड प्रतियोगिता एवं सहयोग आदि का समुचित उपयोग, उचित दृष्टिकोण तथा अहं भावना का विकास एवं अधिगम सम्बन्धी उचित परिस्थितियों एवं वातावरण के सृजन पर उचित ध्यान देना।

अभिप्रेरणा का मापन (Measurement of Motivation): इस हेतु सामान्यतया निरीक्षण विधि, प्रयोगशाला विधि, व्यक्तित्व व व्यवहार की जाँच तकनीक तथा मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया जा सकता है। इनमें से 'मानकीकृत परीक्षण जो आसानी से मनोवैज्ञानिक प्रयोगशालाओं तथा परीक्षण विक्रेताओं के पास उपलब्ध रहते हैं, उनका प्रयोग अधिक सुविधाजनक सिद्ध हो सकता है। इनकी सहायता से विशेष प्रकार के अभिप्रेरणात्मक व्यवहार जैसे उपलब्धि अभिप्रेरणा (Achievement Motivation) स्तर का मापन काफी अच्छे ढंग से किया जा सकता है।

आदत (Habits), रुचि (Interest) अभिरुचि (Aptitude) और अभिवृत्ति/मनोवृत्ति (Attitudes)

- आदतें (Habits) अनुभवों एवं अभ्यासों का प्रतिफल है। जब भी किसी विशेष क्रिया को बार-बार उसी रूप में दोहराया जाता है तो उसे संपादित करना सहज क्रिया (Reflex action) की तरह स्वचालित सा ही हो जाता है। उसके ऐसा होने पर यही कहा जाता है कि अब उसको ऐसा करने की आदत पड़ गयी है।
- स्वचालित एवं यांत्रिक होने के कारण बहुधा आदतों, मूल-प्रवृत्तियों तथा सहज क्रियाओं को एक ही प्रकार की क्रिया समझ लिया जाता है। परन्तु ऐसा नहीं है। आदतें अर्जित व्यवहार की श्रेणी में आती है, ये शारीरिक और मानसिक होती है। इन्हें व्यक्तिगत एवं विशिष्ट माना जाता है और इनमें आवश्यकतानुसार वांछित सुधार और परिवर्तन लाया जा सकता है।
- पढ़ने-लिखने की अच्छी आदतें विकसित होने पर विद्यार्थियों का अधिगम मार्ग काफी सहज हो जाता है और जीवन को ठीक तरह जीने की अच्छी आदतें उन्हें अच्छी तरह विकसित कर सफल जीवन की ओर ले जाती है। इस तरह जीवन में अच्छा या बुरा होना, सफलता या असफलता प्राप्त करना सब कुछ अच्छी या बुरी आदतों के निर्माण पर निर्भर करता है।

- रुचि एवं अभिरुचि (Interest and Aptitude) को, व्यवहार को दिशा प्रदान करने वाली एक ऐसी अर्जित प्रवृत्ति के रूप में जाना जा सकता है जिसके वशीभूत व्यक्ति सामान्य परिस्थितियों में किसी विशेष वस्तु या उद्दीपन के प्रति एक विशेष प्रकार का निश्चित व्यवहार करने को तत्पर रहता है।
- अभिवृत्तियों (Attitude) को व्यवहार से पूर्व की मनोदैहिक अन्य अवस्थाओं या प्रवृत्तियों, जैसे—आदत, रुचियों, अभिरुचियों तथा बुनियादी अभिप्रेरकों का संगठन समझा जाना चाहिए। इस कार्य में इनकी अपनी प्रकृतिजन्य विशेषताएं काफी सहायता कर सकती हैं। प्रमुख विशेषताओं के रूप में जिनका उल्लेख हो सकता है, वे हैं—अभिवृत्तियों का अर्जित होना, इनमें व्यक्ति-वस्तु सम्बन्ध का विद्यमान होना, इनका तत्परता की अपेक्षाकृत स्थायी अवस्था होना, इनमें अभिप्रेरणात्मक-प्रभावोत्पादक विशेषता का पाया जाना, इनके क्षेत्र एवं स्वरूप की विस्तृतता तथा अभिवृत्तियों का सकारात्मक तथा नकारात्मक होना आदि।
- प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक ऑलपोर्ट के अनुसार अभिवृत्तियों के निर्माण में चार विशेष प्रकार की परिस्थितियां विशेष रूप से सहयोगी सिद्ध होती हैं, जैसे—
 1. किसी वस्तु या विचार के प्रति होने वाले सभी विशिष्ट भावना या अनुभव का इकट्ठा हो जाना
 2. नये अनुभवों के आधार पर पुरानी अभिवृत्तियों में सुधार लाना
 3. तात्कालिक विशेष अनुभवों का हावी होकर तत्परता को जन्म देना तथा
 4. संस्कारवश पूर्वनिर्मित अभिवृत्तियों को पूर्ववत् ग्रहण कर लेना।
- अभिवृत्तियों के निर्माण एवं विकास में सहायक कारकों को मुख्य रूप से दो वर्गों में बांटा जा सकता है पहले वर्ग में वे कारक आते हैं जो व्यक्ति विशेष में ही निहित होते हैं (जैसे—उसके शारीरिक, सामाजिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, सामाजिक तथा नैतिक विकास का स्तर) तथा दूसरे वर्ग में वे कारक हो सकते हैं जो व्यक्ति विशेष के वातावरण में निहित रहते हैं (जैसे—उसका घर-परिवार, परिवार से बाहर का सामाजिक वातावरण एवं परिस्थितियां)।

मनोवृत्ति भावात्मक संघटक (affective or A component), व्यवहारात्मक संघटक (behavioural or B component) तथा संज्ञानात्मक संघटक (cognitive or C component) का एक संगठित तंत्र (Organized system) होता है। इसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने मनोवृत्ति का ए.बी.सी. मॉडल (ABC model) कहा है।

संज्ञानात्मक संघटक से तात्पर्य किसी घटना या वस्तु के संबंध में व्यक्ति में जो समझ होता है, उससे होता है। भावात्मक संघटक से तात्पर्य किसी वस्तु या घटना या व्यक्ति के प्रति सुखद या दुःखद

भाव की तीव्रता से होता है। व्यवहारात्मक संघटक से तात्पर्य उस वस्तु या घटना के प्रति विशेष ढंग से व्यवहार करने की तत्परता से होती है। समाज मनोवैज्ञानिकों ने मनोवृत्ति को इन्हीं तीन संघटकों का एक स्थायी संगठित तंत्र (enduring organized system) माना है।

मनोवृत्ति की कुछ खास-खास विशेषताएँ (characteristics) होती हैं जिनमें निम्नांकित प्रमुख हैं—

- (i) मनोवृत्ति का संबंध हमेशा किसी विषय, धारणा या विचार से होता है।
- (ii) मनोवृत्ति सीखी जाती है।
- (iii) मनोवृत्ति विशिष्ट दिशा में निर्देशन करती है।
- (iv) मनोवृत्ति अपेक्षाकृत स्थायी होती है।
- (v) मनोवृत्ति में प्रेरणात्मक गुण होता है।
- (vi) मनोवृत्ति में तीव्रता का गुण होता है।

मनोवृत्ति परिवर्तन की व्याख्या करने के लिए कई तरह के सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है जिनमें संतुलन सिद्धान्त (balance theory), संज्ञानात्मक असंवादिता सिद्धान्त (cognitive dissonance theory), त्रि-प्रक्रिया सिद्धान्त (three-process theory) प्रमुख हैं।

मनोवृत्ति परिवर्तन के संतुलन सिद्धान्त (balance theory) का प्रतिपादन हाईडर (Heider) द्वारा किया गया। इस सिद्धान्त को पी-ओ-एक्स मॉडल (P-O-X model) भी कहा जाता है। फेल्डमैन (Feldman, 1985) के अनुसार हाईडर का संतुलन सिद्धान्त संज्ञानात्मक संगति सिद्धान्तों (cognitive consistency theories) का पितामह (grandfather) है। इस सिद्धान्त के अनुसार मनोवृत्ति परिवर्तन मॉडल में तीन तत्व होते हैं : पहला तत्व व्यक्ति (Person) जिसे हाईडर ने संकेत के रूप में 'P' कहा है। दूसरा तत्व दूसरा व्यक्ति होता है जिसे संकेत के रूप में 'O' कहा गया है। तीसरा तत्व कोई वस्तु या व्यक्तित्व होता है जिसे हाईडर 'X' ने कहा है।

इस सिद्धान्त के अनुसार जब इन तत्वों के बीच असंतुलित अवस्था (imbalanced state) होती है तो इससे व्यक्ति में दुःखद भावना उत्पन्न होती है और व्यक्ति की मानसिक स्थिति तनावयुक्त होती है। ऐसी अवस्था व्यक्ति को यानी P को X या O के साथ अपने संबंध में परिवर्तन करने के लिए प्रेरित करती है ताकि असंतुलित अवस्था संतुलित अवस्था में परिवर्तित हो जाय और व्यक्ति की मनोवृत्ति में परिवर्तन हो जाये।

संज्ञानात्मक असंवादिता (Cognitive Dissonance)

संज्ञानात्मक असंवादिता सिद्धान्त का प्रतिपादन फेस्टिंगर ने किया। इस सिद्धान्त के अनुसार मनोवृत्ति में परिवर्तन असंवादिता के कारण होता है। जब दो संज्ञानात्मक कारक आपसी विरोधाभासी होते हैं, तो इस स्थिति को असंवादिता की संज्ञा दी जाती है। असंवादिता की स्थिति उत्पन्न होने से व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होता है जिससे छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति को अपनी मनोवृत्ति में परिवर्तन करना पड़ता है। असंवादिता को सूत्र द्वारा इस प्रकार ज्ञात किया जा सकता है—

$$\text{असंवादिता (dissonance)} = \frac{\text{महत्त्व} \times \text{असंवादी तत्वों की संख्या}}{\text{महत्त्व} \times \text{संवादी तत्वों की संख्या}}$$

इस सूत्र से असंवादिता (dissonance) की मात्रा के बारे में निम्नांकित महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होते हैं—

- (i) असंवादी तत्वों (dissonant elements) की संख्या संवादी तत्वों (consonant elements) की संख्या की अपेक्षा बढ़ने से असंवादिता की मात्रा अधिक होती है।
- (ii) संवादी तत्वों की संख्या असंवादी तत्वों की संख्या से अधिक होने पर असंवादिता कम होती है।
- (iii) असंवादिता की मात्रा भिन्न-भिन्न संज्ञानात्मक तत्वों के महत्त्व पर निर्भर करती है।
- (iv) जब असंवादी तत्वों एवं संवादी तत्वों का समानुपात (proportions) बराबर-बराबर होता है तो असंवादिता की मात्रा अधिकतम (maximum) होती है और ऐसी परिस्थिति में इसका मान एक (1) के बराबर होता है।
- (v) असंवादी तत्वों के बीच विभिन्नता की मात्रा (degree of discrepancy) बढ़ने से असंवादिता की मात्रा में वृद्धि हो जाती है।

मनोवृत्ति परिवर्तन के सिद्धान्त

असंवादिता सिद्धान्त (dissonance theory) के आधार पर समाज मनोवैज्ञानिकों ने दो तरह के महत्वपूर्ण प्राक्कल्पनाओं (hypotheses) का निर्माण किया है—

(i) अगर किसी व्यक्ति को अपनी मनोवृत्ति के विपरीत कुछ कहने या करने के लिए बाध्य किया जाता है तो वह अपनी मनोवृत्ति में इस ढंग का परिवर्तन लाता है जो उसके अर्थात् स्वयं द्वारा किये गए व्यवहार के अनुकूल होता है।

(ii) अपनी मनोवृत्ति के विपरीत व्यवहार करने के लिए जितना अधिक दबाव डाला जाता है, मनोवृत्ति में परिवर्तन उतना ही कम होता है। अगर व्यक्ति को मनोवृत्ति विरोधी व्यवहार (attitude discrepant behaviour) करने के पीछे कमजोर कारण दीखता है तो अधिक संभावना इस बात की होती है कि मनोवृत्ति में परिवर्तन अधिक होगा। इसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने लेस-लीड-टू-मोर प्रभाव (less-lead-to-more effect) कहा है।

मनोवृत्ति परिवर्तन के त्रिप्रक्रिया सिद्धान्त (Three-process theory)

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन केलमैन (Kelman, 1961) द्वारा किया गया। वे तीन प्रक्रियाएँ हैं—अनुपालन (compliance), आत्मीकरण (identification) तथा आन्तरीकरण (internalization)।

अनुपालन में व्यक्ति किसी समूह या अन्य व्यक्ति के विचार या भाव के बारे में मन से असहमत होने पर भी दंड के भय के कारण या किसी तरह के पुरस्कार पाने की लालच में आकर स्वीकार कर लेता है तो इसे अनुपालन की संज्ञा दी जाती है।

आत्मीकरण में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति या समूह के व्यवहारों को किसी बाहरी दबाव जैसे डर या किसी तरह के लोभ आदि के कारण नहीं बल्कि उसे अपने व्यक्तित्व का ही एक अंश मानकर स्वेच्छा से स्वीकार कर लेता है क्योंकि वह व्यवहार उसके व्यक्तिगत मूल्यतंत्र (value system) के उम्मीदों के अनुरूप होता है। अनुपालन से व्यक्ति में होने वाला परिवर्तन थोड़े देर तक ही टिकाऊ होता है; आत्मीकरण में हुए मनोवृत्ति परिवर्तन भी स्थायी नहीं होता है और वह तब तक ही बना रहता है जब तक कि व्यक्ति का संबंध प्रभाव डालने वाले व्यक्ति के साथ अच्छा बना हुआ होता है।

आन्तरीकरण में व्यक्ति की मनोवृत्ति में हुआ परिवर्तन अपेक्षाकृत स्थायी होता है क्योंकि इसका संबंध व्यक्ति के मूल्यतंत्र से होता है।

● **आत्मसात्करण-विषमता सिद्धान्त** (assimilation contrast theory) के प्रतिपादन का आधार शेरिफ तथा हॉलैंड (Sherif & Hovland, 1975) द्वारा किया गया शोध है। इस सिद्धान्त के अनुसार मनोवृत्ति परिवर्तन के बारे में पूर्वकथन करने के लिए यह तय किया जाता है कि सूचना प्राप्तकर्ता की वर्तमान स्थिति या वर्तमान मनोवृत्ति जिसे आंतरिक स्थिरण बिन्दु (internal anchor point) कहा जाता है, तथा दी गयी सूचना से उत्पन्न मनोवृत्ति में कितना अंतर है। जब कोई सूचना स्वीकरण के विस्तार (latitude of acceptance) के क्षेत्र के भीतर पड़ता है तो स्पष्टतः मनोवृत्ति में परिवर्तन होता है परन्तु कोई सूचना स्वीकरण के इस विस्तार से बाहर खासकर अस्वीकरण के विस्तार (latitude of rejection) के क्षेत्र में पड़ता है तो उससे मनोवृत्ति में परिवर्तन नहीं होता है बल्कि यह भी देखा गया है कि ऐसी सूचना जो अस्वीकरण के विस्तार के क्षेत्र में होती है, से कभी-कभी सूचना प्राप्तकर्ता की प्रारंभिक मनोवृत्ति और भी दृढ़ या मजबूत हो जाती है जिसे समाज मनोवैज्ञानिकों ने धमाका प्रभाव (boomerang effect) कहा है।

अभिवृत्ति मापन

थर्स्टन मापनी विधि का प्रतिपादन थर्स्टन (Thurstone, 1928) द्वारा किया गया। इस विधि में समदृष्टि अंतराल विधि या तुल्य आभासी अंतराल विधि (equal-appearing interval method) का उपयोग किया गया है। इस मापनी विधि के निर्माण में कथनों को 11 अंतराल (intervals) या श्रेणी में व्यक्तियों द्वारा छाँटा जाता है। इस 11 श्रेणी में एक छोर पर अनुकूलता (favourableness) तथा दूसरे छोर पर प्रतिकूलता (unfavourableness) तथा बीच में तटस्थ (neutrality) की बिन्दुएँ होती हैं। थर्स्टन द्वारा यह दो महत्वपूर्ण पूर्वकल्पनाएँ की गयी थीं—

1. वे सभी श्रेणियाँ जिनमें कथनों को छाँटा जाता है, मनोवैज्ञानिक रूप से समान होते हैं।
2. निर्णायकों (judges) की अपनी मनोवृत्ति कथनों को छाँटने की प्रक्रिया को प्रभावित नहीं करती है।

कथनों को छाँटने के बाद प्रत्येक कथन का माध्यिका (median) तथा चतुर्थक (quartile) ज्ञात किया जाता है। माध्यिका

एकांश का मापनी मूल्य (scale value) तथा चतुर्थक से निर्णायकों (judges) के बीच प्रत्येक एकांश को छाँटने से संबंध सहमति का पता चलता है। चतुर्थक का मूल्य अधिक होने से यह अनुमान लगाया जाता है कि निर्णायकों के बीच सहमति कम है।

मनोवृत्ति मापने के कई विधियों का प्रतिपादन किया गया है। इनमें मापनी विधि (scale methods) प्रमुख है। महत्वपूर्ण मापनी विधि जिनका उपयोग मनोवृत्ति को मापने में किया गया है :

- इस प्रकार है—थर्स्टन मापनी विधि (Thurstone scaling method)
- लिंकर्ट मापनी विधि (Likert scaling method),
- बोगार्डस सामाजिक दूरी मापनी (Bogardus social distance scale method)
- गट्टमैन संचयी मापनी विधि (Guttman cumulative scaling method) तथा शब्दार्थ विभेदक मापनी विधि (Semantic differential scale method)

● **लिंकर्ट मापनी विधि का प्रतिपादन** रेनसिस लिंकर्ट (Rensis Likert) द्वारा 1932 में किया गया। यह प्रविधि संकलित रेटिंग्स विधि (method of summated ratings) पर आधारित है। इस विधि द्वारा मनोवृत्ति मापनी निर्माण में प्रत्येक कथन के 5 बिन्दु का उत्तर श्रेणी (response categories) होते हैं—पूर्णतः सहमत (strongly agree) सहमत (agree), अनिश्चित (undecided), असहमत (disagree), तथा पूर्णतः असहमत (strongly disagree)। मनोवृत्ति वस्तु के प्रति प्रत्येक अनुकूल कथन (favourable statement) के लिए इन पाँच श्रेणियों को क्रमशः 5, 4, 3, 2 एवं 1 दिया जाता है तथा प्रत्येक प्रतिकूल कथन के लिए क्रमशः 1, 2, 3, 4 एवं 5 अंक दिए जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का कुल प्राप्तांक ज्ञात करके एकांश विश्लेषण (item analysis) किया जाता है जिसमें प्रत्येक एकांश का एकांश-कुल सहसंबंध (item-total correlation) ज्ञात किया जाता है। ऐसे एकांशों का जिसका सहसंबंध अधिक ऊँचा होता है, उसे मापनी में रख लिया जाता है तथा उन एकांशों को जिनका सहसंबंध निम्न होता है या ऋणात्मक होता है, उसे मापनी से अलग कर दिया जाता है।

● **सामाजिक दूरी मापनी विधि** (Social Distance Scale Method) का प्रतिपादन बोगार्डस (Bogardus, 1925) द्वारा किया गया। इस प्रविधि द्वारा व्यक्ति की मनोवृत्ति का मापन सामाजिक दूरी (social distance) के रूप में होती है। यदि किसी व्यक्ति के प्रति कोई व्यक्ति अधिक सामाजिक दूरी दिखलाना है, तो उससे प्रतिकूल मनोवृत्ति तथा कम सामाजिक दूरी दिखलाता है, तो उससे अनुकूल मनोवृत्ति का पता चलता है। बोगार्डस के मापनी में सात कथन होते हैं जो कम सामाजिक दूरी से अधिक सामाजिक दूरी मापने की दिशा में सुव्यवस्थित होते हैं। सबसे पहला कथन द्वारा सबसे कम सामाजिक दूरी तथा सबसे अंतिम कथन द्वारा सबसे अधिक सामाजिक दूरी का पता चलता है। फलतः पहले कथन के रूप में रेटिंग होने से अनुकूल मनोवृत्ति तथा अंतिम कथन के रूप में रेटिंग होने से प्रतिकूल मनोवृत्ति का पता चलता है।

● **संचयी मापनी विधि** (Cumulative scaling method) का प्रतिपादन गट्टमैन (Guttman, 1950) द्वारा किया गया। इस विधि को 'स्केलोग्राम विश्लेषण' (scalogram analysis) भी कहा जाता है। स्केलोग्राम विश्लेषण एक ऐसी विधि है जिसमें सभी एकांशों द्वारा एक ही विमा का मापन होता है। इस तरह की मापनी को एक विमीय मापनी (unidimensional scale) भी कहा जाता है। इस तरह के मापनी की मुख्य विशेषता यह होता है कि किसी एकांश विशेष पर व्यक्ति की अनुक्रिया जानकर अन्य एकांशों पर की अनुक्रियाओं के बारे में जाना जा सकता है। इसे पुनरावर्तनीयता गुणांक (reproductibility) भी कहा जाता है। गट्टमैन ने यह स्पष्ट किया है कि मनोवृत्ति मापनी में पुनरावर्तनीयता गुणांक कम-से-कम 90 अवश्य होना चाहिए।

● **मापनी-विभेद प्रविधि** (scale discrimination technique) का प्रतिपादन एडवार्डस तथा किलपैट्रिक (Edwards & Kilpatrick, 1948) ने किया। वस्तुतः इस विधि में थर्स्टन, लिंकर्ट तथा गट्टमैन द्वारा बतलाए गये सोपानों (steps) के प्रविधियों को मिलाकर एक नयी मापनी तैयार की जाती है।

अभिवृत्ति मापन (Measurement of Attitudes)

अभिवृत्तियाँ निश्चित रूप से आंतरिक प्रवृत्तियाँ हैं। अगर हम इनका मापन करना चाहते हैं तो इन्हें बाहर प्रकाश में लाना होगा। बाह्य व्यवहार के द्वारा ही इन्हें जाना और समझा जा सकता है। ऐसा हम दो प्रकार से कर सकते हैं—

- (1) प्रत्यक्ष विधि द्वारा
- (2) अप्रत्यक्ष द्वारा।

● अभिवृत्तियों के मापन हेतु प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दो प्रकार की विधियाँ काम में लायी जाती हैं। प्रत्यक्ष विधि (**Direct Method**) में जिस वस्तु या विषय के सम्बन्ध में व्यक्ति की अभिवृत्ति का पता लगाना हो उसके बारे में उसकी क्या राय है सीधे ही यह जानकर उसकी अभिवृत्ति का मापन किया जाता है। ऐसी राय जानने हेतु प्रश्नावली, साक्षात्कार चैकिंग लिस्ट तथा अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया जाता है। इन साधनों में से अभिवृत्ति मापनी जैसे थर्स्टन अभिवृत्ति मापनी (**Thurston's Attitude scale**) और लिंकर्ट अभिवृत्ति मापनी (**Likert Attitude Scale**) का उपयोग काफी प्रचलित हैं। अप्रत्यक्ष विधियों (**Indirect Method**) से अभिवृत्ति मापन के उदाहरण के रूप में हम प्रेक्षणी तकनीकों की चर्चा कर सकते हैं। इन तकनीकों में व्यक्ति के सामने ऐसी सामग्री या परिस्थितियाँ प्रस्तुत की जाती हैं जिने माध्यम से व्यक्ति का आन्तरिक व्यवहार खुलकर सामने आ जाये और फिर उसकी सहायता से हम वस्तुओं या विचारों के प्रति उसकी वास्तविक अभिवृत्तियों का मापन कर सकें।

अभिवृत्तियों के विकास का बालक के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक एवं नैतिक विकास के निकट का सम्बन्ध है। अतः यह प्रयत्न किया जाना चाहिए कि बालक का उचित ढंग से सर्वांगीण विकास हो सके।

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)

इस विधि में जिस वस्तु या विषय के बारे में व्यक्ति की अभिवृत्ति का पता लगाना हो, उसके बारे में उसकी राय या विचार मालूम किये जाते हैं तथा उनके आधार पर उसकी अभिवृत्ति का मापन किया जाता है। इस कार्य के लिए निम्न प्रकार आगे बढ़ा जा सकता है—

(1) व्यक्ति से प्रत्यक्ष रूप में यह मालूम करना कि वह विषय या वस्तु के बारे में कैसी भावना रखता है। (प्रश्नावली और साक्षात्कार विधियाँ इसके अन्तर्गत आ सकती हैं)।

(2) दिये हुए कथनों में से जिन कथनों के साथ उनकी राय मिलती है, उन पर निशान अंकित करना। (चैकिंग लिस्ट आदि)।

(3) किसी एक विषय पर दिये हुए क्रमबद्ध कथनों के बारे में बताना कि वह कितनी सीमा तक कथन के पक्ष में है या विपक्ष में (अभिवृत्ति मापनी)

तीसरे क्रम में वर्णित विधा (Devices) अभिवृत्ति मापनी (Attitude Scale) कहलाती है। अभिवृत्तियों के मापन में इनका सर्वाधिक प्रचलन है। मुख्य रूप से निम्न दो प्रकार की अभिवृत्ति मापनी अधिक काम में लाई जाती है :

1. थर्स्टन अभिवृत्ति मापनी (Thurstone's Attitude Scale)

इन्हें सम-दृष्टि अन्तर मापनी (Equal-appearing intervals scales) नाम भी दिया जाता है। ऐसी मापनी का निर्माण करने के लिए किसी वस्तु, व्यक्ति या प्रक्रिया के प्रति विचार व्यक्त करने वाले अनेक कथन एकत्रित किये जाते हैं। इन्हें कुछ निर्णायकों के द्वारा 11 श्रेणियों (रेटिंग्स) में, जो 'बहुत अनुकूल' से लेकर 'बहुत प्रतिकूल' तक फैली होती है, विभक्त कराया जाता है वह कथन जिसे अधिकांश निर्णायकगण अनुपयुक्त समझते हैं, छोड़ दिया जाता है। शेष कथन मापनी का निर्माण करते हैं तथा विषय के बारे में निश्चित राय या मत का प्रतिनिधित्व करते हैं।

2. लिकर्ट अभिवृत्ति मापनी (Likert Attitude Scale)

इस विधि का प्रतिपादन लिकर्ट ने 1932 में दिया था। उन्होंने देखा कि थर्स्टन तथा चेव की "समान उपस्थिति अन्तराल" विधि में समय कम या बहुत अधिक लगता है। साथ ही इसमें पूर्ण प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। यह काफी कठिन कार्य है तो लिकर्ट ने एक सरल विधि का निर्माण किया। इस विधि में भी निर्धारण मान का प्रयोग किया जाता है किन्तु इसमें निर्धारण मान 11 बिन्दुओं के स्थान पर केवल 5 बिन्दु ही रखे गए हैं :

1. पूर्ण सहमति
2. सहमति
3. अनिश्चित
4. असहमति
5. पूर्ण असहमति

अप्रत्यक्ष विधियाँ (Indirect Measures of Attitudes)

अभिवृत्ति मापन के लिए जिस प्रत्यक्ष विधि की पहले से पृष्ठों में चर्चा की गई है वह कई दृष्टियों से दोषयुक्त है। इसमें व्यक्ति अपनी सही अभिवृत्ति को छुपा सकता है। बाह्य व्यवहार (Overt behaviour) भी अभिवृत्ति को ठीक प्रकार से प्रकाश में नहीं ला सकता। जब राजनीतिज्ञ किसी बच्चे का चुम्बन लेते हैं तो उसका यह निश्चित अर्थ नहीं कि वे बच्चों के प्रति अवश्य ही स्नेहात्मक अभिवृत्ति रखते हैं।

इन दोषों से छुटकारा पाने के लिए अभिवृत्ति मापन के लिए अप्रत्यक्ष विधियों का सहारा लिया जाता है। इन विधियों में व्यक्तियों को यह मालूम कराया बिना कि उसे जो करने को कहा जा रहा है उसका क्या प्रयोजन है अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने को प्रेरित किया जाता है। प्रक्षेपण तकनीक (Projective Techniques) जिनका प्रयोग व्यक्तित्व मापन में काफी किया जाता है, इसका अच्छा उदाहरण है।

अभिरुचि तथा रुचि में अन्तर

साधारण दृष्टिकोण से 'अभिरुचि' सामान्य बौद्धिक योग्यता के अतिरिक्त एक ऐसी विशिष्ट योग्यता है जो जांच को विशिष्ट क्षेत्र में वांछित स्तर की निपुणता प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है।

किसी भी क्रिया में आवश्यक सफलता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति में उसके प्रति 'अभिरुचि' होनी चाहिए और रुचि भी। अतः आमतौर पर 'अभिरुचि' तथा 'रुचि' इकट्ठे चलते हैं, परन्तु इससे हम को यह नहीं समझ लेना चाहिए कि दोनों में कोई अन्तर नहीं।

सामान्य योग्यता रुचि है जबकि एकट्ठा या स्पेशल योग्यता (Special Ability) अभियोग्यता या अभिरुचि (Aptitude) है।

अभिरुचियों का मापन (Measurement of Aptitude)

बुद्धि-परीक्षणों की भाँति व्यक्तियों की विभिन्न 'अभिरुचियों' के मापन के लिए भी 'अभिरुचि-परीक्षाओं' का निर्माण किया गया है। प्रायः इन परीक्षाओं को 'अभिरुचियों की विशिष्ट प्रकृति' के अनुसार निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जाता है—

1. मैकेनिकल अभिरुचि परीक्षाएँ (Mechanical Aptitude Tests)
2. संगीतात्मक अभिरुचि परीक्षाएँ (Musical Aptitude Tests)
3. कला-निर्णय परीक्षा (Art Judgement Test)
4. व्यवसाय-संबंधी अभिरुचि परीक्षाएँ (Professional Aptitude Tests) जैसे—शिक्षण, क्लर्की, मैडीकल, कानून सम्बन्धी, इंजीनियरिंग, अनुसंधान कार्य आदि की अभिरुचियों का परीक्षण।
5. शैक्षणिक अभिरुचि परीक्षाएँ (Scholastic Aptitude Tests) विषय अथवा विभिन्न शिक्षण कोर्सों के प्रति अभिरुचि का परीक्षण करना।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- मैक्डुगल के अनुसार संवेगों की संख्या कितनी है?
(1) 3 (2) 9
(3) 14 (4) 12
- निम्नलिखित में से मनोदशा का उदाहरण है:
(1) अवधि (2) नवीनता
(3) रुचि (4) आकार
- एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान का दूसरी परिस्थिति में उपयोग कहलाता है—
(1) सीखने की विधियाँ (2) सीखने में स्थानांतरण
(3) सीखने का पठार (4) सीखने में रुचि
- “मानसिक स्वास्थ्य के नियमों को खोजना और उन्हें बनाए रखना” अध्ययन का केन्द्र बिन्दु है। यह कथन है :
(1) शैफर (2) हैडफील्ड
(3) ड्रेवर (4) लैडेल
- अभिवृत्ति सम्प्रत्यय है
(1) संज्ञानपरक (2) क्रियापरक
(3) संवेगात्मक (4) ये सभी
- मानसिक स्वास्थ्य और में घनिष्ठ सम्बन्ध है।
(1) अभिवृत्ति (2) स्वीकार्यता
(3) मापन (4) समायोजन
- अभिप्रेरणा की अनुचित विधि है—
(1) दण्ड (2) प्रशंसा एवं दोषारोपण
(3) प्रगति की जानकारी (4) प्रतिस्पर्धा
- भूख, प्यास, सुरक्षा की आवश्यकता सभी प्रेरक है।
(1) कृत्रिम (2) अर्जित
(3) सामाजिक (4) प्राकृतिक या स्वाभाविक
- रुचि का सम्बन्ध है।
(1) योग्यता (2) अवधान
(3) (1) और (2) दोनों (4) इनमें से कोई नहीं
- संप्रत्यय निर्माण का अंतिम सोपान है—
(1) पृथक्करण (2) विभेदीकरण
(3) प्रत्यक्षीकरण (4) सामान्यीकरण
- गेट्स के अनुसार, “अनुभव द्वारा व्यवहार में परिवर्तन ही है।”
(1) अभिप्रेरणा (2) समायोजन
(3) सीखना (4) चिन्तन
- ध्यान का सम्बन्ध है:
(1) योग्यता से (2) अवधान से
(3) व्यवधान से (4) इनमें से कोई नहीं
- संप्रत्यय निर्माण का प्रथम सोपान है:
(1) सामान्यीकरण (2) विभेदीकरण
(3) प्रत्यक्षीकरण (4) पृथक्करण
- अवधान के आंतरिक अथवा व्यक्तिनिष्ठ निर्धारक हैं—
(1) रुचि, लक्ष्य, अभिवृत्ति (2) उद्दीपक, वस्तु, प्रविधि
(3) प्रकाश, ध्वनि, गंध (4) पुरस्कार, दंड, प्रोत्साहन
- ध्यान आकर्षित होने में की प्रमुख भूमिका होती है।
(1) उद्दीपन की तीव्रता
(2) उद्दीपन की उपादेयता
(3) उद्दीपन की विश्वसनीयता
(4) उद्दीपन की सक्रियता
- पारिवर्तक वृत्ति निम्नलिखित में से किस कारण होता है?
(1) इड (2) इगो
(3) सुपरइगो (4) उपरोक्त सभी
- वर्गीकरण, पहचान और विश्लेषण योग्यता किस उद्देश्य से परिभाषित होती है।
(1) अवबोधनात्मक (2) अवलोकनात्मक
(3) ध्यानात्मक (4) क्रियात्मक
- छात्रगत समस्याओं का पता किस परीक्षण से संभव है?
(1) संज्ञानात्मक (2) निदानात्मक
(3) भावात्मक (4) कार्यात्मक
- गुस्सा और अहं के साथ जिज्ञासा निम्नलिखित में से किस बच्चे की पहचान है?
(1) मंदबुद्धि (2) प्रतिभाशाली
(3) तीव्रबुद्धि (4) सामान्य
- विद्यार्थी-व्यक्तित्व को साकार करने वाला घटक है—
(1) वातावरण (Atmosphere)
(2) पर्यावरण (Environment)
(3) परिवेश (Sroundings)
(4) उपरोक्त सभी
- रुचि का प्रेरक कारक निम्नलिखित में से कौन है?
(1) अभिप्रेरणा (2) अभियोग्यता
(3) अभिक्षमता (4) अभिगम्यता
- अप्रभावी विधि, पाठ्यक्रम की कठिनता एवं तकनीकी की कमी का परिणाम है—
(1) शिक्षण कठिनता (2) अधिगम कठिनता
(3) व्यवस्था की कठिनता (4) इनमें से कोई नहीं
- समस्या-समाधान की क्षमता आने लगती है—
(1) 11 वर्ष से (2) 9 वर्ष से
(3) 5 वर्ष से (4) 2 वर्ष से
- व्यक्तिगत शिक्षार्थी एक-दूसरे से में भिन्न होते हैं।
(1) विकास की दर
(2) विकास-क्रम
(3) विकास की सामान्य क्षमता
(4) वृद्धि एवं विकास के सिद्धान्तों
- शिक्षार्थियों द्वारा की गई गलतियाँ और त्रुटियाँ
(1) बच्चों को ‘कमजोर’ अथवा ‘उत्कृष्ट’ चिह्नित करने के अच्छे अवसर हैं।
(2) शिक्षक और शिक्षार्थियों की असफलता की सूचक हैं।
(3) उनके चिन्तन को समझने के अवसर के रूप में देखी जानी चाहिए।
(4) कठोरता से निपटाई जानी चाहिए।

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(3)	2.	(3)	3.	(2)	4.	(3)	5.	(4)
6.	(4)	7.	(1)	8.	(4)	9.	(3)	10.	(4)
11.	(3)	12.	(2)	13.	(4)	14.	(1)	15.	(1)
16.	(1)	17.	(1)	18.	(2)	19.	(1)	20.	(4)
21.	(3)	22.	(4)	23.	(2)	24.	(1)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

- (3) मैकडुगल एक मनोवैज्ञानिक शिक्षाविद् हैं जिनके अनुसार संवेगों की संख्या चौदह 14 होती है। संवेग एक भावात्मक (Affection) मनोदशा है जिसमें व्यक्ति के सोचने का वेग व आवेश निहित है।
- (3) रूचि, एक मनोवृत्ति है, जिसका गहन स्तर अभिरूचि कहलाती है।
- (2) एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान का दूसरी परिस्थिति में उपयोग, सीखने में स्थानांतरण कहलाता है।
- (3) मानसिक स्वास्थ्य के नियमों की खोज करना और उनके संरक्षण के उपाय करना 'ड्रेवर' द्वारा की गई मानसिक स्वास्थ्य की परिभाषा है।
- (4) अभिवृत्ति किसी व्यक्ति-वस्तु या घटना के प्रति एक खास ढंग से अनुक्रिया करने की एक मानसिक तत्परता है जिसमें संज्ञानपरक, क्रियापरक तथा संवेगात्मक सम्प्रत्यय पाया जाता है।
- (4) वास्तविकता के धरातल पर वातावरण से पर्याप्त समायोजन करना मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की योग्यता है।
- (1) दंड एक निषेधात्मक प्रेरणा है जो असफलता, प्रतिष्ठा खोने, अपमान, अस्वीकृति इत्यादि की संभावना को कम कर देती है। व्यवहार को नियंत्रित करने में सकारात्मक पुनर्बलन दंड से अधिक प्रभावशाली होते हैं।
- (4) भूख, प्यास और सुरक्षात्मक आवश्यकता स्वाभाविक या प्राकृतिक आवश्यकता है। मनोवैज्ञानिक अब्राहम मैस्लो ने भूख-प्यास को प्रथम या बुनियादी आवश्यकता कहा है।
- (3) रूचि वह प्रेरक शक्ति है, जो हमें किसी वस्तु, व्यक्ति या क्रिया के प्रति ध्यान देने के लिए प्रेरित करती है। रूचि का अवधान से सीधा तथा घनिष्ठ संबंध होता है तथा दोनों साथ चलते हैं।
- (4) सामान्यीकरण, संप्रत्यय निर्माण का अंतिम सोपान है। इस अवस्था में विषयवस्तु सर्वस्वीकार्य होता है।
- (3) गेट्स का विचार था कि "सीखना, अनुभव और प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है।"
- (2) ध्यान ही मनोविज्ञान में अवधान है। रूचि का अवधान से सीधा तथा घनिष्ठ सम्बन्ध होता है।
- (4) पृथक्करण, संप्रत्यय निर्माण का प्रथम सोपान है। अर्थात् विषयवस्तु को अलग व स्वतंत्र रूप में देखने की क्षमता।

- (1) रूचि, लक्ष्य, अभिवृत्ति आदि अवधान के आंतरिक अथवा व्यक्तिनिष्ठ निर्धारक हैं।
- (1) ध्यान आकर्षित होने में उद्दीपन का तीव्रता की प्रमुख भूमिका होती है। यह उत्प्रेरण का पर्याय है।
- (1) इड (Id) : मानव मन के इस पक्ष में व्यक्ति के व्यवहार और व्यक्तित्व से सम्बन्धित पार्श्विक प्रवृत्तियों और अनैतिक भावनाओं का संग्रह होता है। इसी के माध्यम से मनुष्य इंद्रियजनित सुखों की खोज करता है। अपनी इच्छाओं की तृप्ति के लिए वह किसी भी नियम अथवा रीति-रिवाज का उल्लंघन कर सकता है।
- (1) अवबोधात्मक उद्देश्य से वर्गीकरण, ज्ञानात्मक उद्देश्य से पहचान व विश्लेषण से अंतर करने की योग्यता आती है।
- (2) निदानात्मक परीक्षण द्वारा शिक्षक छात्रों की कमजोरियों का पता लगाकर उनका उचित उपरात्मक प्रयत्न करता है। छात्रों की कमजोरियों को दूर करके आसानी से उन्हें अन्य छात्रों के समकक्ष लाया जा सकता है।
- (1) प्रतिभाशाली बच्चे जिज्ञासु वृत्ति के होते हैं। वह स्वयं को बहुत अच्छी तरह अभिव्यक्त कर सकते हैं। परन्तु मंदबुद्धि बच्चों में गुस्सा, अहंवाद आदि कुछ नकारात्मक संवेगात्मक विशेषताएँ होती हैं।
- (4) वातावरण बच्चे के व्यवहार तथा व्यक्तित्व को ढालता है। हमारी आंतरिक योग्यताओं को परिस्थितियाँ सुधारती हैं। वातावरण भौतिक, बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक शक्तियों से बनता है। ये सब शक्तियाँ अपना प्रभाव बच्चे के व्यक्तिगत और व्यवहार को ढालने में अवश्य डालती हैं।
- (3) अभिप्रेरणा विद्यार्थियों में रूचि उत्पन्न करने की कला है। अतः अध्यापक विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करके उनमें प्रश्न पूछने आदि कार्य के प्रति रूचि पैदा कर सकता है।
- (4) अधिगम कठिनाइयाँ मुख्यतः कठिन पाठ्यक्रम, कुशल तकनीक का अभाव, अप्रभावकारी विधि आदि के कारण उत्पन्न होती है।
- (2) 11 या इससे अधिक उम्र की अवस्था में व्यक्ति की मानसिक क्रियाओं की प्रणाली उच्च-स्तरीय संतुलन प्राप्त कर लेती है। वह किसी समस्या का समाधान करने की बहुत सारी संभावनाओं की कल्पना कर सकता है। वह अमूर्त और प्राक्कल्पना पर आधारित समस्याओं से निपट सकता है।
- (1) व्यक्तिगत शिक्षार्थी विकास की दर में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। अतः उनकी शिक्षा हेतु विशेष योजना व विशिष्ट तरीकों की आवश्यकता होती है।
- (3) शिक्षार्थियों द्वारा की गई गलतियाँ और त्रुटियाँ उनके चिंतन को समझने के अवसर के रूप में देखी जानी चाहिए ताकि शिक्षार्थियों के सीखने का स्तर बढ़ाया जा सके। □□□

समावेशी शिक्षा की संकल्पना एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की समझ (Concept of Inclusive Education and Understanding Children with Special Needs)

समावेशी शिक्षा, विशेष व वंचित बच्चों की वैश्विक शिक्षा एवं अधिकार

समावेशी शिक्षा में सीमित संसाधनों के इस्तेमाल कर सभी विद्यार्थियों, सभी प्रकार व श्रेणी एवं स्तर के विद्यार्थियों का व्यावहारिक सुविधा व समाधान उपलब्ध होता है। इसीलिए समावेशी शिक्षा विकासशील एवं अर्द्धविकसित तथा अविकसित देशों के लिए ज्यादा उपयोगी माना गया है बजाय विकसित देशों के। संसाधनों के कुशल प्रयोग के अन्तर्गत चिकित्सा, शिक्षा और स्वास्थ्य सम्बन्धी अधःसंरचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। जिसमें भवन, बिजली, संचार, यातायात और पेयजल अनिवार्य है।

समावेशी विद्यालय की अवधारणा :

- जिसमें लाभार्थी-विद्यार्थी के क्षमताओं का पूर्ण विकास हो
- जिसमें विभिन्न पृष्ठभूमि और सोचवाले व्यक्तियों की सहज सहभागिता हो।
- जिसमें अध्यापक 'ज्ञान-व-बुद्धि' को वंशानुगत प्रवृत्ति न मानकर 'निरन्तरता के साथ परिवर्तन की' प्रक्रिया मानकर कार्य करे।
- कार्य करने, पठन-पाठन करने का समुचित, आशावादी माहौल की निर्मिति एवं परिणति।

समावेश तद्भव शब्द है। संस्कृत से उद्भव वाले शब्द तद्भव कहलाते हैं। समावेशी का अर्थ है समावेश। समावेश का अर्थ सम या सम्यक और आवेश का अर्थ अविष्ट या अवेशित से सम्बद्ध है। सम का अर्थ समता एवं समानता है। जबकि सम्यक का अर्थ बेहतर एवं अच्छी तरह से है। आवेशित का अर्थ पास आना, आकर्षित होना है। इस प्रकार समावेश का अर्थ और भाव पास आना, वह भी पास आकर बराबरी के साथ रहना। पास-पास तन-मन से अर्थात् विचार के स्तर पर घुल-मिलकर रहने, रहन-सहन, पर्व- त्योहार, शादी-विवाह में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने से अंतराकर्षण और आकर्षण बनाता है। तभी समावेशित होने की अन्तिम अर्थ सार्थक होता है।

बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान करने का मौलिक कर्तव्य, 86वाँ संविधान संशोधन-2002 के अनुसार सरकार का है। सरकार का कर्तव्य है कि यह मौलिक अधिकार देने हेतु समुचित कदमों का सुनिश्चित कार्यान्वयन करे। अतः यह सरकार का बाध्यकारी कर्तव्य है।

बाद में वर्ष 1993 के 'उन्नीकृष्णन केस' पर अपना ऐतिहासिक फैसला देते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि शिक्षा का अधिकार प्रत्येक भारतीय नागरिक का मूल अधिकार है और इसलिए इसे मूल अधिकार में सम्मिलित किए जाने हेतु सरकार को निर्देश भी जारी किए गए। इस सम्बन्ध में वर्ष 1997 में 83वाँ संविधान संशोधन बिल भी राज्यसभा में प्रस्तुत किया गया, जिसके द्वारा प्राथमिक शिक्षा को बच्चों का मौलिक अधिकार और इसकी समुचित व्यवस्था करना सरकार का मौलिक दायित्व निर्धारित किया गया।

देश में शिक्षा सम्बन्धी कानून बनाने और उसके कार्यान्वयन का अधिकार एवं कर्तव्य केन्द्र और राज्य सरकारें मिलकर करती है। इसीलिए, क्योंकि शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है। लेकिन शिक्षा को मूल अधिकार बनाने का निर्णय सर्वोच्च न्यायालय का था। सर्वोच्च न्यायालय ने 1997 में इस सम्बन्ध में अपना पहला निर्णायक फैसला सरकारों के लिए सुनाया था।

संसाधन सहायता (Resource Assistance) : इसका तात्पर्य शिक्षा प्रक्रिया को गतिशील, तीव्र और ऊर्जावान बनाने से सम्बद्ध है।

यह सरकार की भागीदारी, अधिकारी वर्ग द्वारा संचालित और शिक्षकों द्वारा कार्यान्वित प्रक्रिया व योजना है।

ये संसाधन सम्बद्ध क्षेत्र की जरूरतों के अनुसार निम्न-मध्यम, उच्च स्तरीय आदि प्रकार के हो सकते हैं।

प्रखण्ड व ब्लॉक स्तर पर और संकुल स्तर पर बने संसाधन केन्द्र क्रमशः (BRC) और सीआरसी (CRC) कहलाते हैं।

सर्वशिक्षा अभियान की संरचनात्मक अंग-

- (1) वैकल्पिक तथा नवाचारी शिक्षा (Alternative & Innovative Education)
- (2) शिक्षा गारंटी योजना (Education Guarantee Scheme)

(3) पूर्णकालिक समुदाय विद्यालय (Permanent Community School)

(4) एकल अध्यापक विद्यालय (Unitary Teacher shcool)

(5) एकल विद्यालय (Unitary School)

(6) प्रखण्ड संसाधन केन्द्र

(7) क्लस्टर संसाधन केन्द्र

वैकल्पिक और 'नवाचारी शिक्षा' सम्बन्धी परिकल्पना अपनाने के निम्नलिखित कारण एवं परिणाम हैं-

- (1) परम्परागत शिक्षण पद्धति
- (2) रूढ़िवादी शिक्षण व्यवस्था से साक्षरता दरों की मंद गति
- (3) प्रतिस्पर्धा के दौड़ में पिछड़ती शिक्षण व्यवस्था
- (4) नये-नये विषयों-पाठ्यक्रमों के आने से बनी समस्या
- (5) कम्प्यूटर-इंटरनेट जैसे सूचना प्रौद्योगिकी

शिक्षा गारंटी योजना, जैसे नाम से स्पष्ट है कि यह सरकारी योजना एक सटीक, समयबद्ध और लक्ष्योन्मुखी परियोजना है जिसमें शिक्षक एवं अधिकारी दोनों के कर्तव्यों की जवाबदेही और उत्तरदायित्व (Accountability & Responsibility) लिखित रूप से सुनिश्चित की जाती है। गारंटी या प्रत्याभूत उद्देश्य वाली इस योजना में प्राथमिक स्तर पर बुनियादी शिक्षा सम्बन्धी गुणवत्ता से विद्यार्थियों की भलाई हेतु कार्यान्वित की जाने की भी गारंटी सुनिश्चित है।

पूर्णकालिक समुदाय विद्यालय (परमानेंट कम्युनिटी स्कूल) किसी खास-विशेष समुदाय वाले क्षेत्रों में स्थापित स्कूल व विद्यालय है। ये खास समुदाय आदिवासी, खानाबदोश, पशुचारक, घुमन्तू, आदिम जाति, जनजाति इत्यादि हैं। इन विशिष्ट जन समूहों एवं समुदायों की विशिष्ट संस्कृति, रीति-रिवाज, पर्व त्योहार पूजा-विधान होती है। इनकी भाषा भी विशेष प्रकार की होती है। इन समुदायों के भीतर ही इनकी संस्कृति के अनुरूप विद्यालय की स्थापना की जाती है। इसे ही समुदाय विद्यालय कहा जाता है।

● एकल विद्यालय में अध्यापक का समावेशी व्यक्तित्व, सर्वज्ञान सम्बन्धी सामान्य एग्रेज और पढ़ाने वाली सार्थक व समुदायगत जरूरतों के अनुरूप प्रशिक्षण को सुनिश्चित किया गया, इसे वन मैन इंस्टीट्यूट की संज्ञा दी गई है।

● एकल विद्यालय शिक्षक केन्द्रित शिक्षा प्रविधि है। जिसमें समाज में ऐसे विद्यालय के विद्यार्थी जो निम्न अवस्था में जीवन गुजर बसर करते हैं, समाज के मुख्यधारा में शामिल करना है।

● एकल अध्यापक विद्यालय सम्बन्धी परिकल्पना के निम्नलिखित निहितार्थ हैं—

● ऐसे विद्यालय का लक्ष्य संस्थागत न होकर व्यक्तिगत होता है। अर्थात् यह अन्तः संरचना के बजाय शिक्षा के प्रमुख केन्द्र 'अध्यापक की अनिवार्यता व सम्पूर्णता' में सुनिश्चित की गई है।

● कम्युनिटी स्कूल और कम्युनिटी कॉलेज की धारणा पश्चिमी देशों से ली गई है जो यूरोपीय शिक्षा मॉडल की अनुकृति है। कम्युनिटी का तात्पर्य समुदाय है जिसकी विशिष्ट क्षेत्र में निवास, भाषा और परम्परा होती है। इस समुदाय के लिए ही प्राथमिक और उच्च शिक्षा इस विचार का मूल उद्देश्य है। ये समुदाय आदिवासी (ट्राइब्स या एब्ओरिजिंस) कहलाते हैं।

● पूर्णकालिक समुदाय विद्यालय और एकल अध्यापक विद्यालय का मूल विचार समावेशी शिक्षा में निहित है। राष्ट्र की मुख्यधारा से अलग-थलग पड़े समुदायों की शिक्षण हेतु 21वीं सदी में पूर्णकालिक समुदाय विद्यालय का परिकल्पना की गई।

● एकल अध्यापक विद्यालय मानवीय विद्यालय है न कि संस्थागत विद्यालय। इसमें एक व्यक्ति संतुलित, जुझारू और नवोन्मेषी रूप में कार्यरत होता है। नामांकन, पठन-पाठन और परीक्षण का प्रत्येक स्तर अनौपचारिक होता है।

● भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) ने अक्टूबर 2004 में शिक्षा से सम्बद्ध एक अति महत्वाकांक्षी उपग्रह एजुसैट (Edusate) लॉन्च किया।

● भू-स्थिर कक्षा में स्थित यह उपग्रह भारत को प्रत्येक दिन और प्रत्येक समय जरूरी शैक्षिक सूचनाएँ और क्रिया-कलापों का मार्ग प्रशस्त करता है।

● एजुसैट (एजुकेशनल सैटेलाइट) के माध्यम से ही विडियो कान्फ्रेंसिंग, वर्चुअल क्लासरूम टेक्नोलॉजी और सिम्पोजियम- सेमीनार का ऑन-लाइन प्रस्तुतीकरण सुगम-सरल हो चुका है। डिस-टीवी, एवं डीटीएच आदि का संचालन-परिचालन के माध्यम से मीडिया जगत में समाचार चैनलों की बाढ़ आयी तो दूसरी ओर डीडी-1 आदि के माध्यम से इग्नू का ज्ञानदर्शन कार्यक्रम संभव हुआ।

● समावेशी शिक्षा के अन्तर्गत सरकार निःशक्त या अशक्त और गैर-सामान्य अर्थात् विशेष वर्ग दोनों सामाजिक वर्गों को एक समान शिक्षा का अवसर एवं स्तर उपलब्ध कराने में विश्वस्त है, वचनबद्ध है। इस प्रकार की इस समावेशी धारणा में सामान्य और गैर-सामान्य लाभार्थियों के समावेशन को ध्यान में रखा गया है। अन्ततः इससे सामाजिक स्तरीकरण और सामाजिक भिन्नता-विभिन्नता वाली भावना एवं कर्म की समाप्ति की दिशा में उठाया गया एक दूरदर्शी कदम के रूप में देखा जा रहा है। इस प्रकार समावेशी शिक्षा व्यक्ति के माध्यम से सामाजिक शिक्षा फलीभूत होते दिख रही है। वह भी कम लागत में और प्रभावी लागत जो भी लागत है उसका भी प्रभावी व कुशल इस्तेमाल सुनिश्चित हुआ।

समावेशी शिक्षा में विकेन्द्रीकरण व लोकतांत्रिक प्रक्रिया का कारण और परिणाम दोनों हैं।

● इससे स्थानीय तत्वों को निर्णयन-प्रक्रिया में सहभागिता सुनिश्चित होती है।

● इससे स्थानीय जरूरतों की मौलिकता एवं प्रभावित सुनिश्चित होती है।

● निष्कर्षतः यह उपभोक्ता संचालित एवं लाभार्थी प्रेरित नीति है न कि केन्द्रीकृत निर्णयन और नौकरशाही संस्कृति की उपज।

समावेशी शिक्षा में अशक्तता या अपंगता अलगाव बोध न होकर एक अलग प्रकार की योग्यता है जिसके अन्तर्गत सभी प्रकार के बच्चों को सामान्य कक्षा में ही पढ़ना-पढ़ाना अनिवार्य और महत्वपूर्ण समझा जाता है। इस तरह समावेशी शिक्षा मूलतः अन्तर्राष्ट्रीय सोच, अभियान और धारणा है जिसे अधिकांश देशों के सरकारों ने अपने यहाँ लागू किया है।

समावेशी शिक्षा के प्रबंधकीय लाभ

समावेशी शिक्षा के निम्नलिखित लाभ हैं—

- (1) संसाधनों का कुशल प्रयोग
- (2) लागत कुशलता के साथ लागत प्रभावित
- (3) शैक्षिक विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहन

इस प्रकार स्पष्ट है कि समावेशी शिक्षा के मूल महत्व विकसित देशों के बजाय विकासशील व अर्द्धविकसित देशों को सुनिश्चित है। यह संसाधन, लागत और संचालन प्रक्रिया जैसे मूल बिन्दुओं पर केन्द्रित है।

शिक्षा समवर्ती विषय है। देश के चतुर्दिक विकास के लिए निम्नलिखित तीन कार्य सूचियों की मान्यता संविधान विहित है—केन्द्र सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची।

● केन्द्र और राज्य दोनों मिलकर जिस महत्वपूर्ण विषय पर निर्णय लेते और कार्यान्वयन में भागीदार होती है समवर्ती सूची का विषय है।

● भारतीय संविधान ने छह से चौदह वर्ष के बालकों के लिए शिक्षा को अनिवार्य बनाने का निर्देश दिया था और दस वर्ष में इस लक्ष्य को प्राप्त करना था। संविधान के लागू होने के 70 वर्ष बाद भी हम इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाए हैं।

● केन्द्र सरकार ने राज्यों से प्राथमिक स्तर तक सभी छात्रों को मुफ्त किताबें देने के निर्देश दिए हैं, जिसे कुछ राज्यों ने पूर्णतः और कुछ ने अंशतः लागू किया है। धन की समस्या ने अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा में कठिनाइयाँ उत्पन्न की हैं। इन कठिनाइयों पर विजय पाने के लिए हमने विश्व बैंक एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से भी सहायता प्राप्त की है।

● आवश्यकता का भाव 'अवश्य' से है। इसीलिए अवश्यभावी शब्द बना। अवश्यभावी सांस्कृतिक अनिवार्यता को कहते हैं जबकि अनिवार्य 'किसी भी हाल में अवश्य' का बोध कराता है। अतः प्राथमिक शिक्षा के प्रति आम जनता से लेकर संवैधानिक व सरकारी प्रतिबद्धता को 'अनिवार्य' शब्द में रूपायित किया गया।

● 1942 के चार्टर ऑफ यूनाइटेड नेशंस को बाल अधिकारों के संरक्षण का पहला अन्तर्राष्ट्रीय पैरोकार वाला दस्तावेज व प्रस्ताव माना जाता है। वस्तुतः यह एक चार्टर दस्तावेज था जिसका अभिप्राय एक ऐसे सरकारी प्रपत्र से था जिसकी कानूनी और राष्ट्रीय सर्वानुमति प्राप्त है।

● मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा 1948 में लागू हुआ। मानवाधिकार का अर्थ मानवमात्र अथवा मनुष्यमात्र को अधिकार। सिर्फ मनुष्य और सभी मनुष्यों से सम्बद्ध अधिकार मानवाधिकार है। वे प्राकृतिक अधिकार जो मनुष्य जीवन की आधारभूत आवश्यकताएँ हैं, मानवाधिकार की श्रेणी में परिगणित हैं। जीने का अधिकार, साँस लेने का अधिकार, काम करने का अधिकार, साफ-सफाई से रहने का अधिकार।

● सन् 1959 का यूनाइटेड नेशंस डेक्लरेशन-राइट्स ऑफ दी चाइल्ड से सम्बद्ध था। बच्चों के अधिकारों की इस संयुक्त राष्ट्र वाली घोषणा-पत्र के अन्तर्गत बच्चों की शिक्षा का दायित्व माता-पिता व अभिभावकों पर प्रस्तावित माना गया।

● इंटरनेशनल मेमोरण्डम फॉर सिविल एण्ड पॉलिटिकल राइट्स जो 1966 में घोषित व स्वीकृत हुआ, उसमें शिक्षा की समानता वाली मौलिक संकल्पना को दोहराया गया।

● शिक्षा के लिए बच्चे के अधिकार के मेमोरण्डम या स्मार-पत्र से स्पष्ट होता है कि शिक्षा में अवसरों की समानता मुख्याधार होना चाहिए ताकि बालक का व्यक्तिगत, मानसिक, शारीरिक आदि योग्यताओं व क्षमताओं का चतुर्दिक विकास सुनिश्चित हो।

● संयुक्त राष्ट्र के बच्चों के अधिकारों पर हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में 107 देशों के शासनाध्यक्ष शामिल हुए और मसौदा पत्र पर हस्ताक्षर किए।

● यह महासम्मेलन-1992 में हुआ था जिसमें 'सबके लिए शिक्षा' जैसी सार्वभौम विचारों का सहज समर्थन और सार्थक कार्यान्वयन को सुनिश्चित किया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय कानून द्वारा एक 'बच्चे' का अभिप्राय कोई मानव जिसकी आयु 18 वर्ष से कम है।

● यह परिभाषा यूनाइटेड नेशंस चाइल्ड राइट कन्वेंशन द्वारा प्रदत्त है।

● यही कारण है कि 18 वर्ष की आयु से ऊपर वाले बच्चों को मताधिकार, ड्राइविंग लाइसेंस आदेशित किया जाता है।

बच्चों के लिए अधिकारों के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय आयोग (NCPCR) की स्थापना 2007 में की गई। शान्ता सिन्हा इसकी अध्यक्ष थी। उन्हें सार्वजनिक- सामाजिक कार्य के लिए रैमन-मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। वे देश में सूचना अधिकार कानून से सम्बद्ध चर्चित और निर्णायक आंदोलन के प्रमुख स्तम्भ में से एक रही हैं।

भारतीय संसद द्वारा प्रगतिशील व महत्वाकांक्षी प्रोटेक्शन ऑफ चाइल्ड राइट एक्ट-2005 में पारित होने के बाद बाल अधिकार संरक्षण आयोग की स्थापना (2007) से बच्चों के अधिकारों को

● कानून → संविधान द्वारा

● नीतियाँ → सरकार द्वारा

● कार्यक्रम → मंत्रालय द्वारा और

प्रशासनिक प्रक्रिया-नौकरशाही द्वारा सुनिश्चित की गई।

सूचना का अधिकार और बाल संरक्षण का अधिकार दोनों 2005 से सम्बद्ध है। सूचना पाने का अधिकार 2005 से लागू हो गया जबकि बाल संरक्षण का अधिकार 2005 में पारित भर हुआ। यह लागू हुआ 2007 से। बालक जो 18 वर्ष तक है वे भी सरकार से अपनी मतलब का सूचना पाने का हकदार है। इससे बालक और भी सशक्तता से अधिकार समता व सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

वर्ष 6 से 14 वाले बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का कानूनी प्रावधान के अनुच्छेद- 21A में वर्णित है।

● अनुच्छेद 21 का सम्बन्ध शिक्षा और संस्कृति के मौलिक अधिकार से है।

● अनुच्छेद 21 में ही व्यक्तिगत स्वतंत्रता और उचित कानूनी प्रक्रिया का अधिकार भी उल्लिखित और वर्णित है।

अनुच्छेद-24-खतरनाक नियोजन (नौकरी) से सुरक्षा का अधिकार देता है। इसके अन्तर्गत फैक्ट्रियों या कारखानों में बाल श्रम निषेध किया गया है। खतरनाक नियोजन का तात्पर्य बारूद फैक्ट्री, क्रैकर्स फैक्ट्री, उच्च प्रदूषक फैक्ट्रियों और केमिकल कारखानों से बाल श्रमिकों की सुरक्षा संवेदनशीलता से स्वीकरी एवं कार्यान्वित की गई है।

अवसरों की समानता, सुविधाओं का अधिकार और सम्मानजनक कार्य परिस्थितियों का सम्बद्ध संवैधानिक अनुच्छेद 39(F) में उल्लिखित एवं वर्णित है। इसके अन्तर्गत बालकों एवं विद्यार्थियों से लेकर प्रत्येक धर्म, जाति, भाषा, लिंग, पंथ, क्षेत्र के व्यक्तियों के लिए अवसरों की समानता सुनिश्चित की गई है। अवसरों का अर्थ स्वरोजगार तथा लोक नियोजन एवं जाँब मिलने के अवसर से है।

भारत के कुछ क्षेत्रों, समाजों और गाँवों में अभी भी देखा जाता है कि अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के साथ भेदभाव निम्नलिखित तरीके से बरता गया दिखता है—

- कक्षा में ही बैठने का अलग स्थान
- सामान्य जाति के बच्चों की अपेक्षा अनुसूचित जाति के बच्चों को दण्ड देने में ज्यादा सख्ती, यदि ऐसे बच्चे प्रश्न पूछें तो झिड़क देना
- कक्षा में ऐसे बच्चों को अनिच्छा से पढ़ाना
- विद्यालय में झाड़ू लगवाना और शौचालय सफाई कराना जैसे काम करवाना। परिणामतः पास-पड़ोस में उच्च या सामान्य जाति के बच्चे के साथ खेलने के बजाए अनुसूचित जाति के बच्चों एवं मित्रों के साथ खेलते हैं।

उपरोक्त समस्या को ही अकादमिक स्तर पर Exclusion Problem को एक दूसरे सन्दर्भ में Inclusion Problems कहा गया है।

इक्कीसवीं सदी में भी अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के साथ स्कूलों में हो रहे भेद-भाव को देखते हुए, उपाय स्वरूप निम्नलिखित कार्यक्रम सरकार द्वारा प्रस्तावित है :

- (1) टीचिंग एवं नॉन टीचिंग स्टाफ का व्यवहार का मानदण्ड इन विद्यार्थियों के सन्दर्भ में सुनिश्चित करना।
- (2) पाए गए पक्षपाती व्यवहार की जाँच करना एवं खबर लेना।
- (3) विद्यालय में सम्बद्ध शिकायत पेटिका और जाँच हेतु व्यवस्था निर्माण करना।
- (4) सामान्य कक्षा में सीटिंग सिस्टम को सुव्यवस्थित करना।
- (5) विद्यालय प्रबन्ध समिति द्वारा स्टाफ्स के व्यवहार पर निगरानी रखना।

सामान्य वर्ग के विद्यार्थियों के साथ अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के समावेशन (Inclusiveness) सुनिश्चित करने हेतु अध्यापक की भूमिका अति महत्वपूर्ण है। इसके लिए सरकार द्वारा निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं—

- (1) प्री सर्विस टीचर (सेवापूर्व शिक्षक) और इन सर्विस टीचर (सेवाकालीन शिक्षकों) को प्रशिक्षण देना।
- (2) अध्यापकों की संवेदनशीलता (सेंसिटिविटी) ट्रेनिंग को बार-बार करने हेतु व्यवस्था बनाना।
- (3) विशेष सेवा कालीन प्रशिक्षणों का आयोजन 'ट्रेनिंग फॉर ट्रेनर्स' जैसा कार्यक्रम।

● आश्रम विद्यालय या आश्रम स्कूल महाराष्ट्र सरकार की एक महत्वाकांक्षी योजना है जो होमी जहाँगीर भाभा विज्ञान सेंटर द्वारा संचालित है। यह प्राचीन भारतीय गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की मूल भावना का ही एक नवोन्मेषी या नवाचारी कल्पना है जिनका उद्देश्य उपेक्षित-जनजातीय विद्यार्थियों को साइंस विषय पढ़ाकर मुख्यधारा में शामिल करना है।

● अतः इसका एक प्रमुख उद्देश्य जनजातियों के विद्यार्थियों के बीच मौजूद संकाय (कला, विज्ञान, वाणिज्य) में खासकर विज्ञान के भीतर विद्यमान जनजातियों में अलगाव या खाई को भरना है।

● महाराष्ट्र की जनजातियों की विज्ञान और गणित शिक्षा संवर्द्धन के लिए आश्रम स्कूल स्थापित किया गया।

● यह कार्यक्रम होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र द्वारा 1993-97 की अवधि से प्रारम्भ हुआ।

● जनजातीय क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करने सम्बन्धी नवाचारी (Innovative Programme) कार्यक्रम—

- (i) पंजीयन तथा अवधारण आन्दोलन।
- (ii) सेतु पाठ्यक्रम (Bridge Course) हेतु विशेष अभियान एवं कैम्प तथा प्रशिक्षण।
- (iii) वैकल्पिक विद्यालय व्यवस्था सम्बन्धी विशेष मॉडल।
- (iv) उपचारात्मक कक्षाएँ व वर्ग व्यवस्था।
- (v) सुयोग्य व सुविधाजनक अधिगम महौल का निर्माण।

अवसरों की समानता, इसे यू. एन. डिक्लरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स (U.N. Declaration of Human Rights) ने धारा 1 एवं धारा 2 के अन्तर्गत मानवीय अधिकारों तथा समानता के अवसरों को स्वीकार किया है।

धारा 1—“सभी व्यक्ति जन्म से स्वतन्त्र हैं, अतः वे सम्मानजनक तथा समान अधिकारों के हकदार हैं। वे सभी तर्क एवं चेतना से अभिपूरित हैं तथा उन्हें परस्पर एक-दूसरे के प्रति भाई-चारे की भावना के साथ कार्य करना चाहिए।”

धारा 2—“प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणा में उद्धृत मूल अधिकारों तथा स्वतन्त्रता का हकदार है। अतः उन्हें जाति, भाषा, धर्म, रंग, लिंग, राजनीति, मतों द्वारा पृथक्-पृथक् नहीं किया जा सकता है।”

उपरोक्त विश्वव्यापी आन्दोलन से भारतीय संविधान भी प्रभावित है। संविधान के क्रियान्वयन के साथ ही 1950 में भारत में सभी के लिए अनिवार्य शिक्षा की घोषणा कर दी गयी थी। इन्हीं समानताओं को लक्ष्य मानकर शिक्षा को राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक प्रगति का समुन्नत मार्ग माना गया है। इसकी अबाध प्रगति के लिए सुव्यवस्थित, सुनिश्चित, समान अवसरों को जुटाया गया है।

वंचन (Deprivation) के प्रकार—

- (1) माता-पिता के स्नेह से वंचित (Deprived of Parental love)- ऐसे बच्चे परिवार से मरहूम होते हैं।
- (2) शारीरिक विकलांगता (Physical Disability)- शरीरांगों की निर्योग्यता।

- (3) मानसिक विकलांगता (Mental Disability)- बुद्धि स्तर की कमी।
- (4) सांस्कृतिक दृष्टि से वंचित (Culturally Dep-rived) नैतिक-संस्कृति सभ्यता की अज्ञानता।
- (5) आर्थिक दृष्टि से वंचित (Economically Deprived)- गरीबी व निर्धनता।
- (6) सामाजिक दृष्टि से वंचित (Socially Deprived) - असामाजिक कार्यों में संलग्न बच्चे।

शैक्षिक अवसरों की समानता (Equality of Educational Opportunities)-‘समानता’ शब्द से तात्पर्य उन समान परिस्थितियों से है, जिनमें सभी व्यक्तियों को विकास के समान अवसर प्राप्त हो सकें और सामाजिक भेदभाव का अन्त हो सके तथा सामाजिक न्याय (Social Justice) के लक्ष्य की प्राप्ति भी सम्भव हो सके।

● प्रसिद्ध राजनीतिविद् **प्रो. लास्की (Laski)** ने लिखा है-“समानता का अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए अथवा सभी को समान वेतन दिया जाए। यदि एक पत्थर ढोने वाले का वेतन एक प्रसिद्ध गणितज्ञ या वैज्ञानिक के समान कर दिया जाये, तो इससे समाज का उद्देश्य ही नष्ट हो जाएगा।

● अतः समानता का अर्थ यह है कि विशेष अधिकार वाला वर्ग न रहे और सबको उन्नति के समान अवसर मिलें।”

जीवन के अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ शिक्षा में ‘अवसर’ शब्द मूलतः ‘अधिकार’ से जुड़ा मुद्दा ज्यादा है। विश्लेषण करने पर अवसर का सम्बन्ध कर्तव्य और नीति-नैतिकता से सम्बद्ध है। अवसर भी मूलतः वंचितों एवं दिव्यांगों के लिए अपेक्षित है जिसे समाज विभिन्न वर्गों के नाम से पुकारता और संविधान में जगह मिली।

शिक्षा (Education) के क्षेत्र में ‘समानता’ की अवधारणा को स्थापित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये हैं-

- (1) एक निश्चित अवधि तक भेदभावरहित निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
- (2) माध्यमिक स्तर पर विभिन्नीकृत पाठ्यक्रम व्यवस्था।
- (3) उच्च स्तर के शिक्षण संस्थानों में प्रवेश पर सभी के लिए अपेक्षित शैक्षिक उन्नति की आरक्षित व्यवस्था ताकि वे उचित योगदान देने में सक्षम हो सकें।

भारतीय शिक्षा नीति-1986 के खण्ड (iv) में शैक्षिक विषयताओं के निम्नलिखित क्रम में वर्गीकृत किया गया है-

- (i) महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा (Education for Women's Equality)।
- (ii) अनुसूचित जातियों के लिए शिक्षा (Education for Scheduled Castes)।
- (iii) अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा (Education For Scheduled Tribes)।

(iv) शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए अन्य वर्ग और क्षेत्र (Other Educationally Backward Sections and Areas) : अल्पसंख्यक (Minorities), विकलांग (Handicapped), प्रौढ़ शिक्षा (Adult Education) आदि।

परम्परा से विकलांग, शारीरिक, चुनौतीपूर्ण, नियोग्यता और अक्षमता, जैसे प्रचलित थे। ये सभी नामकरण, सम्बोधन और अभिप्राय नकारात्मक थे। इसीलिए प्रोत्साहक, ऊर्जा संचार और भावात्मक प्रेरणा के तौर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के काल में इनका नामकरण दिव्यांग व दिव्यांजन हुआ। ऐसा प्रयास महात्मा गाँधी ने पिछड़ी जातियों के लिए ‘हरिजन’ के इस्तेमाल के तौर पर किया था।

● आर्थिक रूप से वंचित वर्ग (Economically Deprived)- भारत में गरीबी अत्यधिक है। जनता का एक बड़ा भाग गरीबी की रेखा के नीचे रहता है। गरीब व्यक्ति अपने लिए और अपने बच्चों के भरण-पोषण में भी अपने को कभी-कभी असमर्थ पाता है। भारत में बहुत से बालक ऐसे हैं, जिनके माता-पिता बहुत गरीब हैं।

● गरीब माँ-बाप अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज पाते। वे बच्चों से घर का काम लेते हैं। यदि बच्चे खेती पर उनके रोजगार में सहायता न करें तो उन्हें और उनके पूरे परिवार को दो समय का भोजन भी न मिले। इसलिए वे बच्चों को स्कूल नहीं भेजते। यदि वे बच्चों को स्कूल भेजना भी चाहते हैं तो बच्चों की कॉपी-किताब के लिए भी उनके पास पैसे नहीं होते।

● शिक्षा समाज को शिक्षित करती है। मनुष्य भी सामाजिक प्राणी है। ऐसी स्थिति में ‘समाज’ पर विचार करना स्वाभाविक है। समाज शब्द पहली बार प्राचीन इतिहास में साक्ष्य स्वरूप मौर्य सम्राट अशोक के अभिलेखों में ‘समाजः’ के रूप में प्राकृत भाषा में प्रयुक्त हुआ है जिसका काल 300 ई. पू. है। यहाँ समाज का अर्थ ‘लोगों व प्रजा का समेकन’ है, समारोह है।

● **सामाजिक दृष्टि से वंचित वर्ग (Socially Deprived)** - भारत में कालान्तर में अनेक जातियाँ हो गईं। इन जातियों में शूद्रों को निम्न जाति का माना गया और देश के कुछ भागों में तो उन्हें छूना मना कर दिया गया। अस्पृश्यता भारत का एक सामाजिक कलंक बना। ये जातियाँ सामाजिक दृष्टि से सुख-सुविधाओं से वंचित कर दी गईं। इन्हें समाज में रहने, लोगों के साथ उठने-बैठने, एक साथ भोजन करने, एक कुँएँ से पानी लेने को मना कर दिया गया। सामाजिक रूप से वंचित वर्ग सामाजिक दृष्टि से निर्बल होने के कारण आर्थिक दृष्टि से भी निर्बल व वंचित हो गया।

● संविधान की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य रूप से देश के सभी बच्चों को उपलब्ध कराने का प्रावधान भी दिया गया।

● धर्म निरपेक्षता का अर्थ सर्वधर्म समभाव है। सभी धर्मों को समान भाव से देखना, विचारना और उसी के अनुरूप कार्य करना ही सर्वधर्म समभाव है। निरपेक्ष का शाब्दिक अर्थ किसी भी मार्ग व

पथ से अलग। जबकि धर्म से विमुखता असम्भव है, इसीलिए उक्त अभिप्राय माना गया है।

● अस्पृश्यता शब्द अस्पृश्य से व्युत्पन्न है जिसका विलोम स्पृश्य है जो स्पर्श से बना है। स्पर्श का अर्थ छूना है। जबकि अस्पर्श का अर्थ 'नहीं स्पर्श' करना। बाद में यह शब्द हुआ छूत में रूढ़ हो गया।

● धर्म के आधार पर समानता (Equality on the basis of Religion)–भारतीय संविधान निर्माण के समय चार आधारभूत मूल्य शामिल किये गये थे—(1) सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, (2) विचार अभिव्यक्ति, श्रद्धा और उपासना का स्वातन्त्र्य, (3) सामाजिक स्थिति और अवसर की समानता, (4) सभी भारतीयों के प्रति बन्धुत्व भाव।

● धारा 15 (1) में कहा गया है कि, “केवल धर्म, जाति, प्रजाति, लिंग और जन्म स्थान के आधारों अथवा इनमें से किसी आधार पर राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध भेदभाव का व्यवहार नहीं करेगा।”

● इस तरह धारा 15 के अनुसार राज्य द्वारा किसी धर्म, जाति विशेष आदि कारणों से न तो किसी को विशेष सुविधा दी जायेगी और न ही किसी को दबाया जायेगा। अनुच्छेद 15.1 में जो शब्द 'केवल' प्रयुक्त किया गया है उसका तात्पर्य यही है कि किसी व्यक्ति की अन्य योग्यताओं के समान होने पर किसी व्यक्ति की जाति, धर्म आदि के कारण, योग्यता अथवा अयोग्यता नहीं निर्धारित की जा सकेगी।

● संविधान का 14वाँ अनुच्छेद जहाँ, नागरिकों को कानून के समक्ष समान मानता हुआ उन्हें समान रूप से कानूनी सुरक्षा प्रदान करता है, वहीं 15.1 द्वारा नागरिकों को धर्म, जाति आदि के आधारों पर भेदभाव न बरते जाने की गारन्टी राज्य द्वारा प्राप्त होती है।

● धारा 15.4 द्वारा संविधान के पिछड़ी तथा अनुसूचित जातियों के लाभ के लिए विशेष सुविधाओं की व्यवस्था की है, “सामाजिक या शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के नागरिकों अथवा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष विधानों के निर्माण में, यह अनुच्छेद अथवा अनुच्छेद 29.2 निषेध नहीं करेगा।”

● धारा 29 (2) 'राज्य द्वारा संचालित अथवा सहायता प्राप्त किसी भी शैक्षणिक संस्था में, धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा के आधारों पर अथवा इनमें से किसी एक आधार पर किसी नागरिक को प्रवेश देने से इन्कार नहीं किया जाएगा।’

● इसी भाँति वाक्य खण्ड 18 (3) क, तथा 3 (ख) ने संविधान की वर्तमान धारा-30 (i) तथा (ii) का रूप लिया।

● धारा 30—(i) “सभी अल्पसंख्यकों को चाहे उनका आधार धर्म हो या भाषा अपनी पसन्द की शिक्षा संस्था स्थापित करने एवं प्रशासन करने का अधिकार होगा।”

(ii) राज्य शिक्षा संस्थाओं को सहायता देते समय, इस आधार पर भेदभाव नहीं रखेगा कि वह किसी अल्पसंख्यक की संस्था है, चाहे उसका आधार धर्म हो अथवा भाषा हो।

● आन्तरिक अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थी बाह्य अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थी से ज्यादा सीखते हैं। आन्तरिक अभिप्रेरणा वाले व्यक्ति अपने हर कार्य में अधिक ऊर्जा को प्रदर्शित करते हैं। ये जरूरी नहीं कि हर बार सफल हो लेकिन वह कार्य करने के आनंद तथा लगन को नहीं छोड़ते हैं।

● सामान्यतः पूर्वाग्रह या मतभेद के कारण लैंगिक भेदभाव दिखाई देता है। जब किसी व्यक्ति, जाति, वर्ग या वस्तु के बारे में कोई ऐसी धारणाएँ बन जाती हैं। जो सच्चाई से कोसों दूर हो, उन्हें रूढ़िबद्ध धारणाएँ कहते हैं। इसमें पूर्व के विचारों के आधार पर किसी से भेदभाव किया जाता है।

● हमारा समाज पितृसत्तात्मक या पुरुष प्रधान है। शुरू से ही महिलाओं के साथ अत्याचार होता रहा है। उन्हें शिक्षा से हमेशा वंचित किया गया है। पुरुषों के मुकाबले उन्हें कम आंका गया है। इसलिए लड़कियों की शिक्षा को प्राथमिकता देनी चाहिए।

● एकीकृत शिक्षा (Integrated Education) में सामान्य तथा असामान्य दोनों प्रकार के छात्र पढ़ते हैं। सभी विकलांगों को सभी प्रकार की सुविधाएँ दी जाती हैं। इसमें शिक्षण-अधिगम से जुड़ी सामग्री उपलब्ध कराना तथा पाठ्यचर्या में अनुकूलन यह शिक्षक पर निर्भर करता है।

● स्कूल व्यक्तिगत शिक्षा टीम योजना का हिस्सा है। इन्हीं के द्वारा स्कूल का संचालन कार्यकुशलता से चलता है। इसमें शिक्षार्थी की समस्याओं का निराकरण आसानी से किया जाता है और शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास किया जाता है।

● सार्वजनिक स्वास्थ्य का कार्य होता है, अपने स्तर अपने क्षेत्र के लोगों प्राथमिक उपचार तथा चिकित्सा सेवाएँ प्रदान करना ताकि उनका स्वास्थ्य सही रहे। सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएँ का नियमन अपने-अपने स्तर पर राज्य सरकार करती है। यह राज्य सरकार का दायित्व होता है। उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं का प्रदान करना उन्हें छोटे स्तर पर सेवाएँ देकर रोगमुक्त करने के लिए हर एक राज्य अपने स्तर की सेवाएँ प्रदान करता है।

● सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा एजेंसियों का कार्य होता है। वह स्वास्थ्य सेवाओं के लिए अपने स्तर पर नियम कानून बनाए जिससे सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान निरन्तर हो सके जो स्वास्थ्य कार्य को सुचारू रूप से चलने दे।

● प्रतिभाशाली विद्यार्थी का IQ-130 से ज्यादा होता है। यह किसी भी क्षेत्र में हो सकते हैं। वह किसी योग्यता अथवा योग्यताओं के क्षेत्र में अधिक श्रेष्ठ होते हैं। इसकी बौद्धिक एवं शैक्षिक दृष्टि से प्रतिभा होती है। वे अपने फैसले स्वयंलेते हैं।

● लिखना सूक्ष्म गतिक कौशल का एक उदाहरण है। भाषा के ज्ञानार्जन हेतु व्यवहार या कौशलों में से लिखना एक प्रमुख क्षमता या कौशल है। भाषा का यह कौशल मुख्य रूप से विद्यालय में अर्जित किया जाता है। लिखने का कार्य सभी वर्गों को शुद्ध लिखने से प्रारम्भ होकर पत्र लेखन, वर्णनात्मक लेखों के लेखन आदि तक चलता है।

● फोनोलोजिकल विकार सुनने तथा बोलने संबंधी बीमारी होती है। यह सेरेब्रल पल्सी, बधिरता, खंडतालु तीनों से ही यह उत्पन्न होती है। इसमें अपने विचारों को प्रकट करने से समस्या उत्पन्न होती है।

● अगर रूक-रूक कर भाषण दिया जाता है तो इससे हकलाने की पहचान होती है। जिसमें उसकी कमी का पता चलता है कि विद्यार्थी के अन्दर हकलाने की समस्या विद्यमान है।

● सामाजिक संपर्क में भारी कमी से संबद्ध आत्मकेन्द्रीयता या स्वलीनता ऐसे व्यवहारात्मक विकृतियों का एक समूह है जिसमें सम्भावित सामाजिक कौशलों, भाषा कौशलों तथा व्यवहार क्षमताओं में अंधविश्वास की अवस्था दिखाई देती है।

● छिपी हुई विकलांगता में विकलांगता नहीं दिखती है। यह कुछ समय तक व्यवहार का अवलोकन करने में दिखाई पड़ती है। इस तरह की विकलांगता का कोई स्पष्ट स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है कि किस प्रकार की बीमारी है।

● स्वलीनता (Autism) ऐसी विकृतियों का समूह है। जिसमें विकास के एक या एक से अधिक क्षेत्र प्रभावित होते हैं तथा जिसकी शुरुआत जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में होती है। स्वलीनता एक ऐसी विकृति है जिसमें पीड़ित व्यक्ति में दूसरों से सम्बन्ध स्थापित करने में दिक्कत आती है। लेकिन यह आसानी से पता नहीं चलता है।

● संचार क्षति को समझने में कठिनाई आ रही है तो उस व्यक्ति को बड़ी विनम्रता से कहेंगे ताकि उस व्यक्ति को यह एहसास न हो कि हम उसकी सुनी हुई बात को न समझ पाए। इससे वह व्यक्ति अपनी बात को दुबारा कह भी देगा।

● जब एक नियोग्य बच्चा पहली बार विद्यालय आता है तो शिक्षक को उसको नियोग्यता के आधार पर उसे विशेष विद्यालय में भेजने का प्रस्ताव देना चाहिए। क्योंकि ऐसे बालकों को अधिगम और समायोजन सम्बन्धों विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसमें उनमें हीन भावना का विकास न हो सके।

● अभ्यास के द्वारा उद्दीपक तथा अनुक्रिया का सम्बन्ध मजबूत होता है। अभ्यास रोक देने पर यह सम्बन्ध कमजोर पड़ने लगता है तथा शिक्षार्थी गलतियाँ करने लगते हैं। अतः अधिगम प्रक्रिया को त्रुटि रहित बनाने के लिए यान्त्रिक अभ्यास व ड्रिल की आवश्यकता होती है।

● मानसिक मंदता वाले बच्चों में मुख्यतः अनुकूलन व्यवहार से नहीं होता है। वह किसी भी सांस्कृतिक समूह जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता, सामाजिक, जिम्मेदारियों को उनकी आयु समूह से अलग रखा जाता है। उन्हें किसी भी कार्य को करने की पूरी आजादी नहीं होती है। वे वयस्क के रूप में सामान्य संरचित व्यवहारिक कार्य नहीं कर सकते हैं।

● मानसिक मंदता वाले बच्चे में अनुकूल व्यवहार करने की क्षमता नहीं होती है जिनमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और सामाजिक जिम्मेदारियाँ जो उसकी आयु समूह से अपेक्षित है।

● जैविक एटियोलॉजी का अर्थ व कारण गंभीर मानसिक मंदता वाले जैविक कारण है। मानसिक मंदता मस्तिष्कीय कोशिकाओं के क्षतिग्रस्त होने से होता है।

● मनोविज्ञान में मानसिक मंदता में व्यक्ति दैनिक जीवन के क्रियाकलाप सम्बन्धी कौशल में व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्र नहीं होकर वह स्वयं कोई भी कार्य नहीं कर पाता है। यह एक विकासात्मक अवरोध है जिसे गर्भधारण से 18 वर्ष की आयु तक स्पष्ट होती है।

● सीखने की विकलांगता हो तो उसके जीवन में काफी सारी क्षति होने का खतरा होता है। उसमें एक से अधिक क्षेत्रों या सिर्फ उसी क्षेत्र में कौशल की कमी पाई जाती है। इससे उसके जीवन में काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

● मनोवैज्ञानिकों के अनुसार समायोजन अलग प्रक्रिया होती है तथा डिग्री में समायोजन अलग है। एक समायोजन जीवन के हर पहलु से संबंध स्थापित करना होता है। जबकि डिग्री का तात्पर्य है, आप जो अध्ययन कर रहे हैं, उसमें अपने आप को किस प्रकार से समायोजित कर पा रहे हैं।

● विकृत उत्तेजना समावेशन को नहीं दर्शाती है। समायोजन से तात्पर्य है कि व्यक्ति अपने आप को किसी भी परिस्थिति के अनुसार ढाल ले। इसमें उत्तेजना कुसामायोजन को दर्शाती है।

● असाधारण बच्चे का अर्थ है जो विभिन्न समस्याओं का सामना करता है। इन बच्चों के लिए स्कूल द्वारा विभिन्न तरह की सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए जैसे स्कूल के चौड़े दरवाजे, रैम्प, विकलांग अनुकूलित शौचालय अध्यापकों में शिक्षा शास्त्रीय कौशलों का विकास शिक्षण अधिगम से जुड़ी सामग्री अपलब्ध कराना तथा पाठ्यचर्या में अनुकूलन होना।

● प्रतिभाशाली बच्चों को सभालने के लिए विशेष छात्रवृत्ति और पुरस्कार हो सकता है लेकिन यह इतना महत्वपूर्ण विकल्प नहीं है। प्रतिभाशाली विद्यार्थी का IQ ज्यादा होता है। इसलिए उनसे जो कार्यक्रम कराए जाते हैं वह भी उच्च कोटि के होते हैं।

● प्रतिभाशाली विद्यार्थी के लिए एक से अधिक भी कार्य कराए जा सकते हैं। जिसके कारण वह अपनी प्रतिभा का निरन्तर विकास कर सके। इसमें एक कार्य न होकर सबका समायोजन होना चाहिए ताकि आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर को समस्याएँ जन्म लेती हैं, वह एक समस्यात्मक बच्चा बन जाता है।

● जब दो द्वंद्व एक साथ हो उनमें से चुनाव करना पड़ता है। संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि दो द्वंद्व में से किस द्वंद्व का चुनाव करे ताकि संघर्ष की स्थिति खत्म हो सके।

● उद्देश्यों और लक्ष्यों के लिए असंगति संघर्ष या द्वंद्व का अर्थ है। जब कभी एक व्यक्ति को परस्पर विरोधी आवश्यकताओं इच्छाओं, अभिप्रेरकों तथा माँगों के बीच चयन करना पड़ता है। इसे संघर्ष या द्वंद्व कहते हैं।

डिस्प्रफिया में लेखन समस्या, हस्तलेख योग्यता तथा सूक्ष्म प्रेरक कौशल का प्रभावित करती है। यह लिखावट विकृति है।

उपहृत विद्यार्थी सामान्यतः किसी भी क्षेत्र में हो सकता है। वह किसी योग्यता अथवा योग्यताओं के क्षेत्र में अधिक श्रेष्ठ होता है। आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर कुसमायोजन को जन्म मिलता है। वह एक समस्यात्मक बन जाता है। अपसारी चिन्तन सृजनात्मकता का आधार होता है।

डिस्लेक्सिया से पीड़ित बालक वाचन से घबराते हैं। उन्हें लिखी हुई सामग्री धुंधली दिखाई देती है। इसमें अक्षरों को उल्टे ढंग से प्रस्तुत करते हैं। जैसे Saw को Was, एक-एक कर व धीमी गति से पढ़ना।

● प्रेरणा सीखने की क्रियाओं में विद्यार्थी की रुचि को उत्पन्न एवं उत्तेजित करने से सम्बन्धित है। यह एक ऐसी शक्ति है, जो मनुष्य को काम की ओर अग्रसर करती है। किसी भी प्रकार के प्रेरणा के पीछे व्यक्ति के अभिप्रेरक तथा मूलभूत आवश्यकताओं की कार्य करती है।

● कार्ल जंग के अनुसार आत्मनिष्ठ वैसे लोग हैं जो अपने विचारों, सपनों, भावनाओं, फंतासियों और निजी मनःस्थिति की चाह वाली दुनिया में जीते हैं। बात-चीत से उनकी ऊर्जा निसृत होती है जबकि अकेलापन उन्हें ऊर्जास्वित करता है।

● बच्चों के पुरस्कार और दण्ड देने की प्रक्रिया के रूप में पुनर्बलन को परिभाषित किया गया है। मनोविज्ञान में पुनर्बलन ऐसे किसी भी उत्तेजना से सम्बन्ध है जो एक विशिष्ट प्रतिक्रिया के संभाव्यता को सशक्त करता एवं बढ़ाता है।

● डिस्कलोजर इफेक्ट आदर्श व आयडियल की प्रतिक्रियात्मक कार्य है न कि इसकी व्यवहारिक विशेषता। सेल्फ-क्लोजर सामाजिक प्रसार का केंद्रीय सिद्धांत जिसे अल्टमैन एवं टेलर (1973) ने दिया था। इस सिद्धान्त के अनुसार 'अपनी अनुभवों, भावनाओं के क्रमशः उद्गार और उनकी पारस्परिक विचार विमर्शों की साझेदारी का अनुश्रवण द्वारा लोग परस्पर बेहतर समझ और विश्वास प्रदर्शन की ओर अग्रसर होते हैं।

● प्रतिपुष्टि देना और शिक्षार्थियों की वांछित संबंधों का निर्णयन शिक्षण- विश्लेषण की अंतराकर्षित (विचार विमर्शीय) चरण से सम्बद्ध है। शिक्षण के अंतराकर्षण व संवादात्मक चरण में योजना के कार्यान्वयन पूर्वसक्रिया चरण के दौरान होती है। इस चरण में शिक्षक, विद्यार्थियों को कतिपय समुचित तरीकों से अपना अधिगम अनुभव बांटता है।

● विमर्शीय क्रियाविधियों के दौरान बगैर SEN में शिक्षार्थियों का समावेशन ट्यूटर संदर्भित हो सकता है, बातचीत करना सीख सकता है और व्यक्तियों के विस्तृत समूह के साथ प्रभावी रूप से व्यवहारिक होता है, बहुत सारी मानवीय पेशे की युक्ति के बारे में सीखने का अवसर भी प्राप्त होता है। सामाजिक संज्ञानों में बगैर अशक्तता विकास व प्रगति वाले विद्यार्थी और उत्तरोत्तर समझ विकसित करता है एवं निःशक्ताएँ एवं विविधता की विद्यार्थीगत स्वीकार्यता सम्पूर्णता में निहित है।

● दोनों शिक्षक शिक्षा एवं स्कूल द्वारा उठाया गया कदम समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है। समावेशी

शिक्षा का संबंध विद्यालयेतर विधियों पर दृष्टिपात, कक्षाकक्ष, कार्यक्रम एवं पाठों को इस प्रकार नियोजित किया जाता है कि सारे बच्चे सहभागी एवं बनते सीखते हैं।

● एक अतिसक्रिय बालक को सही दिशा में लाने के लिए शिक्षक को उसे श्यामपट्ट आदि साफ करने आदि का काम देना चाहिए इससे उस बालक को सही दिशा में लाया जा सकता है।

● यदि किसी शिक्षक को कक्षा में दो मंद बुद्धि बच्चों को बैठाने के लिए बोला जाए तो उसे ऐसे विद्यार्थियों को सिखाने की तकनीक सीखनी चाहिए।

● असंगठित घर से आने वाला बच्चा स्वतन्त्र अध्ययन में सबसे अधिक कठिनाई का अनुभव करेगा।

● विशेष रूप से जरूरतमंद बच्चों की शिक्षा का प्रबंध दूसरे सामान्य बच्चों के साथ होना चाहिए।

● कक्षा पाँच के न्यून दृष्टि वाले बच्चों के साथ शिक्षक को कक्षा में सामान्य रूप से बर्ताव करना चाहिए एवं अधिगम के लिए ऑडियो सीडी का प्रयोग करना चाहिए।

● समकक्षी के अनुमोदन के लिए बेचैनी पूर्व किशोरावस्था की एक मुख्य विशेषता है।

● दूसरों के साथ लड़ाई-झगड़ा करना प्रतिभाशाली होने का संकेत नहीं है।

● किसी सामाजिक परिवर्तन के नेतृत्व में केवल बालिकाएँ ही समर्थ होती हैं, क्योंकि समाज में उनकी बहुआयामी भूमिका होती है। अतः बालिका शिक्षा को महत्त्व देना उचित है।

● समन्वित शिक्षा की सफलता मुख्यतः पाठ्य-पुस्तकों की उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। उत्कृष्ट पाठ्य-पुस्तकें विषय को सरलता प्रदान करती है जो विद्यार्थियों के लिए लाभदायक होती है।

● निदानात्मक शिक्षण के माध्यम से एक शिक्षक विद्यार्थियों की अधिगम सम्बन्धी समस्याओं का उपचार कर उनके भविष्य का निर्धारण सही दिशा में कर सकता है।

● कुशाग्र बुद्धि के बच्चों को समायोजन की समस्या होती है, क्योंकि जीन पियाजे के अनुसार, कुशाग्र बुद्धि के बच्चे, समूह से अलग होकर कार्य करना पसंद करते हैं। उनकी ललक किसी कार्य को अपने तरीके से करने की होती है।

● पूर्वाग्रही किशोर/किशोरी अपनी जीवनशैली के प्रति कठोर होते हैं। उन्हें लगता है कि उनकी वर्तमान जीवनशैली ही सबसे उत्तम जीवनशैली है।

दिव्यांगों को विकास की मुख्य धारा में शामिल करने हेतु उनकी विभिन्न प्रकार की अशक्तों की पहचान करते हुए उनकी सुगमता तथा प्राप्त अधिकारों की व्यापकता ही, उनके कौशल व रचनात्मकता का पोषण कर उन्हें दिव्यांग के विशेषण की अनुभूति करा सकती है। इन्हीं लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से 16 दिसंबर, 2016 को लोक सभा में 'दिव्यांगजन अधिकार विधेयक, 2016' पारित कर दिया गया।

● स्किनर के अनुसार “मापन किये जाने वाले व्यक्तित्व का प्रत्येक पहलू वैयक्तित्व भिन्नता का अंश है।” एक कक्षा में विभिन्न प्रकार के शिक्षार्थी होते हैं। उन्हें सीखने में समान और खुश करने के लिए एक विशिष्ट ध्यान और समाधान की आवश्यकता होती है, जिससे उनकी क्षमता में सुधार होता है। ऐसे विद्यालय में जो भी शिक्षक होंगे वे सभी विविध अधिगम आवश्यकताओं के अनुसार विद्यार्थी को अधिगम प्रदान करेंगे।

● संविधान संशोधन (छियासीवां संशोधन) अधिनियम, 2002 ने भारत के संविधान में अंतः स्थापित अनुच्छेद 21-क, ऐसे ढंग से जैसाकि राज्य कानून द्वारा निर्धारित करता है, मौलिक अधिकार के रूप में छह से चौदह वर्ष के आयु समूह में सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करता है। इसका अर्थ है कि औपचारिक स्कूल, जो कतिपय अनिवार्य मानदण्डों और मानकों को पूरा करता है, तथा संतोषजनक और एकसमान गुणवत्ता वाली पूर्णकालिक प्रारंभिक शिक्षा के लिए प्रत्येक बच्चे को अधिकार प्रदान करता है।

● यूडीएल (यूनिवर्सल डिजाइन ऑफ लर्निंग) का लक्ष्य सीखने और सभी छात्रों को सफल होने के समान अवसर देने के लिए कई तरह की बाधाओं को समाप्त करना है। यह हर छात्र की क्षमता और जरूरतों के अनुकूल बनाने में सक्षम है। यही कारण है कि UDL सभी बच्चों को लाभान्वित करता है। इसके अंतर्गत सभी अधिगमकर्ता सुगम्य स्वरूपों में विद्यार्थियों को शिक्षा-अधिगम सामग्री प्रदान करने में सक्षम होते हैं।

● शिक्षा का ऐसा प्रकार जो अक्षमताओं को दूर करने पर अधिक जोर देता हो, सभी के लिए न्यायोचित शिक्षा की बात करता हो, बच्चे पर केंद्रित, जरूरत पर आधारित शिक्षा की बात करता हो, सीखने की प्रक्रिया में हर बच्चे की प्रतिभागिता को अधिकाधिक करने पर जोर देते हुए विविध जरूरत वाले बच्चों को सक्षम बच्चों के साथ शिक्षित करने पर बल देता हो, समावेशी शिक्षा कहलाता है। ये रुझान प्रमुख भारतीय शिक्षा नीति संबंधी दस्तावेजों में प्रतिबिंबित हैं, जिनमें शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति (एनपीई, 1986), द नेशनल करिकुलम फॉर एलीमेंटरी एंड सेकेंडरी एजुकेशन (1988), और द रिवाइज्ड एनपीई एंड प्रोग्राम फॉर एक्शन (1992) इत्यादि शामिल हैं।

● व्हील चेयर का उपयोग करने वाले बच्चे को केवल एक विशेष स्कूल में अध्ययन करना चाहिए।

● शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले मनोवैज्ञानिक बेहतर तरीके से यह समझने और सीखने के तरीकों की पहचान करने और अध्ययन करने पर केंद्रित हैं कि लोग नई जानकारी को कैसे ग्रहण करते हैं और कैसे बनाए रखते हैं। शैक्षिक मनोवैज्ञानिक, व्यक्तिगत सीखने को समझने और निर्देशात्मक प्रक्रिया को सूचित करने के लिए मानव विकास के सिद्धांतों को लागू करते हैं।

इवान इलिच डी-स्कूलिंग सोसाइटी के लिए प्रसिद्ध है। उन्होंने तर्क दिया कि एक अच्छी शिक्षा प्रणाली के पास उन सभी को प्रदान करने के लिए तीन उद्देश्य हैं: जो अपने जीवन में किसी भी समय संसाधनों तक पहुँच के साथ सीखना चाहते हैं; यह उन सभी के लिए संभव है जो ज्ञान आदि को साझा करना चाहते हैं, जो उन लोगों से इसे सीखना चाहते हैं और अवसर पैदा करना चाहते हैं।

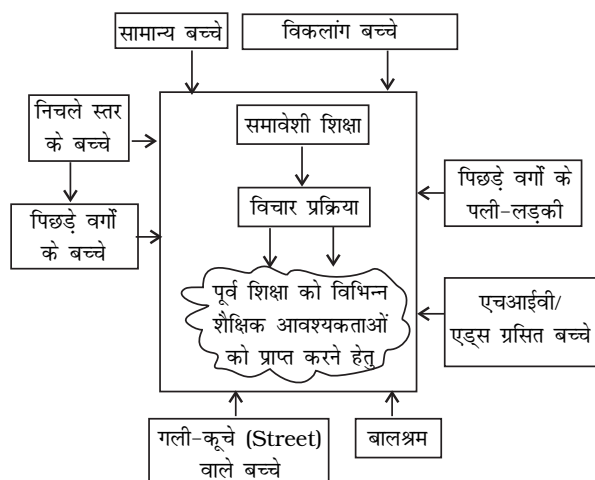
विशेष व वंचितों की शिक्षा

इसमें वे सभी विद्यार्थी सम्मिलित हैं जो कि किसी भी कारण जैसे शारीरिक या मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, वंचित, किसी जाति या लिंग से संबंधित होने से शिक्षा प्राप्त न कर पाए हों।

अर्थात् समावेशी शिक्षा को अधिगम पर्यावरण के रूप में परिभाषित किया है जो सभी विद्यार्थियों के पूर्ण व्यक्तिगत, शैक्षिक और पेशेवर विकास को जाति, वर्ग, लिंग, असमर्थता, लिंग प्राथमिकता, अधिगम शैली और भाषा को प्रोत्साहित करता है।

समावेशी शिक्षा की संकल्पना को लिप्स्की और गुल्टर (Lipsky & Gultar, 1996, 1999) ने दिया था जो कि इस विचार का वर्णन करते हैं कि विकलांग विद्यार्थियों समीपवर्ती विद्यालयों की पूर्ण सदस्यता प्राप्त है, जहां उन्हें वहाँ उचित पूरक सामग्री और सहयोगी सेवाएँ प्रदान कराई जाती है।

अर्थात् है समावेश का अर्थ है बिना किसी शर्त के विकलांग विद्यार्थियों का नियमित विद्यालय की सामान्य कक्षा और समुदाय सहभागिता प्राप्त है।



समावेशी शिक्षा के लाभ

- समावेशी शिक्षा विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए प्रयास करती है जो शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।
- असमर्थ या विकलांग विद्यार्थी सामान्य विद्यार्थियों के साथ पढ़कर लाभ प्राप्त करते हैं।
- बच्चों में सीखने के लिए प्रेरणा में वृद्धि होती है।
- बच्चों में आत्मविश्वास की वृद्धि होती है।
- समस्या और चुनौतियों का सामना करने की भावना का विकास होता है।
- विशेष रूप से वे बच्चे जिन्हें स्कूल से अलग कर दिया गया था, उन्हें फिर से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर देता है।

समावेशी शिक्षा			
	आंशिक समावेशी		पूर्ण समावेशी
●	वे विद्यार्थी सम्मिलित होते हैं जो मध्यम या गंभीर रूप से विकलांग होते हैं।	●	वे विद्यार्थी सम्मिलित होते हैं जो विकलांग होते हैं।
●	जिन्हें विद्यालय में डाला गया था परंतु कुछ विशेष सेवाओं जैसे वाक् चिकित्सा नैदानिक कक्षा, परामर्श सेवा आदि के लिए वापस निकाल लिया गया था।	●	पिछड़े वर्ग
		●	न्यून सामाजिक समूह
		●	बच्चे जिन्हें विद्यालय में डाला गया है और सभी सहयोग और सामग्री से सामान्य बच्चों के साथ पढ़ाया गया है।

मुख्य धारा में शामिल और पूर्ण समावेश

मुख्य धारा वह प्रक्रिया है जो विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों की बिना परीक्षा लिए, कौशलों का प्रदर्शन किए बिना सामान्य कक्षा में पढ़ने की अनुमति दी जाती है। वे लोग जो इसका सहयोग करते हैं वे मानते हैं कि सभी बच्चे समान कक्षा के लिए बने हैं अब चाहे वे कोई भी हो।

प्रत्येक विद्यार्थी के पास शिक्षा का अधिकार है और वह पढ़ने के लिए अपनी पसंद का चुनाव कर सकता है।

विशेष आवश्यकताओं सहित बच्चे (CSN)

क्रियान्वन, विकलांगता और स्वास्थ्य का अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशन बताता है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे एक व्यापक अवधारणा है जो किसी की क्षति के कारण सीमाओं को सीमित करता है जो स्वास्थ्य और वातावरण स्थितियों (उदाहरण शारीरिक पर्यावरण, दृष्टिकोण) और निजी कारणों (आयु, लिंग और सहनशक्ति) के कारण किसी की भागीदारी को सीमित व वंचित करती है।

समावेशी शिक्षा के संदर्भ

● अशक्तता, अपंगता, अक्षमता, विकलांगता, निर्योग्यता, निःशक्तता जैसे शब्द प्रचलित रहे हैं। उपर्युक्त सभी शब्दावली अपने सामान्य अर्थ में परस्पर पर्याय है। सबसे हाल में नया शब्द दिव्यांग जुड़ा है। अशक्त या निःशक्त व्युत्पत्ति और भाव दोनों रूपों में बिल्कुल समान है जिसका अर्थ है जो सशक्त नहीं है। अक्षम शब्द से अक्षमता बना और अयोग्य शब्द से अयोग्यता या निर्योग्यता का भाव है। अर्थात व्युत्पत्ति के अर्थ और भाव दोनों मायने में अयोग्य और अक्षम बिल्कुल समान है।

● अपंगता और विकलांगता परस्पर बिल्कुल पर्याय रूप से प्रयुक्त होते हैं। अपंगता अपंग से बना है। अपंग शब्द अ-पंग या अ-पंग दोनों का ध्वनि देता है। पंग शब्द पंगु का अर्थ और भाव देता है जिसका अर्थ किसी काम का नहीं होना। इसीलिए अपंग और पंगु बेकार के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जबकि अपंग शब्द का अर्थ पैर बिना या पैर हीन है। बहुत हद तक विकलांगता का प्रथम अर्थ भी पैर से सम्बद्ध विकलांगता से लिया जाता है। एक पैर या पैर में डिफेक्ट विकलांगता का सूचक शब्द रह गया था। पूर्ण अर्थ में विकलांगता शारीरिक अक्षमता से बिल्कुल सटीक रूप में प्रयुक्त और मान्य है।

● दिव्यांग शब्द दिव्य और अंग से बना है। दिव्य का अर्थ उत्तर, बेहतर और स्वर्गिक होता जबकि अंग का अर्थ शरीर का अंग या भाग है। इस प्रकार व्युत्पत्ति के आधार पर दिव्यांग का अर्थ अच्छा या उत्तम अंग है। अतः अपने सम्पूर्ण अर्थ में विकलांग अब सकारात्मक भाव होकर दिव्यांग बन गया। अब विकलांग व्यक्ति दिव्यांग होगा। जिस अंग में अपंगता है। नियोग्यता है। जो अक्षम है, कार्य करने में सक्षम नहीं है, वह भगवान की देन है, स्वर्गिक देन है इसलिए वह अंग और व्यक्ति दोनों दिव्य है। इसलिए दिव्यांग है।

क्षतिग्रस्तता, असमर्थता और अक्षमता (विकलांगता) की धारणा (Concepts of Impairment, Disability and Handicap)

क्षतिग्रस्तता या बाधिता (Impairment)—किसी बालक की जन्म से ही बाएं हाथ की उंगली कुछ छोटी है अर्थात् लम्बाई सामान्य नहीं है, यहां यह कहा जा सकता है कि शरीर बनावट की दृष्टि से कुछ विकृति आ गई है, यह क्षतिग्रस्तता है। यह शरीर-संरचना संबंधी हास, कभी अथवा विषमता होती है। बाधिता से शरीर का कोई भाग प्रभावित होता है जैसे कि कान में छेद, पोलियो ग्रस्त हाथ या पैर, मानसिक मन्दता आदि। बाधिता होने से शरीर के संबंधित भाग अभिन्न अंग की सामान्य क्रियाएँ प्रभावित होती हैं।

असमर्थता या अक्षमता (Disability)—असमर्थता का कारण शारीरिक बनावट की क्रियाशीलता की क्षतियुक्तता होती है जैसे कि किसी व्यक्ति का एक आंख से न देख पाना या एक कान से न सुन पाना असमर्थता कहलाता है।

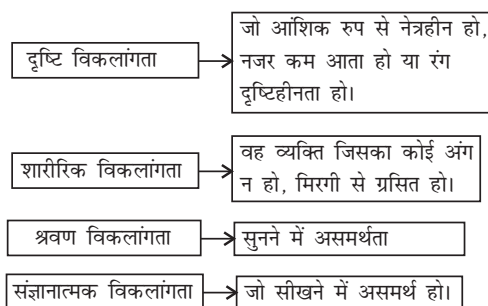
विकलांगता या अपंगता (Handicap)—असमर्थता व्यक्ति को किस सीमा तक विकलांग बनाती है वह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। किसी व्यक्ति की असमर्थता किसी एक क्षेत्र में तो विकलांगता का कारण बनती है परन्तु अन्य क्षेत्र में ऐसा नहीं होता। बहुत सी ऐसी असमर्थताएँ हैं जो विकलांगता का कारण नहीं बनती। उदाहरणतया: रंग भ्रम अन्धापन (Colour Blindness) वाहन चलाने के लिए आड़े आता है और नेवी आफिसर अर्थात् जल सेना में किसी पद पर कार्य करने के लिए अपंग या विकलांग माना जाता है परन्तु अन्य किसी ऐसे कार्य को करने के लिए समर्थ होता है जहां रंग भ्रम अन्धापन (Colour Blindness) आड़े नहीं आता जैसे कि खेती का कार्य करना। अर्थात् खेती के कार्य में वह व्यक्ति विकलांग नहीं है।

एक अन्य क्षेत्र में जैसे एक हकलाने वाला व्यक्ति एक अच्छा भाषण देने वाला, एक अच्छा वकील और शिक्षा संस्था में एक अच्छा शिक्षक नहीं बन सकता क्योंकि हकलाना इन सब के लिए अपंगता (विकलांगता) है। लेकिन यही व्यक्ति एक अच्छा लेखक वैज्ञानिक और चित्रकार बन सकता है और क्षेत्रों में वह विकलांग नहीं है।

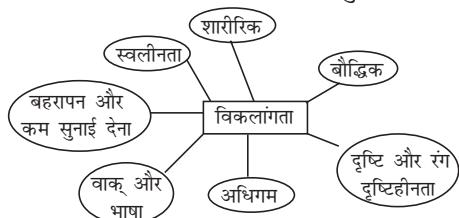
नोट :

- बाधिता या क्षतियुक्तता का संबंध शारीरिक संरचना (Structural) से होता है।
- असमर्थता या अक्षमता क्रियात्मक (Functional) होती है तथा
- अपंगता सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक (Social & Psychological) होती है।

विकलांगता के प्रकार



विकलांग व्यक्ति अधिनियम के अनुसार :



International Classification of Functioning के अनुसार :

अनुसार :

(1) मोबिलिटी और शारीरिक नियोग्यता : ऊपरी अंगों की असमर्थता, निचले अंगों की असमर्थता और हस्त निपुणता (Manual Dexterity)

(2) रीढ़ की हड्डी की विकलांगता

(3) सिर की चोट/मस्तिष्क विकलांगपन

(4) दृष्टि विकलांगता

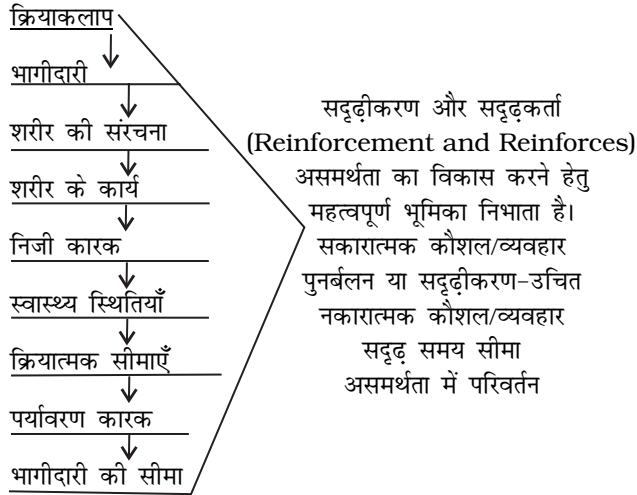
(5) बहरापन

(6) संज्ञानात्मक या अधिगम असमर्थता

(7) मनोवैज्ञानिक विकार, भावनात्मक विकार, सिजोफ्रेनिया

विकलांगता के कारण

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार विकलांगता के कारण हैं :



आनुवंशिक कारण

वंशानुक्रम में असमान्यता बच्चों के बौद्धिक विकलांगता का कारण होते हैं जैसे निओसोमी (Neosomy), डाउन सिंड्रोम, कभी-कभी एक्सरे के लंबे संपर्क में आने से यह विकार उत्पन्न होता है।

पर्यावरण/जीवन घटना जनित कारण :

गर्भवती स्त्री में कुपोषण से मिनरलों की कमी हो जाती है और इससे अजन्मे बच्चे की कोशिकाएँ बिगड़ जाती हैं। शिशु कुपोषण और गरीबी की विकासशील कोशिकाओं की गति, समय में बाधा और असमर्थता का विकास करती हैं।

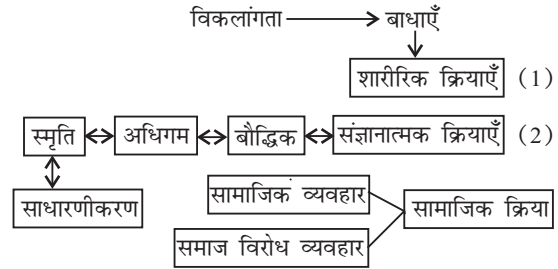
ड्रग, तंबाकू, अल्कोहल और रसायन के संपर्क में आने से बौद्धिक असमर्थता उत्पन्न हो जाती है। बचपन के रोग जैसे चिकनपोक्स, गंभीर खांसी आदि से सेरेब्रम में संक्रमण हो जाता है जिससे मैनिजिन्जाइटिस (मस्तिष्कावरण शोध) और एंसेफलाइटिस (मस्तिष्क में सूजन) की बीमारी हो जाती है।

जीवन की घटनाएँ जैसे दुर्घटना, गिरना, डूबना, दृष्टि खो देना या बहरापन शरीर के भागों को प्रभावित करता है।

निम्न प्रकार के बालकों को सामान्यतया विशिष्ट बालकों का दर्जा दिया जाता है :

1. शारीरिक रूप से विकलांग और पिछड़े हुए बालक।
2. मानसिक रूप से विकलांग और पिछड़े हुए बालक।
3. प्रतिभावान और प्रतिभाशाली बालक।
4. सृजनशील बालक।
5. अपराधी या सामाजिक दृष्टि से पिछड़े बालक।
6. समस्यात्मक या संवेगात्मक दृष्टि से पिछड़े बालक।
7. सीखने की दृष्टि से विकलांग या पिछड़े बालक।
8. धीमी गति से सीखने वाले या पिछड़े हुए बालक।

विकलांगता से क्या होता है



अधिगम असमर्थता के प्रकार (Types of Learning Disability)—अधिगम असमर्थ बच्चे बुद्धिलब्धि में औसत से अधिक हो सकते हैं। अतः मानसिक बुद्धिमत्ता का अधिगम असमर्थता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

1. डिसलैक्सिया (Dyslexia)
2. डिसग्राफिया (Dysgraphia)
3. डिसकैल्कुलिया (Dyscalculia)
4. ध्यान अभाव, अतिक्रियाशीलता विकृति (Dystexia/ADHD या (Attention Deficit Hyperactivity Disorder)

1. डिसलैक्सिया (Dyslexia)—डिसलैक्सिया से पीड़ित बालक वाचन से घबराते हैं। इन्हें लिखी हुई सामग्री पढ़नी दिखाई देती है यह एक विशिष्ट अधिगम असमर्थता का उदाहरण है।

लक्षण :

- अक्षरों की उलटे ढंग से प्रस्तुत करते हैं जैसे saw को was आदि।
- दृष्टि व स्मृति सम्बन्धी कठिनाई होती है।
- एक-एक कर व धीमी गति से पढ़ना।
- पढ़ते समय किसी शब्द या पूरी पंक्ति को छोड़ देता है।
- वाक्य में आए शब्दों को भी आगे पीछे करके पढ़ता है।

डिसलैक्सिया के कारण—

यह रोग तंत्रिका तंत्र सम्बन्धी विकृति के कारण होता है। यह वंशानुक्रम द्वारा भी हो सकता है।

निदान—पारिवारिक इतिहास का अध्ययन किया जाए तथा भाषा, वर्तनी, उच्चारण, बौद्धिक योग्यता, स्मृति सम्बन्धी परीक्षण तथा व्यवहार का सूक्ष्म निरीक्षण किया जाए।

2. डिसग्राफिया (Dysgraphia)—डिसग्राफिया भी अधिगम असमर्थता का कारण है। इसका सम्बन्ध लिखने की बाधिता से है। इससे बाधित बच्चों द्वारा लिखे गए शब्दों का पढ़ने में कठिनाई होती है। लेखन धीमा, भद्दा व त्रुटिपूर्ण होता है, बालक शीघ्र थक जाता है तथा उंगलियों में दर्द होता है।

लक्षण :

1. लेखन सम्बन्धी कार्यों में कठिनाई।
2. कलम पकड़ने का ढंग ठीक नहीं होता।
3. अक्षरों का आकार समझने में कठिनाई होती है।

4. शब्दों, वाक्यों के बीच अन्तराल अनियमित होता है।

5. वाक्य छोड़कर या पुनरावृत्ति करते हैं।

शैक्षिक उपचार—इन बच्चों को लिखने का अभ्यास करवाया जाए। खेल विधि का प्रयोग किया जाए।

3. डिसकैलकुलिया (Dyscalculia)—इस रोग से बाधित बच्चे शीघ्र नहीं पहचाने जाते हैं। इन बच्चों में गणितीय योग्यता कम होती है। ये बच्चे जोड़, घटा, गणा, भाग करने में अत्यधिक देर करते हैं। माता-पिता इन्हें सुस्त, आलसी कहते हैं। गणित के अतिरिक्त अन्य विषयों में इनका कार्य ठीक होता है।

लक्षण :

1. गणितीय कार्य करने में कठिनाई।
2. संख्याओं को पहचानने में समस्याएं।
3. आकृति विभेदन की समस्या।
4. बड़ा-छोटा, परिधि, क्षेत्रफल आदि को समझने में कठिनाई।
5. श्रवण व दृश्य इन्द्रियों में सामंजस्य की कमी।
6. समय, दूरी, गहराई से जुड़ी समस्याएं।
7. गणित सम्प्रत्ययों के स्मरण करने, धारण करने व पनः स्मरण करने की कठिनाई।

8. रुपए पैसे के लेन/देन सम्बन्धी कठिनाई।

उपचार—इन बच्चों के लिए गणित का अभ्यास व बहुइन्द्रिय प्रयोग कराया जाए। खेल विधि, प्रश्नोत्तर विधि तथा वास्तविक जीवन अनुभव के माध्यम से सिखाया जाए।

ध्यान अभाव, अति क्रियाशीलता विकृति (Attention Deficit Hyperactivity Disorder/ADHD)

इसे सामान्य भाषा में ध्यान अभाव कहते हैं। इन बच्चों में आवेगों के नियंत्रण की समस्या होती है। इनका ध्यान केन्द्रित नहीं हो पाता। इस कारण कक्षा में अनुशासनहीनता करते हैं तथा शिक्षण में बाधा उत्पन्न करते हैं। यह स्नायुतंत्र सम्बन्धी विकृति है जिसमें असामान्य स्तर का ध्यान, आवेग तथा अति क्रियाशीलता सम्मिलित है। ये बच्चे संवेगात्मक रूप से अस्थिर होते हैं। प्राथमिक स्तर के बच्चों तथा लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक पाया जाता है।

कारण : यदि प्राथमिक स्तर के बच्चों का प्रबंधन ठीक से नहीं किया जाए तो यह कठिनाई किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था तक बनी रह जाती है। इस विकार के लिए जैविक कारक जिम्मेदार नहीं होते हैं। बल्कि कुछ आहार संबंधी कारक, विशेष रूप से भोजन के रंग व जंक फूड तथा दूसरी ओर सामाजिक-मनोवैज्ञानिक कारक (जैसे घर का वातावरण, पारिवारिक विकृति) जिम्मेदार माने जाते हैं।

ADHD के लक्षण :

1. कही गई बात को पूरा न सुनना।
2. निर्देशों का ठीक से पालन न करना।
3. कार्य व खेल आदि में ध्यान की कमी।
4. कार्य करने वाली सामग्री कलम, पुस्तक आदि को खो देना।
5. बाहरी उत्तेजना का शीघ्र प्रभाव।

6. भूलने की समस्या।

7. इन्हें सदैव बेचैनी बनी रहती है।

8. हाथ पैर की उंगलियों को चलाते रहते हैं।

9. कक्षा में अलग-अलग सीटों को बदलना।

10. स्वचालित व्यवहार करना।

11. अत्यधिक तीव्र वार्तालाप करना।

12. प्रश्न समाप्त होने से पूर्व ही उत्तर देना।

13. अपनी बारी का इन्तजार न कर पाना।

14. दूसरों की बात को सुने बिना बीच में काट देना।

उपचार : इन बच्चों के उपचार के लिए निम्न क्रियाएं कराई जा सकती हैं—

1. यह सूत्र प्रयोग किया जाना चाहिए—विराम लें—चिंतन करें—कार्य करें (Stop—Think—Action)
2. एकाग्रता-समय के साथ मेल बैठाने के लिए एक कार्य को पूरा करने के लिए आर्बिट समय को घटाना और चरणबद्ध तरीके से इस एकाग्रता-समय को बढ़ाना इस विकार से निपटान हेतु सर्वाधिक उपयुक्त है।
3. शिक्षक के निकट ही इनकी बैठने की व्यवस्था की जाए।
4. खिड़की व द्वार से दूर बैठाया जाए।
5. कार्य करने के लिए अधिक समय दिया जाए।
6. सीधे सपाट प्रश्न पूछ जाएं।
7. अनुपयुक्त व्यवहार पर ध्यान देना।
8. पुनर्बलन देना।
9. सकारात्मक व्यवहार के लिए प्रोत्साहित करना।
10. रिटैलिन नामक दवा-एकाग्रता में वृद्धि करती है लेकिन विकार कोठीक नहीं कर पाती।

दिव्यांगों-विकलांगों के लिए पारित किए गए विभिन्न अधिनियम (Acts)

1. मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम 1987 (Mental Health, Act 1987)—इस अधिनियम के अन्तर्गत विकलांग बच्चों को दो प्रकार की सुविधाएं दी जाती हैं —

- (क) हर प्रकार के विकलांग बच्चों का इलाज (Treatment) होना चाहिए।
- (ख) मानसिक विकलांग (Mentally Disabled) बच्चों का पुनर्वास (Rehabilitation) होना चाहिए।

2. भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम 1992 (RCI ACT 1992/Rehabilitation Council of India Act 1992)—

- (क) RCI की स्थापना की गई।
- (ख) जो पेशेवर व्यक्ति विकलांगों के पुनर्वास के लिए कार्य करेंगे उन्हें प्रशिक्षण की सुविधाएं दी जाएंगी। सन् 2000 में इस Act में कुछ संशोधन किया गया। (सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्रालय के अन्तर्गत) यह एक सांविधिक निकाय है।

भारतीय पुनर्वास परिषद संशोधित अधिनियम 2000 (RCI Amendment Act 2000)—इस अधिनियम में प्रावधान किया गया कि भारतीय पुनर्वास परिषद उन पेशेवर व्यक्तियों के लिए अनुसंधान (Research) की सुविधाएँ प्रदान कराएगी जो विकलांगों के क्षेत्र में कोई भी अनुसंधान कार्य करना चाहेंगे।

3. विकलांग व्यक्ति अधिनियम (PWD Act 1995/Persons with Disability Act 1995)—यह अधिनियम 1996 में लागू हुआ। इस अधिनियम में सात प्रकार की निर्योग्यताएँ शामिल की गई हैं।

- (i) अंधापन (Blindness)
- (ii) अल्प दृष्टि (Low-Vision)
- (iii) श्रवण बाधित (Hearing Impairment)
- (iv) गामक बाधा (Locomotor Disability)
- (v) निवारण योग्य कुष्ठ रोग (Leprosy cured) : इसे ह्वेनसान की बीमारी भी कहते हैं। त्वचा पर धब्बे हो जाते हैं तथा त्वचा पर संवेदना का अभाव हो जाता है।
- (vi) मानसिक मंदता (Mental Retardation) : यह एक बौद्धिक असमर्थता का उदाहरण है।
- (vii) मानसिक रुग्णता (Mental Illness) : मानसिक रूप से बीमार लोगों के आचरण पर अचेत उद्देश्य का असर अधिक पड़ता है।

उपर्युक्त सात प्रकार की निर्योग्यताएँ के लिए केन्द्र सरकार, राज्य सरकारें व स्थानीय सरकारें समान अवसर देती हैं जैसे कि शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, रोजगार, आरक्षण, वित्तीय सहायता एवम् आवास सुविधाएँ आदि।

4. राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999 (National Trust Act 1999 Amendment Act 2009)—यह न्यास एक सांविधिक निकाय है। इसका प्रमुख उद्देश्य विकलांगता के शिकार व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाना है।

इसमें दो अन्य विकलांगताएँ शामिल की गई हैं —

(i) आत्मविमोह या स्वलीनता (Autism Or Autistic Disorder)—यह एक यह एक स्नायुतंत्र विकार (Neurological Disorder) है। इस विकलांगता में बच्चा भाषा को न तो समझ न तो बोल पाता है, एक ही शब्द को बार-बार बोलता है तथा अपने सम्बन्धियों को भी नहीं जानता-पहचानता है। जुड़वाँ बच्चों में 60 प्रतिशत स्वलीनता होने की संभावना रहती है स्वलीनता आनर्वांशिक कारणों से होती है।

बच्चों में निम्नलिखित दुष्प्रभाव पड़ते हैं—

1. सामाजिक निर्योग्यता (Social Impairment)
2. सम्प्रेषण निर्योग्यता (Communication Impairment Echolalia)
3. लचीलेपन की निर्योग्यता के कारण बार-बार शब्दों को दोहराते रहना (Flexibility Impairment, Repetitive Stereotyped Behaviour)

दो अप्रैल विश्व स्वलीनता दिवस (World Autism Day) मनाया जाता है।

(ii) मस्तिष्क पक्षाघात (Cerebral Palsy)—लकवा, अधरंग (Due to Brain & spinal cord damage)

विद्यालयों में विकलांगों के लिए चलाई जा रही योजनाएँ (Schemes)

(i) विकलांग छात्रों के लिए एकीकृत दिशा योजना (Integrated Education for Disabled Children : IEDC)—यह योजना मानव संसाधन विकास मंत्रालय (MHRD) द्वारा चलाई जाती है। यह योजना सन् 1974 में शुरू हुई तथा 1992 में संशोधित हुई। इस योजना के अन्तर्गत विद्यालय के विकलांग बच्चों को कुछ सुविधाएँ दी जा रही थीं जैसे कि धन, कुर्सी, अन्य कोई सहायता। यह योजना 1997 तक चली क्योंकि पहले इसे डी.पी.ई.पी. में तथा बाद में सर्व शिक्षा अभियान में मिला दिया गया।

(ii) माध्यमिक स्तर पर विकलांग छात्रों की समावेशी शिक्षा (Inclusive Education for Disabled children at secondary stage (IEDSS)— यह योजना एक विस्तृत सुविधाओं वाली योजना है जो वर्तमान में सन् 2009 ई. से चल रही है। इसे भी मानव संसाधन विकास मंत्रालय (MHRD) चलाता है। इसमें सभी 9 प्रकार की विकलांगताओं में मदद की जाती है। यह योजना देश के हर विद्यालय में कक्षा I-XII के लिए सर्व शिक्षा अभियान में इस समय चल रही है। 2020 तक देश के सभी स्कूल विकलांग Friendly बनाए जाएंगे।

विकलांग बच्चों की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2006

यह नीति 10 फरवरी 2006 से लागू की गई है। इसको सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण मंत्रालय (Ministry of Social Justice and Empowerment) बनाता है व स्कूलों में लागू करता है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय (MHRD) एक सहायक एजेंसी (Nodal Agency) की भूमिका अदा करती है अर्थात् नीति बनवाने तथा लागू कराने में मदद करती है। इस नीति के अन्तर्गत उच्च शिक्षा (Higher Education) में अपंग बच्चों को शिक्षा में 3 प्रतिशत आरक्षण दिया गया है तथा 3 वर्ष से 6 वर्ष के बीच में विकलांग बच्चों की देखभाल व शिक्षा (ECCE) का प्रबन्ध किये जाने का प्रावधान किया गया है। ताकि 6 वर्ष की आय के बाद ये विकलांग बच्चे प्रथम कक्षा के लिए तैयार किये जा सकें। यह योजना 6 से 18 वर्ष के विकलांगों के लिए है।

ध्यान रहे कि, 3 दिसम्बर को विश्व विकलांग दिवस मनाया जाता है।

विकलांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016

यह अधिनियम विकलांग लोगों को (समान अवसर, अधिकारों की सुरक्षा और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 को विस्थापित करता है। यह संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन के कर्तव्यों को पूरा करता है। विकलांग व्यक्तियों के अधिकार नियम जिसमें भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं। यह अधिनियम दिसंबर 2016 से प्रभाव में आया है।

- विकलांग लोग अपने अधिकारों सहित समानता का जीवन जी सकें, यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा उचित मापदंड तय किए गए हैं।
- अतिरिक्त लाभ जैसे उच्च शिक्षा में, सरकारी नौकरियों, भूमि आबंटन, गरीबी उन्मूलन योजनाओं के तहत आरक्षण।
- विकलांगता के शिकार 6 से 18 वर्ष के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क शिक्षा का अधिकार प्राप्त है।
- विकलांग बच्चों को समावेशी शिक्षा देने के लिए सरकार ने शैक्षिक संस्थानों और अन्य संस्थानों हेतु धन की व्यवस्था की है।
- प्रधानमंत्री योजना के सदृढीकरण हेतु सार्वजनिक भवनों तक पहुँचने हेतु अभियान चलाए हैं।
- सरकारी स्थानों में विकलांग लोगों के लिए आरक्षण को 3 से 4 प्रतिशत करते हुए बढ़ाया गया है।
- इस अधिनियम के तहत जिला न्यायलय द्वारा संरक्षता प्रदान की गई है जिसमें अभिभावक और विकलांग एक जुट होकर निर्णय ले सकते हैं।
- केंद्र और राज्य परामर्श समिति ने केंद्र और राज्य के स्तर पर विकलांग लोगों के लिए नीतियां बनाने का काम किया है।
- विकलांग मुख्य अधिकारियों के कार्यालयों को और मजबूत बनाया गया है जिसे दो अधिकारियों और परामर्श समिति द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। इस समिति में भिन्न विकलांगों में से 11 विशेषज्ञों से अधिक नहीं चुना जा सकता।
- इसी तरह से विकलांग राज्य अधिकारियों के कार्यालयों को भी मजबूत बनाया गया है जिसकी सहायता परामर्श समिति करती है और विभिन्न विकलांगों में 5 से अधिक विशेषज्ञों को नहीं चुना जा सकता।
- विकलांग लोगों हेतु मुख्य अधिकारी और राज्य अधिकारी नियमन निकायों और परिवेदना निवारण ऐजेंसी हेतु कार्यरत है।
- जिला स्तर समितियों को राज्य सरकारों द्वारा संस्थापित किया जाता है। राज्य सरकार द्वारा संविधान का विवरण और समितियों के कार्य निर्धारित किए जाते हैं।
- विकलांग लोगों की वित्तीय सहायता हेतु राष्ट्रीय और राज्य कोष का निर्माण किया गया है। उपस्थित विकलांग राष्ट्रीय कोष और सशक्तिकरण हेतु ट्रस्ट कोष को राष्ट्रीय कोष में मिलाया गया है।
- PWD के अधिकारों को भंग करने के मामलों में प्रत्येक जिले में विशेष न्यायलय बनाए गए हैं।

- इस अधिनियम ने विकलांगता को विकास और व्यापक अवधारण के रूप में पारिभाषित किया है।
- विकलांगता के प्रकार उपलब्ध 7 से 21 पहुँच गई है। सरकार ने विशेष विकलांगता को सूचित किया है। 21 तरह की विकलांगताओं को कर दिया गया है :

- (1) दृष्टिहीनता
- (2) न्यून दृष्टि
- (3) कुष्ठ उपचारित लोग
- (4) बहरापन या मुश्किल से सुनाई देना
- (5) गतिवान असमर्थता
- (6) बौनापन
- (7) बौद्धिक विकलांगता
- (8) मानसिक रोग
- (9) स्वलीनता
- (10) सेरेब्रल पॉलसी
- (11) मांसपेशियों का कुपोषण
- (12) दीर्घ स्नायुविक स्थिति
- (13) विशिष्ट अधिगम असमर्थता
- (14) मल्टीपल साईरोसिस
- (15) वाक् एवं भाषा विषमताएँ
- (16) थैलेसीमिया
- (17) होमोफिलीया
- (18) सिकल सेल रोग
- (19) बधिर दृष्टिहीनता सहित बहु विकलांगता
- (20) ऐसिड हमला पीड़ित
- (21) पारकिन्सॉन का रोग

समावेशी शिक्षा में प्रयोग होने वाली अवधारणाएं (Different concept in Inclusive Education)

(i) **संस्थान रहित शिक्षा (De-institutionalization)**—विकलांग बच्चों को विशिष्ट विद्यालयों में नहीं भेजे।

(ii) **सामान्यीकरण (Normalization)**—विकलांग बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ पढ़ाना है।

(iii) **न्यूनतम प्रतिबंधित पर्यावरण (Least Restrictive Environment)**—सामान्य विद्यालयों में पढ़ते समय विकलांग बच्चों के मार्ग में आने वाली बाधाओं को न्यूनतम कर देना है।

(i) **मुख्य धारा (Main Streaming)**—सभी विकलांग बच्चे अपने आपको सामान्य बच्चों के जैसा ही समझें।

बुद्धिलब्धि (IQ) के आधार पर मानसिक विकलांग बालकों के प्रकार

- (i) **नर्सिंग केयर (Nursing Care)**—इनकी बुद्धिलब्धि 0 से 25 होती है। ये कुछ भी सीख पाने में असमर्थ होते हैं। इनको हमेशा दूसरों के सहयोग की आवश्यकता होती है।

- (ii) **प्रशिक्षणीय (Trainable)**—इनको बहुत कम प्रशिक्षित किया जा सकता है। कभी-कभी इनकी देखभाल हेतु दूसरे व्यक्तियों की भी आवश्यकता पड़ती है।
- (iii) **शिक्षणीय (Educable)**—(IQ:50-50) इनको कुछ सीमा तक सिखाया-पढ़ाया जा सकता है।
- (iv) **नियमित रूप से शिक्षण योग्य (Regularly Educable)**—(IQ: 75-90) इसको सामान्य बच्चों की कक्षा में कुछ सीमा तक पढ़ाया जा सकता है।

नोट—मनोवैज्ञानिकों की राय है कि जिन बच्चों की IQ 0 से 60 तक होती है वे बच्चे सामान्य बच्चों वाली कक्षाओं में नहीं पढ़ाए जा सकते हैं अतः उन्हें अलग कक्षाओं में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

भारत में विकलांगों के लिए काम करने वाले संस्थान

- (i) दृष्टिबाधितों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, देहरादून (NIVH-National Institute for Visually Handicapped)—संस्थान ने भारतीय-ब्रेल का विकास किया है। (1971) नेत्रहीनों के अध्यापकों के प्रशिक्षण हेतु दिल्ली, मुंबई, कलकत्ता और मद्रास में अध्यापक प्रशिक्षण केन्द्र है।
- (ii) अली यावर जंग बधिर (Hearing-Loss) राष्ट्रीय संस्थान, मुंबई (1962)
- (iii) बधिर विद्यालय, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)
- (iv) राष्ट्रीय अस्थि रोग (Arthopaedic) विकलांग संस्थान, कोलकत्ता (1984)
- (v) राष्ट्रीय मानसिक विकलांग (Mentally Retarded NI-HMH 1984) संस्थान, सिंकदराबाद (आंध्र प्रदेश)
- (vi) राष्ट्रीय पुनर्वास, प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान, कटक (उड़ीसा)
- (vii) शरीरिक विकलांग संस्थान, नई दिल्ली
- (viii) राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम (NHFDC), नई दिल्ली में 1997 से सामाजिक न्याय व सशक्तीकरण मंत्रालय द्वारा स्थापित रोजगार हेतु वित्तीय सहायता देती है।
- (ix) कृत्रिम अंग संस्थान (Artificial limbs Institute)—कानपुर।

प्रतिभाशाली छात्रों के लिए मुख्य कार्यक्रम (Main Programmes for Gifted students)

- 1. **संवर्धन कार्यक्रम (Enrichment Programme)**
 - (i) व्यक्तिगत संवर्धन (Individual Enrichments)
 - (ii) समूह केन्द्रित संवर्धन (Group oriented enrichment)
 - (iii) पुस्तकालय सुविधाएं (Library facilities)
 - (iv) परियोजना एवम् गतिविधि आधारित गृह कार्य (Projects and activity based home assignments)
 - (v) शैक्षिक भ्रमण (Excursions)
 - (vi) सामुदायिक सेवा (Segregation)

2. पृथक्करण (Segregation)

- (i) विशेष कक्षाएं (Special Classes)
- (ii) शुगल या रुचि विभाग जैसे कि विज्ञान क्लब, कला क्लब आदि (Hobby section like science club, Language Club, Arts Club etc.)
- 3. तीव्र प्रमोशन (Acceleration)
 - (i) जल्दी से स्कूल प्रवेश (Early Admission in School)
 - (ii) एक वर्ष में एक से ज्यादा कक्षाएं पास करना (Quick Promotion)
- (iii) कक्षा रहित प्रणाली (Non-graded Class)
- (iv) अतिरिक्त कोर्स (Extra Courses)

कुछ महत्वपूर्ण तथ्य—

- 1. **एम्बेडेड अधिगम (Embedded learning)**—इसके अन्तर्गत सीखने में अशक्त (disabled) बच्चों के सन्दर्भों में तत्काल सम्बद्धता प्रदान करना, सहयोग पर बल देना तथा गैर-अधिगमनात्मक तकनीकी, जैसे कि तत्काल सूचनात्मकता, बुद्धि की गवेषणा तथा सामग्री प्रबन्धन का उत्तोलन (leaveraging) करना शामिल होता है।
- 2. **सहकारी अधिगम (Co-operative learning)**
- 3. **सहपाठी ट्यूटोरिंग (Peer tutoring)**— इस अधिगम में अधिक होशियार बच्चा कम होशियार बच्चे को व्यक्तिगत तौर से अधिगम कराता है। फलस्वरूप, अधिक होशियार बच्चा गर्व महसूस करता है तथा कम होशियार बच्चे को अच्छा अधिगम प्राप्त हो जाता है।
- 4. **जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (District Primary Education Programme/DPEP)**— यह कार्यक्रम देश के अति पिछड़े 150 से अधिक जिलों में विकलांगों, लड़कियों व अनुसूचित जाति व जनजाति के बच्चों को उनके निवास स्थान के निकट प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराता है। यह 1994 में शुरू हुआ।

अन्य अधिगम बाधाएँ

(Various Learning Disabilities)

डिस्प्रेक्सिया (Dispraxia)—यह ज्ञानेन्द्री एकीकरण अक्षमता है जिसके कारण बच्चा हाथ वह आँखों में समन्वय नहीं रख पाता है, जैसे कि पेंसिल न पकड़ पाना या बल्ब बंद न कर पाना।

डिस्फेजिया अथवा द्योतक भाषा विकार—यदि किसी संप्रेषण से असमर्थ बालक की बात आपको समझ नहीं आती है, तो आप उस बात को समझने का प्रयास समझ में आने का अभिनय कीजिए और उससे क्या कहा उसका अंदाजा लगाइए।

डिस्थीमिया (Disthemia)—(Mood Disability) एक अवसाद जो भावात्मक विकृति (Depressive Mood) है।

डिस्मेमोग्राफिया (Dismemographia)—स्मृति दोष (Memory Disability)

ओडिटैक्सिया (Auditaxia)—श्रवण बाधा (Hearing Disability) श्रवण बाधा से ग्रसित बच्चे कक्षा में नैराश्य (कण्ठा) का सामना करते हैं क्योंकि वे दूसरों के साथ सम्प्रेषण करने तथा सूचनाओं को बांटने में अक्षम रहते हैं।

- ऑडियोमीटर से श्रवण बाधा की जांच की जाती है।
- Monopleisia एक हाथ या एक पैर प्रभावित होता है। (One Hand or One Leg is affected)
- Paraplesia दोनों हाथ या दोनों पैर प्रभावित होते हैं। (Both hands or both legs are affected)
- Hemiplesia एक तरफ का हाथ और पैर प्रभावित होते हैं। (One side hand and one side leg is affected)
- Quadriplesia दोनों हाथ तथा दोनों पैर चारों प्रभावित होते हैं। (Both hands and both legs are affected)
- अंग विच्छेदन (Amputation)
- Epilepsy - convulsive disorder इसमें व्यक्ति को मिरगी के दौर पड़ते हैं।
- Glaucoma नेत्रों में उच्च रक्त दाब से रेटिना का क्षतिग्रस्त होना कहलाता है।
- Cataract मध्य वृद्धावस्था में नेत्ररोग होता है।
- गामक बाधा ((Locomotor Disability) प्रसव के दौरान
- मानसिक बाधा (Mental Disability) यह गर्भावस्था के दौरान हो सकता है। मधुमेह, ट्राइसोमिस (प्रसव पूर्वजन्म Small Brain, चोट, पीलिया Anoxia.

- UNO ने सन् 1975 में विकलांगों के अधिकारों की घोषणा की। सन् 1981 को अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष मनाया गया। 3 दिसम्बर प्रतिवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग दिवस मनाया जाता है।
- 1983-92 निश्चितजनों हेतु संयुक्त राष्ट्रसंघ दशक मनाया गया है।
- सन् 1989 में बाल अधिकारों पर अधिवेशन आयोजित हुआ।
- भारतीय संविधान का अनुच्छेद-14 सभी को समान नागरिक मानता है।
- भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15-16 भेदभाव निषिद्ध करता है।
- भारतीय संविधान का अनुच्छेद-46 कमजोर वर्गों की देखभाल करना।
- एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS) कार्यक्रम में 0-6 वर्ष के बच्चे शामिल होते हैं।
- सर्वशिक्षा अभियान में 6-14 वर्ष के बच्चे शामिल होते हैं।
- आई.ई.डी.एस.एस. (IEDSS) योजना में 14-18 साल के विकलांग बच्चों को शामिल किया गया है। (14-18 Years Revised plan for Inclusive Education of children & youth with Disabilities.)

- Etard नामक फ्रेंच ने Victor नामक 12 वर्षीय जंगली लड़के को पढ़ाने का प्रयास किया जिसे 9 मास की उम्र में जंगल में छोड़ दिया गया था। Etard को प्रथम Special Teacher माना जाता है।

- सन् 1882 ई. में फ्रांस के सैगविन ने पेरिस में मंद बुद्धि बालकों हेतु प्रथम पब्लिक स्कूल खोला।
- सैगविन को मानसिक मन्द बच्चों के बहुत बड़े शिक्षक के रूप में जाना जाता है। (Segvin is known as the greatest teacher for Mentally retarded children.)
- मान्टेसरी शिक्षा पद्धति सैगविन द्वारा विकसित शिक्षा प्रणाली तथा फ्रॉबेल की किंडर गार्टन शिक्षा प्रणाली का ही विकसित रूप है।
- दृष्टि बाधितों के लिए उपकरण-(Braille, Talking Calculator, Abacus (helpful in learning number concept and calculation))
- लुई ब्रेल का जन्म फ्रांस में सन् 1809 ई. में हुआ। सन् 1821 ई. में उन्होंने ब्रेल प्रणाली का आविष्कार किया। ब्रेल प्रणाली को सन् 1832 ई. में स्वीकृत किया गया। उनके सम्मान में भारत सरकार ने सन् 2009 ई. में 2 रुपये का सिक्का जारी किया।
- ब्रेल रूलर, चांदा, कम्पास से दृष्टिहीन भी आकृतियां बना सकते हैं।
- ब्रेल स्लेट-6 गांठें व 6 बिन्दु वाले लिखने का सरलतम उपकरण है।
- ब्रेलर -टाइप राइटर की तरह (6 बटन व एक स्पेसर होता है)।
- भारतीय ब्रेल English ब्रेल पर आधारित है इसमें 26 से अधिक वर्ण हैं।
- टेलर फ्रेम-भिन्न-2 संख्याओं हेतु इसमें अष्टकोणीय छेद हों।
- एबेकस (Abacus)-एबेकस यंत्र में एक चौखटा होता है जिसमें कई तार लगे होते हैं और इन तारों में मूंगे या लकड़ी के मनके लगे रहते हैं। इसके द्वारा इच्छानुसार मूंगों का सरकाकर गणना की जाती है।

कैसे विकलांगता को समाप्त किया जा सकता है-

- अच्छी और उचित शिक्षण सामग्री और उद्दीपन तकनीकों के नियमित प्रयोग करके।
- अच्छे पालन पोषण से जिससे विद्यार्थियों को उचित पुनर्बलन हो।
- बुरी आदतों को बदलने आवश्यकतानुसार दंड और आगमनात्मक और निगमनात्मक समस्या समाधान पद्धतियों का प्रयोग करके।
- भावनात्मक सहयोग-जिन विद्यार्थियों के भावनात्मक सहयोग नहीं मिलता वे हीन भावना का शिकार हो जाते हैं और बाद में इससे असमर्थता होती है। तो ऐसे बच्चे के लिए सहयोग आवश्यक है।
- दोषपूर्ण अधिगम शैली प्रभाव को कम किया जा सकता है और सही अधिगम शैली का प्रयोग किया जा सकता है।

- बच्चों को शुरुआत में अधिक लाड़-प्यार देना कम किया जा सकता है। अत्यधिक प्रेम करने से गलत व अनुचित व्यवहार उत्पन्न होता है।
- वातावरण और पर्यावरण कारक सकारात्मक, उत्साहपूर्ण, अवसरों से भरपूर और प्रोत्साहन करने वाले होने चाहिए।

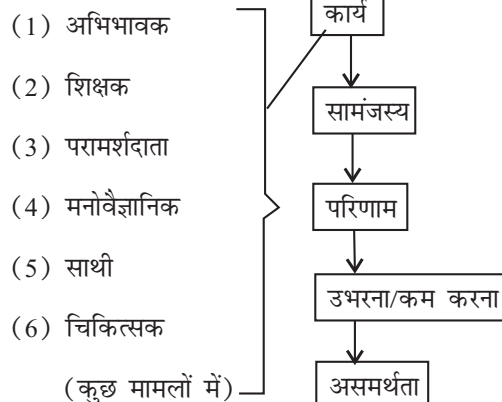
अधिगम असमर्थता का दृष्टिकोण

शारीरिक असमर्थता से अलग अधिगम असमर्थता वह स्थिति है जो अधिगम कठिनाइयों को बढ़ावा देती है।

अधिगम असमर्थता के प्रकार

- डिस्लेक्सिया-भाषा और पठन असमर्थता
- डिस्कैलकुलिया -अंक गणित सम्बद्धता समस्या
- डिस्ग्राफिया-लेखन असमर्थता

श्रवण और दृष्टि विकार : सूचना के पहचान में मुश्किल कौन आपको समस्या को सुलझाने में मदद कर सकता है?



लोकोमोटर विकलांग बच्चे-कक्षा III की संथाली 'अलाहा' समझ सकती है परन्तु 'घर' नहीं। 'मिरोम' समझती है परन्तु 'बकरी' नहीं 'डाका' परन्तु 'चावल' नहीं। यद्यपि वह 5-10 पंक्तियां अपनी मातृभाषा में अपने घर (आलाह) के बारे में बोल सकती है परन्तु अन्य भाषा जो उसके लिए विदेशी है। हो सकता है कि, एक भी वाक्य न समझ पाए इसीलिए मातृभाषा का उपयोग शिक्षण माध्यम के रूप में करने से बच्चे को अवधारणा समझने में आसानी होती है, बल्कि इससे उसमें आत्मविश्वास भी उत्पन्न होता है।

● **पेशीय गति विकलांगता (Kinesthetical loss)** का अर्थ है हड्डियों, जोड़ों, मांसपेशियों की असमर्थता जो कि अंगों की गति को सीमित कर देता है। विकृति और लकवा-परन्तु हाथों और पैरों में गतिशीलता हो और पैरों से सामान्य क्रिया कर पा रहे हों।

● **दृष्टिहीनता (Loss of Vision)** : इससे तात्पर्य ऐसी स्थिति से है जहां किसी भी निम्न स्थितियों से जूझ रहा हो-

1. दृष्टि की पूर्ण हीनता
2. दृश्य तीक्ष्णता 6/60 या 20/200 से अधिक नहीं (स्लेन) लेंस के प्रयोग सहित
3. दृष्टि के क्षेत्र की सीमा जिससे 20 डिग्री या इससे कम का कोण बने।

● **त्वचा रोग** : कुष्ठ रोग से ठीक हुआ व्यक्ति का तात्पर्य उस व्यक्ति से है, जो कुष्ठ के रोग से ठीक हो चुका हो पर हाथों और पैरों में संवेदनाओं को महसूस न कर पाता हो। जिसकी आँख या आँख की पुतली में बिना किसी आकृति के लकवा हो गया हो।

श्रवण क्षति (Audible Loss) का अर्थ है कि साठ या उससे अधिक डेसिबल तक नहीं सुन पाना।

राष्ट्रीय कल्याण ट्रस्ट के अनुसार (स्वलीनता, सेरेब्रल पाल्सी, मानसिक मंदता और बहु विकलांगता अधिनियम, 1999)

सेरेब्रल पाल्सी (मस्तिष्क पक्षाघात) -गैर-विकासात्मक समूह बनाता है जिसमें असमान्य मनोनियंत्रण दशा को दर्शाता है जो कि मस्तिष्क में प्रसवपूर्ण चोट लगने या बचपन में विकास न होने पर होती है।

मानसिकता मंदता-का अर्थ ऐसी स्थिति से है जो मस्तिष्क के अपूर्ण विकास से होती है। विशेष रूप से जिनकी बुद्धि के सामान्य से कम होती है।

मानसिक रुग्णता का अर्थ मानसिक विकार से है जो कि मंदता से भिन्न है।

स्वलीनता (Autism) का अर्थ है ऐसी स्थिति जिसमें असम विकास प्राथमिक रूप से संप्रेषण और सामाजिक योग्यताओं को प्रभावित करती है जो कि दोहराव और कमकांडी व्यवहार में चिन्हित हैं।

बहु विकलांगता-का अर्थ दो या अधिक विकलांगता से है जिसे अधिनियम की धारा 2 (समान अवसर, अधिकारों की रक्षा और पूर्ण भागीदारी, 1995) के अनुच्छेद (1) में परिभाषित किया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय विकलांग दिवस

प्रत्येक वर्ष 3 दिसंबर को अंतर्राष्ट्रीय विकलांग दिवस माना जाता है। इसे सबसे पहले 1992 में संयुक्त राष्ट्र जनरल असेंबली के संकल्प 47/3 के अंतर्गत स्थापित किया गया था। इस दिवस का उद्देश्य विकलांग लोगों की समस्याओं को उठाना है और उन्हें सम्मानजनक व अधिकार पूर्वक जीवन देने के लिए सहयोग करता है। यह दिवस विकलांग लोगों की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में भागीदारी की भी बात करता है। 2015 का विषय-भविष्य के लिए 17 (SDG: Sustainable Development Goal) लक्ष्यों को प्राप्त करना

उपचार/इलाज/चिकित्सा (Treatment/Therapy)

जैविक चिकित्सा (Biomedical Therapy)	संज्ञानात्मक व्यवहार विधि (Cognitive Behavioural Therapy : CBT)	मनोगत्यात्मक चिकित्सा (Psychodynamic Therapy)
1. प्राकृतिक चिकित्सा (Naturopathy) सूर्यस्नान, जल-तेल मालिस, थर्मोथैरेपी आदि 2. फार्माको-ट्रीटमेंट (a) रंगचिकित्सा (Chroma Therapy) (b) रसायन/औषध चिकित्सा (c) Chemo Therapy 3. शॉक (आघात) चिकित्सा विशेषकर सिसोप्रेनिया ग्रस्त रोगी के लिए सिर पर 2-इलेक्ट्रोड 1/2 सेकेण्ड तक Electrod-Convulsion Therapy : ECT जिसकी मॉनिटरिंग EEG & EKG द्वारा की जाती है। Forntal Lobes में स्थित Cerbral Cortex की सायकोसर्जरी 4. अष्टांग योग चिकित्सा	● Rational-Emotive Therapy : RET (तार्किक-भावनात्मक चिकित्सा) जैसे-क्लाइंट का विश्वास जीतना ● Stress Inoculation Therapy : SIT जैसे अप्रिय घटना को नजरंदज करना और सुखद घटना का अहसास करना ● Lazarus द्वारा प्रतिपादित Multi-Model Therapy जिसमें Behaviour - Sensation + Cognition + Interpersonal + Medicine or Drugs सभी को जरूरत के अनुसार समन्वित रूप से प्रयुक्त किया जाता है।	● सूझ-बूझ/समझ-बुझ उत्पन्न करना (Insight Fostering) (i) भावनाओं को व्यक्त करने का अवसर Catharsis Encouraging) (ii) Unrest Reduction जिसमें Defence-Mechanism जैसे युक्तियां राहत पहुंचाती हैं। ● जीवन की सार्थकता को समझना ● Loggo-therapy : विशेषवस्तु व विचार के प्रति अभिरुचि एवं संवेदनशीलता (Sensitization) ● रात में बुरे सपने देखना (Nightmare) दिन में सपने देखना-दिवास्वप्न (Fantacy) नींद में चलना (Som nambulism) तथा सम्मोहन (Hypnosis) को ध्यान में रखकर (Narco Test & Analysis)

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- समावेशी शिक्षा
 - दाखिले संबंधी कठोर प्रक्रियाओं को बढ़ावा देती है।
 - तथ्यों की शिक्षा (मतारोपण) से संबंधित है।
 - हाशिए पर स्थित वर्गों से शिक्षकों को सम्मिलित करने से संबंधित है।
 - कक्षा में विविधता का उत्सव मनाती है।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए:
 - विशेष विद्यालयों में
 - विशेष विद्यालयों में विशेष शिक्षकों द्वारा
 - अन्य सामान्य बच्चों के साथ
 - विशेष विद्यालयों में विशेष बच्चों के लिए विकसित पद्धतियों द्वारा
- विकलांग बच्चों के लिए केन्द्र प्रायोजित एकीकृत योजना का उद्देश्य विकलांग बच्चों को शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराना है:
 - नियमित विद्यालयों में
 - विशेष विद्यालयों में
 - खुले विद्यालयों में
 - अंधजन मंडल विद्यालयों में
- निम्न में से कौन सा भौतिक कारण अक्सर फोनोलोजिकल विकार से संबद्ध नहीं है?
 - बधिरता
 - खंडतालु
 - लघु ललाट खंड
 - सेरेब्रल पाल्सी
- ऑटिज्म की निम्नलिखित व्यावहारिक लक्षण हैं:
 - 6 साल की उम्र के बाद शुरुआत के
 - पुनरावृत्ति व्यवहार के
 - विलंबित भाषा के विकास के
 - सामाजिक संपर्क में भारी कमी के
- निम्नलिखित में से कौन सा छिपी हुई विकलांगता का एक उदाहरण है?
 - ऑटिज्म
 - ए.डी.एच.डी.
 - द्विध्रुवी
 - उपरोक्त सभी
- मनोचिकित्सा में मानसिक मंदता की समझ की वर्तमान अवधारणा में नहीं है :
 - बुद्धिमत्ता और इसकी क्षति के ईटोलॉजिकल समझ
 - आकलन विधि और प्रबंधन के लिए संबद्ध सहवैधता
 - विकास संबंधी विकार को चिकित्सकीय रूप से मान्यता प्राप्त नहीं है।
 - क्षति और शिथिलता के मानदंडों को विकार कहे जाने की जरूरत है।
- प्रतिभाशाली बच्चों को संभालने के लिए कौन सा सबसे अधिक व्यवहारिक और वास्तविक दृष्टिकोण नहीं है?
 - एक्सीलेशन
 - अनुकूलन या संवर्द्धन
 - योग्यता समूहीकरण
 - विशेष छात्रवृत्ति और पुरस्कारों की योजनाएं
- कौन सी असाधारण बच्चे की अधिक उपयुक्त परिभाषा है?
 - वह बौद्धिक रूप से बहुत बेहतर है।
 - वह भावनात्मक रूप से अविकसित है।
 - वह सामाजिक रूप से दूसरों से बहुत अलग है।
 - वह जो मानसिक, शारीरिक और सामाजिक विशेषताओं में सामान्य बच्चे से ऐसे अलग है कि उन्हें स्कूली व्यवस्था में संशोधन की आवश्यकता है।
- विकलांगता जो एक बालक की हस्तलेख योग्यता और सूक्ष्म प्रेरक कौशल को प्रभावित करती है वह कहलाती है।
 - डिस्कैलकूलिया
 - डिस्प्राफिया
 - डिस्टोनिया
 - डिस्मोर्फिया
- एक बच्चा 'ANT' और 'TAN', 'STARED' और 'STARTED' में अंतर नहीं कर पाता स्थिति क्या हो सकती है?
 - डिस्मोर्फिया
 - डिस्लेक्सिया
 - डिस्कैल्कुलिया
 - डिस्प्राफिया
- समन्वित शिक्षा की सफलता निर्भर करती है:
 - समुदाय के समर्थन पर
 - पाठ्य-पुस्तकों की उत्कृष्टता पर
 - शिक्षण-अधिगम वस्तु की गुणवत्ता पर
 - शिक्षकों में अभिवृत्तिगत परिवर्तन पर

13. शिक्षक द्वारा कक्षा में डाँट पड़ने पर छात्र यदि घर आकर अपनी छोटी बहन पर गुस्सा करता है, तो यह किसका उदाहरण बनता है?
 - (1) विस्थापन
 - (2) उदात्तीकरण
 - (3) रूपान्तरण
 - (4) प्रतिक्रिया निर्माण
14. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराई जानी चाहिए:
 - (1) अन्य सामान्य बच्चों के साथ
 - (2) विशेष विद्यालयों में विशेष बच्चों के लिए विकसित पद्धतियों द्वारा
 - (3) विशेष विद्यालयों में
 - (4) विशेष विद्यालयों में विशेष शिक्षकों द्वारा
15. वंचित शिक्षार्थियों के साथ व्यवहार करने के संदर्भ में अध्यापक/अध्यापिका को निम्नलिखित मूल्यों में से किसमें विश्वास व्यक्त करना चाहिए?
 - (1) विद्यार्थी से किसी प्रकार की माँग न होना
 - (2) विद्यार्थियों द्वारा स्वीकृति हेतु आघात (shocked) व क्रोध का प्रयोग करना
 - (3) छात्रों की सफलता हेतु व्यक्तिगत उत्तरदायित्व
 - (4) समुचित व्यवहार की उच्च अपेक्षाएँ
16. एक समावेशी कक्षा वह है, जहाँ
 - (1) समस्याओं का अधिकाधिक समाधान करने की सम्भावना की दृष्टि से बच्चों की सक्रिय भागीदारी रहती है।
 - (2) अध्यापक प्रत्येक अधिगमकर्ता के लिए वैविध्यपूर्ण व सार्थक अधिगमनात्मक अनुभवों हेतु परिवेश का निर्माण करते हैं।
 - (3) तब तक आकलन की पुनरावृत्ति होती रहती है जब तक प्रत्येक अधिगमकर्ता न्यूनतम श्रेणी प्राप्त न कर ले।
 - (4) विद्यार्थियों का भार कम करने के लिए अध्यापक केवल अनुमोदित पुस्तकों से ही पढ़ाते हैं।
17. जब एक निर्योग्य बच्चा पहली बार विद्यालय आता है, तो शिक्षक को क्या करना चाहिए?
 - (1) प्रवेश-परीक्षा लेनी चाहिए
 - (2) बच्चे की निर्योग्यता के अनुसार उसे विशेष शिक्षण विधि अपनाने का प्रस्ताव करना चाहिए।
 - (3) उसे अन्य विद्यार्थियों से अलग रखना चाहिए।
 - (4) सहकारी योजना विकसित करने के लिए बच्चे के माता-पिता के साथ चर्चा करनी चाहिए।
18. सफल समावेशन को निम्नलिखित की आवश्यकता होती है सिवाय
 - (1) पृथक्करण
 - (2) अभिभावकों की भागीदारी
 - (3) क्षमता-सम्बर्द्धन
 - (4) संवेदनशील बनाना
19. विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों से व्यवहार करने के लिए निम्नलिखित दार्शनिक दृष्टिकोणों में से किसका अनुसरण किया जाना चाहिए?
 - (1) उन्हें पृथक् करके उनकी शिक्षा किसी भिन्न शैक्षिक संस्थाओं में होनी चाहिए।
 - (2) उन्हें केवल व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
 - (3) उन्हें समावेशी शिक्षा का और नियमित विद्यालयों में अध्ययन करने का अधिकार प्राप्त है।
 - (4) उन्हें किसी प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता ही नहीं होती।
20. वंचित समूहों के विद्यार्थियों को सामान्य विद्यार्थियों के साथ-साथ पढ़ाना चाहिए। इसका अभिप्राय है:
 - (1) समावेशी शिक्षा
 - (2) विशेष शिक्षा
 - (3) एकीकृत शिक्षा
 - (4) अपवर्जक शिक्षा
21. CWSN का पूर्णाक्षर है।
 - (1) चाइल्ड विद् स्पेशल नीड्स
 - (2) चिल्ड्रेन वर्क स्पेशल नीड्स
 - (3) सेंट्रल वेल्फेयर फॉर स्पेशल नीड्स
 - (4) सेंटर फॉर वेलेनेस ऑफ स्पेशल नीड्स
22. समन्वित-समेकित शिक्षा योजना का उद्देश्य है सामान्य विद्यालय में..... बच्चों को शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराना।
 - (1) निःशक्त
 - (2) सामान्य
 - (3) ब्लाइण्ड
 - (4) बधिर
23. समावेशी शिक्षा के पीछे मूलधार यह है कि
 - (1) समाज में विभिन्नता है और विद्यालयों को इस विभिन्नता के प्रति संवेदनशील होने के लिए समावेशी होने की आवश्यकता है।
 - (2) प्रत्येक बच्चे के निष्पादन के लिए मानक एकसमान तथा मानकीकृत होने चाहिए।
 - (3) हमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के उपर दया करने की आवश्यकता है और सुविधाओं तक उनकी पहुँच होनी चाहिए।
 - (4) विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए अलग विद्यालयों की व्यवस्था करना लागत प्रभावी नहीं है।

24. सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों को कक्षा के माहौल की आवश्यकता होती है, जो—
- (1) उनके सांस्कृतिक और भाषाई ज्ञान को महत्व देता है तथा उनका उपयोग करता है।
 - (2) उनकी भाषा के उपयोग को हतोत्साहित करता है ताकि वे मुख्यधारा की भाषा सीख सकें।
 - (3) बच्चों को उनकी क्षमताओं के आधार पर वर्गीकृत करता है।
 - (4) उन्हें अच्छा व्यवहार सिखाता है।
25. अतिसंवेदनशील बच्चों को सीखने में मदद करने के लिए निम्नलिखित में से कौन-सा तरीका उपर्युक्त तरीका नहीं है?
- (1) अधिगम के वैकल्पिक तरीकों की पेशकश
 - (2) उनके दैनिक कार्यक्रम में शारीरिक गतिविधि का समावेश
 - (3) बेचैन होने पर अक्सर उन्हें फटकार लगाना
 - (4) एक कार्य को छोटे, प्रबंधनीय खण्डों में तोड़ना

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(4)	2.	(3)	3.	(1)	4.	(3)	5.	(4)
6.	(1)	7.	(4)	8.	(2)	9.	(4)	10.	(2)
11.	(2)	12.	(2)	13.	(1)	14.	(3)	15.	(3)
16.	(2)	17.	(2)	18.	(1)	19.	(3)	20.	(1)
21.	(1)	22.	(1)	23.	(1)	24.	(1)	25.	(2)

उत्तर व्याख्या सहित

- (4) कक्षा में विविधता का उत्सव मनाती है। समावेशी शिक्षा से अभिप्राय पास-पड़ोस के विद्यालयों में नियमित कक्षाओं में सभी प्रकार के शिक्षार्थियों को विद्यालयी जीवन में सीखने, सहयोग देने व सहभागी बनने का अवसर प्राप्त करना है।
- (3) विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा संबंधी अधिनियम-2004 के धारा-2 के अनुसार विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा अन्य सामान्य बच्चों के साथ समावेशी वातावरण में होनी चाहिए।
- (1) विकलांग बच्चों के लिए केन्द्र प्रायोजित एकीकृत योजना (IEDC) न केवल नियमित विद्यालयों में विकलांग बच्चों को शैक्षणिक अवसर प्रदान करती है बल्कि सभी स्तरों पर समान भागीदारी के रूप में सामान्य समाज के साथ भी जोड़ती है।
- (3) फोनोलोजिकल विकार सुनने तथा बोलने संबंधी बीमारी होती है। यह सेरेब्रल पल्सी, बधिरता, खंडतालु तीनों से ही यह उत्पन्न होती है। इसमें अपने विचारों को प्रकट करने में समस्या उत्पन्न होती है।

- (4) सामाजिक संपर्क में भारी कमी से सम्बद्ध आत्मकेन्द्रीयता या स्वलीनता ऐसे व्यवहारात्मक विकृतियों का एक समूह है जिसमें सम्भावित सामाजिक कौशलों, भाषा कौशलों तथा व्यवहार क्षमताओं में अंधविश्वास की अवस्था दिखाई देती है।
- (1) इसे स्वलीनता भी कहा जाता है। स्वलीनता एक ऐसी विकृति है जिसमें पीड़ित व्यक्ति को दूसरों से सम्बन्ध स्थापित करने में दिक्कत आती है। यह आसानी से पता नहीं चलता है।
- (4) मानसिक मंदता एक स्थिति है जो विभिन्न ज्ञात और अज्ञात कारणों से मस्तिष्कीय कोशिका के क्षतिग्रस्त होने के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। इस कारण मानसिक और शारीरिक विकास अपेक्षाकृत कम हो जाता है।
- (2) प्रतिभाशाली बच्चों को संभालने के लिए विशेष छात्रवृत्ति और पुरस्कार कारगर हो सकता है लेकिन यह इतना महत्वपूर्ण विकल्प नहीं है। प्रतिभाशाली विद्यार्थी का IQ ज्यादा होता है। इसलिए उनसे जो कार्यक्रम कराए जाते हैं वह भी उच्च कोटी के होते हैं।
- (4) असाधारण बच्चे का अर्थ है जो विभिन्न समस्याओं का सफलतापूर्वक सामना करता है। इन बच्चों के लिए स्कूल द्वारा विभिन्न तरह की सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए। जैसे स्कूल के चौड़े दरवाजे, रैम्प, विकलांग अनुकूलित शौचालय, अध्यापकों में शिक्षा शास्त्रीय कौशलों का विकास शिक्षण अधिगम से जुड़ी सामग्री उपलब्ध कराना तथा पाठ्यचर्या में अनुकूलन होना।
- (2) डिस्ग्राफिया लेखन समस्या है जो, हस्तलेख योग्यता तथा सूक्ष्म प्रेरक कौशल को प्रभावित करती है। यह लिखावट विकृति है।
- (2) डिस्टैक्सिया से पीड़ित बालक पठन से घबराते हैं। उन्हें लिखी हुई सामग्री धुंधली दिखाई देती है। इसमें अक्षरों को उल्टे ढंग से प्रस्तुत करते हैं। जैसे Saw को Was, एक-एक कर व धीमी गति से पढ़ना। इसका सबसे बढ़िया उदाहरण अमीर खान अभिनित फिल्म “तारे जमीं पर” है।
- (2) समन्वित शिक्षा की सफलता मुख्यतः पाठ्य-पुस्तकों की उत्कृष्टता पर निर्भर करती है। उत्कृष्ट पाठ्य-पुस्तकें विषय को सरलता प्रदान करती है जो विद्यार्थियों के लिए लाभदायक होती हैं।
- (1) शिक्षक द्वारा डाँट पड़ने पर छात्र द्वारा घर आकर अपनी छोटी बहन पर गुस्सा उतारना ‘विस्थापन’ युक्ति का उदाहरण है, क्योंकि यहाँ वह अपने गुस्से का इजहार ठीक उसी प्रकार करता है जैसा उस पर स्वयं बीत चुका है।

14. (3) भारत सरकार ने शिक्षा मंत्रालय द्वारा विशेष बालकों की शिक्षण के लिए जो प्रविधि अपनाई गई है उसमें प्रमुख है :
 1. विशेष विद्यालयों में विशेष शिक्षणों द्वारा
 2. विशेष विद्यालयों में विशेष शिक्षण सामग्रियों द्वारा
15. (3) वंचित शिक्षार्थियों के साथ व्यवहार करने के संदर्भ में अध्यापक/अध्यापिका को छात्रों की सफलता हेतु व्यक्तिगत उत्तरदायित्व में विश्वास व्यक्त करना चाहिए। समावेशी शिक्षा में समाज के सभी वर्गों के छात्रों को शिक्षा की मुख्य धारा में समाविष्ट कर उन्हें शिक्षा के समान, अवसर उपलब्ध कराए जाते हैं।
16. (2) एक समावेशी कक्षा वह है, जहाँ अध्यापक प्रत्येक अधिगमकर्ता के लिए वैविध्यपूर्ण व सार्थक अधिगमनात्मक अनुभवों हेतु परिवेश का निर्माण करते हैं। इसके लिए अध्यापक की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। क्योंकि वह बालक के समाजीकरण को सशक्त करता है व उसके भविष्य की योजनाओं में सामंजस्य स्थापित कर उन्हें शिक्षित करता है और समावेशी कक्षा के वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होता है।
17. (2) जब एक निर्योग्य बच्चा पहली बार विद्यालय आता है, तो शिक्षक को बच्चे की योग्यता के अनुसार उसे विशेष शिक्षण विधि अपनाने का प्रस्ताव करना चाहिए।
18. (1) सफल समावेशन में अभिभावकों की भागीदारी, क्षमता-सम्बर्द्धन तथा संवेदनशील बनाने की आवश्यकता होती है। क्योंकि इसके माध्यम से बालक अपने तथा अपने वातावरण के बीच सन्तुलन का उल्लेख करता है। सफल समावेशन में पृथक्करण की आवश्यकता नहीं होती है।
19. (3) विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों से व्यवहार करने के लिए उन्हें समावेशी शिक्षा का और नियमित विद्यालयों में अध्ययन करने का अधिकार प्राप्त है। क्योंकि समावेशी शिक्षा के अंतर्गत समाज के सभी वर्गों को बिना किसी भेदभाव के नियमित विद्यालयों में अध्ययन की सुविधा प्रदान की जाती है ताकि वंचित वर्गों का भी सर्वांगीण विकास हो सके। इसमें वे बच्चे भी शामिल होते हैं जोकि सुनने, देखने में अक्षम हैं, जो विद्यालय छोड़ चुके हैं या जिन्हें विद्यालय से निकाल दिया गया हो।
20. (1) वंचित समूहों के विद्यार्थियों को सामान्य विद्यार्थियों के साथ-साथ पढ़ाना चाहिए। इसका अभिप्राय समावेशी शिक्षा है, क्योंकि इसका शिक्षा का तात्पर्य एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था से है जिसमें समाज के सभी वर्गों के बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा में समाविष्ट कर उन्हें शिक्षा के समान अवसर देना है।
21. (1) चाइल्ड विड् स्पेशल नीड्स का अभिप्राय विशेष आवश्यकता वाले बच्चों से है जिसमें प्रतिभावान से लेकर दिव्यांग बच्चे शामिल हैं।
22. (1) निःशक्त बच्चे असक्त/परिव्यक्त बच्चे होते हैं। उनके लिए समेकित (समन्वित) एवं समावेशी शिक्षा की केन्द्रीय प्रायोजित योजना का उद्देश्य शैक्षिक अवसर नियमित विद्यालयों में उपलब्ध कराना है।
23. (1) समावेशी शिक्षा के पीछे मूलधार यह है कि समाज में विभिन्नता है और विद्यालयों को इस विभिन्नता में प्रति संवेदनशील होने के लिए समावेशी होने की आवश्यकता है। अतः अब अशक्त बच्चे को भी सामान्य बच्चों की तरह ही शैक्षिक गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है।
24. (1) सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि वाले बच्चों को जब कक्षा के शैक्षिक वातावरण में ढाला जाता है तो उनके अंदर विद्यमान प्रतिभा का कक्षीय माहौल से आपसी समेकन होता है जो उसके बौद्धिक विकास में सहायक होता है। क्योंकि किसी भी समाज से आने वाले बच्चों हों, सभी से कुछ न कुछ सांस्कृतिक मूल्य अवश्य होते हैं जिनका इस्तेमाल कक्षा शिक्षण के दौरान किया जाता है।
25. (2) ऐसे बच्चे के लिए वैकल्पिक अधिगम विधियों, खेल-कूद एवं योगा जैसे शारीरिक क्रियाविधियों का समावेश तथा छोटे-छोटे दिलचस्प क्रियाओं का विकास कर हाइपरएक्टिव बच्चों को बस अधिक ध्यान देने की जरूरत है। अधिकांश बच्चे स्वभाव से सक्रिय होते हैं।

□□□

तंत्रिका अथवा स्नायु तंत्र एवं ग्रंथियाँ

तंत्रिका ऊतक (Nervous tissues) न्यूरॉन्स (neurons) से बना ऊतक है जो केन्द्रीय तथा परिधीय तंत्रिका तंत्र का महत्वपूर्ण भाग है तथा एक्सॉन में बँटी होती है। इस ऊतक का मुख्य गुण इनकी संवेदनशीलता एवं संचालन-शक्ति है। विभिन्न प्रकार के उद्दीपन के उत्तर में तंत्रिका तंत्र अंगों में उत्तेजना उत्पन्न करता है। उत्तेजना का संप्रेषण तंत्रिका ऊतक ही करते हैं।

भ्रूणीय परिवर्धन में एक बार बँध जाने के बाद तंत्रिका कोशिकाएँ कभी विभाजित नहीं होती, वरन जीवन भर अन्तरावस्था में रहती है और शरीर में वृद्धि के साथ-साथ ये भी बड़ी हो जाती है। मस्तिष्क की कुछ तंत्रिका कोशिकाओं में मेलेनिन होता है।

तंत्रिका उत्तक (Nervous Tissue)

तंत्रिका उत्तक के अन्तर्गत तान्त्रिक कोशिकाएँ रहती हैं। एक स्नायविक कोशिका यह एक ऐसी रचना है जो कोशिकाओं के ढाँचे से निर्मित है। इसके भीतर नाभिकीय संरचना विद्यमान रहता है जिन्हें एक्सॉन (axon) कहा जाता है। तंत्रिका कोशिकाएँ एक सिरे से दूसरे सिरे के साथ जुड़ी रहती है ताकि वे लम्बे-लम्बे तंतु बन पायें, बड़ी संख्या में तंत्रिका तंतु मिलकर एक नर्व (Nerve) का निर्माण करते हैं। केवल इन्हीं शिराओं के माध्यम से शरीर के एक भाग से दूसरे भाग तक संदेश पहुँचता है। मस्तिष्क तथा रीढ़ की हड्डियाँ इन्हीं तंत्रिका टिशुओं से बनी होती हैं।

न्यूरॉन्स की रचना एवं कार्य

न्यूरॉन्स के तीन भाग अथवा क्षेत्र हैं।

(i) सेलबॉडी (ii) डेन्ड्राइट्स (कोपा की शाखाएँ), (iii) एक्सॉन
सोमा व सेलबॉडी (Cell body)—सेलबॉडी के घटक डेन्ड्राइट्स तथा एक्सॉन कहलाते हैं। संवेदनाओं के संचरण में सेल बॉडी की अहम भूमिका होती है।

डेन्ड्राइट्स (Dendrites)—ये न्यूरॉन्स प्राप्तकर्ता हैं। संवेदी उद्दीपनों से प्राप्त संदेश अथवा इम्पल्स न्यूरॉन के माध्यम से नाड़ियों में प्रवेश करते हैं तथा डेन्ड्राइट्स के माध्यम से न्यूरॉन इन संदेशों को सेलबॉडी में आगे की ओर भेजते हैं।

एक्सॉन (Axon)—अधिकतर न्यूरॉन्स में केवल एक ही एक्सॉन होता है जो कि प्रसारक (संवेदों अथवा संदेशों को भेजना) कहलाता है। एक्सॉन संदेशों अथवा उद्दीपनों को सेल बॉडी से हमारे शरीर के दूसरे हिस्सों में पहुँचाता है। एक्सॉन अपने छोर के पास नाड़ी शाखाओं में प्रसारित हो जाता है जिसे एक्सॉनटर्मिनल अथवा टर्मिनल फायबर कहते हैं।

तंत्रिका तंत्र में तीन प्रकार के न्यूरॉन्स होते हैं—

- संवेदी नर्व्स (Sensory nerves)
- गामक नर्व्स (Motor nerves)
- इन्टरमीडियट नर्व्स (Intesmediate nerves)

सेंसरी न्यूरॉन्स अथवा एफ्रेन्ट न्यूरॉन्स केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को संदेश अथवा उद्दीपन ले जाते हैं। ये संदेश त्वचा, नेत्र, कान तथा हमारे शरीर के दूसरे हिस्सों से मस्तिष्क को भेजे जाते हैं। ये संदेश अथवा उद्दीपन हर समय हमारे शरीर को देखने, सुनने, अनुभव करने की अवस्था को जानने के लिए उत्तरदायी होते हैं।

मोटर न्यूरॉन संदेशों अथवा उद्दीपनों को स्पाइनल कॉर्ड से पेशियों में पहुँचाता है और इसके परिणास्वरूप पेशियाँ क्रियाएँ करती हैं।

इन्टरमीडियट नर्व्स पूरी तरह से केन्द्रीय तंत्रिकातंत्र में ही स्थित रहते हैं तथा उनका बाहरी वातावरण से कोई सम्पर्क नहीं रहता है।

तंत्रिका तंत्र का प्रकार्यात्मक वर्गीकरण

(Functional Classification of Nervous System)

तंत्रिका तंत्र को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:

- केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (Central Nervous System)
- पेरीफेरल व परिधीय तंत्रिका तंत्र (Peripheral Nervous System)
- स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic Nervous System)

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (Central Nervous System)

केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र केन्द्र स्थित अंग है जिसमें दिमाग, स्पाइनल कॉर्ड तथा कुछ स्पाइनल नाड़ियाँ होती हैं। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में 100 बिलियन से अधिक न्यूरॉन घर किए होते हैं।

परिधीय तंत्रिका तंत्र (पी.एन.एस.)

(Peripheral Nervous System)

पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र में 43 जोड़ी नाड़ियाँ होती हैं तथा क्रैनियल नाड़ी के 12 जोड़े दिमाग से जुड़े होते हैं, स्पाइनल कॉर्ड से जुड़े 31 जोड़े—स्पाइनल नाड़ी कोपा होते हैं। स्पाइनल नाड़ियाँ कंकाल पेशियों में सीधे ही पहुँचती हैं। प्रत्येक स्पाइनल नाड़ी के लिए संवेदी न्यूरॉन्स, गेन्गलिया के पृष्ठ मूल से स्पाइनल कॉर्ड में प्रवेश करता है। ये पेशीय गतिविधियों के नियंत्रण श्रृंखला की एक कड़ी है जोकि न्यूरोमस्क्युलर जंक्शनों पर समाप्त होती है।

पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है: संवेदी तथा गामक (सेंसरी एन्ड मोटर)। हमारे पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र का संवेदी तंत्र संवेदी सूचनाओं को हमारे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की ओर ले जाता है। संवेदी न्यूरॉन्स संवेदी अंगों (स्पर्श, गंध, स्वाद, दृष्टि तथा श्रवण) तथा पेशीय टेन्डनों में उत्पन्न होती है। हमारे

पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र की यह गतिज प्रणाली केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा प्रसारित सूचनाओं को हमारे शरीर के विभिन्न हिस्सों में मोटर न्यूरोन्स द्वारा संचारित करता है।

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic Nervous System)

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र को आमतौर पर पेरीफेरल तंत्रिका तंत्र का गतिज प्रक्रिया मानी जाती है लेकिन यह हमारे शरीर के आन्तरिक अनैच्छिक कार्यों को नियमित करता है। जैसे- रक्तचाप, हृदय के धड़कने की दर, रक्त वितरण या श्वसन। ये क्रियाकलाप शारीरिक गतिविधियों तथा खेल कूद के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं।

स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के दो भाग हैं परानुकंपी तथा सहानुकंपी तंत्रिका तंत्र (सिम्पैथेटिक तथा पैरासिम्पैथेटिक)। इन दोनों प्रणालियों का प्रभाव आम तौर पर एक दूसरे के विपरीत होता है परन्तु दोनों एक साथ काम करते हैं।

परानुकंपी तंत्रिकातंत्र (सिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम) (Sympathetic Nervous System)

यह हमारे शरीर को विपत्ति का सामना करने के लिए तैयार करती है। जब हम उत्तेजित होते हैं तो तंत्रिका तंत्र पूरे शरीर में बड़ी मात्रा में इंकृत होता है तथा हमें कार्यवाही लिए तैयार करता है। परानुकंपी उद्दीपन के प्रभाव का खिलाड़ी के लिए बड़ा महत्व है जोकि उसे प्रतियोगिता के लिए गहन तनाव अथवा शारीरिक क्रियाएँ करने हेतु तैयार करता है।

सहानुकंपी तंत्रिका तंत्र (The Parasympathetic Nervous System)

यह हमारे विभिन्न आंतरिक कार्यों से पाचन ग्रंथियों के स्राव मूत्र विसर्जन तथा ऊर्जा भण्डारण के कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जब हम शांत तथा विश्रामावस्था में होते हैं उस समय यह सहानुकंपी प्रणाली और अधिक सक्रिय होती है।

प्रतिवर्ती क्रिया (Reflex Action)

तंत्रिकातंत्र शरीर का बड़े पैमाने पर अनैच्छिक अथवा अचेतन अवस्था में नियमित करता है जिन्हें प्रतिवर्त क्रिया (रिफ्लैक्स एक्शन) कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि व्यक्ति अनजाने में गर्म स्टोव पर हाथ रख दे तो अनैच्छिक रूप में उसका हाथ उस गर्म स्टोव से सोचने की क्रिया किए बगैर अपने आप हट जाता है। व्यवहारिक रूप में आन्तरिक अंगों के नियमित कार्य रिफ्लैक्स एक्शन द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। ये उसके प्राकृतिक रिफ्लैक्स हैं जिनके साथ वह उत्पन्न हुआ है। दूसरे प्रकार का रिफ्लैक्स मोटर रिफ्लैक्स हैं। इसे अभ्यास के द्वारा विकसित किया जा सकता है। मोटर रिफ्लैक्स एक कार्याधारित प्रक्रम है। खिलाड़ी नहीं सोचते कि उन्हें कैसे दौड़ना, कूदना अथवा फेंकना है। उन्हें दौड़ने अथवा कूदने से अपनी बाँहें कैसे घुमाना है। कैसे टाँगें घुमाना है। यह निरन्तर अभ्यास के परिणामस्वरूप अपने आप आ जाता है। सभी प्रकार की रिफ्लैक्सेस का विकास शारीरिक शिक्षा जैसे किसी व्यक्ति का आदर करना, सौन्दर्यता, खेल आदि के से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण भाग है।

साधारण रिफ्लैक्सेज को केवल स्पाइनल कॉर्ड संभालती है जबकि जटिल तथा कठिन क्रियाओं अथवा गतियों के लिए मस्तिष्क उत्तरदायी है।

तंत्रिकाओं का पारस्परिक उत्तेजन (Reciprocal Innervation)

पारस्परिक उत्तेजन, केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र का एक महत्वपूर्ण प्रभाव क्षेत्र है। यह संवेदी तंत्रिकाओं से संदेश प्राप्त कर गतिज तंत्रिकाओं के द्वारा संदेश पर कार्यवाही करता है। जब किसी गति को करने की इच्छा होती है तो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र एक पेशीय गुच्छे को संकुचित होने का निर्देश देती है तथा विपरीत समूह की पेशी को संकुचन के निषेध का आदेश देता है। इसलिए एगोनिस्ट तथा एन्टागोनिस्ट की पारस्परिक क्रियाओं के कारण उत्पन्न हुई गति को पारस्परिक उत्तेजक गति कहते हैं। यह ध्यान रखना होगा कि रुकावट के अभ्यास से एन्टागोनिस्टिक पेशी की गति त्वरित तथा अधिक परिपूर्ण होकर गति को और अधिक सक्षम बना देती है।

तंत्रिका तंत्र के मुख्य अंग या भाग (Main organs or Parts of Nervous System)

मुख्यतः निम्नलिखित भाग अथवा अंग मानव तंत्रिका तंत्र के पर्याय हैं:

- मस्तिष्क (Brain)
- सुष्पुम्ना नाड़ी (Spinal Cord)
- तंत्रिकाएं व नर्वस (Nerves)

मस्तिष्क (Brain)

यह तंत्रिका तंत्र का एक जीवंत (महत्वपूर्ण) भाग है। यह हमारे शरीर का बहुत नाजुक तथा जटिल अंग है। जोकि अस्थि कपाल द्वारा सुरक्षित रहता है। इसका अनुमानित भार 1420 ग्राम है। मस्तिष्क के मुख्य भाग हैं :

- सेरिब्रम (Cerebrum)
- डाइएन्सेफलॉन (Diencephalon)
- सेरिबेलम (Cerebellum) तथा
- मेडूला ऑब्लोंगाटा (Medulla Oblongata or Brain Stem)

सेरिब्रम (Cerebrum)

सेरिब्रम मस्तिष्क का प्रमुख भाग है। सेरिब्रम का बाहरी भाग अथवा कॉर्टेक्स बुद्धिमत्ता तथा मेधा का हिस्सा होता है। इसे ग्रे-मैटर (भूरा पदार्थ भी कहते हैं)। यह हमारा सचेतन मस्तिष्क है। इसके द्वारा हम सोचते, अनुभव करते तथा अपनी गतियों को तय करते हैं। यह हमारे सम्पूर्ण शरीर पर नियंत्रण रखता है।

डायाएन्सेफलॉन्स (Diencephalons)

मस्तिष्क के इस भाग में थैलेमस तथा हाइपोथैलेमस होता है। थैलेमस एक महत्वपूर्ण संवेदी केन्द्र है। समस्त संवेदी प्रविष्टियाँ थैलेमस में प्रवेश

करती हैं तथा ग्रैमैटर के सम्बन्धित भाग को भेजी जाती है। हमारे सचेतन मस्तिष्क में आने वाली समस्त संवेदी सूचनाओं पर थैलेमस का नियंत्रण होता है। अतः नियंत्रण पर इसका बहुत महत्वपूर्ण योगदान है।

हाइपोथैलेमस एक छोटा क्षेत्र है जोकि थैलेमस के एकदम नीचे होता है लेकिन कार्य करने की दृष्टि से यह दिमाग का एक विस्तृत क्षेत्र है। यह बहुत महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह जीवित रहने तथा जीवन को मनोरंजक बनाए रखने का कार्य करता है। यह मस्तिष्क तथा शरीर के बीच एक कड़ी का काम करता है। यह तंत्रिका तंत्र को एन्डोक्राइन प्रणाली से जोड़ने का काम करता है।

हाइपोथैलेमस के मुख्य कार्य नीचे दिए गए हैं :

- यह स्वायत्त तंत्रिका प्रणाली को नियमित रखता है तथा रक्तचाप, हृदय के धड़कने की दर, पाचन तथा श्वसन आदि को नियमित रखता है।
- यह शरीर तापक्रम को नियमित रखता है।
- यह भावनाओं को नियमित रखता है।
- यह प्यास को नियमित रखता है।
- यह भोजन ग्रहण करने को नियमित रखता है।
- यह तंत्रिका एन्डोक्राइन कड़ी को नियंत्रित करता है।
- यह जागृत-निद्रा चक्र को नियंत्रित करता है।

सेरिबेलम (Cerebellum)

यह मस्तिष्क का दूसरा सबसे बड़ा भाग है। यह मस्तिष्क को कई भागों से जोड़ते हुए गतियों के समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका

निभाता है। यह हमारी माँसपेशियों पर नियंत्रण रखने में मदद करता है तथा संतुलन एवं समतुल्यता बनाए रखता है।

मेडूला ऑब्लॉगाटा अथवा ब्रेनस्टेम (Medulla oblongata or brain stem)

मेडूला ऑब्लॉगाटा की संरचना हमारे दिमाग के मध्य भाग की तंत्रिकाओं से मिलजुल कर बनी है तथा यह स्पाइनल कॉर्ड तथा दिमाग को जोड़ती है। ब्रेनस्टेम के माध्यम से सभी संवेदी तथा गामक नाड़ियाँ गुजरती हैं। ये दिमाग तथा स्पाइनल कॉर्ड के मध्य सूचनाओं का विनिमय करता है। मेडूला में ऐसे केन्द्र होते हैं जो हृदय तथा फेफड़ों को नियंत्रित करते हैं। जब मेडूला जखमी हो जाता है तो उसके परिणामस्वरूप मौत हो जाती है। हृदय तथा फेफड़ों की क्रमशः धड़कन तथा श्वसन बन्द हो जाती है।

मेरुरज्जु व सुषुम्ना (Spinal Cord)

स्पाइनल कॉर्ड दिमाग तथा शेष शरीर के मध्य प्रमुख कड़ी है। यह मेडूला जुड़ी होकर पीठ के मध्य से नीचे की ओर जाती है। स्पाइनल कॉर्ड मस्तिष्क तथा शरीर के दूसरे भागों के बीच गामक तथा संवेदी तन्तुओं को ले जाती है। यह पीठ की हड्डी के मेरुदण्ड से सुरक्षित रहती है। स्पाइनल कॉर्ड से ही नाड़ियों की शाखाएँ हमारे पूरे शरीर में फैलती हैं। इन नाड़ियों की शाखा कई गुना छोटी से छोटी नाड़ियों के द्वारा हमारे शरीर के प्रत्येक कोने तक संवेदनाएँ पहुँचाती हैं। शरीर के सभी भागों से आने वाले संदेश स्पाइनल कॉर्ड में प्रवेश कर नाड़ियों के द्वारा घूमते हुए मस्तिष्क में पहुँचती हैं।

स्रावी ग्रंथियों के प्रकार एवं सम्बद्ध हॉर्मोन

अन्तः स्रावी तंत्र (Endocrine System)

अन्तः स्रावी तंत्र के अन्तर्गत बहुत-सी विशेष प्रकार की ग्रंथियाँ आती हैं जो शरीर के विभिन्न भागों में पाई जाती हैं। इन ग्रंथियों से विशेष प्रकार के हॉर्मोन्स का स्राव होता है हॉर्मोन जिन अंगों से उत्पन्न होते हैं, उन्हें 'नालिका विहीन ग्रंथियाँ' (Ductless glands) या 'अन्तः स्रावी ग्रंथियाँ' (Endocrine glands) कहते हैं।

- हॉर्मोन एक रासायनिक संदेशवाहक है जो नालिका विहीन ग्रंथि से स्रावित होकर रक्त में जा मिलता है तथा वहाँ से रुधिर के माध्यम से दूरस्थ लक्षित अंग तक पहुँचकर अपना प्रभाव डालता है।
- हॉर्मोन मुख्यतः अमीनो अम्ल, कैटेकोलेमींस, स्टेरॉयड्स एवं प्रोटीन होते हैं।

हाइपोथैलेमस से स्रावित हॉर्मोन		
हाइपोथैलेमस	1. थायरोट्रोपिन स्लीजिंग हॉर्मोन	पीयूष (पिट्यूट्री) ग्रंथि को टी.एम.एच. के स्रावण के लिए प्रेरित करना।
	2. कर्टिकोट्रोपिन रिलीजिंग हॉर्मोन	पीयूष ग्रंथि को ए.सी.टी.एच. पी.एस.एच. हेतु प्रेरित करना
	3. गोलैडोट्रोपिक रिलीजिंग हॉर्मोन	पीयूष ग्रंथि को एन.एच.पी.एस.एच. स्रावित करने के लिए प्रेरित करना

बहिःस्रावी ग्रंथियाँ (Exocrine Glands) : नलिकायुक्त ग्रंथियाँ जिनके द्वारा स्रावित स्राव को विभिन्न अंगों तक पहुँचाने के लिए होती हैं, 'बहिःस्रावी ग्रंथियाँ' (Exocrine glands) कहलाती हैं। इनसे विभिन्न एन्जाइम (Enzyme) का स्राव होता है, जैसे-दुग्ध ग्रंथि, स्वेद ग्रंथि, लार ग्रंथि, श्लेष्मा ग्रंथि एवं अश्रु ग्रंथि आदि।

मिश्रित ग्रंथियाँ (Mixed Glands) : कुछ ग्रंथियाँ अन्तःस्रावी एवं बहिःस्रावी दोनों प्रकार की होती हैं। इनसे एन्जाइम एवं हॉर्मोन दोनों का स्रावण होता है, जैसे-अग्न्याशय (Pancreas)।

मानव शरीर की मुख्य अन्तःस्त्रावी ग्रंथि एवं उनसे स्त्रावित हार्मोन के कार्य एवं प्रभाव :

पीयूष ग्रंथि (Pituitary Gland)

पीयूष ग्रंथि (Pituitary Gland) : यह कपाल की स्फेनॉइड (Sphenoid) हड्डी के एक कोष्ठक में स्थित होती है। इसको 'सेलट्यूरिका' (Sella turcica) कहते हैं।

यह सभी ग्रंथियों में सबसे मुख्य ग्रंथि है। यह शरीर में नियंत्रण एवं समन्वय का मुख्य कार्य करती है। सभी अंतःस्त्रावी ग्रंथियाँ विभिन्न कार्यों का नियंत्रण एवं समन्वय करती हैं परंतु पीयूष ग्रंथि इन ग्रंथियों का भी नियंत्रण एवं समन्वय करती है। अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों की क्रियाओं का नियंत्रण तंत्रिका-तंत्र, तंत्रिकाओं और पीयूष ग्रंथि (Pituitary gland) के जरिए करता है। अन्य ग्रंथियों पर नियंत्रण करने के कारण पीयूष ग्रंथि को **मास्टर ग्रंथि** कहा जाता है। पीयूष ग्रंथि अनेक प्रकार के हॉर्मोन्स का स्त्राव और शारीरिक क्रियाओं का नियंत्रण करती है। पीयूष ग्रंथि से निकलने वाले हार्मोन एवं उनके कार्य

- **सोमेटोट्रोपिक हॉर्मोन (Growth hormone-STH) :** यह उपापचय (Metabolism), विशेषकर ऊतकों (Tissues) में प्रोटीन संश्लेषण के कार्य को प्रभावित करता है। यह शरीर की वृद्धि का नियंत्रण करती है। STH की अधिकता से भीमकायता (Gigantism) अथवा एक्रोमिगली (Acromegaly) विकार उत्पन्न हो जाते हैं जिसमें मनुष्य की लम्बाई सामान्य से बहुत अधिक बढ़ जाती है। STH की कमी से मनुष्य में बौनापन (Dwarfism) होता है।
- **थाइरोट्रोपिक हॉर्मोन (Thyrotropic hormone) :** यह थाइराइड ग्रंथि की क्रिया को नियंत्रित करता है।
- **एडिनोकोर्टिकोट्रोपिक हॉर्मोन/ए. सी. टी. एच.-Adrenocortico tropic hormone) :** यह एडिनल ग्रंथि की क्रिया को तीव्र करता है।
- **गोनेडोट्रोपिक हॉर्मोन (GTH-Gonadotropic hormone) :** यह यौन अंगों व ग्रंथियों की क्रिया को प्रभावित करता है।
 - (a) **FSH हॉर्मोन (Follicle Stimulating Hormone) :** यह वृषण की शुक्रजनन नलिकाओं में शुक्राणु जनन में सहायता करता है। यह अंडाशय में फॉलिकुल की वृद्धि में मदद करता है।
 - (b) **LH हॉर्मोन (Luteinizing Hormone) :** यह अंतराल कोशिका उत्तेजक हार्मोन है जो नर में टेस्टोस्टीरोन हॉर्मोन एवं मादा में एस्ट्रोजन (Estrogen) हॉर्मोन स्त्रावित करता है।
- **ऑक्सीटोसीन और वैसोप्रेसिन :** ऑक्सीटोसीन प्रसव काल में गर्भाशय पेशियों के संकुचन को तीव्र करता है। इसीलिए, इसका उपयोग प्रसव पीड़ा को तीव्र करने में किया जाता है। वैसोप्रेसिन गर्भाशय की रक्त-वाहिकाओं में संकुचन उत्पन्न करता है। वैसोप्रेसिन में एक और पदार्थ पाया गया है, जो प्रतिमूत्रल क्रिया (Antidiuretic activity) को प्रभावित करता है।
- **पिट्यूट्रिन (Pituitrin) :** इसका उपयोग चिकित्सा व्यवसाय में किया जाता है।
 - (a) **LGH हॉर्मोन (Lactogenic Hormone) :** यह दुग्धजनक हार्मोन है। इसका मुख्य कार्य स्तनों में शिशु के लिए दुग्ध स्त्राव उत्पन्न करना है।
 - (b) **ADH हार्मोन (Antidiuretic Hormone) :** इसके कारण छोटी-छोटी रक्त धमनियों का संकीर्णन होता है एवं रक्तदाब बढ़ जाता है। यह शरीर में जल संतुलन को बनाए रखने में सहायक होता है।

मेड्युला से एड्रिलिन हॉर्मोन का स्त्राव

- अधिवृक्क से स्त्रावित एड्रिनेलिन अथवा एपिनेफ्रिन हॉर्मोन को 'आपातकालीन हॉर्मोन' कहा जाता है। यह हॉर्मोन आपातकालीन स्थिति में शरीर को तैयार रखता है। यह हॉर्मोन हृदय स्पंदन के एकाएक रुक जाने पर उसे पुनः चालू करता है। इसलिए इस हॉर्मोन को 'रोग से लड़ो या उड़ो' (फाइट एण्ड फ्लाइट) कहा गया है।

ग्रंथि कमी से रोग		हार्मोन अधिक से रोग	कार्य
एड्रीनल पेशियों	1.	एड्रिनेलिन या रक्त चाप में कमी, अप्रसन्नता, एपिनेफ्रिन	संकटावस्था में अरेखित उच्च रक्त चाप एवं तनाव को उत्तेजित करना। रुधिर दाब चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है, हृदय की धड़कन तेज हो जाती है, बाल खड़े हो जाते हैं, पसीना आने लगता है, आँसू निकलने लगते हैं और शरीर उग्र प्रतिक्रिया के लिए तैयार हो जाता है।
	2.	नॉर एड्रिनेलिन या नॉर एपिनेफ्रिन	एड्रिनेलिन के समान प्रभाव
	3.	मिनरैलोकॉर्टिकॉयड एल्डोस्टेरोन	ई.सी.एम. में क्लोराइड व एडीसन का रोग, सोडियम व हाइपरग्लाइसीमिया से मधुमेह, सोडियम की मात्रा का जल के अधिक उत्सर्जन से शरीर का फूलना, शरीर में नियमन करके परासरणी दाब शरीर का निर्जलीकरण, रक्त पानी भरना, हड्डियों का गलना, व रक्त चाप का नियंत्रण चाप व शरीर ताप में कमी। कॉन्स रोग।
	4.	ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स, कॉर्टिसोल एवं कार्टिकोस्टेरोन	परिधीय ऊतकों की कोशिकाओं से रक्त में ग्लूकोज तथा अमीनो एवं वसीय अम्लों की मुक्ति का प्रेरक, यकृत में ग्लाइकोजेनेसिस का प्रेरक, शरीर की सामान्य प्रतिरक्षी एवं प्रदाह कोशिकाओं को रोकना, रक्त चाप को बढ़ाना। इन दोनों श्रेणियों के हॉर्मोस संकटावस्था में शरीर के उग्र हो जाने पर उसे वापस सामान्य अवस्था में लाते हैं।
	5.	लिंग हार्मोन नर में एण्ड्रोजन तथा मादा में एस्ट्रोजन व प्रोजेस्टेरोन	द्वितीयक लैंगिक लक्षणों एवं जनन की दृष्टि से परिपक्वता लैंगिक परिपक्वता जल्दी नर यैत व्यवहार के लिए उत्तरदायी, में मादा के समान एवं मादा में देरी। पेशियों एवं जननांगों विकास में नर के समान लक्षणों का के प्रेरक। उभरना।

संवेदी और गामक तंत्रिकाएँ (Sensory and Motor Nerve)

- सुषुम्ना तंत्रिका (spinal nerve) कायिक तंत्रिका-तंत्र में पाये जाने वाले दूसरे प्रकार की प्रमुख तंत्रिका है। सुषुम्ना तंत्रिका के 31 जोड़े थोड़ी-थोड़ी दूरी पर सुषुम्ना (spinal cord) से निकलते हैं इन 31 जोड़ों को जो सुषुम्ना के हिस्से से संबंधित होते हैं, के अनुसार पाँच भागों में इस प्रकार बाँटा गया है :

नाम (Name)	संख्या (Number)	स्थान (Position)
सरवाइकल (Servical)	8	गर्दन (Neck)
थोरैसिक (Thoracic)	12	छाती (Chest)
लम्बर (Lumber)	5	कमर (Coin)
सैकरल (Sacral)	5	मेरुदण्डीय कालम का अंतिम छोर (End of spinal column)
कोक्सिजीयल (Coccygeal)	1	मेरुदण्डीय कॉलम का अंत (End of spinal column)

- सुषुम्ना तंत्रिका (spinal nerve) सुषुम्ना में प्रवेश करने से पहले दो भागों में बँट जाता है—डॉसल मूल (dorsal root) तथा भेन्ट्रल मूल (ventral root)। डॉसल मूल का कार्य संवेदी (sensory) होता है जबकि भेन्ट्रल भाग का कार्य पेशीय या गामक व प्रेरक (motor) होता है। हालाँकि इसके कुछ अपवाद भी हैं। डॉसल भाग की पहचान इस बात से होती है कि सुषुम्ना में प्रवेश करने से पहले उसमें एक फूली हुई संरचना (swelling structure) होती है जिसे डॉसल सुषुम्ना गैंगलियन (dorsal spinal ganlion) कहा जाता है।
- सुषुम्ना (spinal cord) सचमुच में मस्तिष्क का एक विस्तार (extension) है। यह रीढ़ की हड्डी में जो गर्दन से कमर तक फैली हुई है, में तरल पदार्थ के रूप से अवस्थित होता है। ऊपर से नीचे तक सुषुम्ना के कुल 31 भाग हैं तथा प्रत्येक भाग में सुषुम्ना तंत्रिका (spinal nerve) का एक जोड़ा (pair) होता है। सुषुम्ना को कहीं से भी काटने पर इसका बीच का भाग का आकार एक तितली (butterfly) के समान होता है। और वह भाग धूसर पदार्थ (grey matter) से भरा रहता है। इस बीच के भाग के चारों तरफ सफेद पदार्थ (white matter) जिसके होकर अनेक तंत्रिका तन्तु नीचे से ऊपर या ऊपर से नीचे की ओर आते-जाते दिखते हैं। जिनमें माइलिनेटेड तन्तु (myelinated fibers) की प्रचुरता होती है।

- सुषुम्ना के मुख्य दो कार्य हैं। पहला, यह शरीर के विभिन्न क्षेत्रों से आने वाले सूचनाओं को मस्तिष्क तक पहुँचाना तथा मस्तिष्क से आने वाले सूचनाओं को शरीर के माँसपेशियों तथा ग्रन्थियों तक पहुँचाना। दूसरा, इसके द्वारा महत्वपूर्ण प्रतिवर्त क्रियाओं (reflex actions) का भी नियन्त्रण एवं संचालन होता है।

विभिन्न प्रकार की संवेदी-गामक (Sensory-Motor) तंत्रिकाएं

- एब्दुसेन्स (Abducens) :** यह तंत्रिका पूर्णतः पेशीय कार्य करता है तथा इसके द्वारा आँख की गति का नियंत्रण होता है।
- कपालीय (Facial) :** यह कपालीय तंत्रिका भी पूर्णतः पेशीय कार्य करता है तथा इसके द्वारा आनन गति का नियंत्रण होता है।
- श्रवण वेस्टिब्युलर (Auditory vestibular) :** यह तंत्रिका पूर्णतः संवेदी कार्य करता है और श्रवण संवेदना का नियंत्रण होता है।
- ग्लासोफैरिंजियल (Glossopharyngeal) :** यह कपाल तंत्रिका अंशतः संवेदी तथा अंशतः पेशीय कार्य करता है। यह जीभ से मिलने वाले संवेदनाओं को नियंत्रित करता है। यह ग्रसनी (pharynx) के गतियों को भी नियंत्रण करता है।
- वैगस (Vagus) :** यह कपालीय तंत्रिका भी अंशतः संवेदी तथा अंशतः पेशीय कार्य करता है। इसके द्वारा हृदय, यकृत (liver) तथा आँत से प्राप्त संवेदनों को नियंत्रित किया जाता है तथा उनके क्रियाओं का संचालन एवं नियंत्रण भी होता है।
- स्पाइनल एक्सेसोरीज (Spinal accessories) :** यह कपालीय तंत्रिका भी पूर्णतः पेशीय कार्य करता है। इसके द्वारा गर्दन की माँसपेशियों एवं अन्तरंग (visceral) के गतियों का नियंत्रण होता है।
- हाइपोग्लोसल (Hypoglossal) :** यह कपालीय तंत्रिका भी पूर्णतः पेशीय कार्य करता है। इसके द्वारा जीभ की माँसपेशियों के गतियों का नियंत्रण होता है।

संवेदी अंग: संवेदनाग्राही और संवेदना प्रभावक अंग (Sensory Organs: Receptors and Effectors)

मनुष्य के शरीर में विभिन्न बाह्य तथा आंतरिक परिवर्तनों अर्थात् उद्दीपनों (संवेदनाओं) का अनुभव करने के लिए कुछ विशेष प्रकार

के अंग पाये जाते हैं, जिन्हें संवेदी अंग (sensory organs) कहते हैं। इन्हें ज्ञानेंद्रियों, इंद्रियाँ एवं संवेदना ग्राही अंगों (receptors) के नाम से भी जाना जाता है। जब कोई उद्दीपन पैदा होता है, तो इसकी वजह से संवेदी अंगों को कोशिकाएँ उत्तेजित हो जाती हैं। तत्पश्चात् यह उद्दीपन तंत्रिका तंतु को प्रेषित कर दिया जाता है। तंत्रिका तंतुओं के इसी उद्दीपन को तांत्रिकीय आवेग (nerve impulse) कहते हैं। स्थिति के आधार पर ज्ञानेंद्रियों दो प्रकार के होते हैं:

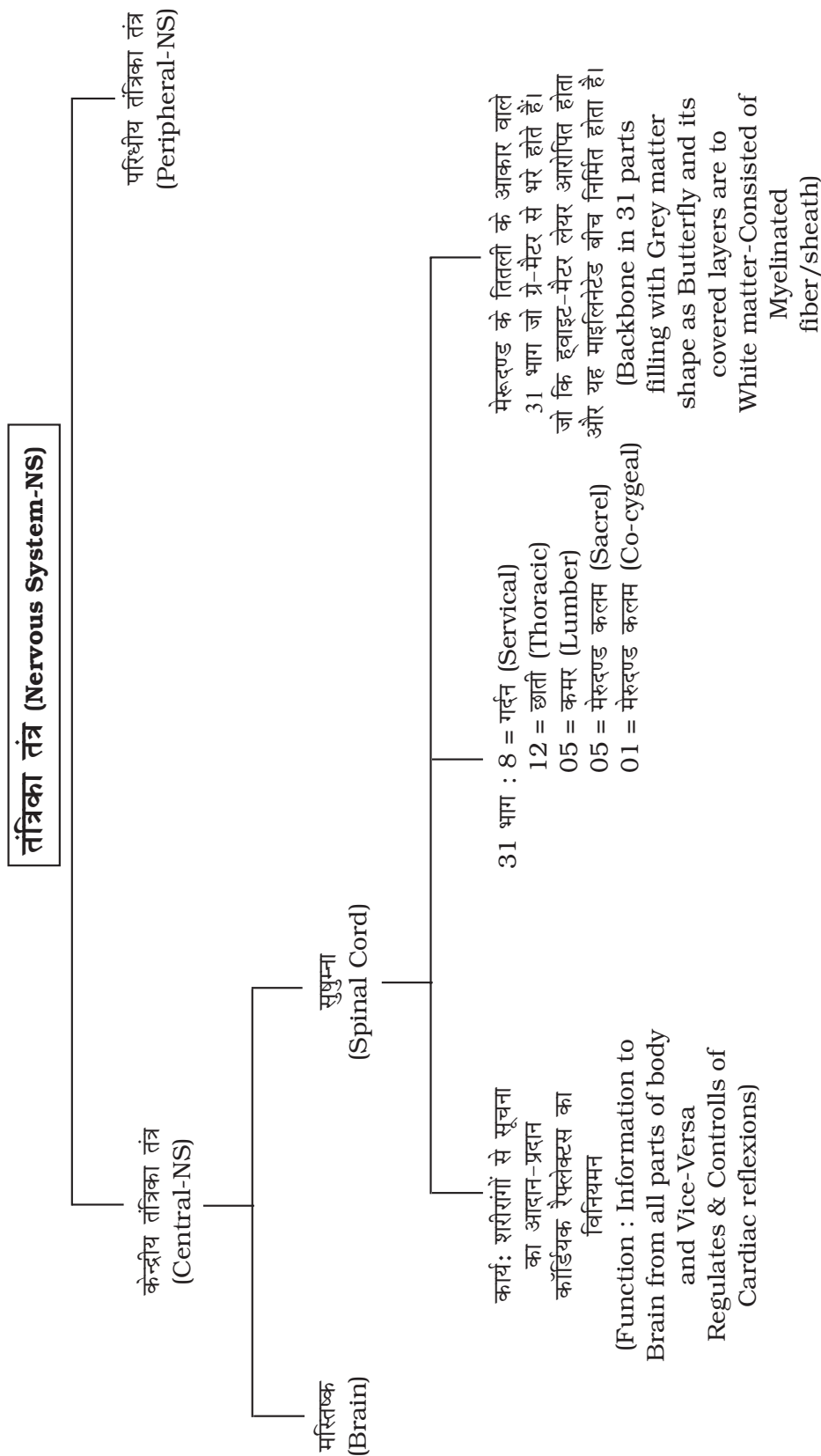
1. **बाह्य ज्ञानेंद्रियाँ (External sense organs)** ये बाह्य उद्दीपनों को ग्रहण करती हैं, जैसे—त्वचा, आँख, कान, नाक एवं जिह्वा।
2. **अंतःज्ञानेंद्रियाँ (Internal sense organs)** ये शरीर के अन्दर पैदा होने वाले उद्दीपनों को ग्रहण करती हैं, जैसे— संवेदी कोशिकाओं के गुच्छे या तंत्रिकाग्र या तंतुओं के सिरे।

त्वक संवेदांग (Cutaneous Sense organ)— इसमें निम्नलिखित भाग होते हैं—

1. **पीड़ाग्राही अंग (Pain receptors)** डर्मिस एवं एपिडर्मिस में स्थित पीड़ाग्राही तन्तु।
2. **स्पर्शग्राही अंग (Tactile receptors)** स्पर्श कणिकाएँ, रोम पुटिकाएँ, मर्केल कणिकाएँ, बल्ब कणिकाएँ, तंत्रिका तन्तु रूप पेशी।
3. **तापग्राही अंग (Thermo receptors)** क्राउस की कणिकाएँ।

निद्रा सम्बद्ध हॉर्मोन और सेरिब्रोस्पाइनल फ्लुइड

मस्तिष्क का मेडुलरी रेटिकुलर फॉरमेशन, थैलेमस और बेस फोरब्रेन, नींद उत्पत्ति की प्रक्रिया के मुख्य संचालक हैं। जागृत अवस्था का संचालन मस्तिष्क के फोरब्रेन, रेटिकुलर फॉरमेशन, मिडब्रेन, थैलेमस और वेसल फोरब्रेन करते हैं। आर.ई.एम. (रैपिड आई मूवमेंट) निद्रा की उत्पत्ति का केंद्र मस्तिष्क के पोंस नामक भाग में स्थित है। सिरोटॉनिन नामक न्यूरोट्रांसमीटर निद्रा की उत्पत्ति से संबंधित मस्तिष्क के भागों को खबर पहुँचाने का काम करता है, जबकि केटाकोलामिन नामक न्यूरोट्रांसमीटर जाग्रत अवस्था लाने के लिए जिम्मेदार है। निद्रा लाने और जागृत अवस्था को संयोजित करने। उल्लेखनीय न्यूरोट्रांसमीटर हैं—प्रोस्टाग्लेनडिन, नींद लाने वाला पेप्टाइड मुरामिडाडाई पेप्टाइड, इंटरल्युकिन-1 और मेलाटोनिन। इन ट्रांसमीटरों का असर नॉन- आर.ई.एम. निद्रा अवस्था को नियंत्रित करने में भी प्रमुख होता है।



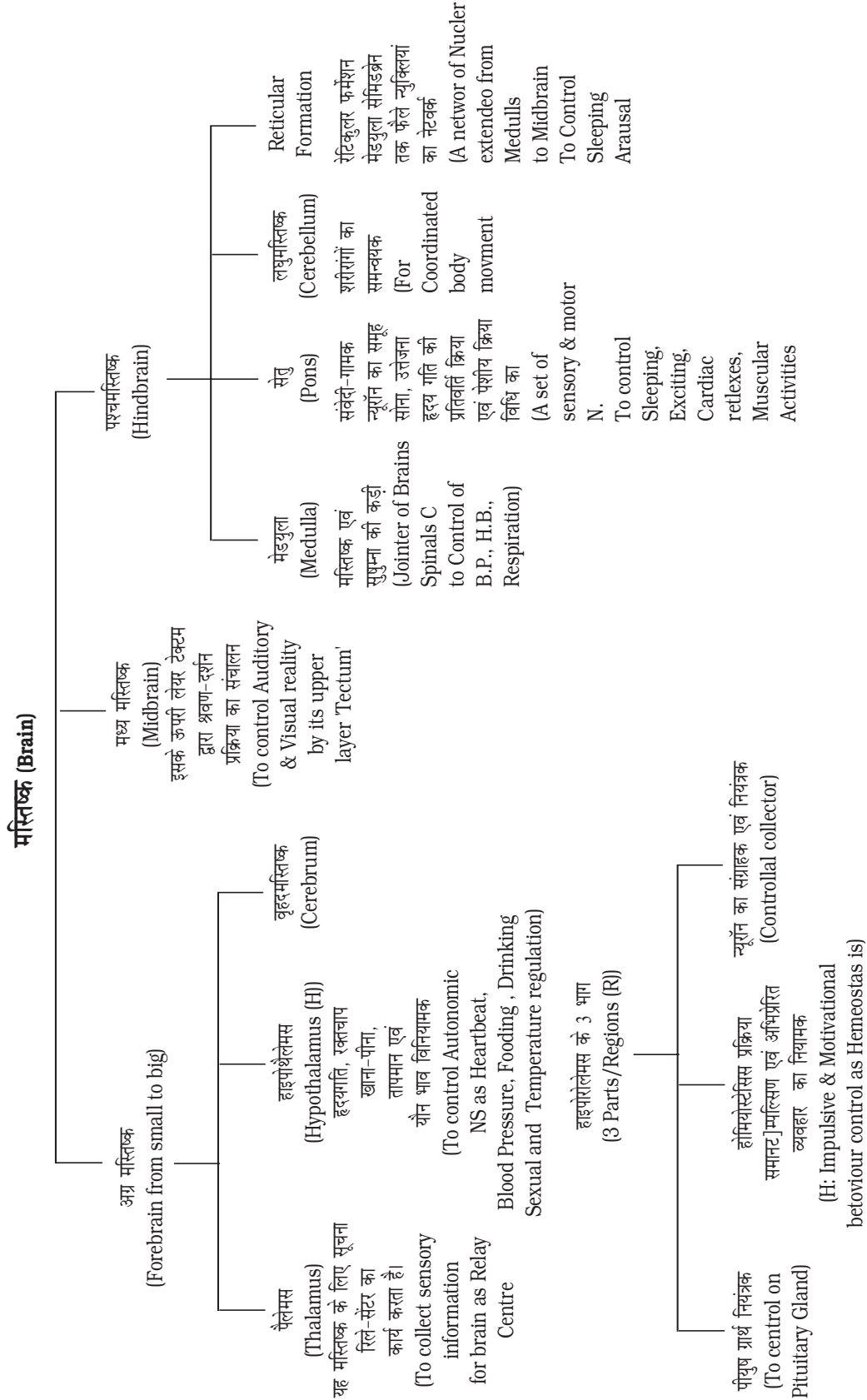
केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को आवृत्ति करने वाले लेयर्स मेनिन्जस कहलाते हैं, इसमें तीन लेयर्स हैं:

(Converging layers of central NS (Brain + Spinal Cord) is called MENINGES which are in three layers)

बाह्य स्तर (External Layers) = ड्यूरॉय मैटर (Dura Matter)

आंतरिक स्तर (Internal Layers) = पिया मैटर (Pia matter)

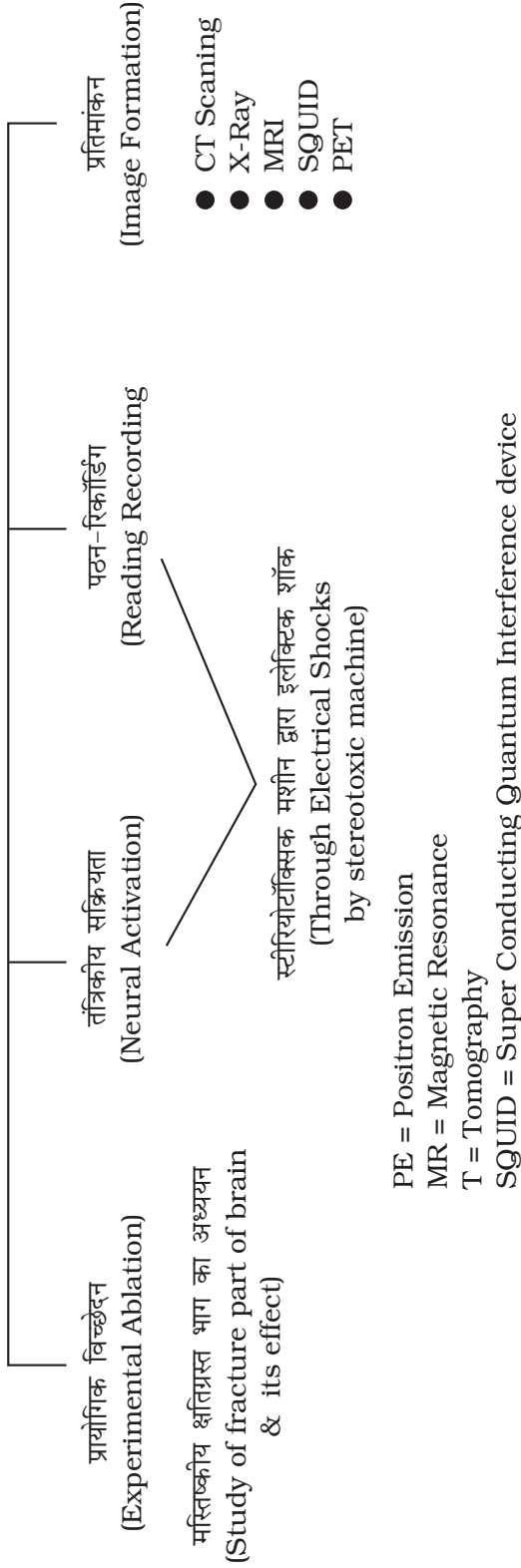
मध्यवर्ती स्तर (Mid Layer) = एराक्नॉयड मैटर (Arachnoid Matter)



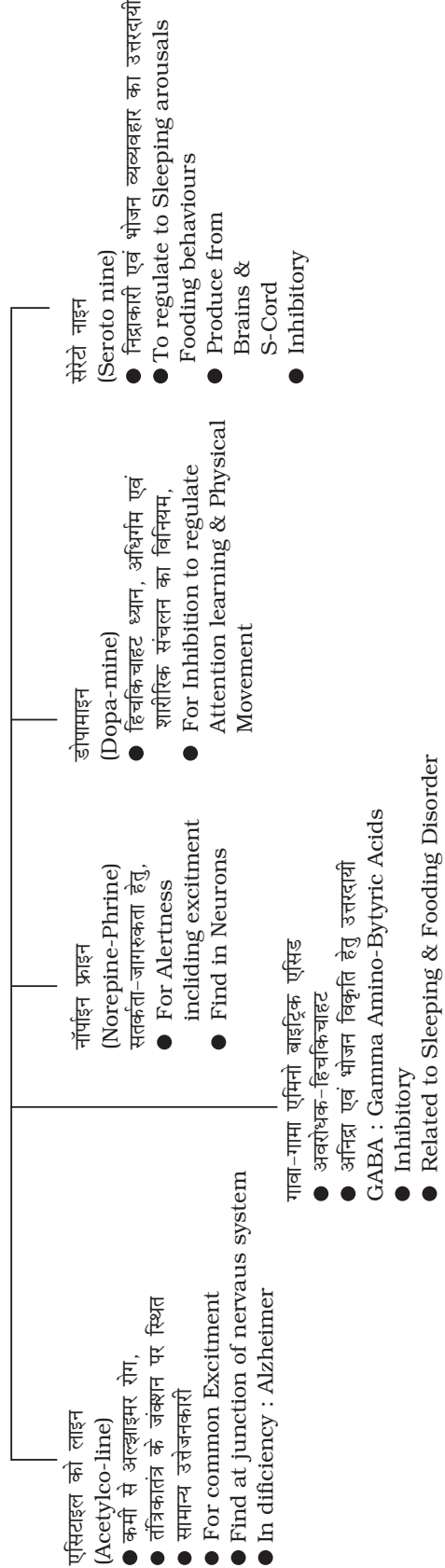
बृहद् मस्तिष्क (Cerebrum)/ मस्तिष्कीय गोलार्द्ध (Cerebrum/Hemisphere)

बायां (Left) लेफ्ट हैंड वाले व्यक्ति में खासकर मौखिक भाषिक क्षेत्र चार कोष्ठक या भाग/पालि (Dominant in Right hander Man Verbal/language Zone) (4 Parts/Lobes)	दायां (Right) (Dominant in Left hander man 4 parts/Lobes)
Same as	Same as
(1) — अग्रपालि, बोलने हेतु पेशीय गति, चिंतन प्रक्रिया, इसे ब्रोका एरिया भी कहते हैं। (Frontal, For Muscular Movement & Thinking Process to speak The area is called Broca-Area)	— Frontal lobe
(2) — अस्थिज्वाइट एवं त्वचीय संवेदना एवं भाषा का समझना (वार्निक एरिया) (Parietal, For sensation through (foulty Estimation of weight = Baragness) skins & join To Understand the speech (Wernic Area)	— Perietal lobe
(3) — शंख पालि (Temporal) सुनने हेतु (For Audition)	— Temporal lobe
(4) — पृष्ठ पालि, देखने के लिए (Occipital, For Visualisation)	— Occipital lobe

मस्तिष्कीय कार्यप्रणाली जानने की विधि (Method to Know Brain Functioning)



न्यूरो ट्रांसमीटर्स के प्रकार (Types of Neurotransmitter)

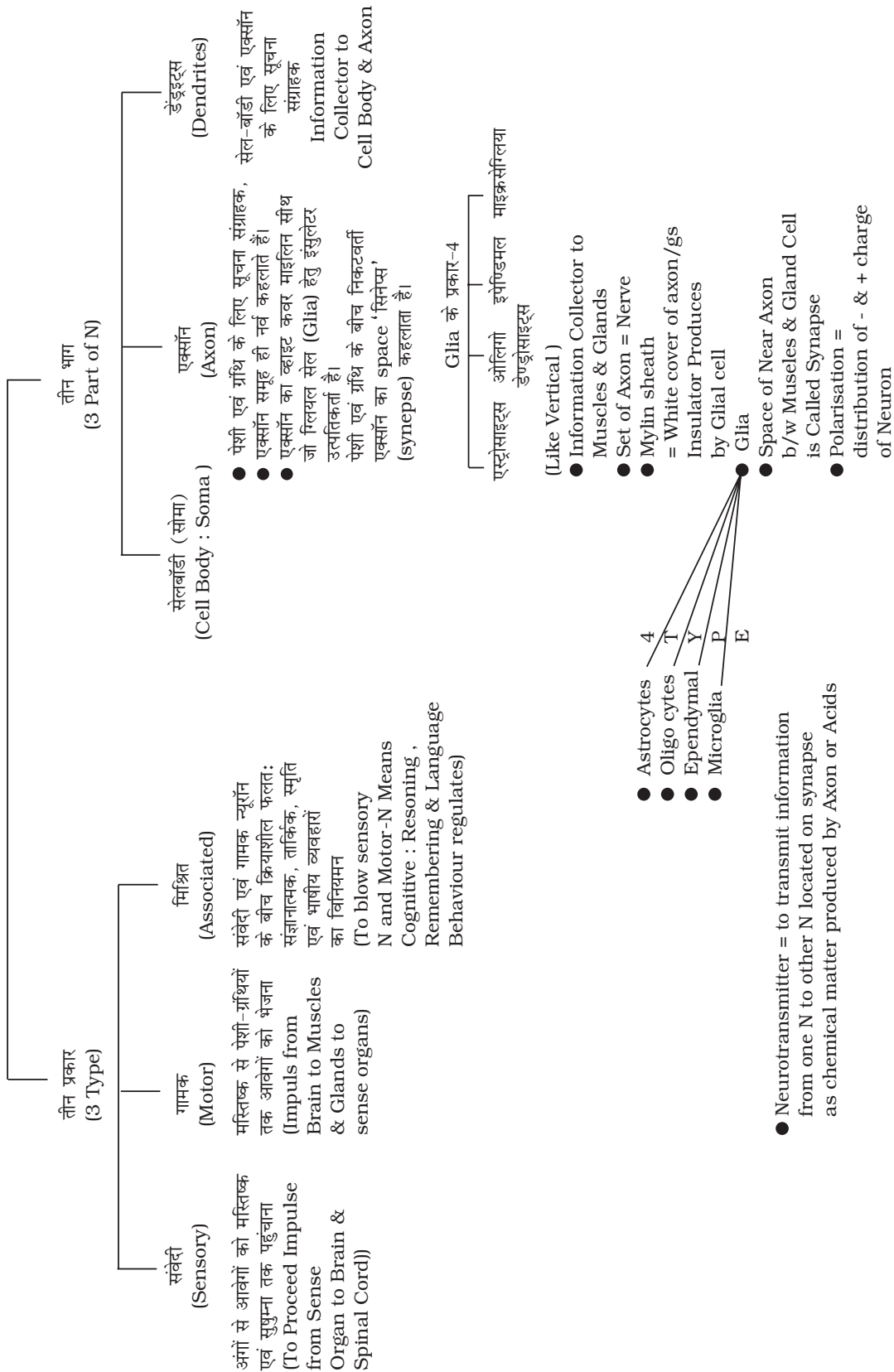


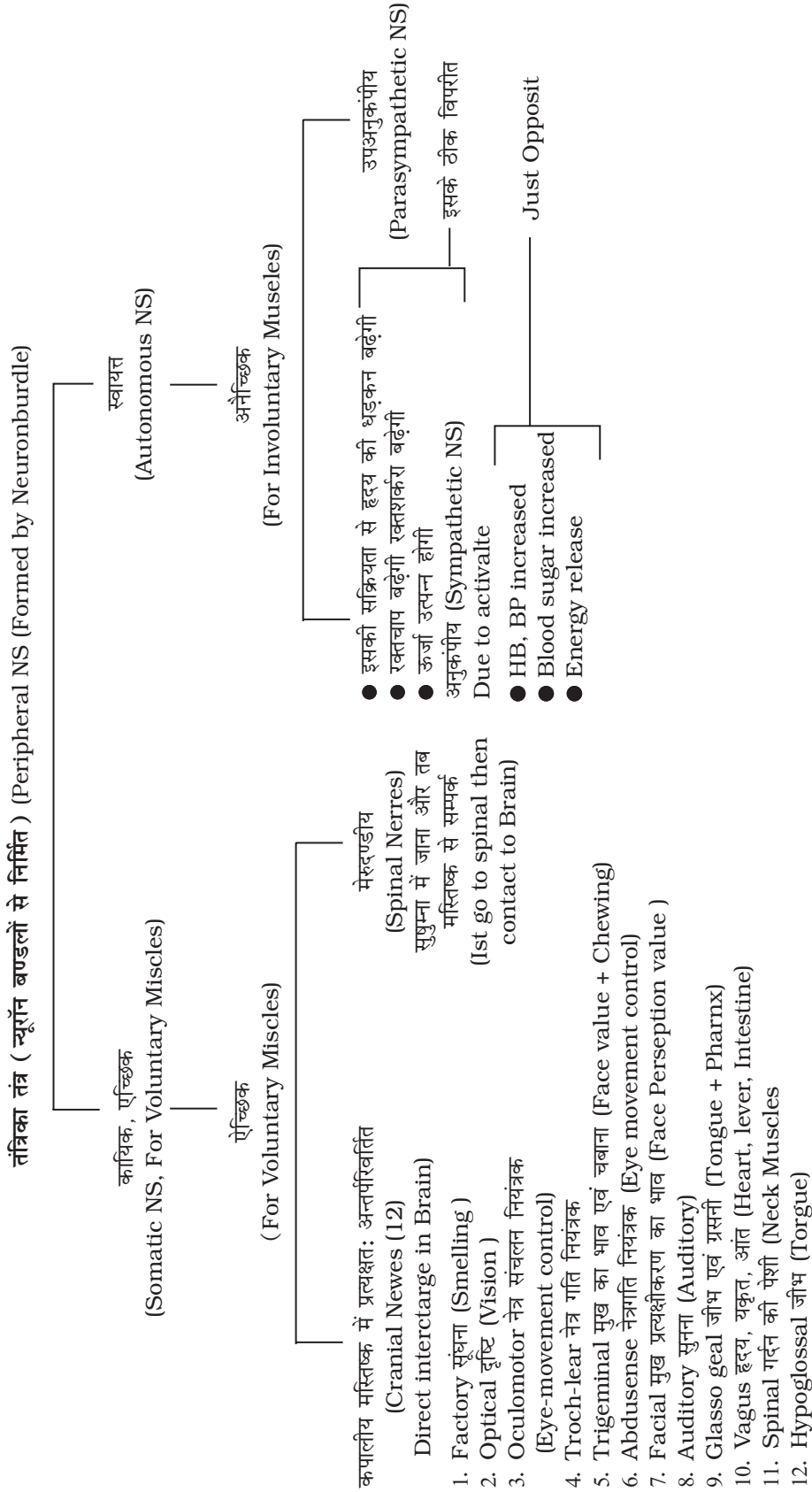
न्यूरोट्रांसमीटर्स-ये सिनेप्स स्थिति होते हैं जो एक न्यूरोन से अन्य न्यूरोन तक सूचना प्रसारित करते। ये एक्सॉन द्वारा उत्पन्न रसायनिक पदार्थ (एसिड) होते हैं।

न्यूरॉन = केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की सबसे छोटी इकाई : सेल मेम्ब्रेन निर्मित
(Neuron = Smallest Unit of NS formed by Cell Membrane)

कार्य : सूचना संग्रहण, प्रसंसादन एवं वितरण

(Function : Information Collection-Processing -Distribution)





बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- तंत्रिका तंत्र (Nervous System) का सबसे मूल एवं छोटी इकाई है—
 - कोश शरीर (Cell Body)
 - शाखिका (Dendrite)
 - न्यूरोन (Neuron)
 - एक्सॉन (Axon)
- न्यूरोन के उस भाग को जिसके द्वारा सूचनाएँ दूसरे न्यूरोन से प्राप्त की जाती हैं, कहा जाता है—
 - शाखिका (Dendrite)
 - एक्सॉन (Axon)
 - कोश शरीर (Cell Body)
 - ग्लिया कोश (Glia Cell)
- कोश शरीर (Cell Body) का दूसरा नाम क्या है?
 - एक्सॉन (Axon)
 - एण्डब्रश (Endbrush)
 - सोमा (Soma)
 - माइलिन शीथ (Myelin Sheath)
- एक्सॉन (Axon) पर जो माइलिन शीथ (Myelin Sheath) होता है, उसका उद्देश्य—
 - तंत्रिका आवेग (Nerve Impulse) के गति को धीमा करना होता है।
 - तंत्रिका आवेग की गति को बढ़ाना होता है।
 - न्यूरोट्रांसमीटर (Neurotransmitter) के निकलने में मदद करना होता है।
 - इनमें से कुछ भी नहीं होता है।
- न्यूरोन के किस भाग द्वारा तंत्रिका आवेग (Nerve Impulse) को ग्रहण किया जाता है?
 - शाखिका (Dendrite)
 - एक्सॉन (Axon)
 - कोश शरीर (Cell Body)
 - बूटोन (Button)
- संधि स्थल (Synapse) किसे कहा जाता है?
 - कोश शरीर (Cell Body) तथा शाखिका के मिलन स्थल को
 - शाखिका (Dendrite) तथा एक्सॉन (Axon) के मिलन स्थान को
 - एक्सॉन तथा कोश शरीर के मिलन स्थान को
 - शाखिका तथा कोश शरीर के स्थान को
- सेतु (Pons) एक हिस्सा है—
 - पश्चिमस्तिष्क (Hindbrain) का
 - मध्यमस्तिष्क (Midbrain) का
 - अग्रमस्तिष्क (Forebrain) का
 - इनमें से किसी का भी नहीं
- पेशीय समन्वय (Motor Coordination) के लिए मस्तिष्क का कौन-सा हिस्सा उत्तरदायी (Responsible) है?
 - लघुमस्तिष्क (Cerebellum)
 - सुषुम्ना (Spinalcord)
 - कॉर्टेक्स (Cortex)
 - थैलमस (Thalamus)
- मस्तिष्क की कौन-सी संरचना व्यक्ति अथवा जीव के जीवन विकास (Survival of the Individual) के अन्तर्नोद (Drive) में भूमिका अदा करता है?
 - हाइपोथैलमस (Hypothalamus)
 - थैलेमस (thalamus)
 - कॉर्टेक्स (Cortex)
 - लघुमस्तिष्क (Cerebellum)
- हाइपोथैलेमस का संबंध निम्नांकित में से किस ग्रंथि से सबसे अधिक होता है?
 - पीयूष ग्रंथि (Pituitary Gland)
 - कंठग्रंथि (Thyroid Gland)
 - एड्रीनल ग्रंथि (Adrenal Gland)
 - गोनाडल (Gonadal)
- ब्रोका क्षेत्र (Broca area) की विशिष्टीकरण (Specialization) क्या है?
 - भाषा
 - स्मृति
 - चिन्तन
 - कल्पना
- भाषा को समझना, भाषा संकेतों का उपयोग तथा संचार (communication) के लिए भाषा के उपयोग का दायित्व किस पर होता है?

- (1) बायाँ गोलार्द्ध (Left Hemisphere)
 (2) दायाँ गोलार्द्ध (Right Hemisphere)
 (3) कॉरपस कैलोसम (Corpus Callosum)
 (4) मेडुला (Medulla)
13. दृष्टि संवेदन (Visual Sensation) के कार्य का संचालन एवं नियंत्रण कहाँ से होता है?
 (1) अग्रपालि (Frontal Lobe)
 (2) मध्यपालि (Parietal Lobe)
 (3) शंखपालि (Temporal Lobe)
 (4) पृष्ठपालि (Occipital Lobe)
14. श्रवण संवेदन (Auditory Sensation) के कार्य का संचालन एवं नियंत्रण कहाँ से होता है?
 (1) मध्यपालि (Parietal Lobe)
 (2) अग्रपालि (Frontal Lobe)
 (3) शंखपालि (Temporal Lobe)
 (4) पृष्ठपालि (Occipital Lobe)
15. संधि स्थल पर तंत्रिका आवेग के संचरण (Transmission) में किसकी भूमिका महत्वपूर्ण है?
 (1) एक्सॉन की
 (2) न्यूरोट्रांसमीटर (Neurotransmitter) की
 (3) बूटोन्स (Buttons) की
 (4) हार्मोन्स (Hormones) की
16. मनोभाषा विज्ञान के प्रमुख घटक है—
 (1) स्वनिम-रूपिम (2) शब्दार्थ विज्ञान
 (3) वाक्य विज्ञान (4) उपरोक्त सभी
17. किस वैज्ञानिक ने मनोवैज्ञानिक भाषा को जन्मजात विषय बताया है?
 (1) नोम चोमस्की (2) लेव वायगोत्स्की
 (3) जे.बी. वाटसन (4) बी.एफ. स्कीनर
18. न्यूरोन के प्रकारों के संदर्भ में कौन-सा विकल्प सत्य है?
 (1) संवेदी (2) गामक
 (3) संवेदी-गामक (4) सोमा
19. हृदय धड़कन और रक्तचाप किस तंत्रिका तंत्र के परिणामस्वरूप घटित होता है?
 (1) सोमैटिक (2) स्वायत्त
 (3) स्वायत्त अनैच्छिक (4) सोमैटिक ऐच्छिक

20. मानव मस्तिष्क का अनुमानित भार है—
 (1) 1000 ग्राम (2) 1200 ग्राम
 (3) 1400 ग्राम (4) 1600 ग्राम
21. कॉटेक्स मानव मस्तिष्क के किस भाग में स्थित है?
 (1) सेरिब्रम (2) सेरिबेलम
 (3) मेड्युला (4) उपरोक्त में से कोई नहीं
22. तंत्रिका तंत्र के प्रमुख अंग या भाग निम्नलिखित में से कौन-सा है?
 (1) मस्तिष्क (2) सुषुम्ना
 (3) नर्वस (4) उपरोक्त सभी
23. ब्रेन स्टेम का पर्याय निम्नलिखित में से कौन है?
 (1) सेरिब्रम (2) सेरिबेलम
 (3) मेड्युला (4) नर्वस सिस्टम
24. स्पाइनल कॉर्ड की संख्या तंत्रिका तंत्र में होती है—
 (1) 30 (2) 31
 (3) 32 (4) 34
25. समुचे मानव शरीर में संवेदनाओं को पहुँचाने का काम करता है—
 (1) हाइपोथैलोमस (2) मस्तिष्क
 (3) स्पाइनल कॉर्ड (4) मेड्युला

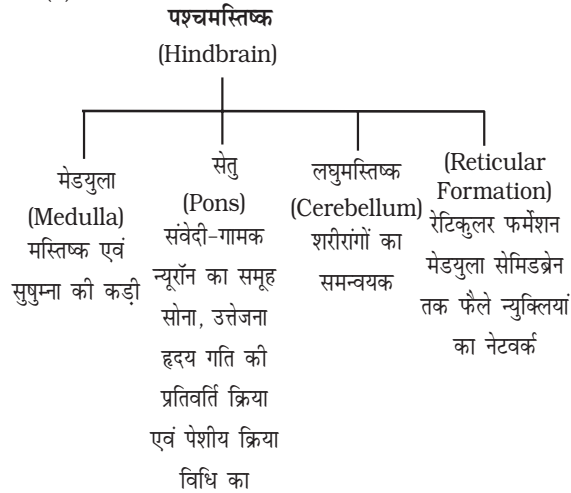
संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(3)	2.	(2)	3.	(3)	4.	(2)	5.	(1)
6.	(2)	7.	(1)	8.	(1)	9.	(1)	10.	(1)
11.	(1)	12.	(2)	13.	(4)	14.	(3)	15.	(2)
16.	(4)	17.	(1)	18.	(3)	19.	(3)	20.	(3)
21.	(1)	22.	(4)	23.	(3)	24.	(2)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

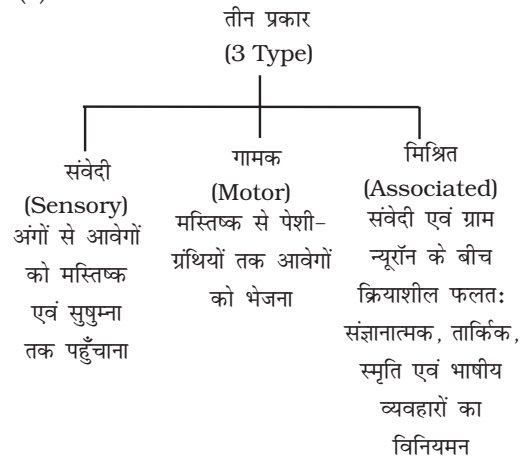
1. (3) तांत्रिकातंत्र की मूल इकाई 'न्यूरोन' है।
 तांत्रिका तंत्र में तीन प्रकार के न्यूरोन होते हैं—
 संवेदी नर्व्स (Sensory Nerves)
 गामक नर्व्स (Motor Nerves)
 इन्टरमीडियट नर्व्स (Intermediate Nerves)
2. (2) एक्सॉन (Axon) अधिकतर न्यूरोन में केवल एक ही एक्सॉन होता है जो कि प्रसारक (संवेदों अथवा संदेशों को भेजना) कहलाता है। एक्सॉन संदेशों अथवा उद्दीपनों को सेल बॉडी से हमारे शरीर के दूसरे हिस्सों में पहुँचाता है। एक्सॉन अपने छोर के पास नाड़ी शाखाओं में प्रसारित हो जाता है जिसे एक्सॉनटर्मिनल अथवा टर्मिनल फायबर कहते हैं।

3. (3) सोमा व सेलबॉडी (Cell body)–सेलबॉडी के घटक डेन्ड्राइट्स तथा एक्सॉन कहलाते हैं। संवेदनाओं के संचरण में सेल बॉडी की अहम भूमिका होती है।
4. (2) माइलिन शीथ (Myelin Sheath) से सम्बद्ध एक्सॉन का प्रमुख कार्य तंत्रिका आवेग (Nerve Impuls) की गति बढ़ाना है।
5. (1) डेन्ड्राइट्स (Dendrites) : ये न्यूरोन्स प्राप्तकर्ता हैं। संवेदी उद्दीपनों से प्राप्त संदेश अथवा इम्पल्स न्यूरोन के माध्यम से नाड़ियों में प्रवेश करते हैं तथा डेन्ड्राइट्स के माध्यम से न्यूरोन इन संदेशों को सेलबॉडी में आगे की ओर भेजते हैं।
6. (2) एक न्यूरोन की शाखिका (डेन्ड्राइट्स) और दूसरे-न्यूरोन की शाखिका के बीच के स्थल (कड़ी) को सिनेप्स (Synapse : संधिस्थल) कहते हैं।
7. (1)



8. (1) सेरिब्रम (Cerebellum)
वह मस्तिष्क का दूसरा सबसे बड़ा भाग है। यह मस्तिष्क को कई भागों से जोड़ते हुए गतियों के समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह हमारी माँसपेशियों पर नियंत्रण रखने में मदद करता है तथा संतुलन एवं समतुल्यता बनाए रखता है।
9. (1) हाइपोथैलेमस (hypothalamus) का कार्य :
हाइपोथैलेमस द्वारा प्रमुख जैविक अभिप्रेरक आदि का नियंत्रण होता है।
हाइपोथैलेमस द्वारा अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियों का भी नियंत्रण होता है।
हाइपोथैलेमस प्राणी के संवेग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
10. (1) हाइपोथैलेमस पीयूष ग्रंथि से संबंधित है। यह सभी ग्रंथियों में सबसे मुख्य ग्रंथि है। यह शरीर में नियंत्रण एवं समन्वय का मुख्य कार्य करती है। सभी अंतःस्त्रावी ग्रंथियाँ विभिन्न कार्यों का नियंत्रण एवं समन्वय करती हैं परन्तु पीयूष ग्रंथि इन ग्रंथियों का भी नियंत्रण एवं समन्वय करती है।

11. (1) मस्तिष्कीय ब्रोका एरिया भाषायी उद्विकास के लिए उत्तरदायी है।
अग्रपालि में बोलने हेतु पेशीय गति, चिंतन क्षेत्र को ब्रोका एरिया भी कहते हैं। (In Frontal Lo be : Muscular Movement & thinking Process to speak The area is called Broca's area)। स्वरलोमः मस्तिष्क में वाक्क्षेत्रों की क्षति से संवाद करने में कठिनाई होती है। मस्तिष्क में ऐसी क्षति होने से बोलने में अस्थिरता और कठिनाई आती है। इसे ब्रोका (Broca's area) का स्वरलोप अध्ययन कहा जाता है।
12. (2) प्रमस्तिष्क भी दो गोलार्द्धों (Cerebral Hemisphere) में बंटा होता है। बायाँ (Left Hemisphere) और दाएँ (Right Hemisphere) ये गोलार्द्ध आपस में बहुत सारे पुलों के माध्यम से जुड़े होते हैं। ऐसा माना जाता है कि भाषा मस्तिष्क के दायीं गोलार्द्ध में स्थित होती है।
13. (4) ऑसिपीटल लोब
(पृष्ठ पालि, देखने के लिए)
14. (3) शंख पालि (Temporal)
सुनने (for Audition) हेतु
15. (2) न्यूरोट्रांस्मीटर्स—ये सिनेप्स पर स्थिति होते हैं जो एक न्यूरोन से अन्य न्यूरोन तक सूचना प्रसारित करते हैं। ये एक्सॉन द्वारा उत्पन्न रासायनिक पदार्थ (एसिड) होते हैं।
16. (4) मनोभाषा विज्ञान में कई मुख्य अवधारणाएँ हैं—स्वनिम, रूपिम, शब्दार्थ विज्ञान और वाक्य विन्यास।
तंत्रिका भाषा विज्ञान अनुसंधान मस्तिष्क के क्षेत्र भी बताता है जो कि भाषा की विशेष बातों जैसे अव्यवस्थित क्रियाओं और अंगों के नाम से जुड़ी हैं।
17. (1) चॉमस्की के अनुसार भाषा कौशल जन्मजात होते हैं और भाषा प्रमापीय है।
रूपांतरणीय व्याकरण के चॉमस्की नियम ने यह प्रस्तावित किया है कि गहन संरचना रूपांतरणीय नियमों द्वारा सतही संरचना में बदल जाती है।
18. (3)



19. (3)

स्वायत्त
(Autonomous NS)
|
अनैच्छिक
(For Involuntary Muscles)

- इसकी सक्रियता से हृदय की धड़कन बढ़ेगी
 - रक्तचाप बढ़ेगी रक्तशर्करा बढ़ेगी
 - ऊर्जा उत्पन्न होगी
- अनुकंपीय (Sympathetic NS)
- Due to activate
- HB, BP increased
 - Blood sugar increased
 - Energy release

20. (3) मस्तिष्क तंत्रिका तंत्र का एक जीवंत (महत्वपूर्ण) भाग है। यह हमारे शरीर का बहुत नाजुक तथा जटिल अंग है जोकि अस्थि कपाल द्वारा सुरक्षित रहता है। इसका अनुमानित भार 1420 ग्राम है।
21. (1) सेरिब्रम (Cerebrum)।
सेरिब्रम मस्तिष्क का प्रमुख भाग है। सेरिब्रम का बाहरी भाग अथवा कॉर्टेक्स बुद्धिमत्ता तथा मेधा का हिस्सा होता है। इसे ग्रे-मैटर (भूरा पदार्थ भी कहते हैं) यह हमारा सचेतन मस्तिष्क है।

22. (4) तंत्रिका तंत्र के मुख्य अंग या भाग (Main Organs or Parts of Nervous System) मुख्यतः निम्नलिखित भाग अथवा अंग मानव तंत्रिका तंत्र के पर्याय हैं :

- मस्तिष्क (Brain)
- सुषुम्ना नाड़ी (Spinal Cord)
- तंत्रिकाएँ व नर्वस (Nerves)

23. (3) मेड्युला ऑब्लॉगाटा अथवा ब्रेनस्टेम (The Medulla Oblongata or Brain Stem) : मेड्युला ऑब्लॉगाटा की संरचना हमारे दिमाग के मध्य भाग की तंत्रिकाओं से मिलजुल कर बनी है तथा यह स्पाइनल कॉर्ड तथा दिमाग को जोड़ती है। ब्रेनस्टेम के माध्यम से सभी संवेदी तथा गामक नाड़ियाँ गुजरती हैं।

24. (2) सुषुम्ना तंत्रिका (Spinal Nerve) कायिक तंत्रिका-तंत्र में पाये जाने वाले दूसरे प्रकार की प्रमुख तंत्रिका है। सुषुम्ना तंत्रिका के 31 जोड़े थोड़ी-थोड़ी दूरी पर सुषुम्ना (Spinal Cord) से निकलते हैं।

25. (3) स्पाइनल कॉर्ड से ही नाड़ियों की शाखाएँ हमारे पूरे शरीर में फैलती हैं। इन नाड़ियों की शाखा कई गुना छोटी से छोटी नाड़ियों के द्वारा हमारे शरीर के प्रत्येक कोने तक संवेदनाएँ पहुँचाती हैं। शरीर के सभी भागों से आने वाले संदेश स्पाइनल कॉर्ड में प्रवेश कर नाड़ियों के द्वारा घूमते हुए मस्तिष्क में पहुँचती है।

□□□

मानसिक विकृतियाँ एवं मनोचिकित्सा (Mental Disorders and Psychotherapies)

असामान्य मनोविज्ञान में मानसिक विकृतियों (Mental disorders) या असामान्य व्यवहार (Abnormal behaviour) के बारे में अध्ययन किया जाता है। असामान्य व्यवहार व्यक्ति के भीतर मनोवैज्ञानिक दुष्क्रिया (Psychological Dysfunction) की स्थिति होती है जो कार्यों में बाधा या हानि से साहचर्यित होता है तथा एक ऐसी अनुक्रिया होती जो प्रतिनिधि या सांस्कृतिक रूप से प्रत्याशित नहीं होता है। असामान्य व्यवहार को विभिन्न कसौटियों (Criteria) के आधार पर समझने की कोशिश की गयी है। इन कसौटियों में विभिन्न मानदण्ड शामिल हैं।

- सांख्यिकीय अबारंबारता (Statistical Infrequency) की कसौटी,
- मानक अतिक्रमण (Norms Violation) की कसौटी,
- व्यक्तिगत व्यथा (Personal Distress) की कसौटी
- अयोग्यता या दुष्क्रिया की कसौटी (Criteria of disability or dysfunction) तथा
- अप्रत्याशा (Unexpectedness) की कसौटी।
- सांख्यिकीय अबारंबारता की कसौटी के अनुसार वे सभी व्यवहार असामान्य व्यवहार कहलाते हैं जो सांख्यिकीय औसत (Statistical Average) से विचलित होते हैं, उन्हें असामान्य कहा जाता है।

जब व्यक्ति का व्यवहार समाज के मानक (Norms) के अनुकूल होता है, जो उसे सामान्य कहा जाता है परंतु जब उसका व्यवहार उस मानक का अतिक्रमण करता है जो उसे असामान्य कहा जाता है।

● व्यक्तिगत व्यथा की कसौटी के अनुसार अगर व्यक्ति का व्यवहार ऐसा होता है जिससे उसमें अधिक तकलीफ तथा यातना उत्पन्न होता है तो इसे असामान्य व्यवहार कहा जायेगा। जैसे, दुश्चिन्ता विकृति (Anxiety disorders) तथा विषाद (Depression) से ग्रस्त व्यक्तियों को अधिक यातना सहना पड़ता है। अतः उनके इस व्यवहार को इस कसौटी के अनुसार निश्चित रूप से असामान्य व्यवहार कहा जायेगा।

● अयोग्यता (Disability) या दुष्क्रिया (Dysfunction) की कसौटी के अनुसार अगर कोई व्यक्ति अपने लक्ष्य की प्राप्ति में अयोग्यता के कारण असमर्थ रहता है तो उसके उस व्यवहार को असामान्य व्यवहार कहा जायेगा। जैसे, यदि कोई व्यक्ति हवाई जहाज से कहीं जाने में इतना डर जाता है कि वह अपनी पदोन्नति को भी त्याग देता है तो इस तरह की अयोग्यता को असामान्य व्यवहार कहा जाता है।

● अप्रत्याशा की कसौटी के अनुसार असामान्य व्यवहार पर्यावरणी तनाव उत्पन्न करने वाले उद्दीपन के प्रति एक तरह का अप्रत्याशित अनुक्रिया ही होता है। जैसे, जब व्यक्ति अपनी वित्तीय मजबूती के बावजूद भी अपनी आर्थिक स्थिति के बारे में लगातार चिन्तित रहता है और जब यह चिन्ता सामान्य अनुपात से अधिक हो जाता है, तो इससे व्यक्ति में दुश्चिन्ता विकृति (Anxiety disorder) उत्पन्न हो जाता है।

● कोमर (Comer, 1995) ने असामान्य व्यवहार की व्याख्या चार डी (Four D's) के रूप में किया है—

- विचलन (Deviance)
- तकलीफ (Distress)
- दुष्क्रिया (Dysfunction) तथा
- खतरा (Danger)। इन चारों की संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार है—

(i) विचलन (Deviance)—इसके अन्तर्गत उन व्यवहारों को असामान्य व्यवहार की श्रेणी में रखा जाता है जो सामाजिक मानक (Social norms) से भिन्न एवं असाधारण होते हैं।

(ii) तकलीफ (Distress)—असामान्य व्यवहार वैसे व्यवहार को कहा जाता है जो स्वयं व्यक्ति के लिए दुःखदायी या तकलीफ देह होता है।

(iii) दुष्क्रिया (Dysfunction)—इसके अनुसार असामान्य व्यवहार वैसे व्यवहार को कहा जाता है जो व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन के व्यवहार या क्रिया को करने में बाधन सिद्ध होता है। यह व्यक्ति को इतना अधिक अशांत कर देता है कि वह साधारण सामाजिक परिस्थित या कार्य में भी अपने आपको ठीक ढंग से समायोजित नहीं कर पाता है।

(iv) खतरा (Danger)—असामान्य व्यवहार सामान्यतः स्वयं व्यक्ति या रोगी के लिए तो खतरनाक होता ही है, साथ-ही-साथ वह अन्य व्यक्तियों के लिए भी खतरनाक साबित होता है ऐसे व्यक्तियों में चूँकि असावधानी, घटिया निर्णय (Misinterpretation) आदि अधिक होता है, अतः उनका व्यवहार अपना एवं दूसरों की कल्पना के ख्याल से कहीं अधिक चिन्ताजनक होता है।

असामान्य मनोविज्ञान एवं नैदानिक मनोविज्ञान मनोविज्ञान की दो ऐसी शाखाएँ हैं जिनमें मानसिक विकृतियों के अध्ययन पर विशेष रूप से बल डाला जाता है। असामान्य मनोविज्ञान में मूलतः मानसिक विकृतियों की पहचान, वर्गीकरण (Classification) एवं कारणों के अध्ययन पर काफी बल डाला जाता है जबकि नैदानिक मनोविज्ञान में इसके अतिरिक्त उनके उपचार (Treatment) पर अधिक बल डाला जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों (Mental health professionals) में नैदानिक मनोवैज्ञानिक (Clinical psychologists) मनोरोग विज्ञानी या मनोचिकित्सक (Psychiatrist), मनोविश्लेषक (Psychoanalyst), मनोचिकित्सक सामाजिक कार्यकर्ता (Psychiatric social worker) तथा मनोचिकित्सक नर्सिंग (Psychiatric nursing) प्रमुख हैं।

नैदानिक मनोवैज्ञानिक जैसे प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक होते हैं जिन्हें नैदानिक मनोविज्ञान में पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त होता है। भारत में निम्हान्स (NIMHANS or National Institute of Mental Health and Neuro Sciences) बैंगलूर तथा सी.आई.पी. (CIP or Central Institute of Psychiatry) कांके, (रांची) दो ऐसे प्रमुख संस्थान हैं जहाँ से नैदानिक मनोविज्ञान में पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ और वैधानिक स्नातक कार्यक्रम हैं जिन्हें पूरा करने पर मनोवैज्ञानिक को नैदानिक उपाधि मिलती है। साई. डी. (Psy. D) अर्थात् डाक्टर ऑफ साइकोलॉजी (Doctor of Psychology) एक ऐसी ही उपाधि है जिसमें बलु नैदानिक शोध पर न होकर नैदानिक परीक्षण पर अधिक होता है।

मनोचिकित्सक (Psychiatrist) एक ऐसा मानसिक स्वास्थ्य विशेषज्ञ (Expert) होता है जिसे एम.डी. (M.D.) या डॉक्टर ऑफ मेडिसीन (Doctor of Medicine) की उपाधि प्राप्त होता है और इन्हें स्नातकोत्तर प्रशिक्षण जिसे 'रेसिडेन्सी' (Residency) कहा जाता है, भी प्राप्त होता है। ऐसे मनोचिकित्सक को मेडिकल उपाधि प्राप्त होती है, अतः उन्हें मानसिक रोगों के उपचार में मनोसक्रिय औषध (Psychoactive drug) का उपयोग करने का अधिकार होता है। मनोचिकित्सक दो प्रकार के होते हैं—न्यूरोमनोचिकित्सक (Neuropsychiatrist) तथा मनोश्चिकित्सक (Psychotherapist) न्यूरोमनोचिकित्सक जैसे विशेषज्ञ होते हैं जो रोगी के उपचार में दैहिक विधियों (Physical Methods) का अधिक प्रयोग करते हैं। मनोचिकित्सक जैसे विशेषज्ञ होते हैं जो रोगियों के उपचार में मनोवैज्ञानिक विधियों (Psychological Methods) का अधिक उपयोग करते हैं।

जहाँ तक मानसिक विकृतियों के वर्गीकरण का प्रश्न है, इस सिलसिले में दो प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वर्गीकरण तंत्र उपलब्ध हैं। 1948 में वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन (WHO) ने इंटरनेशनल क्लासीफिकेशन ऑफ डिजिजेज (International Classification of Diseases-6 or ICD-6) के छठे संस्करण का प्रकाशन किया जिसमें मानसिक रोगों का एक औपचारिक वर्गीकरण का प्रकाशन किया गया।

इसके तुरंत बाद अमेरिकन मनोचिकित्सक संघ (American Psychiatric Association) ने तुलनात्मक रूप से अधिक प्रभावकारी वर्गीकरण तंत्र का प्रकाशन किया जिसे 'डायग्नोस्टिक एण्ड स्टैटिस्टिकल मैनुअल ऑफ मेन्टल डिसऑर्डर' (Diagnostic and Statistical Manual of Mental Disorder or DSM) कहा गया। यह DSM का प्रथम प्रकाशन था जो 1952 में किया गया था तथा इसे DSM-I कहा गया। इसका दूसरा संशोधित प्रारूप 1968

में प्रकाशित किया गया जिसे DSM-II कहा गया। कुछ कमियों को दूर करने के ख्याल से इसका तीसरा संशोधित संस्करण 1980 में प्रकाशित किया गया जिसे DSM-III कहा गया। DSM-III में पहली बार बहुआयामी वर्गीकरण (Multiaxial Classification) तंत्र का प्रादुर्भाव हुआ जिसका अर्थ यह होता है कि किसी व्यक्ति को विभिन्न आयामों यथा शारीरिक स्वास्थ्य, सामाजिक एवं पेशेवर कार्य तथा मानसिक विकृतियों की उपस्थिति आदि के रूप में समझा जा सकता है जो किसी भी एक आयाम के रूप में समझने की अपेक्षा अधिक यथार्थ एवं तर्कसंगत होता है।

उधर ICD का नौवां संस्करण जिसे ICD-9 कहा गया, का भी प्रकाशन 1979 में हुआ। अब ICD का दसवां संस्करण जिसे ICD-10 कहा गया, का प्रकाशन 1992 में हो चुका है। जब 1980 में DSM-III का प्रकाशन हुआ। तो ICD-9 में प्रकाशित मानसिक रोगों का एक नैदानिक परिमार्जन (Clinical Modification or CM) प्रकाशित किया गया जिसे ICD-CM कहा गया।

DSM-III की पुनर्समीक्षा (Revision) की गयी जिसका प्रकाशन 1987 में किया गया और इसे DSM-III-R कहा गया। पुनः कुछ कमियों को दूर करने के ख्याल से DSM-III-R को संशोधित करके एक नया प्रारूप तैयार किया गया जिसे DSM-IV कहा गया तथा जिसका प्रकाशन 1994 में हुआ। DSM-IV का पाठ्य समीक्षा (Text Revision) फिर 2000 में प्रकाशित किया गया जिसमें DSM-IV के किसी भी श्रेणी (Categories) में परिवर्तन नहीं किया गया बल्कि मौजूदा श्रेणियों में नये-नये पाठ्य-सामग्रियों (Text materials) को अधिक सुस्पष्टता के ख्याल से जोड़ दिया गया है। उधर ICD-9 का भी संशोधित संस्करण 1993 में प्रकाशित हुआ जिसे ICD-10 कहा गया।

केन्डेल (Kendell, 1919) के अनुसार DSM-IV तथा ICD-10 में मानसिक रोगों के प्रकाशित वर्गीकरण कई दृष्टिकोणों से लगभग एक समान है। इन दोनों वर्गीकरण तंत्रों के विभिन्न श्रेणियों में यथासंभव संगतता बनाये रखने का भरसक प्रयास भी किया गया है।

DSM-IV की लोकप्रियता तुलनात्मक रूप से पूरे विश्व में सर्वाधिक है। इसमें कुल पांच आयाम हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है—

● आयाम-I : नैदानिक संलक्षण (Clinical Syndrome)

—इस आयाम में व्यक्तित्व विकृतियाँ (Personality disorders) तथा मानसिक मंदता (Mental retardation) को छोड़कर 16 मानसिक रोगों को रखा गया है। इन 16 में दुश्चिन्ता विकृति (Anxiety disorder), मनोविच्छेदी विकृति (Dissociative disorder), कायप्रारूप विकृति (Somatoform disorder), मनोविदालिता (Schizophrenia), मनस्थिति या मनोदशा विकृति (Mood disorder), लैंगिक एवं लिंग पहचान विधि (Sexual and gender identity disorder), नींद विकृति (Sleep disorder), समायोजन विकृतियाँ (Adjustment disorder), मादक द्रव्य-संबद्ध विकृति (Substance related disorder) प्रमुख हैं।

● **आयाम-II** : व्यक्तित्व विकृतियाँ एवं मानसिक मंदता (Personality disorders and Mental retardation)–इस श्रेणी में उन विकृतियों को रखा गया है जो बाल्यावस्था या किशोरावस्था में सामान्यतः प्रारंभ होकर होते हैं और वयस्कावस्था में स्थायी रूप ले लेते हैं। इसमें व्यक्तित्व विकृति के 10 प्रकारों एवं मानसिक मंदता (Mental retardation) को रखा गया है।

● **आयाम-III** : सामान्य चिकित्सीय, अवस्था (General Medical Condition)–इस आयाम में उन सभी चिकित्सीय समस्याओं को रखा गया है जो कि मनोवैज्ञानिक रोग उत्पन्न करने में सहायक होते हैं।

● **आयाम-IV** : मनोसामाजिक एवं पर्यावरणीय समस्याएं (Psycho-social and Environmental Problems)–इस आयाम के तहत उन कारकों पर विचार किया जाता है जो गत कुछ वर्षों से व्यक्ति के लिए समस्या का स्रोत रहा है या भविष्य में होने वाली प्रत्याशित समस्याएं जैसे–सेवा-निवृत्ति (Retirement) जिनसे व्यक्ति की वर्तमान समस्याएं बढ़ जाती हैं, पर विचार किया जाता है। अतः यह आयाम वैसे मनोसामाजिक एवं पर्यावरणीय स्ट्रेसर्स (Stressors) जो मानसिक विकृति के निदान एवं उपचार को प्रभावित कर सकते हैं, को अभिलेखित करने का एक चेकलिस्ट है।

● **आयाम V** : कार्यों का सम्पूर्ण मूल्यांकन (Global Assessment of functioning)–इस आयाम के तहत व्यक्ति के समायोजी कार्यों (Adaptive functions) के स्तर का मापन होता है। इस तरह के मूल्यांकन में तीन कारकों पर अधिक बल डाला जाता है–परिवार एवं दोस्तों के साथ सामाजिक संबंध (Social relation), पेशेवर कार्यवाही (Occupational functioning) तथा खाली समय का उपयोग। इस आयाम के तहत इन तीनों क्षेत्रों का मापन एक 100 बिन्दु मापनी पर होता है जिसमें 1 बहुत निम्न तथा 100 बहुत उच्च का संकेत करता है।

स्पष्ट हुआ कि DSM-IV में प्रथम दो आयामों के माध्यम से मानसिक रोगों का वर्गीकरण किया गया है तथा अंतिम तीनों आयामों द्वारा व्यक्ति के बारे में उसके वास्तविक लक्ष्यों से आगे जाकर उसके बारे में एक सार्वभौम या व्यापक तस्वीर प्राप्त करने की कोशिश की जाती है।

असामान्य व्यवहार (Abnormal behaviour) को वर्गीकृत करने के तीन उपागमों (Approaches) पर बल डाला गया है–

- वर्गीकृत उपागम (Categorical Approach)
- आयामी उपागम (Dimensional) तथा
- प्रोटोटाइपल उपागम (Prototypal Approach)।

वर्गीकृत उपागम (Categorical approach) की उत्पत्ति का स्रोत जर्मन मनोचिकित्सक केपलिन (Kreplim) है। इस उपनाम के अनुसार प्रत्येक रोग के कुछ सुस्पष्ट लक्षण होते हैं जो यदि किसी व्यक्ति में जन्य जाता है तो उसे उस रोगी समझा जाता है। इस उपागम का उपयोग मेडिकल विज्ञान में अधिक तथा मनोवैज्ञानिक विकृतियों की जटिलताओं के ख्याल से नैदानिक मनोविज्ञान में कम होता है।

आयामी उपागम (Dimensional Approach)–इस उपागम के अनुसार व्यक्ति का विशेष व्यवहार विभिन्न परिभाष्य विमाओं जैसे मनोदशा (Mood), सांवेगिक स्थिरता (Emotional Stability), आक्रमकता आदि पर व्यवहार के विभिन्न तीव्रताओं की मात्राओं का परिणाम होता है। अतः इसमें एक मापनी (Scale) पर व्यक्ति के व्यवहारों का निर्धारण कर उसे वर्गीकृत किया जाता है। जैसे, सांवेगिक स्थिरता के विमीय शीलगुण पर किसी व्यक्ति या रोगी के 1 से 10 के मापनी पर अध्ययन किया जा सकता है–गंभीर रूप से चिन्तित के लिए 10

● साधारण ढंग से विषादित के लिए 5 तथा

● हल्के ढंग से उत्साहित रहने के लिए 1 का उपयोग किया जाता है। DSM-III-R का IV तथा DSM-IV का V आयाम विमीय मापनी (Dimensional scales) के उत्तम उदाहरण हैं।

फ्रायड द्वारा प्रतिपादित असामान्य व्यवहार के मनोवैश्लेषिक विचारधारा के अनुसार मन (Psychic) के दो प्रमुख मॉडल हैं–प्रारूपीय या आकारात्मक पहलू (Topographical aspect) तथा गत्यात्मक या संरचनात्मक पहलू (Dynamic or structural aspect)।

आकारात्मक पहलू से तात्पर्य वैसे पहलू से होता है जहां संघर्षमय परिस्थिति की गत्यात्मकता उत्पन्न होती है। इसके अनुसार मन को तीन स्तरों (Levels) में बांटा गया है–चेतन (Conscious), अर्द्धचेतन (Subconscious) तथा अचेतन (Unconscious)।

मानसिक विकृतियों की व्याख्या के ख्याल से अचेतन की भूमिका सर्वाधिक होती है क्योंकि इसी पहलू में मानसिक द्वन्द्व तथा लैंगिक एवं अनैतिक इच्छाएं दबी होती हैं जिससे बाद में चलकर मानसिक रोग उत्पन्न होता है। अचेतन में दमित इच्छाएं सामान्यतः परोक्ष रूप से व्यक्ति के सामने उपस्थित होती हैं। स्वप्न (Dream), दैनिक जीवन में भूलें (Errors of everyday life), सम्मोहन (Hypnosis) स्वतंत्र साहचर्य (Free association) आदि से अचेतन के अस्तित्व के कुछ प्रमाण मिलते हैं। इन तीनों में आकार (Size) के ख्याल से सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण अचेतन ही होता है।

मन के गत्यात्मक या संरचनात्मक पहलू का जहां तक सवाल है इससे तात्पर्य उन प्रतिनिधियों या साधनों (Means) से होता है जिसके द्वारा मूल प्रवृत्तियों (Instincts) से उत्पन्न मानसिक संघर्षों का समाधान होता है। इदं (id), अहं (ego) तथा पराहं (Super ego) इस पहलू के प्रमुख एजेन्ट हैं।

प्राथमिक प्रक्रिया (Primary Process) : इसका तात्पर्य मनोवैश्लेषिक सिद्धान्त में उन सारे मानसिक कार्यों से होता है जो इदम् (Id) में सक्रिय (Operative) होते हैं। प्राथमिक प्रक्रिया को अचेतन (Unconscious), अयुक्तिसंगत (Irrational), स्थान एवं समय से अनभिज्ञ (Ignorant) समझा जाता है तथा यह सुख-दर्द नियम (unconscious) द्वारा निर्धारित होता है। गौण प्रक्रिया (Secondary process) भी एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है जो प्राथमिक प्रक्रिया के विपरीत होती है क्योंकि यह चेतन, तार्किक तथा युक्तिसंगत होता है। गौण प्रक्रिया बहुत ही घनिष्ठ रूप से अहम् (ego) तथा वास्तविक नियम (reality principle) से संबंधित होता है।

प्राथमिक लाभ (Primary gain) : यह मनोविश्लेषिक सिद्धान्त (Psychanalytic theory) में व्यवहार रत एक प्रमुख पद है जिससे तात्पर्य चिन्ता जो Neurosis के आरंभिक विकास से होती है, से छुटकारा पाने से होता है। साधारण अर्थ में प्राथमिक लाभ से तात्पर्य किसी विकृति के विकास से प्राप्त होने वाले आरंभिक लाभ (Initial gain) से होता है। सामान्यतः गौण लाभ (Secondary gain) से तात्पर्य बीमार रहने से प्राप्त होने वाले सतत लाभ से होता है तथा अधिक विशिष्ट अर्थों में इससे तात्पर्य तंत्रिकातापिता से व्युत्पन्न होने वाले लाभ जैसे द्वन्द्व (Conflict) से दूर होना तथा चिन्ता का कम होना आदि से होता है।

कायप्रावरूप विकृति (Somatoform disorder) : यह एक ऐसी विकृति श्रेणी है जिसमें व्यक्ति उन दैहिक लक्षणों की शिकायत करता है जिनसे दैहिक समस्याओं की उपस्थिति का अंदाज होता है परन्तु वास्तव में इसका कोई आंगिक या कायिक (Somatic) आधार नहीं होता है। इस विकृति के पांच प्रकार बतलाए गए हैं—

- (i) शरीर दुष्क्रिया आकृति विकृति (Body dysmorphic disorder)
- (ii) रोगभ्रम (Hypochondriasis)
- (iii) कायिक विकृति (Somatization disorder)
- (iv) कायप्रावरूप दर्द विकृति (Somatoform Pain disorder)

तथा

(v) रूपान्तर विकृति (Conversion disorder)। शरीर दुष्क्रिया आकृति विकृति में रोगी को अपने चेहरे में कुछ कल्पित दोष (Imagined defect) उत्पन्न हो जाने की आशंका उत्पन्न हो जाती है। जैसे, संभव है कि रोगी को यह विश्वास हो जाय कि उसका नाक का आकार दिनों-दिन बड़ा होता जा रहा है। इस तरह के कल्पित दोष से वह इतना अधिक चिन्तित हो जाता है कि उसके दिन प्रतिदिन के सामाजिक जिन्दगी में उसे काफी परेशानी आ जाती है।

रोगभ्रम में अपने स्वास्थ्य के बारे में व्यक्ति जरूरत से ज्यादा सोचता है तथा उसके बारे में चिन्ता करता है। उसके मन में अक्सर यह बात बनी रहती है कि उसे कोई-न-कोई शारीरिक व्याधि या बीमारी हो गयी है और उसकी यह चिन्ता इतनी अधिक हो जाती है कि वह अपने दिन-प्रतिदिन की जिन्दगी के साथ समायोजन करने में असमर्थ रहता है। DSM-IV की कसौटी के अनुसार इस तरह की चिन्ता व्यक्ति में कम-से-कम छह महीना तक बने रहने पर ही उसे रोगभ्रम (Hypochondriasis) की श्रेणी में रखा जा सकता है।

कायिकी विकृति (Somatization disorder) : एक ऐसी कायप्रावरूप विकृति है जिसमें रोगी को बिना किसी तरह के आंगिक दोष के ही नाना प्रकार के कायिक शिकायतें (Somatic Complaint) होती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि इस रोग में रोगी को बहुकायिक शिकायतें होती हैं जबकि दैहिक रूप से वह सही रहता है। इस रोग को ब्रिक्वेट संलक्षण (Briquet's Syndrome) भी कहा जाता है।

कायप्रावरूप दर्द विकृति (Somatoform pain disorder) : इसे साइकैल्जिया (Psychalgia) भी कहा जाता है, में रोगी गंभीर

एवं स्थायी तौर पर दर्द का अनुभव करता है जबकि इस तरह के दर्द का कोई दैहिक आधार (Physical basis) नहीं होता है। इस तरह का दर्द प्रायः हृदय या अन्य महत्वपूर्ण अंगों के क्षेत्र से सम्बद्ध होता है।

रूपान्तर विकृति (Conversion disorder) : इसे रूपान्तर हिस्ट्रिया (Conversion Hysteria) भी कहा जाता है, में व्यक्ति के तनाव, मानसिक द्वन्द्व आदि की अभिव्यक्ति कुछ दैहिक लक्षणों के रूप में होती है और ऐसे दैहिक लक्षणों का कोई दैहिक आधार नहीं होता है। सामान्यतः इन लक्षणों की अभिव्यक्ति उन अंगों के कार्यों में उत्पन्न अवरूद्धता के माध्यम से होती है जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण में होते हैं। रूपान्तर हिस्ट्रिया के दो प्रमुख लक्षण होते हैं.....संवेदी लक्षण (Sensory Symptoms) तथा पेशीय लक्षण (Motor Symptoms)। संवेदी लक्षणों में निम्नांकित प्रमुख हैं—

- (i) एनेस्थेसिया (Anesthesia)—इसमें रोगी अपने शरीर के किसी अंग विशेष से संवेदनशीलता आंशिक रूप से लुप्त होता हुआ अनुभव करता है।
- (ii) हाइपेस्थेसिया (Hypesthesia)—इसमें रोगी के शरीर में अतिसंवेदनशीलता पायी जाती है।
- (iii) एनालजेसिया (Analgesia)—इसमें रोगी के शरीर में दुःख या दर्द के प्रति कोई संवेदनशीलता नहीं पायी जाती है।
- (iv) पैरेस्थेसिया (Paresthesia)—इसमें रोगी अपवादात्मक या असाधारण संवेदना जैसे किसी प्रकार की घंटी सुनने आदि का अनुभव करता है।

इन संवेदी लक्षणों के अतिरिक्त कुछ पेशीय लक्षण Motor symptoms) जैसे हिस्टेरिकल पक्षाघात (Hysterical Paralysis), अस्तासिया-एबासिया (Astasia-abasia) जिसमें रोगी चलने में लड़खड़ाता है, एफोनिया (Aphonia) जिसमें रोगी बहुत धीमी आवाज में जैसे फूसफूसाहट की आवाज में बोलता है; तथा मुटिज्म (Mutism) जिसमें रोगी गूंगा की तरह व्यवहार करता है, आदि प्रमुख हैं।

रूपान्तरिक हिस्ट्रिया का रोगी अपने शारीरिक लक्षणों के प्रगति उदासीन (Dissociative disorder) रहता है तथा उसमें किसी तरह की चिन्ता नहीं होते देखी जाती है जबकि वास्तविक रोग या रोगी अपने लक्षणों को देख-रेख कर काफी चिन्तित रहता है। इसे ला वेली उदासीनता (La belle indifference) कहा जाता है।

मनोविच्छेदी विकृति (Dissociative disorder) एक ऐसी मानसिक विकृति है जिसमें रोगी की मानसिक प्रक्रियाएं विशेषकर स्मृति या चेतना हो समन्वित रहता है, विच्छेदित हो जाता है। इसमें स्मृतिलोप (Amnesia), व्यक्तित्व लोप (Depersonalization), वास्तविकतालोप (Derealization), पहचान संभ्रान्ति (Identity confusion) तथा पहचान बदलाव (Identify alteration) आदि प्रमुख हैं। इस विकृति श्रेणी में चार प्रमुख मानसिक विकृतियों को रखा गया है—मनोविच्छेदी स्मृतिलोप (Dissociative Amnesia), मनोविच्छेदी आत्म विस्मृति (Dissociative fugue), मनोविच्छेदी पहचान विकृति (Dissociative) तथा व्यक्तित्व लोप विकृति (Depersonalization Disorder)।

इस विकृति में रोगी अपने ऐसे महत्वपूर्ण अनुभूतियों का प्रत्याह्वान (Recall) पूर्णतः या अंशतः नहीं कर पाता है जिसका स्वरूप तनाव उत्पन्न करने वाला होता है या जो मानसिक आघात उत्पन्न किये होते हैं। स्मृति लोप कई प्रकार के होते हैं जिनमें दो प्रमुख हैं—पश्चगामी स्मृति लोप (Retrograde amnesia) तथा अग्रगामी स्मृति लोप (Anterograde Amnesia)। पश्चगामी स्मृति लोप एक तरह का स्थानीकृत स्मृति लोप (Localized Amnesia) है जिसमें व्यक्ति मानसिक आघात उत्पन्न करने वाली घटना के ठीक पहले की अनुभूतियों को भूल जाता है। अग्रगामी स्मृति लोप में रोगी मानसिक आघात उत्पन्न होने के बाद के किसी अनुभूति का प्रत्याह्वान (Recall) करने में अपने आप को असमर्थ पाता है। इस पहले मनोजनिक स्मृति लोप (Psychogenic Amnesia) कहा जाता है।

व्यक्तित्व लोप विकृति (Depersonalization disorder) : एक ऐसी विकृति है जिसमें व्यक्ति का आत्मन का प्रत्यक्षण या अनुभव इस हद तक बदला रहता है कि उसे पृथक्करण (Detachment) का भाव उत्पन्न होता है। व्यक्ति अपने माप को यंत्रवत् चलने वाला प्राणी (Automation) समझने लगता है। उसे अनुभव होता है कि वह अपनी ही मानसिक प्रक्रियाओं एवं शारीरिक प्रक्रियाओं का एक बाहरी प्रेक्षक बनकर उसका प्रेक्षण कर रहा है।

मनोदैहिक विकृति (Psychosomatic disorder) : एक ऐसी विकृति है जिसमें रोगी अपने सांवेगिक संघर्षों (Emotional conflict) एवं चिन्ताओं की अभिव्यक्ति वास्तविक शारीरिक लक्षणों (Actual bodily symptoms) के रूप में करता है। इस तरह से इस विकृति में रोगी में कुछ वास्तविक शारीरिक बीमारियां होती हैं परन्तु उसका कारण मनोवैज्ञानिक होता है न कि दैहिक।

इस रोग की एक खास विशेषता यह है कि इसमें उन्हीं अंगों द्वारा रोग के लक्षण की अभिव्यक्ति होती है जो स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic nervous system) के नियंत्रण में होते हैं। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण में रहने वाले कुछ प्रमुख अंग हैं—हृदय (Heart), गुर्दा (Kidney), आँत (Intestine) एवं चर्म क्रियाएं (Skin activities)। इस तरह से मनोदैहिक विकृति रूपान्तरिक हिस्ट्रिया (Conversion hysteria) से भिन्न है क्योंकि रूपान्तरिक हिस्ट्रिया में व्यक्ति उन अंगों द्वारा लक्षणों की अभिव्यक्ति करता है जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण में होते हैं। बुलिमिया (Bulimia), श्वसनी दमा (Bronchial Asthma), आँत का घाव (Peptic ulcer) आदि मनोदैहिक विकृति के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं।

मनोदशा विकृति (Mood disorder) एक अन्य महत्वपूर्ण विकृति है जिस पर DSM-IV में अधिक बल डाला गया है। यह एक ऐसी मानसिक विकृति है जिसमें व्यक्ति के भाव (Feeling), संवेग (Emotion) एवं सम्बन्धित मानसिक दशाओं में इतना उतार-चढ़ाव होता है कि वह अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में समायोजन स्तर बना कर नहीं रख पाता है और उसकी सामाजिक एवं पेशेवर जिन्दगी में तरह-तरह की समस्याएं उत्पन्न हो पाती हैं। इस तरह के मानसिक विकृति में व्यक्ति की मनोदशा में कभी तो काफी विषाद (Depression) देखा जाता है तो कभी विषाद एवं सुखाभास दोनों ही बारी-बारी से होते देखा जाता है। DSM-IV में मनोदशा विकृति

के मुख्य दो प्रकार बतलाये गए हैं—विषादी विकृति (Depressive disorder) तथा द्विध्रुवीय विकृति (Bipolar disorder)।

विषादी विकृति जिसे एकध्रुवीय विकृति (Unipolar disorder) भी कहा जाता है, का मुख्य लक्षण व्यक्ति में उदासी एवं विषाद (Depression), का होना है। इसके अतिरिक्त इसमें भूख, नींद एवं शारीरिक वजन में कमी होते पायी जाती है।

विषाद (Depression) : इसको 'मनोरोग का सामान्य ठंड' (Common cold of psychopathology) कहा गया है क्योंकि यह लगभग प्रत्येक व्यक्ति की जिंदगी में कभी-न-कभी अवश्य ही उत्पन्न होता है। इस विकृति को भी दो भागों में बांटा गया है—डायस्थाइमिक विकृति (Dysthymic disorder) तथा बड़ा विषादी विकृति (Major depressive disorder)। डायस्थाइमिक विकृति में विषादी मनोदशा का स्वरूप असाध्य (Chronic) होता है अर्थात् गत कई वर्षों से व्यक्ति की मनोदशा विषादी होती है। बड़ा विषादी विकृति में व्यक्ति एक या एक से अधिक बड़े विषादी घटनाओं का अनुभव किया होता है। व्यक्ति प्रत्येक चीज में अपनी अभिरुचि (Interest) खो चुका होता है तथा उसे कोई कार्य में मन नहीं लगता है। ऐसे व्यक्तियों में नींद की कमी, शारीरिक वजन में कमी, थकान, आत्महत्या की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। इस विकृति में श्रेणीकृत होने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे लक्षण कम-से-कम दो सप्ताह से अवश्य हो रहे हों।

द्विध्रुवीय विकृति (Bipolar disorder) वैसी विकृति को कहा जाता है जिसमें व्यक्ति या रोगी में बारी-बारी से विषाद (Depression) तथा उन्माद (Mania) दोनों ही तरह की अवस्थाएं होते पायी जाती हैं। यही कारण है कि इसे उन्मादी-विषादी विकृति (Manic-depressive disorder) भी कहा जाता है। DSM-IV में द्विध्रुवीय विकृति के निम्नांकित तीन प्रकार बतलाये गये हैं—

(i) साइक्लोथाइमिक विकृति (Cyclothymic disorder)—इस विकृति में भी चिरकालिक क्षुब्धता पायी जाती है। इसमें विषादी व्यवहार तथा अल्पोन्मादी (Hypomanic) व्यवहार दोनों ही पाये जाते हैं परन्तु इस दोनों में से किसी की भी गम्भीरता ऐसी नहीं होती है कि वह DSM-IV द्वारा निर्धारित कसौटी को छू सकें।

(ii) द्विध्रुवीय एक विकृति (Bipolar I disorder)—यह एक ऐसा मानसिक विकृति है जिसमें रोगी या व्यक्ति एक या एक से अधिक उन्माद (Mania) की घटना तथा एक या एक से अधिक विषाद (Depression) की घटना की अनुभूति अवश्य किया होता है। इसके बहुत कम रोगी ऐसे भी होते हैं जो एक या एक से अधिक बार उन्मादी अवस्था का अनुभव किये हों परन्तु उन्हें कभी भी विषादी लक्षण का अनुभव नहीं हुआ हो।

(iii) द्विध्रुवीय दो विकृति (Bipolar II disorder)—द्विध्रुवीय दो विकृति वैसी मानसिक विकृति होती है जिसमें रोगी को कम-से-कम अल्पोन्मादी (Hypomanic) मानसिक अवस्था का अनुभव तथा एक या एक से अधिक विषादी मानसिक अवस्थाओं का अनुभव हो चुका होता है। इसके रोगी को कभी उन्मादी (Manic) मानसिक अवस्था का अनुभव नहीं होता है।

द्विध्रुवीय एक विकृति (Bipolar I Disorder) तथा द्विध्रुवीय दो विकृति में मुख्य अन्तर यह है कि द्विध्रुवीय दो विकृति में उन्मादी व्यवहार की गम्भीरता कम होती है जबकि द्विध्रुवीय एक विकृति में उन्मादी व्यवहार व्यक्ति अधिक गम्भीर मात्रा में दिखलाता है।

पोस्टमार्टम विषाद (Postmortum depression) से तात्पर्य वैसे विषाद से होता है जो महिलाओं में बच्चा जन्म देने के तीन महीना के भीतर उत्पन्न होता है। अगर इस अवधि में मनोविक्षिप्ति (Psychosis) के लक्षण यथा विभ्रम (Hallucination), व्यामोह (Delusion), स्पष्ट अतार्किक चिन्तन (Illogical thought) आदि उपस्थित हो तो इसे पोस्टमार्टम मनोविक्षिप्ति (Postpartum Psychosis) कहा जाता है।

मनोविदालिता (Schizophrenia) एक अन्य गम्भीर मानसिक रोग है जिस पर DSM-IV पर काफी बल डाला गया है। यह मनोविक्षिप्ति विकृतियों का एक समूह है जिसमें चिन्तन, संवेग तथा व्यवहार में अत्यधिक क्षुब्धता की विशेषता होती है।

1899 में इमिल क्रेपलिन (Emil Kraepelin) ने मनोविदालिता का नाम 'डीमेंसिया प्रीयोक्स' (Dementia Preaon) रखा था परन्तु 1911 में ब्ल्युलर (Bleuler) ने इस रोग का नाम मनोविदालिता दिया और आज भी यह रोग इसी नाम से जाना जाता है।

यद्यपि मनोविदालिता रोग का क्रम एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होता है, फिर भी अधिकतर केसेज में इस रोग के उत्पन्न होने में तीन अवस्थाएँ (Phases) पायी जाती हैं—

विशेष तथ्य

शोधों से यह स्पष्ट हुआ है कि विषाद की उत्पत्ति में न्यूट्रांसमीटर (Neurotransmitter) की भूमिका अहम् होती है। इन अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि नोरपाइनफ्राइन (Norepinephrine) तथा सीरोटोनिन (Serotonin) दो ऐसे न्यूट्रांसमीटर हैं जिनकी भूमिका विषाद में काफी अधिक होती है। जब मस्तिष्क में नोरपाइनफ्राइन की मात्रा कम हो जाती है, तो इससे व्यक्ति में अभिप्रेरणात्मक स्तर की कमी हो जाती है अर्थात् उसमें विषाद उत्पन्न हो जाता है। चूँकि नोरपाइनफ्राइन, (Norepinephrine) कैटेकोलामाइन समूह का रसायन (chemical) है, इसलिए यह प्राक्कल्पना कि नोरपाइनफ्राइन की कमी से विषाद होता है, को कैटेकोलामाइन प्राक्कल्पना (Catecholamine hypothesis) कहा जाता है। इपानेफ्रान तथा डोपामाइन (Dopamine) कैटेकोलामाइन समूह के दो अन्य रसायन हैं।

कुछ अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है, कि एक विशेष तरह का हार्मोन (Hormone) जिसे मेलाटोनिन (Melatonin) कहा जाता है, की भूमिका विषाद (Depression) में अधिक होती है। इसे ड्रैकुला हार्मोन (Dracula Hormone) भी कहा जाता है। यह हार्मोन मस्तिष्क में अवस्थित पिनियल ग्रन्थि (Pineal gland) से उस परिस्थिति में अधिक निकलता है जब हमारे इर्द-गिर्द के वातावरण में अंधेरा छाने लगता है परन्तु जब इसी वातावरण में पर्याप्त रोशनी होती है तो इस ढंग का स्राव नहीं निकलता है। आधुनिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि मनुष्यों में विशेषकर जाड़े के मौसम में जब रात बड़ी और दिन छोटा होता है, मेलाटोनिन अधिक निकलता है जिससे उसमें सक्रियण स्तर (Activation level) कम हो जाता है और विषादी लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इस तरह के पैटर्न को DSM-IV में मौसमी भावात्मक विकृति (Seasonal affective disorder or SAD) कहा गया है।

(i) पूर्वलाक्षणिक अवस्था (Predormal phase)—इस अवस्था में मनोविदालिता के लक्षण रोगी में स्पष्ट नहीं होते हैं परन्तु व्यक्ति अपने गत कार्य के सामान्य स्तर से गिरता हुआ नजर आता है। वह अपने उत्तरदायित्वों को ठीक से नहीं निभा पाता है और वह अपने प्रत्यक्ष, चिन्तन एवं संचार (Communication) में क्षुब्धता अनुभव करता है जिसकी अभिव्यक्ति अस्पष्ट एवं लाक्षणिक संभाषण (Speech), विचित्र विचार, अंधविश्वास या छठे इंद्रिय (Sixth sense) में विश्वास आदि दिखला कर करता है।

(ii) सक्रिय अवस्था (Active phase)—इस अवस्था में मनोविदालिता के धनात्मक लक्षण (Positive symptoms) तथा ऋणात्मक लक्षण (Negative Symptoms) दोनों ही काफी स्पष्ट हो जाते हैं।

(iii) अवशिष्ट अवस्था (Residual phase)—इस संबंध में रोगी फिर से लाक्षणिक अवस्था (Prodormia phase) में लौटने के समान लक्षण दिखाना प्रारंभ कर देता है। सक्रिय अवस्था में गंभीर एवं भड़कीले लक्षणों में थोड़ा कमी आती है परन्तु फिर भी बहुत से रोगियों में सतत ह्रास (Continuous deterioration) के लक्षण स्पष्ट रूप से दीखते हैं। रोगी का संवेग विशेष रूप से कुण्ठित या फीका (flat) होता है। रोगी गत कार्यों एवं उत्तरदायित्वों को ठीक से निभा पाने में असमर्थ रहता है।

इसमें से प्रत्येक अवस्था कई दिनों या वर्षों तक रोगी में बना हो सकता है।

● मनोविदालिता के जहाँ तक विस्तार का प्रश्न है, एपीए (APA, 1994) के अनुमान के अनुसार 100 में से एक व्यक्ति में इस रोग के होने की संभावना प्रबल होती है।

● मनोविदालिता के मुख्य तीन तरह के लक्षण (Symptoms), होते हैं—धनात्मक लक्षण (Positive symptoms), ऋणात्मक लक्षण (Negative symptoms) तथा मनोगामक लक्षण (Psychomotor symptoms)। धनात्मक लक्षण से तात्पर्य उन लक्षणों से होता है जिसमें रोगी सामान्य कार्यों की मनोवैज्ञानिक बहुलता (Psychological excess) दिखलाता है। इस श्रेणी के लक्षणों में

- व्यामोह (Delusion),
- विघटित चिन्तन एवं सम्भाषण (Disorganized thinking and speech),
- विभ्रम (Hallucination) तथा
- अनुपयुक्त भाव (Inappropriate affect) मुख्य है।

● ऋणात्मक लक्षण (Negative symptom) से तात्पर्य उन लक्षणों से होता है जिसमें रोगी सामान्य कार्यों की मनोवैज्ञानिक कमी (Psychological deficit) दिखलाता है। इस श्रेणी के लक्षणों में सम्भाषण की कमी (Poverty of speech), कुण्ठित भाव या भाव या संवेग की कमी, (Blunted and flat affect) तथा बाह्य वातावरण के साथ क्षुब्ध संबंध (Disturbed relationship with external world), इच्छा या अभिप्रेरण की पूर्ण कमी (Avolition) आदि मुख्य हैं। मनोपेशीय लक्ष्य में व्यक्ति की गति (Movement) में स्वाभाविकता (Spontaneity) की कमी, हाव-भाव, तौर-तरीके में अनाख्यान आदि मुख्य हैं।

● DSM-IV में मनोविदालिता के मुख्य पांच प्रकार बतलाये गये हैं—विघटित मनोविदालिता (Disorganized schizophrenia) कैटेटोनिक मनोविदालिता (Catatonic Schizophrenia), व्यामोही मनोविदालिता (Paranoid schizophrenia), मिश्रित मनोविदालिता (Undifferentiated schizophrenia) तथा अवशिष्ट मनोविदालिता (Residual Schizophrenia)।

● विघटित मनोविदालिता (Disorganized schizophrenia) क्रेपलिन (Kraepelin) द्वारा प्रस्तावित हेबेफ्रेनिक मनोविदालिता (Hebephrenic schizophrenia) का ही नया नाम है। इस प्रकार के मनोविदालिता का मुख्य लक्षण सम्भ्रान्ति (Confusion), असंगतता (Incoherence) तथा कुण्ठित भाव (Flat effect) आदि है। इस तरह कोई रोगी मूर्खतापूर्वक व्यवहार हमेशा दिखलाता है। विघटित मनोविदालिता के रोगी न तो वे अपना देखदेख ठीक से करते हैं और नहीं उनका सामाजिक संबंध ही उत्तम होता है।

● कैटेटोनिक मनोविदालिता (Catatonic Schizophrenia) का वर्णन सबसे पहले 18698 में कार्ल काहलबॉम (Karl Kahlbaum) जो एक जर्मन चिकित्सक थे, उन्होंने परीक्षण किया तथा इन्होंने इस रोग को तनाव पागलपन कहा था। सामान्यतः इस प्रकार के मनोविदालिता में तीन तरह की लाक्षणिक अवस्थाएं होती हैं—पहली अवस्था कैटेटोनिक स्टूपर (Catatonic Stupor) की होती है जिसमें रोगी गतिहीन तथा अनुक्रियाहीन (Unresponsive) होने का लक्षण दिखलाता है। रोगी एक स्थिति में लम्बे सतय तक चुपचाप सोता या खड़ा रहता है, वह किसी से बातचीत नहीं करता है तथा किसी के बात पर कोई ध्यान नहीं देता है।

इस प्रकार की दूसरी अवस्था उत्तेजन अवस्था (Excited phase) की होती है। जिसमें रोगी काफी उत्तेजित दिखता है, जोर-जोर से चिल्लाते रहता है, आक्रमकता दिखलाता है तथा अकारण ही आवेगशील हो उठता है।

इस रोग की तीसरी अवस्था वह होती है जिसमें स्टूपर तथा उत्तेजन (Excitement) के चरम लक्षण फेर-बदल कर होते रहते हैं।

● व्यामोही मनोविदालिता (Paranoid Schizophrenia) में व्यामोह तथा श्रव्य विभ्रम (Auditory Hallucination) का एक क्रमबद्ध एवं संगठित तंत्र होता है। व्यामोह में दण्डात्मक व्यामोह (Delusion of grandeur) की प्रबलता होती है परन्तु इसके अतिरिक्त बड़प्पन का व्यामोह (delusion of persecution) ईर्ष्या का व्यामोह (Delusion of jealousy) तथा सन्दर्भ का व्यामोह (Delusion of reference) भी पाया जाता है।

● मिश्रित मनोविदालिता (Undifferentiated schizophrenia) में उस मानसिक रोगी को रखा जाता है जिन्हें मनोविदालिता के रोगी के रूप में पहचान तो की जाती है परन्तु उसे मनोविदालिता के कोई स्पष्ट प्रकार में रखना संभव नहीं हो पाता है। जब रोगी में मनोविदालिता के लक्षण अचानक उत्पन्न होते हैं और लघु अवधि में ही वे दूर हो जाते हैं तो उसे तीव्र मिश्रित मनोविदालिता (Acute undifferentiated) कहा जाता है। परन्तु जब मनोविदालिता के रोग की शुरुआत क्रमिक (Gradual) होती है और उसके लक्षण लम्बे समय तक बने रहते हैं तो इसे असाध्य मिश्रित मनोविदालिता (Chronic undifferentiated schizophrenia) कहा जाता है।

● अवशिष्ट मनोविदालिता (Residual Schizophrenia) में मनोविदालिता के उन रोगियों को रखा जाता है जो मनोविदालिता के सम्पूर्ण कसौटी पर तो खरे नहीं उतरते परन्तु फिर भी उनमें मनोविदालिता के लक्षण दीख पड़ते हैं। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार में मनोविदालिता के भड़कीले लक्षण की संख्या तथा तीव्रता में तो कमी हो जाती है परन्तु फिर भी वे अवशिष्ट प्रारूप में बने रहते हैं। इसमें रोगी में भोथरे या अनुपयुक्त सांवेगित प्रतिक्रिया, सामाजिक प्रत्याहार (Social withdrawal), अनाखा व्यवहार (Eccentric behaviour) तथा कुछ अतार्किक चिन्तन के लक्षण होते हैं।

● मनोविदालिता के धनात्मक तथा ऋणात्मक लक्षणों के नैदानिक आयामों के आधार पर मनोविदालिता को टाईप एक (Type I) तथा टाईप दो (Type II) दो भागों में बांटा गया है। टाईप-एक मनोविदालिता वैसे मनोविदालिता को कहा जाता है जिसमें मनोविदालिता के लक्षणों का आरंभ अचानक होता है तथा इनमें सिर्फ धनात्मक लक्षण (Positive Symptoms) जैसे व्यामोह (Delusion), विभ्रम (Hallucination) प्रबल चिन्तन क्षुब्धता आदि पाये जाते हैं। इस तरह के धनात्मक लक्षण वाले मनोविदालिता में मस्तिष्क में डोपामाइन जैसे-न्यूरोट्रांसमीटर की अतिसक्रियता (Overactivity) पायी जाती है। टाईप दो मनोविदालिता वैसे मनोविदालिता को कहा जाता है जिसमें नकारात्मक लक्षण अर्थात् कुण्ठित प्रभाव (Flat effect), इच्छाशक्ति की कमी तथा सम्भाषण की कमी आदि मुख्य रूप से देखा जाता है। नकारात्मक लक्षण में धनात्मक लक्षणों की तुलना में पलटावी होने का गुण कम होता है।

● **मनोविदालिता उत्पन्न होने का कारण :** मनोसामाजिक कारकों (Psychosocial factor) के अलावा आनुवंशिक (Genetic) तथा जैव-रसायनिक (bio-chemical) कारक भी हैं।

● अमेरिका के मशहूर एवं काफी चर्चित गिनैन बहनों (Genain sisters) के अध्ययन से इस तथ्य का खुलासा होता है कि मनोविदालिता का आधार जननिक होता है। ये चारों बहनों का जन्म एक साथ हुआ था वे एकांगी चतुष्क (Monozygotic quadruplet) थीं। ऐसे बच्चों के जन्म होने की संभावना सामान्यतः 16 अरब जन्म में एक होता है। ये चारों बहनें 20 साल की आयु में मनोविदालिता के रोगी हो गयी थी।

● मनोविदालिता में जैवरसायनिक कारकों के होने की संभावना का सबूत हमें डोपामाइन प्राक्कल्पना (Dopamine hypothesis) से मिलता है। मनोविदालिता के रोगियों में वे न्यूरोन (Neuron) जो डोपामाइन नामक न्यूरोट्रांसमीटर का उपयोग करते हैं, बहुत जल्द ही उत्तेजित हो जाते हैं और जरूरत से ज्यादा सूचनाओं का संचरण (Transmission) करते हैं। इस तरह की अधिकता से मनोविदालिता के विकृति का लक्षण उत्पन्न होता है। इसे सामान्यतः डोपामाइन प्राक्कल्पना (Dopamine hypothesis) कहा जाता है जिसके अनुसार डोपामाइन की अधिकता मनोविदालिता का लक्षण उत्पन्न करता है।

● DSM-IV में व्यामोही विकृति (Delusional disorder) को भी एक प्रकार माना गया है तथा इसकी पहचान के लिए निम्नांकित कसौटियों (Criteria) को महत्वपूर्ण बतलाया गया है।

(i)	व्यक्ति में एक या एक से अधिक व्यामोह (Delusion) जो सामान्य जीवन की परिस्थितियों से संबद्ध होते हैं, कम-से-कम एक महीने से उपस्थित हो।
(ii)	व्यामोही मनोविदालिता (Paranoid Schizophrenia) के लक्षण व्यक्ति में न हो। श्रव्य विभ्रम या दृष्टि विभ्रम, यदि हो, तो प्रबल नहीं हो। व्यामोही विषयों से संबद्ध स्पर्श या घ्राण विभ्रम उपस्थित हो सकते हैं।
(iii)	व्यामोही के प्रभाव के अलावा व्यक्ति का व्यवहार किसी भी तरह से अनोखा नहीं दिखता हो।
(iv)	अगर व्यामोह के साथ-ही-साथ व्यक्ति की मनोदशा में कुछ क्षुब्धता यदि आयी भी हो, तो उसकी अवधि व्यामोही अवधि की तुलना से काफी कम हो।
(v)	व्यक्ति के व्यवहार में क्षुब्धता का कारण कोई सामान्य मेडिकल अवस्था या किसी औषध के लेने से उत्पन्न दैहिक प्रभाव न हो।

स्थिर-व्यामोही विकृति में कई तरह के व्यामोह (Delusion) पाये जाते हैं जिनमें दंडात्मक व्यामोह (Delusion of persecution), आडम्बरी व्यामोह (Delusion of grandeur), प्रभाव व्यामोह (Delusion of influence) आदि प्रधान होते हैं। कभी-कभी यह देखा गया है कि दो या दो से अधिक रोगियों में एक दूसरे के मात्र निकट सम्पर्क के कारण सम्पर्कीय व्यामोह (Interlocking delusion) विकसित हो जाता है जिसे ऐतिहासिक रूप से फोली ए ड्यूक्स (Folie a deux) कहा जाता है। जिसका अर्थ यह होता है कि इसमें रोग का कारण कोई आन्तरिक मनोभाव (Internal complex) नहीं है बल्कि रोगी का मात्र निकट साहचर्य है।

● DSM-IV में मादक-संबद्ध विकृतियों (Substance-related disorders) का भी वर्णन किया गया है। इस सिलसिले में दो पद महत्वपूर्ण हैं—मादक द्रव्य-दुरुपयोग (Substance-abuse) तथा मादक द्रव्य निर्भरता (Substance dependence)। मादक द्रव्य दुरुपयोग में व्यक्ति कुछ नशीली दवा (Drug) का उपयोग अनावश्यक रूप से करता है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति अपने घर तथा कार्य-स्थल पर वे जवाबदेहियों को ठीक ढंग से निर्वाह करने में असमर्थता महसूस करता है। जो लोग औषधियों को दुरुपयोग करते हैं, वे एक समय में एक से अधिक औषध का उपयोग करते हैं।

● इस को बहु-द्रव्य दुरुपयोग (Poly-substance abuse) कहा जाता है। लम्बे समय तक यदि व्यक्ति में द्रव्य दुरुपयोग की स्थिति चलते रहती है तो इससे उसमें एक विशेष अवस्था उत्पन्न होती है जिसे द्रव्य निर्भरता (Substance dependence) कहा जाता है।

● ऐसी निर्भरता दो तरह की होती है—मनोवैज्ञानिक निर्भरता (Psychological dependence) तथा दैहिक निर्भरता (Physiological dependence)।

● मनोवैज्ञानिक निर्भरता में व्यक्ति औषध लेने की तीव्र लालसा दिखलाता है और उसे लेने के लिए वह मानसिक रूप से योजना बना चुका होता है। औषधि पर मनोवैज्ञानिक निर्भरता दिखाने वाले व्यक्ति यह जानते हुए भी ऐसे औषध से उनमें हृदय रोग, वृक्क का रोग, पेट में शोथ (Ulcer) या अन्य रोग हो सकता है, औषध लेना जारी रखता है। प्रायः इनकी दोस्ती वैसे लोगों से हो जाती है जो उन्हें वांछित औषध को प्राप्त करने में मदद करता है।

● जब व्यक्ति अत्यधिक मात्रा में तथा बार-बार द्रव्यों को लेता है जिससे उसमें सहनशीलता (Tolerance) या प्रत्याहार लक्षण विकसित हो जाते हैं, तो इसे दैहिक निर्भरता (Physiological dependence) की संज्ञा दी जाती है। इस अवस्था को व्यसन (Addiction) भी कहा जाता है।

द्रव्य संबद्ध विकृति अनेक हैं जिनमें मद्यपानता (Alcoholism) या मद्यपान संबद्ध विकृति (Alcohol related disorder) प्रमुख हैं। मद्यपानता एक ऐसी अवस्था है जिसमें अल्कोहल पर इतनी अधिक निर्भरता बढ़ जाती है कि इससे जिन्दगी के समायोजन में बाधा पहुँचती है। जेलिनेक (Jellinek 1971) के अनुसार मद्यपानता की चार अवस्थाएँ होती हैं :

(i) **प्राक्-मद्यपान लक्षणात्मक अवस्था (Pre-alcoholic symptomatic stage)**—इस अवस्था में व्यक्ति पहले-पहल सामाजिक प्रचलन (Social conventions) के अनुरूप खास-खास मौकों पर मद्यपान करता है। शराब पीने के फलस्वरूप वह अपने तनाव एवं भय को भूल जाता है और उसे काल्पनिक आनन्द मिलता है।

(ii) **प्रारंभिक अवस्था (Early-alcoholic symptomatic stage)**—इस अवस्था में पीने वाले व्यक्ति के व्यवहार में कुछ विसामान्यता (Deviancy) के लक्षण दिखलाई देने लगते हैं। इस अवस्था में पहुँचने पर व्यक्ति शराब की मात्रा बढ़ा देता है। व्यक्ति में स्मृति ह्रास उत्पन्न हो जाता है तथा चुराकर या छिपाकर शराब पीने की इच्छा तीव्र हो जाती है। ऐसे व्यक्तियों में गट-गट पीना (Gulping drinking), शराब पीने के प्रसंग से बातचीत में दूर हटना, दोष-भाव इत्यादि के लक्षण भी देखने को मिलते हैं।

(iii) **संकटकालीन अवस्था (Crucial phase)**—मद्यपानता की यह तीसरी अवस्था होती है जिसमें व्यक्ति का मदिरापान से नियंत्रण हट जाता है। जब वह शराब पीना प्रारंभ करता है तो वह तब तक पीते जाता है जब तक कि उसकी चेतना बनी रहती है। ऐसी आदतों के कारण उन्हें व्यक्तिगत क्षति काफी होती है और कभी-कभी नौकरी से भी हाथ धोना पड़ता है।

(iv) **असाध्य अवस्था (Chronic phase)**—मद्यपानता की यह चौथी अवस्था होती है जिसकी शुरुआत सुबह-सुबह पीने की आदत (Morning thinking) से होता है शराबी यह समझता है कि जब तक वह सुबह में पिएगा नहीं, वह कोई भी काम प्रारंभ नहीं कर सकता है। इस अवस्था में मद्यसेवी शराब को अपने जिन्दगी का एक हिस्सा मान लेता है वह शराब पीने के लिए घर के समान यहां तक कि औरतों के गहने आदि भी चुपके से बेच डालता है।

वर्निक संलक्षण (Wernicke's syndrome)

● एक तरह का मस्तिष्कीय विकृति (Brain disorder) है जिसमें अन्य बातों के अलावा नेत्र गति दुष्क्रिया (Eye-Movement dysfunction), एटैक्सिया (Ataxia), उन्मुखता समस्या (Orientation problem) तथा सामान्य मानसिक संभ्रांति (General Mental confusion) आदि मुख्य रूप से होते हैं। इसकी उत्पत्ति गंभीर मद्यपानता (Severe alcoholism) से होता है। इसे वर्निक ईन्सैफैलोपैथी (Wernicke's encephalopathy) भी कहा जाता है।

वर्थर संलक्षण (Werther Syndrome)

● इसका तात्पर्य कम उम्र के व्यक्तियों में किसी बहुचर्चित आत्महत्या के बारे में सुनकर अपनी भी जिन्दगी को समाप्त करने

की प्रवृत्ति से होती है। इसे क्लस्टर आत्महत्या (Cluster suicide) भी कहा जाता है।

● आधुनिक शोधों एवं अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि मद्यपानता के कई ऐसे लक्षण दिखलाई देते हैं जिनमें वास्तविकता से संपर्क की कमी, भ्रान्ति (Confusion), उत्तेजना (Excitement) तथा उन्माद आदि प्रधान होते हैं।

● कोरसाकॉफ मनोविक्षिप्ति एक ऐसा ही प्रमुख मद्यसारक मनोविक्षिप्ति है जिसका सर्वप्रथम उल्लेख रूसी मनोचिकित्सक कोरसाकॉफ (Korsakoff) द्वारा 1887 में हुआ। आजकल उसे वर्निक कोरसाकॉफ संलक्षण (Wernicke-Korsakoff syndrome) कहा जाता है क्योंकि वर्निक संलक्षण तथा कोरसाकॉफ संलक्षण (Korsakoff syndrome) के अधिकतर केसेज एक ही व्यक्ति में पाये जाते हैं और इन दोनों संलक्षणों का संबंध गंभीर मद्यपानता से है।

● इस मनोविक्षिप्ति का सबसे प्रधान लक्षण स्मृति दोष (Memory defect) है। इस विकृति से ग्रसित मद्यसेवी तुरंत के अनुभवों एवं घटनाओं को बिलकुल ही भूल जाते हैं जबकि अन्य दूसरे तरह की स्मृतियाँ सामान्य होती हैं। ऐसे व्यक्तियों में विभ्रम (Hallucination) तथा समय एवं स्थान की स्थितिभ्रान्ति (disorientation) काफी अधिक है।

व्यक्तित्व विकृति (Personality disorder) या जिसे कारसन तथा बुचर (Carson & Butcher, 1992) ने चारित्रिक विकृति (Character disorder) भी कहा है, एक ऐसी सामान्य श्रेणी है जिसमें व्यक्तित्व के शीलगुण (Traits) एवं उनका विकास इतना अपरिपक्व तथा विकृत होता है कि ऐसे व्यक्ति वातावरण को कुसमायोजित ढंग से प्रत्यक्ष करते हैं तथा उसके प्रति अनुचित ढंग से अनृक्रिया करते हैं। DSM-IV में व्यक्तित्व विकृति का वर्णन आयाम I (Axis I) में किया गया है जबकि अन्य मानसिक विकृतियों को आयाम II (Axis II) में रखा गया है।

● DSM-IV में व्यक्तित्व विकृति के 10 प्रकार बतलाये गये हैं—स्थिर-व्यामोही व्यक्तित्व विकृति (Paranoid personality disorder), सिजोआयड व्यक्तित्व विकृति (Schizoid personality disorder), सिजोटाइपल व्यक्तित्व विकृति (Schizotypal personality disorder), हिस्ट्रीओनिक व्यक्तित्व विकृति (Histrionic personality disorder), आत्ममोही व्यक्तित्व विकृति (Narcissistic personality disorder), समाज विरोधी व्यक्तित्व विकृति (Antisocial personality disorder), सीमान्त रेखीय व्यक्तित्व विकृति (Borderline personality disorder), परिहारी व्यक्तित्व विकृति (Avoidant personality disorder), आश्रित व्यक्तित्व विकृति (Dependent personality disorder) तथा मनोग्रस्ति-बाध्यता व्यक्तित्व विकृति (Obsessive-compulsive personality disorder)।

● स्थिर-व्यामोह व्यक्तित्व विकृति (Paranoid personality disorder) वाले व्यक्तियों में कूल रूप से शक, अतिसंवेदनशीलता

(Hypersensitiveness), ईर्ष्या, जिदपन जैसे शीलगुणों की अधिकता पायी जाती है। ऐसे लोग अपने गलत कार्यों को भी तक के आधार पर सही ठहराने की कोशिश करते रहते हैं।

● **सिजोआयड व्यक्तित्व विकृति (Schizoid personality disorder)** वाले व्यक्तियों में लोगों के साथ सामाजिक संबंध बनाये रखने की अक्षमता (Inability) होती और साथ ही साथ उनकी इस दिशा में कोई अभिरुचि भी नहीं होती है। इनमें सामाजिक कौशल (Social skills) की सर्वथा कमी पायी जाती है।

● **सिजोटाइपल व्यक्तित्व विकृति (Schizotypal personality disorder)** वाले व्यक्ति एकान्तप्रिय, अतिसंवेदनशील तथा बातचीत में झक्कीपन (Eccentric) दिखलाने वाले होते हैं। ऐसे लोगों को यद्यपि वास्तविकता का ज्ञान होता है फिर भी उनमें व्यक्तिगत एवं अंध विश्वासपूर्ण चिन्तन की काफी प्रधानता एवं स्पष्टता देखी जाती है।

● **हिस्ट्रीयोनिक व्यक्तित्व विकृति (Histrionic personality disorder)** वाले व्यक्ति मूल रूप से कुछ ऐसे व्यवहारात्मक पैटर्न दिखलाते हैं जिसमें अपरिपक्वता, उत्तेजना, सांवेगिक अस्थिरता, उत्तेजना के लिए उतावलापन आदि की प्रधानता होती है। ऐसे व्यक्तियों में आत्म-केन्द्रता अधिक होती है तथा दूसरों की अनुमोदन (Approval) पाने की तीव्र लालसा होती है।

● **आत्ममोही व्यक्तित्व विकृति (Narcissistic personality disorder)** वाले व्यक्ति में आत्म-महत्व की भावना काफी तीव्र एवं मजबूत होती है। ऐसे व्यक्ति अपने आपको काफी महत्वपूर्ण व्यक्ति समझते हैं और लोगों से अलग विशेष सेवा की उम्मीद करते हैं। ऐसे व्यक्तियों में परानुभूति (Empathy) की सर्वथा कमी होती है।

● **समाज-विरोधी व्यक्तित्व विकृति (Anti-social personality disorder)** वाले व्यक्ति लगातार आक्रामकता या अन्य समाज-विरोधी व्यवहार दिखलाकर दूसरों के अधिकार की अवहेलना करते हैं। DSM-IV की कसौटी के अनुसार ऐसे व्यक्तियों की आयु कम-से-कम 18 वर्ष की होनी चाहिए और इनमें 15 वर्ष के आयु के पहले ही चारित्रिक विकृति (Character disorder) के पक्के सबूत मिल चुके होते हैं। ऐसे लोग दूसरों को ठगने में काफी होशियार होते हैं और ऐसे लोग किसी भी तरह के सामाजिक एवं अनैतिक कार्य करने में हिचकिचाते नहीं हैं।

● जब 8 से 18 वर्ष के आयु का किशोर कोई समाज विरोधी कार्य जो कानूनी दृष्टिकोणों से गलत होता है, करता है तो उसे किशोरापराधी (Juvenile delinquency) कहा जाता है। 8 साल से कम उम्र के बच्चों को ऐसे गैर-कानूनी एवं अनैतिक व्यवहार करने पर भी उन्हें किशोरापराध नहीं समझा जाता है।

● **DSM-IV में मानसिक दुर्बलता (Mental retardation)** को समायोजी व्यवहार (Adaptive behaviour) में कमी के साथ सार्थक रूप से अधोऔसत बौद्धिक कार्यवाही (Subaverage intellectual functioning) के रूप में परिमार्जित किया जाता है तथा यह 18 वर्ष की आयु से पहले अभिलक्षित हो जाता है।

● मानसिक दुर्बलता को समायोजी व्यवहार (Adaptive behaviour) करने की क्षमता के आराध पर मोटे तौर पर दो भागों में बांटा गया है—

● शिक्षा ग्रहण योग्य मानसिक दुर्बलता (Educable mental retardation or E-mental retardation)। शिक्षा ग्रहण योग्य मानसिक दुर्बलता में बच्चों का प्राप्तांक किसी बुद्धि परीक्षण पर के प्राप्तांक के सामान्य परास (Normal range) से ठीक नीचे होता है। ऐसे बच्चे दिये जाने वाले शिक्षा तथा निर्देश से काफी लाभान्वित होते हैं।

● प्रशिक्षण योग्य मानसिक दुर्बलता की श्रेणी में वैसे बच्चों को रखा जाता है जो सामान्य परास से काफी नीचे होते हैं तथा ऐसे बच्चे दिये गये शिक्षा एवं प्रशिक्षण से लाभ उठाने में असमर्थ रहते हैं परंतु उन्हें दिन-प्रतिदिन के काम चलाऊ कौशलों (Skills) के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है।

● मानसिक दुर्बलता के दस नैदानिक प्रकार (Clinical types) भी हैं—डाउन्स सिंड्रोम (Down's syndrome), फेनिलकेटोन्यूरिया (Phenylketonuria or PKU), बौनापन (Cretinism), लघुशीर्षता एवं दीर्घशीर्षता (Microcephely and Macrocephely), जलशीर्षता (Hydrocephaly), टर्नर सिंड्रोम (Turner's syndrome), क्लाइनेफेल्टर सिंड्रोम (Klinefelter's syndrome), दुर्बल एक्स सिंड्रोम (Fragile X syndrome), विलियम्स सिंड्रोम (Williams syndrome) तथा प्रेडर-विल्ली सिंड्रोम (Prader-Willi syndrome)।

● **डाउन्स सिंड्रोम (Down's syndrome)** जैसी मानसिक दुर्बलता (Mental retardation) का वर्णन सबसे पहले-पहल ब्रिटेन के मनोचिकित्सक लैंगडान डाउन (Langdan Down) ने 1886 में किया था। इस श्रेणी के व्यक्तियों की बुद्धिलब्धि 25 से 50 के बीच होती है तथा इसकी मानसिक आयु 6-7 वर्ष तक की होती है। ऐसे व्यक्तियों के चेहरे की बनावट मंगोलियन जाति के लोगों से मिलती-जुलती है। इसलिए इसे मंगोलिज्म (Mongolism) कहा जाता है। ऐसे व्यक्तियों के गुणसूत्र (Chromosome) के 21वें युग्म में एक अतिरिक्त गुणसूत्र होता है। फलस्वरूप, ऐसे लोगों में गुणसूत्र की संख्या 46 न होकर 47 होती है। डाउन संलक्षण पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाला एक जन्मजात रोग नहीं होता है बल्कि यह उत्पादक प्रक्रिया के दौरान एक विशेष आनुवंशिक त्रुटि (Genetic error) के परिणामस्वरूप होता है।

फेनिलकेटोन्यूरिया (Phenylketonuria or PKU) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जिसका सम्बन्ध प्रोटीन चपापचय (Protein metabolism) में गड़बड़ी से होता है। इसमें जन्म के समय बच्चा सामान्य दिखता है परंतु 6 से 12 महीने के भीतर इसमें मानसिक दुर्बलता के लक्षण दिखलाई पड़ते हैं।

बौनापन (Cretinism) : जैसी मानसिक दुर्बलता को हाइपोथायराडिज्म (Hypothyroidism) भी कहा जाता है और यह थायरायड हार्मोन्स (Thyroid hormones) की अत्यधिक कमी या अनुपस्थिति से उत्पन्न होती है। ऐसे व्यक्ति का कद बौना समान (Dwarf like) होता है। ये देखने में कुबड़े जैसे लगते हैं। इनका सिर बड़ा, गर्दन मोटी पर छोटी एवं आंखों की पलकें भी मोटी होती हैं। इनका यौन विकास एवं संवेगात्मक विकास भी सीमित होता है ऐसे बच्चे की बुद्धि लब्धि 25-27 तक की होती है।

लघुशीर्षता (Microcephaly) एवं दीर्घशीर्षता (Macrocephaly) दो ऐसे मानसिक दुर्बलता हैं जिनका सम्बन्ध कपालीय विसंगति (Cranial anomaly) से होता है। लघुशीर्षता में व्यक्ति का सिर सामान्य से काफी छोटा होता है। ऐसे व्यक्तियों के सिर की परिधि (Circumference) 17 इंच से शायद ही कभी अधिक होता है जबकि सामान्य परिधि लगभग 33 इंच का होता है। ऐसे व्यक्तियों का कद छोटा एवं नाटा होता है परंतु इनकी मांसपेशियों को गठन एवं यौन अंगों का विकास सामान्य होता है। ऐसे बच्चों की बुद्धि लब्धि 25 के लगभग होती है तथा इनका सिर शंकु-आकारिय (Cone-shaped) होता है।

दीर्घशीर्षता (Macrocephaly) में व्यक्ति का सिर जरूरत से ज्यादा बड़ा हो जाता है। इसमें रोगी के मस्तिष्क के आकार (Size) तथा वजन (Weight) में वृद्धि ग्लिया कोशिकाओं (Glial cells) जो मस्तिष्क के ऊतकों (Tissues) का एक समर्थक संरचना (Supporting Structure) होती है, में असामान्य विकास से होता है। इसमें बच्चों में दृष्टि क्षीणता, कम्पन, तथा अन्य स्नायविक लक्षण भी देखने को मिलते हैं। ऐसे बच्चों की मानसिक दुर्बलता का लक्षण काफी गंभीर होता है।

जलशीर्षता (Hydrocephaly) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जिसमें व्यक्ति के मस्तिष्क में एक प्रकार का जलद्रव (Fluid) जिसे सेरेब्रो-स्पाइनल द्रव कहा जाता है, अत्यधिक मात्रा में जमा हो जाता है जिससे मस्तिष्क का आकार बड़ा हो जाता है। मस्तिष्क के फैलाव के कारण मस्तिष्कीय कोशिकाएं काफी पतली हो जाती हैं और शिशु या व्यक्तियों में मानसिक दुर्बलता उत्पन्न हो जाती है।

टर्नर संलक्षण (Turner's syndrome) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जो सिर्फ बालिकाओं में पायी जाती है। इस तरह के बालिकाओं की गर्दन छोटी एवं झुकी होती है तथा इनमें लैंगिक अपरिपक्वता भी पायी जाती है। इनकी बुद्धिलब्धि 30-40 के लगभग होती है। इस तरह के मानसिक दुर्बलता का कारण यौन गुणसूत्र (Sex chromosomes) में गड़बड़ी होती है क्योंकि ऐसी बालिकाओं में सिर्फ एक ही एक्स (XO) पाया जाता है।

क्लाइनफेल्टर संलक्षण (Klinefelter's syndrome) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जो यौन गुणसूत्र में उत्पन्न विसंगति से होता है तथा यह सिर्फ बालकों में पाया जाता है। ऐसे बालकों में सामान्य यौन गुणसूत्र XY न होकर XXY होता है अर्थात् एक एक्स अतिरिक्त होता है। इनकी बुद्धिलब्धि 35-40 के बीच होती है तथा इनमें यौन ग्रन्थि अपरिपक्व होते हैं।

दुर्बल एक्स सिंड्रोम (Fragile X syndrome) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जिसमें यौन गुणसूत्र अर्थात् 23वें युग्म के गुणसूत्र का कमजोर होता है। इस संलक्षण की गंभीरता पुरुषों में महिलाओं की अपेक्षा अधिक होता है क्योंकि पुरुषों में 23वें गुणसूत्र में एक ही X होता है जबकि महिलाओं के इस गुणसूत्र में दो X होते हैं। एक एक्स के दुर्बल होने पर भी दूसरा X की सक्रियता से काम चल जाता है।

विलियम्स सिंड्रोम (Williams syndrome) : मानसिक दुर्बलता का एक विरल प्रकार है। इस संलक्षण की उत्पत्ति का कारण गुणसूत्र संख्या सात पर एक जीन (Gene) के विलोपित (Delete) होना होता है। ऐसे बच्चे शब्दावली एवं व्याकरण से संबद्ध कौशल तो दिलखाते ही हैं परंतु भाषा के अन्य पहलुओं पर काफी पिछड़े रह जाते हैं। ऐसे बच्चों को 'चिन्तन के सापेक्ष अनुपस्थिति में भाषा' (Language in relative absence of thought) वाला बच्चा भी कहा गया है।

प्रेडर-विल्ली सिंड्रोम (Prader-willi syndrome) : एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जिसका कारण 15वें गुणसूची में कुछ जननिक तथ्यों (Genetic material) की पर्याप्त कमी होती है। इनका शारीरिक कद नाटा होता है तथा ऐसे बच्चे विरोधात्मक व्यवहार अधिक करते पाये जाते हैं। इनकी मानसिक दुर्बलता का स्तर साधारण (Moderate) होता है।

मनोभ्रंश (Dementia) एक प्रमुख संज्ञानात्मक विकृति (Cognitive disorder) है जिसमें स्मृति, चिन्तन, तर्कण तथा एकाग्रता (Concentration) का समग्र क्षति होता है तथा जो इतना गंभीर होता है कि इससे घर या कार्य पर के व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के कार्य बाधित होते हैं। मनोभ्रंश कई कारणों से होता है जिसमें मेडिकल कारण या रोग अधिक महत्वपूर्ण है। मनोभ्रंश के कारण एचआईवी (HIV) से ग्रस्त होना, पिक रोग (Pick disease) का होना, लीवी बॉडी मनोभ्रंश (Lewy body dementia), परकिन्सन रोग (Parkinson's diseases), हटिंगटन रोग तथा क्रेट्ज़फेल्ड-जैकोब रोग (Creutzfeldt-Jakob disease) प्रधान है।

एचआईवी (HIV) वायरस से व्यक्ति में एड्स (AIDS) होता है और फिर उससे मनोभ्रंश के लक्षण यथा संज्ञानात्मक मंदी, दोषपूर्ण अवधान तथा स्मृति हास (Memory loss) आदि होते हैं। एचआईवी से उत्पन्न मनोभ्रंश को सबकॉर्टिकल मनोभ्रंश (Subcortical dementia) भी कहा जाता है।

पिक रोग (Pick disease) एक तरह का पुरोगामी हासी (Degenerative dementia) रोग है जिसमें अल्झीमर रोग के समान ही कॉर्टिकल मनोभ्रंश (Cortical dementia) के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

● बोलने की असमर्थता को एनेपिया (Anepia) कहा जाता है।

● **लीवी बॉडी मनोभ्रंश (Lewy body dementia)** एक अन्य हासी मनोभ्रंश (Degenerative dementia) है। इसमें व्यक्ति में असामान्य प्रोटीन जमा हो जाते हैं जिसे लीवी बॉडी (Lewy body) जलाता है और यह मस्तिष्कीय स्तंभ (Brain stem) के भीतर तथा कॉर्टेक्स के न्यूरोन्स में विकार (Degeneration) उत्पन्न कर देता है जिसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति में मनोभ्रंश के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

पारकिन्सन रोग (Parkinson disease) : पारकिन्सन रोग में विशेष तरह के पेशीय लक्षण (Motor symptoms) देखने को मिलता है। ऐसे रोगियों में चूँकि डोपामाइन नामक न्यूरोट्रांसमीटर की मात्रा कम हो जाती है, अतः इनकी शारीरिक गतियाँ लगभग बन्द हो जाती हैं। इन्हें अपने शारीरिक गति पर नियंत्रण कम हो जाता है। पारकिन्सन रोग के सभी रोगियों में नाभिभ्रंश विकसित नहीं होता है परंतु कुछ रोगियों में मनोभ्रंश विकसित हो जाता है।

अल्ज़ाइमर रोग (Alzheimer's disease) : मनोभ्रम (Dementia) का एक पुरोगामी प्रकार (Progressive form) है जिसमें बौद्धिक क्षमताओं जैसे स्मृति, निर्णय, अमूर्त चिंतन (Abstract thinking) तथा अन्य उच्च स्तरीय मस्तिष्कीय कार्य तथा साथ ही व्यवहार एवं व्यक्तित्व में क्रमिक ह्रास होता है। सामान्यतः यह रोग 65 वर्ष की आयु के बाद पैर पसारता है परंतु कभी-कभी 50 साल के पहले भी इसके लक्षण दिखने लगते हैं। नवीनतम शोधों से यह भी पता चला है कि इस रोग का आधार कुछ आनुवंशिक भी होता है।

हंटिंगटन रोग (Huntington's disease) : इस से उत्पन्न मनोभ्रंश में प्रगामी सर्वकार्टिकल ह्रास (Progressive subcortical degeneration) होता है जिससे रोगी में पेशीय क्षुब्धता (Motor disturbances) उत्पन्न हो जाता है। इस रोग के लक्षणों में आनन विकृति, मांसपेशियों में फड़कन, अनावश्यक हिचकन (Jerking) आदि प्रमुख हैं।

क्रेट्ज़फ़ेल्ड-जैकोब रोग (Creutzfeldt-Jakob disease) स्मिथ एवं काऊसेन्स (Smith & Cousense, 1996) के अनुसार इसे 'पागल गाय रोग' (Mad cow disease) भी कहा जाता है जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में रोगस्त गाय का मांस खाने से उत्पन्न होता है। पेशीय समन्वय में कमी, स्मृति में तेजी से ह्रास, ध्यान में विचलन तथा व्यवहार में परिवर्तन इसके सामान्य लक्षण हैं।

डायथेसिस-तनाव मॉडल (Diathesis-stress model) असामान्य व्यवहार की व्याख्या करने का एक ऐसा मॉडल है जिसमें असामान्य व्यवहार की व्याख्या डायथेसिस (Diathesis) तथा तनाव (Stress) के रूप में होता है। डायथेसिस से तात्पर्य किसी विकृति या

असामान्य व्यवहार व्यक्ति में उत्पन्न होने की स्वभाव (Disposition) से होता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब व्यक्ति में किसी विशेष तरह की मानसिक विकृति होने की पूर्ववृत्ति होती है और यदि वह व्यक्ति पर्यावरणी कारक अर्थात् विशेष तनाव की स्थिति से गुजरता है और यदि तनाव की वह मात्रा उसके नियंत्रण से बाहर हो जाता है, तो उस व्यक्ति में संबद्ध मानसिक विकृति के उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है इस मॉडल या सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि किसी मानसिक विकृति या असामान्यता के उत्पन्न होने के लिए डायथेसिस (या पूर्ववृत्ति) तथा तनाव दोनों का होना अनिवार्य है।

ट्रोजेन्स वैसा द्रव्य (Substances) है जो प्लासेंटा (Placenta) को पार करके गर्भस्थ शिशु को क्षति पहुंचाता है को टैरेटोजेन्स (Teratogens) कहा जाता है। यह विचारधारा कि मनोदैहिक विकृतियाँ (Psychophysiological disorders) विशेषकर आवश्यक हाईपरटेंशन (Essential hypertension) की उत्पत्ति इसलिए होती है कि व्यक्ति अपना क्रोध या नाराजगी (Resentment) की अभिव्यक्ति नहीं कर पाता है, को एंगर-इन सिद्धान्त (Anger-in theory) कहा जाता है।

एनोसमिया (Anosmia) एक ऐसी विकृति है जिसमें व्यक्ति को सूंघाने के संवेदन की क्षति या कमी हो जाती है यह एक प्रकार का रूपांतर विकृति (Conversion disorder) है। एनोक्सिया (Anoxia) ऑक्सीन की एक ऐसी कमी की अवस्था है जिससे शारीरिक ऊतकों (Bodily tissues) द्वारा सामान्य ढंग से कार्य किया जाना संभव नहीं हो पाता है। एपनिया (Apnea) एक ऐसी विकृति है जिसमें थोड़े समय के लिए व्यक्ति सांस लेने में असमर्थ हो जाता है।

लघु प्रतिक्रियात्मक मनोविक्षिप्ति (Brief reactive psychosis) एक ऐसी विकृति है जिसमें किसी गंभीर क्षुब्ध घटना के बाद व्यक्ति में मनोविक्षिप्ति के लक्षण यथा असंगतता (Incoherence), ढीला-ढाला साहचर्य, व्यामोह (Delusion) एवं विभ्रम (Hallucination) उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे लक्षण कुछ घंटों तक बने होते हैं परंतु किसी भी हालत में वे दो सप्ताह से ज्यादा बने नहीं रहते हैं।

विशेष तथ्य

कम्प्यूटर (Computer) को मस्तिष्क का एक रूपक (Metaphor) मानकर यह कहा जा सकता है कि मानसिक संख्या की उत्पत्ति मस्तिष्क के हार्डवेयर (Hardware) यानी दैहिक तत्वों में या सॉफ्टवेयर (Software) अर्थात् कार्यक्रम (Programmes) में हो सकता है। उसी के अनुसार दो तरह के मानसिक समस्याओं की दो तरह की चिकित्साएँ उपलब्ध हैं—एक जो हार्डवेयर पर बल डालती है और दूसरा जो सॉफ्टवेयर पर बल डालती है। पहले तरह की चिकित्सा को बायोमैडिकल चिकित्सा (Biomedical therapy) या जैविक चिकित्सा (Biological therapy) तथा दूसरे तरह की चिकित्सा को मनोचिकित्सा (Psychotherapy) कहा जाता है।

मनोचिकित्सा (Psychotherapy) सांवेगिक विकृतियों की समस्याओं के लिए उपचार का एक प्रारूप है जिसमें एक प्रशिक्षित व्यक्ति जान-बूझकर रोगी के साथ पेशेवर संबंध इस उद्देश्य से काम करता है कि उसमें धनात्मक व्यक्तित्व वर्द्धन तथा विकास हो, व्यवहार के विक्षुब्ध पैटर्न के मंदित वर्तमान लक्षणों को दूर किया जा सके तथा उसमें परिमार्जन (Modification) किया जा सके।

किसी भी चिकित्सीय प्रक्रिया (Therapeutic process) के चार लक्ष्य (Goals) या कार्य (Task) होते हैं। जो इस प्रकार हैं।

(i) निदान (Diagnosis)—रोगी के बारे में क्या गलत है, की पहचान निदान कहलाता है जो किसी भी चिकित्सीय प्रक्रिया का एक प्रमुख लक्षण है।

(ii) **हेतुकी (Etiology)**—इसमें किसी विकृति के संभावित उद्भव (Probable origin) के कारण का पता लगाया जाता है तथा यह समझने की कोशिश की जाती है उसके लक्षणों द्वारा कौन-कौन से उद्देश्य की पूर्ति की जाती है।

(iii) **पूर्वानुमान (Prognosis)**—उपचार देने या न देने से समस्या का क्या प्रारूप आगे होगा के बारे में आकलन करना ही पूर्वानुमान कहलाता है और किसी भी चिकित्सीय प्रविधि की यह एक प्रमुख लक्षण होता है।

(iv) **उपचार (Treatment)**—किसी समस्या के लक्षणों के स्रोतों को दूर करने के ख्याल से कुछ विशेष तरह के उपचार के लिए सुझाव देना भी चिकित्सीय प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण लक्षण है।

जो चिकित्सा रोगी की समस्याओं का उपचार उसकी जिंदगी की परिस्थितियों में रहकर करते हैं, उसे इनभिभो चिकित्सा (in vivo therapy) कहा जाता है।

मनोचिकित्सा के मुख्य पांच सामान्य प्रकार हैं—

- (i) मनोगतिकी चिकित्सा (Psychodynamic therapy),
- (ii) व्यवहार चिकित्सा (Behaviour therapy),
- (iii) संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive behaviour therapy),
- (iv) मानवतावादी-अनुभवजन्य चिकित्सा (Behaviour therapy), तथा
- (v) सामूहिक चिकित्सा (Group therapy)।

इन पांच सामान्य प्रकार के कई उप प्रकार हैं।

नोरक्रॉस, प्रोचास्का तथा गलाघेर (Norcross, Prochaska & Gallagher, 1989) के एक सर्वे के अनुसार 21% नैदानिक मनोविज्ञानी मनोगत्यात्मक चिकित्सा (Psychodynamic therapy) 16% नैदानिक मनोविज्ञानी व्यवहार चिकित्सा, 13% नैदानिक मनोविज्ञानी संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, 12% मानवतावादी अनुभावतात्मक चिकित्सा, 9% अन्य चिकित्सा तथा 29% मनोवैज्ञानिक ग्रहसंश्लेषण उपागम (Eclectic approach) अर्थात् कई चिकित्सकीय पद्धति को एक साथ मिलाकर एक नया दृष्टिकोण अपनाकर चिकित्सा करने पर अधिक बल डालते हैं।

● सामान्यतः किसी भी चिकित्सा में मूलतः चार पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है—भाव (Affect), व्यवहार (Behaviour), संज्ञान (Cognition) तथा पर्यावरण (Environment)। इसे अंग्रेजी शब्द के प्रथम अक्षरों को मिलाकर ABCE ढांचा या पैमाना कहा जाता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कारसन एवं बुचर (Carson & Butcher, 1999) ने मनोचिकित्सा के चार प्रबल (Dominant) प्रकार बतलाया है जो इस प्रकार हैं—

(i) **टाईप ए चिकित्सा (Type A therapy)**—इस तरह के मनोचिकित्सा में क्लायंट के भाव (Affect) या संवेग तथा चिन्ता (Anxiety) में परिवर्तन लाकर उसका उपचार करने की कोशिश की जाती है। इसके अन्तर्गत फ्रायडियन मनोचिकित्सा, फ्रायडियन मनोचिकित्सा के विभिन्न विकल्प (Alternatives), क्लासिकी

अनुबंधन पर आधारित व्यवहार चिकित्सा एवं फ्लडिंग (Flooding), अंतस्फोट्यात्मक चिकित्सा (Implosive therapy) आदि प्रमुख हैं सभी तरह के जैविक चिकित्साओं को भी इसी के अन्तर्गत रखा जाता है।

(ii) **टाईप बी चिकित्सा (Type B therapy)**—इसके अन्तर्गत उन सभी चिकित्साओं को रखा जाता है जिसका स्पष्ट उद्देश्य रोगी के अपअनुकूली व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है। क्रियाप्रसूत अनुबंधन (Operant conditioning) पर आधारित सभी तरह के व्यवहार चिकित्सा को इसी श्रेणी में रखा जाता है क्योंकि इनका उद्देश्य पुनर्बलन संभाव्यता (Reinforcement contingencies) में जोड़-तोड़ करके रोगी के अनुचित व्यवहार में स्पष्ट ढंग से परिवर्तन लाना होता है।

(iii) **टाईप सी चिकित्सा (Type C therapy)**—इस तरह की चिकित्सा में रोगी के संज्ञान (Cognition) अर्थात् उसके सूझ-बूझ, प्रत्यक्ष, विश्वास आदि में परिवर्तन लाकर उनके उपचार की कोशिश की जाती है। रैसनल इमोटिव चिकित्सा (Rational Emotive therapy), बेन का संज्ञानात्मक चिकित्सा (Beck's cognitive therapy) तथा तनाव-टीका चिकित्सा (Stress-innocation therapy) को इस श्रेणी की चिकित्सा में रखा गया है।

(iv) **टाईप ई चिकित्सा (Type E therapy)**—इस तरह की चिकित्सा में रोगी के माता-पिता, शिक्षक, दोस्त, पड़ोसियों आदि के पर्यावरणी प्रतिक्रियाओं (Environmental reactions) में परिवर्तन करके उसका उपचार करने की कोशिश की जाती है। अन्तर्व्यक्ति चिकित्सा (Interpersonal therapy) तथा सामुदायिक चिकित्सा (Community therapy) को इसी श्रेणी की चिकित्सा में रखा गया है।

● शोमहजिन्म (Shomahnism) एक ऐसी प्रविधि है जिसमें मानसिक रोगों का उपचार, उपचार के तरीकों को प्रेतात्माओं (Spirit) की दुनिया में विश्वास के साथ जोड़कर किया जाता है। इस ढंग का पौराणिक विधि का उपचार आज भी कुछ जनजातीय अमेरिकन संस्कृतियों में होता है।

● **मनोविश्लेषिक चिकित्सा (Psycho analytic therapy)** : इस का प्रतिपादन फ्रायड द्वारा किया गया। इस प्रविधि में चिकित्सक को मनोविश्लेषक (Psychoanalyst) या संक्षेप में विश्लेषक (Analyst) कहा जाता है। इस प्रविधि में रोगी के अचेतन में संयोजित द्वन्द्व, संघर्ष तथा अनैतिक इच्छाओं के बारे में स्वतंत्र साहचर्य (Free association) तथा स्वप्न विश्लेषण की प्रविधियों द्वारा जाना जाता है ताकि फिर ऐसे अध्ययनों से उत्पन्न मानसिक संघर्ष या द्वन्द्व में सूझ उत्पन्न करने की कोशिश की जाती है ताकि रोगी अपनी समस्या की अर्थहीनता को स्वयं समझ लें और तब उससे अपने आप ही उसे छुटकारा मिल जाता है।

● **मनोविश्लेषिक चिकित्सा में स्थानान्तरण (Transference)** की घटना काफी महत्वपूर्ण है। अक्सर यह देखा गया है कि रोगी अपने गत जिन्दगी में जैसी शिक्षक, माता-पिता या दोनों के प्रति मनोवृत्ति बनाकर रखा होता है, वैसी ही मनोवृत्ति वह चिकित्सक के प्रति भी

विकसित कर लेता है। इसे **स्थानान्तरण (Transference)** की संज्ञा दी जाती है जो सामान्यतः तीन प्रकार का होता है—

- धनात्मक स्थानान्तरण (Positive transference) जिसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपने स्नेह एवं प्रेम की प्रतिक्रियाओं को दिखलाता है,

- ऋणात्मक स्थानान्तरण (Negative transference) जिसमें रोगी विश्लेषक के प्रति अपनी घृणा एवं संवेगात्मक विलंगव की प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति करता है तथा

- प्रति स्थानान्तरण (Counter transference) जिसमें विश्लेषक ही रोगी के प्रति स्नेह, प्रेम एवं संवेगात्मक लगाव दिखलाता है।

- स्थानान्तरण तंत्रिकाताप (Transference neurosis) एक ऐसा तंत्रिकाताप (Neurosis) है जिसमें रोगी को संतुष्टि अपने लिबिडिनल निवेश (Libidinal investment) को उचित से अनुचित (Inappropriate) वस्तु या व्यक्ति पर अंतरित करने से प्राप्त होता है। मनोविश्लेषिक चिकित्सा (Psychanalytic therapy) में मनोविश्लेषक सचमुच में अनुचित वस्तु की जगह प्राप्त कर लेते हैं।

- मनोविश्लेषिक चिकित्सा का सामान्य दोष यह बतलाया गया है कि इसके द्वारा उपचार में समय अधिक लगता है, खर्च भी अधिक होता है तथा साथ-ही-साथ इसके द्वारा गंभीर प्रकृति के मानसिक रोगों का उपचार संभव नहीं हो पाता है।

- मनोविश्लेषिक चिकित्सा (Psychoanalysis therapy) को 'बातचीत से चंगा होना' (Talking cure) भी कहा जाता है।

आधुनिक समय में मनोविश्लेषिक चिकित्सा के कई विकल्प (Alternatives) उपलब्ध हैं जिनमें एडलर का वैयक्तिक चिकित्सा (Adler's individual therapy) युग का विश्लेषणात्मक चिकित्सा, अहं-विश्लेषिक चिकित्सा (Ego analytic) तथा अन्तर्वैयक्तिक मनोगत्यात्मक चिकित्सा (Interpersonal psychodynamic therapy) प्रमुख हैं।

व्यवहार चिकित्सा (Behaviour therapy)

मनोचिकित्सा की ऐसी प्रविधि है जिसमें मानसिक रोगों का उपचार कुछ ऐसी प्रविधियों से किया जाता है जिसका आधार अनुबंधन (Conditioning) के क्षेत्र में विशेषकर पैवलव तथ्य स्कीनर (Skinner) द्वारा तथा संज्ञानात्मक सीखना के क्षेत्र में किये गए प्रमुख सिद्धान्त एवं नियम होते हैं। व्यवहार चिकित्सा के बदले में कभी-कभी व्यवहार परिमार्जन (Behaviour modifications) पद का उपयोग किया जाता है परंतु इन दोनों में मनोवैज्ञानिकों द्वारा कुछ अंतर किया गया है। जिन मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यवहार चिकित्सा का आधार स्कीनर द्वारा बतलाये गये नियम का सिद्धान्त होते हैं; वे व्यवहार परिमार्जन (Behaviour modifications) पद का अधिक उपयोग करते हैं जबकि जिन मनोवैज्ञानिकों द्वारा इसा तरह के चिकित्सा का आधार सामाजिक सीखना (Social Learning) तथा/या संज्ञानात्मक सीखना होता है तो वे व्यवहार चिकित्सा पद का अधिक उपयोग करते हैं।

विशेष तथ्य

व्यवहार चिकित्सा की कई प्रविधियाँ हैं जिनमें प्रमुख हैं—क्रमबद्ध असंवेदीकरण (Systematic desensitization), विरुचि चिकित्सा (Aversion therapy), अन्तः स्फोटक चिकित्सा (Implosive therapy) एवं फ्लडिंग (Flooding), दृढ़ग्राही चिकित्सा (Assertive therapy), प्रासंगिक या संभाव्यता प्रबंधन (Contingency management), मॉडलिंग (Modeling) तथा बायोफीडबैक विधि (Biofeedback method)।

क्रमबद्ध असंवेदीकरण (Systematic desensitization) की प्रविधि का प्रतिपादक साल्टर (Salter, 1943) तथा ओल्प् (Wolpe, 1958) द्वारा किया गया। यह विधि मूलतः चिन्ता कम करने की एक प्रविधि है जो इस स्पष्ट नियम पर आधारित है कि एक ही समय में व्यक्ति चिन्ता तथा विश्राम दोनों की अवस्था में एक साथ नहीं हो सकता है। इसमें रोगी को पहले विश्राम की अवस्था में होने का प्रशिक्षण दिया जाता है और जब वह विश्राम की अवस्था में होता है तो उसमें चिन्ता उत्पन्न करने वाले उद्दीपकों के बढ़ते क्रम में दिया जाता है। अन्ततोगत्वा रोगी चिन्ता उत्पन्न करने वाले उद्दीपकों के प्रति असंवेदित हो जाता है क्योंकि रोगी उन्हें विश्राम की अवस्था में ग्रहण करने की अनुभूति प्राप्त कर चुका होता है।

यह विधि प्रति-अनुबंधन के नियमों (Principles of counter conditioning) पर आधारित होता है। चिन्ता के जगह पर विश्राम (Relaxation) का प्रतिस्थापन प्रति-अनुबंधन का उदाहरण है। इस विधि में विश्राम का प्रशिक्षण देने में क्रमिक विश्राम प्रशिक्षण (Progressive relaxation training) जिसे जैकोबसन द्वारा 1938 में प्रतिपादित किया गया था, का उपयोग किया जाता है। दुर्भीति (Phobia) के रोगियों के उपचार में इस विधि की उपयोगिता काफी सिद्ध हुई है।

विरुचि चिकित्सा (Aversive therapy)

व्यवहार चिकित्सा की एक ऐसी विधि है जिसमें चिकित्सक रोगी की अवांछित व्यवहार (Unwanted behaviour) न करने का प्रशिक्षण कुछ दर्दनाक (Painful) या असुखद उद्दीपकों को देकर करता है। इस तरह की प्रविधि में चिन्ता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या उद्दीपक के प्रति रोगी में एक तरह की विरुचि पैदा कर दी जाती है जिससे उससे उत्पन्न होने वाला अवांछित या कुसमायोजित व्यवहार अपने आप धीरे-धीरे बंद हो जाता है। रोगी में विरुचि उत्पन्न करने के लिए दंड (Punishment), बिजली का हल्का आघात, कुछ विशेष दवा (Drug) आदि का उपयोग किया जाता है। एक रूसी मनोचिकित्सक जिसका नाम कैंटोरोविच (Kantorovich, 1930) है, पहले ऐसे वैज्ञानिक है जिन्होंने वैज्ञानिक तरीके से इसका उपयोग मद्यपानता (Alcoholism) से ग्रसित रोगियों की चिकित्सा में किया था।

दृढ़ग्राही चिकित्सा या प्रशिक्षण (Assertiveness therapy or training)

एक ऐसी प्रविधि है जिसका उपयोग उन व्यक्तियों के उपचार के लिए किया जाता है जिन्हें अनुबंधित चिन्ता अनुक्रियाओं के कारण अन्य लोगों के साथ अन्तर्व्यक्तिक संबंध (Interpersonal relationship) कायम करने में असमर्थता महसूस होती है। इस तरह की चिकित्सा में ऐसे लोगों को दूसरों पर प्रभाव डालने का प्रशिक्षण देकर आत्म-सम्मान को ऊँचा उठाया जाता है। दूसरे शब्दों में, ऐसे लोगों में निश्चयात्मकता (Assertiveness) के गुण को मजबूत किया जाता है।

प्रसंभाव्यता प्रबंधन (Contingency management)

एक सामान्य पद है जिसके अन्तर्गत उन सभी चिकित्सीय प्रविधियों को रखा जाता है जो क्रियाप्रसूत अनुबंधन (Operant conditioning) के नियमों का उपयोग करते हुए व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन, परिणामों (Consequences) को नियंत्रित करके किया जाता है। सचमुच में किसी अनुक्रिया की आवृत्ति को परिवर्तित करने के ख्याल से उस अनुक्रिया के परिणाम में किया गया जोड़-तोड़ को संभाव्यता प्रबंधन कहा जाता है। इसके तहत कई चिकित्सा विधियों को रखा गया है जिनमें प्रमुख हैं—

(i) **शेपिंग (Shaping)**—इस प्रविधि में व्यक्ति में पहले एक वांछित व्यवहार वैसे व्यवहार को पुनर्बलित करके विकसित किया जाता है जो उस वांछित व्यवहार के सन्निकट होता है। फिर धीरे-धीरे उसी व्यवहार को चयनात्मक रूप से पुनर्बलित किया जाता है जो वांछित व्यवहार के बिल्कुल समान होता है और इस तरह से अन्तिम वांछित व्यवहार व्यक्ति सफलतापूर्वक करने में सफल हो जाता है। इस प्रविधि को कभी-कभी आनुक्रमिक सन्निकटन (Successive approximation) की विधि भी कही जाती है।

(ii) **अलगाव (Alienation)**—इस प्रविधि में अवांछित व्यवहार की आवृत्ति में कभी व्यक्ति को उस परिस्थिति से दूर करके या हटा करके किया जाता है जिसमें उस व्यवहार को करने के लिए पर्याप्त पुनर्बलक (Reinforcer) मौजूद होते हैं। जैसे, एक बच्चा जो वर्ग में अक्सर अनुशासनहीनता व्यवहार करता है, उसे वर्ग से हटाकर उसके अनुशासनहीन व्यवहार को कम किया जा सकता है।

(iii) **अनुक्रिया लागत (Response cost)**—अनुक्रिया लागत की प्रविधि एक तरह से दंड संभाव्यता (Punishment contingency) है जिसमें व्यक्ति को अवांछित व्यवहार करने पर मिलने वाला पुरस्कार से हाथ धोना पड़ता है या देय सुविधा को हटा लिया जाता है यातायात एवं पार्किंग नियम को तोड़ने पर किया जाने वाला आर्थिक दंड अनुक्रिया लागत का उत्तम उदाहरण है। उसी तरह से शराब पीने पर किसी बच्चा को दूरदर्शन कार्यक्रम देखने से वंचित करना भी अनुक्रिया लागत का एक उदाहरण होगा।

(iv) **प्रीमैक नियम (Premack principle)**—इस प्रविधि में वांछित व्यवहार को व्यक्ति को उससे अधिक आकर्षक व्यवहार करने की छुट देकर पुनर्बलित किया जाता है। जैसे, जब किसी बच्चों को यह कहा जाता है कि उसे संगीत का पाठ पूजा करने पर ही खेलने की अनुमति दी जायेगी तो यह प्रीमैक नियम का एक उत्तम उदाहरण होगा। उसे ग्रैंडमा नियम (Grandma rule) भी कहा जाता है।

(v) **सांकेतिक आर्थिक प्रोत्साहन (Token economy)**—सांकेतिक व्यवस्था एक ऐसी प्रविधि है जिसमें कुसमायोजित व्यवहार को दूर करने के लिए रोगी को उपयुक्त व्यवहार करना कुछ संकेत के रूप में ठोस पुनर्बलन (Tangible reinforcer) देकर सिखाया जाता है। बाद में रोगी अपनी इच्छानुसार उस संकेत को देकर वांछित वस्तु या सुविधा या लाभ प्राप्त कर सकता है। इस तरह से संकेत (Token) यहां एक तरह से मुद्रा के रूप में कार्य करता है।

(vi) **मॉडलिंग (Modeling)** एक ऐसी प्रविधि है जो प्रेक्षणात्मक सीखना (Observational learning) पर आधारित है। इस प्रविधि में रोगी दूसरे व्यक्ति जैसे माता-पिता या चिकित्सक को एक खास व्यवहार करते देखता है तथा साथ-ही-साथ उस व्यवहार से मिलने वाले परिणामों से भी अवगत होता है। इस तरह के प्रेक्षण के आधार पर रोगी खुद भी वैसे व्यवहार करना सीख लेता है। इस प्रविधि को सर्प दुर्भीति (Snake Phobia) के उपचार में काफी प्रयोग किया गया है।

बायोफीडबैक विधि (Biofeedback method)

इसमें व्यक्ति अपने आन्तरिक एवं स्वायत्त अनुक्रियाओं (Autonomic responses) का नियंत्रण व्यवहारपरक विधियों (Behavioural methods) से करता है। इस प्रविधि में विशेष वैद्युत उपकरण के सहारे रोगी को अपनी शारीरिक क्रियाओं के बारे में सूचना प्रदान की जाती है। ऐसी शारीरिक क्रियाओं में मूलतः अनैच्छिक क्रियाओं जैसे हृदय की गति, रक्तचाप, त्वचा का तापक्रम, मस्तिष्कीय तरंग (Brain waves) तथा अन्य संबंधित कार्य जिनका संचालन मूलतः स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic nervous system) से होता है, प्रधान होते हैं। इस अनैच्छिक क्रियाओं में परिवर्तन लाने

का प्रशिक्षण देकर रोगी के कुसमायोजित व्यवहार को दूर करके उसके जगह पर समायोजित व्यवहार (Adaptive Behaviour) को सिखाया जाता है।

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive Behaviour Therapy or CBT)

एक ऐसी चिकित्सा प्रविधि है जिसमें मानसिक रोग का कारण संज्ञान या चिन्तन माना जाता है तथा विभिन्न तरह की प्रविधियों को अपनाकर रोगी का संज्ञानात्मक पुनर्संरचना (Cognitive restructuring) किया जाता है ताकि रोगी गलत चिन्तन तथा विश्वास का त्याग करके उसके जगह पर उपयुक्त चिन्तन एवं विश्वास विकसित करने समायोजी व्यवहार करने में सफल हो पाता है। संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा

में कई प्रविधियों का उपयोग किया जाता है जिसमें प्रमुख हैं : रैसनल-इमोटिव चिकित्सा (Rational Emotive Therapy or RET), बेक का संज्ञानात्मक चिकित्सा (Beck's Cognitive therapy), तनाव टीका चिकित्सा (Stress-inoculation Therapy), सामाजिक समस्या समाधान (Social-problem solving) तथा बहुआयामी चिकित्सा (Multimodel therapy)।

रैसनल-इमोटिव चिकित्सा (RET)

इसका प्रतिपादन इलिस (Ellis, 1958, 1975) द्वारा किया गया। यह चिकित्सा पद्धति एबीसी मॉडल (ABC model) अर्थात्, भाव (Affect), व्यवहार (Behaviour), तथा संज्ञान (Cognition) मॉडल पर आधारित है। इस चिकित्सा विधि में चिकित्सक पहले रोगी के अविवेकपूर्ण व्यवहार, अतर्कसंगत विचार एवं विश्वासों की खोजबीन करता है जिसे वह वर्षों से स्वीकार किये होता है और जिसके परिणामस्वरूप उसका व्यवहार कुसमायोजित हो गया होता है। चिकित्सक रोगी के मन में ऐसे विश्वासों को हटाकर उसमें नया विश्वास एवं संज्ञान विकसित करता है ताकि वह फिर से समायोजित या अनुकूलित व्यवहार करने लगे।

बहुआयामी चिकित्सा

(Multi Dimensional therapy-MDT)

इसका प्रतिपादन लेजारस (Lazarus, 1973, 1989) द्वारा किया गया। लेजारस का मत है कि कोई भी व्यक्ति सात विभिन्न आयामों का संग्रहण करता है—व्यवहार, भावात्मक प्रक्रियाएं (Affective processes), संवेदन (Sensation), प्रतिमा (Images), संज्ञान (Cognition), अन्तर्वैयक्तिक संबंध (Interpersonal relationship) तथा औषध (Drugs)। इन सातों को संक्षेप में लेजारस ने BASIC-ID कहा है। लेजारस की इस चिकित्सा पद्धति की मान्यता यह है कि एक प्रभावी चिकित्सक को इन सातों या उनमें से कुछ क्षेत्रों की समस्याओं की पहचान कर उसके उपयुक्त चिकित्सा पद्धति का उपयोग करना चाहिए। इन समस्याओं की पहचान करके यहां चिकित्सक उन्हें एक खास क्रम में सुव्यवस्थित करता है और तब प्रत्येक समस्या का समाधान के लिए उपयुक्त चिकित्सीय विधि को अपनाया जाता है।

मानवतावादी-अनुभवात्मक चिकित्सा

(Humanistic Experiential therapy)

मानव व्यवहार का मुख्य आधार चेतन अनुभूति माना गया है। इसमें व्यक्ति को सर्वनात्मक तथा उत्तरोत्तर आगे बढ़ने वाला प्राणी माना जाता है जो अन्य बातें समान रहने पर, अपने भीतर छिपे अन्तः शक्ति का अनुभव करके अपने व्यवहार का चेतन रूप से मार्गदर्शन भी करते हैं। जब उसके इस समझ में गड़बड़ी उत्पन्न होती है या उसके अस्तित्व पर प्रतिबंध लगता है, तो व्यक्ति में असामान्य व्यवहार की उत्पत्ति होती है। इस चिकित्सा पद्धति में मुख्य रूप से चार तरह की चिकित्साओं को सम्मिलित किया गया है—क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा, गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt therapy), लोगोसेंट्रिक चिकित्सा (Logo therapy) तथा अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existential therapy)।

(1) क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (Client centered therapy)

इसका प्रतिपादक कार्ल रोजर्स (Carl Rogers) द्वारा किया गया। इसे व्यक्ति केन्द्रित चिकित्सा (Person centered therapy) या अनिर्देशित चिकित्सा (Non-directive therapy) भी कहा जाता है। इस चिकित्सा विधि में रोजर्स ने रोगी के लिए क्लायंट (Client) तथा चिकित्सक (Therapist) के लिए सलाहकार (Counsellor) शब्द का उपयोग किया है। इस तरह की चिकित्सा का उद्देश्य क्लायंट में ऐसी नयी अनुभूति पैदा करना होता है जिससे वर्द्धन (Growth) प्रक्रिया का पुनर्चलन (Restart) हो सके। सचमुच में इसमें एक ऐसी अन्तर्वैयक्तिक संबंध (Interpersonal relationship) को उत्पन्न किया जाता है जिसका उपयोग व्यक्तिगत वर्द्धन के लिए क्लायंट आगे करता है। रोजर्स के अनुसार इस तरह का वर्द्धन उत्पन्न करने वाला संबंध की उत्पत्ति के लिए चिकित्सक में अन्य बातों के अलावा तीन गुणों अर्थात् शर्तहीन धनात्मक सम्मान (Unconditional positive regard), परानुभूति (empathy) तथा संगतता (Congruence) का होना अनिवार्य है। इस चिकित्सा पद्धति का दोष यह है कि इसके द्वारा गंभीर मानसिक रोगों की चिकित्सा संभव नहीं हो पाती है।

(2) गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt therapy)

इसका प्रतिपादन फ्रेडरिक एस. फ्रिज पर्स (Fredrick S. Fritz Perls, 1967, 1970) द्वारा किया गया। इस चिकित्सा में मन तथा शरीर की एकता (Unity) पर बल डाला जाता है जिसमें चिन्तन, भाव तथा क्रिया के समन्वयन (Integration) की आवश्यकता को सर्वोपरि समझा जाता है। पर्स के अनुसार क्लायंट के वास्तविक जिन्दगी को उन्नत बनाने एवं चिकित्सा में विकास के लिए यह आवश्यक है कि रोगी को वर्तमान अनुभूतियों में जानकारी बढ़े तथा उसमें अपने कार्यों के लिए उत्तरदायित्व को समझने की तत्परता बढ़े। इस तरह से गेस्टाल्ट चिकित्सा के तीन महत्वपूर्ण संप्रत्यय हैं जो इस प्रकार हैं—वर्तमान की अनुभूतियाँ, जानकारी (Awareness) तथा उत्तरदायित्व (Responsibility)।

(3) लोगोसेंट्रिक चिकित्सा (Logocentric therapy)

यह प्रविधि विक्टर फ्रैंकल (Victor Frankl, 1963, 1967) द्वारा किया गया। इस तरह की चिकित्सा में व्यक्ति की जिन्दगी में अर्थहीनता के भाव से उत्पन्न होने वाली समस्याओं एवं चिन्ताओं को दूर करने की कोशिश की जाती है। दूसरे शब्दों में, इस तरह की चिकित्सा का संबंध व्यक्ति के अस्तित्ववादी समस्याओं (Existential problems) को दूर करना होता है क्योंकि ऐसी समस्याएं आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक तथ्य उत्पन्न करती हैं। इस तरह की चिकित्सा में रोगी के गत जिन्दगी की ऐतिहासिक पुनर्संरचना पर बल न डालकर उसके समकालीन आध्यात्मिक समस्याओं और उसके भविष्य या आगे के आशय को समझने पर बल डाला जाता है। फ्रैंकल (Frankl) के अनुसार व्यक्ति का सेसब प्रमुख अभिप्रेरक 'सार्थक होने-की-इच्छा' (Will-to-meaning) होता है जो आत्म-सिद्धि (Self-actualization) की आवश्यकता से अधिक प्रबल होता है। फ्रैंकल के अनुसार जब व्यक्ति में कुंठा की मात्रा अत्यधिक हो जाती है और इस पर व्यक्ति का नियंत्रण नहीं रह

जाता है तो उससे स्नायुविकृत लक्षणों (Neurotic symptoms) की उत्पत्ति होती है जिसे फैंकल ने न्यूरोजेनिक स्नायुविकृत (Neurogenic neurosis) कहा है।

(4) अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existential therapy) इसके प्रमुख समर्थक बिन्सवैनर (Binswanger, 1942) तथा एंजिल एवं उलेन वर्गर (May, Angel & Ellenberger, 1958) हैं। यद्यपि इस चिकित्सा विधि में रोगी के उपचार या चिकित्सा में कोई निश्चित कार्य-विधि तो अपनायी नहीं जाती है परंतु इसमें प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिकता (Individuality) तथा उसके मूल्यों एवं भावों को समझकर रोगी के स्वास्थ्य अस्तित्व के लिए एक माहौल तैयार किया जाता है।

सामूहिक चिकित्सा (Group therapy)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, वैसी चिकित्सा पद्धति को कहा जाता है जिसमें एक साथ कई रोगियों का उपचार किया जाता है। दूसरे शब्दों में, रोगियों का उपचार इसमें एक समूह (Group) में किया जाता है। रोगियों का यह समूह संबंधित व्यक्तियों का या असंबंधित व्यक्तियों का भी हो सकता है। जब यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का होता है तो उसे सामूहिक चिकित्सा (Group therapy) परन्तु जब वह समूह संबंधित व्यक्तियों का होता है तो उसे पारिवारिक चिकित्सा (Family therapy) तथा वैवाहिक चिकित्सा (Marital therapy) कहा जाता है।

यालोम (Yalom, 1975) ने ग्यारह ऐसे कारकों की पहचान किया है जो सामूहिक चिकित्सा के सारतत्त्व की ओर इशारा करता

है। इन तत्वों के होने से सामूहिक चिकित्सा की प्रभावशीलता काफी बढ़ जाती है। इन ग्यारह तत्वों को उपचारी कारक (Curative factors) कहा गया है :

ये कारक हैं—प्रत्याशा (Hope), सूचना प्रदान करना (Imparting information), सार्विकता (Universality), परोपकारिता (Altruism), सामाजिक कौशल का विकास (Development of social skills), अनुकरणशील व्यवहार (Initiative behaviour), प्राथमिक पारिवारिक समूह के सुधारात्मक सार (Corrective recapitulation of Primary family, group), अन्तर्वैयक्तिक सीखना (Interpersonal learning), समूह जुड़ाव (Group cohesiveness), विरेचन (Catharsis) तथा अस्तित्ववादी कारक (Existential factors)।

मनोनाटक (Psychodrama)

सामूहिक चिकित्सा का एक प्रमुख प्रकार है जिसे मनोविश्लेषणात्मक समूह चिकित्सा मॉडल के तहत रखा गया है। मनोनाटक का प्रतिपादन मोरेनो (Moreno, 1946, 1959) द्वारा किया गया। इस विधि में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्षों (Mental conflicts) को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता है ताकि उससे संबंधित समायोजन की कठिनाइयों से वह अवगत हो सके। इसके लिए एक नाटकीय परिस्थिति तैयार की जाती है जिसमें रोगी के अलावा अन्य कई लोग होते हैं तथा जिनकी मदद से रोगी किसी भूमिका का अभिनय करता है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- मिर्गी (Epilepsy) एक—
 - (1) शारीरिक रोग है।
 - (2) मानसिक रोग है।
 - (3) उपर्युक्त दोनों है।
 - (4) मनोभौतिकी (Psychophysical) है।
- मनोदैहिक विकारों (Psychosomatic Disorders) में सामान्यतः कारण
 - (1) शारीरिक होते हैं पर रोग मानसिक होता है।
 - (2) मानसिक होते हैं पर रोग शारीरिक होता है।
 - (3) शारीरिक होते हैं एवं रोग भी मानसिक होता है।
 - (4) मानसिक होते हैं एवं रोग भी मानसिक होता है।
- जिस व्यक्ति में नैतिक चेतना एवं उत्तरदायित्व का अभाव होता है परंतु वह असामाजिक होता है, उसे कहते हैं :
 - (1) उन्मादित (Hysteric)
 - (2) मनोविकारी व्यक्तित्व (Psychopathic Personality)
 - (3) अकारण भयग्रस्त (Phobic)
 - (4) बाल अपराधी (Delinquent)
- निम्नांकित में से किसकी भूमिका मनोदशा विकृति (mood disorder) में महत्वपूर्ण समझा जाता है?
 - (1) नोरड्रेफ़ाइन (Norepinephrine)
 - (2) एस्ट्रोजेन्स (Estrogens)
 - (3) प्रोजेस्ट्रोन (Progesterone)
 - (4) एसिटिलकोलाइन (Acetylcholine)
- टर्नर संलक्षण (Turner's Syndrome) मानसिक दुर्बलता (Mental Deficiency) का एक ऐसा नैदानिक प्रकार है, जो—
 - (1) सिर्फ स्त्रियों में पाया जाता है।
 - (2) सिर्फ मर्दों में पाया जाता है।
 - (3) दोनों लिंग के व्यक्तियों में पाया जाता है।
 - (4) सिर्फ वनमानुष में पाया जाता है।
- बौनापन (Cretinism) एक ऐसी मानसिक दुर्बलता (Mental Deficiency) का प्रकार है जिसमें—
 - (1) पीयूष ग्रन्थि (Pituitary Gland) से अधिक स्राव निकलता है।

- (2) पीयूष ग्रन्थि के कम स्राव निकलता है।
- (3) थायरॉयड ग्रन्थि (Thyroid Gland) से अधिक स्राव निकलता है।
- (4) थायरॉयड ग्रन्थि से कम स्राव निकलता है।
7. पीकेयू (PKU) मानसिक दुर्बलता का एक ऐसा प्रकार है जिसका संबंध—
 - (1) प्रोटीन चपाचपय (Protein Metabolism) की गड़बड़ी से होता है।
 - (2) वसा चयापचय (Fat Metabolism) की गड़बड़ी से होती है।
 - (3) अन्तःस्रावी ग्रन्थियों (Endocrine Gland) विशेषकर थायरॉयड ग्रन्थि (Thyroid Gland) के स्राव में कमी से होता है।
 - (4) इनमें से किसी भी के साथ नहीं होता है।
8. क्रमबद्ध असंवेदीकरण (Systematic Desensitization) प्रविधि किसके द्वारा विकसित की गयी?
 - (1) स्कीनर (Skinner)
 - (2) वाटसन (Watson)
 - (3) रोजर्स (Rogers)
 - (4) वोल्पे (Wolpe)
9. समूह चिकित्सा (Group Therapy) के पक्ष में सबसे उपर्युक्त तर्क यह है कि
 - (1) कई लोगों की चिकित्सा एक साथ संभव है।
 - (2) इसमें समय एवं श्रम की बचत होती है।
 - (3) मनोचिकित्सकों (psychotherapists) की कमी पूरी हो जाती है।
 - (4) रोगियों के अन्तर्व्यक्तिक संबंधों (Personal Relationship) में सुधार होता है।
10. निम्नलिखित में से कौन-एक सुरक्षा प्रक्रम (Defence Mechanism) नहीं है?
 - (1) द्वन्द्व (Conflict)
 - (2) दमन (Repression)
 - (3) यौक्तिकीकरण (Rationalization)
 - (4) प्रतिगमन (Regression)
11. 'वह व्यक्ति जो सदा यह सोचता है कि हर व्यक्ति उसके विरुद्ध षड़यंत्र कर रहा है', से पीड़ित है—
 - (1) स्थिर व्यामोह
 - (2) आवास्तविक चिंतन
 - (3) जड़िमा से
 - (4) मनोविदालिता से
12. यदि माता-पिता नशा ग्रस्त हो तो गर्भावस्था के दौरान बच्चा पीड़ित होगा—
 - (1) भ्रूण के कुपोषण से
 - (2) गर्भपात से
 - (3) विकलांगता से
 - (4) उपरोक्त सभी
13. श्रवण-बाधिक बच्चे कक्षा में..... ग्रसित होते हैं।
 - (1) अवसाद से
 - (2) कुण्ठा से
 - (3) मिर्गी से
 - (4) तनाव से
14. तनाव जनित चिंता कहलाती है—
 - (1) सांवेगिक दुष्क्रिया
 - (2) सांवेगिक दुश्चिंता
 - (3) स्थिर व्यामोह
 - (4) मनोगामी चिन्ता
15. डिस्लेक्सिया है—
 - (1) पठन विकार
 - (2) लेखन विकार
 - (3) वाचन विकार
 - (4) श्रवण विकार
16. वह अवस्था जो कि माता के 21वें गुणसूत्र जोड़े के अलग न हो पाने के कारण होती है, कहलाती है—
 - (1) डाउन्स सिंड्रोम
 - (2) क्लीनफेल्टर सिंड्रोम
 - (3) टर्नर सिंड्रोम
 - (4) विल्सन सिंड्रोम
17. निम्नलिखित में से किस पद्धति का उपयोग करते हुए हकलाने (Stuttering) की समस्या के निबटा जा सकता है?
 - (1) परिणामकारी वाक्
 - (2) लम्बित वाक्
 - (3) अनुश्रुत वाक्
 - (4) प्रवर्द्धित वाक्
18. गतिक कौशलों में अधिगम निर्योग्यता..... कहलाती है।
 - (1) डिस्फ्रेजिया
 - (2) डिस्प्रेक्सिया
 - (3) डिस्कैल्कुलिया
 - (4) डिस्लेक्सिया
19. निम्नलिखित में से कौन-सा विकासात्मक विकार का उदाहरण नहीं है?
 - (1) आत्मविमोह
 - (2) प्रमस्तिष्क
 - (3) पर-अभिघातज तनाव
 - (4) न्यून अवधान सक्रिय विकार
20. आंख के रंग को कौन-सा कारक प्रभावित करता है?
 - (1) वातावरण
 - (2) आनुवंशिकता
 - (3) हॉर्मोन
 - (4) समाज

21. सेरिब्रल पाल्सी रोग का स्थानीय नाम है—

- (1) अस्थमा
- (2) मंदता
- (3) लकवा (पक्षाघात)
- (4) इनमें से कोई नहीं

22. कॉलिसिस्टोकाइनिन एक हॉर्मोन है, जिसकी सुई यदि दे दी जाए तो इससे प्राणी में

- (1) भूख अधिक बढ़ जाती है
- (2) भूख और प्यास दोनों में ही वृद्धि हो जाती है।
- (3) भूख कम हो जाती है
- (4) भूख और प्यास दोनों में ही कमी आ जाती है।

23. केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में होते हैं—

- (1) सभी अंग
- (2) मस्तिष्क
- (3) मेरुदण्ड
- (4) मस्तिष्क तथा मेरुदण्ड

24. मनोग्रसित-बाध्यता विकृति एक

- (1) मनोविच्छेदी विकृति
- (2) समायोजन विकृति है
- (3) चिन्ता विकृति है
- (4) कार्य प्रारूप विकृति है

25. लक्ष्य निर्देशित व्यवहार में बाधा आना..... कहलाता है।

- (1) संवेग
- (2) अभिप्रेरणा
- (3) कुण्ठा
- (4) आक्रामकता

वास्तविक शारीरिक बीमारियां होती हैं परन्तु उसका कारण मनोवैज्ञानिक होता है न कि दैहिक।

3. (2) मनोविकारी व्यक्तित्व में नैतिक चेतना एवं उत्तरदायित्व का अभाव होता है। इसीलिए उसे असामाजिक तत्व की संज्ञा दी जाती है।

4. (1) शोध से स्पष्ट हुआ है कि नोरपाइनफ्राइन (Norepinephrine) तथा सीरोटोनिन (Serotonin) दो ऐसे न्यूरोट्रांसमीटर हैं जिनकी भूमिका विषाद में काफी अधिक होती है। जब मस्तिष्क में नोरपाइनफ्राइन की मात्रा कम हो जाती है, तो इससे व्यक्ति में अभिप्रेरणात्मक स्तर की कमी हो जाती है अर्थात् उसमें विषाद उत्पन्न हो जाता है।

5. (1) टर्नर सिंड्रोम (Turner's syndrome) एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जो सिर्फ बालिकाओं में पायी जाती है। इस तरह के बालिकाओं की गर्दन छोटी एवं झुकी होती है तथा इनमें लैंगिक अपरिपक्वता भी पायी जाती है। इनकी बुद्धिलब्धि 30-40 के लगभग होती है। इस तरह के मानसिक दुर्बलता का कारण लिंग गुणसूत्र (Sex Chromosomes) में गड़बड़ी होती है क्योंकि ऐसी बालिकाओं में सिर्फ एक ही एक्स (XO) पाया जाता है।

6. (4) बौनापन (Cretinism) जैसी मानसिक दुर्बलता को हाइपोथायरोडिज्म (Hypothyroidism) भी कहा जाता है और यह थायरायड हार्मोन्स (Thyroid Hormones) की अत्यधिक कमी या अनुपस्थिति से उत्पन्न होती है। ऐसे व्यक्ति का कद बौना समान (Dwarf Like) होता है। ये देखने में कुबड़े जैसे लगते हैं। इनका सिर बड़ा, गर्दन मोटी पर छोटी एवं आंखों की पलकों भी मोटी होती हैं। इका यौन विकास एवं संवेगात्मक विकास भी सीमित होता है ऐसे बच्चे की बुद्धिलब्धि 25-27 तक ही होती है।

7. (1) फेनिलकेटोन्यूरिया (Phenylketonuria or PKU) एक ऐसी मानसिक दुर्बलता है जिसका संबंध प्रोटीन चपाचपय (Protein metabolism) में गड़बड़ी से होता है। इसमें जन्म के समय बच्चा सामान्य दिखता है परन्तु 6 से 12 महीना के भीतर इसमें मानसिक दुर्बलता के लक्षण दिखलाई पड़ते हैं।

8. (4) क्रमबद्ध असंवेदीकरण (Systematic Desensitization) की प्रविधि का प्रतिपादक साल्टर (Salter, 1943) तथा वॉल्पे (Wolpe, 1958) द्वारा किया गया। यह विधि मूलतः चिन्ता कम करने की एक प्रविधि है जो इस स्पष्ट नियम पर आधारित है कि एक ही समय में व्यक्ति चिन्ता तथा विश्राम दोनों की अवस्था में एक साथ नहीं हो सकता है। इसमें रोगी को पहले विश्राम की अवस्था में होने का प्रशिक्षण दिया जाता है और जब वह विश्राम की अवस्था में होता है तो उसमें चिन्ता उत्पन्न करने वाले उद्दीपकों के बढ़ते क्रम में दिया जाता है।

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(2)	3.	(2)	4.	(1)	5.	(1)
6.	(4)	7.	(1)	8.	(4)	9.	(1)	10.	(1)
11.	(1)	12.	(1)	13.	(2)	14.	(2)	15.	(1)
16.	(1)	17.	(4)	18.	(2)	19.	(3)	20.	(2)
21.	(3)	22.	(2)	23.	(4)	24.	(3)	25.	(3)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (2) मिर्गी (Epilepsy) एक प्रकार का मानसिक (स्नायु तंत्रीय) रोग है जिसमें व्यक्ति फिट्स का शिकार होकर अचेत होकर गिर पड़ता है।
2. (2) सायकोसोमैटिक विकारों में रोगी अपने सांवेगिक संघर्षों एवं चिन्ताओं की अभिव्यक्ति वास्तविक शारीरिक लक्षणों के रूप में करता है। इस तरह से इस विकृति में रोगी में कुछ

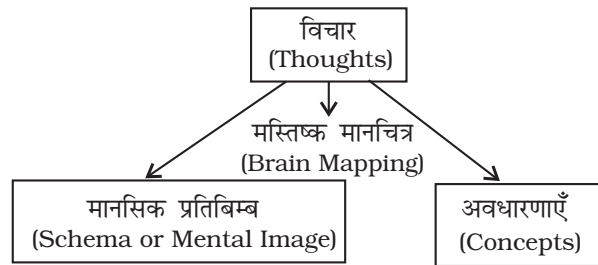
9. (1) समूह चिकित्सा में अनेक लोगों को (रोगियों) शामिल कर बहुविधियों का इस्तेमाल किया जाता है। समूह में की गई चिकित्सा का सिद्धांत पारस्परिक आत्मसंतोष पर आधारित है।
10. (1) द्वन्द्व वस्तुतः तनाव एवं अतितनाव का कारण और परिणाम है। यह मानसिक होता है। इसीलिए अन्तर्द्वन्द्व कहा जाता है। इसका परिणाम सरदर्द, डायबिटीज एवं रक्तचाप वृद्धि में दिखता है।
11. (1) स्थिर-व्यामोह व्यक्तित्व विकृति (Paranoid Personality Disorder) वाले व्यक्तियों में शक, अतिसंवेदनशीलता (Hypersensitiveness, ईर्ष्या, जिद्दीपन जैसे शीलगुणों की अधिकता पायी जाती है। ऐसे लोग अपने गलत कार्यों को भी शक के आधार पर सही ठहराने की कोशिश करते रहते हैं।
12. (1) जन्म के समय बच्चे का स्वास्थ्य माँ के गर्भवस्था के दौरान महत्वपूर्ण है। जन्म से पहले माता-पिता को नशा आदि एवं कुपोषण का शिकार होना भ्रूण के विकास को कम करता है। माँ का भी कोई विशेष रोग भ्रूण को नष्ट भी कर सकता है।
13. (2) श्रवण-बाधित बच्चे क्लास में दूसरों के साथ संप्रेषण संबंधी कुण्ठा से ग्रस्त होते हैं। कुण्ठा इच्छाओं की अपूर्णता से उपजी भावना है जिसकी गंभीरता मनोविकार व विकृति रूप में परिलक्षित होती है। श्रवण-बाधित बच्चों से श्रवण-सक्षम बच्चे अलग रहते हैं। फलतः श्रवण बाधित बच्चे में अलगाव बोध घर कर जाता है।
14. (2) संवेगात्मक दुश्चिंता अतिशय संवेदनशीलता की स्थिति है जो 'तनाव' को 'चिंता' में परिवर्तित होने की स्थिति में पैदा होती है। संवेग या आवेग एक भावात्मक डोमेन है जिसकी एक अतिरंजना संवेगात्मक दुश्चिंता (Emotional Anxiety) में देखने को मिलती है। यह एक मनोविज्ञानिक विकृति व विकार है।
15. (1) डिस्लेक्सिया से पीड़ित व्यक्ति लिखी गई हस्तलिपि आमतौर पर पढ़ने योग्य नहीं होते, उसे अक्षरों के आकार अनियमित लगते हैं और उन्हीं शब्दों अथवा अक्षरों को लिखने में असम्बद्धता पाई जाती है।
16. (1) वह अवस्था जो कि माता के 21वें गुणसूत्र जोड़े के अलग न हो पाने के कारण होती है, डाउन्स सिंड्रोम कहलाती है।
17. (4) 'प्रवर्द्धित वाक्' पद्धति का उपयोग करते हुए हकलाने की समस्या से निबटा जा सकता है। इसमें विशेष शब्दों का बार-बार उच्चारण करवाकर इसका निदान संभव है। हकलाने की यह समस्या बच्चों में आत्मविश्वास की कमी व संवेगात्मक अस्थिरता को जन्म देती है जिससे उनकी शिक्षा व जीवन प्रभावित होता है।
18. (2) गतिक कौशलों में अधिगम नियोग्यता, डिस्प्रेक्सिया कहलाती है। इससे ग्रस्त बालक चलने, कूदने, उछलने, गेंद को फेंकन तथा पकड़ने में अक्षमता महसूस करते हैं।
19. (3) उत्तर-अभिघातज तनाव (Post- Traumatic Stress) विकासात्मक विकार का उदाहरण नहीं है क्योंकि बालक के विकास की प्रक्रिया में अनेक बीमारियाँ पाई जाती हैं। इनमें आत्मविमोह (Autism) एक ऐसी बीमारी है, जिसमें बच्चा अपने आस-पास के वातावरण से अन्जान रहता है तथा प्रमस्तिष्क घात (Cerebral Palsy) के दौरान बच्चों में संवेदनशीलता का लोप हो जाता है और उनमें शारीरिक अक्षमता का विकास होता है।
20. (2) आनुवंशिकता के कारण ही व्यक्तियों में कुछ गुण पीढ़ी दर पीढ़ी चली आती हैं। जैसे; नाटा या लम्बा कद, मोटापा, आंखों का रंग या फिर विभिन्न प्रकार के रोग।
21. (3) सेरिब्रल पाल्सी लकवा (पक्षाघात) का पर्याय है। यह मस्तिष्कीय विकृति है जो शरीरांगों में दिखती है।
22. (2) 'कॉलिसिस्टोकाइनिन' एक प्रकार का हॉर्मोन है, जिसका संबंध दवाओं से होता है। यदि किसी व्यक्ति को इस हॉर्मोन का इंजेक्शन लगाया जाए तो उसकी भूख एवं प्यास दोनों में वृद्धि हो जाएगी।
23. (4) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में मस्तिष्क तथा मेरुदण्ड दोनों स्थित होते हैं। इसमें मस्तिष्क खोंपड़ी द्वारा सरक्षित रहता है और मेरुदण्ड कशेरुक हड्डियों द्वारा।
24. (3) मनोग्रसित बाध्यता एक चिन्ताग्रस्त विकृति है, जिसमें व्यक्ति का स्वयं पर नियंत्रण नहीं रहता है। इसके अलावा उसके व्यवहार में कई प्रकार के परिवर्तन होते रहते हैं।
25. (3) जब किसी व्यक्ति के लक्ष्य निर्धारण संबंधी व्यवहार में बाधा उत्पन्न होती है, तब वह प्रक्रिया कुंठा कहलाती है।

□□□

चिंतन एवं समस्या-समाधान (Thinking and Problem Solving)

चिंतन मनुष्य के ज्ञानात्मक व्यवहार का एक महत्वपूर्ण तत्व है। कई बार हम सुनते हैं, 'करने से पहले सोचो' या 'अनुभव करने के बाद सोचो'। अतः 'चिंतन' पर केवल हमारा ज्ञानात्मक व्यवहार ही नहीं बल्कि हमारा क्रियात्मक एवं भावात्मक व्यवहार भी निर्भर करता है। कोई कविता, कोई कलाकृति, विज्ञान का कोई आविष्कार कोई विचार सब सम्बन्धित लेखकों या आविष्कारकों के चिंतन का प्रतिफल होते हैं और हम इनसे तभी लाभ उठा सकते हैं, जब हम अपनी चिंतन-शक्ति एवं तर्क शक्ति का न्यायोचित प्रयोग करते हैं।

मौलिक चिंतन के घटक/विचार के निर्माणकारी कारक



चिंतन के साधन (Tools of Thinking)

चिंतन की प्रक्रिया से जुड़े हुए तत्वों तथा काम में आने वाले साधनों को निम्न रूप से समझा जा सकता है—

1. बिम्ब (Images)—प्रायः 'बिम्ब' चिंतन-साधन के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं। मानसिक चित्रों के रूप में 'बिम्बों' में व्यक्ति के उन वस्तुओं, दृश्यों तथा व्यक्तियों से संबंधित व्यक्तिगत अनुभव सम्मिलित होते हैं जिन्हें वास्तविक रूप में देखा हो या जिनके बारे में सुना या अनुभव किया हो। कई 'स्मृति बिम्ब' होते हैं जो इन ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभवों पर आधारित होते हैं। कई 'कल्पना-बिम्ब' होते हैं जो कल्पनाओं पर आधारित होते हैं। अतः 'बिम्ब' वास्तविक वस्तुओं, अनुभूतियों तथा क्रियाओं के प्रतीक होते हैं।

2. प्रतीक एवं चिन्ह (Sign & Symbols)—प्रतीक एवं चिन्ह वास्तविक विषयों, अनुभूतियों तथा क्रियाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। ट्रेफिक की बत्तियाँ, रेलवे-सिग्नल, स्कूल की घंटियाँ, गीत, झण्डा, नारे-सभी प्रतीकात्मक अभिव्यक्तियों हैं। चिंतन में संप्रत्यय (Concepts) भी प्रतीकों एवं चिन्हों द्वारा अभिव्यक्त होते हैं।

इन प्रतीकों एवं चिन्हों से चिंतन को बढ़ावा मिलता है। इनकी सहायता से तत्काल ज्ञान हो जाता है कि क्या करना चाहिए और कैसे करना चाहिए—जैसे 'हरी झण्डी' का हिलाना हमें बता देता है कि गाड़ी चलने वाली है और हमें गाड़ी में बैठ जाना चाहिए।

3. अवधारणाएँ या संप्रत्यय (Concepts)—संप्रत्यय भी 'चिंतन' का एक महत्वपूर्ण साधन है। 'संप्रत्यय' एक सामान्य विचार है जो किसी सामान्य-वर्ग के लिए प्रयुक्त होता है और जो उसी सामान्य वर्ग की सभी वस्तुओं या क्रियाओं की किसी सामान्य विशेषता का प्रतिनिधित्व करता है। संप्रत्यय निर्माण या सामान्यीकरण से हमारे

चिंतन प्रयासों में मितव्ययिता आती है। उदाहरणस्वरूप जब हम 'बन्दर' शब्द सुनते हैं तो तत्काल हमारे मन में 'बन्दरों' की सामान्य विशेषताएँ ही नहीं घूम जातीं बल्कि 'बन्दरों' के संबंध में अपने व्यक्तिगत अनुभव भी हमारे चेतना पटल पर आ जाते हैं और हमारे 'चिंतन' को आगे बढ़ाते हैं।

4. भाषा (Language)—भाषा केवल पारस्परिक सम्पर्क बनाने का ही साधन नहीं बल्कि चिंतन का भी साधन है। इनमें 'शब्द' होते हैं जो प्रतीकात्मक होते हैं। कई बार हम 'शब्दों' के स्थान पर इशारों का प्रयोग करते हैं। अंगूठा दिखाना, मुस्कराना, भौंहें चढ़ाना, कन्धे झटकना—आदि महत्वपूर्ण अर्थ रखते हैं। 'चिंतन प्रक्रिया' के लिए भाषा एक सशक्त एवं अत्यन्त विकसित साधन है।

5. मस्तिष्कीय मानचित्रण (Brain Mapping) की अवधारणा, विद्यार्थी द्वारा खोजे गये संबंधों को मूर्त अभिलेख से सम्बद्ध है और यह सूचित करती है कि विद्यार्थी का ज्ञान आपस में कैसे संबंधित है? और कैसे संगठित है?

6. संकल्पना मानचित्रण (Concept Mapping)—सार्थक अधिगम शिक्षण के उद्देश्यों में से एक है। यह विद्यार्थियों को सुधारने के प्रयासों में से एक है निर्देशात्मक रणनीतियों की कोशिश करना। संकल्पना चित्रण उनमें से एक है। यह विद्यार्थियों में संकल्पनाओं में अन्तःसम्बन्धों के साथ संकल्पनात्मक समझ को विकसित करने में सहायता करता है यह एक प्रक्रिया है जो संकल्पना चित्र में परिणत हो जाता है।

संकल्पना चित्रण के लक्षण—

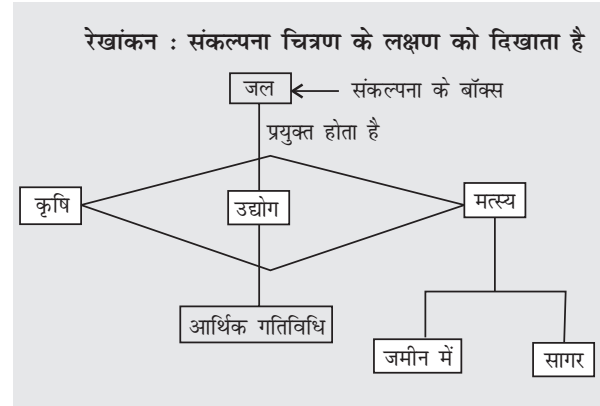
- (i) संकल्पना चित्रण आरेखीय प्रस्तुति हैं जो पूर्वसर्गों के रूप में संकल्पनाओं के बीच सार्थक सम्बन्ध दिखाता है।
- (ii) पूर्वसर्ग संकल्पनाओं के बीच जुड़ावों का वर्णन करता है।
- (iii) प्रायः संकल्पनाएँ एक वृत्त या एक बॉक्स के अन्दर लिखे होते हैं, जो संबद्ध शब्दों के साथ रेखा से जुड़े होते हैं।

(iv) संकल्पनाएं ऊपर से नीचे एक श्रेणीबद्ध क्रम में व्यवस्थित हैं जो सबसे सामान्य संकल्पना को ऊपर रखते हुए नीचे आता है।

(v) विषयों के चारों ओर संकल्पनाओं के एकीकरण को दिखाना भी संभव है।

अवधारणाओं का निर्माण हमें अपने ज्ञान को व्यवस्थित करने में मदद करता है, जब भी हमें ज्ञान की आवश्यकता होती है। हम इसे कम प्रयास और समय में कर सकते हैं जब भी हम किसी परिचित या अपरिचित घटनाओं के संपर्क में आते हैं तो हम उनकी विशेषताओं को देखते हुए पहले से स्थित वस्तुओं और सेवाओं से जोड़ कर देखते हैं।

उदाहरण के लिए जब हम सेब या संतरे को देखते हैं हम इसका वर्गीकरण फलों में करते हैं वहीं कुत्ते का जानवर में न कि पक्षी के वर्ग में। जब हम किसी वस्तु को देखते हैं हम इसकी विशेषताओं को देखने का प्रयास करते हैं और उसे पहले से उपलब्ध वर्ग से जोड़ते हैं और यदि वह पूरी तरह से मेल खाता है तो उसी के अनुसार नाम देते हैं।



रचनात्मक (Creative) चिंतन : अर्थ एवं प्रकृति

रचनात्मक चिंतन आमतौर पर उस विशेषता से भी परिभाषित होता है जिसे ब्रूनर “प्रभावी आश्चर्य” कहते हैं।

यह एक विषय है जिसमें कुछ नया और मूल्यवान निर्मित होता है। कह सकते हैं कि साहित्यिक कार्य, पेंटिंग, संगीत निर्माण, हल और खोज आदि। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि रचनात्मक विचार सदैव अत्यधिक विशिष्ट कार्यों में देखने को नहीं मिलते। किसी को रचनात्मक ढंग से सोचने के लिए वैज्ञानिक या कलाकार होने की आवश्यकता नहीं है। सभी रचनाकार बन सकते हैं और यह विभिन्न स्तरों पर मानवीय क्रियाओं द्वारा प्रयोग की जाती है। यह कई क्रियाओं में दिखती है जैसे लिखना, पढ़ना, पकाना, अभिनय करना, प्रश्न पूछना, कहानी सुनाना, खेल खेलना, अन्य लोगों के विवाद सुलझाना आदि।

रचनात्मक या सृजनात्मक चिंतन अन्य प्रकार के चिंतन से अलग हैं। जैसे इसमें किसी उपन्यास का निर्माण सम्मिलित होता है और मौलिक विचार या समस्याओं के समाधान सम्मिलित है। यह विचारों या समाधान की मौलिकता और विशिष्टता से जुड़ी हैं जो पहले अस्तित्व में नहीं हैं।

जे. पी. गिलफोर्ड रचनात्मक चिंतन सम्बन्धी रिसर्च में अग्रणी हैं जो दो तरह के चिंतन को बताते हैं—अभिसारी चिंतन (Convergent thinking) अपसारी चिंतन (Divergent Thinking)

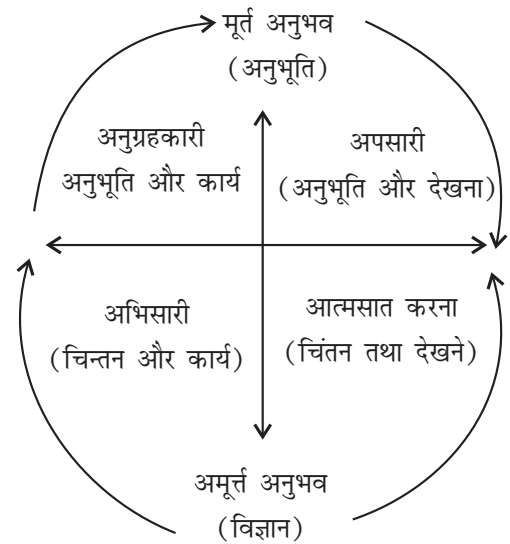
अभिसारी चिंतन—इसमें एक ही बात पर ध्यान केन्द्रित रहता है और किसी समस्या के लिए अच्छी तरह स्थापित उत्तर दिया जाता है जिसका केवल एक सही उत्तर होता है। यह गति की शुद्धता और तर्क पर बल देता है और परिचित बातों को पहचानता है और संचित सूचना को प्राप्त कर फिर से प्रयोग करने पर ध्यान देता है।

जैसे 3, 6, 9 आगे क्या आएगा?

अपसारी चिंतन—यह एक विचारों की प्रक्रिया या पद्धति है जो संभावित समाधानों को देखते हुए नए विचार निर्मित करती है। यह वह चिंतन है जहाँ कोई विभिन्न उत्तरों के साथ आता है और अपने अनुभव के अनुसार विभिन्न उत्तर देता है। ऐसा चिंतन नए विचारों में मदद करता है और कई मौलिक समाधान निकालने में सहायक है। अनपेक्षित संबंध निकालना

उदाहरण—कपड़े का क्या उपयोग हैं?

बहुविध चिंतन सृजनात्मकता की अत्यधिक महत्वपूर्ण विशेषता है। इसमें खुला चिंतन, निरंतरता, मौलिकता तथा लोचशीलता विद्यमान होता है।



रचनात्मक चिंतन के चरण

चरण-1 : पहला परिदृश्य

रचनात्मक चिंतन की प्रक्रिया पूर्व-संचालन स्तर (Pre-Operational Stage) से शुरू होती है और समस्या को समझने में आवश्यक है, समस्या का विश्लेषण करना और पृष्ठभूमि से जुड़े तथ्यों के बारे में जानना और संबंधित सूचना सम्मिलित हैं जिसमें कोई विभिन्न विचारधाराओं के बारे में समझता है।

चरण-2 : उष्मायन (Incubation)

जब कोई व्यक्ति वैकल्पिक विचारों को बनाने में मदद करता है और समस्या को असाधारण दृष्टि से देखने की कोशिश करता है तो वह स्वयं को फंसा हुआ महसूस करता है। कोई असफलता की निराशा भी हो सकता है और समस्या को कुछ समय के लिए छोड़ने का भी सोच सकता है।

चरण-3 : प्रदीपन (Illumination)

उद्भवन के बाद यह स्वयं प्रकाशित होने की स्थिति है। जब हम कहते हैं आह!, या वाह! हमने प्राप्त कर लिया। रचनात्मक विचार आने पर इसमें उत्साह के साथ संतोष की भावना होती है।

चरण-4 : सत्यापन (Verification)

इसके दौरान समाधान की वास्तविकता को जाँचा जाता है।

रचनात्मक चिंतन की रणनीतियाँ (Strategies)

(1) **मस्तिष्क उद्देलन (Brainstorming)**—यह वह तकनीक है जिसमें रचनात्मक विचारों को खुले रूप में निर्मित करना सम्मिलित है। इसका मुख्य लक्ष्य कम समय में अधिक विचार पैदा करना है। इस प्रक्रिया के दौरान सभी विचार एकत्र होते हैं और किसी की भी आलोचना नहीं होती। इसे परिवार के सदस्यों व मित्रों के साथ इसके सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए संतुलित रूप से खेलों से प्राप्त किया जाता है।

(2) **रोजनामचा (Journaling)**—यह विचारों को दर्ज करने का प्रभावी तरीका है जिसे कोई सहज रूप से रोजनामचा में दर्ज करता है। और कोई विभिन्न विषयों पर अपने विचारों को संकलित कर विचारों की स्रोत पुस्तिका का निर्माण कर सकता है।

(3) **मुक्त लेखन (Free Writing)**—मुक्त लेखन के समय व्यक्ति किसी निश्चित विषय पर बिना रुके कम समय में लिख सकता है। यह विषय के बारे में कई विचार पैदा करने में सहायक है जिसे बाद में व्यवस्थित किया जाता है।

(4) **उठो और बाहर जाओ (Get up and go out)**—जब आपका मस्तिष्क बंद पड़ जाए उठो और सैर करने जाओ। वातावरण बदलने से नये विचार आएँगे, मस्तिष्क में रक्त संचार बढ़ेगा और ऑक्सीजन बढ़ेगी।

(5) **अधिक स्वाध्याय (Read More)**—स्वयं अध्ययन मस्तिष्क के व्यायाम का एक तरीका है और इससे नए रचनात्मक विचार नई दिशा में ले जा सकते हैं।

(6) **नवीन विचारों से परिचय (New Acquaintances)**—नए मित्र बनाने, सहकर्मियों से संपर्क करने, अपरिचित से छोटे संवाद करने हेतु प्रयास करें। मैके मानते हैं कि जितने लोगों को आप जानेंगे आप उतना अधिक सीखेंगे और बढ़ेंगे।

(7) **कुछ नवीन रचना (Innovation)**—चाहे चित्र बनाना हो, पेंटिंग हो, बुनाई हो, सिलाई या कुछ और कुछ भी नया बनाना मजे का काम है। केन्द्र इस पर नहीं होना चाहिए कि रचना कैसी होगी परन्तु कुछ नया करने के प्रयास, आनंद में होना चाहिए जिससे आपको नए विचार भी आएँगे।

(8) अपने कार्य के लिए उनसे फीडबैक लेना चाहिए जो आपको अपने विचार बताते हुए निजी संबंधों को कम महत्व दें।

(9) मत निर्माण करने में स्वतंत्र सोच का विकास करें और किसी मदद के बिना समाधान करने का प्रयास करें।

(10) अंत में, आत्म विश्वासी और सकारात्मक रहें। कभी भी अपने रचनात्मक सामर्थ्य, रचना को निर्मित करने के आनंद के अनुभव को कम न समझें।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि चिंतन हमारे ज्ञानात्मक व्यवहार का वह पहलू है जिसमें हम आंतरिक रूप से चिन्ह एवं प्रतीक आदि के रूप में वस्तुओं तथा घटनाओं का मानसिक चित्रण अथवा क्रियान्वयन करते हुए किसी न किसी समस्या का समाधान ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं। इस तरह चिन्तन एक ऐसी प्रयोजनपूर्ण प्रतीकात्मक संज्ञानात्मक व्यवहार क्रिया है जिसमें विभिन्न मानसिक बिम्बों तथा प्रतीकों का प्रयोग करते हुए समस्या विशेष का मानसिक समाधान खोजा जाता है।

बालकों में प्रभावपूर्ण एवं सही प्रकार से चिंतन करने की योग्यता का विकास करने हेतु हमें जिन बातों पर ध्यान देना चाहिए वे हैं—बालकों को पर्याप्त ज्ञान एवं अनुभूतियों का प्रदान किया जाना, अभिप्रेरणा एवं लक्ष्य की निश्चितता, चिंतन क्षेत्र का पर्याप्त व्यापक और लचीला होना, कार्योंपरान्त, कार्यान्तराल सहज-शान्त, आराम, जैसी इन्क्यूबेशन प्रक्रिया की सहायता लेना, उचित चिंतन हेतु बुद्धि एवं विवेक के प्रयोग को प्रोत्साहित करना।

चिंतन के प्रकार (Types of Thinking)

सभी प्रकार के सार्थक और प्रयोजनपूर्ण चिंतन को कुछ विशिष्ट वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे—प्रत्यक्ष बोधात्मक या मूर्त चिन्तन, संप्रत्ययात्मक या अमूर्त चिंतन, विचारात्मक या तार्किक चिन्तन तथा सृजनात्मक चिंतन। बालकों में समुचित चिंतन शक्ति का विकास करने में हम पहले मूर्त चिंतन के विकास से कर सकते हैं। इसका विकास होने पर उन्हें क्रमशः अमूर्त चिंतन, विचारात्मक तथा सृजनात्मक चिंतन की ओर अग्रसर किया जा सकता है:

1. प्रत्यक्ष संवेदनात्मक या मूर्त चिंतन (Sensational or Concrete Thinking)—यह चिंतन का अत्यन्त सरल रूप है। 'प्रत्यक्ष बोध या संवेदना' ही इस प्रकार के चिंतन का आधार है। व्यक्ति की अनुभूति संवेदनात्मक भी होती है। यदि एक बच्चे को सेब दिया जाए तो वह एक क्षण के लिए सोचना है और उसे लेने से इन्कार कर देता है। इस समय इसका चिंतन 'प्रत्यक्ष बोध' पर आधारित है वह अपनी पूर्व-अनुभूति के आधार पर संवेदना की व्याख्या कर रहा है। उसे हरे सेब के स्वाद की याद आ रही है जो उसे कुछ दिन पहले दिया गया था।

इस प्रकार के चिंतन को मूर्त चिंतन भी कहते हैं क्योंकि यह मूर्त या वास्तविक विषयों की क्रियाओं पर आधारित होता है। इस प्रकार के चिंतन से बच्चों को बहुत लाभ होता है।

2. संप्रत्ययात्मक या अमूर्त चिंतन (Conceptual or Abstract thinking)—यह प्रत्यक्षीकरण (Perception) पर आधारित है। यह बोधात्मक चिंतन है। इसमें संप्रत्ययों एवं सामान्यीकृत विचारों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के चिंतन के विकास में भाषा का बहुत बड़ा हाथ होता है। यह चिंतन 'प्रत्यक्ष बोधात्मक' चिंतन से बढ़िया माना जाता है, क्योंकि इससे समझने में सुविधा होती है तथा खोज एवं आविष्कारों में सहायता मिलती है।

3. विचारात्मक या तार्किक चिंतन (Reflective or logical thinking)—महान शिक्षाशास्त्री ड्यूवी ने विचारात्मक चिंतन को ही चिंतन माना है। हम चिंतन के द्वारा किसी लक्ष्य की प्राप्ति या समस्या का समाधान खोज पाते हैं। इसमें विचारों एवं तर्कों को एक क्रम में स्थापित करके निष्कर्ष निकाले जाते हैं जो व्यावहारिक एवं सामाजिक होते हैं।

4. सृजनात्मक चिंतन (Creative thinking)—इस चिंतन का मुख्य उद्देश्य किसी नई चीज का निर्माण करना है। यह वस्तुओं, घटनाओं तथा स्थितियों की प्रकृति की व्याख्या करने के लिए नए संबंधों की खोज करता है। यह पूर्व स्थापित नियमों से बाध्य नहीं होता। इसमें व्यक्ति स्वयं ही समस्या पैदा करता है और फिर स्वतंत्रपूर्वक उसके समाधान के साधन ढूँढ़ता है। वैज्ञानिकों तथा अनुसंधानकर्ताओं का चिंतन इसी प्रकार का होता है।

तर्कणा (Meaning of Logic)

चिंतन एक अव्यक्त समस्या-समाधान संबंधी व्यवहार है। 'तर्क' भी अव्यक्त क्रिया है जिसमें समस्या-समाधान संबंध निहित रहता है। अतः इन दोनों प्रक्रियाओं में अन्तर स्पष्ट करना कठिन है। परन्तु 'तर्क' को चिंतन का उच्चतम स्तर माना जाता है।

तर्कशक्ति के प्रकार (Types of Reasoning)

तर्क को दो व्यापक वर्गों में बांटा जा सकता है—आगमनात्मक तर्कणा (Inductive Reasoning) तथा निगमनात्मक तर्कणा (Deductive Reasoning)। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित हैं :

1. आगमनात्मक तर्कणा (Inductive reasoning)—इस प्रकार के तर्क से हम विशिष्ट तथ्यों के सामान्य निष्कर्षों तक पहुँचते हैं। प्रयोगात्मकता एवं निरीक्षण इस तर्क का आधार हैं। तथ्यों के आधार पर हम सार्वभौमिक सम्बन्ध या सामान्यीकरण स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं। उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित तर्क आगमन तर्क हैं—

राम नाशवान है।

करीम नाशवान है।

मोहन नाशवान है।

बुडवर्ड नाशवान है।

इसलिए सभी मनुष्य नाशवान हैं।

इस प्रकार आगमनात्मक तर्कणा में बहुत से विशिष्ट तथ्यों के आधार पर सार्वभौमिक तथ्य (Universal Truths) निकाले जाते हैं।

यह तर्कशीलता से संबंधित है जो विशिष्ट सूचना पर आधारित होती है। यह उसे व्यापक रूप से सरल बना देती है, जिसकी संभावना है। इसे कभी-कभी निम्न से उच्च धारणा (Bottom up Approach) भी कहते हैं। जैसे

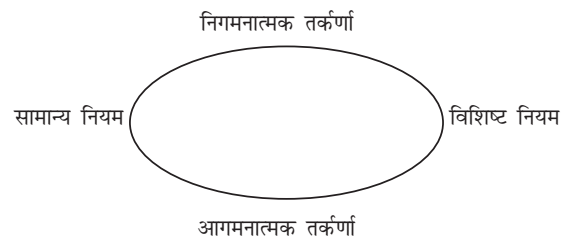
आज मैं 8 बजे निकली और समय पर पहुँची। इसीलिए, हर दिन यदि मैं 8 बजे निकल जाऊँ तो समय पर पहुँचा जा सकता है।

क्योंकि आगमनात्मक तर्कशीलता विज्ञान में काफी प्रयुक्त होती है यह हमेशा तार्किक ढंग से वैद्य नहीं होती क्योंकि यह हमेशा सत्य नहीं होती। ऐसा माना जाता है कि सामान्य सिद्धांत सही है।

2. निगमनात्मक तर्कणा : यह सामान्य कथन या परिकल्पना से आरंभ होती है और संभावनाओं का परीक्षण विशिष्ट तार्किक निष्कर्षों तक पहुँचने का निरीक्षण करती है। कभी-कभी इसे उच्च से निम्न (Top Down) धारणा भी कहा जाता है।

निगमनात्मक तर्कशीलता का मूलभूत विचार है कि यदि कोई बात सत्य है, किसी वर्ग में सामान्य रूप से, ये सत्य वर्ग के सभी सदस्यों पर लागू होगा। उदाहरण के लिए, मैं हर सुबह 8 बजे काम के लिए जाता हूँ।

ऐसा हो सकता है कि आज ट्रैफिक जाम मिले और आपको देर हो जाए। अतः किसी भी प्रकार की परिकल्पना को पूरी तरह प्रमाणित नहीं किया जा सकता।



निगमन तर्क में पहले हम पूर्व-स्थापित सामान्यीकृत तथ्यों को मान कर चलते हैं और फिर उन्हें विशिष्ट बातों पर लागू करने का प्रयास करते हैं। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित तर्क निगमनात्मक तर्क हैं—

सभी मनुष्य नाशवान हैं।

मैं भी एक मनुष्य हूँ।

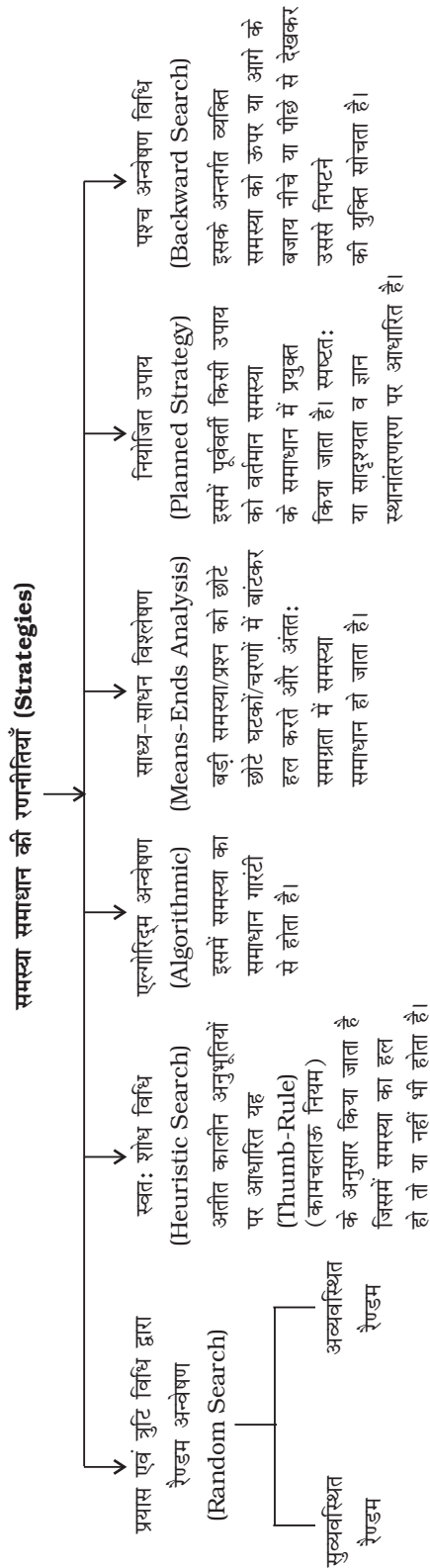
इसलिए मैं भी नाशवान हूँ।

इस प्रकार निगमनात्मक-तर्क में हम सार्वभौमिक तथ्यों (Universal Truths) या सामान्य सिद्धांतों को विशिष्ट समस्याओं के समाधान में प्रयोग करते हैं।

समस्या समाधान (Problem Solving)

समस्या समाधान के चरण (Steps) :

- चरण-1 समस्या की पहचान करना
- चरण-2 समस्या को परिभाषित करना
- चरण-3 रणनीति का निर्माण करना
- चरण-4 समाधान का मूल्यांकन
- चरण-5 स्रोतों का आबंटन एवं क्रियान्वयन
- चरण-6 परिणाम का मूल्यांकन
- चरण-7 समस्या एवं समाधान को पुनर्परिभाषित करना और उन पर पुनर्विचार करना



समस्या का समाधान करना मानसिक प्रक्रिया से संबंधित है लोग समस्याओं का विश्लेषण करते हैं और यह भी कहा जा सकता है कि समस्या समाधान प्रयास इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु प्रतिक्रियाओं का विकास करते हैं।

यह नोट करना महत्वपूर्ण है कि समस्याएँ केवल वे बाधाएँ हैं जिसका कोई सामना करता है। किसी भी सरल गतिविधि से आप इच्छित लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। उदाहरण हेतु आपके स्थान पर आए मित्रों के लिए शीघ्र नाश्ता तैयार कर लेना।

समस्या समाधान के कई मॉडल हैं जिसमें (Ideal Model of Bransford Bransford Stein 1984) मॉडल प्रमुख हैं, जिसके द्वारा समस्या समाधान किया जाता है। इसके निम्न चरण हैं—

1. समस्या को पहचानना
2. सोच विचार कर समस्या को परिभाषित करना और प्रासंगिक सूचना को छांटना।
3. विभिन्न वैकल्पिक समाधानों को ढूँढ़ना, विचार मंथनकरना और विभिन्न विचारों की जांच करना।
4. रणनीतियों पर कार्य करना
5. पश्चावलोकन कर और अपने क्रियाकलाप के प्रभाव का मूल्यांकन करें।

समस्या समाधान में बाधाएँ (Obstacles)

समस्या समाधान में मानसिक विन्यास और अभिप्रेरणा का अभाव दो प्रमुख अवरोध हैं :

(1) मानसिक विन्यास

जब भी आप समस्या का समाधान करने की कोशिश करते हैं आपको सूचनाओं के बीच में अंतर करना समझना चाहिए कि कौन-सी जानकारी प्रासंगिक है जो भी अप्रासंगिक है वह दोषपूर्ण समाधान देगी। यह समस्याओं को हल करने की लोगों की प्रवृत्ति है, जो मानसिक कार्यों और नये विचारों का परीक्षण करती है। हालाँकि मनोस्थिति अलोचशीलता की ओर उन्मुख होती है और प्रभावी हल खोजने को मुश्किल बना देती है ऐसी स्थितियों से गुजरते हुए गुणवत्ता और समस्या के समाधान की गति को बढ़ाना चाहिए। अन्य स्थितियों में यह समाधान करने में बाधा है।

(2) अभिप्रेरणा का अभाव

कभी-कभी लोग आसानी से हार मान लेते हैं जब वे किसी समस्या या असफलता से गुजरते हैं, उनके कौशल और प्रतिभाओं को कोई मूल्य नहीं रह जाता यदि वे उत्प्रेरित नहीं होते।

निर्णयन (Decision Making)

तर्कशीलता मेहनत भरा काम है। वास्तव में यह क्रिया करना कई लोग नजरअंदाज करते हैं। तर्क करने से मत व विचार बनाने में मदद मिलती है और मंतव्य से हम विकल्पों से निष्कर्ष निकालते हैं, घटनाओं और चीजों का भूतकाल और प्रमाण के आधार पर मूल्यांकन करते हैं। कभी-कभी ये मत या राय स्वायत्त (Autonomous) होते हैं और किसी प्रकार का सचेतन प्रयास आवश्यक नहीं होते और आदत बना लेते हैं। उदाहरण हेतु लालबत्ती देखकर रुक जाना, पेंटिंग की सुंदरता को देखकर मत बनाना वैयक्तिक प्राथमिकता को सम्मिलित करता है।

मत बनाना और निर्णय करना एक-दूसरे से संबंधित हैं। निर्णय बनाने में प्रत्येक विकल्प से मूल्यांकन और लाभ का मूल्यांकन जुड़ा है। निर्णय करते समय हमें कई समाधान या विकल्प पहले से पता होते हैं और हमें एक का चयन करना होता है। यह निजी सार्वजनिक प्रबंधन एवं प्रशासन का अनिवार्य गुण है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- चिंतन का गेस्टाल्ट सिद्धांत मुख्यतः आधारित है—
 - (1) तात्कालिक स्मृति के प्रसार (Span) पर।
 - (2) चिंतन समग्रता एवं उत्पादकता (Productive) पर।
 - (3) अभिसारी प्रक्रम (Convergence Mechanism) पर।
 - (4) अपसारी प्रक्रम (Divergence Mechanism) पर।
- संप्रत्यय निर्माण के चार अवस्थाओं में निम्नांकित तत्व सम्मिलित होते हैं—
 - (a) तुलना (Comparison)
 - (b) सामान्यीकरण (Generalization)
 - (c) संज्ञानात्मक संरचना (Cognitive Structure)
 - (d) संवेदी प्रतिमाएं (Sensory Images)

संप्रत्यय निर्माण की प्रक्रिया उत्पन्न करने में इनका सही क्रम (Correct Sequence) कौन-सा है?

 - (1) a, b
 - (2) a, b, c
 - (3) b एवं d
 - (4) उपरोक्त सभी
- लोग समस्या समाधान के लिए प्रायः तार्किक नियमों को कठोरता से अनुप्रयोग नहीं करते हैं क्योंकि
 - (1) वे क्रमबद्ध रूप से प्राक्कल्पना जांच में अक्षम होते हैं।
 - (2) उन्हें पर्याप्त स्मृति नहीं होता है।
 - (3) तर्कशास्त्र (Logic) के नियम उपयोगी नहीं होते हैं।
 - (4) वे पर्याप्त रूप से अतार्किक चिन्तन का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं।
- निगमनात्मक तर्कणा (Deductive Reasoning) में तर्क की दिशा होती है—
 - (1) सामान्य से विशेष
 - (2) विशेष से सामान्य
 - (3) दोनों ओर हो सकती है।
 - (4) विपरीत दिशाओं में हो सकती है।
- चिन्तन के बारे में निम्नांकित में से सबसे कम सही (Least Accurate) कथन कौन है?
 - (1) चिन्तन प्रायः अभिप्रेरित होता है।
 - (2) चिन्तन प्रायः बिना समस्या के होता है।
 - (3) चिन्तन सेट से प्रभावित होता है।
 - (4) चिन्तन प्रायः दिशा में निर्देशित होता है।
- प्याजे मॉडल में ऐसी अवस्था जिसमें व्यवहार का निर्धारण अधिकतर प्रतिवर्तों (Reflexes) द्वारा होता है, कहा जाता है—
 - (1) प्राक्सक्रियात्मक अवस्था (Pre-operational Stage)
 - (2) मूर्तसंक्रियाओं की अवस्था (Concrete Operations)
 - (3) संवेदी पेशीय अवस्था (Sensory-Motor Stage)
 - (4) औपचारिक संक्रियाओं की अवस्था (Formal Operations)
- संप्रत्यय निर्माण (Concept Formation) की प्रक्रिया में सम्मिलित होती है—
 - (1) विशिष्टता (Distinctiveness)
 - (2) मानसिक वृत्ति (Mental Set)
 - (3) विभेदन (Discrimination)
 - (4) स्थानान्तरण (Transfer)
- निम्नांकित में से कौन-सा समस्या समाधान की गारंटी देता है?
 - (1) बाधा निवारण (Obstacle Removal)
 - (2) एल्गोरिदम (Algorithm)
 - (3) स्वतःशोध प्रणाली (Heuristics)
 - (4) साधन-साध्य विश्लेषण (Means-end Analysis)
- वह काम चलाऊ विधि (Rule-of-thumb Method) जो समस्या के चयन का एक प्रभावी खोज (Efficient Search) करने में मदद करता है, को कहा जाता है—
 - (1) एल्गोरिदम (Algorithm)
 - (2) शिक्षा (Education)
 - (3) स्वतः शोध (Heuristic)
 - (4) अधिगम (Learning)
- सर्जनात्मक समस्या समाधान में घटनाओं का सही क्रम (Correct Sequence) कौन है?
 - (1) प्रबोधन (Illumination), उद्भवन (Incubation), प्रमाणीकरण (Verification), तथा आयोजन (preparation)
 - (2) आयोजन, प्रमाणीकरण, प्रबोधन, प्रमाणीकरण
 - (3) आयोजन, उद्भवन, प्रबोधन, प्रमाणीकरण
 - (4) उद्भवन, प्रबोधन, आयोजन, प्रमाणीकरण
- सर्जनात्मक चिन्तन (Creative Thinking) के रूप में उद्भवन (Incubation) की प्रक्रिया में सम्मिलित होती है—
 - (1) नया समाधान
 - (2) अचेतन चिंतन प्रक्रिया
 - (3) सूझ प्रक्रिया
 - (4) शाब्दिक चिंतन
- प्याजे द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत में स्पष्ट क्रियाओं (Overt Action) द्वारा तर्कणा (Reason) करने की क्षमता किस अवस्था से संबंधित होता है?
 - (1) संवेदी-गामक
 - (2) प्राक्-संक्रियात्मक
 - (3) मूर्त संक्रियात्मक
 - (4) उपर्युक्त सभी
- संप्रत्यय निर्माण का प्रयोगात्मक सत्यापन निम्नांकित में से किस परीक्षण द्वारा होता है—
 - (1) इशियारा परीक्षण (Ishihara Test)
 - (2) कॉल्लिन्स एवं ड्रीवर परीक्षण (Collins & Drever Test)

- (3) एलेक्जेंडर ब्लॉक डिजाइन परीक्षण
(Alexander Block Design Test)
- (4) हॉफमैन-केसामिन परीक्षण
(Hafmann-Kesamin Test)
14. समस्या समाधान का प्रथम चरण है—
(1) समस्या हल करना (2) समस्या चुनना
(3) समस्या समाधान के तरीके ढूँढ़ना
(4) परीक्षण करना
15. ज्ञान सृजन एवं तत्पररचना मनोविज्ञान का कौन सी विचारधारा है?
(1) रचनावाद (2) मनोविश्लेषणवाद
(3) प्रकार्यवाद (4) इनमें से कोई नहीं
16. संज्ञानात्मक सिद्धांत के मनोवैज्ञानिक हैं?
(1) कोहलर (2) टॉल्मैन
(3) कोल्मैन (4) प्याजे
17. संज्ञानात्मक विकास में लेव वाइगोत्स्की ने किस कारक को शामिल किया है?
(1) संस्कृति-धर्म (2) संस्कृति-भाषा
(3) संस्कृति-जाति (4) संस्कृति-क्षेत्र
18. सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण के घटक हैं—
(1) धर्म (2) परिवार
(3) राजनीति (4) उपरोक्त सभी
19. आगमनात्मक बुद्धिक्रम अग्रसर होता है—
(1) मूर्त से अमूर्त (2) सामान्य से विशिष्ट
(3) उच्च से निम्न (4) बाएं से दाएं
20. बच्चों में 'सोच' विकास पर सर्वाधिक चिंतनपूर्ण योगदान है?
(1) जीन प्याजे (2) लेव वाइगोत्स्की
(3) बी.एफ. स्कीनर (4) जे.बी. वाटसन
21. सामान्य नियम का अनुमान विशेष परिस्थिति में करना कौन-सी विधि कहलाती है—
(1) आगमन विधि (2) निगमन विधि
(3) निगमागमन विधि (4) उपरोक्त सभी
22. बचत विधि का संबंध निम्नलिखित में से कौन है?
(1) पुनः सीखना-एविंगहास (2) प्रयत्न-सीखना-थॉर्नडाइक
(3) अन्तर्दृष्टि-कोहलर (4) संज्ञान-प्याजे
23. उष्मायन/उदभव (Incubation) का तात्पर्य है—
(1) कार्यावकाश (2) कार्यान्तराल
(3) सार्थकान्तराल (4) उपरोक्त सभी
24. निम्नलिखित में से कौन सा कथन असत्य है?
(1) सभी चिंतनशील बुद्धिमान हैं
(2) सभी सृजनशील बुद्धिमान हैं
(3) सभी बुद्धिमान सृजनशील हैं
(4) समस्या समाधानकर्ता चिंतनशील हैं

25. ज्ञानशास्त्र को कहा जाता है—

- (1) एपिस्टिमोलॉजी (2) एक्सियोलॉजी
(3) एथिक्स (4) थियोलॉजी

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(4)	3.	(3)	4.	(1)	5.	(2)
6.	(3)	7.	(3)	8.	(2)	9.	(3)	10.	(3)
11.	(2)	12.	(3)	13.	(3)	14.	(2)	15.	(1)
16.	(4)	17.	(2)	18.	(4)	19.	(1)	20.	(1)
21.	(1)	22.	(1)	23.	(4)	24.	(3)	25.	(1)

उत्तर व्याख्या सहित

- (2) चिंतन का गेस्टाल्ट सिद्धांत वस्तुतः चिंतन की समग्रता को स्पष्ट करता है। गेस्टाल्ट का तात्पर्य समग्रता है ना कि आंशिकता। उत्पाद और पुनरुद्भव/पुनरुत्पादन गेस्टाल्ट की संकल्पना का व्यवहारिक रूप है।
- (4) संप्रत्यय (Concepts)–संप्रत्यय भी 'चिंतन' का एक महत्वपूर्ण साधन है। 'संप्रत्यय' एक सामान्य विचार है जो किसी सामान्य विशेषता का प्रतिनिधित्व करता है। संप्रत्यय निर्माण या सामान्यीकरण से हमारे चिंतन प्रयासों में मितव्ययिता आती है। इस क्रम में तुलना और विभेद भी कारगर चरण होते हैं।
- (3) तर्कशास्त्र तार्किक नियमों के अनुसार क्रियान्वित होता है जबकि समस्या समाधान परिस्थिति जन्य होता है। चिंतन ज्ञान सहित विचारों का तार्किक कार्य है जो कि मस्तिष्क में किसी नवीन सूचना के आ जाने तक संचित रहता है। विचार द्वारा किसी चीज को स्मरण रखने प्रश्न करने तथा प्रयोजन के संबंध जोड़ने के रूप में विवेचित किया जा सकता है।
- (1) निगमनात्मक तर्क (Deductive reasoning)–निगमन तर्क में पहले हम पूर्व-स्थापित सामान्यीकृत तथ्यों को मान कर चलते हैं और फिर उन्हें विशिष्ट बातों पर लागू करने का प्रयास करते हैं। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित तर्क निगमनात्मक तर्क हैं—
सभी मनुष्य नाशवान हैं।
मैं भी एक मनुष्य हूँ।
इसलिये मैं भी नाशवान हूँ।
- (2) चिंतन: प्रेरित, समस्यापरक मानसिक एवं निर्देशित होता है। चिंतन–ज्ञान और सूचनाओं की वह मानक प्रक्रिया है, जिसका प्रयोग योजनाएं बनाने, व्याख्या करने तथा विश्व में आदर्श स्थापित करने के लिए किया जाता है और सामान्य रूप से संबंधित बातों पर भावी अनुमान लगाने के लिए किया जाता है।
- (3) संवेदीगामक या संवेदीपेशीय अवस्था प्रतिवर्ती से निर्धारित होता है।

- संवेदनात्मक चिंतन Sensational Thinking)–यह चिंतन का अत्यन्त सरल रूप है। ‘बोध या संवेदना’ ही इस प्रकार के चिंतन का आधार है। व्यक्ति की अनुभूति संवेदनात्मक भी होती है।
7. (3) संप्रत्यय निर्माण अमूर्त चिंतन का परिणाम है।
यह प्रत्यक्षीकरण (Perception) पर आधारित है। यह बोध आत्मक चिंतन है। इसमें भेदकृत एवं सामान्यीकृत विचारों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के चिंतन के विकास में भाषा का बहुत बड़ा हाथ होता है।
 8. (2) एल्गोरिद्म (Algorithmic) अन्वेषण में समस्या का समाधान गारंटी से हुआ माना जाता है।
 9. (3) स्वतः शोध विधि (Heuristic Search) अतीत कालीन अनुभूतियों पर आधारित यह Thumb-Rule के अनुसार किया जाता है जिसमें समस्या का हल होता या नहीं भी होता है।
 10. (3) सर्जनात्मक समस्या समाधान का सम्यक क्रम है :
आयोजन (नियोजन बनाना)
उद्भव (उष्मायन)
प्रबोधन (अवबोधन)
प्रमाणीकरण (सत्यापन)
 11. (2) उष्मायन या उद्भव (Incubation): जब कोई व्यक्ति वैकल्पिक विचारों को बनाने में मदद करता है और समस्या को असाधारण दृष्टि से देखने की कोशिश करता है तो वह स्वयं को फंसा हुआ महसूस करता है। यह एक ऐसी अचेतन चिंतन प्रक्रिया है जिसमें कोई असफलता भी हो सकता है और समस्या को कुछ समय के लिए छोड़ने का भी सोच सकता है।
 12. (3) प्रत्यक्ष तर्कणा क्षमता आधारित क्रिया एवं सम्बद्ध चिंतन को मूर्त चिंतन भी कहते हैं क्योंकि यह मूर्त या वास्तविक विषयों की क्रियाओं पर आधारित होता है।
 13. (3) अलेक्जेंडर ब्लॉक डिजाइन परीक्षण का प्रयोग उच्च स्तरीय संकल्पना निर्माण को सत्यापित करने हेतु किया जाता है। समान आकार वाले विभिन्न ब्लॉक्स को बिखेरकर उन्हें यथास्थान सेट करने की क्रिया संप्रत्यय का प्रयोगात्मक उदाहरण है।
 14. (2) समस्या समाधान विधि से बालकों में तर्क एवं निर्णय लेकर किसी समस्या को सुलझाने की क्षमता का विकास करना है। एक समस्यात्मक स्थिति एक रचनाहीन जीवन स्थल के क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है। इस विधि में तथ्यों के आधार पर उद्देश्य की ओर अग्रसर होते हैं। समस्या समाधान प्रक्रिया का प्रथम चरण है समस्या चुनना।
 15. (1) रचनावाद दर्शनशास्त्र की एक विचारधारा है जो वर्तमान में यह स्विस् मनोवैज्ञानिक जीन प्याजे (1896-1980) संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत एवं रसियन मनोवैज्ञानिक लेव वायगोत्स्की (1896-1934) के योगदान पर आधारित है। इसके अनुसार ज्ञान अधिगमकर्ता द्वारा सक्रिय रहकर सृजन करना होता है न कि निष्क्रिय रहकर वातावरण द्वारा प्राप्त किया जाता है।
 16. (4) प्याजे द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत (theory of cognitive development) मानव बुद्धि की प्रकृति एवं उसके विकास से संबंधित एक विशद सिद्धांत है।
 17. (2) लेव वाइगोत्स्की (Lev Vygotsky) एक प्रसिद्ध रूसी मनोवैज्ञानिक ने संज्ञानात्मक विकास के अपने सिद्धांतों में अपने दो तत्वों संस्कृति और भाषा के प्रभाव को शामिल किया। उनके अनुसार संस्कृति के बिना हमारा दिमागी कार्य एक बन्दर के समान प्रारंभिक मानसिक क्रियाओं तक सीमित है।
 18. (4) सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण : व्यक्ति, परिवार, समुदाय, धर्म, शैक्षिक, आर्थिक एवं राजनैतिक संस्थान हमारा सामाजिक पर्यावरण बनाते हैं।
 19. (1) आगमनात्मक बुद्धि विशिष्ट से सामान्य की ओर अग्रसर होता है, **मूर्त से अमूर्त की ओर** अग्रसर होता है जबकि निगमनात्मक विधि सामान्य से विशिष्ट, अमूर्त से मूर्त की ओर अग्रसर होता है। प्रदर्शन विधि में अध्यापक प्रयोग का प्रदान या चार्ट, मॉडल आदि का प्रदर्शन कक्षा में करता है साथ में व्याख्या भी करता है।
 20. (1) बच्चों में सोच कैसे विकसित होती है, इस बात में सबसे अधिक योगदान मनोवैज्ञानिक जीन जीन प्याजे का है। स्वयं से शुरू होकर उन्होंने 50 वर्ष तक बच्चों का अवलोकन किया। उन्होंने पहचाना कोई बच्चा अपने बौद्धिक व संज्ञानात्मक विकास के दौरान अनुक्रमिक चरणों में ऐसा कैसे कर सकता है या नहीं कर सकता है।
 21. (1) आगमन विधि से अधिगम-एक मानव के रूप में हम आगमन विधि में संलग्न रहने के काफी योग्य लगते हैं (एक सामान्य नियम या प्रतिरूप का अनुमान विशेष स्थितियों के द्वारा लगाना) परन्तु निगमनात्मक तर्क (आगमन के विपरीत सामान्य नियम के विशेषज्ञ स्थिति का अनुमान लगाना) के लिए उसकी अपेक्षा कम योग्य है।
 22. (1) पुनः सीखना (Re-learning)। यह स्मरण-विस्मरण से सम्बद्ध मनोवैज्ञानिक इविंगहास के प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है।
 23. (4) वाहन कार्य के दौरान थोड़े समय के लिए अवकाश या अन्तराल भावी कार्य हेतु व्यक्ति को उर्जावान-स्फूर्तिकारी बनाता है। इसीलिए यह कार्य को दौरान अल्प अंतराल या अवकाश सार्थक माना जाता है।
 24. (3) सभी सृजनशील बुद्धिमान एवं चिंतनशील जरूर है। किंतु सभी बुद्धिमान सृजनशील (Creative) हो यह जरूरी नहीं है।
 25. (1) एपिस्टिमोलॉजी (Epistemology) ज्ञानशास्त्र का पर्याय है। इस विज्ञान में ज्ञान का सृजन, स्वरूप एवं कारण प्रभाव की विशद विवेचना की जाती है।

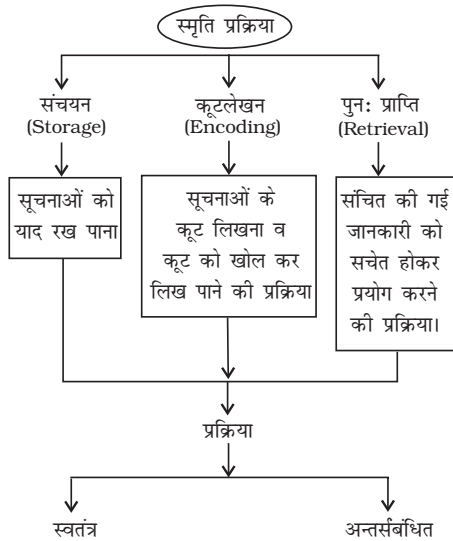
□□□

मानव स्मृति एवं विस्मृति (Human Memory & Forgetting)

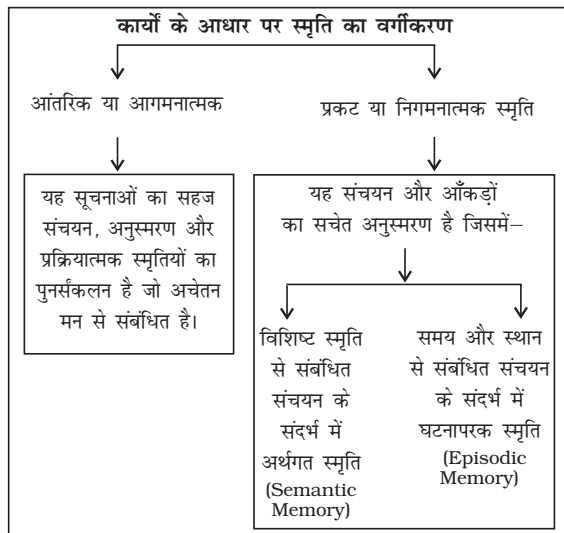
स्मृति से तात्पर्य हमारे मस्तिष्क की उस शक्ति या क्षमता से है जिसकी सहायता से सीखे हुए ज्ञान तथा पूर्व अनुभवों को धारण करने तथा आवश्यकतानुसार दोहराने या काम में लाये जाने का कार्य किया जाता है। इस प्रकार से अधिगम यानी सीखना, सीखी हुई बातों को मस्तिष्क में धारण करना तथा समयानुसार पुनः प्रस्तुत करना स्मृति है। प्रक्रिया के मुख्य अंग अथवा अवस्थाओं को आज की मनोवैज्ञानिक भाषा में संचयन एन्कोडिंग तथा पुनः प्राप्ति कहा जाता है।

वुडवर्थ के अनुसार, 'पहले सीखी जा चुकी बात का स्मरण करना ही स्मृति है।' रायवर्न के अनुसार, अपने अनुभव के संचित रखने और उनको प्राप्त करने के कुछ समय बाद चेतना के क्षेत्र में लाने की जो शक्ति हमें होती है, उसे स्मृति कहते हैं।

स्मृति में सीखी गई बातों का कूट लेखन संचयन, और पुनः प्राप्ति की प्रक्रिया:



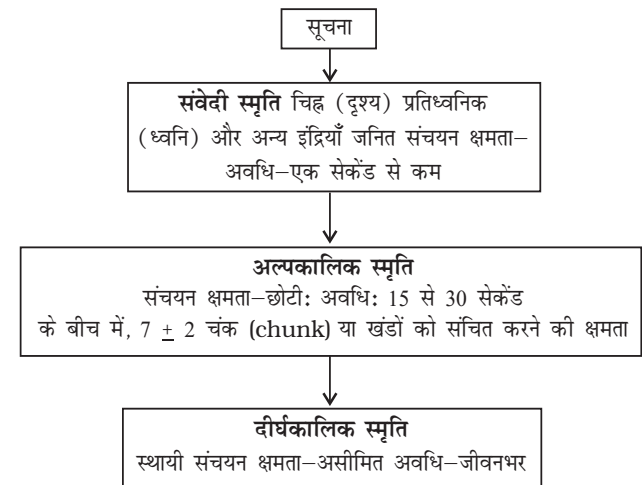
- प्रक्रिया में कोड व कूट लिखना पहली प्रक्रिया है।
- संचयन दूसरी प्रक्रिया है जैसे कि हम सूचना संग्रह करते हैं।
- पुनः प्राप्ति तीसरी प्रक्रिया है जो कि संचित की गई सूचना को अनुप्रयोग हेतु पुनः प्राप्त करना है।



स्मृति को समझने के लिए विभिन्न सिद्धान्त

I. स्मृति के चरणबद्ध सिद्धान्त (Stage Model)

1968 में एटकिंशन और शिफ्रिन ने सिद्धान्त या प्रतिमान प्रस्तुत करते हुए प्रस्तावित किया कि जैसे ही हम किसी जानकारी को प्राप्त करते हैं, वह हमारी संवेदनात्मक स्मृति में प्रवेश कर जाती है। यह एक व्यवस्था है जो विभिन्न संवेदनाओं से सूचनाओं को प्राप्त करती है और जब तक कि कोई व्यक्ति इसे प्राप्त करता है और समझ पाता है यह बहुत ही कम समय तक रहती है। यह सूचना अल्पकालीन स्मृति में दर्ज हो जाती है। इसके अंतर्गत सूचना का कुछ भाग कुछ समय (30 सेकेंड) के लिए होता है।



एटकिंसन और शिफ्रिन ने प्रस्तावित किया था कि अल्पकालीन स्मृति में सूचनाओं का प्राथमिक रूप से ध्वनि यानी दृश्य तथा ध्वनि कोड के रूप में तब तक अंकित रहता जब तक कि इसका अनुभव और इसे सिद्ध नहीं किया जाता। यह अल्पकालिक स्मृति में रहती है। अल्पकालिक स्मृति क्षणभंगुर होती है।

जब सूचना प्राप्त की जाती है और अक्सर पुनः अभ्यास और अनुभव के रूप में प्रयोग की जाती है तब यह दीर्घकालिक स्मृति का हिस्सा यह हमारे मस्तिष्क में बन जाती है।

संवेदनात्मक स्मृति की विशेषताएँ

(1) यह क्षणभंगुर होती है क्योंकि यह स्मृति को एक पल के लिए ही रह पाती है।

(2) यह संवेदना पर निर्भर है। (चिह्नात्मक प्रारूप, दृश्य और प्रतिध्वनिक (ध्वनि) स्वरूप

(3) यह सूचना का लेखारोपण है।

अल्पकालीन स्मृति की विशेषताएँ

(1) यह क्षणभंगुर होती है परन्तु इतनी नहीं जितनी संवेदनात्मक स्मृतियाँ होती हैं।

(2) इसमें सूचनाओं को 7 ± 2 खंडों में संचित कर पाने की क्षमता होती है यानी लंबी सूचना को 7 ± 2 के खंडों में समूहीकरण करना उदाहरणस्वरूप फोन नंबर 9697983300 को 5 समूहों में संचयन करना।

(3) सूचनाओं की अवधि को 15 से 30 सेकेंड तक रोके रखना।

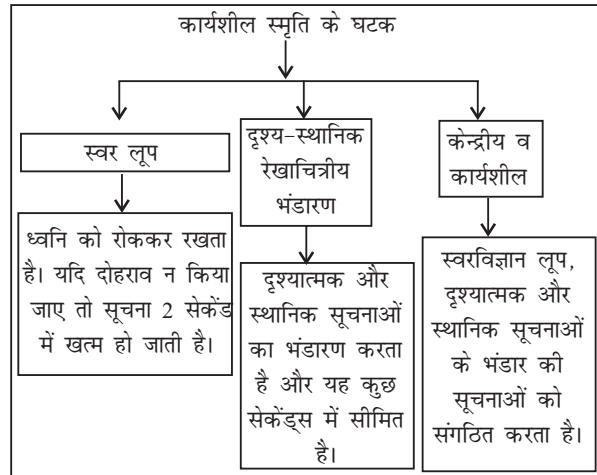
चकिंग या खंड करना— 7 ± 2 के खंडों के रूप में सूचनाओं के संचयन की प्रक्रिया और अंतः स्मृति को बढ़ाना।

रिहर्सल या दोहराना या याद करना। अतः यह सूचना दीर्घकालीन स्मृति का भाग बन जाएगी।

विस्तृत रिहर्सल—अभ्यास को बार-बार करना और उसमें मूल्यों को जोड़ते जाने से दीर्घकालीन स्मृति की स्थिरता में वृद्धि होती है।

कार्यशील स्मृति (Working Memory)

यह संवेदनात्मक स्मृति का दूसरा नाम है और इसे बडेली (Baddeley) ने खोजा है जिन्होंने बताया कि अल्पकालीन स्मृति निष्क्रिय भंडार नहीं है, इसमें प्रचूर सामग्री है।



अब प्रश्न उठता है कि सूचनाएँ किस तरह एक स्थान से दूसरे स्थान पर जमा हो जाती हैं।

एटकिन्सन और शेरिफन ने नियंत्रण की गति को प्रस्तावित किया था जिसका कार्य विभिन्न स्मृतियों के भंडारों से सूचनाओं के प्रवाह का निरीक्षण करना है।

सूचना प्रक्रियाकरण सिद्धांत

इस मॉडल को एटकिन्सन एवं शिफ्रिन ने 1968 में स्मृति के प्रथम मॉडल के रूप में चुना था। इसे अवस्था मॉडल के रूप में जाना जाता है।

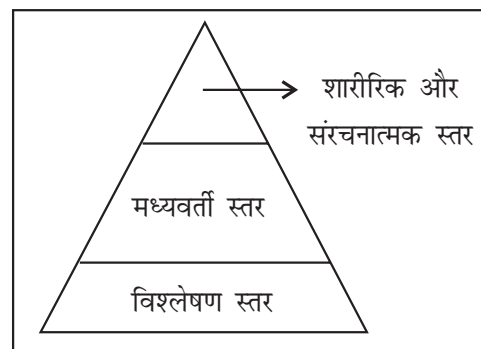
विचार पर आधारित—स्मृति सभी सूचनाओं को संचित करने की क्षमता है जिसे हम अधिगम और अनुभव से प्राप्त करते हैं। यह सिद्धांत कंप्यूटर पर आधारित है।

कंप्यूटर बड़ी मात्रा में सूचनाओं का लेखा-जोखा रखता है, संचयन करता है और ऑपरेशनल परिणामों के आधार पर और कुशलता से काम करता है।

क्रेक और लॉकहार्ट (1972) द्वारा प्रस्तावित प्रक्रियाकरण मॉडल का स्तर विचार—किसी भी नई सूचना का प्रक्रियाकरण उस तरीके से संबंधित है जिसमें इसे जाना, विश्लेषित अथवा समझा जाता है जिससे निर्धारित होता है कि यह अंततः कितने समय तक स्मृति में रहेगा?

स्मृति स्तर (Memory Levels) : यह शिक्षण-अधिगम विद्यार्थी को कई तथ्यों, सामान्य नियमों तथा परिणामों को याद करने की क्षमता प्रदान करता है। याद किया हुआ यह ज्ञान विद्यार्थी को शिक्षण अधिगम के बोध एवं चिंतन स्तर पर बहुत सहायक सिद्ध होता है। अतः शिक्षण अधिगम का स्मृति स्तर बोध एवं चिंतन स्तर के शिक्षण अधिगम में उच्चतर संरचना के निर्माण के लिए ठोस आधार प्रदान करता है।

सूचना प्रक्रियाकरण के स्तर



क्रेक और लॉकहार्ट का प्रारूप

शारीरिक और संरचनात्मक

- कोई नाप, आकार और रंग के अनुसार विश्लेषण करेगा।
- यह प्रक्रियाकरण का निम्न स्तर है।

मध्यवर्ती स्तर

- सूचना के ध्वनिविज्ञान का विश्लेषण करना तथा उसमें अर्थ डालना।

विश्लेषण स्तर

- यह सूचना के प्रकरण का सबसे गंभीर स्तर है और इसे लंबे समय तक स्मृति में रखा जा सकता है।

दीर्घकालीन स्मृति—ऐसी सामग्री जो अल्पकालीन स्मृति की क्षमता एवं धारण अवधि की सीमाओं को पार कर जाती है, वह दीर्घकालिक स्मृति में प्रवेश करती है जिसकी क्षमता व्यापक होती है। यह स्मृति का ऐसा स्थायी भण्डार है जहां सूचनाएं चाहे वह कितनी भी नयी क्यों न हो, जैसे—अपने कल क्या नाशता किया था? से लेकर इतनी पुरानी जैसे—आपने अपना 5वाँ जन्म दिन कैसे मनाया था? सभी संचित होती है।

दीर्घकालीन स्मृति की विशेषताएँ

- (1) यहाँ संचयन की प्रकृति स्थायी है।
- (2) इसमें संचयन करने की क्षमता बहुत अधिक है।
- (3) दर्ज की गई सूचना अर्थ की दृष्टि से कूटलिखित है।
- (4) सूचनाओं को लंबे समय तक दर्ज किया जा सकता है।

दीर्घकालीन स्मृति के प्रकार : टलविंग के अनुसार घोषणात्मक/प्रक्रियात्मक स्मृति (Declarative/Procedural Memory)

दीर्घकालीन स्मृति जिसमें सभी सूचक नामों और तिथियों का वर्णन हो, जैसे आपके स्कूटर का नंबर, मित्र के घर का नंबर ऐसी स्मृति के उदाहरण हैं। प्रक्रियात्मक स्मृति बिना तथ्यों के पुनः स्मरण द्वारा केवल कार्य करने की योग्यता हैं, उदाहरण के लिए साइकिल चलाना, गेंद पकड़ना आदि।

कई कार्यों एवं कौशलों को पूरा करने हेतु प्रक्रियाओं से संबंधित स्मृतियों जैसे चाय बनाने की विधि क्या है, साइकिल कैसे चलते हैं आदि।

घोषणात्मक या सूचक स्मृति मौखिक वर्णन हेतु सहज है जबकि प्रक्रियात्मक स्मृति की विषय-वस्तु का वर्णन नहीं किया जा सकता। बाद में, तलविंग ने स्मृति का अन्य वर्गीकरण प्रस्तावित किया है :

1. घटनापरक स्मृति (Episodic Memory)

इसमें हमारे व्यक्तिगत जीवन की स्मृतियाँ सम्मिलित हैं। यानी जीवन के व्यक्तिगत अनुभवों की स्मृतियाँ। अतः ये भावुक प्रवृत्ति के होते हैं।

उदाहरण के तौर पर—जिस दिन आपके मित्र ने आपको थप्पड़ मारा था, उस दिन आपको कैसा महसूस हुआ था?

ऐसे अनुभवों को भूल पाना मुश्किल होता है। परन्तु बहुत सी घटनाएँ हमारे आस-पास होती रहती हैं, यह कई बार याद आती हैं।

परन्तु दर्दनाक और बुरे अनुभवों की छोटी-छोटी बातों को इतना याद नहीं किया जाता जितना कि सुखी समय को किया जाता है।

2. अर्थगत स्मृति (Semantic Memory)

प्रासंगिक स्मृति हमारे अनुभवों व विशिष्ट घटनाओं को एक धारावाहिक रूप में प्रस्तुत करती है। अर्थ स्मृति मुख्यतः प्रासंगिक स्मृति से ही निकलती है।

- इसमें सामान्य चेतना और ज्ञान की स्मृतियाँ सम्मिलित हैं। तर्क संबंधी सभी अवधारणाएँ, विचार और नियम अर्थ संबंधी स्मृति में संचित होते हैं।
- उदाहरणस्वरूप 2 और 6 से 8 बनता है, अर्थ संबंधी स्मृति के कारण ही हम यह याद रख पाते हैं।
- अर्थ संबंधी स्मृति को आसानी से भुलाया नहीं जा सकता।

सोपानिक नेटवर्क मॉडल : स्मृति में ज्ञान का प्रतिनिधित्व और व्यवस्थीकरण

दीर्घकालीन स्मृति में सूचनाओं का प्रतिनिधित्व करने की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई अवधारणा (Concept) है।

अवधारणाएँ वस्तुओं और घटनाओं की मानसिक श्रेणियाँ हैं

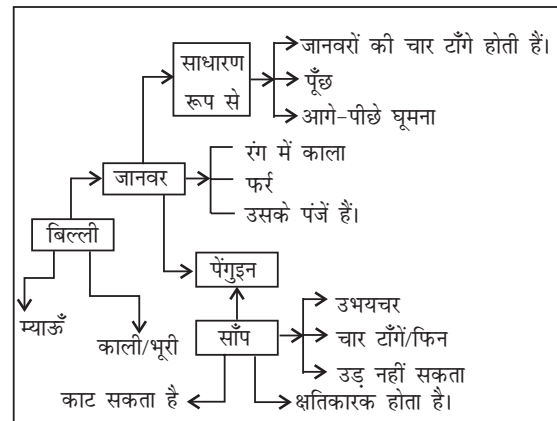
जो किसी एक या अन्य तरीके से एक दूसरे से समान है। एक बार अवधारणाओं के निर्मित हो जाने के बाद इन्हें समान विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण के लिए सेव शब्द की कई बहुरूपता है, जो कि फल का एक प्रकार है, तो यह फल की श्रेणी में आएगा।

अवधारणाओं को आकार मात्र के अंतर्गत व्यवस्थित किया गया है। यह मानसिक ढाँचा है, जो शब्द के बारे में हमारे ज्ञान और मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

उदाहरण के तौर पर ड्राइंग रूम के आकारमात्र पर विचार करें। इसमें कई वस्तुएँ जैसे सोफा सेट, सेंटर टेबल, पेंटिंग आदि, जिसे आमतौर पर ड्राइंग रूम में रखा जाता है।

एलॉन कोलिन और रोस क्वालिन ने एक ऐसे रिसर्च पेपर को प्रकाशित किया जिसमें उन्होंने बताया कि दीर्घकालीक स्मृति में ज्ञान सोपानात्मक रूप (Hierarchical form) से संगठित किया जाता है और संजाल संरचना (Network structure) का अनुमान लगाया जा सकता है। इस संरचना के तत्वों को नोड्स (Nodes) कहा जाता है।

नोड्स के बीच के संबंधों को लेबल्स (Labels) कहा जाता है जो अवधारणा वर्ग की विशेषताओं का संकेत करता है।



इस विचार के अनुसार, हम किसी निश्चित स्तर तक सभी प्रकार के ज्ञान का संचय कर सकते हैं जो कि सम्बद्ध वर्ग के सभी घटकों पर लागू होती है जिसमें यह दोहराने की बात नहीं है कि सूचना का क्रम निचले स्तर का है। यह संज्ञानात्मक अर्थव्यवस्था के उच्च वर्ग को सुनिश्चित करती है, जिसका अर्थ न्यूनतम दोहराव सहित दीर्घकालीन स्मृति की क्षमता का अधिकतम और कुशलतम प्रयोग है।

- इस बात का भी अवलोकन किया गया है कि सूचना का कूटलेखन बोधात्मक रूप में किया जाता है।
- इसमें रेखांकित स्पष्ट चित्र (Image) जो प्रत्यक्ष रूप से किसी वस्तु की बोधात्मक विशेषताओं के बारे में बताता है।
- लगभग सभी स्पष्ट विषय-वस्तुएँ (और अवधारणाएँ) चित्र बनाते हैं और उनसे संबंधित ज्ञान मौखिक और दृश्यात्मक ढंग से कोड कर ली जाती हैं। इसे दोहरे कूट की परिकल्पना कहा जाता है जिसे मूल रूप से एलान पैवियो ने प्रस्तावित किया था।

- इस परिकल्पना के अनुसार, मूर्त संज्ञाओं और संबंधित सूचनाओं को चित्रों के रूप में कोड व संचित किया जाता है और अमूर्त अवधारणाओं से संबंधित सूचनाओं में मौखिक और वर्णनात्मक कोड का अनुमान लगाया जाता है।

उदाहरण के तौर पर डायनासौर—हमने इन्हें स्वयं नहीं देखा है लेकिन फिर भी हम इसकी आकृति को मानते बनाते हैं।

रचनात्मक प्रक्रिया मॉडल

- इस विचारधारा को **एबिंहॉस** और उसके अनुगामियों द्वारा दिया गया है, जो सूचना के परिमाण पर जोर देती है जिसका स्मरण किया गया है और इसकी शुद्धता को संचयन और पुनरुत्पादन के विषयों से जाँचा जाता है।
- इसे बारलेट द्वारा चुनौती दी गई थी। उन्होंने बताया कि प्रारंभिक अवस्था में, स्मृति एक सक्रिय प्रक्रिया है और जो भी हमने संचित किया है उसमें निरंतर बदलाव होते रहते हैं।
- जो भी हमने याद किया है वह उन साधनों से प्रभावित होता है जिन्हें हम सामग्री को दोबारा याद करने के लिए प्रयोग करते हैं और एक बार जब यह हमारी स्मृति प्रणाली में दर्ज हो जाता है ये अन्य संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं से अलग नहीं रह सकता है।
- इसीलिए बारलेट ने स्मृति को रचनात्मक प्रक्रिया के रूप में माना है न कि पुनरुत्पादकीय प्रक्रिया के रूप में और इसे मानसिक निरूपण का नाम दिया है।

अतः स्मृति रचना की सक्रिय प्रक्रिया है जहाँ सूचना किसी व्यक्ति की समझ के अनुसार उसके पिछले ज्ञान के अंतर्गत कोड व संचित की गई होती है।

स्मृति का माप (Memory Measurement)

स्मृति को कई तरीकों से मापा जा सकता है। मुख्य पद्धतियाँ हैं—

(1) मुक्त स्मरण (Free Recall)

यह तथ्यों और घटनाओं संबंधी स्मृतियों को मापने के लिए अच्छी है।

मुक्त स्मरण विधि में सहभागी समान शब्दों को प्रस्तुत करते हैं और फिर उनसे घटना या तथ्यों को किसी भी क्रम में याद करने के लिए कहा जाता है। जितना वे अधिक याद कर पाते हैं, उनकी स्मृति उतनी ही अच्छी मानी जाती है।

(2) अभिज्ञान (Recognition)—पद्धति में, शब्दों को बताने की बजाय भागीदार वस्तुओं को देखते हैं और उन्हें पहचान कर कुछ समय के बाद वे बातों को याद करते हैं। चीजों को देखकर उन्हें जितनी अधिक बातें याद आएँगी, उनकी स्मृति उतनी ही बेहतर है।

(3) तथ्य सत्यापन (Fact Verification)—यह अभिज्ञान स्मृति को मापने के लिए बहुत अच्छा माध्यम है।

वाक्य सत्यापन कार्य में भागीदारों को प्रतिक्रिया देने के लिए

कहा जाता है। जैसे दिए गए कुछ वाक्य सही हैं या गलत। जितनी जल्दी भागीदार प्रतिक्रिया देते हैं उनकी स्मरणशक्ति उतनी ही बेहतर है।

(4) प्राइमिंग (Priming)—सूचनाओं को मापने हेतु तैयार करना, हम इसे मौखिक रूप से नहीं दर्शा सकते।

प्राइमिंग पद्धति में भागीदारों को सूची दिखाई जाती है जैसे लाल, घर, बगीचा, खेलना आदि। और उन्हें कुछ शब्द भी दिखाए जाते हैं। घमब, चलस, रतड़ आदि जिसे पहले कभी नहीं देखा गया। इसके बाद, बिना देखे शब्दों की तुलना में भागीदार उन शब्दों को जल्दी समझ पाएँगे जिन्हें पहले जाना जा चुका है।

विस्मृति/विस्मरण (भूलना)

- विस्मृति से अभिप्राय है पहले सीखी या याद की गई चीजों को धारण करने तथा उनका पुनः प्रस्तुतीकरण कर सकने में मिलने वाली असफलता।
ट्रेवर के अनुसार, विस्मृति का अर्थ है किसी समय प्रयास करने पर भी किसी पूर्व अनुभव का स्मरण करने या पहले सीखे हुए क्रिया को करने में असफलता।
- विस्मृति की प्रकृति और तीव्रता की दृष्टि से इसे कई तरह से वर्गीकृत किया जा सकता है : जैसे—(क) निष्क्रिय या सामान्य विस्मृति तथा सक्रिय या असामान्य विस्मृति, (ख) सामान्य तथा विशिष्ट विस्मृति, (ग) शारीरिक विस्मृति तथा मनोवैज्ञानिक विस्मृति।

विस्मरण और इसके कारण (Forgetting and its Causes)

विस्मरण को समझने का प्रथम व्यवस्थित प्रयास हेरमन एब्बिंगहास द्वारा किया गया था, जिन्होंने निरर्थक शब्दों की सूची को याद कर लिया था (cc ट्राईग्राम) जैसे नोल ओफ सेप और फिर इसके परीक्षणों को मापा। उसने निश्चित समय के अंतराल में यह सूची को याद करने की कोशिश की।

उसने देखा कि निश्चित समय में विस्मरण किसी निश्चित नियम का अनुसरण करता है—

विस्मृति के सिद्धान्त (Theory of Forgetting)

● विस्मृति के सिद्धान्त हमें यह बताते हैं कि विस्मृति क्यों होती है? जैसे स्मृतिचिन्हों के क्षय का सिद्धान्त हमें यह बताता है कि विस्मृति एक नितान्त स्वाभाविक प्रक्रिया है। समय गुजरने के साथ-साथ स्मृतिचिन्हों के रूप में सुरक्षित हमारी स्मृति धुंधली होती जाती है और धीरे-धीरे हम स्वाभाविक रूप में अपनी याद की गई चीजों को भुलाते जाते हैं।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक **सी.टी. मार्गन** द्वारा प्रतिपादित **बाधा या हस्तक्षेप का सिद्धान्त** हमें यह बताता है कि हम पहली सीखी हुई चीजों तथा बाद में सीखी गई चीजों के पारस्परिक टकराव की वजह से विस्मृति के शिकार बन जाते हैं। जब पीछे सीखी हुई बातें पहले सीखी गई बातों को पुनः स्मरण में बाधक बने तो इस प्रकार की बाधा से संबंधित प्रक्रिया को पृष्ठोन्मुख अवरोध

(Retraction inhibition) कहा जाता है और जब पहले सीखी हुई बातें, नई बातों के सीखने में बाधा पहुंचाये तो इस प्रकार की बाधा से संबंधित प्रक्रिया को अग्रोन्मुख अवरोध (Proactive inhibition) का नाम दिया जाता है।

● इबिंहॉस नामक मनोवैज्ञानिक ने विस्मृति की प्रक्रिया और परिणामों को स्पष्ट करते हुए विशेष प्रकार के वक्रों का (जिन्हें विस्मृति वक्र कहा जाता है) प्रयोग किया। उसने इन वक्रों को ग्राफ पेपर पर अंकित करने के लिये विस्मृत सामग्री (Retraction inhibition) की मात्रा को शीर्ष रेखा तथा याद करने के पश्चात् गुजरने वाले समय को (Proactive inhibition) क्षैतिज रेखा पर रखा। इन वक्रों के आधार पर उसने यह निष्कर्ष निकाला कि :

(क) विस्मृति याद रखने के पश्चात् गुजरने वाले समय की मात्रा पर निर्भर करती है।

(ख) प्रारम्भ में विस्मृति की गति तीव्र होती है, परन्तु बाद में इसकी कमी होती चली जाती है

(ग) सारयुक्त सामग्री की विस्मृति सारहीन सामग्री से कम होती है तथा

(घ) वितरित अभ्यास विधि को अपनाकर याद करने में सामूहिक अभ्यास विधि की तुलना में विस्मृति कम होती है।

● विस्मृति की तीसरी अवस्था भंडारण (Storage) में विफलता का सिद्धान्त है। इसके अनुसार कोई बात हम इसलिए भूल जाते हैं क्योंकि उसका भंडारण हमारी स्मृति में उचित प्रकार से नहीं हो पाती है। विस्मृति का यह सिद्धान्त **अभिप्रेरित विस्मृति या विकृत विस्मृति का सिद्धान्त** कहलाता है।

इसके अनुसार हम कोई बात इसलिए भूल जाते हैं बॉकि हम इसे अपनी स्मृति में बनाये रखने को मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार ही नहीं होते। हमारी आन्तरिक इच्छा यही रहती है कि हमें यह बात स्मरण ही न रहे और इसी वजह से हम पहले की याद की गई बातों या अनुभवों को अपने अचेतन मन की परतों में इतना गहरा दबा देते हैं कि हमें उनकी कोई स्मृति नहीं रहती।

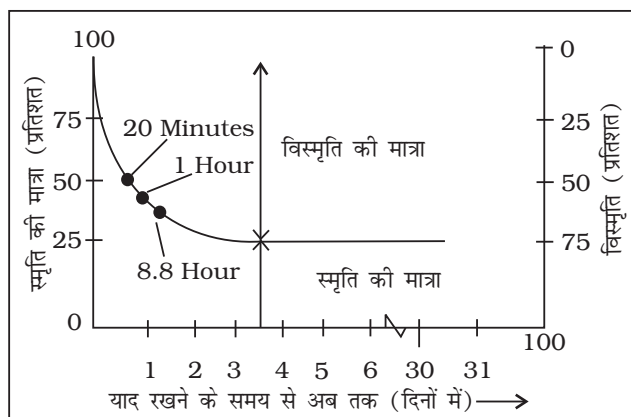
विस्मृति वक्र (Curve of Forgetting)

विस्मृति वक्र ग्राफ पेपर पर बनाई गई वह आकृति है जो यह प्रदर्शित करती है कि एक विशेष परिस्थिति में कोई व्यक्ति विशेष अपनी याद की हुई सामग्री को समय से गुजरने के साथ-साथ किस प्रकार भूलता है। इस आकृति को ग्राफ पेपर अंकित करने के लिए हमें भूल जाने वाली सामग्री (Amount of Forgotten) की मात्रा को शीर्ष रेखा (Y-axis) तथा याद करने के पश्चात् गुजरने वाले समय (Time lapsed since learning) को क्षैतिज रेखा (X-axis) पर प्रकट करना होता है इस प्रकार अंकित की गई जो आकृति वक्र रूप में प्राप्त होती है वह भूलने के वक्र के नाम से जानी जाती है।

एविंगहास (Ebbinghaus) द्वारा किया गया अनुसंधान कार्य विस्मृति को समझने और विस्मृति वक्र से परिचित होने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जाता है। उसने अपने अनुसंधान कार्य के लिए 3 अक्षरों के अर्थहीन शब्द जैसे Nof, bdf, cem, ler आदि

लिए। इस प्रकार के शब्दों से युक्त परिसूचियों (Lists) को उसने स्वयं याद करने का कार्य शुरू किया। उसने यह नोट किया कि याद किये जाने वाली पूर्ण सामग्री को बिना कुछ भूले ज्यों-की-त्यों सुनाने में कितना समय लगता है। इसके बाद कुछ समय गुजरने के पश्चात् उसने फिर यह देखने का प्रयत्न किया कि अब उसे कितना कुछ याद रहा है और इस तरह विभिन्न समय की इकाइयों से गुजरने के दौरान कितना कुछ याद रहा, इसको नोट किया जाता रहा। परीक्षण के परिणाम को निम्न प्रकार नोट किया गया—

बीता हुआ समय (Time lapsed)	भूल जाने वाली सामग्री का प्रतिशत (Percentage of forgotten amount)
20 मिनट	47%
1 दिन	66%
2 दिन	72%
3 दिन	75%
31 दिन	79%



एविंगहास का विस्मरण चक्र

उपर्युक्त ग्राफ संकेत देता है कि पहले नौ घंटों में विस्मरण की दर अधिकतम होती है। इसके बाद दर धीरे-धीरे हो जाती है और फिर काफी दिनों के बाद अधिक याद नहीं रहता।

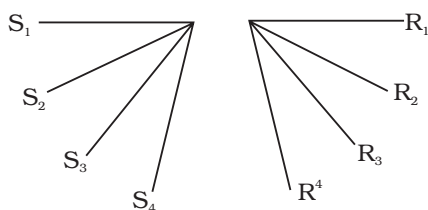
विस्मरण की व्याख्या करने वाले सिद्धान्त

(1) अवशेष पतन नियम (Trace Decay theory)

यह मानता है कि स्मृति से केन्द्रिय तंत्रिका तंत्र में बदलाव होते हैं जो अंदर से मस्तिष्क में शारीरिक परिवर्तन लाते हैं उन्हें अवशेष पतन कहते हैं। ये स्मृतियाँ जब अधिक समय तक उपयोग नहीं की जाती, तो ये आसानी से धूमिल हो जाती हैं और बाद में भी याद नहीं की जाती।

अवशेष पतन नियम की आलोचना की गई थी क्योंकि इसमें विस्मरण को पर्याप्त रूप से नहीं समझाया गया है।

(2) व्यवधान का नियम (Interference theory)



यहाँ हमें अनेक प्रत्यारोपित अनुक्रिया या उद्दीपनों का युग्म प्राप्त होती है जो परस्पर व्यवधान स्वरूप होती हैं

एक समय पर दो प्रतिक्रियाएँ रहती हैं या स्थितियाँ अन्य प्रतिक्रियाओं से जुड़ जाती हैं, अतः व्यवधान आ जाते हैं।

S—O—R को उचित रूप से विस्मरण करना महत्वपूर्ण है परन्तु हम कई उद्दीपनों से घिरे होते हैं और कई तरह की प्रतिक्रियाएँ देते हैं।

दो व्यवधानों के कारण विस्मरण होता है :

- अग्रसक्रिय (Proactive) → आगे बढ़ना
- पूर्वप्रभावी (Retroactive) → पीछे जाना

अग्रसक्रिय व्यवधान के अंतर्गत, पुराने अनुभव बाद में याद आने पर व्यवधान डालते हैं।

पूर्वप्रभाव व्यवधानों के अंतर्गत भावी अनुभव पुराने अनुभवों में व्यवधान डालते हैं।

पूर्वप्रभाव व्यवधानों के अंतर्गत भावी अनुभव पुराने अनुभवों में व्यवधान डालते हैं।

(3) पुनः प्राप्ति या स्मरण का नियम (Retrieval Rule)

अवशेष पतन नियम के कारण विस्मरण होता है। पुनः प्राप्ति के नियम हमें स्मृति में संचित सूचना को प्राप्त करने में मदद करते हैं। यह विचारधारा टुलविंग द्वारा दी गई थी, जिन्होंने प्रमाण दिया था कि स्मृति की विषय सामग्री अनुपस्थिति के कारण या याद करने पर मिले संकेतों के असत्य होने के कारण पहुँच से बाहर हैं।

विद्यार्थी अथवा व्यक्ति की याददाश्त अथवा याद रखने व स्मृति को प्रभावशाली बनाने वाले कुछ तकनीक एवं उपाय (Measures and Techniques for Improving Memory)

स्मरणशक्ति बढ़ाने की तकनीकें :

यदि समान कारण की वजह से बातें भूली जा रही हों तो स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है।

स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए प्रयुक्त युक्तियों को स्मृति-विज्ञान (Mnemonics) कहा जाता है जिसमें आप अपनी स्मरणशक्ति को सुधार सकते हैं। इस विज्ञान में चित्रों का प्रयोग किया जाता है।

इसमें जिस भी बात को आपको याद रखना है आपको उससे संबंधित उज्ज्वल और संवादात्मक चित्रों को बनाने की आवश्यकता है।

(क) प्रथम व केन्द्रीय शब्द पद्धति (Key Word Method)

जैसे आवर्त सारणी के घटकों को याद करने के लिए विद्यार्थी उस बाद को याद रखने के लिए रोचक वाक्य बना सकता है।

H Likba Sir Ka Nama Gul Manjan Kar Katkuni आदि।

(ख) स्थानिक पद्धति (Method of Location)

स्थान के आधार पर आप किसी बात को याद रख सकते हैं जैसे किसी का चित्र, मान लीजिए आप किसी किराने की दुकान पर जाते हैं और विमबार लेना भूल जाते हैं, फिर जब आप रसोईघर में जाते हैं तो एक दम से आपकी नजर विमबार पर पड़ती है और आपको याद आ जाता है कि आप इसे लेना भूल गए थे।

(ग) याद करने और रखने की इच्छा और संकल्प (Will power to remember) — याद करने वाले के अन्दर विषय-वस्तु को याद करने, उसे अपनी स्मृति में धारण करने तथा आवश्यकता पड़ने पर उसे काम में ले आने के प्रति पूर्ण आत्मविश्वास, दृढ़ निश्चय तथा संकल्प शक्ति होनी चाहिए। अगर ऐसा होता है तो सब कुछ उसके अनुकूल ही होगा।

(घ) रुचि और अवधान (Interest and attention) — सीखने और स्मरण करने के कार्य में जब तक पर्याप्त रुचि न हो तब तक उसका सीखने या याद करने में पूरी तरह ध्यान केन्द्रित नहीं किया जा सकता। परिणामस्वरूप सफलता प्राप्त करना लगभग असम्भव ही हो जाता है। इस बारे में **भाटिया साहब (Bhatia)** लिखते हैं—

‘रुचि अवधान की जननी है और अवधान स्मृति की दादी, अगर तुम स्मृति पाना चाहते हो तो सबसे पहले तुम्हें उसकी माँ तथा दादी तक पहुँचना होगा।

इसलिए याद करने वाले को विषय-सामग्री में रुचि बनाए रखने और उस पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए पूरे प्रयत्न करने चाहिए।

(ङ) दोहराना और अभ्यास (Repetition and practice)

— सीखने और स्मरण करने के कार्य में दोहराने तथा अभ्यास का भी बहुत महत्व है। अगर पूरी तरह सोच-समझ कर किसी चीज को बार-बार दोहराया जाए अथवा अभ्यास किया जाए तो उसे स्मृति पटल बनाए रखना और पुनः स्मरण कर उसी रूप में प्रस्तुत कर सकने के कार्य में बहुत सुविधा हो जाती है। इसलिए विषय-वस्तु को याद करते समय तथा उसे अपनी स्मृति का हिस्सा बना लेने के बाद भी अभ्यास कार्य, पुनरावृत्ति, पुनः निरीक्षण आदि कार्यों को पूरी प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

जैसे स्वयं को दोहराव हेतु पर्याप्त संकेत देना (Availability of Enough Retrieval Cues)

सीखने के दौरान मुख्य बातों को नोट कर लेना।

तथ्य—थॉमस और रोबिन्सन ने भूलने के प्रभाव को न्यूनतम करने के लिए बच्चों की मदद करने के लिए PQRSST तकनीक बनाई है :

तकनीक

P-Preview

Q-Question

R-Read

S-Self recitation

T-Test

(च) परिवर्तन और उचित विश्राम के लिए अवसर प्रदान करना (Provision for change and proper rest) – थकावट और नीरसता सीखने या याद करने के कार्य में बाधक न हों। इसके लिए कार्य परिवर्तन, विश्राम और नींद लेने इत्यादि की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। ताजा दिमाग याद करने और पुनःस्मरण करने-दोनों कार्यों में अच्छा रहता है, इस तथ्य का सदैव ध्यान रहना चाहिए। जैसे— न्यूनतम व्यवधान (Minimum Interference)

किसी निश्चित समय में संबंधित बाद याद रखना जब तक कि विषय आपको समझ न आ जाए।

(छ) साहचर्य सिद्धान्त का पालन करना (To follow the principle of association) – सीखने अथवा याद करने में साहचर्य सिद्धान्त का पालन करना अच्छा रहता है। एक ओर तो पूर्व अनुभवों तथा अधिगम से तथा दूसरी ओर जितने सम्बन्धित वस्तु और क्रियाओं से उसका साहचर्य (Correlation) संभव हो, करने का प्रयत्न करना चाहिए। कभी-कभी साहचर्य (Association) के लिए सीखने और पुनः स्मरण करने के कार्य को असान बनाने वाली कुछ विशेष तकनीकों और विधाओं को प्रयोग में लाना अच्छा रहता है। उदाहरण के लिए जैसे प्रथम अक्षर तकनीक (Acronyms : First Letter Technique)।

किसी भी शब्द का पहला अक्षर कौतुकपूर्ण व रोचक ढंग (Acronyms) से याद कर लेना जैसे WHO वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन।

VIBGYOR शब्द इन्द्रधनुष (Rainbow) के रंगों को याद करने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। इसी तरह ऐसे बहुत से

संयोग (Connections) और सम्बन्ध बनाए जा सकते हैं जिनकी सहायता से विषय-सामग्री को सीखकर याद रखने में आसानी हो सकती है।

(ज) विषय-सामग्री को उचित समूहों में व्यवस्थित करना (Proper grouping of subject matter) – विषय-सामग्री को उचित समूहों तथा इकाइयों में विभक्त कर सुव्यवस्थित करने से याद करने के कार्य में बहुत आसानी हो जाती है। उदाहरण के लिए 567345234 जैसे विशाल टेलीफोन नं. को 567,345,234 के रूप में समूहों में विभक्त कर याद करने और पुनः स्मरण करने में बहुत सहायता मिल सकती है।

जैसे रिदम अथवा लय की सहायता लेना (Taking help from rhythm) – रिदम और लय के रूप में प्रस्तुत होने वाली पाठ्य-सामग्री को याद करने और पुनः स्मरण करने में बहुत आसानी होती है। बच्चे इस तरीके को काम में लाकर गिनती, पहाड़े और बाल कविताओं इत्यादि को बहुत अच्छी तरह याद कर लेते हैं।

संयोजन करने का अर्थ है किसी भी बात का कोई निश्चित क्रम तय करना अर्थात् चंकिंग 7 ± 2 .

किसी बड़ी या संपूर्ण सूचना को समूहों में बाँटते हुए सात भागों में विभाजित करना ताकि उससे अधिक सीखा जा सके और स्मरण शक्ति का विकास हो।

(झ) गहन रूप से प्रोसेसिंग (Deep level Processing)

विषय से संबंधित कई प्रश्न पूछना, उसे इंटरनेट पर देखना, संबंध जोड़ना, विश्लेषण करना और फिर उसे स्मृति में बैठाना। अतः इससे संबंध गहरा होता है और दीर्घकालिक स्मृति में संचित होता है।

बचत विधि

पुनः सीखना विधि जिसे बचत विधि भी कहा जाता है, से व्यक्ति किसी पाठ या विषय को एक निश्चित कसौटी तक सीखकर कुछ समय बाद फिर उसी पाठ या विषय को उसी कसौटी तक सीखता है। सामान्यतः दूसरी बारी में उसे सीखने में कम प्रयास एवं त्रुटि लगता है। इस तरह से प्रयास एवं त्रुटि दोनों की एक तरह से बचत होती है।

यह बचत जितनी ही अधिक होती है स्मृति उतनी ही मजबूत समझी जाती है क्योंकि इससे यह पता चलता है कि दीर्घकालिक स्मृति में व्यक्ति पूर्व सीखे गए विषयों या पाठों को कितने मात्रा में धारण किए हुए है।

इस विधि का प्रतिपादन इब्निहास जो एक जर्मन मनोवैज्ञानिक थे, द्वारा किया गया। इस विधि में पूर्व सीखे गए एकांशों या पाठ को कुछ समान अन्तराल के बाद व्यक्ति पहले के सामने एक यादृच्छिक क्रम में उलट-पलट कर प्रस्तुत किया जाता है। जिसे व्यक्ति पहले के सही क्रम में सुव्यवस्थित करता है।

व्यक्ति को इस पुनर्निर्माण में जितना ही अधिक सफलता मिलती है उसकी स्मृति उतनी ही अधिक मजबूत एवं सुदृढ़ मानी जाती है।

स्मृति का मापन (Measurement of Memory)

किसी की स्मृति अच्छी है या बुरी, इसका अनुमान इसी आधार पर लगाया जा सकता है कि उसकी धारणाशक्ति (Power of Retention or Retentivity) कितनी सशक्त या कमजोर है। किसी की धारण या भंडारण क्षमता (Storage capacity) को मापने लिए हम प्रायः निम्न सूत्र का प्रयोग करते हैं—

$$\text{पहचान प्राप्तांक प्रतिशत} = \frac{R - W}{N} \times 100$$

इस सूत्र में— R = व्यक्ति द्वारा पहचाने गए शुद्ध पदों की संख्या; W = व्यक्ति द्वारा गलत पहचाने गए पदों की संख्या
N = मूल सूची में पदों की कुल संख्या।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- स्किमा (Schema) क्या है?
 - यह एक तरह की मानसिक प्रतिमा है।
 - यह वस्तु, घटनाओं या परिस्थितियों के वर्ग का मानसिक निरूपण (Mental Representation) है।
 - मानसिक प्रतिमा में जोड़-तोड़ की यह एक प्रक्रिया है।
 - स्मृति को उन्नत बनाने की यह एक विधि है।
- लघु-कालीन स्मृति (Short-Term Memory) की संचयन शक्ति (storage capacity) काफी सीमित होती है। आधुनिक प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार इसकी औसतन क्षमता है—
 - 7 ± 2
 - 9 ± 2
 - 6 ± 2
 - 10 ± 2
- लघु-कालीन स्मृति में एक विशेष प्रक्रिया के सहारे बहुत एकांशों (Item) जैसे 14-15 एकांशों तक को एक साथ संचयन किया जा सकता है। इस प्रक्रिया को कहा जाता है :
 - पुनर्संगठन (Reorganization)
 - गुच्छन (Chunking)
 - कूटसंकेतन (Coding)
 - पुनः स्थापन (Reintegration)
- जब कोई व्यक्ति अपनी स्मृति से एक ऐसा मानसिक प्रतिमा (Mental Image) बना सकने में समर्थ हो पाता है मानो वह उस वस्तु को सामने रखा देख रहा हो-तो इस तरह की स्मृति को कहा जाता है—
 - प्रतिमापरक स्मृति
 - दृष्टि प्रतिमा
 - मूर्तकल्पी स्मृति
 - घटनाजन्य स्मृति
- अर्थगत स्मृति (Semantic Memory) के संदर्भ में निरंतर में से कौन सही नहीं है?
 - यह सापेक्ष रूप से (Relatively) स्थायी होती है।
 - इसमें अवरोध (Interference) होता है।
 - यह अर्जन संदर्भ (Acquisition Context) से स्वतंत्र होता है।
 - इसमें गुच्छन (Chunking) होता है।
- लघुकालीन स्मृति (Short-Term Memory) से भी छोटी स्मृति को कहा जाता है—
 - शब्दार्थ-विषयक स्मृति (Semantic Memory)
 - घटनाजन्य स्मृति (Episodic Memory)
 - संवेदी स्मृति (Sensory Memory)
 - गौण स्मृति (Secondary Memory)
- संवेदी स्मृति की अभिव्यक्ति प्रायः की जाती है—
 - एक सेकंड में
 - मिनट में
 - मिलीसेकंड में
 - इनमें से किसी के रूप में नहीं
- लघुकालीन स्मृति (Short-Term Memory) में सामग्रियों (materials) के संसाधन (Processing) का आधार होता है—
 - ध्वनि समानता (Acoustic Similarity)
 - अर्थगत समानता (Semantic Similarity)
 - ध्वनि असमानता
 - अर्थगत असमानता
- पुनः प्राप्ति (Retrieval) विधि का प्रतिपादन किया गया था—
 - बार्टलेट (Bartlett) द्वारा
 - इबिंगहॉस (Ebbinghaus) द्वारा
 - टुलविंग (Tulving) द्वारा
 - मूलर तथा पिलजेकर (Muller & Pilzecker) द्वारा
- विस्मरण के स्वरूप का पता लगाने के लिए इबिंगहॉस ने जो प्रयोग किया था उसमें—
 - कई प्रयोज्यों (Subjects) ने भाग लिया था।
 - सिर्फ एक प्रयोज्य (Subjects) ने भाग लिया था।
 - कोई प्रयोज्य (Subjects) नहीं था।
 - वे स्वयं एक प्रयोज्य (Subjects) का भी काम किये थे।
- एम्नेसिया (Amnesia) किसे कहते हैं?
 - स्मृति का आंशिक लोप (Partial Loss) या सम्पूर्ण लोप को
 - पुनर्लाभ (Spontaneous Recovery) को
 - विस्मरण में कमी को
 - विस्मरण में वृद्धि को
- प्रत्याह्वान (Recall) तथा प्रत्यभिज्ञान (Recognition) में मुख्य अन्तर यह है कि
 - प्रत्याह्वान (Recall) प्रत्यभिज्ञान (Recognition) से कठिन होता है।
 - प्रत्याह्वान में मौलिक विषय (Original Task) अनुपस्थित रहता है जबकि प्रत्यभिज्ञान में उपस्थित रहता है।
 - प्रत्याह्वान पूर्व या अधूरा होता है जबकि प्रत्यभिज्ञान निश्चित या अनिश्चित होता है।
 - प्रत्याह्वान सक्रिय (Active) होता है जबकि प्रत्यभिज्ञान निष्क्रिय (Passive) होता है।
- धारणा (Retention) की जाँच कई विधियों से की जाती है। निम्नांकित में कौन-सी विधि ऐसी है जिससे धारण की जाँच नहीं हो पाती है—
 - प्रत्याह्वान विधि (Recall Method)
 - प्रत्यभिज्ञान विधि (Recognition Method)
 - पुनः सीखना विधि (Relearning Method)
 - क्रमिक सीखना विधि (Serial Learning Method)

14. संसाधन-के-स्तर प्राक्कल्पना (Level-of-processing का प्रतिपादन किया गया था—
 (1) क्रेक एवं लोकहार्ट (Carik & Lockhart) द्वारा
 (2) वुडवर्थ तथा स्कलौसवर्ग (Woodworth & Schlosberg) द्वारा
 (3) मेल्टन एवं इर्विन (Melton & Irwin) द्वारा
 (4) पोस्टमैन एवं इगेन (Postman & Egan) द्वारा
15. वाॅफ-नॉरमैन मॉडल (Waugh-Norman model) के अनुसार दीर्घकालीन स्मृति (Long Term Memory) में विस्मरण का मूल कारण—
 (1) विस्थापन (Displacement) होता है।
 (2) प्रतिस्थापन (Replacement) होता है।
 (3) प्रतिकृति (Replication) होता है।
 (4) पूर्वाभ्यास (Rehearsal) की कमी होती है।
16. बच्चे अपने अनुभव का वर्गीकरण-श्रेणी करण निम्नलिखित में से किस विधि से करते हैं?
 (1) आगमन (2) निगमन
 (3) निगमागमन (4) उपरोक्त सभी
17. टुलविंग (Tulving) ने स्मृति के दो मुख्य प्रकार बतलाये हैं जो निम्नांकित में से कौन-सा है?
 (1) घटनाजन्य स्मृति (Episodic Memory) तथा अर्थगत स्मृति (Semantic Memory)
 (2) पशु स्मृति (Animal Memory) तथा मानव स्मृति (Human Memory)
 (3) प्राथमिक स्मृति (Primary Memory) तथा गौण स्मृति
 (4) संवेदी स्मृति (Sensory Memory) तथा उपविस्तार स्मृति (Subspan Memory)
18. क्रियाप्रसूत अनुबंधन का निम्नलिखित में से किस स्मृति से है?
 (1) घटनात्मक स्मृति (2) अर्थगत स्मृति
 (3) फ्लैशबल स्मृति (4) इनमें से कोई नहीं
19. STM से LTM में सीखे गये पाठों के अंतरण की द्वैध-प्रक्रिया (Dual Process) किसने दी थी?
 (1) एटकिन्सन एवं शिफरिन (Atkison & Shiffirin)
 (2) क्रेक एवं लॉकहार्ट (Craig & Lockhart)
 (3) मूलर एवं पिलजेकर (Muller & Pilzecker)
 (4) टुलविंग (Tulving)
20. लघुकालीन स्मृति (Short-Term Memory) के संचयन क्षमता के संदर्भ में निम्नांकित जादुई संख्या 7 ± 2 (Magic Number) किस मनोवैज्ञानिक द्वारा दिया गया है?
 (1) जार्ज मिलर (2) एबिंगहॉस
 (3) शिफरिन (4) टुलविंग
21. हमारी निजी अनुभवों की स्मृति को कहा जाता है।
 (1) प्रक्रियात्मक स्मृति (2) अर्थ स्मृति
 (3) दीर्घकालिक स्मृति (4) प्रासंगिक स्मृति

22. कुछ करने, विशेष रूप से किसी शारीरिक कार्य को करने की विधि को याद करने की क्षमता है।
 (1) प्रासंगिक स्मृति (2) प्रक्रियात्मक स्मृति
 (3) अर्थ स्मृति (4) उपरोक्त सभी
23. बच्चों में अवधारणा निर्माण की प्रक्रिया कब प्रारंभ होती है?
 (1) प्रोत्साहन के बीच अंतर करने में सक्षम हो
 (2) अच्छी भाषा को सीखने में सक्षम हो
 (3) पाँच वर्ष का हो गया हो
 (4) उपरोक्त सभी
24. बचत विधि का सम्बन्ध निम्नलिखित में से किससे है?
 (1) पुनः याद करना (Recall)
 (2) पुनः सीखना (Re-learning)
 (3) पुनः धारण (Retrieval)
 (4) उपरोक्त सभी
25. स्मृति/स्मरण के चार घटक '4R' किसने दी थी?
 (1) वुडवर्थ (2) वुण्ट
 (3) एडम्स (4) डीवी

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(1)	3.	(2)	4.	(3)	5.	(3)
6.	(3)	7.	(1)	8.	(1)	9.	(3)	10.	(4)
11.	(1)	12.	(2)	13.	(4)	14.	(1)	15.	(1)
16.	(1)	17.	(1)	18.	(3)	19.	(1)	20.	(1)
21.	(4)	22.	(2)	23.	(4)	24.	(2)	25.	(1)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (2) विषयवस्तु का मानसिक निरूपण स्किमा (Schema) कहा गया है।
2. (1) अल्पकालीन स्मृति
 संचयन क्षमता-छोटी : अवधि : 15 से 30 सेकेंड के बीच में, 7 + 2 चंक (chunk) या खंडों को संचित करने की क्षमता
3. (2) चकिंग या खंड करना-7 + 2 के खंडों के रूप में सूचनाओं के संचयन की प्रक्रिया और अंतः स्मृति को बढ़ाना। रिहर्सल या दोहराना या याद करना। अतः यह सूचना दीर्घकालीन स्मृति का भाग बन जाएगी।
4. (3) ऐसा मानसिक प्रतिमांकन जिसकी प्रत्यक्षतः प्रतीति हो, मूर्तकल्पी स्मृति कहलाती है। मूर्त का अर्थ मूर्तिमान व साक्षात् स्वरूप है।
5. (3) अर्थगत स्मृति (Semantic Memory)
 प्रासंगिक स्मृति हमारे अनुभवों व विशिष्ट घटनाओं को एक धारावाहिक रूप में प्रस्तुत करती है। अर्थ स्मृति मुख्यतः प्रासंगिक स्मृति से ही निकलती है। इसमें सामान्य चेतना और ज्ञान की स्मृतियाँ सम्मिलित हैं। तर्क संबंधी सभी अवधारणाएँ, विचार और नियम अर्थ संबंधी स्मृति में संचित होते हैं।

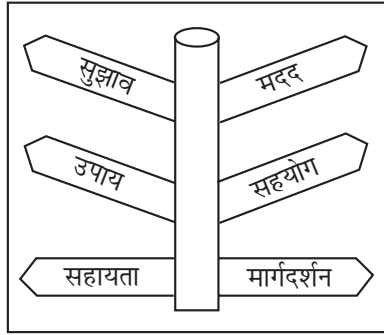
- उदाहरणस्वरूप 2 और 6 से 8 बनता है, अर्थ संबंधी स्मृति के कारण ही यह याद रख पाते हैं।
6. (3) संवेदनात्मक स्मृति की विशेषताएँ
(1) यह क्षणभंगुर होती है क्योंकि यह स्मृति को एक पल के लिए ही रख पाती है।
(2) यह संवेदना पर निर्भर है।
(चिह्नात्मक प्रारूप, दृश्य और प्रतिध्वनिक (ध्वनि) स्वरूप
(3) यह सूचना का लेखारोपण है।
7. (1) संवेदी स्मृति चिह्न (दृश्य) प्रतिध्वनिक (ध्वनि) और अन्य इंद्रियजनित क्षमता- अवधि-लगभग एक सेकेंड।
8. (1) एटकिन्सन और शिफरिनि ने प्रस्तावित किया था कि अल्पकालीन स्मृति में सूचनाओं का प्राथमिक रूप से ध्वनि यानी दृश्य तथा ध्वनि कोड के रूप में तब तक अंकित रहता है जब तक कि इसका अनुभव और इसे सिद्ध नहीं किया जाता। यह अल्पकालीन स्मृति में रहती है। अल्पकालीन स्मृति क्षणभंगुर होती है।
9. (3) पुनः प्राप्ति या स्मरण का नियम (Retrieval Rule) अवशेष पतन नियम के कारण विस्मरण होता है। पुनः प्राप्ति के नियम हमें स्मृति में संचित सूचना को प्राप्त करने में मदद करते हैं। यह विचारधारा टुलविंग द्वारा दी गई थी, जिन्होंने प्रमाण दिया था कि स्मृति की विषय सामग्री अनुपस्थिति के कारण या याद करने पर मिले संकेतों के असत्य होने के कारण पहुँच से बाहर है।
10. (4) एडबिन्हाउस (Edbinhaus) द्वारा किया गया अनुसंधान कार्य विस्मृति को समझने और विस्मृति वक्र से परिचित होने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जाता है। उसने अपने अनुसंधान कार्य के लिए 3 अक्षरों के अर्थहीन शब्द जैसे (Nof, bdf, cem, ler आदि लिए। इस प्रकार के शब्दों से युक्त परिसूचियों (Lists) को उसने स्वयं याद करने का कार्य शुरू किया।
11. (1) ऐम्नेसिया स्मृति लोप का पर्याय है। स्मृति का अंशतः या पूर्णतः लोप (लुप्त) हो जाना ऐम्नेसिया कहलाता है।
12. (2) स्मरण (Recall)
मुक्त स्मरण विधि में सहभागी समान शब्दों को प्रस्तुत करते हैं और फिर उनसे घटना या तथ्यों को किसी भी क्रम में याद करने के लिए कहा जाता है। जितना वे अधिक याद कर पाते हैं, उनकी स्मृति उतनी ही अच्छी मानी जाती है।
अभिज्ञान (Recognition) पद्धति में, शब्दों को बताने की बजाय भागीदार वस्तुओं को देखते हैं और उन्हें पहचान कर कुछ समय के बाद वे बातों को याद करते हैं।
13. (4) सीखी गई चीजों को धारण करना अवधारण (Retention) कहलाता है। यह ग्राह्य क्षमता पर निर्भर है। अवधारण या धारण ही सम्यक संदर्भ में 'धारणा' बन जाती है। क्रमिक-अनुक्रमिक ढंग से सीखना-प्रयोग करना 'सीरियल लर्निंग मंथन' है।
14. (1) ब्रेक और लॉकहार्ट (1972) द्वारा प्रस्तावित प्रक्रियाकरण मॉडल का स्तर
विचार-किसी भी नई सूचना का प्रक्रियाकरण लेवल ऑफ प्रोसेसिंग के उस तरीके से संबंधित है जिसमें इसे जाना, विश्लेषित अथवा समझा जाता है जिससे निर्धारित होता है कि यह अंततः कितने समय तक स्मृति में रहेगा?
15. (1) वॉफ-नॉर्मन मॉडल के अनुसार दीर्घकालीक स्मृति में विस्मरण का मूल कारण विस्थापन (Displacement) है। विस्थापन के दौरान मानसिक याददाश्त या उसमें निहित विषयवस्तु स्थानांतरित हो जाती है।
16. (1) आगमनात्मक तक एक मूल विधि है जिसके द्वारा बच्चे आसानी से अनुभवों को वर्गीकरण और श्रेणीबद्ध करके उन्हें अवधारणात्मक संरचना और प्रतिदर्शों में बदलकर अपनी दुनिया को समझ सकते हैं।
17. (1) टुलविंग के अनुसार स्मृति : घटनाजन्य एवं अर्थगत स्मृति घटनापरक स्मृति (Episodic Memory)
इसमें हमारे व्यक्तिगत जीवन की स्मृतियाँ सम्मिलित हैं। यानी जीवन के व्यक्तिगत अनुभवों की स्मृतियाँ। अतः ये भावुक प्रवृत्ति के होते हैं।
उदाहरण के तौर पर-जिस दिन आपके मित्र ने आपको थप्पड़ मारा था, उस दिन आपको कैसा महसूस हुआ था?
ऐसे अनुभवों को भूल पाना मुश्किल होता है। परन्तु बहुत सी घटनाएँ हमारे आस-पास होती रहती हैं, यह कई बाद याद आती हैं।
18. (3) घटनाजन्य स्मृति का संबंध सरल अनुबंधन से है। और अर्थगत फ्लैशबल्ब स्मृति, साधारण अनुबंधन से सम्बद्ध है।
19. (1) अल्पकालीन स्मृति से दीर्घकालीन स्मृति में सीखे गए पाठों के अंतराल की प्रक्रिया का प्रतिपादन एटकिंशन एवं शेफरिन ने किया था जिनका कार्य स्मृति भण्डारों में सूचना प्रवाह का निरीक्षण करना था।
20. (1) जॉर्ज मिलन नामक वैज्ञानिक ने 1956 में लघु स्मृति के संचयन क्षमता से सम्बद्ध 7+2 संख्या दिया था।
किसी बड़ी या संपूर्ण सूचना को समूहों में बाँटते हुए सात भागों में विभाजित करना ताकि उससे अधिक सीखा जा सके और स्मरण शक्ति का विकास हो।
21. (4) प्रासंगिक स्मृति हमारे अनुभवों एवं विशिष्ट घटनाओं को शृंखलाबद्ध रूप में प्रस्तुत करती है। अर्थगत स्मृति प्रासंगिक स्मृति से ही निकली है।
22. (2) प्रक्रियाजन्य स्मृति बिना तथ्यों के पुनः स्मरण द्वारा मात्र कार्य करने की योजना है। जैसे-साईकिल चलाना, गंद पकड़ना आदि।
23. (4) जब छात्र पाँच वर्ष का हो गया हो तथा अच्छी भाषा को सीखने में सक्षम हो इन सबके कारण बच्चों में अवधारणा निर्माण की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।
24. (2) पुनः सीखना विधि जिसे बचत विधि भी कहा जाता है, से व्यक्ति किसी पाठ या विषय को एक निश्चित कसौटी तक सीखकर कुछ समय बाद फिर उसी पाठ या विषय को उसी कसौटी तक सीखता है। सामान्यतः दूसरी बारी में उसे सीखने में कम प्रयास एवं त्रुटि लगता है। इस तरह से प्रयास एवं त्रुटि दोनों की एक तरह से बचत होती है।
25. (1) वुडवर्थ नामक मनोवैज्ञानिक के अनुसार स्मरण/स्मृति (memory) के घटक चार हैं :
पढ़ना-Reading
धारणीयता-Retention
पहचान करना-Recognition
पुनः धारण-Retrieval
इन्हें 4R के नाम से जाना जाता है।

मार्गदर्शन और परामर्शन (Guidance & Counselling)

मार्गदर्शन एक प्रक्रिया है जिससे कोई व्यक्ति उन पद्धतियों से जागरूक होता है जिससे वे अपनी प्राकृतिक शक्तियों को जानता है। मार्गदर्शन का अर्थ समझने के लिए 'व्यक्ति' को जानना महत्वपूर्ण है न कि 'उसकी समस्या' को एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति की समस्याओं को समाधान करने हेतु विकल्प चुनने और सामंजस्य बैठाने हेतु सहायता की जाती है।

इस दृष्टि से **सामर्थ्य, योग्यता** का महत्वपूर्ण पक्ष है। **मार्गदर्शन सामर्थ्य** का अर्थ, अस्तित्व का विकास करने की योग्यता से है :

- **योग्यता** का अर्थ किसी निश्चित कार्य को करने के कौशल, प्रतिभा, दक्षता से है।
- **मार्गदर्शन** में कोई व्यक्ति अपनी समस्याओं को सुलझाने हेतु सक्षम होता है।



मार्गदर्शन एक ऐसी सहायता है जो परामर्शदाता द्वारा किसी भी आयु के व्यक्ति को उसके जीवन पर मार्ग समझने अपने विचार बनाने, निर्णय लेने और अपना जीवन-भार स्वयं उठाने के संबंध में दी जाती है।

—क्रो और क्रोज

मार्गदर्शन व्यापक अंतरवैयक्तिक संबंधों को तैयार कर व्यक्ति के दृष्टिकोण और व्यवहार को प्रभावित करने की प्रक्रिया है।

—कैरटर वी गुड

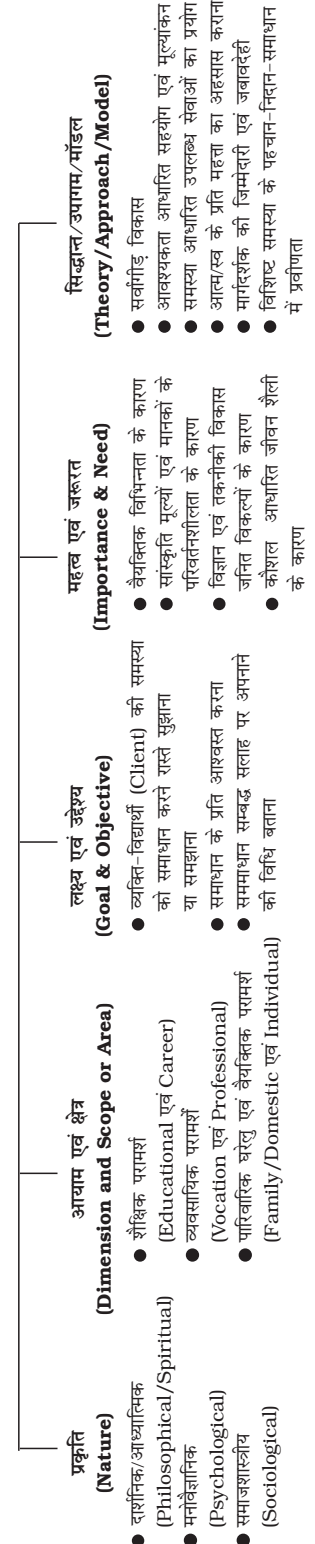
मार्गदर्शन एक प्रक्रिया है जिसमें सेवाओं के समूह को किसी के द्वारा विकल्प चुनने, योजना बनाने और स्थिति को समझने हेतु आवश्यक ज्ञान और कौशलों को प्राप्त करने में विभिन्न क्षेत्रों में संतुष्टि प्रदान करती है।

—जी.ई. स्मिथ

समस्याग्रस्त बालक के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना (Modifying the Problem child's attitude)—समस्याग्रस्त बालक के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए एक तरह से उसके सम्पूर्ण जीवन दर्शन में परिवर्तन लाने की आवश्यकता होती है जिससे वह उचित व्यवहार करने में सक्षम हो सके तथा अपने आपको मिलने वाली परिस्थितियों में समायोजित कर सकें। इसके लिए कुछ निम्न विधियां अपनाई जाती हैं—

- मनोविश्लेषण विधि (Psycho-analysis methods)
- परामर्श एवं मनोवैज्ञानिक उपचार (Counselling and Psycho-therapy)
- आत्म सुझाव, सम्मोहन आदि तकनीकें (Techniques like Auto-Suggestion, Hypnosis, etc.)

निर्देशन एवं परामर्श



परामर्श की जरूरत : कृण्ठा (Frustration), अन्तःद्वन्द्व (Conflicts) एवं तनाव (Stress) का शमन

अन्तःद्वन्द्वों के पीछे एक तरह से व्यक्ति विशेष द्वारा अनुभव की जाने वाली वह असंतोष की आग ही होती है जो दो या दो से अधिक विरोधी इच्छाओं को एक समय में पनपने तथा उनकी मनचाही संतुष्टि न होने के कारण प्रज्वलित होती है। अन्तःद्वन्द्व से अभिप्राय व्यक्ति विशेष द्वारा अनुभव की जाने वाली उस पीड़ादायक या संवेगात्मक तनावपूर्ण स्थिति से है, जिससे सामना उसे एक ही समय पर उपस्थित दो या दो से अधिक अन्तःविरोधी इच्छाओं में से किसी एक की पूर्ति का चुनाव न कर सकने की अपनी असमंजसपूर्ण असहाय अवस्था के कारण करना पड़ता है।

सामान्यतया मानसिक रूप से झेले जाने वाले इन अन्तःद्वन्द्वों को तीन मुख्य प्रकारों में बांटा जा सकता है—

(1) ग्राह्य-ग्राह्य, अन्तःद्वन्द्व (दो या अधिक अति आकर्षक इच्छाओं में से किसी एक का चुनाव

(2) परिहार-परिहार अन्तःद्वन्द्व (दो या दो से अधिक एक जैसे आकर्षक तथा अनाकर्षक प्रलोभनों में से किसी एक का चयन)।

(3) ग्राह्य-परिहार अन्तःद्वन्द्व। इन अन्तःद्वन्द्वों के उत्पन्न होने के कारणों के रूप में हम उन सभी नकारात्मक, विध्वंशात्मक तथा प्रतिकूल परिस्थितियों का नाम ले सकते हैं जो व्यक्ति विशेष के घर-परिवार, समुदाय, विद्यालय तथा कामकाजी दुनिया से जुड़ी रहती हैं। विद्यार्थियों को ठीक प्रकार समायोजित रहने की प्रक्रिया में परामर्शदाता अथवा अध्यापक वर्ग काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इस दिशा में उनके द्वारा जो प्रयत्न किए जा सकते हैं वे हैं विद्यार्थियों की संतुलित वृद्धि एवं विकास पर ध्यान देना; मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रयत्न करना; उनको उनकी ताकत और कमजोरियों से अवगत कराना; आकांक्षा या महत्वाकांक्षा का उचित स्तर कायम करने में मदद करना; तनाव झेलने सम्बन्धी सहनशीलता विकसित करना, समाज और संस्कृति की मांगों से पटरी बिठाना, स्वस्थ एवं उचित वातावरण प्रदान करना तथा निर्देशन एवं परामर्श की व्यवस्था करना आदि।

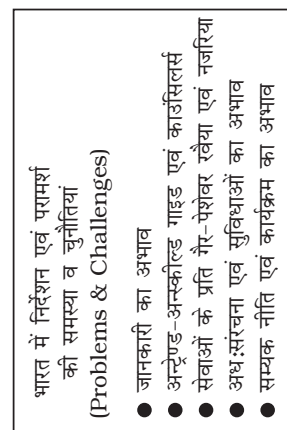
अन्तःद्वन्द्वों के प्रकार (Types of Conflicts)

मानसिक रूप से झेले जाने वाले इन अन्तःद्वन्द्वों को सामान्यतया निम्न वर्गों में बांटकर समझा जा सकता है :

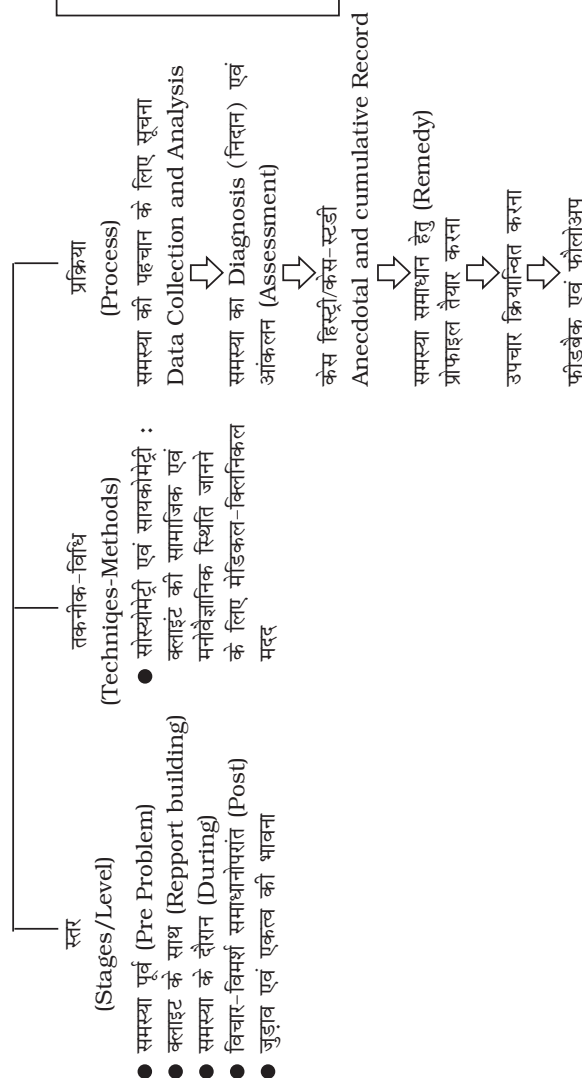
1. ग्राह्य-ग्राह्य अन्तःद्वन्द्व (Approach-Approach conflict)—इस प्रकार के अन्तःद्वन्द्व का शिकार कोई व्यक्ति तब होता है जबकि उसके सामने एक जैसे अभिप्रेरणात्मक तथा महत्वपूर्ण सकारात्मक लक्ष्यों में से किसी एक का चयन करने की समरूप खड़ी हो जाये। इस प्रकार की परिस्थिति के संदर्भ में हम उस बालक का उदाहरण लेकर चल सकते हैं जो इस चयन दुनिया में फँस गया है कि उसे हैरीपोटर का नया उपन्यास खत्म करना चाहिए या अपने आते सितारों की नई मूवी देखने अपने साथियों के साथ जाना चाहिए।

फिर इस तरह की द्वन्द्वात्मक परिस्थिति से निपटना बहुत अधिक मुश्किल नहीं होता। क्योंकि इस अन्तःद्वन्द्व की उस समय तक ही रहती है तब तक व्यक्ति किसी एक सकारात्मक लक्ष्य का

चुनाव करके दूसरे को अपने साथ नहीं निकाल देता। एक बार चयन कर लेने पर व्यक्ति उसके द्वारा प्राप्त सकारात्मक लाभ का आनन्द लेने जो जाता है और फिर उसे अन्तःद्वन्द्व की कष्टदायक पीड़ा से छुटकारा मिल जाता है।



निर्देशन एवं परामर्श



2. परिहार-परिहार अन्तःद्वन्द्व (Avoidance-Avoidance conflict)—इस प्रकार के अन्तःद्वन्द्व का शिकार व्यक्ति तब प्राप्त है जब उसके सामने दो या दो अधिक ऐसी परिस्थिति या बातों में से एक का चुनाव करने का संकट खड़ा हो जाता है जो एक-जैसे विकर्षण या नकारात्मक प्रकृति की हों और व्यक्ति को दोनों का परिहार करना यानी उनसे छुड़ना अच्छा लगता हो। उदाहरण के लिए एक विद्यार्थी को उस समय ऐसे अन्तःद्वन्द्व का सामना करना पड़ सकता है जबकि उसकी गणित में अरुचि होने के कारण गणित को अनिवार्य विषय के रूप में लेने की कोई इच्छा नहीं है परन्तु माता-पिता उसे इंजीनियरिंग कोर्स में भेजने की इच्छा रखने के कारण उसे गणित दिलाना चाहते हैं और बालक अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध जाकर उन्हें नाराज नहीं करना चाहता।

3. ग्राह्य-परिहार अन्तःद्वन्द्व (Approach-Avoidance Conflict)—इस प्रकार के अन्तःद्वन्द्व का शिकार एक व्यक्ति उस समय होता है जब उसके सामने दो या दो से अधिक एक-जैसे प्रबल सकारात्मक तथा नकारात्मक अभिप्ररकों तथा प्रलोभनों में से किसी एक का चयन करने का संकट खड़ा हो जाये। व्यक्ति विशेष में किसी एक ऐसे कार्य को करने की इच्छा बहुत प्रबल हो सकती है जिसके लिए वह यह मानता है कि उसका ऐसा करना गलत और आचरणहीन होगा परन्तु फिर भी उसे करते रहने का आकर्षण इतना अधिक है कि उसे किये बिना उसे चैन नहीं आता। इस दृष्टि से परिवार की इच्छा के विरुद्ध प्रेम विवाह किया जाए या नहीं, बस में लड़कियों को छोड़ा जाए या नहीं आदि सभी ऐसी परिस्थितियों के उदाहरण हैं जिनमें व्यक्ति विशेष को ग्राह्य-परिहार अन्तःद्वन्द्व से जूझना पड़ सकता है।

इस प्रकार के अन्तःद्वन्द्व पूर्व वर्णित दोनों प्रकार के अन्तःद्वन्द्वों से ज्यादा गंभीर और खतरनाक समझे जाते हैं क्योंकि इनमें व्यक्ति आकर्षण और विकर्षण के बीच फँसकर बहुत ज्यादा संवेगात्मक तनाव का अनुभव करता है तथा फलस्वरूप उसके भीतर बहुत सारी गलतियों, ग्रन्थियों तथा मनोविकारों का विकास हो जाता है।

परामर्श के उपागम (Approaches of Counselling)

परामर्श देने या लेने के अपने-अपने ढंग तथा तरीके होते हैं ताकि इस प्रक्रिया में परामर्शदाता तथा परामर्श लेने वाले की अलग-अलग स्थितियाँ तथा भूमिकाएँ होती हैं तथा उनका अपना-अपना योगदान रहता है। इन्हें परामर्श उपागमों की संज्ञा दी जाती है। मुख्य रूप से ऐसे उपागमों में जिन तीन का विशेष रूप से उल्लेख होता है, वे हैं—

1. निर्देशात्मक परामर्श (Directive Counselling) : परामर्शदाता केन्द्रित।
2. अनिर्देशात्मक परामर्श (Non-directive Counselling) : क्लाइंट केन्द्रित।
3. समन्वित या विभिन्न विचारावलम्बी उपागम (Eclectic Counselling): परामर्शदाता एवं क्लाइंट दोनों पर केन्द्रित।

बाल मार्गदर्शन—एक पद्धति जिसमें किसी के व्यवहार, प्रदर्शन, मनः कायिक संबंधी बाधाओं को पहचाना और उपचार किया जाता है।

—एच जे ईसेनिक

शैक्षिक संदर्भ में—“मार्गदर्शन विद्यार्थियों की ऐसी सहायता है जिसमें विद्यार्थियों को शैक्षिक संस्थानों, घर और अन्य स्थानों पर अपनी स्थितियों में समायोजित होने हेतु सहायता की जाती है।

मार्गदर्शन एवं परामर्शन की प्रकृति

कई परिभाषाओं को जान लेने के बाद अब हम मार्गदर्शन की अवधारणा को स्पष्ट रूप में समझ गए हैं। आइए इसकी प्रकृति को समझें।

(1) **सतत प्रक्रिया के रूप में**—मार्गदर्शन कभी समाप्त नहीं होता। यह व्यापक है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति स्वयं को समझता है और अपनी क्षमताओं का अधिकतम प्रयोग करता है, रुचियों और अन्य योग्यताओं का उपयोग करता है।

(2) **क्षमताओं के विकास में सहायक**—मार्गदर्शन के दौरान, किसी व्यक्ति को अपनी क्षमताओं का सर्वोत्तम प्रयोग करने योग्य बनाया जाता है। अतः मार्गदर्शन संभावनाओं के पूर्ण विकास पर बल देती है। कोई व्यक्ति अपनी वास्तविकता से परिचित है। अतः मार्गदर्शन संभावनाओं के पूर्ण विकास पर बल देती है। कोई व्यक्ति अपनी वास्तविकता से परिचित है। अतः मार्गदर्शन आत्मानुभूति में सहायक है।

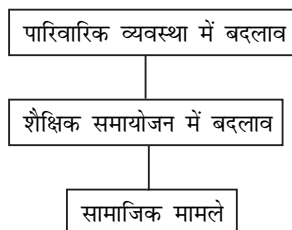
(3) **यह प्रशिक्षित व्यक्ति का कार्य है**—मार्गदर्शन हर कोई नहीं कर सकता इसके अंतर्गत कई सीखी गई तकनीकों और कौशलों का प्रयोग किया जाता है। इस कार्य के लिए प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक और परामर्शदाताओं की आवश्यकता है। अतः मार्गदर्शन कौशल सम्मिलित प्रक्रिया है।

(4) **यह समायोजन करने में सहायक है**—यह व्यक्ति को विभिन्न स्थितियों में समायोजित होना सिखाता है। इसमें कोई विभिन्न प्रकार की समस्याओं में समायोजित होना सीखता है। यह हतोत्साहित व्यक्ति को नवीन ऊर्जा प्रदान करता है और समस्या का सामना करने, और उसमें समायोजित होने में मदद करता है।

(5) **यह निर्णय आरोपण की प्रक्रिया नहीं है**—मार्गदर्शन का अर्थ अपने विचारों को दूसरों पर आरोपण (प्रेमपूर्वक, बलपूर्वक, भयपूर्वक) करना नहीं है। यह किसी की इच्छा पर निर्भर है कि कोई किसी के निर्णय को किस तरह स्वीकार करता है। यह निर्णय थोपने की प्रक्रिया नहीं है।

(6) क्षेत्र व्यापक है-इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। कोई भी जरूरतमंद व्यक्ति किसी भी रुचि, आयु, विशेषता, दृष्टिकोण का हो सकता है अतः हम उसके लिए सीमाएँ निर्धारित नहीं कर सकते।

बाल मार्गदर्शन के पहलू



(1) **परिवारिक प्रणाली में बदलाव** - आज कल शिक्षा, नए रोजगार अवसरों के चलते साथ लोग एकल परिवारों में रहने लगे हैं जहाँ माता-पिता दोनों कार्यरत होते हैं। परिवारिक प्रणाली में इस तरह के बदलाव के कारण बच्चे अकेले रह जाते हैं जिनसे उनमें संवेदनात्मक समस्याएँ, सहनशक्ति का अभाव, व्यवहारात्मक समस्याएँ होने लगती हैं, जिससे बच्चा उपेक्षित महसूस करता है।

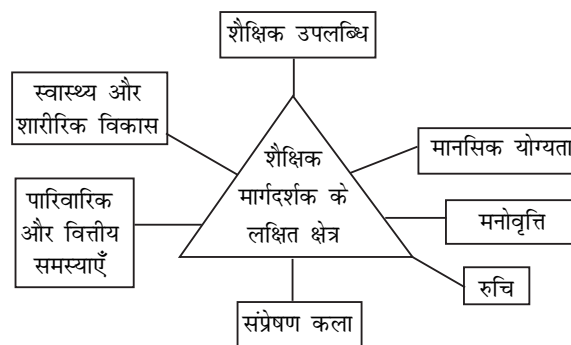
(2) **शैक्षिक समाज में परिवर्तन-वर्तमान दौर में** पाठ्यक्रम, परीक्षाओं के तरीकों में कई बदलाव देखने को मिलते हैं परंतु इसके संदर्भ में प्रशिक्षण का अभाव देखने को मिलता है और कुछ बच्चे इस पर्यावरण में सामंजस्य नहीं बैठ पाते।

(3) **सामाजिक/वैयक्तिक मामले-जैसे-जैसे** कोई बच्चा स्कूल जाना शुरू करता है। वह साथियों, अध्यापक के सचेतता, देखभाल और सहयोग के संबंध में कई समस्याओं का सामना करता है, यदि इस समय में उसकी अपेक्षा की जाए तो वह भावनात्मक समस्या कर सामना कर सकता है जिससे वह अचेतनता की ओर उन्मुख होगा। यदि अभिभावक गरीबी और वित्तीय समस्याओं से जूझ रहे हो तो उसका असर बच्चों पर भी पड़ता है।

शैक्षिक मार्गदर्शन

उद्देश्य :

- बच्चे को स्वयं के गुणों, सामर्थ्य और सीमाओं को समझने में सहायता मिलती है।
- बच्चों को उनकी शैक्षिक योजनाएँ तैयार करने में मदद मिलती है जिसमें उसकी योग्यता, रुचि और लक्ष्य सम्मिलित हैं।
- विद्यार्थियों को विषयों और पाठ्यक्रम को जानने में मदद मिलती है।
- बच्चों को संतोषजनक प्रगति करने में सहायता देता है।
- बच्चों को विद्यालय, उसके नियमों, सामाजिक जीवन के साथ जुड़ने में मदद करता है।
- बच्चों द्वारा पढ़ने की अच्छी आदत का विकास करने में मदद करता है।
- बच्चों को शैक्षिक गतिविधियों के अलावा अन्य गतिविधियों में भी मदद करने में सहायता देता है, जिससे उसमें नेतृत्व और अन्य सामाजिक गुणों का विकास होता है।



शैक्षिक मार्गदर्शन करने हेतु विशेषज्ञों को विशिष्ट कौशलों की आवश्यकता होती है।

शैक्षिक मार्गदर्शन की अवस्थाएँ

शैक्षिक मार्गदर्शन चार अवस्थाओं में विभाजित है-

- (1) विद्यालय पूर्व अवस्था
- (2) प्राथमिक विद्यालय अवस्था
- (3) माध्यमिक विद्यालय अवस्था
- (4) उच्च विद्यालय या महाविद्यालय अवस्था

I. पूर्व-विद्यालयीय स्तर पर शैक्षिक मार्गदर्शन

इस अवस्था में मार्गदर्शन से बच्चे की मदद की जा सकती है। उसे विद्यालय के नए पर्यावरण में सामंजस्य बैठाना सिखाया जा सकता है। इस स्तर पर, मार्गदर्शन को व्यक्तित्व के विकास, सामाजिक व्यवहार और समस्या केंद्रित जीवन की ओर उन्मुख किया जाता है। कक्षा के शिक्षक परामर्शदाता की भूमिका भी निभाते हैं। वे आसानी से पहचान लेते हैं कौन से बच्चे निर्भर, संकोची, जल्दी डर जाने वाले, अत्यंत आवेगशील, झगड़ा करने वाले और प्रतिभावान हैं।

II. शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर शैक्षिक मार्गदर्शन

शिक्षाविदों ने इस समय को बच्चे के जीवन में उसकी आदतों, धरणाओं, रुचियों और व्यक्तित्व, गुणों को विकास करने में महत्व दिया है जिसकी जीवन में आवश्यकता होती है। इस अवस्था के शैक्षिक मार्गदर्शक के कार्य :

- (1) इस कार्यक्रम द्वारा बच्चों की मदद करने के लिए अच्छी शुरुआत करनी होती है और बुद्धि से उसका नियोजन करना होता है।
 - (2) बच्चों के सर्वश्रेष्ठ गुणों को बाहर निकालना और बच्चों को माध्यमिक विद्यालयों के लिए तैयार करना।
 - (3) इस कार्यक्रम को अधिगम समस्याओं को पहचानने और विशेष आवश्यकताओं को जानने हेतु तैयार किया जाता है।
 - (4) इसे बच्चों में ज्ञान का विकास करने हेतु मार्गदर्शन किया जाता है।
 - (5) इस अवस्था में बच्चों को भावी शिक्षा और प्रशिक्षण हेतु नियोजन करने के लिए सहायता की जाती है।
- इन सब चीजों को उचित ढंग से करने से सीखने के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित होता है जिसे विद्यालय में विकसित किया जाता है।

III. माध्यमिक विद्यालय अवस्था-यह प्राथमिक और उच्च शिक्षा स्तर के बीच में सामंजस्य स्तर निर्मित करता है। कुछ बच्चों के लिए यह शिक्षा के क्षेत्र में अंतिम अवस्था मानी जाती है। कारण यह है

कि इस अवस्था में बच्चे कई समस्याओं जैसे अधिगम, भावनात्मक समस्याएँ और शैक्षिक विकल्प चुनने जैसी समस्याओं में उलझे होते हैं।

इसीलिए कई समस्याओं के उत्पन्न होने का खतरा रहता है और इसीलिए कई मार्गदर्शक कार्यक्रमों की व्यवस्था की आवश्यकता होती है। अतः निजी व्यवसायिक और शैक्षिक तीनों मार्गदर्शन इस अवस्था में आवश्यक होते हैं।

इस अवस्था में बच्चे यह निर्णय नहीं कर पाते कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं। इस अवस्था में वे विषयों, शिक्षकों और विद्यालय के प्रति पसंदीदा और नापसंदीदा शब्दों के बारे में कहते हैं। उनकी योग्यता इस अवस्था के दौरान अधिकतम सीमा तक पहुँच जाती है।

शैक्षिक वातावरण जो कि बौद्धिक प्रगति और सामंजस्य का निर्धारण करता है, यह बच्चे के विकास के लिए उचित होता है। इस अवस्था में बच्चे अच्छे विचार, आदतों और कार्यों को बताया जा रहा है। इसका उद्देश्य जीवन की शुरुआत में ही प्रत्येक बच्चे को आत्मविश्वास से भरना होता है।

बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त बच्चों को स्वतंत्र रहकर प्रशिक्षण देना होता है। परिणामस्वरूप वे भविष्य में उत्तरदायी नागरिक की तरह रहते हैं इसके लिए उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और सह-पाठ्यक्रम के विषयों में भागीदार बनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त प्रभावान, पिछड़े और शारीरिक व मानसिक विकलांग बच्चों को विशिष्ट मार्गदर्शन देना चाहिए।

IV. महाविद्यालय के उच्च स्तर पर शैक्षिक मार्गदर्शन

वे अपने अधिकारों और कर्तव्यों से परिचित होते हैं। मार्गदर्शन से वे जीवन का संपूर्ण चित्र समझ पाते हैं और उनका उद्देश्य इस वास्तविकता को प्राप्त करना होता है। इसके लिए वे समस्याओं का सामना करते हैं। उन्हें इस तरह की सुविधाएँ दी जाती हैं ताकि वे अपनी योग्यताओं और कौशलों को व्यापक सीमा तक प्रयोग कर सकें।

उत्तम शिक्षण प्रणाली को उचित निर्देशों और मार्गदर्शन हेतु जरूरतमंद विद्यार्थियों के लिए तैयार किया जाता है।

इस अवस्था में विद्यार्थी का उद्देश्य उच्च शिक्षा को प्राप्त करना होता है जिससे उन्हें पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। इसके लिए वे सेमिनार, प्रयोगशाला, निष्कर्ष और चर्चा की व्यवस्था की जाती है। व्यवसायिक विषयों, पाठ्यक्रम, व्याख्यान और चर्चा, रोजगार के अवसरों की व्यवस्था की जाती है। वे विद्यार्थी जो शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं से जूझते हैं, उनका मार्गदर्शन किया जाता है। इस बात को समझने के लिए प्रत्येक कॉलेज में मार्गदर्शक विभाग होना चाहिए जो विद्यार्थियों को आवश्यक जानकारी प्रदान कर सकें और सेवाओं की व्यवस्था कर सकें।

शैक्षिक मार्गदर्शन के प्रबंधन संबंधी चरण

नियोजन अवस्था

चरण-1. दृष्टि (Vision) को स्थापित करना—मार्गदर्शन और परामर्श की दृष्टि का विकास करना जिसे स्कूल/दृष्टि और मिशन के साथ जोड़ना।

चरण 2. कार्यक्रम की दिशा निर्देश लक्ष्य एवं उद्देश्यों का निर्धारण करना—यह वह अवस्था है जिसमें कार्यक्रम तैयार किया जाता है और लक्ष्यों का निर्माण करने हेतु दिशा निर्देश दिए जाते हैं जो विद्यालय के मिशन को सहयोग देते हैं।

डिजाइनिंग

चरण 3. डिजाइनिंग की अवस्था के भीतर—उपस्थित कार्यक्रम की गतिविधि एवं संसाधनों का मूल्यांकन किया जाता है और प्रभावी कार्यों को पहचाना जाता है।

कार्यान्वयन

चरण 4. आपके शिक्षा बोर्ड द्वारा औपचारिक रूप से संपूर्ण मार्गदर्शन और परामर्श को स्वीकार करने के बाद यह अवस्था कार्यक्रम को कार्यान्वयन में ले आती है और उस नीति को स्वीकार करती है जो उसके संचालन को निर्देशित करती है।

मूल्यांकन

कार्यक्रम + कार्यकर्ता प्रयास = परिणाम (सकारात्मक)

यह अवस्था उपर्युक्त सूत्र का प्रयोग करती है। इस बात का उत्तर देना कि किस सीमा तक हमारा मार्गदर्शन और परामर्श कार्यक्रम को क्रियान्वित किया गया।

किस तरह परामर्श और मार्गदर्शन कार्यक्रम विद्यार्थियों के लक्ष्यों पर प्रासंगिक प्रभाव डालता है?

चरण 5. संपूर्ण परामर्श और कार्यक्रम के स्तर का आकलन करना।

विद्यालय परामर्शदाता के निष्पादन के निरीक्षण का मूल्यांकन करना।

व्यवसायिक मार्गदर्शन

इसका अर्थ व्यवसायिक योजना, विकल्प और पेशे से संबंधी समस्या हेतु किसी को सहायता देना है। सहायता करते हुए उनके वैयक्तिक लक्षणों और उनके अवसरों को ध्यान में रखा जाता है।

वोकेशन का अर्थ यह करियर है, जो कि *vocare* शब्द से बना है जिसका अर्थ है—बुलाना

फ्रैंक पारसन वोकेशनल गाइडेंस के जनक हैं। 1908 में उन्होंने वोकेशनल ब्यूरो ऑफ बोस्टन खोला जिसका उद्देश्य लोगों को उनके करियर के बारे में मदद करना था।

एक सुविधाजनक प्रक्रिया, एक सेवा जो किसी व्यक्ति को अपनी जीविका चुनने और उसमें सामंजस्य बैठाने में मदद करती है।

—जो डी क्राइटिस

व्यवसायिक मार्गदर्शन का उद्देश्य

(1) विद्यार्थियों और समुदायों की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु विद्यालयों की मदद करना। सफल भविष्य हेतु विद्यार्थियों को तैयार करना।

(2) विद्यार्थियों को चुनने, तैयारी करने और प्रशिक्षण, प्रवेश, करने और अपने चुने गए रोजगार के साधन हेतु तैयार करने में मदद करना।

(3) प्रतिस्पर्धात्मक और अन्य व्यावसायिक समस्याओं और जीविका संबंधी ज्ञान का प्रसार करना।

(4) कर्मचारियों को उनके सहकर्मियों तथा समाज से संबंध के बारे में संबंध जोड़ना।

(5) विद्यालय और भिन्न व्यावसायिक, औद्योगिक और पेशेवरों में सहयोग स्थापित करना।

(6) शैक्षिक संस्थानों में पाठ्यक्रमों की स्थापना को सांस्कृतिक और व्यवहारिक अध्ययनों को प्रोत्साहन देना।

व्यवसायिक मार्गदर्शन के नियम

(1) यह वस्तुनिष्ठ होना चाहिए और तथ्यों पर आधारित होना चाहिए।

(2) इसकी धारणा प्रेरक होनी चाहिए और किसी भी प्रकार का बल नहीं छिपा होना चाहिए।

(3) उम्मीदवारों को वैकल्पिक रोजगारों और अंतिम चयन के बारे में बताना चाहिए।

भारत में व्यवसायिक मार्गदर्शन

भारत में रोजगार कार्यालय युवाओं (उम्मीदवार जिन्हें कोई अनुभव न हो) और वयस्कों (विशिष्ट कार्यानुभव) का रोजगार मार्गदर्शन करता है। देश के शिक्षित युवाओं को रोजगार दिलाने, परामर्श करने और सुझाव देने हेतु रोजगार एवं प्रशिक्षण विभाग के मुख्य निदेशक द्वारा कार्यक्रम तैयार किए हैं।

डायरेक्टर जनरल-ऑफ एम्प्लायमेंट एण्ड ट्रेनिंग के कार्यों का विस्तार कर सेंट्रल इन्स्टीच्यूट ऑफ रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग इन इम्प्लॉयमेंट सर्विस (CIRTES) का कार्यभार उसे दिया गया है।

परामर्श (Counselling)

परामर्श पेशेवर रूप से एक विशिष्ट मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया व अभ्यास है। यह दो व्यक्तियों जिनमें से कोई एक बड़ा है, अनुभवी हैं, विवेकशील है में एक निजी तथा व्यापक संबंध है। इसमें वे दो मिलकर कम अनुभवी व्यक्ति की समस्या को सुलझाते हैं। एक दूसरे के विचार से समस्या को अधिक स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जा सकता है और जिसकी समस्या है वह स्वनिर्धारित समाधान निकाल सकता है।
-एजे जोनस

● यह इस बात पर केंद्रित है कि कोई हर समय किस तरह व्यक्तित्व और अपने संबंधों में व्यवहार करता है। परामर्श मनोविज्ञान भावनात्मक, सामाजिक, कार्य और शारीरिक स्वास्थ्य पर ध्यान देता है कि लोग जीवन में कई अवस्थाओं से निकलते हैं। वह जीवन की तनाव स्थितियों और गंभीर मुद्दों पर केंद्रित है जिसमें कोई व्यक्ति और परिवार संघर्ष करते हैं।

परामर्श मनोवैज्ञानिक-लोगों की शारीरिक, भावनात्मक, मानसिक समस्याओं को सुधारने हेतु, तनाव और समस्याओं को सुलझने में सहायक हैं।

विशिष्ट ज्ञान के आयाम	लाभार्थी के समस्या के प्रकार
- विकास की सभी अवस्थाओं में (बचपन, किशोरावस्था, वयसन, वृद्धावस्था), परामर्श - मनोवैज्ञानिक का ध्यान व्यक्ति के स्वास्थ्य और गुणों पर - पर्यावरणात्मक/परिस्थिति प्रभाव (किस तरह संस्कृति, लिंग और जीवनशैली से जीवन का अनुभव बनता है।) - विविधता और सामाजिक न्याय का मुद्दा - लोगों के जीवन में करियर की भूमिका और कार्य	समस्याएँ जो परामर्श के क्रम में सामने आती हैं जो विकासात्मक, सांस्कृतिक हैं। इनमें सम्मिलित हैं- - विद्यालय और कैरियर - समायोजन एवं संबंध - अधिगम और कौशलों में कमी, - मानसिक विकार एवं तनाव प्रबंधन - संगठनात्मक समस्याएँ - निजी/सामाजिक समायोजन - शारीरिक असमर्थता या चोट - किसी के अस्तित्व का विकास

परामर्श के रूप या प्रकार (Types of Counselling)

अध्यापकों तथा प्रशिक्षित परामर्शदाताओं द्वारा विद्यालयों में विद्यार्थियों को उनके कल्याण हेतु कई प्रकार का परामर्श उनकी समस्याओं, आवश्यकताओं तथा परिस्थिति विशेष के संदर्भ में दिया जाता है। मुख्य रूप से इस प्रकार के परामर्श के निम्न चार रूप या प्रकार हो सकते हैं।

1. आपातकालीन परामर्श (Emergency counselling)—इसे संकटकालीन (Counselling at the time of crises) परामर्श का नाम भी दिया जाता है। इस प्रकार का परामर्श, परामर्शदाता द्वारा परामर्शग्राही को उस समय दिया जाता है जब वह किसी संकट या विपत्ति से घिरा हुआ हो। इस प्रकार के संकट की घड़ियां सभी की जिन्दगी में आती ही रहती हैं। विद्यार्थियों के घर परिवार में कोई हादसा हो सकता है।

2. समस्या समाधानात्मक या उपचारात्मक परामर्श (Problem solving or Curative counselling)—कई बार विद्यार्थियों के सामने कई तरह की समस्याएँ शिक्षणात्मक, व्यावसायिक या व्यक्तिगत खड़ी हो जाती हैं जिनके समाधान में अपने प्रयासों से उन्हें सफलता नहीं मिल रही होती है उस अवस्था में उन्हें उचित सुझाव तथा परामर्श की आवश्यकता होती है ताकि वे अपने प्रयासों में सुधार लाकर सही

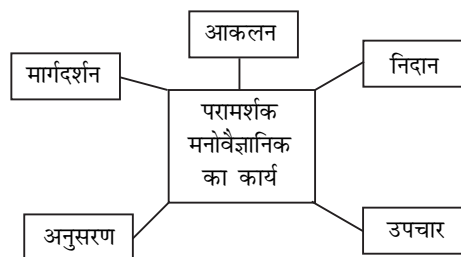
समाधान तक पहुँच सकें। उन्हें अपने गलत या समस्यात्मक व्यवहार को सुधारने हेतु अब किसी उपयुक्त परामर्शदाता के सहारे की आवश्यकता पड़ती है जिससे उन्हें अपनी समस्या के निवारण तथा व्यवहार के सुधार में अपेक्षित परामर्श मिल सके। ऐसी परिस्थितियों में प्रदान किये जाने वाले परामर्श को ही समस्या समाधानात्मक, उपचारात्मक या समायोजनात्मक परामर्श का नाम दिया जाता है।

3. निवारक परामर्श (Preventive counselling)—यह कहा जाता है कि समस्या या रोग की रोकथाम या निवारण उससे ग्रस्त हो जाने पर उसका समाधान खोजने या उपचार करने से अधिक उपयुक्त एवं लाभप्रद होता है। इसी दृष्टि से निवारक परामर्श, समस्या समाधानात्मक, उपचारात्मक या संकटकालीन परामर्श से ज्यादा कीमती एवं लाभदायक होता है। इस प्रकार के परामर्श द्वारा परामर्शदाता पहले से ही ऐसे प्रयत्न करता है कि परामर्शग्राहियों को संभावित कठिनाइयों या परेशानियों से बचे रहने में सक्षम बनाया जा सके। विद्यार्थियों का स्वास्थ्य ठीक रहें वे, रोग तथा बलशाली बने रहें, उनकी शिक्षा या प्रशिक्षण ठीक प्रकार से चलता रहे, वे ठीक व्यवसाय का चुनाव करके अपने व्यवसाय में कामयाबी प्राप्त करें, उनका अपने आप से तथा अपने वातावरण से ठीक प्रकार समायोजन रहे।

4. विकासात्मक या रचनात्मक परामर्श (Developmental or Formative counselling)—इस प्रकार के परामर्श की दिशा पूरी तरह रचनात्मक एवं सकारात्मक होती है इसमें विद्यार्थी को अपनी योग्यता तथा शक्तियों के अधिक-से-अधिक विकास हेतु उचित सहायता दी जाती है तथा उनकी रचनात्मक तथा सृजनात्मक शक्तियों के पोषण एवं पालन हेतु उनमें विशेष प्रकार की समझ तथा सोच विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है। स्वास्थ्य शिक्षा, मूल्य शिक्षा, व्यक्तित्व विकास शिक्षा, सौंदर्य परख क्षमता, ललित कलाओं, रुचि तथा अभिरुचियों की पूर्ति हेतु दी जाने वाली शिक्षा से जुड़ी हुई जितनी बातें हैं उन्हें विकासात्मक या रचनात्मक परामर्श में भली-भाँति शामिल किया जा सकता है।

मनोवैज्ञानिकों द्वारा परामर्श प्राप्त करने वालों में सम्मिलित है—

- व्यक्ति, परिवार, समूह परामर्श और मनोचिकित्सा
- संकट प्रबंधन, आपदा और क्षति प्रबंधन
- मनोवैज्ञानिक विकारों को पहचानने के लिए आकलन तकनीकें कार्यक्रम का प्रयोग जो जनता को उनके मानसिक स्वास्थ्य, विद्यालय, परिवार-संबंध, कार्यस्थान के बारे में शिक्षित एवं सूचित करते हैं ताकि आरंभ होने से पहले ही बचा सके।
- संगठन सहित परामर्श (यानी कार्यक्रम मूल्यांकन और उपचार लक्ष्य, व्यक्ति की प्रगति) : Problem & Program Evaluation and Treatment Process
- प्रशिक्षण : Training
- क्लिनिकल पर्यवेक्षण : Clinical Observation
- परीक्षण निर्माण एवं वैधता : Testing & Validity
- वैज्ञानिक अवलोकन हेतु रिसर्च पद्धतियाँ :



परामर्श के पाँच नियम

जिन नियमों आमतौर पर परामर्शदाता और चिकित्सक सोचते हैं। ये बताते हैं—

- किसी की समस्या पर सोचना
- समस्या की प्रकृति समझना
- परामर्श प्रक्रिया का क्रियान्वयन

मनोचिकित्सा नियम चिकित्सक और परामर्शदाता के लिए रूपरेखा तैयार करता है जिससे व्यक्ति के व्यवहार, विचार और भावनाओं के बारे में समस्या को जानने से लेकर उपचार के बाद सहायता मिले। सैद्धांतिक दृष्टि चिकित्सा प्रक्रिया को दर्शाती है—

(1) **मनोविश्लेषक/मनोगतिक नियम**—इसे ऐतिहासिक दृष्टिकोण के नाम से भी जाना जाता है जिसे **सिमण्ड फ्रायड** द्वारा प्रतिपादित किया था वे मानते थे कि किसी का अचेतन मन उसके व्यवहार को दर्शाता है। वे तकनीकें जिन्हें उसने विकसित किया है जैसे मुक्त साहचर्य विश्लेषण और हस्तांतरण जिसे आज तक प्रयोग में लाया जाता है।

सामान्य रूप से मनोविश्लेषक और परामर्शदाता इस दृष्टि का प्रयोग करते हैं और प्रत्येक पिछले संबंधों पर केंद्रित रहते हैं और बचपन के दर्दनाक अनुभवों को वर्तमान से जोड़ते हैं। वे इन मुद्दों की सतह तक जाते हैं और उपचार करते हैं।

इस नियम का पालन करने में बहुत समय लगता है क्योंकि इसमें गहन रूप से परिवर्तन किया जाता है और इसके लिए किसी के प्रति महत्वपूर्ण जानकारी की समझ होनी चाहिए।

(2) **व्यवहारात्मक नियम**—यह इस धारणा पर आधारित है कि व्यवहार परम्परागत अनुबंधन से सीखा जाता है इसे विद्वान **पावलॉव (Pavlov)** ने अपने अनुसंधान में बताया है। उन्होंने कुत्तों पर अन्वेषण किया है और अधिगम प्रतिक्रिया पर ध्यान केंद्रित किया है। व्यवहारात्मक चिकित्सक अनचाहे और विनाशकारी व्यवहार को बदलने पर कार्य करते हैं वे इसे संशोधन तकनीकी के द्वारा करते हैं जैसे—सकारात्मक या नकारात्मक सद्दीकरण।

(3) **संज्ञानात्मक नियम**—1960 में मनोचिकित्सक **एरन बेक (Aaron Back)** ने संज्ञानात्मक नियम का विकास किया था। यह परामर्श इस बात पर ध्यान केंद्रित करता है कि किसी के विचार, भाव और व्यवहार में परिवर्तन कैसे आता है। मनोगतिक नियम के बजाय यह संज्ञानात्मक नियम पर आधारित है जो कि समस्या समाधान की ओर उन्मुख है। संज्ञानात्मक चिकित्सक व्यक्ति की वर्तमान स्थिति पर ध्यान देता है।

(4) **संज्ञानात्मक-व्यवहारात्मक चिकित्सा (CBT)**—संज्ञानात्मक और व्यवहारात्मक चिकित्सा को अक्सर जोड़ कर एक कर लिया जाता है। यह मानसिक बीमारियों जिनमें चिंता, व्यक्तित्व, भोजन और अन्य विकारों को ठीक करने में मदद मिलती है।

(5) **मानवीय दृष्टि (Humanist Approach)**—इसमें वर्तमान के बारे में सोचा जाता है और लोगों को उनके उच्चतम सामर्थ्य को प्राप्त करने में मदद की जाती है। भूतकाल में उपयोग की गई ऊर्जा या नकारात्मक व्यवहारों पर ध्यान नहीं दिया जाता। मानवीय लोग अच्छाई में विश्वास करते हैं और आत्म प्रगति और आत्म वास्तविकता पर बल देते हैं।

इसके अन्तर्गत मनोविश्लेषण पद्धति, व्यवहारिक पद्धति और संज्ञानात्मक नियमों तीनों को सम्मिलित कर चिकित्सा की जाती है।

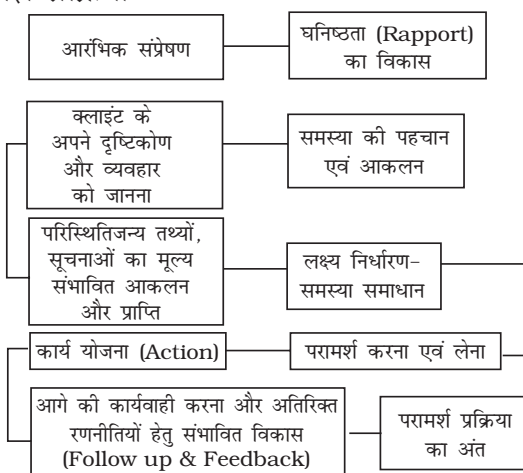
कार्ल रोजर्स ने व्यक्ति केंद्रित चिकित्सा का प्रयोग किया, जो इस विश्वास पर ध्यान देता है कि वे अपने भाग्य के निर्माता स्वयं हैं। वे मानते हैं कि सभी चिकित्सकों को अपनी देखभाल और रूचि पर ध्यान देना चाहिए। सभी चिकित्सकों को इस बात पर अधिक ध्यान देने हैं कि उस समय में क्या चल रहा है कि जो चिकित्सा में कहा गया है आस्तित्ववादी चिकित्सक लोगों की मदद जीवन में अर्थ ढूँढ़ने के लिए करते हैं जिससे वे मुक्त होकर दृढ़शक्ति और उत्तरदायित्व के समझ सकें।

समावेशी चिकित्सा (Holistic or Inclusive therapy)

इसमें विभिन्न नियमों के विभिन्न घटक सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त पारंपरिक और गैर पारंपरिक चिकित्सा सिद्धांत सम्मिलित हैं, जैसे सम्मोहन या निर्देशित मानसिक चित्र तकनीक और मनोचिकित्सा का प्रयोग किसी निश्चित व्यक्ति और समस्या के लिए उचित है।

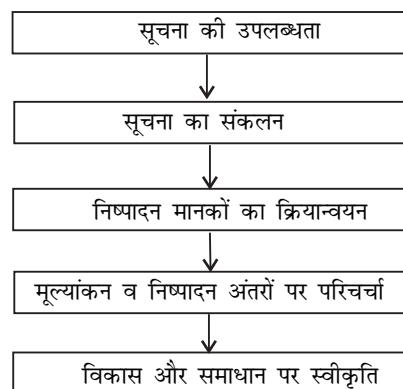
ऐसी कई प्रकार की चिकित्सा है जिसे मार्गदर्शक अध्ययन के लिए प्रयुक्त करते हैं। परंतु चिकित्सा का प्रकार कम महत्व रखता है जबकि व्यक्ति और चिकित्सक में संबंध अधिक। परामर्श में व्यक्ति स्वयं का निरीक्षण करता है और उन कारकों का निरीक्षण करना सीखता है जो व्यक्ति के चिकित्सक से संबंधों को प्रभावित करता है।

परामर्श प्रक्रिया



परामर्श प्रक्रिया का कार्यशील प्रतिरूप (मॉडल)

मूलभूत परामर्श प्रक्रिया के चरण

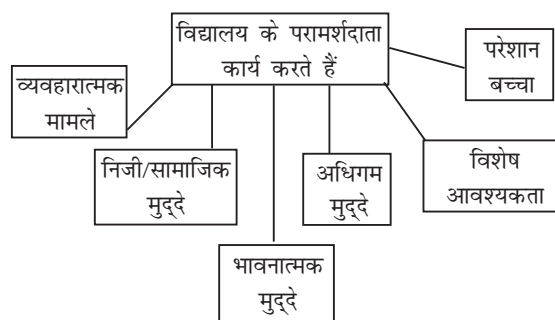


- यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें परामर्शदाता व्यक्ति क्लाइंट से बातचीत करता है जिसमें वह तथ्यों, उसकी रूचि, योजना और समायोजनाओं को जानता है, जो वह बनाना चाहता है।

—ग्लेन एफ, स्मिथ

- परामर्श प्रत्यक्ष संपर्कों की वह श्रृंखला है, जिसका उद्देश्य किसी को अपनी धारणाओं और व्यवहार को बदलने में सहायक है।

—कार्ल रोगर्स



प्रभावी परामर्शदाता एवं मार्गदर्शनकर्ता के कौशल व विशेषताएं

परामर्श करने हेतु अच्छे ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है। परामर्शदाता के रूप में विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक, तनाव का सामना करते हुए आकलन, समस्या पहचानना, परामर्श करना उनके कार्य हैं। परामर्शदाता को दूसरों की मदद करने से आनंद का अनुभव करना चाहिए और निम्न दिए हुए गुण और कौशलों के बारे में बताती हैं।

(क) **प्रभावी संप्रेषण (Effective Communication)**—प्रभावी परामर्शदाता के पास कुशल संप्रेषण कौशल होते हैं। उसे समस्याओं को सुनना चाहिए और अपने विचारों को व्यक्ति से कहना चाहिए।

(ख) **क्लाइंट को प्रश्रय एवं स्वीकृति (Client's Preference)**—उसे बिना किसी मत को बनाए हुए बच्चे की समस्याओं को स्वीकार करना चाहिए। बच्चे को समझने का प्रयास करना चाहिए या सबसे बड़ा विशेषता हो सकती है।

(ग) समानुभूति (Empathy)-बच्चों को तनावपूर्ण समय में मदद करनी चाहिए। ताकि वे समानुभूति का प्रदर्शन कर सकें। जो बच्चा महसूस कर रहा है वे महसूस कर सकें। समानुभूति का अर्थ होता है कि आप बिल्कुल वास्तविकता से समझ पा रहे हो कि सामने वाला क्या महसूस कर रहा है।

(घ) समस्या समाधान कौशल (Solution Skills)-परामर्शदाता को स्वयं में समस्या समाधान का कौशल विकसित करना चाहिए जिससे वह बच्चे की अस्तित्व संबंधी व अन्य व्यावहारिक समस्याएँ सुलझा सके।

(ङ) घनिष्ठ संबंध (Rapport Building)-परामर्शदाता के मजबूत अंतरवैयक्तिक कौशल होने चाहिए जिससे वह विद्यार्थी से मजबूत रिश्ते बना सके। वह विश्वास कायम कर सके। परामर्शदाता को अपना पूरा ध्यान इस बात पर रखना चाहिए कि बच्चा क्या बोल रहा है और अपनी निजी समस्याओं को बीच में नहीं आने देना चाहिए न ये सोचना चाहिए कि यह परामर्शदाता के पास क्यों है।

(च) व्यवहारिक लोचशीलता (Flexibility)-इसे परिवर्तन को स्वीकृत करने के रूप में देखा जा सकता है। परामर्शदाता को जिद्दी और एक ही दृष्टि से चिपके रहने वाला नहीं होना चाहिए।

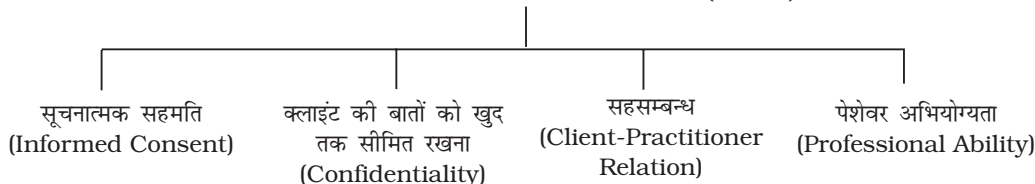
(छ) आत्म-जागरूकता (Self Awareness)-वह स्वयं में झाँकने की योग्यता है और अपनी न प्राप्त हुई मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ और इच्छाओं को जानना है। यह योग्यता आपको बच्चे के साथ वाद-विवाद से बचाएगी। यह परामर्शदाता के जीवन पर काफी प्रभाव छोड़ती है।

(ज) बहुसांस्कृतिक सामर्थ्य (Multicultural Competency)- परामर्शदाता विद्यार्थियों की मदद जीवन में कई पहलुओं से करता है। उन्हें बहुसांस्कृतिक रूप से जुड़ा हुआ होना चाहिए और विभिन्न दृष्टियों का समझ पाने की योग्यता होनी चाहिए। बहुसांस्कृतिक सामर्थ्य का अर्थ यह है कि बच्चे को उसकी जाति, रंग धर्म और विश्वास पर ध्यान न देते हुए उसे समझने को प्रयास करना चाहिए।

परामर्श और मार्गदर्शन में अंतर

दोनों जीवन की समस्याओं को सुलझाने में मदद करते हैं। मूलभूत अंतर दृष्टि (Approach) का है। मार्गदर्शन की इस प्रक्रिया में व्यक्ति की समस्या अच्छी तरह सुनी जाती है और पहले से तैयार हल को विशेषज्ञ द्वारा दे दिया जाता है परंतु परामर्श में समाधान व्यक्ति के भीतर ही ढूँढा जाता है।	
परामर्श	मार्गदर्शन
(1) व्यक्ति (क्लाइंट) निर्देशित- नियंत्रण का केंद्र व्यक्ति की ओर उन्मुख है और व्यक्ति प्रत्येक अवस्था में सम्मिलित है।	(1) परामर्शदाता (काउंसिलर) निर्देशित- नियंत्रण का केंद्र परामर्शदाता के पास है।
(2) परामर्शदाता सहायक है-वह निर्णय करने वाला नहीं होता है।	(2) परामर्शदाता सूचना/सुझाव देने का केन्द्रक है।
(3) व्यक्ति और परामर्शदाता दोनों मिल कर कार्य करते हैं।	(3) परामर्शदाता उद्देश्यों और पद्धतियों को निर्धारित करता है।
(4) व्यक्ति, आवश्यकता को आकलित करने और प्रगति का मूल्यांकन करने में भागीदार बनता है।	(4) यहां आकलन/निदान और मूल्यांकन तीनों का सर्वेसर्वा परामर्शदाता होता है।
(5) अधिगम हस्तांतरण के रूप में देखा जाता है।	(5) अधिगम समस्या के अनुरूप में देखा जाता है।
(6) यहां अधिगम भावनात्मक और संज्ञात्मक प्रक्रिया है।	(6) अधिगम में भावनाओं पर विचार न करके वैज्ञानिक पद्धति अपनायी जाती है।
(7) विषय के अनुसार अधिगम के बारे में सीखने में स्वयं को सम्मिलित किया जाता है।	(7) किसी विषय के बारे में स्वयं सीखने की गुंजाइश नहीं होती है।

निर्देशक-मार्गदर्शक-परामर्शक की आचार संहिता (Ethics)



बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- क्लायंट-केन्द्रित चिकित्सा (Client-Centered Therapy) तथा फ्रायडियन मनोविश्लेषणात्मक चिकित्सा में मूल अंतर यह है कि—
 - पहले तरह की चिकित्सा में चिकित्सक की भूमिका गौण होती है जबकि दूसरे तरह की चिकित्सा में चिकित्सक की भूमिका-प्रधान होती है।
 - पहले तरह की चिकित्सा में चिकित्सक की भूमिका प्रधान होती है जबकि दूसरे तरह की चिकित्सा में चिकित्सक की भूमिका गौण होती है।
 - पहले तरह की चिकित्सा मानवतावादी अनुभवात्मक श्रेणी (Humanistic Experimental Category) की चिकित्सा है जबकि दूसरे तरह की चिकित्सा मनोगतिकी (Psychodynamic) चिकित्सा है।
- गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt Therapy) एक तरह का
 - समूह चिकित्सा (Group Therapy) है।
 - वैयक्तिक चिकित्सा (Individual Therapy) है।
 - अंशतः समूह तथा अंशतः वैयक्तिक चिकित्सा है।
 - न समूह चिकित्सा है और न ही वैयक्तिक चिकित्सा है।
- संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive Behaviour Therapy) का मुख्य बल—
 - रोगी के विश्वास (Belief) तथा व्यवहार में ताल-मेल स्थापित करना।
 - रोगी के विश्वास से भ्रमात्मक तथ्यों को निकाल फेंकना है।
 - रोगी में यथार्थ संज्ञान (Relevant Cognition) स्थापित करना।
 - रोगी के कुसमायोजित व्यवहार (Maladaptive Behaviour) को दूर करना।
- DSM-IV से तात्पर्य होता है—
 - एक व्यक्तित्व आविष्कारिकता (Personality Inventory) से
 - अत्यधिक उपयोग में आने वाला एक नैदानिक तन्त्र (Diagnostic System) से
 - चिन्ता विकृतियों में सम्मिलित न्यूरोसायनिक (Neurochemical) से
 - मनोविदालिता (Schizophrenia) के उपचार में मनोसक्रिय औषधों के उपयोग का तन्त्र से
- मनोनाटक (Psychodrama) एक चिकित्सा (Therapy) है—
 - क्लायंट-केन्द्रित
 - समूह
 - वैयक्तिक आधृत
 - निर्देशात्मक
- सामूहिक चिकित्सा (Group Therapy) के बारे में निम्नांकित में से कौन सही नहीं है?
 - सामूहिक चिकित्सा समूह के अन्य सदस्यों से पुनर्निवेशन (Feedback) प्राप्त करने की अनुमति देता है।
 - यह चिकित्सा समूह के अन्य सदस्यों से मदद एवं समर्थन प्राप्त करने में मदद करता है।
 - इसका संचालन प्रशिक्षित चिकित्सकों द्वारा नहीं होता है।
 - वैयक्तिक चिकित्सा की तुलना में यह कम खर्चीला होता है।
- वह विकृति जिसमें व्यक्ति के मन में वही विचार बार-बार आता है और उस पर व्यक्ति का नियंत्रण नहीं होता है, उसे कहा जाता है।
 - दुर्भीति (Phobia)
 - उत्साह-विषाद मनोविकृति (Manic-Depressive Psychosis)
 - मनोग्रस्ति-बाध्यता (Obsessive-Compulsive)
 - हिस्टीरिया (Hysteria)
- वह मानसिक विकृति जिसमें व्यक्ति का सामाजिक संबंध (Social Contact) सामाजिक जगत से पूर्णतः विच्छिन्न हो जाता है कहलाता है।
 - व्यामोहात्मक विकृति (Paranoid Disorder)
 - मनोविदालिता (Schizophrenia)
 - समाज-विरोधी व्यक्तित्व (Antisocial Personality)
 - मनोविकृति व्यक्तित्व (Psychopathic Personality)
- किसने पुस्तक 'काउन्सलिंग एण्ड साइकोथेरेपी' (Counselling and psychotherapy, 1942) लिखा?
 - कार्ल रोजेर्स (Carl Rogers)
 - सिमंड फ्रायड
 - सी.जी. युंग
 - इनमें से कोई नहीं
- विद्यार्थियों के सम्यक मार्गदर्शन हेतु वांछनीय ज्ञान जरूरी है—
 - समस्या का
 - परिवार का
 - वातावरण का
 - उपरोक्त सभी
- समायोजन (Adjustment) की प्रकृति मूलतः होती है :
 - शारीरिक
 - मानसिक
 - कार्यात्मक
 - उपरोक्त सभी

12. पेशेवर गाइडेंस किस परिस्थिति में अत्यावश्यक है—

- (1) रूच्यानुसार पेशाचयन
- (2) प्रतिभानुसार पेशा चुनने में
- (3) सामर्थ्यानुसार पेशा चुनने में
- (4) उपरोक्त सभी

13. विद्यालय में लैंगिक भेदभाव से बचने का सर्वोत्तम तरीका है—

- (1) सहपाठियों से कहना
- (2) शिक्षक के संज्ञान में देना
- (3) माता-पिता से कहना
- (4) उपरोक्त सभी

14. जीवन मूल्यों में गिरावट का कारण है—

- (1) भौतिकवाद
- (2) शहरीकरण
- (3) औद्योगिकरण
- (4) उपरोक्त सभी

15. तनाव-कुण्ठा-समाधान के उपागम है—

- (1) एप्रोच-एप्रोच उपागम
- (2) परिहार-परिहार उपागम
- (3) एप्रोच-परिहार उपागम
- (4) उपरोक्त सभी

16. फोबिया (Phobia) की मूल संकल्पना है:

- (1) भावात्मक विकृति
- (2) अतार्किक भय
- (3) सामान्य भय
- (4) उपरोक्त सभी

17. डेमेंशिया (Demensia) किस प्रकार की विकृति है?

- (1) संज्ञानात्मक
- (2) सामाजिक
- (3) भावात्मक
- (4) प्रकार्यात्मक

18. व्यवहार चिकित्सा में उपयोगी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है—

- (1) अनुक्रिया
- (2) उद्दीपन
- (3) अनुबंधन (Conditioning)
- (4) इनमें से कोई नहीं

19. वह उपचार उपागम जिसमें रोगी को अपने ही दैहिक प्रक्रियाओं (Physiological Processes) को प्रभावित करने के लिए सिखाया जाता है, कहलाता है—

- (1) विरुचि चिकित्सा (Aversion Therapy)
- (2) बायोफीडबैक चिकित्सा (Bio-Feedback Therapy)
- (3) 'इनविभो' प्रविधि (In Vivo Technique)
- (4) गुप्त मॉडलिंग (Covert Modeling)

20. मॉडलिंग (Modeling) द्वारा मानसिक समस्याओं का उपचार करने के लिए निम्नांकित में से किनका योगदान (Contribution) सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है—

- (1) बैण्डुरा (Babdura)
- (2) कैटेल (Cattel)
- (3) काजडीन (Kazdin)
- (4) एडम्स एवं बेसर (Adams & Beyer)

21. सामूहिक चिकित्सा की विशिष्टता है—

- (1) एकांगी-एकपक्षीय
- (2) सामान्य-विशिष्ट
- (3) बहुविध-बहुकारीय
- (4) उपरोक्त सभी

22. निम्नलिखित में से किस मनोवैज्ञानिक ने बहुआयामी चिकित्सा प्रणाली पर सर्वाधिक जोर दिया है ?

- (1) फ्रायड
- (2) लैज़ारस
- (3) वुण्ट
- (4) डीवी

23. RET का पूर्णरूप है—

- (1) रैशनल इमोटिव ट्रीटमेंट
- (2) रिलेशनल इमोटिव ट्रीटमेंट
- (3) रिप्लेक्सनल इमोटिव ट्रीटमेंट
- (4) रिक्रिएशनल इमोटिव ट्रीटमेंट

24. मानवतावादी चिकित्सा विधि में परिगणित है—

- (1) क्लाइंट सेंट्रिक
- (2) गोस्टाल्ट थेरेपी
- (3) लोगो (Logo) थेरेपी
- (4) उपरोक्त सभी

25. कुसमायोजित व्यवहार के संलक्षण होते हैं—

- (1) रक्तचाप बढ़ना
- (2) हृदयगति बढ़ना
- (3) ताप बढ़ना
- (4) उपरोक्त सभी

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(1)	2.	(1)	3.	(1)	4.	(1)	5.	(2)
6.	(3)	7.	(3)	8.	(2)	9.	(1)	10.	(1)
11.	(4)	12.	(4)	13.	(1)	14.	(4)	15.	(4)
16.	(4)	17.	(1)	18.	(3)	19.	(2)	20.	(1)
21.	(3)	22.	(2)	23.	(1)	24.	(4)	25.	(4)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (1) क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (Client centered therapy) का प्रतिपादित कार्ल रोजर्स (Carl Rogers) द्वारा किया गया। इसे व्यक्ति केन्द्रित चिकित्सा (Person Centered Therapy) या अनिर्देशित चिकित्सा (Non-directive Therapy) भी कहा जाता है। इस चिकित्सा विधि में रोजर्स ने रोगी के लिए क्लायंट (Client) तथा चिकित्सक (Therapist) के लिए सलाहकार (Counsellor) शब्द का उपयोग किया है।
2. (1) गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt Therapy) का प्रतिपादन फ्रेडरिक एस. फ्रिज पर्स (Fredrick S. Fritz Perls, 1967, 1970) द्वारा किया गया। इस चिकित्सा में मन तथा शरीर की एकता (Unity) पर बल डाला जाता है जिसमें चिन्तन, भाव तथा क्रिया के समन्वयन (Integration) की आवश्यकता को सर्वोपरि समझा जाता है। समूह अपने आप में सुधारक भूमिका निभाता है। समूह का सदस्य बनने या होने से व्यवहार में परिवर्तन जरूरी या मजबूरी बन जाती है:
3. (1) संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा की विशेषता : व्यक्ति और परामर्शदाता दोनों मिलकर कार्य करते हैं। व्यक्ति, आवश्यकता को आकलित करने और प्रगति का मूल्यांकन करने में भागीदार बनता है। अधिगम हस्तांतरण के रूप में देखा जाता है।
संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (Cognitive Behaviour Therapy or CBT) : एक ऐसी चिकित्सा प्रविधि है जिसमें मानसिक रोग का संज्ञानात्मक पुनर्संरचना (Cognitive Restructing) किया जाता है जिससे रोगी गलत चिन्तन तथा विश्वास को त्याग करके उसके जगह पर उपयुक्त चिन्तन एवं विश्वास विकसित कर समायोजी व्यवहार करने में सफल हो पाता है।
4. (1) मानसिक रोगों के लिए उपयोगी नैदानिक तंत्र स्वरूप एक औपचारिक वर्गीकरण के तौर पर अमेरिकन मनोचिकित्सक संघ (American Psychiatric Association) ने तुलनात्मक रूप से अधिक प्रभावकारी वर्गीकरण तंत्र का प्रकाशन किया जिसे 'डायग्नोस्टिक एंड स्टैटिस्टिकल मैनुअल ऑफ मेन्टल डिसऑर्डर' (Diagnostic and Statistical Manual of Mental Disorder or DSM) कहा गया। यह DSM का प्रथम प्रकाशन था जो 1952 में किया गया था तथा इसे DSM-I कहा गया DSM-IV का प्रकाशन 1994 में हुआ।
5. (2) मनोनाटक (Psychodrama) : सामूहिक चिकित्सा का एक प्रमुख प्रकार है जिसे मनोविश्लेषणात्मक-समूह चिकित्सा मॉडल के तहत रखा गया है। मनोनाटक का प्रतिपादन मोरेनो (Moreno, 1946) द्वारा किया गया। इस विधि में रोगी एक समूह की नियंत्रित परिस्थिति में अपनी कठिनाइयों एवं मानसिक संघर्षों (Mental Conflicts) को अभिव्यक्त करने का अभिनय करता है ताकि उससे संबंधित समायोजन की कठिनाइयों से वह अवगत हो सके।

6. (3) सामूहिक चिकित्सा के जनक जोसेफ प्राउट माने जाते हैं। इसमें मनोवैज्ञानिक समस्याओं (Psychological Problems) को एक क्रमबद्ध तरीके (Systematic Fashion) से परिवार को एक तंत्र (System) के रूप में सम्मिलित कर किया जाता है।
7. (3) विचारों पर नियंत्रणहीनता एक मनोवैज्ञानिक विकृति की स्थिति है जिसे मनोग्रस्ति बाध्यता (Obsessive Compulsive) की संज्ञा दी जाती है।
8. (2) मनोविदालिता (Schizophrenia) एक अन्य गंभीर मानसिक रोग है जिस पर DSM-IV पर काफी बल डाला गया है। यह मनोविक्षिप्ति विकृतियों का एक समूह है जिसमें चिन्तन, संवेग तथा व्यवहार में अत्यधिक क्षुब्धता की विशेषता होती है।
9. (1) कार्ल रोजर्स नामक मनोवैज्ञानिक ने 'काउंसिलिंग एंड सायकोथेरेपी' नाम से पुस्तक लिखी है जिसमें मार्गदर्शन एवं परामर्शन के सिद्धान्त, मानक, प्रक्रिया और विधियों का सुव्यवस्थित वर्णन है।
10. (1) छात्रों के समुचित मार्गदर्शन करने के लिए विद्यार्थी की समस्या, व्यक्तित्व और गृह-माहौल जानना आवश्यक है। घर-परिवार तथा कक्षागत माहौल से विद्यार्थी की परिस्थिति का सही आंकलन होगा।
11. (4) मानसिक समायोजन मन-मस्तिष्क का समायोजन है। यह मनोवैज्ञानिक स्थिति है जो नीतिगत निर्णयन से सीधे-सीधे संबंधित है। इसके अंतर्गत कार्य से पहले की स्थिति से रूबरू होना पड़ता है जिसमें खुद की खुशियाँ-खामियाँ और चुनौतियों-प्रेरणाओं पर सामान्यतः विचार कर निर्णय लिया जाता है।
12. (4) अपनी रुचि व प्रतिभानुसार व्यवसाय-कार्य चुनने हेतु व्यवसायिक/पेशेवर गाइडेंस की जरूरत पड़ती है। व्यवसायिक व पेशेवर गाइडेंस (निर्देशन) शिक्षा जगत की एक नवीनतम आयाम व विषयक्षेत्र है। यह शिक्षकीय शिक्षण-प्रशिक्षण का अभिन्न अंग है।
13. (1) विद्यालय में लिंग संबंधी भेदभाव से बचने के सर्वोत्तम तरीका है शिक्षकों द्वारा इस मुद्दे पर संज्ञान लेना। लैंगिक भेदभाव के कारणों, प्रक्रियाओं, स्वरूप व प्रकारों पर सांगोपांग विचार कर एक सर्वमान्य व सटीक हल निकालना प्रधानाचार्य का परम कर्तव्य है। क्योंकि समावेशी एवं समन्वित शिक्षा ऐसे किसी भी विभेद को निषेध करता है।
14. (4) शहरीकरण, औद्योगिकरण और भौतिकवादी सोच के चलते जीवन मूल्यों में गिरावट वर्तमान युग की एक बड़ी त्रासदी है। मानवीय मूल्य ही जीवन मूल्य है। जिन मूल्यों पर हमारा व्यक्तित्व, परिवार एवं समाज टिका है वे ही राष्ट्रीय मूल्य भी हैं।

15. (4) तीन प्रकार की कुंठा-समाधान प्रक्रियाएँ हैं : तनाव उपागम हेतु पहुँच-पहुँच : एप्रोच-एप्रोच उपागम।
वंचन-वंचन : परिहार-परिहार (एव्वायडेंस- एव्वायडेंस) उप पहुँच-वंचन : एप्रोच- एव्वायडेंस उपागम।
16. (4) दुर्भीति (Phobia) एक प्रकार का भावात्मक विकृति (Affective Disorder) है।
कोई भी अतार्किक डर (Irrational Fear) जैसे बिल्ली से डरना या मकड़ा से डरना को दुर्भीति कहा जाता है।
सामान्य मानव डर (Irrational Fear - Common Human Fears) की जैविक व्याख्या (Biological Explanation) द्वारा प्रस्तावित तैयारी प्राक्कल्पना (Preparedness Hypothesis)
कोई भी अतार्किक डर को दुर्भीति तब तक नहीं कहा जाता है जब तक कि उससे व्यक्ति का समायोजन प्रभावित नहीं होता है।
17. (1) मनोभ्रंश (Dementia) एक प्रमुख संज्ञानात्मक विकृति (Cognitive Disorder) है जिसमें स्मृति, चिन्तन, तर्कण तथा एकाग्रता (Concentration) का समग्र क्षति होता है तथा जो इतना गंभीर होता है कि इससे घर या कार्य पर के व्यक्ति के दिन प्रतिदिन के कार्य बाधित होते हैं।
18. (3) व्यवहार चिकित्सा (Behaviour Therapy) मनोचिकित्सा की ऐसी प्रविधि है जिसमें मानसिक रोगों को उपचार कुछ ऐसी प्रविधियों से किया जाता है जिसका आधार अनुबंधन (Conditioning) होता है। इस क्षेत्र में विशेषकर पैवलव तथा स्कीनर (Skinner) द्वारा तथा संज्ञानात्मक सीखने के क्षेत्र में किये गए प्रमुख सिद्धान्त एवं नियम सार्थक होते हैं।
19. (2) बायोफीडबैक विधि (Biofeed-Back Method): इसमें व्यक्ति अपने आन्तरिक एवं स्वायत्त अनुक्रियाओं (Autonomic Responses) का नियंत्रण व्यवहारपरक विधियों (Behavioural Methods) से करता है। इस प्रविधि में वैद्युत उपकरण के सहारे रोगी को अपनी शारीरिक क्रियाओं के बारे में सूचना प्रदान की जाती है।
20. (1) अल्बर्ट बैडुरा की मॉडलिंग थ्योरी का बहुआयामी उपयोग व्यवहारात्मक अवलोकन को आँकने के लिए किया जाता है। विशिष्ट व्यवहार के उदाहरणों समझने के लिए विस्तृत निर्देश दिए जाते हैं। दो तरह के अवलोकन हैं—भागीदार और गैर भागीदार (Participant & Non-Participant) जिन्हें कक्षा में उपयोगी माना गया है।
21. (3) सामूहिक चिकित्सा (Group therapy) में एक साथ कई रोगियों का उपचार किया जाता है। दूसरे शब्दों में, रोगियों का उपचार इसमें एक समूह (Group) में किया जाता है। जब यह समूह असंबंधित व्यक्तियों का होता है तो उसे सामूहिक चिकित्सा (Group therapy) परन्तु जब वह समूह संबंधित व्यक्तियों का होता है तो उसे पारिवारिक चिकित्सा (Family therapy) तथा वैवाहिक चिकित्सा (Marital Itherapy) कहा जाता है।
22. (2) बहुआयामी चिकित्सा (Multi-Dimensional) का प्रतिपादन लेजारस (Lazarus, 1989) द्वारा किया गया। लेजारस का मत है कि कोई भी व्यक्ति सात विभिन्न आयामों का संग्रहण करता है—व्यवहार, भावात्मक प्रक्रियाएँ (Affective proceses), संवेदन (Sensation), प्रतिमा (Images), संज्ञान (Cognition), अन्तर वैयक्तिक संबंध (Interpersonal Relations) तथा औषध (Drugs)। इन सातों को संक्षेप में लेजारस ने BASIC-ID कहा है।
23. (1) रैसनल-इमोटिव चिकित्सा (RET) का प्रतिपादन इलिस (Ellis, 1958, 1975) द्वारा किया गया। यह चिकित्सा पद्धति एबीसी मॉडल (ABC model) अर्थात्, भाव (Affect), व्यवहार (Behaviour) तथा संज्ञान (Cognition) मॉडल पर आधारित है। इस चिकित्सा विधि में चिकित्सक पहले रोगी के अविवेकपूर्ण व्यवहार, अतर्कसंगत विचार एवं विश्वासों की खोजबीन करता है।
24. (4) मानवतावादी चिकित्सा पद्धति में मुख्य रूप से चार तरह की चिकित्साओं को सम्मिलित किया गया है—क्लायंट केन्द्रित चिकित्सा (Client Centric therapy), गेस्टाल्ट चिकित्सा (Gestalt therapy), लोगो चिकित्सा (Logo therapy) तथा अस्तित्ववादी चिकित्सा (Existential therapy)।
25. (4) ऐसे व्यवहारों में मूलतः अनैच्छिक क्रिया जैसे हृदय की गति, रक्तचाप, त्वचा का तापक्रम, मस्तिष्कीय तरंग (Brain waves) तथा अन्य संबंधित कार्य जिनका संचालन मूलतः स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic Nervous System) से होता है, प्रधान होते हैं। इस अनैच्छिक क्रियाओं में परिवर्तन लाने का प्रशिक्षण देकर रोगी के कुसमायोजित व्यवहार को दूर करके उसके जगह पर समायोजित व्यवहार (Adaptive Behaviour) को सिखाया जाता है।

□□□

भूमिका

व्यक्तित्व आनुवंशिक, शारीरिक, बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक, चरित्रात्मक विशेषताओं का समूह है जो उसके व्यवहार, अनुभवों, आदतों, दृष्टिकोणों, विश्वासों, इच्छाओं, आकांक्षाओं, रुचियों, भावनाओं तथा स्वभावगत विशेषताओं द्वारा प्रकट होता है।

पर्सनैलिटी (Personality) लैटिन शब्द Persona से निकला है जिसका अर्थ नकाब या मास्क (मुखौटा) है। व्यक्तित्व के विकास में वंशक्रम का अधिक योगदान रहता है अथवा वातावरण का यह प्रश्न शुरू से ही विवादास्पद रहा है। वंशक्रम और वातावरण दोनों को ही अपनी दृष्टि से अधिक महत्व देने हेतु वंशक्रम तथा वातावरणवादी दोनों ने ही अपने-अपने ढंग से विभिन्न प्रयोग और अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। परन्तु निष्पक्ष दृष्टिकोण से यदि सोचा जाए तो यह कहना ही अधिक श्रेयस्कर है कि बालक के विकास में उसके वंशक्रम और वातावरण का संयुक्त रूप से मिला-जुला योगदान ही रहता है। वंशक्रम और वातावरण के संयुक्त प्रभाव की तुलना बीज और भूमि से की जा सकती है।

एच.जे. आइसेक (H.J. Eysenck) – “व्यक्तित्व किसी व्यक्ति के स्वभाव संबंधित स्थायी व्यवस्था है, जो कि जैविक इच्छाओं और सामाजिक और भौतिक पर्यावरण के बीच में व्यवहार से उत्पन्न होता है।”

ई. आर. गुथरी (E.R. Guthrie) – “व्यक्तित्व को किसी की आदतों या सामाजिक की प्रवृत्तियों के रूप में परिभाषित किया गया है जो स्थायी होती है।

गॉर्डन अलपोर्ट (Gordon Allport) – व्यक्तित्व किसी व्यक्ति के भीतर उन मनोवैज्ञानिक व्यवस्थाओं की व्यवस्था प्रणाली है, जो कि उसके पर्यावरण के प्रति उसके विशिष्ट सामंजस्य को निर्धारित करता है। व्यक्तित्व आंतरिक और बाहरी क्रियाकलापों की व्यवस्था है। इसमें बाहरी व्यक्तित्व, गुण, दृष्टि और क्षमताएँ आदि सम्मिलित हैं। यह पर्यावरण के प्रति किसी व्यक्ति के व्यवहार का परिणाम है। कई व्यक्ति दूसरे की बौद्धिकता, भौतिकवादी, व्यवहारिक और तथ्यों से प्रभावित होते हैं।

व्यक्तित्व के सिद्धान्त (Theory of Personality)

व्यक्तियों और किसी व्यक्ति के भीतर सामंजस्य का व्यवहारात्मक अंतर वैयक्तिक सिद्धान्तों का मुख्य केन्द्र है।

इस के अंतर्गत व्यक्तियों का ऐसा वर्ग सम्मिलित है जिससे व्यक्तियों की साधारण विशेषताओं के संकलन का पता चलता है।

- इस सिद्धान्त का पहला प्रकार **हिप्पोक्रेटस** द्वारा दिया गया था जिसे चार प्रकार की मनोस्थितियों में विभाजित किया है—

(क) **आशावादी (Sanguine)**—ऐसे लोग सकारात्मक, खुश मिजाज और सशक्त होते हैं।

(ख) **क्रोधी (Choleric)**—इन्हें आसानी से उकसाया जा सकता है और ये गर्म मिजाज के तथा मजबूत होते हैं।

(ग) **अवसादग्रस्त (Melancholic)**—ये दबू तथा अवसादग्रस्त होते हैं।

(घ) **शांतचित्त (Phlegmatic)**—ये शांत, निरुत्साही और धीरे गति से बढ़ने वाले होते हैं।

एक बार यह वर्गीकरण व्यापक रूप से स्वीकृत हो चुका था परन्तु आज के समय में इसने अपना महत्व खो दिया है। हिप्पोक्रेटस (यूनानी शरीरशास्त्री) ने इस प्रकार का वर्गीकरण करते हुए व्यक्तियों को पहले तो उनके शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से चार प्रकारों (कफ

प्रवृत्ति वाले, काले पित्त वाले, पीले पित्त वाले तथा अधिक रुधिर वाले) में बाँटा और फिर यह दिखाने की चेष्टा की कि उनकी अपनी शारीरिक विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में विशेष प्रकार के व्यक्तित्व गुण पाए जाते हैं।

- विलियम जेम्स (William James) ने व्यक्तियों को मृदु तथा तर्कवादी के प्रकारों में विभाजित किया है। इन्हें सिद्धान्तों और अमूर्त विचारों द्वारा निर्देशित किया जाता है और आदर्श बनाने की ओर ध्यान दिया जाता है।

- जर्मन मनोवैज्ञानिक Kretschmer ने भौतिक और वैयक्तिक विशेषताओं के बीच में संबंध स्थापित करने वाले वैज्ञानिक अन्वेषण की शुरुआत की थी। उन्होंने **शरीर की बनावट के आधार पर** व्यक्तियों को चार प्रकारों (Types) में विभाजित किया था—

(क) **मांसल (Pyknic)**—ऐसे व्यक्ति छोटे और गोलमटोल होते हैं। ऐसे लोग बहिर्मुखी, उल्लासपूर्ण और मिलनसार और हल्के अवसाद की ओर उन्मुख होते हैं।

(ख) **क्षीण (Asthenic)**—इनका शरीर कमजोर होता है और वे सजोफ्रेनिया की ओर उन्मुख होते हैं। वे अंतर्मुखी और स्वयं में रहने वाले होते हैं।

(ग) **बलवान (Athletic)**—वे स्वस्थ तथा सामान्य होते हैं।

(घ) **असामान्य (Dysplastic)**—यह मिश्रित प्रकार है।

- **शेल्डन ने क्रेट्चमर** द्वारा दिए गए वर्गीकरण को सुधारने का प्रयास किया है। उन्होंने परिमाणात्मक अवधारणाओं के भीतर कुछ शारीरिक विशेषताओं से जोड़ा है। **शेल्डन ने** शरीर के तीन प्रकारों को पहचाना और उन्हें तीन प्रकार की मनोदशा से जोड़ा है :

(क) **मांसल (Endomorphic)**—ये भली-भाँति विकसित तथा कोमल होते हैं। वे निश्चित स्वभाव के होते हैं और खाना पसंद करते हैं तथा सामाजिक होते हैं।

(ख) **विकसित (Mesomorphic)**—छोटी, मांसल और समकोण संरचना का शरीर। ऐसा व्यक्ति ऊर्जावान क्रियाकलापों में सम्मिलित होता है और निडर प्रवृत्ति का होता है।

(ग) **कृशकाय (Ectomorphic)**—पतला और कमजोर शरीर, विशाल मस्तिष्क और संवेदनशील।

वर्णन हेतु विशेषताओं का प्रयोग और व्यक्तित्व का यह विश्लेषण बहुत लोकप्रिय है और इसी कारण से कई नियम प्रस्तावित हैं।

शीलगुण उपागम (Trait Approach)

आलपोर्ट इस सिद्धान्त के समर्थक हैं। वह कहते हैं विशेषताएँ (Traits) आदतों से अधिक सरल व सहज हैं। उन्होंने व्यापकता के स्तर पर इसे तीन वर्गों में बाँटा है।

1. **मौलिक (Cardinal) विशेषताएँ**—ये बहुत ही व्यापक प्रवृत्तियाँ हैं। ये बहुत ही प्रभावशाली विचार होते हैं और अधिकतर लोगों पर प्रभाव छोड़ती हैं। उदाहरण हेतु, स्वामी विवेकानंद के सशक्त विचार।

2. **केन्द्रीय (Central) विशेषताएँ**—ये इतनी प्रभावी प्रवृत्तियाँ नहीं होती परन्तु फिर भी व्यापक प्रवृत्तियाँ होती हैं। उदाहरण के लिए हार्दिक और निष्कपट।

3. **द्वितीयक (Secondary) विशेषताएँ**—सबसे कम व्यापक हैं। ये अधिक, विशिष्ट और निजी विशेषताएँ हैं—जैसे उसे आम पसंद हैं।

रेमंड बी. कैटल का कारक—सिद्धान्तः (Factor Theory) कैटल मानते हैं कि कई व्यक्तित्वों में सामान्य बातें देखने को मिलती हैं, जो कि कारक (Factors) विश्लेषण के आधार पर आनुभाविक रूप से निर्धारित होती हैं। कैटल कहते हैं कि किसी के व्यक्तित्व में 16 प्रकार के प्राथमिक या स्रोत कारक होते हैं। इनमें कई सतही विशेषताएँ भी होती हैं जो स्रोत की विशेषताओं के व्यवहार के कारण बनती हैं।

ये व्यक्तित्व के स्वाभाविक पक्ष हैं। स्रोत विशेषताएँ स्थायी होती हैं।

- **आइसेक के जैविक एवं आनुवंशिक गुण सिद्धान्त**—आइसेक ने व्यक्तित्व को दो आयाम बताए : जैविक और आनुवंशिक (Biological & Genetical) जो कि निम्नलिखित हैं—

(क) **तंत्रिका रोग बनाम भावनात्मक स्थायित्व (Neuroticism Vs Emotional Stability)**—उस वर्ग से संबंधित है जिसमें लोगों का स्वयं के भावों पर नियंत्रण है। एक सीमा तक ऐसे लोग भी होते हैं जो विक्षिप्त, चिंतित, बदमिजाज, अशांत और संवेदनशील होते हैं और कुछ सीमा तक ये शांत, समस्वभाव और नियंत्रित रहने वाले होते हैं।

(ख) **बहिर्मुखी बनाम अंतर्मुखी (Extroversion Vs Introversion)**—ऐसे वर्ग से संबंधित है जिसमें लोग सामाजिक रूप से खुले हुए हैं। अपने आगामी कार्य, में उन्होंने तीसरे आयाम को प्रस्तावित किया है जिसे मनोविक्षिप्ति (Psychotism) कहते हैं, जिसके लिए वे मानते हैं कि वे उपर्युक्त आयामों के साथ व्यवहार करते हैं।

व्यक्तित्व के पाँच कारकीय उपागम (Five Factor Model)

पॉल कोस्टा और रोबर्ट माक्रे (Poul Costa and Robert Macrae) ने संभावित वैयक्तिक विशेषताओं पर विस्तृत अनुसंधान किए हैं।

व्यक्तित्व का वर्णन करने वाले पाँच कारक तथा सम्बन्धित व्यक्तित्व गुण—

क्र.स. (S.N.)	व्यक्तित्व कारक (Personality Factors)	व्यक्तित्व गुण (Personality Traits)
1.	बहिर्मुखी (Extrovert)	बातूनी, मेल-जोल वाला, साहसी
2.	सहमति या समझौतावादी प्रकृति (Agreeableness)	भलापन, सहयोगी और दूसरों के द्वारा पसंद
3.	अंतरात्मा की आवाज या चेतना (Consciousness)	जिम्मेदारी निभाना, पवित्र आचरण तथा कार्य के प्रति सजगता
4.	संवेगात्मक स्थिरता (Emotional Stability)	शांत, धैर्यवान तथा स्थिर
5.	स्नायु विकृति (Neuro-disorder)	तर्कहीन डर, चिन्ता, अनिर्णय की स्थिति

(क) **अनुभव के प्रति खुलापन (Openness to Experience)**—इस तरह के व्यक्ति काल्पनिक, जिज्ञासु, नए विचारों की ओर अग्रसर होते हैं वही इसके विपरीत लोग कम सफल होने वाले सख्त स्वभाव के होते हैं।

(ख) **बहिर्मुखी (Extroversion)**—ये वे लोग होते हैं जो सामाजिक रूप से सक्रिय, खुले, बातूनी और आनंदमयी होते हैं वहीं इसके विपरीत लोग संकोचशील होते हैं।

(ग) **कृपालु (Agreeableness)**—ऐसे लोग वे होते हैं जो दूसरों की सहायता करते हैं, सहयोगी, देखभाल करने वाले होते हैं। ये आत्मकेंद्रित व प्रतिरोधी व्यक्तियों से अलग होते हैं।

(घ) **कर्त्तव्यनिष्ठ (Conscientious)**—ये जिम्मेदार, विवेकशील, उपलब्धि प्राप्त करने वाले, विश्वसनीय और मेहनती होते हैं। ये आवेगी व्यक्तियों से विपरीत होते हैं।

गोल्डबर्ग (1981), पीडमोन्ट, मक्रे तथा कोस्टा (1991) मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व कारकों की संख्या 5 बतायी गई है। इन कारकों को इनमें निहित विभिन्न व्यक्तित्व गुणों के साथ निम्न तालिका में देखा जा सकता है।

व्यक्तित्व के प्रवैगिक सिद्धांत (Dynamic Theory of Personality) : मनोविश्लेषण (Psychoanalysis)

- फ्रायड ने वियना विश्वविद्यालय में चिकित्सक के रूप में प्रशिक्षण लिया था। उनका अनुभव तंत्रिका विज्ञान में था और उन्होंने अपने अभ्यास के दौरान इस सिद्धांत का विकास किया।
- उनका सिद्धांत व्यक्ति के चेतना के विभिन्न स्तरों अचेतन-अवचेतन-चेतना को स्पष्ट करता है।
- चेतनता के स्तर पर हम वर्तमान विचारों और अपने आसपास कुछ चीजों के प्रति सचेत होते हैं।
- पूर्वचेतन स्तर में स्मृतियाँ, विचार, भावनाएँ और इच्छाएँ सम्मिलित हैं जो कि तत्कालीन रूप से सुलभ नहीं हो पाती परन्तु प्राप्य होती हैं।
- पूर्वचेतना से आगे, अचेतनता होती है जिसमें हम सचेत नहीं होते। इसमें दमित इच्छाएँ और संवेग सम्मिलित होते हैं। वे मानते हैं कि अचेतन मन हमारी स्वाभाविक इच्छाओं का संग्रह है।

व्यक्तित्व की संरचना (Structure of Personality)

फ्रायड मानते हैं कि मानव मस्तिष्क में तीन घटक होते हैं, उन्होंने बताया है—इदम् (Id), अहम् (Ego), पराअहं (Superego)।

इदम् (Id) किसी व्यक्ति का मौलिक पक्ष है, जो कि जैविक पाश्विक प्रकृति से प्रभावित होता है। ये सहज प्रवृत्तियाँ हैं—यौन संबंध, आवेग और ये मानव व्यवहार के मूलभूत अभिप्रेरण बल हैं।

फ्रायड द्वारा बताए गए इदम् के घटक को 'सुख सिद्धांत' कहते हैं। इसका अर्थ है कि अस्तित्व किसी की तत्कालीन संतुष्टि को अधि कतम करता है। अतः पहचान लोभी, अनुरोध करने वाली, संतुष्टि में देर न करने वाली और नीरस है। फ्रायड ने मानवीय स्वभाव के प्रति अपना दृष्टिकोण बताने के लिए प्लेटो द्वारा मानवीय स्वभाव के बारे में कहे गए कथनों को कहा है : "Homo Homini Lupus" (मानव, मानव के प्रति भेड़िया है।)

अहम् किसी के व्यक्तित्व का दूसरा घटक है। यह व्यक्तित्व का विश्वसनीय घटक है और किसी के कार्यों का निष्कर्ष बता सकता है। अहम् वास्तविकता के नियम पर चलता है, जो बताता है कि अहम् संतुष्टि को अधिकतम करने की ओर अग्रसर है, जो कि वास्तविकता में बाधा है। अतिअहंकार व्यक्तित्व का तीसरा घटक है। अतः धार्मिकता, सामाजिक, कलात्मक और अन्य अमूर्त मूल्य पराअहं के अंग हैं।

फ्रायड के पराअहं के दो मुख्य पक्ष हैं : आदर्श अहम् और चेतनता। ये व्यक्तित्व के अंतर्गत 'क्या करें' और 'क्या न करें'

के मूल्य हैं। अहंकार के आदर्श में मूल्य और आदर्श हैं जिसकी कोई महत्वकांक्षा रखता है। यह चेतना व्यक्तित्व का वह अंग है जो नैतिक मूल्य भंग होने पर किसी को अकसर दोषी होने जैसा अनुभव देता है।

व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)

फ्रायड ने व्यक्तित्व के विकास को पाँच अवस्थाओं के आधार पर वर्णित किया है और उन्हें मनोलैंगिक अवस्था माना है :

1. विकास का पहली अवस्था **मौखिक (Oral) अवस्था** है। पहली अवस्था शैशवकाल का है। जो कि 18-24 महीनों के अंतराल तक रहती है। इसमें कोई मौखिक रूप से संतुष्टि प्राप्त करता है जैसे स्तनपान, रोना, मुँह मारकर आसपास की चीजों के संपर्क में आना। फ्रायड के अनुसार इस अवस्था के बच्चों के पास केवल अस्तित्व होता है। इसीलिए इस अवस्था में स्वार्थ और अतृप्त व्यवहार होता है जिसे संतोष नहीं हो पाता।

2. मनोलैंगिक विकास की दूसरी अवस्था **गुदा (Anal) अवस्था** है। यह अवस्था शैशवावस्था है, जो कि मौखिक अवस्था के समाप्त होने पर 42-48 महीने के अंतराल तक रहती है। **फ्रायड के अनुसार**, इस अवस्था में बच्चे गुदा के माध्यम से मूलभूत आवश्यकताओं के प्रति संतोष प्राप्त करते हैं। इस अवस्था में सबसे बड़ा विकास हेतु मील का पत्थर माना जाता है निजी निकास कार्यों को कर पाना जैसे शौच जाना सीखना।

3. मनोलैंगिक विकास की तीसरी अवस्था है **लैंगिक (Phallic) अवस्था**। यह अवस्था गुदा अवस्था के समाप्त होने पर 5-6 आयु तक रहती है। यह फ्रायड के नियम से भी विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह वह अवस्था जिसमें बच्चे का अतिअहंकार विकसित होता है।

फ्रायड सोचते हैं कि इस अवस्था में बच्चे समाज के दो लिंगों के बारे में सीखते हैं। बड़े होकर ये दोनों लिंग, लड़के और लड़कियाँ आपस में शादी करते हैं। फ्रायड सोचते हैं कि इस अवस्था में बच्चे विपरीत लिंग के प्रति यौन इच्छाएँ विकसित करते हैं।

4. विकास की चौथी अवस्था **सुषुप्ता (Latency) अवस्था** है। यह लैंगिक अवस्था के बाद शुरू होती है और किशोरावस्था तक रहती है। उन्होंने अवस्था की अधिक विस्तार से चर्चा नहीं की हालाँकि लैंगिक और आवेगशील प्रवृत्तियाँ इस अवस्था में निरंतर संचालित होती हैं और कोई व्यक्ति उन्हें आयुयथोचित रुचियों और क्रियाकलापों जैसे शैक्षिक, खेल और शोक आदि की ओर अग्रसर करते हैं।

5. विकास की अंतिम अवस्था **जननिक (Genital) अवस्था** है। यह अवस्था यौवन काल में आरंभ होकर जीवन भर रहती है। इस अवस्था में, कोई व्यक्ति अपनी यौन इच्छाओं को उचित माध्यमों से संतुष्ट करता है,

फ्रायड ने इस अवस्था को कम महत्ता दी है, उन्होंने अधिकतर समस्याओं के प्रति पहली तीन अवस्थाओं में ही सचेतता दिखाई है।

रक्षात्मक युक्तियाँ

फ्रायड ने प्रतिरक्षा की अवधारणा को इस तरह प्रयोग किया है कि किस तरह लैंगिक आक्रामक इच्छाओं को अन्य स्थानों या समाज की ओर उन्मुख किया जा सकता है। उनके अनुसार रक्षात्मक प्रतिक्रिया (Defence Mechanism) वह अचेतन अहम् है जो कि किसी को अवांछित विषय से बचाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यौन और आक्रामक प्रवृत्तियाँ किसी को अपने अतिअहंकार की धारणा के विवाद को अनुभव कराती हैं। यह उन इच्छाओं को पहचानता है जो दर्द या शर्मिंदगी पैदा करती हैं। तब अहंकार रक्षात्मक प्रतिक्रियाओं का प्रयोग ऐसी अप्रिय घटनाओं से बचने के लिए करती हैं।

फ्रायड और उसके अनुसरणकर्ता रक्षात्मक प्रतिक्रियाओं जैसे मानसिक कल्पना, विस्थापन, प्रतिक्रिया निर्माण, उदात्तीकरण, बुद्धिसंगत व्याख्या, किए गए कार्य को फिर से उलट-पुलट करना और बौद्धिकता आदि।

पारंपरिक मनोविश्लेषण दृष्टि की आलोचना कई स्तरों पर की जाती है।

ऐसा कहा गया है कि इसकी अवधारणाएँ अनिश्चित रूप से पारिभाषित हैं, तर्कपूर्ण अंतर नहीं दिए गए, मामलों का अध्ययन पक्षपातपूर्ण हैं, नियम को जाँचा नहीं जा सकता और मनोविश्लेषणात्मक थेरेपी की कुशलता प्रश्न करने योग्य है।

आगामी विद्वानों को **नव-फ्रायडियन** कहा जाता है जिन्होंने सामाजिक निर्धारकों और चेतन वास्तविकता की तरफ ध्यान दिया है। जैसे—

(1) **कार्ल जुंग (Carl Jung)**—जुंग पहले फ्रायड का प्रशंसक था परन्तु बाद में उन्होंने अपने नियम का विकास किया जिसे विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान (Analytical Psychology) कहा जाता है। अचेतनता (Unconsciousness) की प्रकृति के आधार पर फ्रायड और जुंग के विचार थोड़े अलग थे। जुंग दावा करते हैं कि वहाँ सामूहिक अचेतनता (Collective Unconsciousness) भी है। यह मानव प्रजाति में पिछले अनुभवों से प्राप्त होती है। हमारे भीतर प्राथमिक मूलभूत धारणाओं या प्राक् इच्छाओं के रूप में पहले से निहित होती हैं। इस चिंतन को उनके द्वारा 'अर्किटाइप्स (Archetypes)' कहा जाता है इनमें से कुछ अर्किटाइप्स (Archetypes) हैं ईश्वर, पुनर्जन्म, शैतान, समझदार वृद्ध व्यक्ति, अंतर्नारी-Anima (पुरुषों में निहित मूलादर्श नारी) और अंतर्पुरुष (Animus-महिलाओं में निहित मूलादर्श पुरुष)।

जुंग ने व्यक्तिगत अचेतनता के साथ प्रत्येक व्यक्ति को श्रेय दिया है। उन्होंने मानव मानसिकता को ढके या प्रतिछाया पक्ष में बताया है। उन्होंने विश्व का अनुभव करने हेतु चार तरीके बताए हैं : **संवेदन, सहज ज्ञान, भावनाएँ और सोचना**। जुंग अंतर्मुखी या बहिर्मुखी में अंतर करने के लिए भी लोकप्रिय हैं। उन्होंने कहा कि स्वएकता और अखंडता के लिए प्रयास करता है।

सिगमंड फ्रायड (Sigmund Freud) ने अपनी थ्योरी (Psychosexual Stages of Development) के अन्तर्गत 'ओडिपस' कॉम्प्लेक्स में एक लड़के की माँ को पाने की इच्छा व पिता के प्रति ईर्ष्या व गुस्से की अभिव्यक्ति के लिए तथा 'इलेक्ट्रा' कॉम्प्लेक्स लड़कियों के पिता के प्रति झुकाव व माँ के लिए ईर्ष्या की अभिव्यक्ति है।

(2) **अल्फ्रेड एडलर (Alfred Adler)**—वैयक्तिक (Individual) मनोविज्ञान के नाम से जाने वाले नियम एडलर ने माना कि व्यवहार उद्देश्यपूर्ण और लक्ष्योन्मुख होता है। हमारे लक्ष्य अभिप्रेरणा के स्रोत हैं। वे मानते हैं कि बचपन से प्रत्येक व्यक्ति हीनभाव या अभाव से ग्रसित रहता है। उन्होंने क्षतिपूर्ण और अतिक्षतिपूर्ण का अवधारणा पर भी बल दिया उन्होंने व्यक्तित्व के प्रभाव के रूप में जन्म के क्रम पर नजदीकी से ध्यान दिया। एडलर सामान्य सामाजिकता को जन्मजात मानते हैं। एडलर ने कहा कि अतिअहंकार का लक्ष्य सिद्धांतों, व्यक्तित्व के एकता के स्रोत को नियंत्रित करना है।

(3) **कैरन हॉर्नी (Karen Harney)**—हॉर्नी ने महिलाओं और पुरुषों में सामाजिक कारकों के कारण परिवर्तन माना है। उनके अनुसार प्रत्येक लिंग के सदस्य की अन्य द्वारा प्रशंसा की जाती है और उसे उच्च या हीन समझ के नहीं देखा जाता। उनके द्वारा मनोविज्ञान के दो महत्वपूर्ण घटक हैं, जिसमें पहली है **स्वाभाविक चिंता** जो कि बचपन से ही आरंभ हो जाती है जब बच्चा बाहर की भयंकर दुनिया में असहाय महसूस करता है और दूसरी है **स्वाभाविक विरोध** जो कि आमतौर पर सहज रूप से चिंता से जुड़ी है जो कि पैतृक व्यवहार के कारण उत्पन्न हुए विरोध से बढ़ती है और चिंता की ओर उन्मुख होती है। इस विरोध या चिंता को व्यक्त करने के तरीके लोगों की ओर तथा विपरीत या दूर उन्मुख होते हैं। दूसरों की ओर उन्मुख होने में अत्याधिक अनुपालन करना सम्मिलित है। सुरक्षा को स्वयं को पृथक् करते हुए आज्ञा का पालन करने के रूप में देखा गया है, यह दूसरों की स्वीकृति का विषय है और स्वीकृति और स्नेह प्राप्त करने हेतु कोई अपनी इच्छानुसार कार्य करने की ओर अग्रसर होता है। दूसरों के विपरीत जाने में आनंद की खोज करना सम्मिलित है। तटस्थता और दूसरों को नीचा दिखाकर, संबंध विच्छेद करते हुए दूसरों से दूर जाना आत्मसुरक्षा है। यह स्वतंत्रता की ओर प्रयास करना है।

(4) **एरिक फ्रोमन (Erich Froman)**—फ्रोमन ने मनुष्य को मूलरूप से सामाजिक प्राणी माना है। उन्हें केवल दूसरों के साथ उनके संबंधों को देखकर समझा जाता है। फ्रोमन मानते हैं कि स्वतंत्रता मानव स्वभाव का एक पक्ष है जिसकी हम प्रशंसा कर सकते हैं या उससे भाग सकते हैं, जो बाद में मनोवैज्ञानिक विवाद की जड़ बनती है। उनका कार्य सकारात्मक गुणों को पहचानता है जैसे प्रेम और विवेक।

(5) **एरिक एरीक्सन (Erik Erikson)**—एरीक्सन ने व्यक्तित्व के विकास के नियम को सामाजिक अनुकूलन पर ध्यान देते हुए विकसित किया। उनका सिद्धांत अवस्था सिद्धांत है। उनके अनुसार, विकास आठ अवस्थाओं में होता है। पहले चार शैशवकाल और बचपन में आती हैं। पाँचवी अवस्था किशोरावस्था और अंतिम तीन अवस्थाएँ वयस्क होने तथा वृद्धावस्था में आती हैं। ये अवस्थाएँ हैं :

- स्वाभाविक विश्वास बनाम अविश्वास
- स्वायत्ता बनाम लज्जा
- आत्मबल बनाम दोष
- उद्योग बनाम हीनता
- अस्तित्व बनाम अस्तित्व असमंजसता
- आत्मीयता बनाम अलगाव
- अखंडता बनाम खंडता और
- गतिशीलता बनाम गतिहीनता।

व्यक्तित्व सिद्धान्तों के विकास का अनुक्रम

टाइप थ्योरी : प्रारूप सिद्धान्त



ट्रेट थ्योरी : शीलगुण सिद्धान्त



टाइप-ट्रेट थ्योरी : प्रारूप-गुण सिद्धान्त



मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त : साइकोलॉजिकल थ्योरी



सायकोएनालिटिकल थ्योरी : मनोविश्लेषक सिद्धान्त



कॉग्निटिव थ्योरी : संज्ञानात्मक सिद्धान्त

व्यक्तित्व के प्रति भारतीय दृष्टिकोण (Indian Approach to Personality)

भारतीय दर्शन का एक लंबा इतिहास रहा है और दार्शनिकता परंपरागत रूप से उसका शेष भाग है। व्यक्तित्व एक विषय है जो भारतीय चिंतकों के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व के कुछ महत्वपूर्ण प्रतिमान नीचे दिए गए हैं :

(क) **त्रिगुण सिद्धांत**—ये तीन लौकिक घटकों पर आधारित हैं जैसे सत्व, रजस और तमस। ये तीन गुण विशिष्ट मनो-भौतिक विशेषताएँ हैं। गुण जन्मजात होते हैं परन्तु केवल पर्यावरण के व्यवहार से ही वे प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

(ख) **अभिधम्म (बौद्ध धार्मिक नियम)** यह सामग्री व्यक्तित्व नियम के बारे में बताती है जो स्पष्ट रूप से आदर्श और गैर-आदर्श व्यक्तित्वों के प्रकारों का उल्लेख करती हैं। गैर-आदर्श प्रकार के व्यक्तित्व आदर्श रूप से प्रयास करते हैं।

(ग) **नृत्यशास्त्र और कर्मशास्त्र**, दोनों शास्त्र महिला और पुरुष के व्यक्तित्व के प्रकारों के बारे में अलग-अलग रूप से चर्चा करते हैं।

(घ) **आयुर्वेद शास्त्र**—यह महत्वपूर्ण पुरातन आयुर्विज्ञान परीक्षण है। यह व्यक्तित्व को कफ, पित्त और वात के रूप में वर्णित करता है। आयुर्वेद शास्त्रों के अनुसार सुख को केवल तभी प्राप्त किया जा सकता है जब ये तीनों घटक नियंत्रण में हों।

त्रिगुण सिद्धान्त

भारतीय चिंतक व्यक्तित्व के दो पक्षों को देखते हैं। (1) मैं (2) आत्मा। 'आत्म' पवित्रता से संबंधित है यानी परमात्मा, जबकि 'मैं' जीव आत्मा से संबंधित है और इसे आनुभाविक अहम कहा जाता है। जैसे-जैसे कोई गहराई में जाता है वह अपने पवित्र अहम या परमात्मा का अनुभव करता है। भारतीय चिंतक किसी व्यक्ति के व्यवहार को अपने तीन गुणों के रूप दर्शाती है :

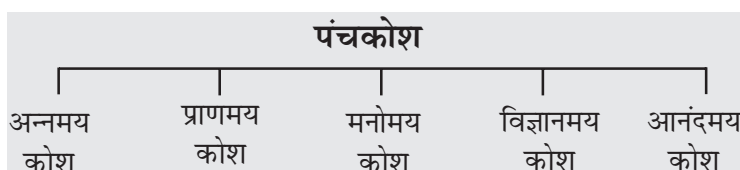
(1) **सत्व**—ये गुण संज्ञानात्मक घटनाओं को प्रबल करते हैं जैसे विचार, अनुभूति आदि और इसकी प्रभुता किसी को आध्यात्मिक अन्वेषक बनाता है। ये गुण अच्छाई, ज्ञानोदय, धीरज और स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण है।

(2) **रज** को कर्म और व्यापक गुणवत्ता से चिह्नित किया जाता है। यह गति या चीजों को करने में प्रभुत्व रखती है। रजस प्रेम, तृष्णा, प्रवीणता और प्रयास की ओर उन्मुख करती है।

(3) **तमस**—इसके प्रभुत्व के परिणामस्वरूप निष्क्रियता, निरुत्साहता, मनोयोग आदि का अनुभव होता है। तमस के परिणामस्वरूप किसी के श्रेष्ठ गुणों का पतन होता है और यह आलस्य और अचेतता को बढ़ाता है। यह सभी प्रकार के समाविष्ट भ्रम का स्रोत है और असावधानी और निद्रा के गुणों से उसे जोड़ता है।

पंचकोशीय सिद्धांत (मानव अस्तित्व के पाँच कोश)

तैत्तिरीय उपनिषद् पंच कोशों और उनके विकास की परिकल्पना देता है। इसके अनुसार अन्नमय कोश से आरम्भ होकर आनन्दमय कोश तक हमारे अस्तित्व के पाँच आवरण हैं जिन्हें कोश कहते हैं।



स्थूल, शरीर जो हमें दिखाई देता है, अन्नमय कोश है। सूक्ष्म शरीर प्राणिक ऊर्जा से बना है। उसे प्राणमय कोश कहते हैं। तीसरा कोश, मनोमय कोश है, जिसमें व्यक्ति की भावनाएँ व संवेग सम्मिलित हैं। चौथा विज्ञानमय कोश है। इसमें कल्पना स्मृति, ज्ञान, अंतर्दृष्टि और समझ आते हैं। पाँचवाँ आनन्दमय कोश है। इसकी विशेषताओं में रचनात्मकता, प्रसन्नता और आनंद आते हैं। अब हम इन कोशों की विस्तार से चर्चा करते हैं।

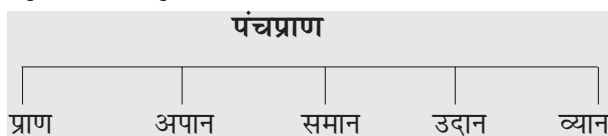
1. अन्नमय कोश : भोजन आवरण : भौतिक शरीर हमारे अस्तित्व का बाहरी भाग है। इसे अन्नमय कोश या भोजन आवरण कहा जाता है। यह पिता द्वारा लिए गए भोजन के साथ और माँ द्वारा लिए गए भोजन के सार द्वारा गर्भ में पोषित होता है। इसका अस्तित्व भोजन के सेवन द्वारा बना रहता है। और अंत में मृत्यु के बाद वापस पृथ्वी की खाद और भोजन बन जाता है। शारीरिक संरचना का सार भोजन से बढ़ता है, भोजन में उपस्थित रहता है वापस भोजन बन जाता है। अतः स्वाभाविक और सबसे उचित रूप से इसे भोजन आवरण नाम दिया गया है।

अन्न नलिका मार्ग से जो ग्रहण किया जाता है, उसे आहार कहते हैं। आहार का अर्थ केवल खाना ही नहीं होता, क्योंकि खाना तो मात्र स्थूल आहार होता है। आहार का अर्थ है – लेना, बाहर से कुछ खींचना। हम बाहर से जो कुछ लेते हैं वह सब आहार ही है। मुख के अलावा हम कान, नाक, त्वचा आदि से अवयव तथा मन के द्वारा भी कुछ न कुछ ग्रहण करते हैं, इसे सूक्ष्म आहार माना जाता है।

हम वायु तथा धूप से भी आहार ग्रहण करते हैं। वायुमण्डल एवं सूर्य की आताप में कई स्वास्थ्यदायी तत्वों के परमाणु भरे पड़े हैं। हमें ऐसा आहार ग्रहण करना चाहिए जो शरीर, पंचज्ञानेन्द्रियों तथा मन के लिए हितकारी हो। ऐसे आहार से सम्पूर्ण एवं सत्व स्वास्थ्य प्राप्त होता है।

2. प्राणमय कोश (वाइटल एयर शीथ) : पाँच प्राण, जिनका आयुर्वेद में पाँच शारीरिक प्रणालियों के रूप में वर्णन है, इनको प्राणमय कोश कहते हैं। ये गतिविधियाँ जो शरीर का सहयोग करती हैं, वह सांस द्वारा ली गई हवा के परिणामस्वरूप होती हैं। इसलिए इसे प्राणमय कोश का नाम दिया गया है।

पाँच मुख्य वायु होती है : प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान। ये पाँच तत्वों और उनकी आणविक संरचनाओं से जुड़ी होती है। अपने अपान का संबंध गंध तथा पृथ्वी तत्वों से होता है। प्राण का स्वाद तथा आप तत्व या पानी से होता है, समान का दृष्टि, तथा रूप तत्व या अग्नि से, उदान का स्पर्श और वायु तत्व या वायु से, जबकि व्यान के अंतर्गत ध्वनि और आकाश तत्व या अंतरिक्ष आते हैं।



अंदर ली गई सांस से यदि प्राणवायु ऊर्जा को उत्पन्न और एकत्र करती है तो दूषित वायु, जो स्वास्थ्य को बिगाड़ सकती है, उसे अपान वायु के रूप में छोड़ दिया जाता है। समान में अन्य चार वायु संतुलित होती हैं। उदान से ऊर्जा सक्रिय होकर निचले अंग से मस्तिष्क तक जाती है। चूँकि यह ऊर्जा को ऊपर की ओर ले जाती है। इसलिए इसे 'उदान वायु' कहते हैं। व्यान वायु अन्य वायु को फैलाने, सिकुड़ने और संचारित करने में सहायक होती है।

पाँच उप-वायु हैं—नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनंजय। नाग पेट के डकार कम करने में मदद करता है। कूर्म प्रकाश के अनुसार पिपनियों की गति को नियंत्रित करता है। कृकर के कारण छींक या खाँसी या डकार आती है तथा वह वस्तुओं को नाक के अंदर जाने से रोकती है। देवदत्त के कारण जमहाई, नींद और खरोंटे आते हैं जबकि धनंजय समस्त शरीर में शुष्कता उत्पन्न करता है, शरीर को पोषण देता है तथा मृत्यु के बाद शरीर में बने रहकर शव को फुला देता है।

इस कोश में प्राणों की निम्नलिखित पाँच भूमिकाएँ सम्मिलित हैं:

- (i) प्राण (प्रत्यक्षीकरण की क्षमता) : यह पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से पर्यावरण से प्राप्त पाँच प्रकार के उद्दीपनों को प्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित करता है।
- (ii) अपान (उत्सर्जन की क्षमता) : शरीर द्वारा उत्सर्जित की जाने वाली सभी चीजें जैसे कफ, पसीना, मूत्र, मल आदि अपान की अभिव्यक्ति है।
- (iii) समान (पाचन की क्षमता) : अमाशय में एकत्रित भोजन का पाचन करता है।
- (iv) व्यान (संचरण क्षमता) : यह पचे हुए भोजन के परिणामस्वरूप बने पोषक तत्वों को रक्त के माध्यम से शरीर विभिन्न अंगों को पहुँचाता है।
- (v) उदान (चिन्तन क्षमता) : यह वर्तमान स्तर में अपने विचारों को उन्नत करने की क्षमता है, एक नये सिद्धान्त या विचार, स्वशिक्षा की क्षमता की संभावना या सराहने की क्षमता है।

ये पाँचों क्षमताएँ अधिक उम्र के लोगों में धीरे-धीरे कमजोर होती जाती हैं। प्राणमय कोश, अन्नमय कोश को नियंत्रित एवं नियमित करता है। जब तक प्राण ठीक से काम नहीं करते तो भौतिक शरीर प्रभावित होता है। प्राणमय कोश के स्वस्थ विकास के संकेत उत्साह, आवाज को प्रभावी ढंग से प्रयोग करने की क्षमता, शरीर की लोच, दृढ़ता, नेतृत्व, अनुशासन, ईमानदारी और श्रेष्ठता में मिलते हैं।

3. मनोमय कोश (मेंटल शीथ) : मन, प्राणमय कोश को नियंत्रित करता है। उदाहरण के लिए जब मन किसी आघात के कारण परेशान होता है तब प्राण के कार्यों और शरीर को प्रभावित करता है। मन ज्ञानेन्द्रियों की व्याख्या करता है। यह अतीत की अच्छी और बुरी यादों को संग्रहीत करता है। नियमित प्रार्थना, संकल्प लेने और उन्हें पूरा करने द्वारा मन की शक्ति में वृद्धि संभव है। मन बुद्धि और शरीर के बीच एक गहरा संबंध है।

4. विज्ञानमय कोश (ज्ञान-विवेक) : मन ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बाहरी उद्दीपनों को प्राप्त करता है और अनुक्रियाओं को ज्ञानेन्द्रियों को प्रेषित करता है। यद्यपि पाँच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त उद्दीपन अलग और एक दूसरे से भिन्न होते हैं किन्तु उनका एकीकृत अनुभव मन के द्वारा लाया जाता है। बुद्धि विभेदीकरण एवं विवेकीकरण की प्रक्रिया है, जो प्राप्त उद्दीपनों की जांच करके निर्णय लेती है। यह मन को भी उन अनुक्रियाओं के बारे में सूचित करती है, जिन्हें क्रियान्वित किया जाना है। स्मृति के आधार पर, सुखद या दुःखद छाप को बुद्धि से जोड़ती है।

बुद्धि अपनी चिन्तन की क्षमता के साथ एक तर्कसंगत निर्णय लेती है जो मन को पसन्द नहीं भी हो सकता है, लेकिन अंततः व्यक्ति के लिए लाभप्रद होता है। इन सभी यादों और ज्ञान का भंडार-गृह है। अनुभव का यह भण्डार-गृह व्यक्ति के कार्यों का मार्गदर्शक कारक है। मन को संवेगों के केन्द्रस्थल के रूप में वर्णित किया जा सकता है और बुद्धि उन क्षेत्रों की जांच करती है जिसमें वे कार्य करते हैं। मन की पहुँच केवल ज्ञान जगत तक है लेकिन बुद्धि अज्ञात स्थानों में जाकर उसकी जांच कर सकती है, मनन कर सकती है और नई खोजों को पूरी तरह समझ सकती है।

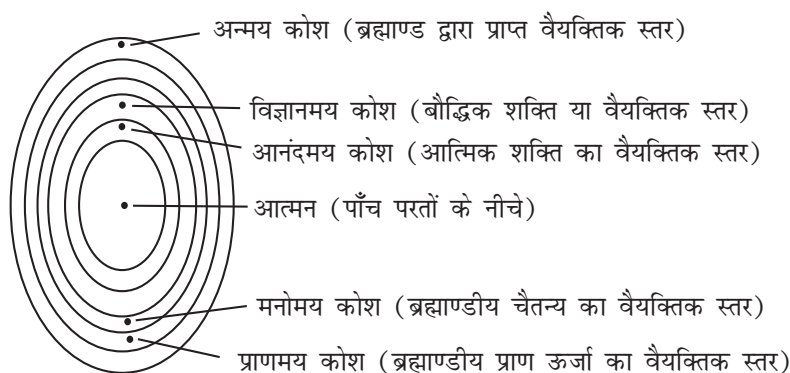
5. आनन्दमय कोश : यह पाँचों कोशों में अंतरिम है और इसमें वासनाएँ होती हैं। वे अवचेतन में स्थित होती हैं, जिस तरह से गहरी नींद की स्थिति में होते हुए भी हमारा अस्तित्व रहता है। यह आनन्दमय माना जाता है क्योंकि हमें जागृत और स्वप्न किसी भी स्थिति

में हो, एक बार वहाँ पहुँच कर उस जागृत और स्वप्न की स्थिति के उत्पातों के अनुभवों के लोप के कारण हम सब अपेक्षाकृत एक ही अबाधित शांति और आनंद का अनुभव करते हैं।

आनन्दमय कोश, विज्ञानमय कोश का नियंत्रण करता है क्योंकि बुद्धि, वासना के नियंत्रण और देखरेख में कार्य करती है। जब अन्य सभी कोश अच्छी तरह से विकसित हो जाते हैं तब हम आन्तरिक और बाह्य जगत के बीच सद्भाव का अनुभव करते हैं। यह सद्भाव हमें प्रसन्नता और आनंद की अनुभूति देता है। पाँचों कोश एक व्यक्ति द्वार पहने कपड़ों की परतों की तरह है जो पूरी तरह से पहनने वाले से भिन्न है जैसे ही आत्मा पाँचों बाहरी परतों से भिन्न और अलग है।

कोशों का विकास : व्यक्तित्व का विकास अन्नमय कोश से शुद्ध चेतना की ओर धीरे-धीरे इसके आवरण रूपी कोशों को हटाकर होता है। खाने की नियमित आदतों, सही प्रकार का भोजन, व्यायाम और खेल, टहलना, घूमना और आसन से अन्नमयकोश के विकास में सुविधा होती है। प्राणायाम और सांस लेने के अभ्यास से प्राणमय कोश की गुणवत्ता में सुधार होता है। मनोमय कोश के विकास के लिए अच्छे साहित्य, कविता, उपन्यास, निबंध और लेख का अध्ययन उपयोगी होता है। सभी गतिविधियाँ जो किसी की बुद्धि को चुनौती दे, विज्ञानमय कोश का विकास करती हैं। इन गतिविधियों में बहस करना, समस्या सुलझाना, अध्ययन की तकनीक, छोटे अनुसंधान, परियोजनाओं, मूल्यांकन और पुस्तकों की सराहना व प्रख्यात व्यक्तियों के साक्षात्कार शामिल हैं। ये सब गतिविधियाँ आपको अपने लघुरूप से परे जाने और आपको अपने साथी प्राणियों, अपने समुदाय के सदस्यों अपने देश और पूरे विश्व के साथ तदात्म्य स्थापित करने का अवसर देती हैं। आनन्दमय कोश के विकास को सुविधापूर्ण बनाता है। यहाँ तक कि अपने चिंतन में आप अपनी चेतना का विस्तार करने के लिए पृथ्वी, सूर्य, तारे, आकाशगंगाओं और ब्रह्मांड तक पहुँच सकते हैं। इस तरह हम धीरे-धीरे वैयक्तिक आत्म या वैयक्तिक चेतना और सार्वभौमिक आत्मा या सार्वभौमिक चेतना के बीच संबंध बनाते हैं।

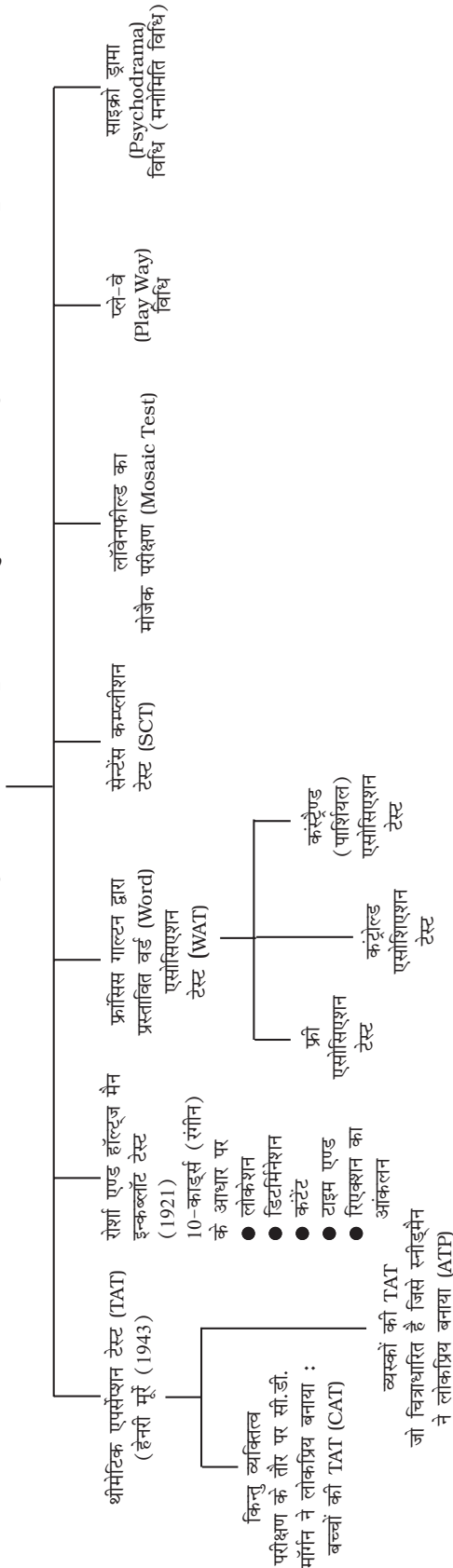
पंच कोश का सिद्धान्त



व्यक्तित्व का विकास

(1) कार्ल रोजर्स (Carl Rogers) - रोजर्स ने दो तरह की प्रतिक्रियाओं के बारे में बताया है जो स्वस्थ और अस्वस्थ मनोवैज्ञानिक विकास को प्रभावित करती हैं। नकारात्मक अनुबंधन अस्वस्थ विकास को बताती है। अनुबंधित सकारात्मक संबंध, के कारण व्यक्ति की देखभाल की जाती है और जिसे स्वीकृत व्यक्ति के तौर पर केवल अन्य लोगों की स्थितियों द्वारा किया जाता है।

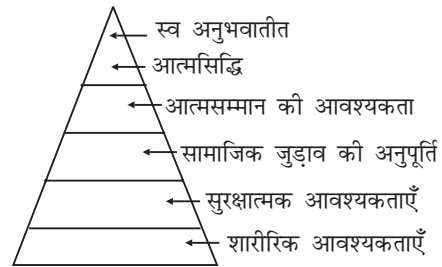
व्यक्तित्व आंकलन की प्रक्षेपी तकनीक (Projective Techniques) : वस्तुनिष्ठ विधि (Objective Technique)



इसके विपरीत, रोजर्स ने सोचा कि यहां सकारात्मक विचार स्वस्थ विकास को प्रोत्साहित करता है। गैर अनुबंधित सकारात्मक विचार का अर्थ है कि व्यक्ति को स्वीकृत व प्रेम व सम्मानित किया जाता है, शर्त न रखने के कारण ही ऐसा व्यवहार होता है।

(2) व्यक्तित्व के विकास का अन्य प्रभावी मानवीय दृष्टिकोण आलपोर्ट ने 1955 में दिया था। अलपोर्ट ने विकास को कुछ बनने की प्रक्रिया के रूप में देखा है। उनके अनुसार कोई व्यक्ति कभी भी स्थिर अवस्था में नहीं रह सकता और वह बदलता रहता है। उनके अनुसार आत्मसमझ का होना विकासशील होने से है।

(3) अब्राहम मैस्लो (Abraham Maslow)–मैस्लो मानते हैं कि सभी व्यक्तियों के पास कुछ जरूरतें होती हैं जिन्हें वे आवश्यकताओं का क्रम मानता है और उसे आवश्यकता सोपान-क्रम सिद्धांत (Need Hierarchy Theory) कहता है :



उनके अनुसार, आधारभूत बात भौतिक जरूरतों को पूरा करना है और उससे ऊपर सुरक्षा और रक्षा है, उससे ऊपर सामाजिक आवश्यकताएँ और फिर आत्म सम्मान और सबसे ऊपर इस क्रम आत्म सिद्धि की आवश्यकता है। यह एक स्थिति है जिसमें लोग अपने पूर्ण सामर्थ्य को प्राप्त करते हैं। आत्मसिद्धि लोग अनुभव प्राप्त करने, आत्मनिर्भर, अपने लक्ष्यों के प्रति समर्पित, दूसरों की प्रशंसा करने वाले और संस्कृति का अनुपालन करने वाले होते हैं।

मैस्लो ने मेटा-नीड की अवधारणा का प्रयोग उन उच्चतम आवश्यकताओं के लिए किया है जो पूर्ण रूप से आत्मसिद्धि दुर्लभ लोग होते हैं और आत्मयथार्थवादी के अनुभवों का शिखर अनुभव कहते हैं, जब ब्रह्मांड के साथ आनंद और एकता का भाव जुड़ता है।

व्यक्तित्व का आंकलन (Assessment of Personality)

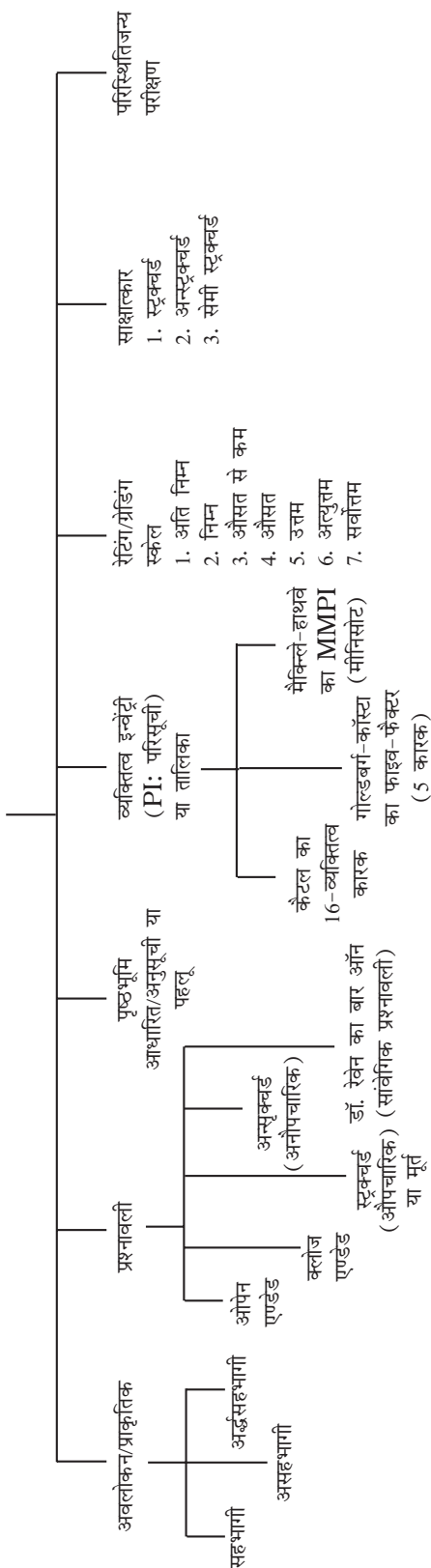
विश्लेषण करने और व्यक्तित्व को आंकने के औपचारिक प्रयासों को व्यक्तित्व आंकलन कहते हैं। आंकलन का संबंध लोगों का मूल्यांकन करने व उनमें अंतर करने की प्रक्रियाओं से है। आंकलन का लक्ष्य न्यूनतम कमी और अधिकतम शुद्धता के साथ किसी के व्यवहार का अनुमान लगाने से है। आंकलन से किसी के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डाला जा सकता है।

ऐसे निम्नलिखित तरीके हैं जिसमें मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यक्तित्व का आंकलन किया जाता है :

I. प्रक्षेपी तकनीक (Projective Technique)

प्रक्षेपित तकनीक जो कि नैदानिक व्यवस्था से उत्पन्न हुई है जो व्यक्तित्व के आंकलन का अप्रत्यक्ष माध्यम है। इस तकनीक में व्यक्तियों को गैर-संरचनात्मक स्थितियों का वातावरण दिया जाता है

व्यक्तित्व परीक्षण/आकलन की व्यक्तिनिष्ठ तकनीक व विधियाँ (Subjective Techniques) : सामूहिक या वैयक्तिक व्यवहार का आकलन



जिसमें उसे प्रतिक्रिया देनी होती है। गैर-संरचनात्मक स्थितियों में कोई व्यक्ति अपनी आवश्यकता, भावनाएँ, उद्देश्य आदि को प्रस्तावित करता है (जो कि अधिकतर लैंगिक हैं) क्योंकि कोई व्यक्ति इन रहस्यों से परिचित नहीं होता, वह किसी भी सुरक्षित प्रतिक्रिया का आश्रय नहीं ले सकता। ऐसे लैंगिक और गुप्त अनुभव आमतौर पर अन्वेषण में प्रश्न करने में असक्षम होते हैं।

प्रोजेक्टिव टेस्ट एक प्रकार का व्यावहारिक व्यक्तित्व परीक्षण है जिसमें व्यक्ति टेस्ट के दौरान अपनी छुपी प्रेरणाओं का इस्तेमाल का द्विअर्थी उद्दीपन के प्रति अपनी प्रतिक्रिया देता जिससे व्यक्ति की आंतरिक द्वन्द्व खुलकर सामने आ जाता है।

द्विअर्थी प्रेक्षकों की व्याख्या के क्रम मनोवैज्ञानिक अवचेतन भावनाओं को इस प्रकार व्यक्त करने की आशा करता है ताकि व्यक्ति के जीवन की समस्याओं के कारण स्पष्ट हो जाए। रोर्सा इन्क्वॉट टेस्ट, थीमेटिक एपरसेप्शन टेस्ट (टीएटी), डॉ-ए-पर्सन टेस्ट, पी-हाउस-ट्री-पर्सन टेस्ट आदि प्रोजेक्टिव टेस्ट के प्रमुख प्रकार हैं।

अतः ऐसी दो विशिष्टताएँ हैं जो कि अन्य वैयक्तिक आकलन माप से अलग होकर प्रक्षेपी तकनीकों की स्थापना करते हैं :

(1) प्रक्षेपीय तकनीक व्यक्तित्व की विशेषताओं का आकलन करने के लिए सदैव गैर-संरचनात्मक और अप्रत्यक्ष स्थिति का प्रयोग करती हैं।

(2) प्रक्षेपीय तकनीक सर्वव्यापक दृष्टिकोण है। इस तकनीक में ध्यान संपूर्ण व्यक्तित्व पर होता है। प्रक्षेपित तकनीक को किसी भी अवलोकन की आवश्यकता नहीं होती है। और इसीलिए यह विषय विस्तृत और वस्तुनिष्ठ है।

महत्वपूर्ण प्रक्षेपी परीक्षण

- (1) हरमन रोर्सा द्वारा दिया गया रोर्सा परीक्षण
- (2) मुर्रे द्वारा दिया गया थीमेटिक एपरसेप्शन परीक्षण
- (3) बल्लेक द्वारा दिया गया चिल्ड्रेन एपरसेप्शन

प्रक्षेपी परीक्षण के लाभ

- (1) कृत्रिमता और रोगी बनने का दिखावा करने का अवसर न्यूनतम।
- (2) नैदानिक उद्देश्यों के लिए बढ़िया माप।
- (3) सरल प्रबंधन और वे भागीदार में रुचि रखते हैं।
- (4) वे व्यक्तित्व के अचेतन पक्षों के बारे में जानते हैं।
- (5) अचेतन पक्षों को अलग करते हुए व्यक्तित्व की गहनता और अचेतन पक्षों को देखना।

हानियाँ

- (1) प्रक्षेपी तकनीकों के सुसंगत सार्थक और परीक्षण योग्य कोई सिद्धांत नहीं है।
- (2) परियोजना संकेतकों और व्यक्तित्व की विशेषताओं के मध्य अधिकतर स्वीकृत संबंधों के अधिकतर कोई आनुभाविक प्रमाण नहीं है।
- (3) उनका प्रबंधन करने हेतु कोई मानकीय माप नहीं है।
- (4) इसका औसतन या उत्कृष्ट बुद्धि वाले लोगों पर सरलता से प्रयोग किया जाता है।
- (5) अंक प्राप्त करने की पद्धति दी गई है परन्तु फिर भी ये काफी हद तक परीक्षक की व्यक्तिपरक समझ पर निर्भर करती है।
- (6) ऐसे कोई प्रमाण उपलब्ध हैं जो यह दर्शाते हैं कि प्रक्षेपी तकनीकों के प्रणाली संबंधी दोष हैं और ये सांख्यिकी त्रुटियों से भरी पड़ी है और त्रुटिपूरक तैयार की गई है।

- (7) ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि प्रक्षेपित तकनीकों द्वारा किसी प्रकार का विवाद और कल्पनाएँ उत्पन्न न हों जब कई स्थितियों में इसे समान व्यक्ति द्वारा बताया गया हो।
- (8) जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रक्षेपित तकनीक के पास किसी असफलता या सफलता का अनुमान लगाने की योग्यता सही नहीं है चूँकि ये कम विश्वसनीय और अल्प वैध है।

II. व्यक्तिनिष्ठ तकनीकें (Subjective Techniques)

व्यक्तित्व सूची/प्रश्नावली/आत्मविवरण सूची (Inventory/Questionnaire/Self Report Inventory): व्यक्तित्व सूची अनिवार्य रूप से आत्म मूल्यांकनपरक प्रश्नावली है जिसमें कोई व्यक्ति अपनी भावनाएँ, पर्यावरण और स्वयं के प्रति दूसरों की प्रतिक्रिया के रूप में आती है। संक्षिप्त में कह सकते हैं कि व्यक्ति प्रश्न के आलोक में स्वयं के बारे में बताता है। अतः यह पद्धति आत्ममूल्यांकन सूची है। इसके लिए प्रश्नों की सूची के रूप में परीक्षा ली जाती है जिससे उसे इन प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं जिसे प्रश्नावली पद्धति कहते हैं। आत्ममूल्यांकन सूची को दो भागों में बाँटा जाता है—

(1) सूची जिसमें कोई व्यक्ति पर्यावरण के विभिन्न पक्षों के बारे में मूल्यांकन करता है जैसे विद्यालय, घर, स्वास्थ्य आदि।

(2) सूची जिसमें सामाजिक और अन्य निश्चित बातों जैसे प्रभुत्व, अहम्, बल, आत्मविश्वास को मापा जाता है।

उदाहरण—एडिनबरा चित्र परीक्षण (EPT)

(3) वह सूची जिसमें रोगात्मक विशेषताओं का मूल्यांकन करने का प्रयास किया जाता है जैसे उन्माद, सिजोफ्रेनिया आदि।

उदाहरण—मिनीसोटा बहुरूपीय व्यक्तित्व सूची (MMPI)

(4) वह सूची जो किसी व्यक्ति को दो या तीन समूहों में देखने के लिए प्रयोग की जाती है।

उदाहरण—कोरेनल सूचकांक (Cornell's Index)

(5) वह सूची जो दृष्टिकोण, रुचि और मूल्यों को मापने के लिए प्रयोग की जाती है।

उदाहरण—स्ट्रेंथ व्यवसायिक रुचि बैंक (SVIB)

व्यक्तित्व सूची के लाभ

- (1) आसानी से अंक प्राप्त किया जा सकता है और प्रशासित किया जा सकता है।
- (2) काफी हद तक मितव्ययी है।
- (3) विश्वसनीयता और वैधता उच्च होती है।
- (4) समय का बचाव करती है।

व्यक्तित्व सूची की हानियाँ

ऐसे कई कारक हैं जो कि विश्वास को सीमित करती है जिसे प्रतिक्रियाओं में रखा जाता है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण हैं—

- (1) विषय के अंतर्गत निरीक्षण न किया जा सकता हो तथा सरलता से उत्तर न दिया जा सकता हो।
- (2) सूची में परीक्षणों की त्रुटियों को इस तरीके से बताया गया हो जो कि परीक्षापत्र बनाने वाले के दृष्टिकोण को न दर्शाता हो।

- (3) भागीदार परीक्षा को विभिन्न पक्षों से देखें। ऐसा अकसर देखा जाता है कि प्रतिक्रिया देने में व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सामान्य प्रतिक्रिया में कृत्रिम रूप से अच्छा या बुरा करने की प्रतिक्रिया होती है।

व्यक्तित्व को मापने में आने वाली कठिनाइयाँ

- (1) व्यक्तित्व के आंकलन में कृत्रिम रोगियों को पहचानना काफी कठिन है।
- (2) व्यक्तित्व परीक्षा के व्यावहारिक मानदंड परिवर्तित होते हैं, परिणामस्वरूप विश्वसनीयता प्रभावित होती है।
- (3) वैधता को मापना को भी व्यक्तित्व परीक्षण में कम सफल माना गया है।
- (4) व्यक्तित्व की परीक्षण से संबंधित कुछ विशिष्ट समस्याएँ हैं। अधिकतर व्यक्तित्व परीक्षण सटीक क्रियान्वयन और अंक प्राप्त करने में अपर्याप्त माने जाते हैं।

रेटिंग स्केल

यह वह उपकरण है जिसमें किसी की विशेषताओं के अनुसार किसी व्यक्ति के प्रति उसकी धारणा को मापा जाता है।

उद्देश्य—मूल्यांकन स्तर का उद्देश्य किसी चीज या व्यक्तियों के प्रति किसी की धारणाओं के स्तर को मापना है। इसीलिए यह महत्वपूर्ण है कि मापने वाले को उन वस्तुओं, घटनाओं या व्यक्तियों के ज्ञान व अनुभव के बारे में अनिवार्य माना जाता है। अनुभव प्रत्यक्ष भी हो सकते हैं। वास्तविक व्यवहार (कथित व्यवहार) अप्रत्यक्ष हो सकता है। मापक स्केल में दो, तीन, पाँच, सात, नौ या ग्यारह बिन्दु मापे जाते हैं जिसे तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है जो इस प्रकार हैं।

सकारात्मक छोर मध्यम नकारात्मक छोर

पूर्णरूप से सहमत निष्पक्ष पूर्णरूप से असहमत

मूल्यांकन स्तर के दो घटक हैं : उद्दीपक परिवर्ती और प्रतिक्रिया विकल्प। उद्दीपक परिवर्ती में किसी व्यक्ति की विशेषताएँ या गुण आते हैं जिनको मापा जाता है और प्रतिक्रिया के विकल्प संख्यात्मक या वर्णनात्मक वर्गों में आते हैं।

मूल्यांकन करने वाला या अवलोकनकर्ता एक प्रशिक्षित व्यक्ति है और वह दिए गए स्तर पर किसी वस्तु, घटना या व्यक्तियों का स्तर निर्धारित करता है और अपने अवलोकन के आधार पर संख्यात्मक विश्लेषण प्रदान करता है। रेटिंग का निर्धारण पूर्वव्यापी या समवर्ती हो सकता है। पूर्वव्यापी रेटिंग सभी धारणाओं का है।

समवर्ती रेटिंग—ये धारणाओं को एकत्रित कर उनका सार व्यक्त करती हैं, जैसा कि साक्षात्कार की स्थिति में होता है।

बड़ी संख्या में रेटिंग स्केल की संरचना की जाती है। आमतौर पर स्केल्स को मापने में आने वाली समस्याएँ कि जिन विशेषताओं को मापा जाता है वे विशिष्ट रूप से परिभाषित नहीं हैं और भिन्न रेटिंग हेतु भिन्न दर्शाती है। यह रेटिंग निर्धारित करने का उद्देश्य समाप्त कर देती है।

रेटिंग स्केल के निर्माण में रखी जाने वाली सावधानियाँ :

(1) जिनका भी स्तर मापना है उन सभी विशेषताओं को विशिष्ट उदाहरणों द्वारा अच्छी तरह से समझाया जाना चाहिए।

(2) कई बिन्दुओं और अंतरालों को स्पष्ट रूप से बताया जाना चाहिए।

(3) क्योंकि नेतृत्व, ईमानदारी, अनुशासन आदि जैसी विशेषताओं को अहम्, शक्ति आदि से अधिक विश्वसनीय माना जाता है। यह प्रयास किया जाता है कि मूल्यांकन स्तर वस्तुनिष्ठ रूप से ध्यान दी जाने वाली विशेषताओं से संबंधित हों।

मूल्यांकन स्तर को मापने में आने वाली समस्याओं को दी गई सावधानियों से सुलझाया जा सकता है।

रेटिंग के प्रकार—जे.पी. गिल्फोर्ड (J.P. Guilford, 1954) ने रेटिंग स्केल्स को 5 वर्गों में विभाजित किया है :

(1) **न्यूमेरिकल रेटिंग स्केल**—इसका उपयोग करना आसान है। यह वह संख्यात्मक स्तर है जिसमें अवलोकनकर्ता को संख्याओं का क्रम दिया जाता है जिसे धारणाओं के अनुसार दिया जाता है। कभी-कभी यह देखा जाता है कि संख्याओं का स्तर केवल प्रदान की गई संख्याओं के वर्ग दर्शाता है।

(2) **ग्राफिक रेटिंग स्केल**—इसमें स्तरों को रेखाचित्रों में दर्शाया जाता है। जिसमें किसी निश्चित धारणा को दर्शाने वाले किसी वर्णन के आगे चिह्न लगाता जाता है।

उदाहरण स्वरूप—प्रो. मिश्रा कक्षा में व्याख्यान देते हैं :

बहुत तेजी से, समगति से, मंद गति से, धीरे-धीरे, बहुत धीरे

(3) **पर्सेंटेज रेटिंग स्केल**—प्रतिशत मूल्यांकन स्तर का प्रयोग तब किया जाता है जब अनुसंधानकर्ता को समरूप बिन्दुओं पर शीघ्र मूल्यांकन करना होता है। इस तकनीक के अंदर विशिष्ट समूहों का मूल्यांकन प्रतिशत या प्रतिशतांक समूह में किया जाता है : जैसे—

● उच्चतम 5 प्रतिशत

● द्वितीय स्थान पर उच्च 5 प्रतिशत

● शीर्ष से मध्य स्थान तक लेकिन नीचे से मध्य नहीं आदि।

(4) **स्टैण्डर्ड स्केल**—(बहुत अधिक प्रचलित नहीं)—यह एक मानक स्तर है जिसमें पहले से निर्धारित मानक मूल्यों के अनुसार रेटिंग का निर्धारण किया जाता है। ये मानक आमतौर पर समरूप बातों को सम्मिलित करते हैं।

(5) **स्केल ऑफ क्युमलेटिव प्वाइंट**—संचयी स्तर (सर्वाधिक प्रचलित)—संचयी स्तर पर व्यक्ति के कुल अंक किसी व्यक्ति के द्वारा दिए गए रेटिंग का कुल या स्तर पर निर्धारित सभी रेटिंग्स को मापा जाता है।

वे कारक जो रेटिंग्स निर्धारित करने वालों (Rater's) की योग्यता तय करते हैं—

कई बार रेटिंग्स निर्धारित करने वाले अपनी रेटिंग्स वस्तुनिष्ठ या सही निर्धारित करना चाहते हैं लेकिन फिर भी ऐसा नहीं हो पाता। ऐसी बाधाएँ रेटिंग्स निर्धारित करने वालों की योग्यता को प्रत्यक्ष रूप से नकार देते हैं। थोर्नडाइक और हैगन (1977) ने कई कारकों का उल्लेख किया है जो धारक की योग्यता को प्रभावित करता है।

प्रभावी रेटिंग्स को निर्धारित करने में आने वाली समस्याएँ—वे कारक जिन्होंने सार्थक और वैध दरों को सीमित किया है।

(i) रेटिंग निर्धारित करने वाले प्रक्रियाओं और निर्देशों को तय करने में कठिनाई उठाने के लिए तैयार नहीं हैं।

(ii) रेटिंग्स निर्धारित करने वाले सकारात्मक या नकारात्मक ढंग से रेटिंग्स निर्धारित कर सकते हैं।

(iii) प्रभावी रेटिंग निर्धारित करने के लिए किसी भी व्यक्ति का अवलोकन करने हेतु अवसर। रेटिंग्स निर्धारकों और जिनका अवलोकन किया जा रहा है उनके बीच गहरा संबंध। यदि वह व्यक्ति धारक के गहन रूप से संपर्क में नहीं है तो वह इच्छा होने पर भी उसके लिए रेटिंग्स निर्धारित नहीं कर सकता।

(iv) रेटिंग की जाने वाले गुणों के प्रति विषयनिष्ठता—

व्यक्तिगत की कुछ विशेषताएँ प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हो जाती हैं जैसे अधिक बातें करना, प्रभुत्व जमाना आदि। इन्हें प्रत्यक्ष विशेषताएँ कहा जाता है। कुछ विशेषताएँ जैसे अहम्, बल, चिंता असुरक्षा के भाव आदि को प्रत्यक्ष रूप से प्रकट नहीं किया जा सकता। ये प्रत्यक्ष विशेषताएँ बहुत अनिवार्य हैं।

रेटिंग स्केल्स में आने वाली समस्याएँ—

रेटिंग निर्धारित करने में कई त्रुटियाँ पाई जाती हैं—

(क) **परिवेशी प्रभाव (Hallow effect)** को दरें निर्धारित करने वाले व्यक्ति द्वारा किसी पक्षपात से प्रभावित विशेषताओं को देखा जाता है, जिसे अन्य विशेषताओं का अनुमान लगाने के लिए किया जाता है।

(ख) **कठोरता की त्रुटि (Error of Strictness)**—सभी व्यक्तियों को उनकी विशेषताओं पर कम अंक देना एक सामान्य धारणा है। ऐसी दरों को 'सख्त रेटिंग' कहा जाता है। कृत्रिम चयन करते हुए दरें निर्धारित करना इस त्रुटि को कम करता है।

(ग) **उदारता की त्रुटि (Leniency error)**—यह विशेषताओं के बावजूद किसी को ऊँचा आँकने हेतु स्थायी धारणा है। ऐसे लोगों को कृत्रिम चयन तकनीक से नियंत्रित किया जाता है।

(घ) **केन्द्रीय प्रवृत्ति की त्रुटि (Error of Central tendency)**—यह अत्यंत अधिक दरों को नजरअंदाज करने की स्थिर धारणा है। ऐसे लोगों को कृत्रिम चयन तकनीक से नियंत्रित किया जाता है।

(ङ) **विषम त्रुटि (Contrast Error)**—इसे सबसे पहले मूर ने बताया था। इसमें रेटिंग निर्धारित करने वाला व्यक्ति किसी व्यक्ति या वस्तु को अपने अनुसार उसकी वास्तविक विशेषताओं को विषम रूप में देखता है। इसीलिए इस त्रुटि के द्वारा रेटिंग्स निर्धारित करने वाला अपनी दृष्टि या पक्षपात के अनुसार तय करता है।

(च) **समीप्य त्रुटि (Proximity error)**—सबसे पहले इसे स्टॉफोर्ड तथा बीसेन (1943) ने बताया था। यह समीपता या सहयोगी दो विशेषताओं के आधार पर तय होती है। यह त्रुटि किसी विशेषता या अन्य के मध्य तय रेटिंग्स के पर्याप्त अंतराल के कारण होती है।

(छ) **तार्किक (Logical) त्रुटि**—यह वह है जिसमें रेटिंग निर्धारित करने वाला किसी की विशेषताओं को तर्क के अनुसार अधिक या कम समान रेटिंग्स देता है। (न्यूकोम्ब, 1931) तार्किक त्रुटि सर्वाधिक सहज है, जिसमें विशेषताएँ अमूर्त हैं जो अर्थ की दृष्टि से अतिव्यापी

हैं। इस त्रुटि को आंशिक रूप से कम किया जा सकता है जब धारक दूरों को निर्धारित करने हेतु विशेषताओं को वस्तुनिष्ठ एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित करते हैं।

अवलोकन और साक्षात्कार (Observation & Interview)

व्यवहारात्मक अवलोकन को व्यक्तित्व को आँकने के लिए प्रयोग किया जाता है। विशिष्ट व्यवहार के उदाहरणों को समझने के लिए विस्तृत निर्देश दिए जाते हैं। दो तरह से अवलोकन हैं—भागीदार और गैर भागीदार (Participant & Non-Participant) अवलोकनात्मक तकनीक जिन्हें कक्षा में उपयोगी माना गया है। विद्यालयों, घरों, बच्चों के केन्द्रों, क्लिनिकों आदि में देखी जाने वाली व्यवहारात्मक परिवर्तन का मुख्य रूप से अनुप्रयोग पाया जाता है।

साक्षात्कार क्लिनिकल मनोविज्ञान, परामर्श वैयक्तिक मनोविज्ञान और शिक्षा में कई उद्देश्यों को पूरा करता है। साक्षात्कार कई रूपों में होते हैं जैसे अच्छी तरह तैयार किए गए, बिना किसी निर्देश के तथा गहन साक्षात्कार।

सीमाएं (Limitations): इन पद्धतियों से उपयोगी तथ्यों को प्राप्त करने हेतु जिस तरह के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है, उसमें काफी समय लगता है। सबसे बड़ी समस्या यह है कि अवलोकनकर्ता परिणामों की शुरुआत कर सकता है। हालाँकि किसी अपरिचित का उपस्थित होना अवलोकन प्रक्रिया और व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है। इन सीमाओं के बावजूद साक्षात्कार पद्धति रोजगार उद्देश्यों के लिए आमतौर पर प्रयोग की जाती है।

समाजमिति पद्धति (Sociometric Method)

यह पद्धति जे. एल. मोरेनो द्वारा दिया गया है जिसे ऐसी तकनीक के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें किसी समूह की संरचना का मूल्यांकन करने हेतु किसी व्यक्ति की स्वीकृति या अस्वीकृति के रूप में प्रकट किया जाता है। यह समूह या अंतरवैयक्तिक संबंधों का अध्ययन करने का दृष्टिकोण है। यह निश्चित स्थितियों में समूह में प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति का विश्लेषण करता है।

इस पद्धति में किसी विशिष्ट उद्देश्य हेतु किसी समूह में किसी एक या अधिक व्यक्तियों का चुनाव किया जाता है। इसे **लक्ष्य तकनीक** भी कहा जाता है। चार बातों पर ध्यान दिया जाता है, वृत्त, स्वीकृत स्कोर चयन के कुल अंकों पर आधारित हैं जिसे प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्राप्त किया जाता है। जिसे चार समूहों में बाँटा जाता है सबसे निम्न चतुर्थांश स्थान बाहर की तरफ है और उच्च चतुर्थांश केन्द्र की तरफ है। तीर से यह दर्शाया जाता है कि किसे किसके द्वारा अंक दिए गए हैं। मजबूत और टूटी-फूटी रेखाएँ क्रमशः पहली और दूसरे विकल्प की ओर संकेत करती हैं।

समाजमिति के अन्य रूप को मत परीक्षण (Opinion Test) कहा जाता है और जिसे विभिन्न विशेषताओं के संबंध में किसी व्यक्ति के द्वारा किसी के प्रति मत को प्राप्त किया जाता है। इस पद्धति उन अनुगमन पद्धतियों पर आधारित है जिसे जे. एल. मोरेनो 1934 में आगे बढ़ाया था।

सीमाएं (Limitations): वैधता का मानदंड और स्तर का समाजमिति परीक्षण पर प्रयोग नहीं होता और वे किसी के स्तर को निर्धारित करने के लिए वास्तविक व्यक्तित्व और व्यवहार की विशेषताओं को निर्धारित नहीं करते। ये मत की स्थितियों के साधन हैं जिसमें व्यक्ति क्रियाशील होता है। यह तकनीक सामाजिक समूह की संरचना को प्रकट करते हैं।

मनोअभिनय और समाजअभिनय (Psychodrama and Sociodrama)

मनोअभिनय व्यक्तित्व के अध्ययन और मनचिकित्सा में उपयोगी पद्धति है। इस तकनीक में विशिष्ट स्थिति में किसी व्यक्ति द्वारा सहज रूप से दी गई भूमिका को निभाता है। इस घटना में दो या अधिक लोग होते हैं। यह भागीदारों के अनुसार महत्वपूर्ण स्थितियों में व्यवहारिक होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने या अन्य व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मनोअभिनय का केन्द्रीय सिद्धान्त सहजता है। इसमें उस निर्देशक को सम्मिलित किया जाता है जो किसी स्थिति में व्यक्तित्वों का अध्ययन करता है। जिसमें वह अभिनेता को चुनता है, उनकी भूमिकाएँ निर्धारित करता है, उनके क्रियाकलापों का अवलोकन करता है और उन्हें समझता है और अभिनेताओं और दर्शकों में एक संबंध बनाता है।

मनोअभिनय द्वारा व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है और निर्देशक और अन्य लोग प्रत्येक विषय का अवलोकन एवं विश्लेषण करते हैं। चरित्र द्वारा किसी स्थिति से व्यवहार करना उसका सामना करना है। विभिन्न विषयों को व्यवहार का परीक्षण करने के लिए प्रयोग किया जाता है जो किसी सम्मिलित व्यक्ति के व्यवहार पर निर्भर होता है।

मनोअभिनय का सामुहिक संस्करण समाजअभिनय कहलाता है। यह उद्देश्य के संदर्भ में भिन्न हैं। जैसे कि मनोअभिनय किसी व्यक्ति के साथ व्यवहार करता है वहीं समाजअभिनय समूह के मूल्यां और समूह की संरचना और विचार से संबंधित है। समाजअभिनय सामाजिक घटना और दर्शक संबंधी विवादों को दर्शाता है।

मनोअभिनय का मूल्यांकन

इस पद्धति को अवलोकन, व्यवहार के स्तर और प्रतिक्रिया की समझ के संदर्भ में अभी भी वस्तुनिष्ठ और व्यवस्थित संगठन के संतोषजनक स्तर प्राप्त करने की आवश्यकता है। मनोअभिनय के मूल्य के संबंध में इस परिकल्पना की वैधता को तकनीक के रूप में सहज, पूर्ण और समायोजित व्यक्तित्वों का विकास करने के लिए प्रयोग किया जाता है जिनको पूर्व में नहीं दर्शाया गया है।

इसकी सबसे बड़ी हानि यह है कि इसमें बहुत अधिक समय, लोग और उपकरण लगाए जाते हैं। ऐसा भी हो सकता है कि किसी के व्यक्तित्व के बारे में पर्याप्त जानकारी न मिले क्योंकि कई क्रियाकलापों से व्यक्तित्व निर्मित होता है। संक्षिप्त में व्यक्तित्व संरचना, चेतना, क्षमताओं, दृष्टिकोणों और व्यवहार के तरीकों की कुल गुणवत्ता है जो कि व्यक्ति के उसके पर्यावरण से संबंध के रूप में प्रकट होती है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- मानव-व्यक्तित्व परिणाम है :
 - (1) आनुवंशिकता और वातावरण की अंतःक्रिया का
 - (2) केवल वातावरण का
 - (3) केवल आनुवंशिकता का
 - (4) पालन-पोषण और शिक्षा का
- व्यक्ति के अचेतन मन के अध्ययन हेतु उपयोग की जाने वाली व्यक्तित्व मापन की विधि है—
 - (1) वस्तुनिष्ठ विधि
 - (2) व्यक्तिनिष्ठ विधि
 - (3) प्रक्षेपी विधि
 - (4) मनोविश्लेषण विधि
- क्रैशमेर के अनुसार, Physique प्रकार के व्यक्तित्व की विशेषता क्या है?
 - (1) मिलनसार, अंतर्मुखी, शर्मीली
 - (2) मिलनसार, बहिर्मुखी, शर्मीली
 - (3) मिलनसार, बहिर्मुखी, मित्रवत
 - (4) मिलनसार, अंतर्मुखी, मित्रवत
- व्यक्तित्व माप की वह विधि जिसमें अवलोकन, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार जैसी विधियों का प्रयोग किया जाता है, क्या कहलाता है?
 - (1) उद्देश्यात्मक विधि
 - (2) व्यक्तिपरक विधि
 - (3) प्रक्षेपीय विधि
 - (4) मनोवैज्ञानिक विधि
- बच्चों के विकास की प्रक्रिया में किस स्थिति में ओडिपस और इलेक्ट्रा कॉम्प्लेक्स विकसित होना शुरू होता है?
 - (1) शिशु अवस्था में
 - (2) बचपन में
 - (3) किशोरावस्था में
 - (4) वयस्क अवस्था में
- व्यक्तित्व मापन की प्रश्नावली विधि में जब प्रश्नों के उत्तर हाँ या नहीं में देने होते हैं, तो प्रश्नावली का प्रकार होगा—
 - (1) बन्द प्रश्नावली
 - (2) खुली प्रश्नावली
 - (3) मिश्रित प्रश्नावली
 - (4) सचित्र प्रश्नावली
- निम्न में से कौन-सी विधि व्यक्तित्व मापन की प्रक्षेपण विधि नहीं है?
 - (1) रोशार्क स्याही धब्बा परीक्षण
 - (2) शब्द साहचर्य परीक्षण
 - (3) अवलोकन
 - (4) वाक्य पूर्ति परीक्षण
- प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण व्यक्तित्व मापन की कौन-सी विधि है?
 - (1) आत्मनिष्ठ विधि
 - (2) वस्तुनिष्ठ विधि
 - (3) प्रक्षेपण विधि
 - (4) उपर्युक्त में से कोई नहीं
- निम्नलिखित में से किस मनोवैज्ञानिक ने व्यक्तित्व के अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी प्रकार स्पष्ट किया है?
 - (1) फ्रायड
 - (2) जुंग
 - (3) ऑलपोर्ट
 - (4) लेविन
- व्यक्तिगत गुणों A तथा B प्रकार का उल्लेख क्रमशः किन मनोवैज्ञानिकों ने किया है?
 - (1) ऑलपोर्ट एवं आइसेंक
 - (2) फ्रीडमैन एवं रोजेनमैन
 - (3) फ्रायड एवं लेविन
 - (4) मैस्लो एवं ऑलपोर्ट
- मनोवैज्ञानिक ऑलपोर्ट के द्वारा प्रस्तावित व्यक्तित्व गुण निम्नलिखित में से कौन-सा है?
 - (1) प्रधान गुण
 - (2) केन्द्रीय गुण
 - (3) गौण गुण
 - (4) उपरोक्त सभी
- निम्नलिखित में से किस व्यक्तित्व-वैज्ञानिक ने व्यक्तित्व वर्गीकरण एवं मापन सम्बन्धी 16-PF (पर्सनैलिटी फैक्टर) सिद्धान्त दिया है?
 - (1) आर.बी. कैटल
 - (2) आइसेंक
 - (3) ऑलपोर्ट
 - (4) फ्रीडमैन
- व्यक्तित्व सम्बन्धी पंचतत्व (फाइव-फैक्टर) सिद्धान्त के जनक निम्नलिखित में से कौन हैं?
 - (1) गोल्डेन वर्ग
 - (2) पीडमोन्ट
 - (3) कोस्टा
 - (4) उपरोक्त सभी
- व्यक्तित्व के प्रकार एवं शीलगुण : टाइप- कम-ट्रेट (Type Cum Trait) सिद्धान्त के व्याख्याकार निम्नलिखित में से कौन-सा वैज्ञानिक है?
 - (1) आइसेन्क-आलपोर्ट-कैटल
 - (2) गोल्डेनवर्ग-पीडमोन्ट-कोस्टा
 - (3) कर्ट लेविन-आइसेन्क-कैटल
 - (4) फ्रीडमैन-रोजेनमैन-फ्रायड
- वर्ड एसोसिएशन टेस्ट को व्यक्तित्व परीक्षण के तौर पर किस मनोवैज्ञानिक ने इस्तेमाल किया है?
 - (1) गॉल्टन
 - (2) गिल्फोर्ड
 - (3) क्रैशमेर
 - (4) शैल्डन
- व्यक्तित्व के भारतीय त्रिगुण सिद्धान्त के गुण हैं—
 - (1) सत्व-रज-तम
 - (2) रज-सत्व-तम
 - (3) तम-रज-सत्व
 - (4) तम-सत्व-रज
- शैल्डम/शैल्डन कृत व्यक्तित्व के प्रकार में शामिल हैं—
 - (1) एण्डोमोर्फिक
 - (2) मेसोमोर्फिक
 - (3) एक्टोमोर्फिक
 - (4) उपरोक्त सभी
- व्यक्तित्व सिद्धान्त का पहला प्रकार निम्नलिखित में से किसने दी थी?
 - (1) क्रैशमेर
 - (2) शैल्डन
 - (3) हिपोक्रेटस
 - (4) हेरोडोटस
- हिपोक्रेटस द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व सिद्धान्त के प्रमुख प्रकार में से कौन खुशगवार एवं शक्तिशाली माना गया है?
 - (1) सैगुइन
 - (2) कॉलेरिक
 - (3) मेलंकलिक
 - (4) फ्लेगमेटिक
- विश्वास बनाम अविश्वास और स्वायत्त बनाम लज्जा जैसे पद किस व्यक्तित्व सिद्धान्त में प्रतिपादित हैं?
 - (1) पीडमोन्ट-कोस्टा
 - (2) एरिक एरिकसन
 - (3) अब्राहम मैस्लो
 - (4) कर्ट लेविन
- अब्राहम मैस्लो ने निम्नलिखित में से कौन-सा सिद्धान्त दिया है?
 - (1) आवश्यकता सोपानक्रम सिद्धान्त
 - (2) सोलह-पी.एफ. सिद्धान्त
 - (3) पंचआयामी सिद्धान्त
 - (4) त्रिगुण सिद्धान्त
- व्यक्तित्व के भारतीय सिद्धान्त किस रूप में चर्चित है?
 - (1) पंचकोश
 - (2) षट्पदीय
 - (3) सप्तांग
 - (4) अष्टांग
- व्यक्तित्व के पंचकोशीय सिद्धान्त का सम्यक् अनुक्रम है?
 - (1) अन्न-विज्ञान-आनंद-मन-प्राण
 - (2) विज्ञान-आनंद-मन-प्राण-अन्न

- (3) आनंद-मन-प्राण-अन्न-विज्ञान
(4) प्राण-मन-आनंद-विज्ञान-अन्न
24. व्यक्तित्व परीक्षण के चाइल्ड और एडल्ट एपसेप्सन टेस्ट के प्रतिपादक हैं—
(1) हेनरी मुर्रे (2) एरिक एरिकसन
(3) गिल्फोर्ड (4) डाल्टन
25. व्यक्तित्व को अंग्रेजी में पर्सनैलिटी कहते हैं जिसका 'पर्सोना' भाषामूल है :
(1) ग्रीक (2) लैटिन
(3) फ्रेंच (4) पुर्तगीज

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(1)	2.	(3)	3.	(3)	4.	(2)	5.	(3)
6.	(1)	7.	(3)	8.	(3)	9.	(2)	10.	(2)
11.	(4)	12.	(1)	13.	(4)	14.	(1)	15.	(1)
16.	(1)	17.	(4)	18.	(3)	19.	(1)	20.	(2)
21.	(1)	22.	(1)	23.	(1)	24.	(1)	25.	(2)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (1) मानव का व्यक्तित्व आनुवंशिकता और पर्यावरणीय घटकों का परिणाम है। आनुवंशिक गुण पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं। पर्यावरणीय घटक, जैव-अजैव कारकों की अन्तःक्रियात्मक परिणाम हैं।
2. (3) प्रक्षेपी (प्रोजेक्टिव) विधि एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति की छिपी हुई अचेतन मन की इच्छाओं और रुचियों आदि का पता लग जाता है। शमनर के अनुसार, “प्रक्षेपी विधि उद्दीपकों के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं के आधार पर उसके व्यक्तित्व के स्वरूप का वर्णन करने का साधन है।
3. (3) क्रैशमेर ने अपनी पुस्तक Physique and Character में व्यक्तित्व के चार प्रकार बताए हैं : शक्तिहीन, खिलाड़ी, नाटे तथा मिश्रित। Physique प्रकार वाले नाटे व्यक्ति मिलनसार, ऐश्वर्य पसंद और लोकप्रिय होते हैं।
4. (2) अवलोकन, प्रश्नावली और साक्षात्कार विधि का प्रयोग शोधकर्ता अपनी समझ, रुचि, उद्देश्य के अनुसार करता है। इसीलिए यह व्यक्तिनिष्ठ विधि के रूप में पारिगणित है।
5. (3) सिग्मंड फ्रायड ने अपनी थ्योरी Psychosexual Stages of Development में विशेषकर किशोरावस्था में एक लड़के की माँ को पाने की इच्छा व पिता के प्रति ईर्ष्या व गुस्से की अभिव्यक्ति के लिए ओडिपस कॉम्प्लेक्स तथा इलेक्ट्रा कॉम्प्लेक्स लड़कियों के पिता के प्रति झुकाव व माँ के लिए ईर्ष्या की अभिव्यक्ति है।
6. (1) इस प्रकार की प्रश्नावली में अधिक अभिव्यक्ति का अवसर नहीं होता। यह व्यक्तित्व का पूर्ण मापन नहीं कर पाती क्योंकि इसमें वैचारिक अभिव्यक्ति संभव नहीं होती।

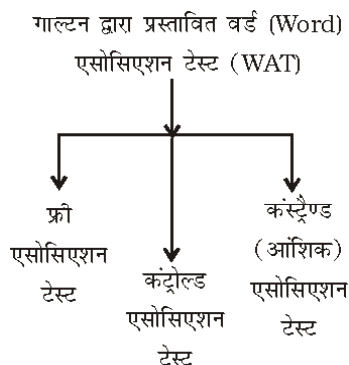
7. (3) प्रक्षेपण विधि ऐसी विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति की छिपी हुई अचेतन मन की इच्छाओं और रुचियों आदि का पता लग जाता है। अवलोकन व्यक्तित्व मापन की वस्तुनिष्ठ विधि है।
8. (3) प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण में एक सार्थक विषय देकर विद्यार्थी/व्यक्ति से उस बारे में अभिव्यक्ति की जाँच की जाती है। यह व्यक्तित्व मापन की वैज्ञानिक प्रक्षेपी विधियों में अग्रणी है।
9. (2) प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जुंग ने सभी व्यक्तियों को उनके सामाजिक दृष्टि से सक्रिय या निष्क्रिय होने की दृष्टि से मुख्य रूप से बहिर्मुखी तथा अन्तर्मुखी दो निश्चित वर्गों में विभक्त करने की चेष्टा की है।
10. (2) फ्रीडमैन तथा रोजनमैन ने व्यक्तियों को उनके व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणों के आधार पर दो प्रकार के समूहों A तथा B में बाँटकर यह बताने की चेष्टा की कि कौन-से-प्रकार के व्यक्तियों में हृदय रोग से पीड़ित होने की संभावना अधिक रहती है।
11. (4) ऑलपोर्ट ने व्यक्ति की व्यवहार सम्बन्धी विशेषताओं या गुणों (Behavioural Traits) को कुछ विशिष्ट वर्गों या श्रेणियों, जैसे-प्रधान विशेषक (Cardinal Traits), केन्द्रीय विशेषक (Central Traits) तथा गौण विशेषक (Secondary Trait) आदि में बाँटा है।
12. (1) कैटेल ने व्यक्तियों के व्यक्तित्व में आमतौर से पाए जाने वाले सभी व्यक्तित्व गुणों एवं विशेषताओं की जानकारी लेने के बाद उनका कारक विश्लेषण (Factor Analysis) विधि द्वारा विश्लेषण कर जो 16 मूलभूत व्यक्तित्व कारक या आयाम प्रस्तुत किए और उसके पश्चात् इनका प्रयोग करके, व्यक्तित्व मापन हेतु व्यक्ति परिसूची बनाई।
13. (4)

क्रम संख्या (S.No.)	व्यक्तित्व कारक (Personality Factors)	व्यक्तित्व गुण (Personality Traits)
1.	बहिर्मुखी (Extrovert)	बातूनी, मेल-जोल वाला, साहसी
2.	सहमति या समझौतावादी प्रकृति (Agreeableness)	भलापन, सहयोगी और दूसरों के द्वारा पसंद
3.	अंतरात्मा की आवाज या चेतना (Consciousness)	जिम्मेदारी निभाना, पवित्र आचरण तथा कार्य के प्रति सजगता
4.	संवेगात्मक स्थिरता (Emotional-Stability)	शांत, धैर्यवान तथा स्थिर
5.	संस्कृति (Culture)	बुद्धिमान, कला-दर्शन तथा साहित्यिक विषयों में पारंगत

14. (1) व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषक एवं प्रकार समन्वित सिद्धान्त (Theories Adopting Trait cum type Approach) —इस प्रकार के सिद्धान्त व्यक्तियों की उनके व्यक्तित्व गुणों या विशेषकों (Trait Approach) के आधार पर व्याख्या

करने तथा उन्हें वर्गों या प्रकारों में विभाजित करने (Type Approach) दोनों ही दृष्टिकोणों का समन्वय करने का प्रयत्न करते हैं।

15. (1)



16. (1) **त्रिगुण सिद्धान्त**—ये तीन लौकिक घटकों पर आधारित हैं, जैसे : सत्व, रजस और तमस। ये तीन गुण विशिष्ट मनो-भौतिक विशेषताएँ हैं। गुण जन्मजात होते हैं परन्तु केवल पर्यावरण के व्यवहार से ही वे प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

17. (4) शैलडन ने शरीर के तीन प्रकारों को पहचाना और उन्हें तीन प्रकार की मनोदशा से जोड़ा है :

(क) **मांसल (Endomorphic)**—ये भली-भाँति विकसित तथा कोमल होते हैं। वे निश्चित स्वभाव के होते हैं और खाना पसंद करते हैं तथा सामाजिक होते हैं।

(ख) **विकसित (Mesom-orphic)**—छोटी, मांसल और समकोण संरचना का शरीर। ऐसा व्यक्ति ऊर्जावान क्रियाकलापों में सम्मिलित होता है और निडर प्रवृत्ति का होता है।

(ग) **कृशकाय (Ectomor-physic)**—पतला और कमजोर शरीर, विशाल मस्तिष्क और संवेदनशील। वर्णन हेतु विशेषताओं का प्रयोग और व्यक्तित्व का यह विश्लेषण बहुत लोकप्रिय है और प्रस्तावित हैं।

18. (3) व्यक्तित्व सिद्धान्त का पहला प्रकार हिप्पोक्रेटस द्वारा दिया गया था जिसे चार प्रकार की मनोस्थितियों में विभाजित किया है—आशावादी, क्रोधी, अवसादी और शांतिवादी।

19. (1) (क) आशावादी (Sanguine)— ऐसे लोग सकारात्मक, खुश मिजाज और सशक्त होते हैं।

(ख) क्रोधी (Choleric)—इन्हें आसानी से उकसाया जा सकता है और ये गर्म मिजाज के तथा मजबूत होते हैं।

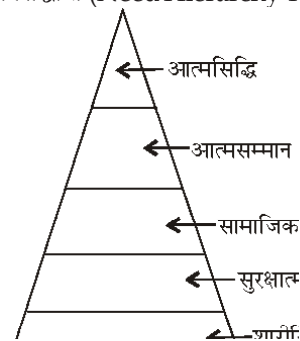
(ग) अवसादग्रस्त (Melancholic)—ये दबू तथा अवसादग्रस्त होते हैं।

(घ) शांतचित्त (Phlegmatic)—ये शांत, निरुत्साही और धीरे गति से बढ़ने वाले होते हैं।

20. (2) एरिक एरीक्सन (Erik Erikson)—एरीक्सन ने व्यक्तित्व के विकास के नियम को सामाजिक अनुकूलन पर ध्यान देते हुए विकसित किया। उनका सिद्धान्त अवस्था सिद्धान्त है। उनके अनुसार, विकास आठ प्रक्रियाओं का परिणाम है:

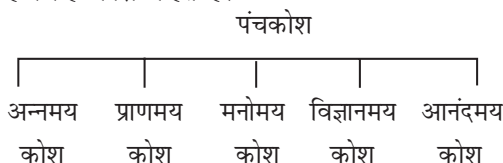
- स्वाभाविक विश्वास बनाम अविश्वास
- स्वायत्ता बनाम लज्जा
- उद्योग बनाम हीनता
- अस्तित्व बनाम अस्तित्व असमंजसता
- आत्मीयता बनाम अलगाव
- अखंडता बनाम खंडता और
- गतिशीलता बनाम गतिहीनता

21. (1) अब्राहम मैस्लो (Abraham Maslow)—मैस्लो मानते हैं कि सभी व्यक्तियों के पास कुछ जरूरतें होती हैं जिन्हें वे आवश्यकताओं का क्रम मानता है और उसे आवश्यकता सोपान-क्रम सिद्धान्त (Need Hierarchy Theory) कहता है:

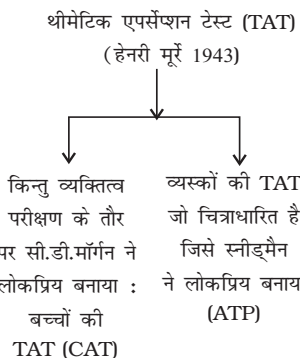


22. (1) व्यक्तित्व के प्रति भारतीय दृष्टिकोण या सिद्धान्त : अन्मय कोश, विज्ञानमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, आनंदमय।

23. (1) तैत्तिरीय उपनिषद् पंच कोशों और उनके विकास की परिकल्पना देता है। इसके अनुसार अन्मय कोश से आरंभ होकर आनंदमय कोश तक हमारे अस्तित्व के पाँच आवरण हैं जिन्हें कोश कहते हैं।



24. (1)



25. (2) लैटिन भाषा के पर्सोना (Persona) से पर्सनैलिटी शब्द बना है जिसका हिन्दी व्यक्तित्व है।

□□□

मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध और सांख्यिकी का अध्ययन (Study of Research and Statistics in Psychology and Education)

शोध से अभिप्राय है मौलिक-समस्या का अध्ययन करके नवीन तथ्यों की खोज करना, सत्य की स्थापना करना ताकि नवीन सिद्धांतों का प्रतिपादन हो सके।

ए.एल. एडवर्ड्स के अनुसार—किसी प्रश्न या समस्या या प्रस्तावित उत्तरों की जांच के लिए शोध किया जाता है।

कोई अनुसंधान तभी महत्वपूर्ण होता है, जब वह समाजिक कार्यकर्ताओं के लिए व्यावहारिक तौर पर मदद करें जिससे समाज में समस्याओं का निराकरण कर सके। अनुसंधान के द्वारा ही शिक्षा के उद्देश्यों को समाजिक मापदण्ड के अनुसार बदला जाता है।

शैक्षिक अनुसंधान में विद्यार्थियों का जरूरत को ध्यान में रखकर आगे की नीतियां बनाए जाती हैं। जिससे छात्र और शिक्षक सम्बन्धी समस्याओं तथा छात्रों में परस्पर आदान-प्रदान की समस्याओं के लिए प्रयुक्त करते हैं।

शोध किसी विषय या समस्या की तार्किक परिकल्पना होती है। समस्या के लिए संभावित समाधान किए जाते हैं, उन्हें परिकल्पना कहते हैं। क्रियात्मक-परिकल्पनाओं का स्रोत समस्याओं के कारणों का विश्लेषण होता है। शोधकर्ता को उन्हीं कारणों को महत्व देना चाहिए जो उसके नियंत्रण में हों। क्रियात्मक अनुसंधान की प्रक्रिया में क्रियात्मक परिकल्पना की पुष्टि की जाती है जिससे समस्या का समाधान प्राप्त होता है। क्रियात्मक-परिकल्पना के दो पक्ष होते हैं—

(1) क्रियात्मक पक्ष (Action)

(2) लक्ष्य पक्ष (Goal)। एक अच्छी क्रियात्मक-परिकल्पना में दोनों पक्षों का समावेश होता है। इनकी परीक्षा हेतु रूपरेखा तैयार की जाती है।

● वैन डलेन के अनुसार वर्णनात्मक अनुसंधान का अर्थ है सभी तथ्य को इकट्ठा करके तथ्य का आकलन करके उनके विकास संबंधी अध्ययन करके उसे शैक्षिक तकनीक में लगाया जाता है।

● शैक्षिक अनुसंधान में वर्णनात्मक (Descriptive) तथा आनुमानिक (Inferential) दोनों ही प्रकार के सांख्यिकी को प्रस्तुत किया जाता है सांख्यिकी अध्ययन का वह विषय है, जो आंकिक तथ्यों या आंकड़ों के वैज्ञानिक ढंग से संग्रह, प्रस्तुतीकरण, विशेषण एवं व्याख्या मूल्यांकन एवं मापन में करने में सहायक सिद्ध होता है।

● आनुमानिक सांख्यिकी में परिणाम (Result) के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता और भावी अनुमान किया जाता है।

● डेटा जो बहुवचन में प्रयोग होते हैं। दो तरह से प्राप्त किए जा सकते हैं।

● वर्गीकृत तथा अवर्गीकृत प्राथमिक डेटा की विश्वसनीयता डेटा को एकत्र करते समय कितनी सावधानी बरती गई है। इस बात पर निर्भर करती है।

● शैक्षिक अनुसंधान में जो विधि सबसे ज्यादा उपयोग किया जाता है वह है अवलोकन (Observation), इसमें विद्यार्थी का हमेशा अवलोकन किया जाता है तो वह कक्षा में हो या कक्षा से बाहर हो वांछनीय व्यवहार के लिए विद्यार्थी को अवलोकन के माध्यम से ही सुधारा जाता है।

शोध की विशेषता

तटस्थता (Objectivity)	वैधता (Validity)	विश्वसनीयता (Reliability)
पक्षपात रहित लिंग, भाषा, क्षेत्र, जाति, धर्म के पुर्वाग्रह से रहित होना	वैधता से तात्पर्य है कि परीक्षण से उस उद्देश्य की पूर्ति हो जिस हेतु उसका निर्माण किया गया हो यदि वह परीक्षण केवल उस स्तर के छात्रों के केवल उस विषय के ज्ञान को मापता हो तो जिसके लिए उस परीक्षण का निर्माण किया गया है। तो परीक्षण वैध होगा।	कोई भी परीक्षण तब ही विश्वसनीय होगा जबकि उस परीक्षण का एक ही समूह पर बार-बार प्रयोग करने पर भी वह एक से ही निष्कर्ष प्रदान करें।

● सांख्यिकी शिक्षा में तथ्यों के विश्लेषण करने, और निष्कर्षों को प्राप्त करने आदि में महत्वपूर्ण रूप से सहायक है। यह विद्यार्थियों के प्रदर्शन, अभिप्रेरण, रूचि, उपलब्धि और अन्य संबंधित क्षेत्रों के अनुमान के बारे में मूल्यवान जानकारी प्रदान करती है।

● सांख्यिकी संख्याओं संबंधी तथ्यों से संबंधित है। उदाहरण के लिए, विद्यालय में विद्यार्थियों से संबंधित संख्याओं संबंधी तथ्य विद्यालय में उपस्थिति, कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या, उच्च स्थान, निचला स्थान, विद्यालय के औसत परिणाम हैं।

● उदाहरण हेतु—सांख्यिकी आँकड़ों के अभाव में सावधानीपूर्वक नियंत्रित अनुभव/परियोजना/अनुसंधानों में हमारे रोजाना के अवलोकनों का महत्व बहुत ही कम है। सांख्यिकी को समझने में, विषय को दो भागों में विभाजित करना बहुत उपयोगी है—

(क) वर्णनात्मक (Descriptive) सांख्यिकी

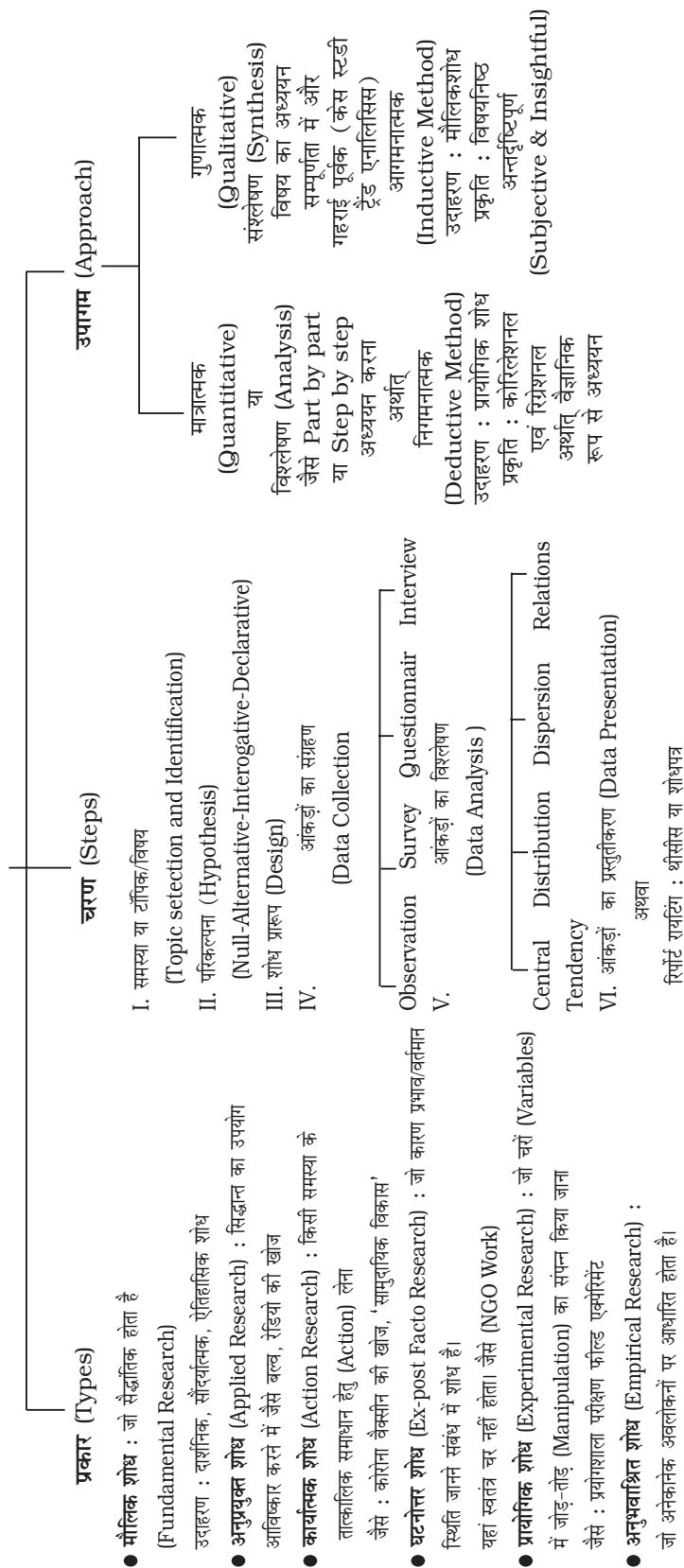
(ख) आनुमानिक (Inferential) सांख्यिकी

मापन (Measurement)—यह किसी वस्तु या घटना की विशेषताओं की संख्या का निर्धारण है, जिसकी तुलना अन्य वस्तुओं या घटनाओं से की जा सकती है। मानदंड का क्षेत्र और अनुप्रयोग **संदर्भ** और अनुशासन पर निर्भर है।

उदाहरण के लिए—प्राकृतिक विज्ञान और अभियंता मापन नाममात्र की विशेषताओं के लिए प्रयुक्त नहीं होते। हालांकि, अन्य क्षेत्रों में सांख्यिकी के साथ-साथ सामाजिक और व्यवहारात्मक विज्ञान में मापन के कई स्तर होते हैं,

शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक शोध (Psychological Research)

नयी चीजों (Object) को खोजना एवं खोजी गयी चीजों को परिमार्जित (Modify) करना



उच्च विद्यालय की प्रधानाचार्य यह जानना चाहती थी कि उनके विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना राष्ट्रीय स्तर (राष्ट्रीय प्रतिभा अनुसंधान परीक्षा) पर की जाती है यह परीक्षा विद्यार्थियों के ज्ञान का दो विषयों में जाँचती है- विज्ञान और गणित। प्रत्येक विषय के लिए, वे अंकों के दो वितरणों को स्थापित करती हैं वहीं साथ-साथ उनकी तुलना भी करती है परंतु इससे उन्हें केवल लगभग उत्तर ही मिल पाता है। जब कि वह प्रत्येक समूह के औसत अंकों को प्राप्त करके और उनकी तुलना न करे।

इस तरह के मापन को केंद्रित प्रवृत्ति कहते हैं। उनका उद्देश्य सार रूप में एक आकृति को दिखाना है जो अवलोकनों के संपूर्ण वितरणों की केंद्रिय स्थिति का वर्णन करती है। यह विभिन्न स्थितियाँ में दो या अधिक समूहों की तुलना का सरलीकरण करता है।

सांख्यिकी को दो भागों में विभाजित किया गया है (प्रकृति के आधार पर)

वैज्ञानिक

- प्रकृति : संख्या तथ्यों से व्यवहार करने के बारे में बताती है।
- विज्ञान के रूप में सांख्यिकी करती है-
तथ्यों का संकलन
तथ्यों का सार
तथ्यों का विश्लेषण
संख्यात्मक तथ्यों का वर्णन

कलात्मक (अनुप्रयोग)

- प्रकृति : संख्याओं के वर्णन का अनुप्रयोग बताती है।
- कला के रूप में सांख्यिकी का कार्य
- संख्या के आधार पर पूर्वानुमान एवं निष्कर्ष

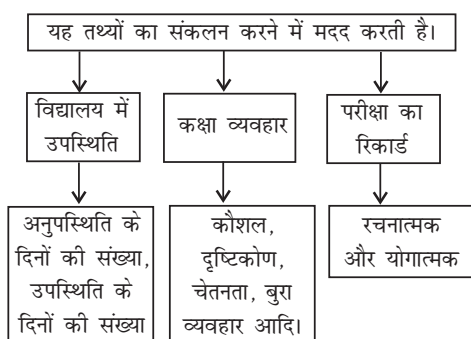
सांख्यिकी उपकरण

सांख्यिकीय अध्ययन की प्रत्येक अवस्था में विशेष प्रकार की तकनीक या उपाय का प्रयोग किया जाता है। इन तकनीकों या उपायों को सांख्यिकीय उपकरण कहा जाता है। आंकड़ों का संकलन करने के लिए जनगणना (Census) तथा निदर्शन (Sampling) जैसी तकनीकें हैं। आंकड़ों के व्यवस्थीकरण के लिए आंकड़ों का विन्यास (Array of Data) तथा मिलना रेखाओं (Tally Bars) की तकनीक का प्रयोग किया जाता है। तालिकाएं, ग्राफ, चित्र, आंकड़ों के प्रस्तुतीकरण की प्रसिद्ध तकनीकें हैं। औसत तथा प्रतिशत आंकड़ों के विश्लेषण में सामान्य रूप से प्रयोग की जाने वाली तकनीक है। आंकड़ों का निर्वचन प्रायः औसतों, प्रतिशतों या सह-संबंध तथा प्रतीयगमन के विस्तार के रूप में किया जाता है। सांख्यिकीय अध्ययन की विभिन्न अवस्थाओं तथा उनसे संबंधित तकनीकों का ज्ञान निम्नलिखित चार्ट द्वारा हो जाता है। :

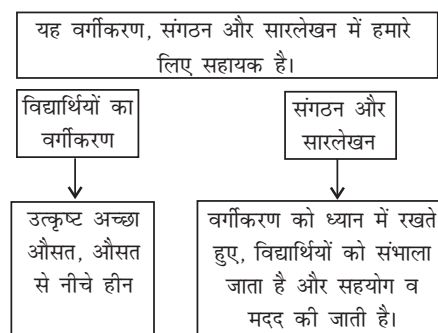
सांख्यिकीय अध्ययन की अवस्थाएं तथा उनसे संबंधित उपकरण (Stages of Statistical Study and Related Statistical Tools)

अवस्था (Stage)	सांख्यिकीय अध्ययन (Statistical Study)	सांख्यिकीय उपकरण (Statistical Tools)
अवस्था I (Stage I)	आंकड़ों का संकलन (Collection of Data)	संगणना तथा निदर्शन (Census and Sampling)
अवस्था II (Stage II)	आंकड़ों का व्यवस्थीकरण (Organisation of Data)	आंकड़ों का विन्यास तथा मिलान रेखा (Array of Data and Tally Bar)
अवस्था III (Stage III)	आंकड़ों का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Data)	तालिका, ग्राफ, चित्र (Table, Graph and Diagrams)
अवस्था IV (Stage IV)	आंकड़ों का विश्लेषण (Analysis of Data)	औसतों, प्रतिशतों, सह-संबंध तथा प्रतीयगमन (Averages, Percentages, Correlation and Regression Coefficients)
अवस्था V (Stage V)	आंकड़ों का विवेचन (Interpretation of Data)	औसतों, प्रतिशतों का विस्तार तथा विभिन्न चरों के संबंध की डिग्री (Magnitude of Averages, Percentages and the Degree of Relationship between different Variables)

(1) सांख्यिकी का अनुप्रयोग



(2)



(3) सांख्यिकी मूल्यांकन और मापदंड करने में सहायक है—



(4) यह परीक्षा के निर्माण और मानकीकरण में हमारे लिए सहायक है साथ-साथ इनका उचित रूप से प्रयोग करने में भी सहायक है।

निर्माण
सभी विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए औसत, अच्छा, हीन
● कठिनता का स्तर ● सरलता ● विश्वसनीयता ● वैधता

यह विद्यार्थियों में उनके व्यक्तिगत अंतरों को जानने, किसी एक तकनीक या पद्धति के स्थायित्व की उपयुक्तता और अनुमान करने में शिक्षक की मदद करता है।

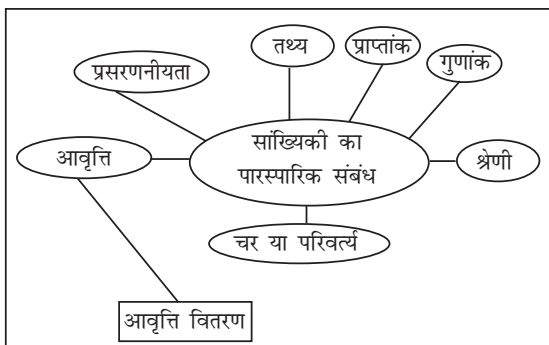
● अनुमान किसी व्यक्ति की कुशलता को सुधारने में मदद करता है।

शिक्षा में सांख्यिकी की उपयोगिता

मापदंड और मूल्यांकन शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग है। इस प्रक्रिया में हम अंक प्राप्त करते हैं और फिर उन अंकों का वर्णन निर्णय करने के लिए प्रयोग करते हैं। सांख्यिकी इन अंकों को वस्तुनिष्ठ रूप से जानने के लिए मदद करती है। यह शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाती है।

● यह शिक्षक को विद्यार्थियों की काफी सटीक व्याख्या, विशेषता और प्रदर्शन के बारे में जानने में मदद करती है।

● यह शिक्षक को विद्यार्थियों की निश्चित और सटीक विवेचना करने में मदद करती है।



● यह शिक्षक की मदद परिणामों का सार्थक और समझने योग्य भाषा यानी रिपोर्ट कार्ड के रूप में सार करने के योग्य बनाती है।

● यह शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के बारे में यह निष्कर्ष निकालने में मदद करती है कि बच्चों में कितनी क्षमता है और अधिगम का हस्तांतरण कितना हुआ है।

● यह शिक्षकों को विद्यार्थियों के भविष्य में प्रदर्शन का अनुमान लगाने में मदद करती है।

आँकड़े (डेटा)—अखबारों के सर्वेक्षणों, साक्षात्कारों, अवलोकनों अनुसंधानों आदि से तथ्यों को प्राप्त करना।

प्राप्तांक (स्कोर)—यह परीक्षा में किसी व्यक्ति के प्रदर्शन का संख्यात्मक मूल्यांकन है।

परिवर्त्य (Variables)

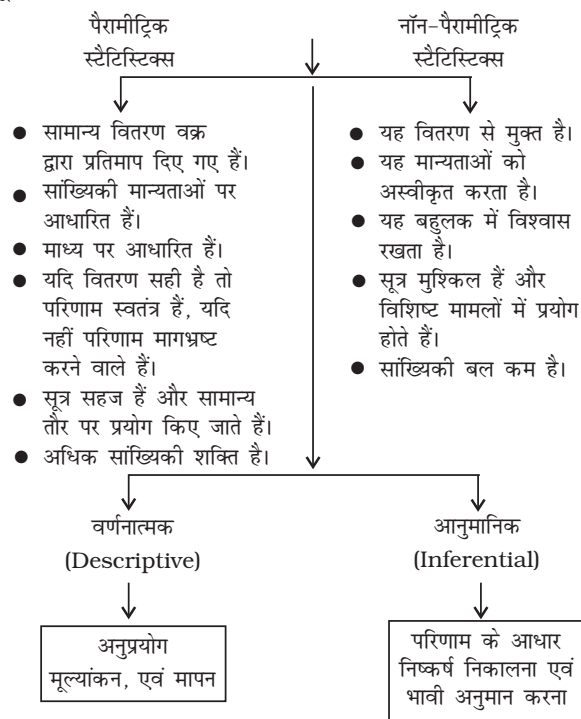
परिवर्त्य या चर कोई भी ऐसी विशेषता या गुण जिसमें परिवर्तन की योग्यता हो या मापदंडों के दो बिंदुओं का मापने की योग्यता हो। विशेषता समय-समय पर बदलती रहती हैं।

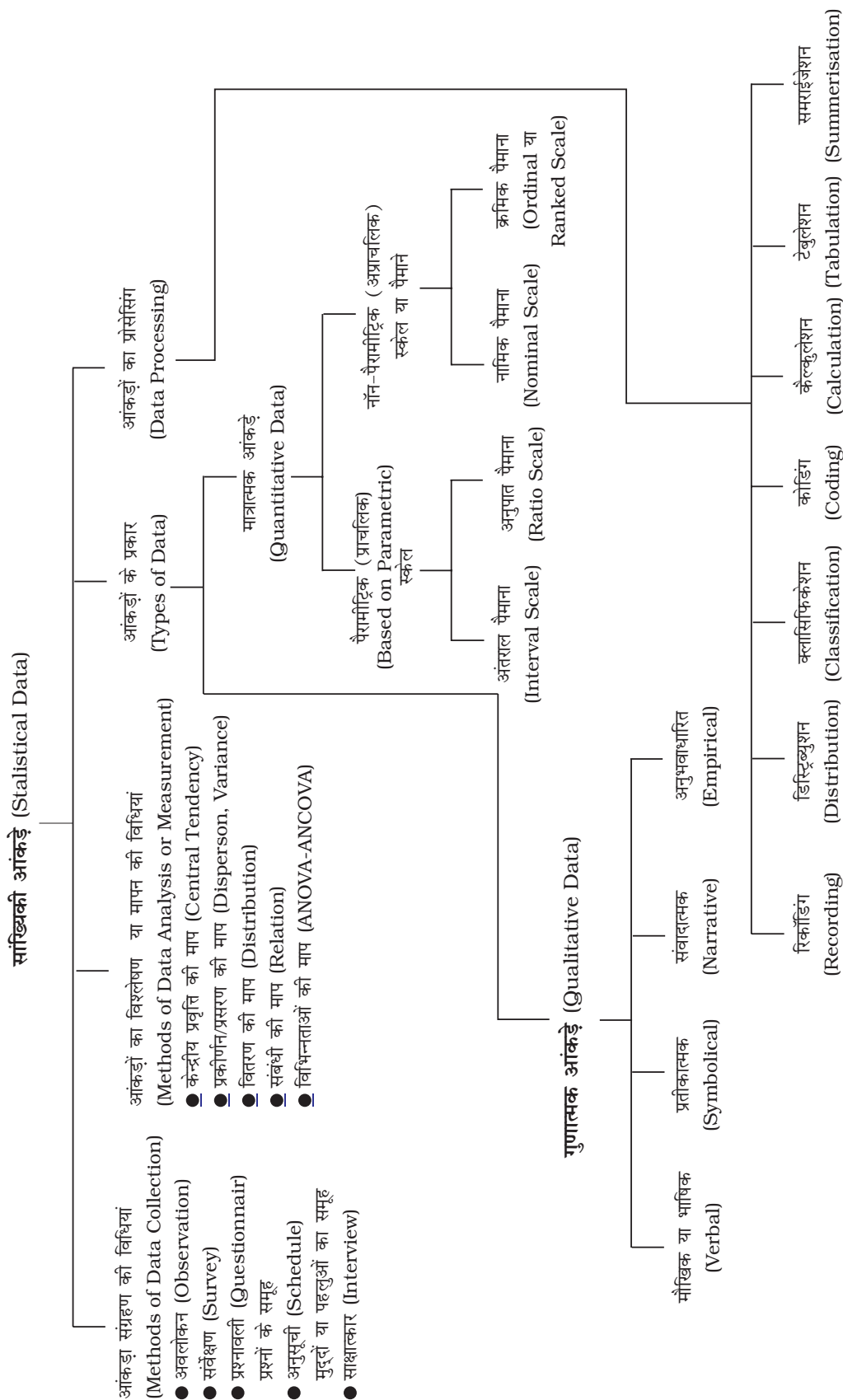
आवृत्ति (फ्रीक्वेंसी)—संख्याओं के किसी भी वर्ग में बार-बार आना। उदाहरण के लिए, किसी कक्षा में कई विद्यार्थियों ने 25 में से 20 अंक प्राप्त किए हैं।

केंद्रीय प्रवृत्ति (सेंट्रल टेडेंसी)—परीक्षाएँ किसी विद्यार्थी के ज्ञान को विस्तृत रूप से परखता है और कोई यह मापती है कि क्या वे सामान्य प्रगति कर रहा है। प्रत्येक विषय हेतु वे अंकों के दो वितरण के वर्ग देखते हैं और यह उचित उत्तर देता है।

शिक्षक प्रत्येक परीक्षा के औसत अंक प्राप्त करता है और उनकी तुलना करता है।

उद्देश्य सार की एक संख्या प्रदान करना है जो अवलोकन के संपूर्ण वितरण के केंद्रीय स्थान को वर्णित करता है।





केंद्रीय प्रवृत्ति का माप : विभिन्न स्थितियों में अंकों के एक या दो वर्गों की तुलना करने में सहायक है।

आमतौर पर शिक्षा में तीन प्रकार के मानदंडों का प्रयोग किया जाता है-

- (1) माध्य (2) माध्यिका (3) बहुलक

(1) **माध्य (Mean)**-माध्य वितरण में सभी अंकों का जोड़ है जिसे अंकों की कुल संख्या से भाग किया जाता है। कई लोग इसे औसत भी कहते हैं। इसे अंकगणितीय माध्य भी कहा जाता है

● माध्य बहुत विश्वसनीय और सटीक केन्द्रीय माना जाता है इसमें अधिक स्थिरता पाई जाती है। इसमें सबसे अधिक विश्वसनीय उत्तर होता है।

कब प्रयोग किया जाता है?

जब स्थायित्व के मापन की केंद्रित प्रवृत्ति का प्रयोग किया जा सकता है।

सूत्र

$$X = \frac{\sum x}{N}$$

X = जनसंख्या

$\sum x$ = प्राप्तांकों का योग

x = माध्य

(2) **माध्यिका (Median)**-यह एक ऐसा बिंदु है जो दिए गए क्राइटेरिया पर ऐसी जगह स्थित है जहाँ इससे ऊपर भी 50 प्रतिशत अंक होते हैं और नीचे भी। माध्यिका (Median) केन्द्रीय प्रवृत्ति की प्रमुख माप है। यह सम्बद्ध आंकड़ों से 50% आगे (ऊपर और नीचे की प्राप्तांकों स्थिति को स्पष्ट करता है।

माध्यिका की गणना हेतु आंकड़ों की समसंख्या और विषम संख्या के लिए अलग-अलग सूत्र निर्धारित है :

सूत्र

$$\text{Mdn} = l + \left(\frac{\frac{N}{2} - F}{f_m} \right) i$$

F = दिए गए सभी अंतरालों के प्राप्तांकों का योग

I = वर्ग अंतराल की न्यूनतम सीमा जहाँ माध्यिका स्थित है।

$N/2$ = अंकों का आधा भाग

F_m = अंतराल के बीच में आवृत्ति जहाँ माध्यिका स्थित है

I = वर्ग अंतराल की लंबाई

माध्यिका का प्रयोग कब किया जाता है?

- जब जनसंख्या वितरण का स्पष्ट मध्य बिंदु आवश्यक है।
- जब अत्यंत अंक होते हैं जहाँ माध्यिका प्रभावित होता है।
- जब कोई यह जानना चाहता है कि कोई माध्यिका से ऊपर है या नीचे

माध्यांक का अर्थ माध्यिका है। माध्यिका परिगणना हेतु दिए गए आंकड़ों को आरोही क्रम में रखते हैं : 2, 2, 2, 4, 10, 11, 12, 13, 16

आंकड़ों में मर्दों की संख्या (N)

$$\text{माध्यिका (Median)} = \frac{N+1}{2}$$

$$\text{वां पद } \frac{10}{2} = 5\text{वां पद; अतः उत्तर 10}$$

(3) बहुलक (Mode)

वह अंक है जिसकी आवृत्ति अधिक होती है। अधिकतम संख्यात्मक आवृत्ति बहुलक होता है।

सूत्र

$$\text{बहुलक} = 3 \text{ माध्यिका} - 2 \text{ माध्य}$$

दिए गए आंकड़ों 3, 8, 2, 3, 0, 7, 3, 3, 7 का बहुलक 3 है। क्योंकि यह सर्वाधिक बार आया है। यदि किसी श्रेणी के विभिन्न पदों के बहुलक में अन्तर हो तो औसत विचलन का वर्गमूल मानक विचलन होता है।

बहुलक का प्रयोग कब किया जाता है?

जब तीव्र या प्रवृत्ति या रुझान जानने की आवश्यकता होती है। जब हम अधिक उपयोगी मान देखना चाहते हैं। जैसे इस वर्ष की सर्वाधिक प्रचलित पोशाक कौन सी है?

प्रसरणशीलता या परिवर्तनीयता (Variability/Dispersion)

उदाहरण-दो विद्यार्थी जिनमें से एक पढ़ने में अच्छा है और दूसरा नहीं हैं परंतु जब परीक्षा ली जाती है कि जो पढ़ने में अच्छा नहीं था, उसके तीन परीक्षाओं में से एक परीक्षा में अंक ज्यादा अच्छे आए हैं।

जब दोनों विद्यार्थियों के माध्य तुलना की गई, दोनों अंक समान लगे परंतु पाया गया कि जिसने एक में अच्छे अंक प्राप्त किए, वह अच्छा प्रदर्शन कर सकता है परंतु उनके अंकों की परिवर्तनीयता का अंतर यह को अन्य वैयक्तिक समस्याएँ भी प्रभावित कर रही थी।

● यह उदाहरण बताता है कि हमें वितरण के बारे में केंद्रित प्रवृत्ति से अधिक भी जानने की आवश्यकता होती है।

● जब केंद्रित प्रवृत्ति प्रदर्शन के स्तर का सार होता है, परिवर्तनीयता का माप निष्पादन की गति का सार है।

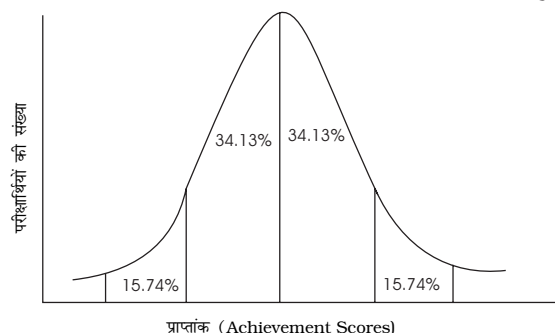
परिवर्तनीयता का मापन

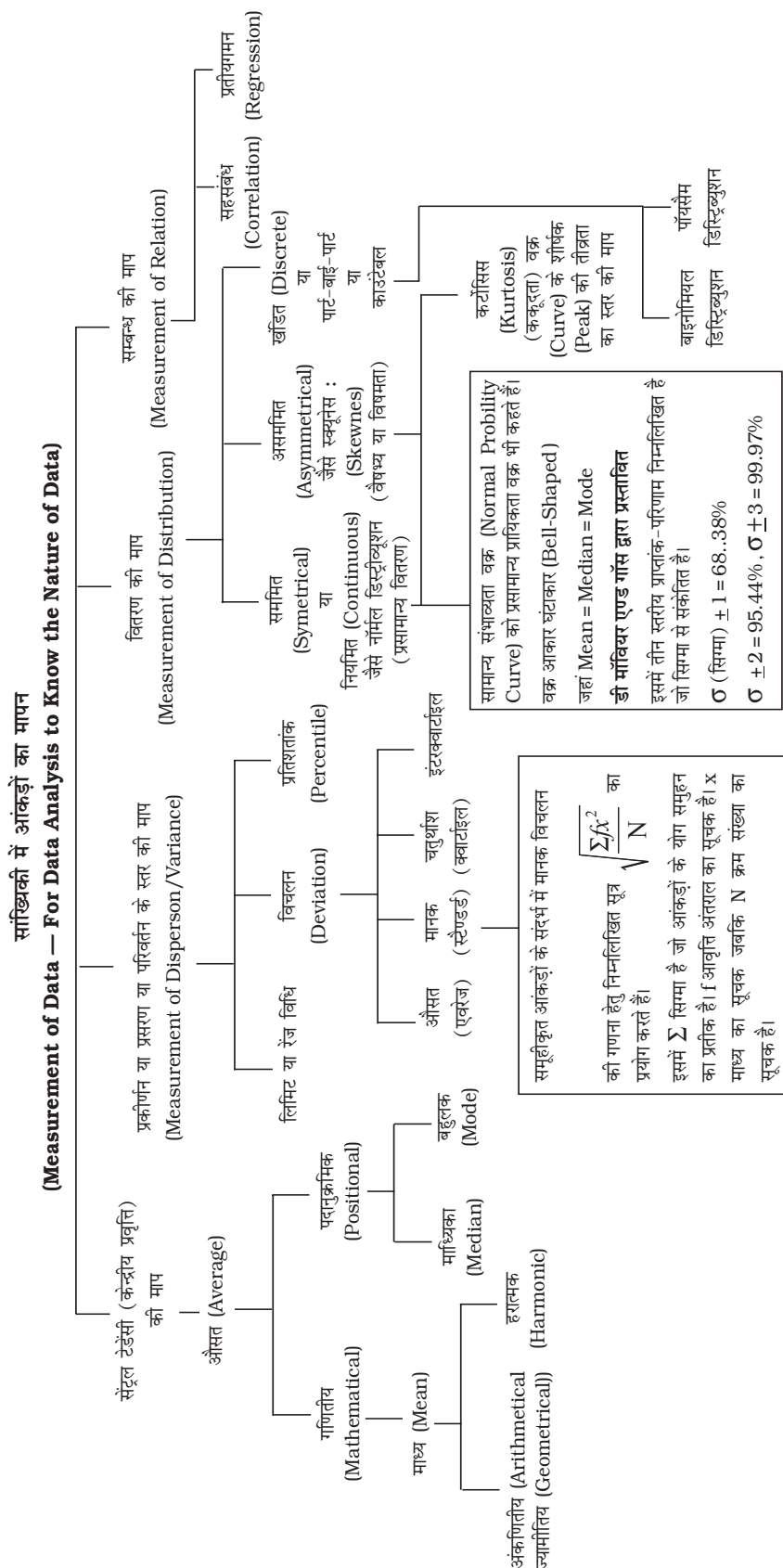
परिसर-यह उच्चतम और न्यूनतम अंकों के अंतराल के रूप में परिभाषित है।

● परिसर का कब प्रयोग किया जाता है : जब तथ्य बहुत अधिक अव्यवस्थित हों

● जब अधिकतम अंकों के ज्ञान की आवश्यकता हो।

सामान्य वितरण : एक उदाहरण (नॉर्मल डिस्ट्रिब्यूशन)





अब अगर उपरोक्त चित्र में दर्शाये गये प्राप्तांकों के वितरण प्रतिशत पर हम नजर डालें तो हम पायेंगे कि इस वक्र का मध्य क्षेत्र काफी बड़ा है। इसमें $34.13 + 34.13 = 68.26$ बालकों के प्राप्तांक हैं। इससे यह प्रदर्शित होता है कि 1,000 बालकों के प्राप्तांकों का जो मध्यमान (Average or Mean) है वही प्राप्तांक 68.26% बालकों यानी 10,000 में 6826 बालकों का है। दूसरे शब्दों में 10,000 में से 6826 बालक ऐसे हैं जिन्हें औसत या सामान्य उपलब्धि वाले बालक कहा जाता है। सामान्यता से हट कर दोनों तरफ 15.74% बालक आते हैं।

यानी 15.74% प्रतिशत (10,000 में से 1574) बालक ऐसे हैं जिनके प्राप्तांक औसत से अधिक हैं तथा इतने ही बालक ऐसे हैं जिनके प्राप्तांक औसत से कम हैं। इस तरह $6826 + 1574 + 1574 = 9974$ यानी 10,000 में से कुछ (नगण्य) को छोड़कर सभी की गिनती इस वितरण वक्र में हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि बहुतायत तो ऐसे ही बालकों की होती है जिनके प्राप्तांक समूह के मध्यमान प्राप्तांक (Mean Score) के नजदीक ही होते हैं। सामान्य से बहुत कम या बहुत अधिक अंक प्राप्त करने वालों की संख्या इनकी तलना में बहुत ही कम होती है।

चतुर्थांश विचलन

यह मापदंड का आधा हिस्सा है जो आवृत्ति वितरण में 75 से 25 प्रतिशतांकों के अंतर पर स्थित होता है।

25 प्रतिशतांश-पहला चतुर्थांश Q_1

75 प्रतिशतांश-तीसरा चतुर्थांश Q_3

L = अंतराल की वह स्पष्ट न्यूनतम सीमा जिसमें चतुर्थांश पड़ता है

i = अंतराल की लंबाई

cf = अंतराल तक निश्चित चतुर्थांश के अंतर्गत संचयी आवृत्ति

f_q = चतुर्थांश में पड़ने वाले अंतराल सम्बद्ध आवृत्ति

N = जनसंख्या/सैंपल की संख्या

Q का प्रयोग कब किया जाता है?

जब माध्यिका प्राथमिक रूप में है और जब प्राप्तांक अव्यवस्थित या Extreme हैं जो कि मानक विचलन को प्रभावित, करते हैं।

मानक विचलन (Standard Deviation)

यह परिवर्तनीयता का सर्वाधिक स्थायी सूचकांक है और परीक्षणों और अध्ययन करने में प्रयोग होता है।

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum x^2}{N}} \quad \sigma = \text{मानक विचलन} \quad N = \text{जनसंख्या}$$

$\sum x^2$ = माध्य जनसंख्या के वर्ग (Square) का जोड़

कब प्रयोग किया जाता है?

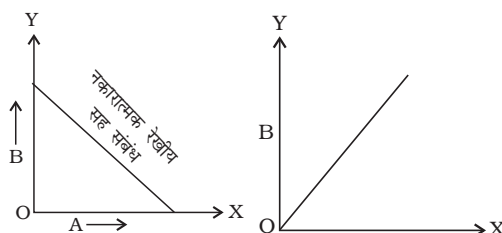
- (1) जब ज्यादा स्थायित्व Stability देखा जाता है
- (2) जब विचलन की परिवर्तनीयता (Variability) पर अत्यंत प्रभाव पड़ता है।
- (3) जब सहसंबंध गुणांक का आकलन किया जाता है।

वक्रीय सह संबंध

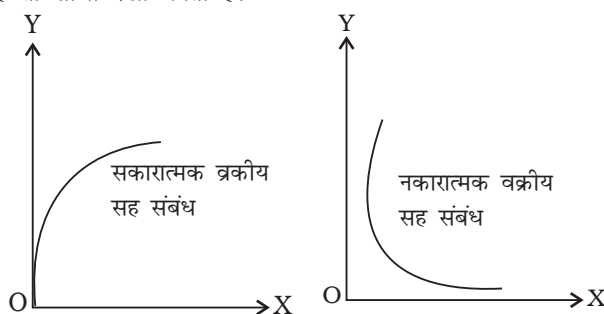
यह चरों के बीच में नकारात्मक संबंध है जिसमें एक चरों में कमी आती है और अन्यो में वृद्धि।

$$\text{चर } A = 1 \propto \frac{1}{\text{चर } B}$$

गुणात्मक सह संबंध रेखीय संबंध



जब कागज पर दो चरों के बीच में सह-संबंध दिखाया जाता है तो सीधी रेखा बनती है।



जब दो चरों के बीच में सह संबंध दिखाया जाता है तो यह रेखीय न होकर वक्रीय होता है इसे वक्र रेखीय सह संबंध कहा जाता है।

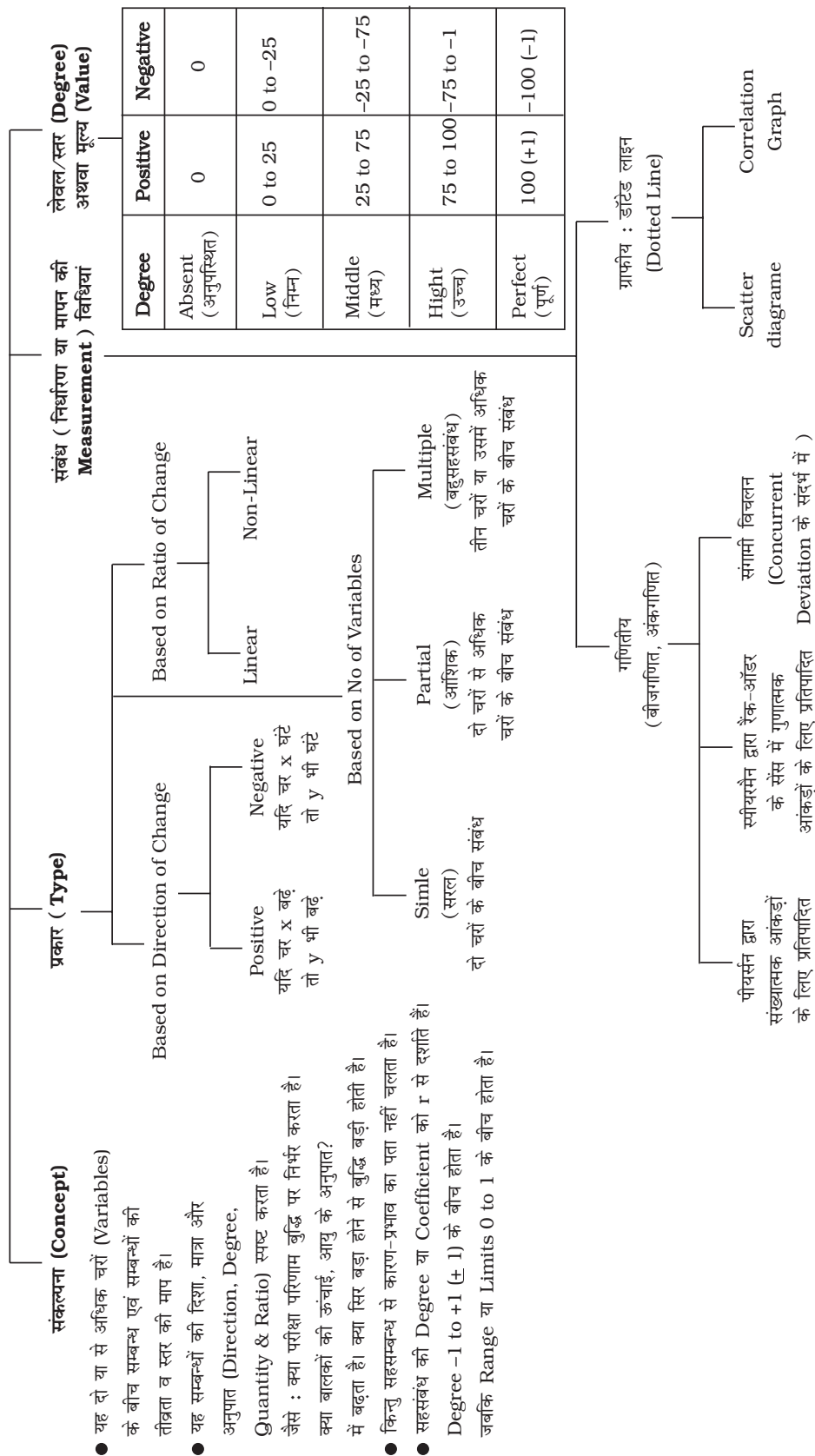
सहसंबंध का गुणांक

इसे अनिवार्य अनुपात के रूप में देखा जा सकता है जो कि उस सीमा को व्यक्त करता है जो किसी चर में बदलाव आने से संबंधित है या एक स्वतंत्र मद पर दूसरे चर में परिवर्तन दिखाता है।

सहसंबंध की महत्ता

- (1) पारस्परिक संबंध के कारण ही हमें प्रतिभाओं, क्षमताओं और तुलनात्मक अध्ययनों के बारे में पता चलता है जोकि मनोविज्ञान के विषय में महत्वपूर्ण है। यह शिक्षकों द्वारा विभिन्न कारणों के चलते प्रयोग करना महत्वपूर्ण माना जाता है, इसका प्रभाव विद्यार्थियों और उनके जीवन पर पड़ता है। इसे उनमें विरोध समाप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- (2) यह व्यवसायिक निर्देश है जोकि पारस्परिक संबंध तथ्यों के रूप में भी प्रयुक्त होता है।
- (3) व्यवहार का अनुमान, अंतःसंबंध के गुणक के रूप में प्रयोग होने वाला महत्वपूर्ण कारक है। इसे विश्वनीयता और वैधता को जाँचने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- (5) इसे शिक्षक आत्ममूल्यांकन या विद्यार्थियों का मूल्यांकन करने के लिए भी प्रयोग करते हैं। जैसे किस तकनीक से कक्षा में अधिक सीखा जा सकता है।

सहसम्बन्ध (Correlation)



बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- अनुसंधान समस्या के महत्व का मूल्यांकन करने में एक महत्वपूर्ण सामाजिक विचार है:
 - समस्या में शोधकर्ता का वास्तविक हित
 - शिक्षाविदों, माता-पिता और सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि के लिए निष्कर्षों का व्यावहारिक मूल्य
 - आवश्यक कौशल क्षमता और शोधकर्ता के ज्ञान की पृष्ठभूमि
 - शोधकर्ताओं द्वारा विश्वसनीय और मान्य डेटा प्राप्त करने की संभावना
- शैक्षिक अनुसंधान का उद्देश्य क्या है?
 - बड़ी समस्याओं की पहचान करना, जिन्हें हल करने की जरूरत हैं।
 - शिक्षा की प्रक्रिया के अंतर्गत आने वाले नए तथ्यों और सिद्धान्तों की खोज करना।
 - शिक्षा के उद्देश्य की पहचान करना।
 - विद्यार्थियों की जरूरत को ध्यान में रखकर उन मूल्यों की पहचान करना।
- प्रक्षेपी तकनीक का उपयोग किसे मापने के लिए किया जाता है?
 - व्यक्तिगत आत्म-वास्तविकता की जरूरत के लिए
 - व्यक्तिगत आविष्कारशील रुचियों के लिए
 - व्यक्ति द्वारा दमित प्रमुख भावनाओं, संघर्ष, जो आमतौर पर अचेतन मस्तिष्क में जमा हो जाती है।
 - व्यक्तिगत नीति
- डेटा का अर्थ क्या है?
 - तथ्य
 - सत्य
 - अवलोकन
 - अंक प्राप्ति
- निम्नलिखित में से कौन-सा अन्य तीनों से संबंधित नहीं है?
 - तार्किक वैधता
 - निर्माण वैधता
 - नमूना वैधता
 - पाठ्यक्रम वैधता
- शैक्षिक अनुसंधान में कौन-सी तकनीक का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है?
 - प्रश्नावली
 - साक्षात्कार
 - अवलोकन
 - समाजमिति
- वैन डलेन के अनुसार वर्णनात्मक अनुसंधान में क्या शामिल है?
 - सर्वे अध्ययन
 - अंतर-संबंध अध्ययन
 - विकास संबंधी अध्ययन
 - उपर्युक्त सभी
- आंतरिक-बाह्य आलोचनाओं की अवधारणाओं को किस संबंध में जोड़ा गया है?
 - अनुसंधान के प्रयोगात्मक डिजाइन की वैधता में
 - वर्णनात्मक अनुसंधान में
 - ऐतिहासिक अनुसंधान में
 - साहित्यिक अनुसंधान में
- निम्न में से कौन-सा गैर-पैरामीट्रिक सांख्यिकीय परीक्षणों का लाभ नहीं है?
 - जब आंकड़े रैंकों या श्रेणियों के रूप में होते हैं तब उनका उपयोग किया जा सकता है।
 - उन परिस्थितियों में उपयोग किया जा सकता है जहाँ पैरामीट्रिक परीक्षण लागू होते हैं।
 - वे जनसंख्या वितरण के आकार के बावजूद सटीक संभावनाओं को स्पष्ट करते हैं।
 - वे पैरामीट्रिक परीक्षणों से कम शक्तिशाली हैं।
- शैक्षिक अनुसंधान में किस प्रकार के सांख्यिकीय आंकड़े उपयोग किए जाते हैं?
 - वर्णनात्मक सांख्यिकीय विश्लेषण
 - अनुमानित सांख्यिकीय विश्लेषण
 - दोनों
 - इनमें से कोई नहीं
- जब आमने-सामने वाली स्थिति में उत्तरदाताओं को प्रश्न प्रस्तुत किया जाता है, और विषयों के बजाय साक्षात्कारकर्ता प्रश्न (query) को भरता है, इसे कहा जाता है :
 - सूची
 - प्रश्नावली
 - अनुसूची
 - टेस्ट
- एक आकलन है यदि एक ही छात्र के साथ समान परिणाम हर बार प्राप्त करता है।
 - वैध
 - अमान्य
 - विश्वसनीय
 - अविश्वसनीय
- एक मूल्यांकन है जो माप के लिए क्या उपाय करने है कि माप करता है?
 - वैध
 - अमान्य
 - विश्वसनीय
 - अविश्वसनीय
- शिक्षा में अनुसंधान के महत्व को अंतर्निहित करने का कारण नहीं है?
 - यह ज्ञान की पुष्टि, परीक्षण और मान्य करने का एक उपकरण है।
 - यह नया ज्ञान के निर्माण का एक शक्तिशाली साधन है।
 - इसका व्यवहार विज्ञान के केन्द्र में स्थानांतरण हो गया है।
 - यह शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली कई समस्याओं को जवाब प्रदान करता है।

15. माध्य विचलन किसका प्रकार है?
 (1) परिवर्तन का (2) सहसंबंध का
 (3) केन्द्रीय प्रवृत्ति का (4) वितरण का
16. प्राथमिक डेटा की विश्वसनीयता क्या है?
 (1) माध्यमिक डेटा की तुलना में हमेशा अधिक विश्वसनीय
 (2) माध्यमिक डेटा की तुलना में कम विश्वसनीय
 (3) डेटा का एकत्रण कितने ध्यान से किया गया है, इस पर निर्भर करता है।
 (4) डेटा एकत्रण करने वाली एजेंसी पर निर्भर करता है।
17. निम्न में से कौन-सा स्थितीय औसत है?
 (1) अंकगणितीय माध्य
 (2) बहुलक
 (3) ज्यामितीय माध्य
 (4) हार्मोनिक माध्य
18. निम्नलिखित में से कौन-सा सबसे अस्थिर औसत है?
 (1) माध्यिका
 (2) अंकगणितीय माध्य
 (3) बहुलक
 (4) ज्यामितीय माध्य
19. जब कोई शोधकर्ता एक प्रयोग करता है तो वह यह सुनिश्चित करना चाहता है कि नियंत्रण और प्रयोग समूहों के बीच कोई मतभेद होने के कारण न हो।
 (1) परिकल्पना
 (2) प्रयोगात्मक हेरफेर
 (3) विषयों के बीच अंतर
 (4) परिचालित परिभाषा
20. उच्चतम स्कोर में से सबसे न्यूनतम स्कोर घटाकर, शोधकर्ता यह निर्धारित करने में सक्षम होता है—
 (1) माध्यिका स्कोर (2) बहुलक
 (3) स्कोर की रेंज (4) मानक विचलन
21. शोध में अधिकांश नौसिखिये (Beginners) पीड़ित हैं—
 (1) अंधेपन की समस्या से
 (2) अधिकांश समस्याओं से
 (3) प्रशिक्षण की कमी की समस्या से
 (4) इनमें से कोई नहीं
22. एक शोध परिकल्पना आमतौर पर शून्य परिकल्पना में परिवर्तित हो जाती है,
 (1) यह सुरक्षित होता है।
 (2) इसका सांख्यिकीय रूप से परीक्षण नहीं किया जा सकता है।
 (3) यह एक सामान्य कथन है।
 (4) यह एक अस्पष्ट कथन है।
23. निम्नलिखित में से कौन-सी शोध प्रक्रिया की विशेषता नहीं है?
 (1) अनुभवजन्य दृष्टिकोण
 (2) व्यवस्थित प्रयास
 (3) अनियंत्रित चर
 (4) गंभीर विश्लेषण
24. निम्नलिखित में से कौन-सा डिस्पर्सन की माप नहीं है?
 (1) रेंज (2) बहुलक
 (3) माध्य विचलन (4) मानक विचलन
25. स्कूल कॉम्प्लेक्स की अवधारणा का कार्यान्वयन सर्वप्रथम किया गया था—
 (1) उत्तर प्रदेश में (2) मध्य प्रदेश में
 (3) बिहार में (4) राजस्थान में

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(2)	2.	(4)	3.	(3)	4.	(1)	5.	(3)
6.	(3)	7.	(4)	8.	(1)	9.	(3)	10.	(2)
11.	(3)	12.	(3)	13.	(1)	14.	(3)	15.	(1)
16.	(3)	17.	(1)	18.	(3)	19.	(2)	20.	(3)
21.	(2)	22.	(2)	23.	(3)	24.	(2)	25.	(4)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (2) कोई अनुसंधान तभी महत्वपूर्ण होता है, जब वह सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए व्यावहारिक तौर पर मदद करें जिससे समाज में समस्याओं का निराकरण कर सके। इसमें अनुसंधान के द्वारा ही शिक्षा के उद्देश्यों को सामाजिक मापदण्ड के अनुसार बदला जाता है।
2. (4) शैक्षिक अनुसंधान में विद्यार्थियों की जरूरत को ध्यान में रखकर आगे की नीतियाँ बनाई जाती हैं। जिससे छात्र और शिक्षक सम्बन्धी समस्याओं तथा छात्रों में परस्पर आदान-प्रदान की समस्याओं के लिए प्रयुक्त करते हैं।
3. (3) प्रक्षेपी तकनीक व्यक्तित्व मापने की तकनीक होती है जिसमें व्यक्ति की दमित भावनाओं को विभिन्न-विभिन्न माध्यम से बाहर निकाला जाता है। इसमें व्यक्ति के जो अचेतन मस्तिष्क में ही होती है। वह विभिन्न माध्यम से आना शुरू हो जाती है।
4. (1) Data जो बहुवचन में प्रयोग होते हैं, तथ्यों के लिए प्रयोग होते हैं। ऊँचाई, भार, उपलब्धि एवं बुद्धि, परीक्षाओं आदि से सम्बद्ध डेटा होता है।
5. (3) इनमें से अन्य तीन किसी न किसी तरह एक दूसरे से संबंधित हैं। तार्किक वैधता में तर्क सम्बन्धी वैधता आ जाती है। पाठ्यक्रम में पाठ्यक्रम से संबंधी वैधता आ जाती है। वैधता से अभिप्राय ऐसी विश्वसनीयता है, जो सार्वभौम रूप से अकाट्य है।

6. (3) शैक्षिक अनुसंधान में जो सबसे ज्यादा उपयोग किया जाता है वह है अवलोकन इसमें विद्यार्थी का हमेशा अवलोकन किया जाता है चाहे वह कक्षा में हो या कक्षा से बाहर हो। वांछनीय व्यवहार के लिए विद्यार्थी को अवलोकन के माध्यम से ही सुधारा जाता है।
7. (4) वैन डलेन के अनुसार वर्णनात्मक अनुसंधान का अर्थ है सभी तथ्यों को इकट्ठा करके तथ्य को आकलन करके उनके विकास संबंधी अध्ययन करके उसे शैक्षिक तकनीक में लगाया जाता है।
8. (1) अनुसंधान के प्रयोगात्मक डिजाइन की वैधता में आंतरिक एवं बाहरी आलोचनाओं की वैधता पर जोर दिया है। इसमें जो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं उनके ही आधार पर अवधारणा को प्रस्तुत किया जाता है।
9. (3) गैर-पैरामीट्रिक सांख्यिकीय का अर्थ का जो आँकड़ों को प्रस्तुत किया जाता है जो श्रेणियों या क्रम में प्रदर्शित होते हैं। जिनमें किसी तथ्य के आधार किसी उपयोगी निष्कर्षों पर पहुँचा जा सके न कि सटीक संभावनाओं पर।
10. (2) शैक्षिक अनुसंधान में तो वर्णनात्मक तथा अनुमानित दोनों ही प्रकार के सांख्यिकी की प्रस्तुत किया जाता है। सांख्यिकी अध्ययन का वह विषय है, जो आंकिक तथ्यों के वैज्ञानिक ढंग से संग्रह, प्रस्तुतीकरण, विशेषण एवं व्याख्या करने में सहायक सिद्ध होता है।
11. (3) इस स्थिति में एक पेपर पर साक्षात्कार से संबंधी प्रश्नों को लिखा जाता है जिससे उत्तरदाता अपनी स्वेच्छा से उन प्रश्नों के उत्तरों को उसमें भरता है। इसी के आधार उत्तरदाता के विषय में पता किया जाता है।
12. (3) कोई भी परीक्षण तब ही विश्वसनीय होगा जबकि उस परीक्षण का एक ही समूह पर बार-बार प्रयोग करने पर भी वह एक से ही निष्कर्ष प्रदान करें।
13. (1) वैधता से तात्पर्य है कि परीक्षण से उस उद्देश्य की पूर्ति हो जिस हेतु उसका निर्माण किया गया हो। यदि वह परीक्षण केवल उस स्तर के छात्रों के केवल उस विषय के ज्ञान को मापता हो जिसके लिए उस परीक्षण का निर्माण किया गया है तो परीक्षण वैध होगा।
14. (3) इसका व्यवहार विज्ञान के केन्द्र में स्थानांतरित हो गया, इसके अलावा बाकी सारे विकल्प सही है। शिक्षा अनुसंधान शिक्षा में हो रहे परिवर्तन को दर्शाता है, जो सामाजिक परिपेक्ष्य में एक महत्वपूर्ण पहलू है।
15. (1) विचलन या परिवर्तनशीलता के द्वारा हम किन्हीं दो या अधिक समूहों के प्राप्तांकों को अच्छी तरह तुलना कर सकते हैं। सांख्यिकी में इसका बहुत कम प्रयोग किया जाता है। मध्यमान (माध्य) विचलन में दिए हुए समूह प्राप्तांकों के विचलन का ध्यान रखा जाता है।
16. (3) डेटा जो तथ्यों के रूप में प्रयोग होते हैं, यह दो तरह से प्राप्त किए जा सकते हैं: (1) वर्गीकृत तथा अवर्गीकृत। प्राथमिक डेटा की विश्वसनीयता डेटा को एकत्र किए गए समय कितनी सावधानी बरती गई है, इस पर निर्भर करती है।
17. (1) बहुत विश्वसनीय और सटीक केन्द्रीय मान माध्य का होता है। इसमें अधिक स्थिरता पाई जाती है। इसमें सबसे अधिक विश्वसनीय उत्तर होता है। इसमें प्रमाणिक विचलन, सहसंबंध गुणांक, सांख्यिकी इस्तेमाल होते हैं।
18. (3) जब हमें शीघ्रता से केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक सामान्य अनुमान लगाने की आवश्यकता हो तो बहुलक मान ज्ञान करना चाहिए जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो सबसे ज्यादा अस्थिर औसत इसी का होता है।
19. (2) जब कोई शोधकर्ता शोध करता है, तो वह प्रयोगात्मक हेरफेर होने के कारण यह सुनिश्चित करना चाहता है कि शोध में किसी भी प्रकार का कोई हेरफेर न हो जिसमें शोधकर्ता का शोध वास्तविकता बना रहे।
20. (3) परिसर (Range) जानने के लिए उच्चतम स्कोर में से सबसे न्यूनतम स्कोर घटाकर निकाला जाता है।
परिसर = अधिकतम सीमा - न्यूनतम सीमा
उदाहरण : 10, 15, 12, 13, 9, 8
 $15 - 8 = 7$ (परिसर)
21. (2) शोध से अभिप्राय है जिसका उद्देश्य मौलिक-समस्या का अध्ययन करके नवीन तथ्यों की खोज करना, जीवन सत्य की स्थापना करना ताकि नवीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन हो सके।
22. (2) अगर शेष परिकल्पना शून्य हो तो सांख्यिकीय रूप से परीक्षण शून्य होता है, क्योंकि सांख्यिकी में शून्य परिकल्पना वह तथ्यगत समानता है जिससे कोई निष्कर्ष नहीं निकलता। बिना परिकल्पना के शोध नहीं किया जा सकता है।
23. (3) अनियंत्रित चर शोध प्रक्रिया को अव्यवस्थित करते हैं। अतः यह शोध की विशेषता से परे है।
24. (2) डिस्पर्सन या विचलन की सहायता से हम किन्हीं दो या दो से अधिक समूहों के प्राप्तांकों को अच्छी तरह तुलना कर सकते हैं। इसमें रेंज, माध्य, मानक विचलन तो निकाला जा सकता है, लेकिन विचलन में बहुलक नहीं निकाला जा सकता है।
25. (4) 1964 में स्थापित कोठारी आयोग की रिपोर्ट में स्कूल कॉम्प्लेक्स की अवधारणा प्रस्तुत की गई। यह अवधारणा इस विचार पर आधारित थी कि उच्च व उच्चतर विद्यालय में बेहतर पुस्तकालय व प्रयोगशाला की सुविधा, कुशल व प्रशिक्षित शिक्षक, बड़े खेल का मैदान व खेल सामग्री होती है।

□□□

समूह गतिविज्ञान (Group Dynamics)

समूह गतिकी (Group dynamics) से तात्पर्य किसी समूह में विशेषकर छोटे समूह में होने वाले विभिन्न तरह की अन्तःक्रियाओं (interactions), जैसे शक्ति (power), शक्ति परिवर्तन (power shift), नेतृत्व (leadership), समूह निर्माण (group formation), एक समूह का दूसरे समूह के प्रति प्रतिक्रिया, लगाव (cohesiveness) तथा निर्णय-प्रक्रिया (decision making) से होता है।

समूह (Group) एक सामाजिक इकाई (social unit) होता है जिसमें कई व्यक्ति होते हैं जो एक-दूसरे से एक निश्चित पद तथा भूमिका के आधार पर संबंधित होते हैं और जिसके ऐसे अपने मूल्य या मानदंड, होते हैं जो वैयक्तिक सदस्य के व्यवहारों का नियंत्रण करते हैं या कम-से-कम समूह के लिए होने वाले परिणामों से संबंधित व्यवहारों को नियंत्रण करते हैं।

समूह के कई प्रकार होते हैं।

- जैसे प्राथमिक समूह तथा गौण-समूह (primary group and secondary group)
- अंतःसमूह तथा बाह्य समूह (in-group and out-group)
- सदस्यता समूह तथा संदर्भ समूह (membership group and reference group) तथा
- औपचारिक समूह तथा अनौपचारिक समूह (formal group and informal group)।
- प्राथमिक समूह तथा गौण समूह का वर्गीकरण कूली (Cooley, 1909) द्वारा किया गया। प्राथमिक समूह वैसे समूह को कहा जाता है जिसके सदस्यों के बीच आमने-सामने या प्रत्यक्ष (face-to-face) तथा घनिष्ठ संबंध होता है। इसमें सदस्यों की संख्या कम होती है, अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व का गुण होता है तथा इनकी सामान्य सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है। जैसे-परिवार
- गौण समूह प्राथमिक समूह के विपरीत होता है। इसका आकार बड़ा होता है, इसके सदस्यों के संबंध औपचारिक होते हैं, इनमें अप्रत्यक्ष संबंध होते हैं, इसका निर्माण विशिष्ट उद्देश्य के लिए ही होता है तथा इसके सदस्यों के उत्तरदायित्व सीमित होते हैं। सरकारी दफ्तर, फैक्ट्री तथा विश्वविद्यालय के कर्मचारियों का समूह गौण समूह का उदाहरण है।

● अंतःसमूह (in-group) तथा बाह्य समूह (out-group) भी समूह के दो लोकप्रिय प्रकार हैं। अंतः समूह वैसे समूह को कहा जाता है जिनके सदस्यों में आपस में सहयोग, निष्ठा एवं आदर का भाव अधिक होता है। ऐसे समूह के सदस्य अपने समूह के मानकों

(norms), मूल्यों तथा रीति-रिवाजों को अधिक मान्यता देकर उसके अनुसार व्यवहार करते हैं। ऐसे समूह के सदस्यों में एकता काफ़ी होती है तथा उनका मनोबल (moral) काफ़ी ऊँचा होता है। अंतः समूह के सदस्यों में चूँकि “हमलोग एक हैं” की भावना अधिक होती है, इसलिए इसे ‘हम-समूह’ (we-group) भी कहा जाता है।

लिण्डग्रेन (Lindgren, 1969) के अनुसार आधुनिक समय में अंतःसमूह (in-group) का प्रयोग एक विशेष अर्थ में होता है। इस विशेष अर्थ में अंतःसमूह से तात्पर्य वैसे समूहों से होता है जिनको समाज में अधिक अधिकार तथा सत्ता (power) होता है। ऐसे समूह के सदस्य दूसरे समूह के सदस्यों को अपने से नीचा देखते हैं तथा उसे अपने समूह में भरसक शामिल नहीं होने देते हैं। यदि शामिल होने देते भी हैं तो उसे एक तुच्छ स्थान ही देते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी अंतःसमूह जैसे परिवार में दूसरे समूह के सदस्य को नौकर के रूप में रखा जा सकता है।

● बाह्य समूह से तात्पर्य वैसे समूह से होता है जिसके सदस्यों के प्रति सहानुभूति, निष्ठा आदि का भाव व्यक्ति में नहीं होता है। ऐसे समूह के प्रति व्यक्ति में किसी प्रकार का अहम् निहित (ego-involvement) नहीं होता है। संक्षेप में, कहा जा सकता है कि अपने समूह के अलावा जो और समूह होते हैं, उसे हम बाह्य समूह कहते हैं। इसलिए इसे ‘वे-समूह’ (they-group) भी कहा जाता है। मुसलमानों के लिए मुस्लिम समुदाय अंतःसमूह है तो हिन्दू समुदाय बाह्य समूह।

● औपचारिक समूह (formal group) वैसे समूह को कहा जाता है जिनका निर्माण किसी विशेष नियम तथा विधान के अनुसार होता है तथा साथ-ही-साथ समूह के प्रत्येक सदस्य की एक निश्चित भूमिका (role) निर्धारित होती है। औद्योगिक संगठन, लोक सेवा आयोग तथा विश्वविद्यालय औपचारिक समूह के उदाहरण हैं।

अनौपचारिक समूह औपचारिक समूह से भिन्न होता है। अनौपचारिक समूह वैसे समूह को कहा जाता है जिसके निर्माण के लिए कोई निश्चित नियम तथा कानून नहीं होते हैं तथा जिनके सदस्यों में भाईचारे एवं घनिष्ठता का एक स्वाभाविक संबंध पाया जाता है। अतः ऐसे समूह के सदस्यों में ‘हमलोग की भावना’ (we-feeling) अधिक होता है। प्राथमिक समूह को अनौपचारिक होने की संभावना काफ़ी अधिक होती है।

● सदस्यता समूह (membership group) वह समूह होता है जिसका व्यक्ति स्वीकृत सदस्य होता है। जैसे, परिवार सदस्यता समूह का एक उदाहरण है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार का एक अधिकृत एवं स्वीकृत सदस्य होता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ समूह ऐसे होते हैं जिसकी सदस्यता प्राप्त करने की तीव्र इच्छा या आकांक्षा व्यक्ति में होती है। ऐसे समूह की सदस्यता व्यक्ति को

प्राप्त हो या न हो, उसका प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार पर काफी पड़ता है। ऐसे समूह को संदर्भ समूह (reference group), कहा जाता है। अगर भारतीय जनता पार्टी का कोई सदस्य कांग्रेस (ई) पार्टी के आदर्शों द्वारा काफी अधिक प्रभावित होता है तो उसके लिए कांग्रेस (ई) पार्टी एक संदर्भ समूह का उदाहरण होगा चाहे उसे कांग्रेस (ई) पार्टी की सदस्यता मिल पाती हो या नहीं मिल पाती हो।

समूह व्यवहार के आयाम

समूहों (groups) का वैयक्तिक व्यवहार (individual behaviour) पर काफी प्रभाव पड़ता है जिसके छह मुख्य आयाम हैं—सामाजिक सरलीकरण (social facilitation), जनसंकुलन (crowding), सामाजिक श्रमावनयन (social loafing), निर्व्यक्तिकरण (deindividuation), समूह ध्रुवीकरण (group polarization) तथा समूह सोच (group think)।

● कुछ अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि अन्य लोगों की उपस्थिति चाहे निष्क्रिय हो या सक्रिय हो, से निष्पादन में उत्कृष्टता आती है क्योंकि कार्य को करने में मदद मिलती है। इस घटना को सामाजिक सरलीकरण (Social Facilitation) कहा जाता है। हालांकि कुछ शोध ऐसे किये गये हैं जिनमें यह देखा गया है कि दूसरों की उपस्थिति से निष्पादन में वृद्धि न होकर कमी होती है। इसे सामाजिक अवरोध (social inhibition) की संज्ञा दी गयी है।

● इन दोनों तरह के परस्पर विरोधी तथ्यों की व्याख्या करने के लिए जायंस (Zajonc, 1965), ने एक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है जिसे सामाजिक सरलीकरण का प्रणोद सिद्धान्त (Drive theory of social facilitation) कहा जाता है जिसके अनुसार जब प्राणी में उत्तेजना का स्तर ऊँचा होता है तो अच्छे ढंग से सीखी गयी अनुक्रियाओं का उत्तम निष्पादन होता है परन्तु ठीक ढंग से नहीं सीखे गये अनुक्रियाओं का निष्पादन खराब होता है।

● जनसंकुलन (Crowding) से तात्पर्य एक परिस्थिति में उत्पन्न मनोवैज्ञानिक या आत्मगत कारकों से होता है—किसी विशेष स्थान में व्यक्तियों की दी गइ संख्याओं को व्यक्ति किस तरह प्रत्यक्ष करता है। परिस्थिति में दो-चार व्यक्ति के होने पर भी जनसंकुलन का अनुभव व्यक्ति कर सकता है या फिर एक हजार व्यक्ति के बीच में भी होने पर जनसंकुलन का अनुभव नहीं कर सकता है। सचमुच में जनसंकुलन एक तरह का नकारात्मक मनोवैज्ञानिक अनुक्रिया (negative psychological response) है जिससे व्यक्ति का कार्य निष्पादन; अन्तर्वैयक्तिक संबंध तथा स्वास्थ्य बुरी तरह प्रभावित होता है। जनसंकुलन जनसंख्या घनत्व से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित हो भी सकता है या नहीं भी हो सकता है।

● जब व्यक्ति किसी कार्य को एक समूह में होकर करता है, तो वह अपने ऊपर उतनी जवाबदेही लेकर कार्य नहीं करता है जितना उसी कार्य को वह अकेले करता है। इस घटना को लताने (Latane, 1981) ने सामाजिक श्रमावनयन (Social loafing) कहा है। सामान्यतः यह देखा गया है कि सामाजिक श्रमावनयन का परिणाम यह होता है कि निष्पादन (Performance) खराब हो जाता है।

● निर्व्यक्तिकता (deindividuation) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति अपनी वैयक्तिकता (individuation) खो देता है क्योंकि स्वजागरुकता (self-awareness) लगभग समाप्त हो जाती है और वह अपने आप को समूह में पूर्णतः समावेशित कर लेता है। इस प्रक्रिया पर फेस्टिंगर, पेपीटोन तथा न्यूकम्ब (Festinger, Pepitone & Newcomb, 1952), ने काफी शोध किया है।

निर्व्यक्तिकता को प्रयोगशाला में अध्ययन का सबसे पहला सफल प्रयास जिम्बार्डो (Zimbardo, 1969), द्वारा किया गया। इन्होंने कू क्ल्यूक्स क्लान (Ku Klux Klan) रैली के मॉडल के आधार पर प्रयोग किया। इस रैली की विशेषता यह थी कि इसके सभी सदस्य सिर से पैर तक लम्बा सफेद चोंगा (robe) पहनकर प्रदर्शन करते हैं। इसमें किसी व्यक्ति विशेष की पहचान संभव नहीं हो पाती है क्योंकि इनके चेहरे पर सफेद जामा लगा होता है। अपने इस प्रयोग के परिणाम के आधार पर जिम्बार्डो ने यह निश्चित किया कि निर्व्यक्तिकता कुछ विशेष सामाजिक अवस्थाओं जैसे गुमनामी का भाव तथा उत्तरदायित्व का विसरण (diffusion of responsibility) से उत्पन्न होता है।

● समूह ध्रुवीकरण (Group polarization) के संप्रत्यय का प्रतिपादन मोसकोविस्की (Moscovici) एवं फ्रेजर (Fraser) द्वारा किया गया। समूह ध्रुवीकरण से तात्पर्य इस बात से होता है कि समूह परिचर्चा (group discussion) से समूह के सदस्यों की आरंभिक मनोवृत्ति या झुकाव पहले से और भी अधिक मजबूत हो जाती है। स्पष्टतः तब समूह ध्रुवीकरण प्राक्कल्पना इस बात की ओर इशारा करता है कि समूह के सदस्यों की मनोवृत्ति या झुकाव समूह परिचर्चा से और भी अधिक मजबूत हो जाती है।

● समूहसोच (group think) द्वारा भी व्यक्ति का व्यवहार काफी प्रभावित होता पाया गया है। समूह सोच एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें समूह के लोग अपने वास्तविक विचार को इस कारण अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं क्योंकि समूह की लगाव-जुड़ाव (cohesiveness) बनाये रखने के ख्याल से इसे कहीं अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है। इस क्षेत्र में जेनिस (Janis, 1972) द्वारा किया गया योगदान काफी महत्वपूर्ण रहा है। समूह सोच के निम्नांकित आठ विशेषताएँ या लक्षण बतलाये गए हैं—

- अदोषपूर्णता का भ्रम (illusion of invulnerability)
- युक्तिकीकरण (rationalization)
- समूह की नैतिकता में अटूट विश्वास, विरोधियों के प्रति रूढ़िबद्ध या घिसा-पिटा विचार
- अनुरूपता या अनुपालन से संबद्ध दबाव, आत्म-सेंसर कार्य (self-censorship)
- सर्वसम्मति का भ्रम (illusion of unanimity) तथा मनरक्षण (mindguards)।

सामाजिक प्रभाव (Social Influence) से तात्पर्य किसी व्यक्ति के विश्वासों, मनोवृत्तियों, अभिप्रेरकों आदि में वैसे परिवर्तन से होता है जिसे किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों ने उत्पन्न किया है। इस तरह का प्रभाव साभिप्राय (intentional) हो सकता है या गैर इरादतन (unintentional) भी हो सकता है। सामाजिक प्रभाव तीन तरह के व्यवहारों द्वारा प्रतिबिम्बित होता है—समरूपता या अनुरूपता (conformity),

अनुपालन (Compliance) तथा आज्ञापालन (obedience) सामाजिक प्रभाव धनात्मक भी हो सकता है या ऋणात्मक (negative) भी। धनात्मक सामाजिक प्रभाव में प्रभावक जिस तरह का प्रभाव दूसरे व्यक्ति में उत्पन्न करना चाहता है, करता है। ऋणात्मक सामाजिक प्रभाव में प्रभावक द्वारा किये गये प्रयत्नों के विपरीत व्यवहार व्यक्ति करता है। सामाजिक प्रभाव की एक विशेषता यह है कि इसका स्वरूप सामाजिक शक्ति के स्रोतों या आधानों द्वारा निर्धारित होता है।

अनुरूपता (Conformity)

यह एक ऐसा व्यवहार है जिसके सहारे व्यक्ति समूह दबाव के सामने झुक जाता है हालाँकि उसकी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ दूसरे ढंग से विचार करना चाहती है। अनुरूपता के सहारे व्यक्ति के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों का नियंत्रण सामाजिक मूल्यों तथा सामाजिक मानकों के अनुकूल होता है। इस क्षति में शेरिफ (Sherif, 1948), ऐश (Asch 1951) तथा क्रचफिल्ड (Crutchfield, 1955) द्वारा महत्वपूर्ण अध्ययन किये गये हैं। व्यक्ति क्यों अनुरूपता दिखलाता है, इसके लिए दो प्रक्रियाओं का उल्लेख किया गया है—आदर्शात्मक प्रभाव (normative influence) तथा सूचनात्मक प्रभाव (informational effect)।

आदर्शात्मक प्रभाव में व्यक्ति दूसरों की अनुशांसा, पसंदगी एवं दूसरों द्वारा स्वीकार किया जाना चाहता है जबकि सूचनात्मक प्रभाव में व्यक्ति सही होना चाहता है तथा उसकी इच्छा यह होती है कि अधिक-से-अधिक सही एवं उत्तम ढंग से वह परिस्थिति में व्यवहार करे।

जब व्यक्ति किसी स्पष्ट परिस्थिति में भी अन्य व्यक्तियों या समूह के व्यवहारों को या निर्णयों को बिना संकोच के स्वीकार कर लेता है, तो इसे ऐश प्रभाव (Asch effect) कहा जाता है।

आज्ञापालन (Obedience)

एक व्यक्ति दूसरे को किसी आज्ञा पालन करने का आदेश देता है। मंत्री द्वारा विभागीय सचिव को आदेश देना आज्ञापालन का उदाहरण है। इस क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण अध्ययन मिलग्राम (Milgram, 1963, 1974) द्वारा किया गया। मिलग्राम, सोलोमोन ऐश (Solomon Asch) के छात्र तथा प्रसिद्ध समाज मनोवैज्ञानिक फिलिप जिम्बार्डो (Philip Zimbardo) के स्कूल के सहपाठी (classfellow) थे।

नेतृत्व की संकल्पना एवं प्रकार (Leadership : Concept & Types)

नेतृत्व (leadership) वह व्यवहार होता है जो समूह के अन्य व्यक्तियों के व्यवहार को उससे कही अधिक प्रभावित करता है जितना कि उन सभी व्यक्तियों का व्यवहार नेता को प्रभावित करता है। लिपिट एवं ह्वाइट (Lippitt & White, 1939) ने कर्ट लेविन (Kurt Lewin) के निर्देश में एक अध्ययन किया जिसके परिणामस्वरूप नेतृत्व के तीन प्रमुख प्रकार बतलाये गए—

- सत्तावादी नेतृत्व (Authoritarian leadership), प्रजातांत्रिक नेतृत्व (democratic leadership) तथा
- अहस्तक्षेपी नेतृत्व (Laissez faire or abdicratic leadership)।

सत्तावादी नेता अपने समूह में निरपेक्ष अधिकार या सत्ता (absolute power) अधिक रखता है। समूह लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में किये जाने वाली क्रियाओं के क्रम को वह स्वयं जानता है। वह सदस्यों की क्रियाओं एवं उनके संबंधों का निर्धारण स्वयं ही करता है। ऐसा नेता जानबूझकर समूह की संरचना इस ढंग का बनाकर रखता है कि सदस्य आपस में कुछ विचार-विमर्श न कर सकें तथा समूह के भीतर आने वाले तथा समूह से बाहर जाने वाले सभी तरह का सुधार उसी के माध्यम से हो। ऐसे समूह की समाजमितीय संरचना (sociometric structure) एक तारा (star-shaped) के आकार का होता है।

प्रजातांत्रिक नेतृत्व (Democratic leadership) में नेता सत्तावादी नेता के ठीक विपरीत होता है। वह समूह लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए बनाये जाने वाले नीतियों एवं योजनाओं का निर्धारण करने के लिए सभी प्रमुख सदस्यों के साथ विचार-विमर्श कर एक निश्चित निर्णय पर पहुँचता है। वह समूह के कार्यों को सभी सदस्यों में बाँट देता है तथा सदस्यों की भलाई के लिए हर संभव प्रयत्न करता है। इस तरह से ऐसे नेतृत्व में अधिकारों एवं सत्ता का विकेन्द्रीकरण (decentralization) होता है। ऐसे नेतृत्व वाले समूह के समाजमितीय संरचना जाल (net) के समान होता है जिससे यह स्पष्ट है कि किसी भी समस्या पर सदस्य इस तरह के नेतृत्व में आपस में बातचीत या विचार-विमर्श खुलकर करते हैं।

लैसेज फेयर तंत्र (laissez faire system) एक ऐसा विचार है जिसे पहली बार 18वीं शताब्दी में फ्रांस में प्रतिपादित किया गया और इसमें इस तथ्य पर बल डाला गया कि सरकार को अपने अर्थव्यवस्था (economy) पर नियंत्रण या प्रभाव नहीं डालना चाहिए। इसका उपयोग समाज मनोविज्ञान में मनोवैज्ञानिकों द्वारा एक ऐसे नेतृत्व तंत्र (leadership system) के लिए उपयोग किया जाता है जिनका संचालन न्यूनतम नियंत्रण से होता है। एक वास्तविक लैसेज फेयर तंत्र में नेता द्वारा कोई भी नियंत्रण यहाँ तक कि न कोई निर्देश (guidance) और न ही सहायता अपने अधीनस्थों को दिया जाता है।

नेतृत्व की प्रभावशीलता (effectiveness) की व्याख्या करने के लिए कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है जिनमें प्रमुख हैं—

- शीलगुण सिद्धान्त (trait theory),
- परिस्थितिजन्य सिद्धान्त (situational theory) तथा
- प्रासंगिकता सिद्धान्त (contingency-theory)।

1. **शीलगुण सिद्धान्त** इस विश्वास पर आधारित होता है कि नेता जन्मजात होता है, बनाया नहीं जाता है (**leaders are born and not made**)। इस सिद्धान्त के अनुसार महान मानव या नेता leader) में कुछ ऐसे खास-खास जन्मजात शीलगुण (traits) होते हैं जिसके कारण वह अपने अनुयायियों से अधिक प्रभावकारी (effective) होता है तथा समूह का नेता बन जाता है। इन शीलगुणों के सेट के कारण नेता हर परिस्थिति में प्रभावकारी होता है।

इन शीलगुणों में बुद्धि, आत्म-विश्वास, शब्दाडम्बर, प्रभुत्व, समायोजन, सामाजिकता, परिश्रमशीलता, कल्पनाशक्ति, दूरदर्शिता, चमत्कार आदि प्रधान हैं। इस सिद्धान्त को महा-मानव सिद्धान्त (Great man theory) भी कहा जाता है।

2. **परिस्थितिजन्य सिद्धान्त (situational theory)** के अनुसार नेतृत्व उद्भव में व्यक्ति के शीलगुणों का हाथ नहीं बल्कि समूह परिस्थिति की विशेषताओं का हाथ होता है। समूह का नेता कौन होगा, इसका निर्धारण व्यक्तित्व के शीलगुणों द्वारा नहीं बल्कि समूह की वर्तमान परिस्थिति का समय द्वारा होता है।

इसलिए इस सिद्धान्त को समय सिद्धान्त (Time theory) या जिटगिस्ट सिद्धान्त (Zeitgeist theory) भी कहा जाता है। स्पष्टतः तब इस सिद्धान्त के अनुसार नेता जन्मजात नहीं होते हैं बल्कि परिस्थितियों में ढलकर उत्पन्न होते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार एक परिस्थिति में एक व्यक्ति नेता हो सकता है लेकिन दूसरी परिस्थिति में वह नेता नहीं भी हो सकता है क्योंकि परिस्थिति की विशेषताओं न कि शीलगुणों द्वारा नेता पद किसी व्यक्ति विशेष को मिलता है।

3. **प्रासंगिकता सिद्धान्त (Contingency theory)** का संबंध नेता के आविर्भाव (emergence) से कम तथा उसकी प्रभावशीलता से अधिक है। इस सिद्धान्त के अनुसार एक प्रभावकारी नेता वही व्यक्ति हो सकता है जिसमें नेतृत्व के उपर्युक्त शीलगुण हो तथा साथ-ही-साथ जो परिस्थिति के माँगों को पूरा करे। स्पष्ट है कि प्रासंगिकता सिद्धान्त के नेतृत्व की व्याख्या शीलगुणों एवं परिस्थितियों के पारस्परिक क्रिया या प्रभाव द्वारा होता है।

अतः इसे पारस्परिक क्रियात्मक सिद्धान्त (interactional theory) भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत तीन प्रमुख सिद्धान्तों को रखा गया है—फाईडलर का प्रासंगिकता सिद्धान्त (Fiedler's contingency theory), पथ लक्ष्य सिद्धान्त (Path goal theory) तथा भ्रूण एवं येटन का सिद्धान्त (Vroom & Yetton's theory)।

फाईडलर का सिद्धान्त

फाईडलर (Fiedler, 1964) ने नेतृत्व के प्रासंगिकता सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार नेतृत्व जहाँ तक समूह की परिस्थिति का संबंध है, तीन ऐसे कारक हैं जो नेता के लिए परिस्थिति की अनुकूलता का निर्धारण करते हैं—नेता-सदस्य संबंध (leader-member relation), कार्य संरचना (task structure) तथा नेता का अधिकार स्तर (power position of the leader)। जहाँ तक नेतृत्व प्रकार का संबंध है, फाईडलर ने दो प्रकार के नेतृत्व शैली को महत्वपूर्ण बतलाया है—कार्य-उन्मुखी नेतृत्व (task-oriented leadership) तथा समूह-उन्मुखी नेतृत्व (group-oriented leadership)। इन्हें सदस्यों के साथ संबंध एवं हित का कोई ख्याल नहीं रहता है। समूह-उन्मुखी नेता अपने सदस्यों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखने का प्रयत्न अधिक करते हैं तथा सदस्यों के हितों का अधिक ख्याल करते हुए उनके कार्य करते हैं।

फाईडलर ने एक प्रश्नावली का निर्माण किया जिसके उत्तरों के आधार पर वे निश्चित कर पाते थे कि अमुक नेता कार्य-उन्मुखी है या समूह-उन्मुखी। इस प्रश्नावली को उन्होंने लीस्ट प्रेफर्ड को-वर्कर स्केल (least preferred co-worker scale : LPC scale) कहा है। इस मापनी में 8-बिन्दु (8-points) होते हैं। प्रत्येक विशेषण के युग्म पर आठ बिन्दुओं में से प्रयोज्य द्वारा चिह्नित बिन्दु ही वास्तविक प्राप्तांक होते हैं। यदि कुल प्राप्तांक उच्च होता है अर्थात्, उच्च एल पी सी होता है, तो समझा जाता है कि व्यक्ति संबंध-उन्मुखी नेता (relationship-oriented leader) है और यदि कुल प्राप्तांक कम होता है अर्थात् निम्न एल पी सी होता है, तो समझा जाता है कि व्यक्ति कार्य-उन्मुखी नेता (task-oriented leader) है।

फाईडलर के सिद्धान्त के अनुसार कार्य-उन्मुखी नेता अधिक अनुकूल तथा अधिक प्रतिकूल दोनों ही परिस्थिति में अधिक प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। परन्तु जब परिस्थिति की अनुकूलता बीचोबीच की होती है तो वैसी परिस्थिति में कार्य-उन्मुखी नेता उतना प्रभावकारी सिद्ध नहीं होता है।

जब परिस्थिति की अनुकूलता बीचोबीच की होती है तो समूह उन्मुखी नेता अधिक प्रभावकारी होते हैं। परन्तु परिस्थिति की अनुकूलता कम या अधिक होने पर इसकी प्रभावशीलता जाती रहती है।

पथ-लक्ष्य सिद्धान्त (Path-goal theory) मार्टिन इवान्स (Martin Evans, 1970) तथा रॉबर्ट हाउस एवं उनके सहयोगिता (Robert House et.al. 1971) द्वारा किये गये शोधों एवं प्रयोगों से प्रतिपादि है। इस सिद्धान्त का सार यह है कि नेता का व्यवहार एवं प्रासंगिकता कारकों (contingency factors) दोनों ही मिलकर अनुयायियों के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों को ठीक ढंग से प्रभावित करते हैं तथा नेतृत्व की प्रभावशीलता को बढ़ाते हैं। इस सिद्धान्त में नेतृत्व व्यवहार के मुख्य चार प्रकार होते हैं—

- (i) दिशासूचक नेतृत्व (Directive leadership)
- (ii) सहायक नेतृत्व (Assistive leadership)
- (iii) सहभागी नेतृत्व (Co-opertive leadership) तथा
- (iv) उपलब्धि-उन्मुखी नेतृत्व (Achievement Oriented leadership)।

व्रूम एवं येटॉन का सिद्धान्त (Vroom & Yetton theory)

इस सिद्धान्त में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कार्य वातावरण की कुछ विशेषताएँ होती हैं जिनसे भी यह निर्धारित होती है कि किस तरह के नेतृत्व से सदस्यों में अधिक संतुष्टि होगी। इस सिद्धान्त के अनुसार सबसे प्रभावकारी नेतृत्व प्रकार वह होता है जो अपने अनुयायियों के कार्य वातावरण की कमी को अपना मार्गदर्शन एवं समर्थन देकर पूरा करता है। अगर समूह में सदस्य किसी अस्पष्ट कार्य को कर रहे हैं।

सामाजिक शक्ति (Social Power)

सामाजिक शक्ति (Social power) दूसरों को प्रभावित करने की क्षमता या अन्तःशक्ति (potential) है तथा दूसरों से प्रभावित होने की रोकने की क्षमता होती है। सामाजिक शक्ति की प्रक्रिया मूलतः एक विनिमय प्रक्रिया (exchange process) होती है जिसमें दो व्यक्ति एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।

फ्रेंच एवं रैवेन (French & Raven, 1979), रैवेन (Raven, 1974) तथा रैवेन एवं रूबिन (Raven & Rubin, 1983) द्वारा किये गए शोधों के आधार पर सामाजिक शक्ति के छह प्रकार बतलाये गए हैं—

- (i) पुरस्कार शक्ति (reward power),
- (ii) अवपीड़क शक्ति (coercive power),
- (iii) वैध शक्ति (legitimate power),
- (iv) संदर्भ शक्ति (referent power) विशेषज्ञ शक्ति (expert power) तथा
- (v) सूचनात्मक शक्ति (informational power)।

पुरस्कार शक्ति (reward power) में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करने के लिए उसे पुरस्कार देता है। जैसे, एक पदाधिकारी किरानी को इसलिए प्रभावित कर सकने में समर्थ होता है क्योंकि पदाधिकारी किरानी के वेतन में वृद्धि या उसके पदोन्नति आदि की अनुशंसा कर सकता है। पुरस्कार के आधार पर व्यक्तियों की मनोवृत्तियों का आन्तरिकरण (internalisation) चौँक नहीं हो पाता है, अतः उससे प्रभावित होने वाले व्यवहार में स्थायित्व नहीं रह जाता है।

अवपीड़क शक्ति (coercive power) में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को इसलिए प्रभावित करता है क्योंकि पहले व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति को दंड देने का अधिकार होता है। जैसे, किरानी द्वारा यह समझना कि उसका बॉस (boss) उसे निलंबित कर सकता है या पदोन्नति (demotion) कर सकता है। बॉस का किरानी पर एक अवपीड़क शक्ति का उदाहरण होगा।

वैध शक्ति (legitimate power) में व्यक्ति में कुछ सामाजिक शक्ति उनके औपचारिक श्रेणी (formal position) या उनकी विशेष सामाजिक भूमिका (social role) के कारण होती है। इस तरह की शक्ति प्रायः 'चाहिए' आदि वाक्यांशों द्वारा व्यक्त किया जाता है। जैसे कभी-कभी बच्चों को यह कहा जाता है कि उन्हें अपने माता-पिता की बातों पर ध्यान देना चाहिए।

संदर्भ शक्ति (referent power) आत्मीकरण (identification) की प्रक्रिया पर आधारित है। सचमुच में व्यक्ति का पुरस्कार शक्ति (reward power) ही धीरे-धीरे संदर्भ शक्ति में बदल जाता है। जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए काफी आकर्षक (attractive) होता है तो दूसरा व्यक्ति अपने आप ही अपनी मनोवृत्ति तथा व्यवहार बहुत कुछ पहले व्यक्ति जो उनके लिए आकर्षक है, के अनुरूप कर लेता है। इस तरह की आकर्षकता जितनी ही अधिक होती है, "पहले व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर संदर्भ शक्ति अधिक होती है।

सामाजिक विनिमय व अन्तःक्रिया (Social Exchange)

सामाजिक विनिमय (social exchange) से तात्पर्य समाज में व्यक्ति द्वारा एक-दूसरे के साथ किये गये अन्तःक्रियाओं (interactions) से होता है। प्रायः सामाजिक अन्तःक्रियाएँ दो ढंग से की जाती हैं—सहकारिता (co-operation) के ढंग से तथा प्रतिस्पर्द्धा (competition) के ढंग से। समाज मनोवैज्ञानिकों ने सहकारिता तथा प्रतिस्पर्द्धा का प्रयोगात्मक अध्ययन प्रयोगशाला में किया है और इसके लिए इसमें विभिन्न प्रकार के खेल सम्मिलित किये गए हैं। इन खेलों में सामान्य जीवन में घटित होने वाली विभिन्न तरह की अनुक्रियाओं को अनुकूलित (simulate) किया गया है। इन खेलों में ट्रक चालन का खेल (Trucking game) तथा कैदी के संकट कपा खेल (Play of prisoner's dilemma) प्रमुख हैं।

सामाजिक विनिमय सिद्धान्त जिसका प्रतिपादन थीबॉट तथा केली (Thibaut & Kelley, 1959, 1978) द्वारा किया गया, के अनुसार मानव अंतः क्रियाओं को सह-सम्मिलित आर्थिक क्रिया (joint economic activity) के रूप में देखा जाता है। अंतःक्रिया में प्रत्येक व्यक्ति यह देखता है कि उसे क्या लागत (cost) या पुरस्कार (reward) मिल रहा है। अगर परिणाम अनुकूल होता है अर्थात् लागत से पुरस्कार ज्यादा होता है, व्यक्ति अंतःक्रिया जारी रखता है। परन्तु यदि परिणाम प्रतिकूल हुआ तो वह अंतःक्रिया बन्द कर देता है।

सामाजिक श्रमावनयन (social loafing) से तात्पर्य यह होता है कि जब व्यक्ति समूह में होता है तो ह्रासित मॉनिटरिंग (reduced monitoring) के कारण कार्य में वह कम-से-कम प्रयास करने की प्रवृत्ति (tendency) दिखलाता है। इससे समूह का निष्पादन कम जाता है।

स्वचालित प्रभाव (autokinetic effect) एक ऐसा भ्रम (illusion) है जिसमें स्थिर रोशनी (stationary light) घूमता प्रतीत होता है। शेरीफ (Sherif) ने इस प्रविधि का उपयोग समूह में मानक (norms) के अंतरण (transmission) के अध्ययन की एक विधि के रूप में किया था। अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि यह सामाजिक प्रभाव (social influence) से काफी प्रभावित होता है क्योंकि इसमें अस्पष्टता होती है।

समूह के सदस्यों की सामाजिक तुलना (social comparison) द्वारा उत्पन्न परिस्थिति के बारे में प्रत्यक्षणों एवं विश्वासों की सर्वसम्मति को सामाजिक वास्तविकता (social reality) कहा जाता है।

समुदाय, समाज, समाजीकरण और शिक्षा से संबद्ध मुद्दे

समाज-प्रारम्भ से ही शिक्षा एवं समाज में नजदीकी सम्बन्ध रहा है। एक तरफ शिक्षा समाज में व्यक्ति को विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं के निष्पादन के लिए तैयार करता है जबकि दूसरी तरफ समाज और संस्कृति समाजीकरण की प्रणाली और शिक्षा की प्रकृति सदस्यों को बताना निश्चित करती है। सरल से जटिल समाज का अपनी युवा पीढ़ी को शिक्षित करने की अपनी प्रणाली है तथा तदनुसार संस्थायें विकसित हुई हैं। संस्कृति और ज्ञान को संचारित करने में शिक्षा समाज में बहुत से सामाजिक कार्यों को वहन करती है। यह मानव को पृथ्वी पर अन्य जीवों की अपेक्षा अलग करता है। अतः समाज और शिक्षा का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित, पूरक एवं अमूर्त-मूर्तवत् है।

समुदाय (Community)—एक निश्चित क्षेत्र में एक साथ रहने वाले लोगों का समूह जो एक सामान्य संस्कृति साझा करते हैं तथा जिनकी एक समझ होती है जिसे हम अनुभव करते हैं, समुदाय कहलाता है। यह गाँव, शहर, जनजाति या राष्ट्र का एक नाम है।

मैकाइवर एवं पेज ने “समुदाय को प्रयोगों एवं प्रक्रियाओं की प्रणाली, अधिकार एवं आपसी साधन की प्रणाली, बहुत से समूहों एवं विभागों की प्रणाली, मानवीय व्यवहार एवं स्वतंत्रताओं की एक प्रणाली के रूप में परिभाषित किया है।”

● समुदाय के विकास के लिए शिक्षा का उद्देश्य होता है। वह है। समाजीकरण करना तथा समुदाय को समाज के अनुसार ढालना इसका माध्यम शिक्षा है। जो विद्यार्थी समान के अनुसार बदलने में सहायक है। समाज हो रहे बदलाव को देख सके।

समाजीकरण (Socialization)—यह एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समुदाय एवं परिवार अपने सदस्यों विशेषतः युवा सदस्यों को शिक्षित करते हैं। जहाँ समाज के सदस्य सामाजिक नियमों, मूल्यों को मन में बैठते हैं। सामाजिक नियम एवं मूल्य कई बार तार्किक-वैधानिक कानून एवं नीति से असंगत होते हैं। यद्यपि यह बदलते समय के साथ बदलता है।

● समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य समूह का कार्यकर्ता बनता है, उसके आदर्शों के अनुसार कार्य करता है, उसके रीति-रिवाजों के अनुसार व्यवहार करता है एवं अपने आपको सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार ढाल लेता है।

● समाजीकरण का मुख्य उद्देश्य यही होता है कि जिस प्रकार का समाज है, उसी वातावरण वातावरण के अनुकूल अपने आपको ढाले। जिस प्रकार के रीति-रिवाज हो उसी समाज के मानक मापदण्ड का पालन करें।

● जेम्स और पराउट ने बचपन की नई सामाजिकता की मुख्य विशेषताओं को चिह्नित किया है। उन्होंने सुझाव दिया है कि बचपन की अपरिपक्वता जीवन का एक जैविकीय तथ्य है।

● जेम्स व पराउट के प्रतिमान की अन्य विशेषताएँ हैं :
● बच्चों के संबंध व सभ्यता अपने आप में अध्ययन के योग्य हैं।
● बचपन के अध्ययन में समाज में बचपन के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया के साथ संबंधता शामिल है।

● बच्चों की बुनियादी आवश्यकताएँ प्यार, सुरक्षा, प्रशंसा, पहचान जिम्मेदारी व नए अनुभव निहित हैं। आवश्यकताओं के स्तर में सुरक्षा से संबंधित जरूरतें प्रथम स्तर पर हैं।

● बालक इस समाज में प्रवेश के समय अर्द्धसामाजिक होते हैं। वे पूर्णतः दूसरों पर निर्भर होते हैं। वे धीरे-धीरे सीखते हैं कि वे कौन हैं व उनसे क्या अपेक्षा की जाती है।

● कस्टम का अर्थ होता है रीति-रिवाज। यह समाज, धर्म, त्यौहार से संबंधित है जो सामाजिक नियंत्रण को बनाए रखने में सबसे महत्वपूर्ण होती है। इसी के कारण समाज की नींव जो अलग-अलग होने के बावजूद भी एक धागे में बंधी रहती है।

● धार्मिक संरचना का कार्य है, आने वाली पीढ़ी का समाजीकरण करना जिसमें वह समाज से जुड़े रीति-रिवाज को अपना सके तथा उसके अनुसार अपने आप को अनुकूल बना सके।

● शैक्षणिक संरचना भी बदले हुए समाज के कारण होती है। जिस प्रकार का समाज होता है, उसी प्रकार की शिक्षा व्यवस्था होती है। जिससे आने वाली पीढ़ी समाज के अनुसार अपने आपको ढाल सके।

● सामाजिक समानता से अभिप्राय है, समाज में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक के रूप में कोई भेदभाव नहीं होगा यह हमारे राज्य के नीति निर्देशक तत्व जो भाग-IV अनुच्छेद 36-51 में है। अनुच्छेद-38 में लोगों के सामाजिक कल्याण बात कही गयी है, जो समाजवाद पर आधारित है।

● समाज की मूलभूत इकाई परिवार ही है जो समाज को नींव प्रदान करती है। बच्चे का पहला शिक्षाघर परिवार होता है। जो बच्चे को अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से प्रदान करती है। बच्चे के सामाजिकरण में परिवार का महत्वपूर्ण योगदान होती है।

● अरस्तु के अनुसार मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। लेकिन मनुष्य स्वभाव से ही राजनीतिक प्राणी है, जो कुल और ग्रामों के एक ऐसे का निर्माण करता है, समूह जिसका लक्ष्य पूर्ण और आत्मनिर्भर जीवन की प्राप्ति है। जो बिना राजनीतिक संस्था के संभव नहीं है।

● परिवार एक छोटी सी सामाजिक संस्था है जिसमें रहते हुए बालक माता-पिता के अतिरिक्त भाई बहनों तथा अन्य संबंधियों के सम्पर्क में आता है। बालक परिवार के प्रत्येक सदस्य से प्रत्येक क्षण

प्रभावित होता है तथा अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है। परिवार एक लघु स्कूल की भूमिका निभाता है।

● सामाजिक विकास से अभिप्राय सामाजिक सम्बन्धों में परिपक्वता प्राप्त करने से है। जन्म के समय शिशु का व्यवहार सामाजिकता से काफी दूर होता है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है। परिवार आस-पड़ोस उसकी प्राथमिक सामाजिकता बन जाता है और विद्यालय उसकी द्वितीयक सामाजिकता।

● औपचारिक शिक्षा—औपचारिक शिक्षा एक व्यवस्थित, संगठित शिक्षा मॉडल के अनुकूल होता है, एक दिए गए कानून एवं नियमों के समुच्चय के अनुसार संरचित एवं प्रशासित होता है। उद्देश्यों विषय-वस्तु और शिक्षण विधि के क्रम में एक थोड़ा दृढ़ पाठ्यचर्या प्रस्तुत करता है। यह हमारे विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा सामान्यतः अपनाई गई शिक्षा प्रक्रिया के अनुकूल होता है।

● गैर औपचारिक शिक्षा—औपचारिक शिक्षा से भिन्न, गैर औपचारिक शिक्षा के लक्षण सुपरिभाषित नहीं होते हैं। विद्यार्थियों की उपस्थिति अपेक्षित नहीं होती हैं, विद्यार्थियों एवं शिक्षक के बीच सम्पर्क को घटाता है तथा अधिकांश गतिविधियाँ संस्थान से बाहर होती हैं जैसे घर आधारित पाठ या अन्य नियत कार्य। यह नमनीय पाठ्यचर्या तथा शिक्षण विधि से सम्पन्न होता है, विद्यार्थियों की जरूरतों एवं रुचियों को उनकी गति एवं अपेक्षा के लिए अपनाने में सक्षम होता है। मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली अपने लक्षणों के कारण गैर औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में आता है।

● किसी समाज की शिक्षा का इसके सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों से सीधा सह सम्बद्ध है शिक्षा की प्रक्रिया अपने सामाजिक संरचना, सामाजिक नियमों एवं मूल्य प्रणाली में विकसित होती है। विद्यमान सांस्कृतिक विषय-वस्तु को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचरित करने का मानव समाज का एक ऐसा ही सृजन है—विद्यालय (गुरुकुल या स्कूल)। इस प्रकार विद्यालय समाज का एक अंग है, शिक्षक, अधिगमकर्ता और अभिभावक बहुत अधिक इसी असमान एवं स्तरीकृत समाज से लिए जाते हैं। विद्यालयों को पृथकता में नहीं लिया जा सकता।

● परिवार, प्रत्येक समाज में सर्वाधिक आधारभूत इकाई है। यह पहला विद्यालय है जहाँ बच्चे अपना प्रारम्भिक अधिगम शुरू करते हैं। यह व्यक्ति एवं समाज के अधिकांश कार्यों, भूमिका को मातृक बन्धनों को नियंत्रित कर, पुनरुत्पादन को वैधानिक कर, युवाओं के लिए देखभाल, मानवीय व्यवहार नियंत्रित कर, उपयोग के लिए कम-से-कम एक आर्थिक इकाई के रूप में कार्य कर मुक्त करता है। यह अन्य संस्थाओं के साथ सम्बद्ध भूमिकाओं को भी मुक्त करता है जैसे—विवाह एवं सगोत्रता।

● असमानता एवं भिन्नता को शामिल करते हुए समाज की समस्याओं का समाधान कर शिक्षा समाज में एक सार्थक भूमिका निभाता है। शिक्षा के माध्यम से कोई भी ज्ञान अर्जित कर सकता है एवं अपनी आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति बदल सकता है। अतः शिक्षा के स्तर को बढ़ाकर व्यक्ति शक्ति अर्जित कर सकता है तथा

सशक्तिकरण की प्रक्रिया में भाग ले सकता है। यह नारी साक्षरता में बहुत सुस्पष्ट है तथा नारी सशक्तिकरण के लिए पहल करता है। इस प्रकार क्षेत्रीय विकास किसी क्षेत्र की शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक स्थिति पर बहुत अधिक निर्भर करता है।

● शिक्षा को सामान्यतः समाज के आधार के रूप में देखा जाता है जो आर्थिक समृद्धि, सामाजिक समृद्धि एवं राजनीतिक स्थायित्व लाता है। यह किसी समाज के विकास का एक मुख्य पहलू है तथा किसी क्षेत्र के समग्र विकास का सर्वाधिक सार्थक सूचक है। शिक्षा हमें ज्ञान देता है और ज्ञान ही शक्ति है। आज किसी व्यक्ति और समाज के विकास के स्तर का निर्धारण करने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण पहलू है। विश्व भर में यह स्वीकृत तथ्य है और इसे विश्व विकास रिपोर्ट, मानव विकास रिपोर्ट, सामाजिक विकास रिपोर्ट में देखा जा सकता है।

● देशी पाठ्य सामग्रियों को तैयार करने में समुदाय के सदस्यों और बच्चों को शामिल करना जरूरी है।

● शिक्षा की राष्ट्रीय नीति (1986) और कार्य योजना (1992) बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के लिए शिक्षा के सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य पर विचार करता है और उनके अन्तर्निहित क्षमताओं को खोजता है। शिक्षा के सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का उद्देश्य शिक्षकों और विद्यार्थियों को लोकगीत, लोक कहानी, पहेलियाँ, स्थानीय इतिहास, लोक खेल और समुदाय के मिथकों को संग्रहित करने के लिए प्रेरित करता है जिसमें बच्चे के सांस्कृतिक विकास और सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास के लिए समृद्ध अधिगम संभावनाएँ हैं और यह समुदाय में अनुभूतियों को अन्यो के साथ साझा कर स्व-अधिगम का एक साधन है।

● बच्चे के सांस्कृतिक विकास में समुदाय एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। स्थानीय संस्कृति का यदि सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाये तो यह अधिगम के अन्य क्षेत्र को प्रदर्शित करता है जो संस्थानात्मक ज्ञान का आधार हो सकता है। स्थानीय इतिहास, इसकी लोक परंपरायें, कला, शिल्प आदि की विशाल शैक्षिक संभावनायें हैं और जो शिक्षक द्वारा शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक आनंदपूर्ण बनाने में प्रयुक्त हो सकती हैं।

संस्कृति का अर्थ— संस्कृति मानवीय अभिव्यक्ति के अमूर्त फलक है। संस्कृति एक समूह के अन्तर्गत समान मानवजातीय रिक्त, भाषा, व्यवसाय, धर्म या भौगोलिक क्षेत्र को साझा करती हैं और ये घरेलू उत्पन्न पारम्परिक गतिविधियाँ समूह को वर्गीकृत एवं चिह्नित करती हैं। प्रत्येक समूह एक दूसरे के साथ या तो सामान्य रुचियों एवं उद्देश्यों से सम्बद्ध है चाहे शिक्षित या अशिक्षित, ग्रामीण या शहरी हो, जीवन कौशल जनित परम्पराओं का आकार धारण करता है।

दस कोर जीवन कौशल

1. स्व जागरुकता
2. तदनुभूति
3. विवेचनात्मक चिन्तन
4. सृजनात्मक चिन्तन
5. निर्णय निर्माण
6. समस्या समाधान
7. अन्तर्वैयक्तिक संबंध
8. प्रभावी संचार
9. तनाव से जूझना
10. संवेदनाओं से जूझना

अतः जीवन कौशल अनुकूल एवं सकारात्मक व्यवहार के लिए योग्यताएँ हैं जो व्यक्ति को दैनिक जीवन की जरूरतों और चुनौतियों का सामना करने में समर्थ बनाती है। जीवन कौशल वे व्यक्तिगत कौशल या योग्यताएँ हैं जो हम में से प्रत्येक को आगे बढ़ाती है और फिर जीवन की चुनौतियों का सामना करने के उद्देश्य से बढ़ाती है।

शैक्षिक स्थिति को समझने के लिए विद्यालय को समुदाय से अपेक्षित सूचनाएँ निम्नलिखित हैं—

- आयु समूह में अशिक्षितों की संख्या।
- अधिवासों की संख्या।
- प्राथमिक विद्यालयों की संख्या (1 किलोमीटर के अंदर) उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या (3 किलोमीटर के अंदर) माध्यमिक विद्यालयों की संख्या (5 किलोमीटर के अंदर)।
- विद्यालय जाने वाले आयु समूह वालों की संख्या (6-17 वर्ष)
- नामांकित बच्चे, अनामांकित बच्चे, विद्यालय छोड़ चुके (6-17) वर्ष के बच्चे।
- बच्चों की अधिगम उपलब्धियाँ।
- गाँव/वार्ड का नक्शा तैयार करने में निम्नलिखित सदस्य सहायता कर सकते हैं—
- ग्राम शिक्षा समिति/वार्ड शिक्षा समिति
- शिक्षा विभाग के प्रतिनिधि
- समुदाय के सदस्य
- नक्शा तैयार करने वाले दूसरे विशेषज्ञ।

विद्यालय व्यवस्था में शिक्षक की केन्द्रीय भूमिका होती है, इसलिए, शिक्षक का विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (NKC) ने अवलोकन किया

है कि शिक्षक विद्यालय व्यवस्था का एक मात्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक होते हैं।

समुदाय और शिक्षक के बीच एक सहजीवी सम्बन्ध स्थापित होता है। SSA तथा RTE ने SMC के निर्माण के द्वारा विद्यालय में समुदाय की भूमिका को बढ़ावा दिए जाने पर बल दिया है। विद्यालय विकास योजना का क्रियान्वयन SMC द्वारा होगा और एक शिक्षक को विद्यालय के विकास और अपने व्यावसायिक विकास के लिए समुदाय से घनिष्ठ सम्बन्ध बनाकर कार्य करना होगा।

विभिन्न स्तरों पर प्रेरित और योग्य शिक्षकों की अत्यधिक कमी का देश पहले ही सामना कर रहा है। एक शिक्षक को विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था की वृहत् रूपरेखा में समाज और समुदाय के अंदर होने वाले वृहत् सामाजिक, आर्थिक और राजनितिक परिवर्तनों को ध्यान में रखकर कार्य करना होता है।

भारत में विद्यालयों का कई प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है—

- शिक्षा के स्तर के अनुसार—प्राथमिक और माध्यमिक
- वित्तीय प्रावधानों के अनुसार—निजी; सरकारी सहायता प्राप्त और सरकारी
- निर्देश माध्यम के अनुसार—अंग्रेजी माध्यम या मातृभाषा आधारित

विविध प्रकार के विद्यालय होते हुए भी, शिक्षा के विशाल लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु शिक्षकों की एक टीम कार्यरत रहती है। विद्यालयी प्रणाली में शिक्षक की भूमिका केन्द्रीय होती है और, इसलिए, विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास पर इसका बहुत प्रभाव होता है। यह बात सभी शिक्षा समितियों और आयोगों द्वारा समय-समय पर बार-बार दोहराई जाती रही है।

नेतृत्व एवं प्रबंधन

John kotter (1992) के अनुसार “प्रबन्धन महत्वपूर्ण है किन्तु नेतृत्व अनिवार्य है।”

समन्वयकर्ता वे हैं जो अभिष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए नेता के साथ सहयोग या कार्य करते हैं—

Ken ogbonna (2011) के अनुसार—“प्रभावी नेतृत्व संगठनात्मक या सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आन्तरिक एवं बाह्य वातावरण के अन्तर्गत उपलब्ध संसाधनों को सफलतापूर्वक एकीकृत करने और उच्चतम सीमा तक बढ़ाने की योग्यता है।” यह परिभाषा तीन महत्वपूर्ण अंगों से जुड़ी है—सफलतापूर्वक एकीकृत करने तथा उपलब्ध संसाधनों को उच्चतम सीमा तक बढ़ाना, पर्यावरण एवं संगठनात्मक या सामाजिक लक्ष्यों।

प्रबन्धन	नेतृत्व
उद्देश्य लक्ष्यों एवं परिणामों को परिभाषित करना	उम्मीद, दृष्टि एवं मिशन को संप्रेषित करना
नीति एवं रणनीतियाँ तय करना	मूल्यों से सहमत-प्रेरणा से नेतृत्व
संरचना एवं सहायता प्रणाली प्रदान करना	एक अच्छा वातावरण सृजित करना
अनुसूचियों/पैमानों से सहमत होना	आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं को निश्चित रूप देना
संसाधनों की योजना, संगठन और मिलान करना	प्रोजेक्ट में लोगों को पूरी तरह लगाना
मानदण्ड एवं नियंत्रण स्थापित करना	एक उच्च नैतिकता बनाना एवं सृजित
सूचना एवं ज्ञान का प्रबन्ध करना	प्रतिभा को पहचानना, विकसित करना एवं उपयोग करना

एक शिक्षक नेता का निर्माण अधिगम और चिन्तन की एक जटिल प्रक्रिया है जो विद्यालय-समुदाय सम्बन्धों में समाजीकरण और एक नई भूमिका में कार्य को अंगीकृत करने की अपेक्षा करता है। विद्यालय नेताओं के कार्यों पर शोध करते हुए Leithwood और Duke ने नेतृत्व के कार्यों के रूप में निम्नलिखित पहलुओं को पहचाना है—

- **निर्देशात्मक**—(अपनी शैक्षिक क्षमताओं को सुधारना और एक तरीके से शिक्षक सहयोगियों के कार्य को प्रभावित करना जो विद्यार्थी की उपलब्धि को सुधारेगा।)
- **रूपान्तरात्मक**—(विद्यालय स्टाफ एवं अन्यो की क्षमताओं और वचनबद्धताओं को बढ़ाना।)
- **नैतिक**—(सही और गलत की धारणा के प्रति अपने आचरण से अन्यो को प्रभावित करना।)
- **सहभागिता**—(विद्यालय से सम्बद्ध शैक्षिक एवं समुदाय के सदस्यों को शामिल करना।)
- **आकस्मिक**—(परिस्थिति के अनुकूल अपने व्यवहार का अनुकूलन करना।)

प्रबन्धन वह प्रक्रिया है जिसमें सहयोगी समूह विद्यालय के लक्ष्यों की प्रति हेतु क्रियाओं को निर्देशित करता है। प्रबन्धन की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं—

- “औपचारिक रूप से संगठित समूहों को व्यक्तियों द्वारा तथा व्यक्तियों के साथ मिलकर कार्य पूर्ण करने की कला प्रबन्धन है।” (हरोल्ड कूज)
- “प्रबन्ध करने का अर्थ है— भविष्यवाणी करना, और नियोजना करना, संगठित करना, कमांड करना, समन्वयन तथा नियंत्रण करना है।” (हेनरी फेयोल)
- “प्रबन्धन व्यक्तियों के माध्यम से कार्य पूर्ण करने की कला है” (मेरी पार्कर फोलेट)

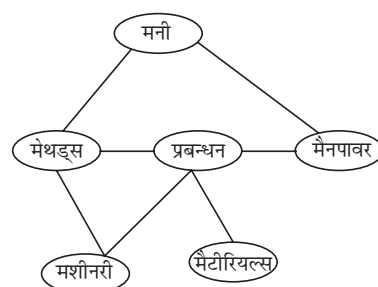
किसी संस्था के प्रबन्धन में कई संसाधनों (इनपुट) का प्रयोग प्रतिफल (आउटपुट) प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रक्रियाओं (प्रोसेसेज) द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिए विद्यालय प्रबन्धन में इनपुट हैं— इन्फ्रास्ट्रक्चर, सुविधाएँ, निधियाँ, शिक्षक, विद्यार्थी शिक्षण-अधिगम विधियाँ तथा सामग्री। विद्यार्थियों की पाठ्य तथा पाठ्य-सहगामी क्रियाओं में उपलब्धि, शिक्षकों का व्यावसायिक विकास आदि, आउटपुट है। शिक्षण-अधिगम क्रियाएँ अनुशासन, वातावरण तथा अन्य शैक्षिक कार्य विद्यालय-प्रक्रियाओं के अन्तर्गत आते हैं।

इनपुट में शामिल हैं: मैनपावर (पुरुष एवं महिला) सामग्री, मशीनरी, विधियाँ, धन। इनको प्रबन्धन के 5 M कहते हैं।

प्रबन्धन के पाँच एम : मनी, मैन पावर, मैथड, मैटीरियल, मशीनरी।

विभिन्न संसाधनों का दक्षतापूर्ण उपयोग प्रबन्धन की योग्यता तथा प्रकृति पर निर्भर करता है। संस्था के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों के दक्षतापूर्ण उपयोग, संचालन व समन्वयन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। यह भी सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संसाधन

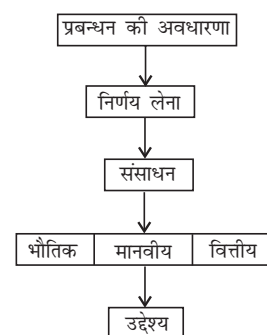
उपयुक्त मात्रा, गुणवत्ता तथा अल्प-व्यय में निरन्तर उपलब्ध रहें।



प्रबन्धन के पाँच एम

प्रबन्धन की प्रकृति—प्रबन्धन कार्यों को बेहतर तरीके से करता है तथा संसाधनों का पूर्णतः उपयोग करता है। प्रबन्धन की निम्न विशेषताएँ हैं—

- लक्ष्य उन्मुखी
- समेकित प्रक्रिया
- क्रिया-कलाप आधारित
- कला व विज्ञान दोनों
- अमूर्त
- सर्वव्याप्त
- सामाजिक प्रक्रिया
- सामूहिक गतिविधियाँ
- निरन्तर प्रक्रिया
- रचनात्मक



इसमें नियोजन, संगठन मानीटरिंग, नियंत्रण तथा मूल्यांकन निहित रहता है।

इसलिए मानव शक्ति को शिक्षित करना अब एक घेरलू कार्य नहीं है, परन्तु सरकार तथा स्थानीय निकायों की संलग्नता दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। यह केवल वांछनीय ही नहीं बल्कि आवश्यक भी है।

प्रकृति और क्षेत्र—सन् 1960 में शल्ट्ज ने एक विचार प्रस्तुत किया जो ‘ह्यूमन कैपिटल थ्योरी’ (मानव पूँजी सिद्धांत) के नाम से जाना जाता है। इस उपागम के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं—

- (1) अधिगम प्रक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पादक संसाधन का एक नया रूप प्राप्त होता है जो मानव पूँजी (ह्यूमन कैपिटल) कहलाता है।
- (2) शिक्षा में व्यय करना एक निवेश है जो भविष्य में मानव पूँजी तथा भौतिक पूँजी दोनों की रचना करता है।
- (3) अधिगम प्रक्रिया की तुलना एक उद्योग में उत्पादन की प्रक्रिया से की जा सकती है।
- (4) शिक्षा एवं प्रशिक्षण में अन्तर के कारण में आय में अन्तर

होता है और इससे श्रमिक की उत्पादकता और दक्षता सीमित हो जाती हैं सीमित उत्पादकता का अर्थ है—कम शिक्षा तो कम उत्पादकता तथा अतिरिक्त शिक्षा और प्रशिक्षण के फलस्वरूप अतिरिक्त उत्पादन।

शिक्षा के सार्वभौमिकरण

अर्थ—बच्चों के विशिष्ट आवश्यकताओं के तथा स्थान के अनुरूप सभी स्थानों पर शिक्षा की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

सार्वभौमिकरण का अर्थ—प्राइमरी स्तर पर सार्वभौमिकरण (Universalization) से अभिप्राय, सार्वभौमिकता के सभी तत्वों से है। इसे व्यवस्था की सार्वभौमिकता (Universalization of System), नामांकन की सार्वभौमिकता (Universalization of Enrollment) उपस्थिति व अभिधारण की सार्वभौमिकता (Universalization of Holding) इत्यादि।

बच्चों को केवल विद्यालय में प्रवेश ही नहीं देना है अथवा उनके लिए सुविधाएँ ही प्रदान नहीं करनी है बल्कि प्रवेश लिए हुए बच्चों के अपव्यय और अवरोधन को भी रोकना है।

प्राथमिक स्तर पर सरकार ने इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। कई राज्यों में अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी अधिनियम बनाये गए हैं, इस सार्वभौमिकता के लक्ष्य को पूरा करने के मार्ग में कई बाधाएँ हैं जिन्हें दूर किए बिना लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

सार्वभौमिकरण के तीन पक्ष—सार्वत्रिक अभिगम्यता तथा पंजीयन उपस्थिति तथा अवधारणा शिक्षा की गुणवत्ता।

जी.ई.आर. (GER)—सकल पंजीयन अनुपात।

एन.ई.आर. (NER)—शुद्ध पंजीयन अनुपात

फार्मूले (सूत्र)

सकल पंजीयन अनुपात

$$= \frac{\text{प्राथमिक विद्यालय में पंजीकृत कुल बच्चों की संख्या}}{\text{प्राथमिक विद्यालय आयु वर्ग के कुल बच्चों की संख्या}}$$

शुद्ध पंजीयन अनुपात

$$= \frac{\text{प्राथमिक विद्यालय आयु वर्ग के विद्यालय में पंजीकृत कुल विद्यार्थी}}{\text{प्राथमिक विद्यालय आयु वर्ग के कुल बच्चों की संख्या}}$$

विद्यालय में ग्राम शिक्षा रिकार्ड व पंजिका

रिकार्ड क्षेत्र—एक शिक्षक को निम्नलिखित का रिकार्ड रखना चाहिए—

- (1) उपस्थिति पंजिका।
- (2) उपलब्ध साधन सामग्री का लेखा और उनकी दशा।
- (3) ऑर्डर दी गई सामग्री का लेखा।
- (4) विद्यार्थियों की प्रगति का लेखा जिसमें उनके कौशल क्षमता और सहनशीलता का समावेश होता है।

(5) विद्यार्थियों के स्वास्थ्य का लेखा, यह लेखा स्वास्थ्य जाँच अथवा परीक्षा से प्राप्त करना चाहिए।

(6) पाठ्यक्रम तालिका एवं खेल-कूद तालिका।

(7) प्रतिस्पर्धाओं एवं प्रयोग का लेखा।

(8) विद्यालय में आयोजित शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों का लेखा।

(9) आवश्यक रजिस्टर रखना।

(10) घटना एवं चोट का रिकार्ड रखना।

(11) विद्यार्थियों की चारित्रिक विशेषताओं का लेखा।

(12) विविध कार्यक्रमों में भाग लेने वाले विद्यार्थियों का रिकार्ड रखना।

(13) श्रेणी एवं पुरस्कार प्राप्त विद्यार्थियों का लेखा।

(14) मीटिंग, कान्फ्रेंस, सिंजोयियम एवं क्लीनिक का लेखा।

निर्देशन का उत्तरदायित्व ऐसे सुयोग्य एवं सुप्रशिक्षित अध्यक्ष पर होना चाहिए, जो अपना कार्य निर्देशन प्रदाताओं, निर्देशन प्राप्तकर्ताओं के निर्देशन से सम्बन्धित अभिकरणों के पूर्ण सहयोग से सम्पन्न कर सके।

वैयक्तिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं के सन्दर्भ में निर्देशन के कार्यक्रम, लचीला होना आवश्यक है।

शिक्षा निर्देशन का प्रमुख लक्ष्य, छात्रों में वांछित जागरूकता एवं संवेदनशीलता उत्पन्न करना है जिससे वे उपयुक्त अधिगम लक्ष्यों, उपकरणों, परिस्थितियों आदि का स्वयं चयन कर सकें तथा विद्यालयी वातावरण से सामंजस्य स्थापित कर सकें। भारतीय परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता अपेक्षाकृत अधिक है।

• राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में समानता के उद्देश्य को साकार करने की दृष्टि से प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति की प्रगति को परम आवश्यक माना गया है। इस नीति में स्पष्ट रूप से यह घोषित किया गया है कि—

- (1) विकलांगता यदि हाथ पैर की या मामूली-सी है तो ऐसे बच्चों की पढ़ाई सामान्य बच्चों के साथ हो।
- (2) गम्भीर रूप से विकलांग बच्चों के लिए, छात्रावास वाले विशिष्ट स्कूलों की आवश्यकता होगी। इस तरह के स्कूल जहाँ तक सम्भव होगा, जिला मुख्यालयों में बनाए जाएँगे।
- (3) विकलांगों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था की जाएगी।
- (4) शिक्षकों, विशेषकर, प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी नया रूप दिया जाएगा ताकि वे विकलांग बच्चों की कठिनाइयों को ठीक प्रकार से समझकर उनकी सहायता कर सकें।
- (5) विकलांगों की शिक्षा के लिए स्वैच्छिक प्रयासों को हर सम्भव उपायों से प्रोत्साहित किया जाएगा।

इन उपायों को दृष्टि में रखते हुए ही विकलांगों के लिए विशिष्ट विद्यालयों को स्थापित करने का निर्णय लिया गया है। साथ ही प्रत्येक जिले में एक व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना भी,

विकलांगों हेतु करने का निश्चय किया गया है और इस दिशा में अनेक प्रयास किए जा रहे हैं।

• **शिशुओं की देखभाल और शिक्षा** (Child Care and Education)–इसका तात्पर्य प्री-स्कूल के बच्चे से है। शिशुओं की देखभाल व शिक्षा को आवश्यक मानते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में यह उल्लेख किया गया है कि, बच्चों के विकास पर पर्याप्त विनियोग किया जाए, विशेषकर ऐसे व्यवसायों पर जिनके बच्चों की पहली पीढ़ी बड़ी संख्या में शिक्षा प्राप्त कर रही है।

बच्चों के विकास के विभिन्न पहलुओं को अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता है। पौष्टिक भोजन व स्वास्थ्य को और बच्चों के सामाजिक, मानसिक, शारीरिक, नैतिक और भावात्मक विकास को समन्वित रूप में ही देखना होगा।

इस दृष्टि से शिशुओं की देखभाल व शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। और इसे जहाँ भी सम्भव हो, समन्वित बाल विकास सेवा कार्यक्रम के साथ जोड़ा है। प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनिकरण के सन्दर्भ में शिशुओं की देखभाल के केन्द्र खोले गए हैं।, जिससे अपने छोटे भाई बहनों की देखभाल करने वाली लड़कियों को स्कूल जाने की सुविधा मिल सके। साथ ही निर्धन उस समय की कार्यरत महिलाओं को भी इन केन्द्रों से मदद मिल सकेगी।

शिशुओं की देखभाल से सम्बन्धित विभिन्न केन्द्रों एवं सरकार द्वारा प्रदत्त अन्य सुविधाओं की जानकारी हेतु भी निर्देशन सेवाओं का उपयोग किया जा सकेगा।

शिशु देखभाल व शिक्षा को राष्ट्रीय स्तर पर सर्वशिक्षा अभियान में और राज्य स्तर पर राज्य शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एससीईआरटी) के कार्यनीति में भी स्थान दिया गया है।

• **नर्सरी विद्यालयों में स्वास्थ्य शिक्षा**– इस स्तर एवं स्थिति में स्वास्थ्य शिक्षा का लक्ष्य बच्चे का उचित वातावरण में विकास करना होना चाहिए। खेल-कूद एवं स्पोर्ट्स, विश्राम एवं मनोरंजन में आपसी समन्वय होना चाहिए।

इस कार्यक्रम में व्यक्तिगत स्वच्छता, जैसे–हाथ धोना, मुँह धोना, नहाना, मुँह साफ करना, कान, नाक, आँखें, साफ करना, आदतें सुधारना, जैसे–कैसे बैठना है? कैसे उठना है? कैसे चलना है? कैसे दौड़ना है? खींचना, धकेलना, पकड़ना आदि पर ध्यान देना चाहिए।

बच्चे छोटी-छोटी चीजों से मजा लेते हैं–जैसे खिलौने या वस्तुओं को छूना, गुब्बारे तथा पतंग पकड़ना आदि।

बच्चे की मानसिक शक्ति की विकास हेतु यह आवश्यक है कि सुरक्षा, स्नेह, प्यार आदि की भावना जगाएँ। उसे संगीत सिखाएँ।

तालमेल वाली छोटी-छोटी कहानियाँ, विभिन्न पशु-पक्षियों की बोलियाँ, आवाजें सिखाएँ तथा उनकी नकल करने का प्रयत्न कराएँ, जिससे बच्चे इनमें व्यस्त रहें।

प्राथमिक शिक्षा से पूर्व– सर्वप्रथम तो बात यह है कि उन बातों को सीखें तथा अभ्यास करते रहें जो बातें नर्सरी स्टेज में सीखी थीं।

इस स्टेज पर बच्चों को जहाँ तक सम्भव हो घास पर बैठने, मैदान में खेलने, पेड़-पौधों की पत्तियाँ इकट्ठा करने पेड़ों की

छोटी-छोटी टहनियाँ एकत्रित करना, विभिन्न प्रकार के फूलों को देखें तथा उनकी सराहना करें।

- उनकी आयु, लिंग तथा रुचि के अनुसार सामान्य खेल खेलें।
- वे जो चाहे करें, स्वतंत्रतापूर्वक करें, परन्तु देखभाल अवश्य करनी चाहिए।

- प्राथमिक विद्यालय स्तर पर बच्चा एक खास स्थिति से गुजर रहा होता है। यह बचपन एवं किशोरावस्था के मध्य की अवस्था (आयु) है।

- वास्तव में वह नर्सरी एवं माध्यमिक स्कूल के बीच की कड़ी है अर्थात् बचपन एवं किशोरावस्था के मध्य एक जोड़ने वाली कड़ी है। किशोरावस्था से पूर्व की शिक्षा प्रारम्भिक शिक्षा कहलाती है जिसका एक सटीक नाम उच्च प्राथमिक शिक्षा भी है।

- द्वितीय भारतीय सर्वेक्षण के अनुसार प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालय में दो अध्यापक तथा शहरी विद्यालयों में तीन अध्यापक द्वारा पढ़ाने का औसत था। कुछ विद्यालयों में शिक्षकों का औसत निम्नलिखित था–

(1) एक अध्यापक 37.5% विद्यालयों में,

(2) दो अध्यापक 26.8% विद्यालयों में,

(3) तीन अध्यापक 14.5% विद्यालय में।

मिडिल स्कूलों की भी यही स्थिति है तथा एक अध्यापक को कई विषय पढ़ाने पड़ते हैं। उत्तर प्रदेश के सर्वेक्षण में एन.सी.ई.आर.टी. के अनुसार मिडिल स्कूल में शिक्षकों पर कार्यभार निम्नांकित हैं–

(1) 58.3% विद्यालयों में अध्यापकों को सभी विषय पढ़ाने पड़ते हैं।

(2) 85.8% विद्यालयों में तीन विषय से अधिक पढ़ाने पड़ते हैं।

(3) 10.0% विद्यालयों में तीन विषय पढ़ाने पड़ते हैं।

(4) 3.1% विद्यालयों में तीन से कम विषय पढ़ाने पड़ते हैं।

समाज से बालक का परिचय

परिचयात्मक की प्रवृत्ति मानव में होती है। जॉनसन के अनुसार इस अवस्था का आरम्भ सामान्यतः 3-4 वर्ष की आयु से होता है और यह 12-13 वर्ष की आयु तक चलता रहता है। इस अवस्था में बालक परिवार के सभी कार्यों से माता-पिता, पत्नी, पुत्र-पुत्री, भाई-बहन आदि के रूप में परिचित हो जाता है। बालक इस समय यौन-व्यवहार (Sex-behaviour) से पूर्ण रूप से परिचित नहीं होता परन्तु उसमें यौन-भावना विकसित होने लगती है। परिवार के सदस्य बालक से यह आशा करते हैं कि वह अपने लिंग (Sex) के अनुसार ही व्यवहार करे।

- इसी प्रकार बालक अथवा बालिका भिन्न-भिन्न प्रकार से व्यवहार करते हैं वे अपनी इस भिन्नता से पूर्ण रूप से परिचित भी हो जाते हैं यदि बालक तथा बालिकाएँ अपने लिंग के अनुसार कार्य करते हैं तो उनको प्रशंसा मिलती है। माता-पिता का स्नेह भी मिलता है।

- समाजीकरण की प्रक्रिया तब पूर्ण होती है जब बालक तथा बालिकाएँ अपने लिंग के अनुसार व्यवहार करते हैं। बालक तथा बालिकाओं का अपने लिंग से परिचित हो जाने के कारण उनका विपरीत लिंग की ओर झुकाव आरम्भ हो जाता है। इस अवस्था में समाजीकरण की प्रक्रिया पहचान (Identification) दो रूपों में प्रकट होती है : सामाजिक भूमिका से पहचान तथा सामाजिक समूहों से पहचान।

नयी शिक्षा नीति में शिक्षा को राष्ट्रीय एवं सामाजिक सरोकारों से अनिवार्यता सम्बद्ध माना गया है—

- शिक्षा एक सामाजिक उप व्यवस्था है। शिक्षा समाज का अनुकरण करती है। शिक्षा समाज में परिवर्तन करती है। शिक्षा सामाजिक नियंत्रण बढ़ाती है। शिक्षा सामाजिक भावना उत्पन्न करती है।
- पाठ्यक्रम सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिये।
- बालकों को नैतिक शिक्षा देना आवश्यक है।
- आधुनिक भारतीय शिक्षा नैतिक सुखों-सुविधाओं पर बल देती है।
- शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन है। विद्यालय प्राथमिक रूप से एक लघु समाज है। समाजशास्त्र का शिक्षा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। समाजशास्त्र शिक्षा को लक्ष्य/आदर्श प्रदान करता है। शिक्षा समाजशास्त्र को साधन प्रदान करती है।
- अधिकतर महान शिक्षाशास्त्री समाजशास्त्री भी हैं।
- अधिकतर महान शिक्षाशास्त्री मनोवैज्ञानिक भी रहे हैं।
- समाजशास्त्र शिक्षा के सामाजिक सिद्धान्त निर्धारित करता है।
- कोठारी आयोग यह स्वीकार करता है कि शिक्षा ही राष्ट्र को आत्मनिर्भरता, आर्थिक विकास, पूर्ण रोजगार, राजनैतिक विकास अवसरों का उपयोग सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकीकरण की ओर ले जा सकती है। आयोग यह अनुभव करता है कि शैक्षिक क्रांति को लोगों की जिन्दगियों, आवश्यकताओं तथा व्यवसाय से जोड़ा जाये। आयोग का मानना है कि इस कार्य में शिक्षकों का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। आयोग के शब्दों में, “शिक्षा के स्तर को जो बातें प्रभावित करती हैं, तथा इसका जो योगदान राष्ट्र के विकास में है उसमें सबसे महत्वपूर्ण बात शिक्षक के गुण, योग्यता तथा चरित्र है।”
- किसी भी सभ्यता का सामाजिक-सांस्कृतिक भाव तथा राष्ट्र के आदर्श उनके द्वारा अनुसरित शैक्षिक संस्थाओं के द्वारा प्रतिबिम्बित होते हैं। वास्तव में, जैसा आपको विदित है, एक सभ्य समाज में विद्यालयी संस्था तथा सामाजिक प्रक्रिया का आरम्भ उस समाज तथा संस्कृति के निर्माण, विकास तथा उसे संप्रोषित करने के उद्देश्य से किया जाता है। यही हमारे देश में हुआ। भारतीय शिक्षा प्रणाली भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा से जुड़ी हुई है। बहुत-सी कमियों के बावजूद, यह

सामाजिक पुनर्निर्माण तथा विकास का एक सशक्त साधन रहा है।

धारा 29 (1)—“भारत के राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासियों के किसी विभाग को, अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति बनाये रखने का अधिकार होगा।”

धारा 29 (2)—“राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता प्राप्त करने वाली किसी शिक्षा-संस्था में किसी नागरिक को धर्म, प्रजाति, जाति, भाषा या उनमें से किसी एक के आधार पर प्रवेश देने से नहीं रोका जायेगा।”

धारा 30—“धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना तथा प्रशासन का अधिकार होगा।”

स्कूल चलो अभियान (School Chalo Abhiyan)—जुलाई 1996 में कक्षा 1 से 8 तक के बच्चों को विद्यालय प्रति आकर्षित करने के लिए स्कूल चलो अभियान चलाया गया। इसके अन्तर्गत जुलूस निकाले गये तथा पोस्टर लगाये गए। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा अल्पसंख्यक के बच्चों को विद्यालय के प्रति आकर्षित करने के लिए छात्रवृत्ति की व्यवस्था भी की गयी।

- विश्व के कई देशों के शिक्षाविदों के दल ने प्रदेश के कई घरों में बालिका शिक्षा की दिशा का अध्ययन किया। “अन्तर्राष्ट्रीय बालिका शिक्षा अध्ययन दल” ने अपने साथ बालिका शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के कई उपाय बताये। उसने बालिकाओं की साक्षरता बढ़ाने पर भी जोर दिया। दल में मैक्सिको, घाना सहित कुछ अन्य विकासशील देशों के शिक्षामंत्री, अधिकारी, शिक्षाविद् तथा विश्व बैंक के प्रतिनिधि शामिल थे।

ग्रामीण छात्रों के प्रवेश की समस्या (Problem of Enrolment)—स्वतन्त्र भारत के संविधान में तो निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था कर दी गई है और लगभग सभी राज्यों में अनिवार्य शिक्षा अधिनियम बनाए जा चुके हैं। फिर भी निम्नलिखित कारणों से ग्रामीण क्षेत्रों में सभी बच्चों को विद्यालय में भर्ती करने में सफलता नहीं मिली है:

- (1) माता-पिता की उदासीनता।
- (2) समुदाय की उदासीनता।
- (3) बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा जैसी सामाजिक बुराइयाँ।
- (4) विद्यालयों की दूरी।
- (5) शिक्षाधिकारियों की उदासीनता।

माता-पिता की शिक्षा (Education of Parents)—अधिकांश माता-पिता पढ़े लिखे नहीं हैं जिसके कारण वे शिक्षा की उपयोगिता नहीं समझ पाते। इसके लिए पहले उनको शिक्षा के प्रति जागरूक बनाया जाए। रेडियो, दूरदर्शन तथा प्रचार के अन्य साधनों का अच्छी प्रकार से उपयोग करके अभिभावकों को शिक्षा के प्रति जागरूक बनाया जा सकता है। प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों में माता-पिता को शिक्षित किया जा सकता है।

जनसंख्या पर नियन्त्रण (Controlling on Population)— सार्वभौमिकता के मार्ग में मुख्य बाधा जनसंख्या में वृद्धि है, जिसके कारण प्राथमिक शिक्षा के लिए किये कार्य व्यर्थ हो जाते हैं। क्योंकि निरन्तर जनसंख्या वृद्धि से आवश्यक साधन जुटाना मुश्किल हो जाता है। अतः प्राथमिक क्षेत्र में सुविधाओं को बढ़ाया जाए और परिवार कल्याण के अभियान को तेज किया जाए। प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से वयस्कों को परिवार नियोजन पद्धति की जानकारी दी जाए, जिससे जनसंख्या वृद्धि पर रोक लग सके।

लड़कियों की शिक्षा के प्रति माता-पिता के अवरोध पर काबू पाना (Overcoming Resistance of Parents to the Education of Girls)— लड़कियों की शिक्षा का भी उचित प्रबन्ध करना चाहिए तथा सहशिक्षा के प्रति माता-पिता की उदासीनता को देखते हुए लड़कियों की शिक्षा की अलग से व्यवस्था के लिए सरकार को निःशुल्क शिक्षा, निःशुल्क पाठ्य-सामग्री, निःशुल्क वर्दी की व्यवस्था की गई है।

डी.ई.ओ., डी.आर.सी. (डाइट), बी.ई.ओ. (बी.आर.सी.) तथा सी.ई.ओ. (सी.आर.सी.) की भूमिकाएँ और कर्तव्य—डी.ई.ओ., डी.आर.सी. (डाइट), बी.ई.ओ. (बी.आर.सी.) तथा सी.ई.ओ. (सी.आर.सी.) की भूमिकाएँ तथा दायित्वों का विवरण नीचे क्रमबद्ध रूप में दिया गया है—

जिला स्तर पर जिला शिक्षा अधिकारी (डी.ई.ओ.) तथा इसके अधीनस्थ अधिकारियों को आयोजक, परिपालक (implementer), समन्वयक तथा मॉनीटर सभी के रूप में कार्य करने पड़ते हैं। प्रारम्भिक शिक्षा में उसे निम्नलिखित उत्तरदायित्वों को निभाना पड़ता है :

- उसे ऐसा अनुकूल वातावरण बनाना पड़ता है जिसमें बच्चे अपना शिक्षा का अधिकार प्राप्त कर सकें।
- सभी गाँवों (निवास स्थलों) में प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर की विद्यालयों की सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- सभी विद्यालय आयु के बच्चों के लिए निकटवर्ती स्थान पर शिक्षा के लिए भौतिक और सामाजिक अभिगम्यता सुनिश्चित करना।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

1. “जब एक समूह में बहुत से लोग होते हैं तो वे कम कार्य करते हैं।” यह कथन अधोलिखित में से किस परिघटना (phenomenon) का वर्णन करता है:
 - (1) सामाजिक श्रमावनयन (Social Loafing)
 - (2) सामाजिक सुगमता (Social Facilitation)
 - (3) सामाजिक अवरोध (Social Inhibition)
 - (4) सामाजिक सहयोग (Social Co-operation)
2. सामाजिक अनुरूपता (Group Conformity) के लिए आवश्यक है :
 - (1) समूह की सदस्यता
 - (2) लक्ष्य की अस्पष्टता
 - (3) नेतृत्व की दृढ़ता
 - (4) संसक्ति (Cohesion)
3. समूहों का वर्गीकरण प्राथमिक एवं द्वितीयक समूहों में किसने किया?
 - (1) मीड (Meed)
 - (2) मैकाइवर एवं पेज (Mciver & Page)
 - (3) कूली (Cooley)
 - (4) मैकडुगल (McDougall)
4. समाजमितीय विधि का प्रयोग समाज संरचना का अध्ययन करने हेतु किसने किया?
 - (1) थर्स्टन (Thurstone)
 - (2) बोगार्डस (Bogardus)
 - (3) लिकर्ट (Likert)
 - (4) मोरेनो (Moreno)
5. सामाजिक दूरी मापनी (Social distance scale) निर्माकित में से किसने विकसित किया?
 - (1) थर्स्टन (Thurstone)
 - (2) बोगार्डस (Bogardus)
 - (3) लिकर्ट (Likert)
 - (4) लेविन (Lewin)
6. नेतृत्व का प्रासंगिकता सिद्धान्त किसने प्रतिपादित किया?
 - (1) फाइडलर
 - (2) स्किनर
 - (3) थॉर्नडाइक
 - (4) बैन्डुरा
7. समूह गतिकी (Group Dynamics) की धारणा किसकी देन है?
 - (1) कर्ट लेविन की
 - (2) बैन्डुरा की
 - (3) शेरीफ की
 - (4) न्यूकाम्ब की
8. किसी व्यक्ति की प्रथम छवि (first impression) निर्माण में किस प्रकार की सूचना को उच्चतम भार दिया जाता है?

- (1) असंगत (Inconsistent)
 - (2) प्रमुख (Salient)
 - (3) नकारात्मक (Negative)
 - (4) सकारात्मक (Positive)
9. प्रजातन्त्रात्मक नेतृत्व (Democratic Leadership) में सदस्यों में—
- (1) हम-भावना (We-feeling) नहीं होती है।
 - (2) हम-भावना मजबूत होती है।
 - (3) हम-भावना कभी-कभी होती है।
 - (4) सिर्फ अनुभूति दिखाने की प्रवृत्ति होती है।
10. वह प्रक्रिया जिसके द्वारा एक बच्चा अन्य व्यक्तियों के साथ अपने आप को संबंधित करना सीखता है, को कहा जाता है—
- (1) अन्तरव्यक्तिक कौशल (Inter-Personal Skills)
 - (2) समाजीकरण (Socialization)
 - (3) आन्तरीकरण (Internalization)
 - (4) संस्थानीकरण (Institutionalization)
11. संज्ञानात्मक असंवादिता (cognitive dissonance) कब घटित होती है?
- (1) यह तब घटित होती है जब व्यक्ति कोई व्यक्तव्य देता है।
 - (2) यह तब घटित होती है जब व्यक्तियों के समक्ष दो विरोधात्मक सूचनाएँ होती हैं।
 - (3) यह तब घटित होती है जब व्यक्तियों को प्रोत्साहन प्राप्त नहीं होते।
 - (4) यह तब घटित होती है जब व्यक्ति असफल होते हैं।
12. नेतृत्व का प्रकार जिसमें नेता सबसे अधिक निष्क्रिय (Passive) होता है, कहा जाता है—
- (1) प्रजातन्त्रात्मक नेता
 - (2) पैगम्बर (Prophet)
 - (3) करिश्माई नेता (Charismatic Leader)
 - (4) अहस्तक्षेपी नेता (Laissez-faire Leader)
13. पूर्वाग्रह (Prejudice) में सम्मिलित होता है—
- (1) रूढ़िकृति (Stereotyping)
 - (2) मनोवृत्ति में परिवर्तन करने की अनिच्छा
 - (3) अल्पसंख्यक समूह (Minority Group) के व्यवहार के आन्तरिक या व्यक्तिगत गुणारोपण (Personal Attribution)
 - (4) उपर्युक्त सभी
14. शिक्षा के संदर्भ में, समाजीकरण से तात्पर्य कौन नहीं है?
- (1) समाज में बड़ों का सम्मान करना
 - (2) सामाजिक वातावरण में अनुकूलन और समायोजन
 - (3) सामाजिक मानदंडों को सदैव अनुपालन करना
 - (4) अपने सामाजिक मानदंड बनाना
15. जेम्स और पराउट ने प्रस्ताव रखा था कि जीवन का एक जैविक तथ्य है, लेकिन जिस तरीके से इसे समझा जाता है और इसे अर्थपूर्ण बनाया जाता है, वो का एक तथ्य है।
- (1) बचपन का विकास, समाजीकरण
 - (2) सामाजिक निर्माण, समाजीकरण
 - (3) बचपन की अपरिपक्वता, संस्कृति
 - (4) बचपन का विकास, संस्कृति
16. सामाजिक समानता समर्थित है—
- (1) मार्क्सवाद द्वारा
 - (2) पूँजीवाद द्वारा
 - (3) घरेलू संस्थान द्वारा
 - (4) समाजवाद द्वारा
17. मानव समाज की मूलभूत इकाई के रूप में जाना जाता है?
- (1) सामाजिक समूह
 - (2) आदिवासी समूह
 - (3) व्यक्तिगत
 - (4) परिवार
18. अरस्तु के अनुसार मनुष्य की प्रकृति क्या है?
- (1) सामाजिक
 - (2) राजनीतिक
 - (3) सांस्कृतिक
 - (4) धार्मिक
19. एक लघु स्कूल है—
- (1) राज्य
 - (2) समाज
 - (3) परिवार
 - (4) संगठन
20. समुदाय के लिए शिक्षा का कौन-सा उद्देश्य सबसे अधिक उपयोगी है?
- (1) सांस्कृतिक
 - (2) आजीविका
 - (3) समाजीकरण
 - (4) प्रौद्योगिकीकरण
21. समाज के एक एजेंट के रूप में स्कूल का प्राथमिक कार्य है:
- (1) सामाजिक स्थिरता बनाए रखना
 - (2) बच्चों में व्यावसायिक सक्षमता का एक पर्याप्त स्तर विकसित करना
 - (3) बच्चे को भावी जीवन के लिए तैयार करना
 - (4) बच्चों को अपने परिवेश को समझने में मदद देना
22. निम्नलिखित में से कौन-से मुख्य तत्व समाजीकरण के लिए रूपरेखा प्रदान करते हैं?
- (1) मानव जैविक क्षमता, संस्कृति और व्यक्तिगत अनुभव
 - (2) मानव प्रकृति, संस्कृति और व्यवहार
 - (3) सामाजिक जागरुकता, संस्कृति और व्यवहार
 - (4) मानव प्रकृति, मानव जैविक क्षमता और संस्कृति

23. समूह इकाई है।
 (1) पारिवारिक (2) सामाजिक
 (3) संवैधानिक (4) धार्मिक
24. सामुहिक सोच की प्रमुख विशेषता होती है—
 (1) एलीयनेशन (2) कोहेसिवनेस
 (3) डायनामिक्स (4) कंफर्मिटी
25. सोस्योड्रामा (Socio-Drama) परामर्शन की सामाजिक... है।
 (1) तकनीक (2) कारण
 (3) संबंध (4) संकल्पना

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(1)	2.	(4)	3.	(3)	4.	(4)	5.	(2)
6.	(1)	7.	(1)	8.	(4)	9.	(2)	10.	(2)
11.	(2)	12.	(4)	13.	(4)	14.	(4)	15.	(3)
16.	(4)	17.	(4)	18.	(1)	19.	(3)	20.	(3)
21.	(3)	22.	(3)	23.	(2)	24.	(2)	25.	(1)

उत्तर व्याख्या सहित

- (1) सामाजिक श्रमावनयन (Social Loafing) से तात्पर्य यह होता है कि जब व्यक्ति समूह में होता है तो हासित मॉनिटरिंग (Reduced Monitoring) के कारण कार्य में वह कम-से-कम प्रयास करने की प्रवृत्ति (Tendency) दिखलाता है। इससे समूह का निष्पादन कम जाता है।
- (4) अनुरूपता (Conformity) एक ऐसा व्यवहार है जिसके सहारे व्यक्ति समूह दबाव के सामने झुक कर जुड़ाव महसूस करता है हालाँकि उसकी व्यक्तिगत अनुभूतिया दूसरे ढंग से विचार करना चाहती है। अनुरूपता के सहारे व्यक्ति के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों का नियंत्रण सामाजिक मूल्यों तथा सामाजिक मानकों के अनुकूल होता है।
- (3) प्राथमिक समूह तथा गौण समूह का वर्गीकरण समाजशास्त्री कूली (Cooley) द्वारा किया गया। प्राथमिक समूह जैसे समूह को कहा जाता है जिसके सदस्यों के बीच आपने-सामने या प्रत्यक्ष (Face-to-face) तथा घनिष्ठ संबंध होता है। इसमें सदस्यों की संख्या कम होती है, अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व का गुण होता है तथा इनकी सामान्य सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है। प्राथमिक समूह का उत्तम उदाहरण परिवार है। गौण समूह प्राथमिक समूह के विपरीत होता है। इसका आकार बड़ा होता है, इसके सदस्यों के संबंध औपचारिक होते हैं, इनमें अप्रत्यक्ष संबंध होते हैं, इसका निर्माण विशिष्ट उद्देश्य के लिए ही होता है तथा इसके सदस्यों के उत्तरदायित्व सीमित होते हैं। सरकारी दफ्तर, फैक्ट्री तथा विश्वविद्यालय के कर्मचारियों का समूह गौण समूह का उदाहरण है।
- (4) समूह संरचना (Group Structure) का अध्ययन करने के लिए मोरेनो (Moreno) ने समाजमिति (सोस्योमेट्री) विधि को निकाला था।
- (2) सामाजिक दूरी मापनी विधि (Social Distance Scale Method) का प्रतिपादन बोगार्डस (Bogardus, 1925) द्वारा किया गया। इस प्रविधि द्वारा व्यक्ति की मनोवृत्ति का मापन सामाजिक दूरी (Social Distance) के रूप में होती है।
- (1) फाईडलर (Fiedler, 1964) ने नेतृत्व के प्रासंगिकता सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसके अनुसार नेतृत्व जहाँ तक समूह की परिस्थिति का संबंध है। तीन ऐसे कारक हैं जो नेता के लिए परिस्थिति की अनुकूलता का निर्धारण करते हैं—नेता-सदस्य संबंध (Leader-Member Relation), कार्य संरचना (Task Structure) तथा नेता का अधिकार स्तर (Power Position of the Leader)।
- (1) ग्रुप डायनामिक्स (समूह गतिकी) की अवधारणा मनोवैज्ञानिक कर्ट लेविन ने दी थी।
- (4) सामाजिक प्रत्यक्षण का एक दूसरा महत्वपूर्ण पहलू व्यक्ति का प्रत्यक्षण (Person Perception) है। व्यक्ति प्रत्यक्षण में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के बारे में प्रत्यक्षण करता है या उसके बारे में एक छवि (Impression) का निर्माण करता है। यही कारण है कि व्यक्ति प्रत्यक्षण को छवि निर्माण (Impression) भी कहा जाता है।
- (2) इस तरह से ऐसे नेतृत्व में अधिकारों एवं सत्ता का विकेन्द्रीकरण (Decentralization) होता है। ऐसे नेतृत्व वाले समूह के समाजमितीय संरचना में समाज होता है जिससे यह स्पष्ट है कि किसी भी समस्या पर सदस्य इस तरह के नेतृत्व में आपस में बातचीत या विचार-विमर्श खुलकर करते हैं।
- (2) समाजीकरण—यह एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समुदाय एवं परिवार अपने सदस्यों विशेषतः युवा सदस्यों को शिक्षित करते हैं। जहाँ समाज के सदस्य सामाजिक नियमों, मूल्यों को मन में बैठाते हैं।
- (2) संज्ञानात्मक, असंवादिता सिद्धान्त का प्रतिपादन फेस्टिंगर ने किया। इस सिद्धान्त के अनुसार मनोवृत्ति में परिवर्तन असंवादिता के कारण होता है।
जब दो संज्ञानात्मक कारक आपसे में विरोधाभाषी होते हैं, तो इस स्थिति को असंवादिता की संज्ञा दी जाती है। असंवादिता की स्थिति उत्पन्न होने से व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होता है।
- (4) एक वास्तविक लैडस्सेज फेयर तंत्र में नेता द्वारा कोई भी नियंत्रण यहाँ तक कि न कोई निर्देश (guidance) और न ही सहायता अपने अधीनस्थों को दिया जाता है।

13. (4) पूर्वाग्रह (Prejudice) एक तरह की मनोवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल ढंगों से सोचने, प्रत्यक्ष करने, अनुभव करने तथा क्रिया करने के लिए पहले से तत्पर बना देती है।
पूर्वाग्रह एवं विभेद को कम करने के लिए कई विधियों का प्रतिपादन किया गया है जिसमें अन्तर समूह सम्पर्क, शिक्षा, पूर्वाग्रह विरोधी प्रचार, असंगत भूमिका, सामाजिक विधान, व्यक्तित्व परिवर्तन प्रविधियाँ आदि प्रमुख हैं।
14. (4) समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य समूह का कार्यकर्ता बनता है, उसके आदर्शों के अनुसार कार्य करता है, उसके रीति-रिवाजों के अनुसार व्यवहार करता है एवं अपने आपको सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार ढाल लेता है।
15. (3) जेम्स और पराउट ने बचपन की मुख्य विशेषताओं को सामाजिकता के रूप में चिह्नित किया है। उन्होंने सुझाव दिया है कि बचपन की अपरिपक्वता जीवन का एक जैविकीय तथ्य है।
16. (4) सामाजिक समानता से अभिप्राय है, समाज में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक के रूप में कोई भेदभाव नहीं होगा यह हमारे राज्य के नीति निर्देशक तत्व जो भाग-(IV) अनुच्छेद 36-51 में है। अनुच्छेद-38 में लोगों के सामाजिक कल्याण बात कही गयी है, जो समाजवाद पर आधारित है।
17. (4) समाज की मूलभूत इकाई परिवार ही है जो समाज को नींव प्रदान करती है। बच्चे का पहला शिक्षाघर परिवार होता है। जो बच्चे को अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से प्रदान करती है। बच्चे के सामाजिकरण में परिवार का महत्वपूर्ण योगदान होती है।
18. (1) अरस्तु के अनुसार 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।' लेकिन मनुष्य स्वभाव से ही राजनीतिक प्राणी है, जो कुल और ग्रामों के एक ऐसे समूह का निर्माण करता है, जिसका लक्ष्य पूर्ण और आत्मनिर्भर जीवन की प्राप्ति है जो बिना राजनीतिक संस्था के संभव नहीं है।
19. (3) परिवार एक लघु स्कूल की भूमिका निभाता है। परिवार एक छोटी सी सामाजिक संस्था है जिसमें रहते हुए अन्य संबंधियों के सम्पर्क में आता है और प्रत्येक सदस्य से प्रत्येक क्षण प्रभावित होता है तथा अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है।
20. (3) समुदाय के विकास के लिए शिक्षा का उद्देश्य होता है। समाजीकरण करना तथा समुदाय को समाज के अनुसार ढालना इसका माध्यम शिक्षा है जो विद्यार्थी समान के अनुसार बदलने में सहायक है। समाज हो रहे बदलाव को देख सके।
21. (3) समाज के एजेंट के रूप में स्कूल का प्राथमिक कार्य बच्चों को बेहतर भावी जीवन के लिए तैयार करना है। शिक्षा विभिन्न पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों का परिचय कराते हुए बच्चों की सामाजिक अभिरुचि से संबंधित ज्ञान में वृद्धि करती है। स्कूल व्यापक स्तर पर बच्चों के ज्ञान और कौशल में वृद्धि करता है। स्कूल अनौपचारिक रूप से बच्चों की कई प्रकार की जानकारी प्रदान करता है।
22. (3) बालक इस समाज में प्रवेश के समय अर्द्धसामाजिक होते हैं। जागरूकता, व्यवहार एवं संस्कृति के मूल्यों के लिए वे पूर्णतः दूसरों पर निर्भर होते हैं। वे धीरे-धीरे सीखते हैं कि वे कौन हैं व उनसे क्या अपेक्षा की जाती है।
23. (2) समूह (group) एक सामाजिक इकाई (social unit) होता है जिसमें कई व्यक्ति होते हैं जो एक-दूसरे से एक निश्चित पद तथा भूमिका के आधार पर संबंधित होते हैं और जिसके खुद के अपने मूल्य या मानदंड, होते हैं।
24. (2) सामूहिक सोच (group think) द्वारा भी व्यक्ति का व्यवहार काफी प्रभावित होता पाया गया है। सामूहिक सोच एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें समूह के लोग अपने वास्तविक विचार को इस कारण अभिव्यक्त नहीं कर पाते हैं क्योंकि समूह की आम सहमति में जुड़ाव (cohesiveness) बनाये रखने के ख्याल से इसे कहीं अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है।
25. (1) मनोभिनय का सामूहिक संस्करण समाज अभिनय (सायकोड्रामा) कहते हैं। जैसे कि मनोभिनय में व्यक्ति दी गई विशिष्ट भूमिका के साथ व्यवहार करता है वहीं समाज अभिनय समूह के मूल्यों और समूह की संरचना और विचार के अनुसार सामूहिक भूमिका निभाता है। मनोभिनय सामाजिक घटना और दर्शक संबंधी विवादों को दर्शाने वाला तकनीक है।

□□□

प्राचीन, मध्यकालीन एवं ब्रिटिश भारतीय शिक्षा प्रणाली

शिक्षा का उद्देश्य एक उन्नत जीवन हेतु अभ्यास द्वारा प्रायोगिक क्रिया- कलाप कर प्रशिक्षित करना है। जीवन की चारों अवस्थाओं—ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम में एक पुत्र के रूप में, एक पति के रूप में, एक पिता के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना सिखाया जाता था। एक विद्यार्थी को समझाया जाता था कि वह मानव जाति की संस्कृति का संरक्षक तथा प्रकाशस्तंभ है। शिक्षा के पश्चात् दीक्षांत भाषण के समय उसे बताया तथा आदेश दिया जाता था कि समाज के योग्य और स्वावलंबी उत्पादक सदस्य के रूप में उसके कुछ सामाजिक दायित्व और कर्तव्य होते हैं जिनको जीवन में उतारना पड़ता है।

● कृष्ण और सुदामा संदीपन मुनि के आश्रम में शिक्षार्जन-विद्यार्जन करने गए थे। मुनि कम बोलते या सार्थक वातावरण में बोलते थे, इसलिए मुनि कहलाए; क्योंकि वे बेवजह नहीं बोलते। फलतः लोक समाज में मौन रहने के कारण उन्हें 'मुनि' कहा गया। कालांतर में सुदामा और कृष्ण आजीवन मित्र बने रहे।

● वैदिक शिक्षा आध्यात्मिक शिक्षा थी। वैदिक शिक्षा का मूल पाठ्यक्रम आत्मा- परमात्मा-जीवात्मा के उद्भव, विकास- विश्लेषण और व्याख्या से सम्बद्ध था। ऐसे ग्रंथ-ज्ञान में स्वर्ग-नरक, लोक-परलोक, धर्म-कर्म, त्याग-तपस्या, आत्मशुद्धि-शुचिता और सदाचार पर ज्यादा बल दिया जाता। हवन-यज्ञ, मंत्रोच्चार, वेदवाणी, गायत्री मंत्र आदि से शिक्षा का प्रारंभ और अंत उपादेय था।

● वैदिक शिक्षा चार वेदों पर आधारित थी। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद सर्वोत्तम शिक्षा ग्रंथ के रूप में मान्य थे। वेदों के बाद सम्मानित ग्रंथों में उपनिषद् परिगणित हैं। उपनिषद् का अर्थ ही है गुरु के निकट बैठकर ज्ञान प्राप्त करना। उपनिषद् अठारह हैं। सभी संस्कृत में हैं।

● जो विद्यार्थी वेदों का अध्ययन करते थे उनके लिए शिक्षा स्मृति का यांत्रिक प्रशिक्षण था। उनसे अपेक्षा थी कि वे समस्त साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा व्यावसायिक धरोहर को कालांतर में मात्र स्मृति की सहायता से इनके शुद्ध रूप में परिरक्षित रखें तथा उन्हें अगली पीढ़ियों को स्थानांतरित करें। स्मृति का सहारा इसलिए लिया जाता था क्योंकि उस समय ज्ञान परिरक्षण के लिए कागज या प्रिंटिंग (मुद्रण) जैसे कोई साधन उपलब्ध नहीं थे।

● गुरु-आश्रम व गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा-प्रणाली एवं प्रशासन का संचालन व प्रबन्धन राज्य एवं अभिजात्य वर्ग के क्षेत्र में था। आचार्य व गुरु के हाथों बच्चों को सौंपकर समाज जीविकोपार्जन में लगा हुआ था। गुरु-आदेश ही आप्तवचन था। अतः प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली सरकारी एवं निजी दोनों थी।

● प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में मूल्य (value) सर्वोपरि था। पाठ्यक्रम से लेकर जीवन तक और गुरुकुल से लेकर समाज तक, जन्म से लेकर मृत्यु तक हर जगह मानवीय मूल्यों का स्थान सर्वोच्च व अग्रणी था। मूल्य व वैल्यू वे नियामक सिद्धांत हैं जो व्यक्ति को सद्आचरण, सदाचार, ईमानदारी, चरित्रवान, गुरुभक्ति, आदर्शवाद, संस्कार आदि का भाव बोध कराते थे। इसलिए शिक्षा में आध्यात्मिक मूल्यों पर भी ज्यादा जोर था। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, मौलिक, शारीरिक एवं मानसिक मूल्यों के बजाय आत्मिक, ईश्वरीय, परमात्मा, प्रकृतिवादी कला ही प्राथमिक रूप में श्रेष्ठ माने गए। इसीलिए गुरु को राजा एवं भगवान स्वरूप माना जाता था।

● वैदिक शिक्षा शिक्षक केन्द्रित व शिक्षकोन्मुख है। इसमें शिक्षक गुरु व आचार्य है तो कही संत-महात्मा व मुनि है। गुरु को गोविंद व ईश्वर समान माना जाता है जिसमें उपदेश मोक्षदायक होते हैं। शिक्षा के प्रारंभ से अंत तक गुरु ही सर्वोपरि है जिसके संस्कार पाकर शिक्षार्थी स्वहित-परहित धर्म का निर्वहन करता था।

● प्राचीन भारतीय शिक्षा का मूल उद्देश्य सच्चरित्रता है। चरित्र निर्माण शिक्षा का परम लक्ष्य माना गया। व्यक्ति का चरित्रवान होना अनुशासन पर निर्भर था। अनुशासन वस्तुतः आत्मानुशासन था। स्वयं आचरणशील होना सच्चरित्रता की निशानी थी। चरित्रवान विद्यार्थी ही आदर्श नागरिक होते थे। सच्चरित्रता व्यक्तित्व विकास का भी मूल था।

● प्राचीन शिक्षा धार्मिक शिक्षा थी। जब देश में न असंख्य जातियाँ-उपजातियाँ थी और न ही बहुत सारे सम्प्रदाय थे। इसलिए धर्म आधारित शिक्षा लोकप्रिय, मान्य और अबाधगति से जारी रही। आधुनिक भारत में अनेक भाषा, धर्म, सम्प्रदाय, जाति-उपजातियाँ उद्विकसित हुईं, फलतः शिक्षा की स्वरूप धर्मनिरपेक्ष बन गया।

गुरु-शिष्य सम्बन्ध

● अध्यापक और शिष्य में पिता और पुत्र की तरह अत्यन्त गहन या आंतरिक सम्बन्ध होता था। इस सम्बन्ध की भली-भांति व्याख्या की गई उपनिषद् में है। उपनिषद् का शाब्दिक अर्थ है 'निकट बैठना'। अध्येयता अध्यापक के चरणों में बैठकर विद्यार्जन करता था। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मोनियर विलियम्स द्वारा रचित शब्दकोश के अनुसार उपनिषद् का अर्थ है "परमात्मा के ज्ञान को प्रकटित या उद्घाटित कर अंधकार को दूर भगा देना है।" कठोपनिषद् तथा वृहदारण्यक उपनिषद् पर शंकराचार्य की व्याख्या के अनुसार उपनिषद् की विषयवस्तु आत्मविद्या है; अर्थात् आत्म ज्ञान या ब्रह्मज्ञान।

● जैन धर्म में शिक्षा विषयक क्षेत्र में गुरु को आचार्य और शिष्य (भक्त) को श्रमण कहते थे। आचार्य में आर्य शब्द संलग्न है जिसका अर्थ 'श्रेष्ठ' है।

● श्रमण में श्रम शब्द से परिश्रम का बोध होता है। इस प्रकार जैन शिक्षा दर्शन में श्रेष्ठ व्यक्ति (आचार्य) के सम्पर्क में सश्रम शिक्षा ग्रहण करने की परम्परा थी।

● जैनशिक्षा के आधार ग्रंथ 'अंग' कहलाते हैं। जैनियों के धर्मग्रंथ 'अंग'। ही हैं ये ग्रंथ सूत्र-श्लोकों में निबद्ध है। इसलिए सूत्रसूचक नाम देखने को मिलते हैं। जैसे आचारांग सूत्र, समवयांग सूत्र के नाम से जैनग्रंथ प्रसिद्ध है। 'अंग' प्राकृत भाषा में रचित महावीर के शिक्षाओं के रूप में संकलित है।

● बौद्ध शिक्षा में विद्यालय को विहार और विश्वविद्यालय को महाविहार कहा गया है। इसीलिए नालंदा महाविहार नालंदा विश्वविद्यालय कहलाता था। तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला प्राचीन बौद्ध शिक्षा के विश्वप्रसिद्ध केन्द्र थे।

● तक्षशिला विश्वविद्यालय व महाविहार के भग्नावशेष पेशावर क्षेत्र (पाकिस्तान) में हैं जो सिरमुख एवं सिरकप नामक स्थान व टीलानुमा ग्राम में बिखरे पड़े हैं। यह विश्वप्रसिद्ध पहला बौद्ध शिक्षा केन्द्र था।

● चाणक्य तक्षशिला विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे जो ज्ञान-नीति में प्रवीण थे। उन्होंने अर्थशास्त्र नामक ग्रंथ लिखा। वे राजनीति, अर्थनीति, कूटनीति और परराष्ट्र नीति में निष्णात विद्वान् थे। पिता-चणक इसलिए पुत्र चाणक्य हुआ।

गोत्र—कुटिल इसलिए कौटिल्य कहलाए। बचपन का नाम विष्णुगुप्त था।

● गौतम बुद्ध का पहला शिष्य होने का श्रेय आनंद को प्राप्त है। माना जाता है कि बुद्ध के ज्ञान प्राप्ति के उपरान्त उनके सिद्धांतों का पहला समर्थक आनंद था। बिहार में चिरान्द स्थान उसका जन्म-कर्म स्थान माना जाता है जो कि आक्मोलौंजी में नवपाषाणिक स्थान के रूप में विश्वविख्यात है।

● बौद्ध धर्म में शिक्षित एवं दीक्षित करने के लिए दो संस्कार किए जाते थे—प्रव्रज्या और उपसम्पदा। शिक्षा का प्रारंभ प्रव्रज्या से होता था। जब बौद्धाचार्य के शरण व आश्रम में प्रवेश करते समय नाखून-बाल कटवाकर, सिर मुण्डन कराकर कसाय (गेरुआ) वस्त्र धारण कर गुरु-आश्रम का वासी (अन्तेवासी) शिष्य बन जाता था।

● बौद्ध शिक्षा की समाप्ति से सम्बद्ध संस्कार 'उपसम्पदा' कहलाता था। यह वास्तव में दीक्षांत समारोह होता (Convocation) था। जब विहार-महाविहार में शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी को समाज में जाकर सेवा-कल्याण करना और ग्राहस्थ जीवन की बारीकियों की शिक्षा के प्रति संवेदनशील बनाया जाता था।

● बुद्ध की शिक्षाएं त्रिपिटकों में संकलित हैं। त्रिपिटक बौद्ध ग्रंथ हैं। तीन पिटक ही त्रिपिटक कहलाते हैं।

पहला पिटक—सुत्त पिटक: सुक्तियों का संकलन।

दूसरा पिटक—विनयपिटक: विनय सम्बन्धी नियमों का संकलन।

तीसरा पिटक—अभिधम्म पिटक: धर्म-सम्बन्धी नियमों का संकलन प्रारंभ में ये पिटारी पर लिखे गए इसलिए पिटक कहलाए। ये प्राकृत भाषा में रचित हैं।

मध्यकालीन शिक्षा प्रणाली

● इस्लाम धर्म में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षण संस्थान क्रमशः मकतब और मदरसा कहलाते हैं। मकतब में कतब शब्द संलग्न है जिससे कुतुब और किताब शब्द बने। कुतुब का अर्थ ज्ञानी और किताब का अर्थ ज्ञान की सामग्री संसाधन व स्रोत सामग्री है।

● इस्लाम का समन्वयवादी सम्प्रदाय सूफीमत था। सूफी संत थे। इस्लाम के संत सूफी कहलाए। इस्लामी शिक्षा में गुरु 'सूफी' और 'पीर' कहलाए। ये पाक, साफ, पवित्र, सादगी, शालीनता और परस्पर प्रेम-भाईचारा पर रहने पर जोर देते थे। सूफियों की शिक्षा आडम्बर से परे थी। सर्वशक्तिमान ईश्वरीय शिक्षा पर इनका जोर था।

● मुस्लिम काल में इस्लामिक शिक्षा की भाषा अरबी और लिपि पर्सियन थी। अरब देश से जो भाषा भारत आयी वह अरबी कहलायी जबकि प्राचीन अरब का सम्बंध फारस की खाड़ी से रहा। फारस की खाड़ी के समीपवर्ती साम्राज्य की भाषा फारसी कहलायी और यह अरबों के लिए लिपि के रूप में मान्य हुई।

● मुस्लिम शिक्षा परम्परावादी और रूढ़िवादी है। समय के दौर में खुद सामयिक नहीं बना पाने के कारण आज भी परंपरागत विधियों-प्रविधियों से कुरान-हदीश व शरीयत आदि की पढ़ाई बच्चों के लिए अनिवार्य बनाया गया है। धर्म, अल्लाह, रोजा, जकात, नबी का आख्यान और जमात के नियमों का पालन सभी पाठ्यक्रम के अनिवार्य हिस्से हैं।

● रटना इस्लामी शिक्षा प्रणाली की प्रमुख पद्धति थी। पाठ्य-पुस्तक का पढ़ना-बोलकर पढ़ना सामूहिक रूप से किया जाता था। जिस कुरान की पाठ झूम कर की जाती थी वह लकड़ी की तख्तियों पर रखी जाती और एक-एक पंक्ति को बार-बार बोलकर दुहराया जाता था।

● मुस्लिम शिक्षा में स्त्री-शिक्षा का परिदृश्य परम्परा से पिछड़ा व निम्न स्तरीय रहा है। इस्लाम में पर्दा प्रथा का पालन कठोरता से किया जाता रहा है। स्त्री का अर्थ ही होता था-पर्दा। फलतः शिक्षा के मामले में औरतें अनेकानेक बंदिशों का शिकार रहीं और शिक्षा के लिए घर से बाहर निकलने पर आमतौर पर अनौपचारिक पाबंदी थी। जबकि इसाईयत आधुनिकतावादी-विज्ञानवादी है। इसाई धर्म उत्पत्ति काल से ही प्रगतिशील विकासवादी माना गया जहां धर्म गुरु को पोप कहा जाता। यूरोप में धर्म सुधार आंदोलनों ने इसाईयत को आधुनिकतावादी बनाने का काम किया।

● 1781 में वारेन हेस्टिंग्स ने कोलकाता मदरसा स्थापित किया जिसमें फारसी और अरबी का अध्ययन किया जाता था। कोलकाता बंगाल प्रान्त की राजधानी थी। बंगाल पर अंग्रेजों ने सर्वप्रथम अधिकार किया था। 1799 ई. में कोलकाता को शहर के रूप में स्थापना जॉब चॉर्नाक ने तीन गाँवों को—(सुतानाती, कोलिकाता एवं गोविंदपुरी को) मिलाकर किया था। वारेन हेस्टिंग्स बंगाल का पहला गवर्नर था।

● 1791 में बनारस के ब्रिटिश रेजिडेंट श्री डंकन के प्रयत्नों के फलस्वरूप बनारस में एक संस्कृत कॉलेज खोला गया जिसका उद्देश्य हिन्दुओं के धर्म साहित्य और कानून का अध्ययन और प्रसार करना था। आर्थर डंकन की अभिरुचि ब्रिटिश शिक्षा और चिकित्सा में ज्यादा थी। प्राचीन धर्मशास्त्रों में निबद्ध ज्ञान-विज्ञान की जानकारी अंग्रेजों की पहली प्राथमिकता थी।

अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली

● 1800 में लार्ड वैलेजली ने कम्पनी के असैनिक अधिकारियों की शिक्षा के लिए फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की।

● इस कॉलेज ने अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी कोष और हिन्दुस्तानी व्याकरण तथा कुछ अन्य पुस्तकें प्रकाशित की। परन्तु यह कॉलेज 1802 में डॉयरेक्टरों की आज्ञा पर बन्द कर दिया गया।

● 1813 के चार्टर एक्ट में एक लाख रुपया, भारत में शिक्षा प्रसार के लिए रखा गया और इस प्रकार इस क्षेत्र में एक तुच्छ-सा प्रयत्न किया गया।

● यह धन साहित्य के पुनरुद्धार और उन्नति के लिए और भारत में स्थानीय विद्वानों को प्रोत्साहन देने के लिए और अंग्रेजी प्रदेशों के वासियों में विज्ञान के आरम्भ और उन्नति के लिए निर्धारित किया गया था।

● कम्पनी को अपनी प्रशासनिक आवश्यकताओं के लिए ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता थी जो शास्त्रीय और स्थानीय भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हों।

● ब्रिटिश सरकार द्वारा 1817 में कोलकता हिन्दू कॉलेज को बनाने के लिए अनुदान दिया गया जिसमें अंग्रेजी माध्यम द्वारा शिक्षा दी जाती थी और पाश्चात्य विज्ञान और मानविकी पढ़ाई जाती थी।

● ब्रिटिश सरकार ने तीन संस्कृत कॉलेज कोलकाता, बनारस और आगरा में स्थापित किए।

● इसके अतिरिक्त यूरोपीय वैज्ञानिक पुस्तकों का प्राच्य भाषाओं में अनुवाद के लिए भी धन दिया गया।

● लॉर्ड मैकाले अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का जनक था। लॉर्ड मैकाले जो जनरल कमेटी ऑन पब्लिक इंस्ट्रक्शन का चेयरमैन था, ने जनवरी 1835 में एक स्मरण पत्र (मेमोरैंडम) तैयार कर प्रसारित किया। उसने देशज, संस्कृत तथा देशज, ज्ञान तथा भाषाओं के माध्यम जैसे संस्कृत, अरबी तथा फारसी के विरुद्ध एक निर्णयात्मक आधार लेते हुए इन्हें नकारा और अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पाश्चात्य विज्ञान का समर्थन किया।

● इस विषय पर उसकी धारणा (विचार) भारतीय शिक्षा के इतिहास में 'मैकाले मिनट्स' के नाम से प्रख्यात हुआ। इस प्रकार 1835 से ही अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जाने लगी। उद्देश्य था भाषा के माध्यम से भारतीयों की सांस्कृतिक जड़ों को काटना।

● मैकाले के मिनट्स तथा डाउनवार्ड फिल्ट्रेशन थ्योरी (अधोगामी निस्यंदन सिद्धांत) को लार्ड बैटिक ने, जो उस समय भारत के गवर्नर जनरल थे, ब्रिटिश साम्राज्य की ओर से स्वीकार कर लिया और आदेश दिए कि भारतीय शिक्षा प्रणाली के लिए अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया जाए।

● अबॉट तथा वुड की इस विशेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट सन् 1937 में प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में व्यावसायिक संस्थाओं का एक पूर्ण क्रम सुझाया गया जो उन संस्थाओं के समानांतर था जो सामान्य शिक्षा प्रदान करते हैं। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण इसे लागू नहीं किया गया।

● इन संस्तुतियों के परिणामस्वरूप एक नए प्रकार की तकनीकी शिक्षा संस्था का उदय हुआ जिसे पोलिटेक्निक का नाम दिया गया।

● ब्रिटिश सरकार ने शिक्षा को यूरोपीय मॉडल में ढालना चाहा था। वास्तव में उन्होंने भारतीय शिक्षा में बहुत से समर्थकों से अधिक उत्तम दृष्टि का प्रदर्शन किया। उसने 1854 में भारत की भावी शिक्षा के लिए वृहत योजना बनाई जिसमें अखिल भारतीय आधार पर शिक्षा की नियामक पद्धति का गठन किया गया। इसे प्रायः भारतीय शिक्षा का **मैग्नाकार्टा** कहा जाता है।

● सन् 1853 में जब कम्पनी चार्टर को नवीनीकरण विचार के लिए ब्रिटिश संसद के सम्मुख आया तो संसद ने भारत में शिक्षा की प्रगति की जाँच की।

● इस जाँच के आधार पर की गई टिप्पणियों तथा प्रस्तावित सुधारों के रूप में शिक्षा का चार्टर जिसे सन् 1854 का वुड्स डिस्पैच कहा जाता है, जारी किया गया।

भारत में वुड्स डिस्पैच को शिक्षा का मैग्नाकार्टा (महाधिकारपत्र) समझा जाता है।

● ब्रिटिश संसद की ओर शिक्षा नीति के रूप में अपनाई जाने वाली यह पहली सरकारी घोषणा थी।

● यह वुड्स डिस्पैच (प्रेषण) एक महत्वपूर्ण व्यापक शैक्षिक दस्तावेज है तथा भारतीय शिक्षा के इतिहास में इसका एक अनन्य (अनूठा) स्थान है।

● प्रथम बार वुड्स डिस्पैच ने देश के पाँचों प्रांतों- बंगाल, बॉम्बे, मद्रास, पंजाब तथा नार्थ वेस्ट प्रांत में डिपार्टमेंट ऑफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन खोले गए।

● उच्च शिक्षा के लिए समस्त संगठनात्मक व्यवस्था के साथ विश्वविद्यालय खोलने की योजना बनाई गई।

● इन विश्वविद्यालयों का उद्देश्य परीक्षाओं का संचालन करना तथा विभिन्न विषयों और भाषाओं में सफल विद्यार्थियों को डिग्री प्रदान करना था।

● इसके फलस्वरूप 1857 में पहले तीन विश्वविद्यालयों की भी स्थापना की गई।

● ये विश्वविद्यालय कोलकता, बॉम्बे तथा मद्रास में खोले गए।

● वुड्स डिस्पैच के द्वारा शिक्षा के अधिकांश पक्षों से सम्बन्धित अनुशंसाएँ दी गईं, जैसे देशभर में श्रेणीकृत विद्यालयों एलीमेंटरी स्कूल, हाई स्कूल, इंटरमीडिएट, कॉलेज तथा विश्वविद्यालयों का नेटवर्क स्थापित करना। विद्यालयों को वित्तीय सहायता देने के लिए ग्रांट-इन-एड (सहायक अनुदान) प्रणाली, महिलाओं की शिक्षा के लिए प्रावधान, अध्यापकों का प्रशिक्षण तथा व्यावसायिक विकास तथा लोगों की व्यावसायिक कुशलता के विकास के लिए चिकित्सा, इंजीनियरिंग, विधि कानून तथा व्यावसायिक शिक्षा की अन्य संस्थाएँ।

● चार्ल्स वुड ने भारत के भावी शैक्षिक विकास के लिए नई योजनाओं का प्रस्ताव रखा।

● वर्नाक्युलर विद्यालयों की कमी, साक्षरता एवं जनशिक्षा में तेजी से गिरावट होती चली गयी। वुड्स डिस्पैच के प्रथम तीस वर्षों में सरकारी संस्थाओं में क्रमिक रूप से बढ़ोत्तरी हुई परंतु क्रिश्चियन मिशनरियों को छोड़कर अन्य निजी प्रयासों को प्रोत्साहन नहीं मिला।

● वुड्स डिस्पैच की महत्वपूर्ण सीमाओं में उल्लेखनीय है कि इससे जन शिक्षा के प्रसार की योजना साकार नहीं हो पायी और नहीं वर्नाक्युलर हाई स्कूल स्थापित किए जा सके। इसने सार्वभौम साक्षरता में भी कोई विशेष योगदान नहीं दिया। एक शताब्दी के पश्चात भी वुड्स डिस्पैच भारतीय आकांक्षाओं को नहीं पहचान पाया।

● **शिक्षा का व्यवसायीकरण:** वुड्स डिस्पैच (1854) की अनुशंसाओं के कार्यान्वयन की जाँच करने हेतु सन् 1882 में हंटर कमीशन की स्थापना की गई, जिसके कारण विद्यालयी शिक्षा को हाई स्कूल में ही स्ट्रीम (धाराएँ) बनाकर सरल और कारगर बनाने का प्रयास किया गया।

● हंटर आयोग की स्थापना 1882 में की गई। आयोग की सिफारिशों के अनुसार इनमें से कई धारा में पढ़ने वाले बच्चे विश्वविद्यालयी शिक्षा के लिए जा सकते थे तथा दूसरी धारा वाले बच्चे वाणिज्य-व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा को अपना सकते थे।

● विश्वविद्यालय सेवा आयोग लार्ड कर्जन द्वारा सन् 1904 में पारित विश्वविद्यालय अधिनियम के अंतर्गत की गई विद्यालयों को मान्यता विश्वविद्यालय द्वारा ही जाएगी और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक नियम तथा अधिनियम निर्धारित किए गए।

● सैडलर आयोग (1917) ने महसूस किया कि इंटरमीडिएट कॉलेज विश्वविद्यालयी सुधार की दृष्टि से माध्यमिक शिक्षा में सुधार लाने की आवश्यकता की पूर्ति थी। यह मामला कॉलेज शिक्षा के द्विशाखन के कारण भी उत्पन्न हुआ।

● गोपाल कृष्ण गोखले पहले नेता थे जिन्होंने ब्रिटिश संसद में भारतीय नागरिकों के लिए **अनिवार्य शिक्षा** की माँग की। उनकी दूरदर्शिता के कारण गोखले विधेयक (1911) प्रस्तावित हुआ। सामाजिक कुरीतियों, प्रथाओं जैसे पर्दा प्रथा के कारण अनिवार्य शिक्षा को अपनाना कठिन था, फिर भी उन्होंने सरकार को सुझाया कि वह 6 से 10 वर्ष तक (चार वर्ष) के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दे। पहले बालकों के लिए और बाद में बालिकाओं के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाए। यह विधेयक पास नहीं हो सका और शिक्षा अनिवार्यता ग्रहण न कर सकी। सन् 1914 में प्रथम विश्वयुद्ध छिड़ने के कारण शिक्षा की प्रगति अवरूद्ध हो गयी। गोखले विधेयक की मुख्य बातें निम्नलिखित थीं—

- (i) अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के अधिनियम को उन स्थानीय बोर्डों के क्षेत्रों में लागू किया जाए, जहाँ के बच्चों का एक निश्चित प्रतिशत प्रारम्भिक विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहा है।
- (ii) स्थानीय बोर्डों सरकार की पूर्व स्वीकृति प्राप्त करके इस अधिनियम को लागू कर सकते हैं।
- (iii) प्राथमिक शिक्षा के व्यय के लिए स्थानीय बोर्ड शिक्षा कर लगा सकते हैं।
- (iv) अभिभावकों के लिए 6 से 10 वर्ष तक की आयु के बालकों को प्राथमिक विद्यालयों में भेजना अनिवार्य हो। यदि वे इस नियम का उल्लंघन करें तो उन्हें दण्ड दिया जाए।
- (v) कालान्तर में बालिकाओं के लिए भी प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी जाए।
- (vi) जिस अभिभावक की आय 10 रुपये मासिक से कम हो, उससे शिक्षा शुल्क न लिया जाए।
- (vii) अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का व्यय भार स्थानीय बोर्डों और सरकार द्वारा वहन किया जाए, सरकार सम्पूर्ण व्यय का 2/3 भाग दे।

● विधेयक के जनमत संग्रह के लिए स्थानीय सरकारों, विश्वविद्यालयों एवं कुछ व्यक्तिगत संस्थाओं के पास भेजा गया। 17 मार्च, 1912 को सभा में विधेयक पर वाद-विवाद प्रारम्भ हुआ, दो दिन के भीषण संघर्ष के पश्चात् 19 मार्च, 1912 को इसे 13 वोटों के विरुद्ध 38 वोटों से गिरा दिया गया।

● सैडलर आयोग ने यह अनुशंसा भी की कि बोर्ड ऑफ सेकेंडरी एंड इंटरमीडिएट एजुकेशन स्थापित कर दिए जाए जिनके अंतर्गत माध्यमिक शिक्षा का प्रशासन तथा नियंत्रण आए।

● सम्भवतः इस प्रकार सैडलर आयोग ने आज के +2 व्यवस्था या जूनियर कॉलेज की अवधारणा का बीज बोया।

● हर्टॉग समिति ने यह भी सिफारिश की थी कि अधिक बच्चे मिडिल स्कूल पास करने के पश्चात् औद्योगिक तथा व्यापारिक क्षेत्रों में भेज दिए जाएँ जहाँ टेक्निकल तथा औद्योगिक विद्यालयों में उन्हें विशेष शिक्षा के लिए तैयार किया जाए। इस समिति ने अध्यापक शिक्षा तथा माध्यमिक अध्यापकों की सेवा अवस्थाओं की समीक्षा भी की। विश्वविद्यालय के डिग्री स्तर के पाठ्यक्रमों को तीन वर्ष का कर दिया जाए।

● 1929 में अजमेर के हरविलास शारदा द्वारा 'बालविवाह' प्रस्तावित विधेयक द्वारा बालविवाह पर निषेध लगाया गया और 'शारदा अधिनियम 1929' का निर्माण किया गया। इस नियम से कम आयु की बालिकाओं को शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिला।

● स्त्रियों को मतदान का अधिकार मिला। उपरोक्त सामाजिक एवं राजनैतिक सुधारों से स्त्री जाति में आत्म-सम्मान जागृत हुआ। इतना ही नहीं पृष्ठभूमि स्वरूप स्त्रियों ने 1926 में 'अखिल भारतीय महिला संघ' का निर्माण किया और 1927 में 'अखिल भारतीय स्त्री शिक्षा सम्मेलन' आयोजित किया, जिसमें उन्होंने पुरुषों के अनुरूप विविध प्रकार की शिक्षा की अधिकारी होने की माँग का नारा बुलन्द किया।

● चार्ल्स वुड के नेतृत्व में निर्मित वृद्ध शिक्षा योजना—इसमें देशी भाषाओं को भी प्रोत्साहित किया गया था क्योंकि ऐसा समझा गया कि यूरोपीय ज्ञान देशी भाषाओं द्वारा ही जन साधारण तक पहुँच पाएगा।

● जिला स्तर पर ऐंग्लो-वर्नाकुलर हाई-स्कूल और सम्बन्धित कॉलेज खोले गए।

● अक्टूबर 1937 में वर्धा में एक अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक सम्मेलन आयोजित किया गया।

● इस सम्मेलन में महात्मा गाँधी द्वारा सुझाया गया यह प्रस्ताव पारित किया गया कि राष्ट्रीय स्तर पर सभी बच्चों को 7 वर्ष तक निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से दी जाए जिसमें शैक्षिक प्रक्रिया इस समस्त अवधि में हाथ से किए जाने वाले उत्पादक कार्य पर केन्द्रित हो।

● वर्धा शिक्षा समिति ने अपनी प्रथम व्यापक राष्ट्रीय शिक्षा योजना तैयार कर रिपोर्ट दिसम्बर 1937 को प्रस्तुत की।

● इस स्कीम को वर्धा स्कीम या बेसिक शिक्षा के नाम से जाना गया। इस स्कीम का मुख्य लक्षण था : संपूर्ण शिक्षा जिसमें कही गई कि किसी बेसिक क्राफ्ट (शिल्प) के साथ किसी उद्योग अथवा व्यवसाय को शिक्षा का केन्द्र मानते हुए की जाए।

सार्जेण्ट रिपोर्ट (1944) पहली ऐसी व्यापक स्कीम थी जिसमें शिक्षा के सभी स्तर तथा पक्ष : पूर्व प्राथमिक, हाई स्कूल तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा तथा तकनीकी-व्यावसायिक तथा सांस्कृतिक शिक्षा सम्मिलित थी।

● ब्रिटिश कालीन प्रगतिशील शैक्षिक व्यवस्था इंग्लैंड की शैक्षिक व्यवस्था के अनुसार स्थापित की गई। शिक्षा के क्षेत्र में उनका मुख्य उद्देश्य भारतीय बच्चों को ब्रिटिश व्यवस्था के अनुरूप शिक्षा देना था। भारत में अध्यापक शिक्षा की औपचारिक व्यवस्था के लिए सर्वप्रथम डेनमार्क की मिशनरियों ने सेराम्पोर (पश्चिम बंगाल) में एक औपचारिक प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किया। यह मिशनरीज की व्यक्तिगत संस्था थी। अध्यापकों के प्रशिक्षण के सम्बन्ध में भारत में यह पहला कदम था।

● विवेकानंद ने कहा था—शिक्षा मनुष्य में पहले से ही उपस्थित अथवा अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है। इसका तात्पर्य है कि शिक्षा के तत्व व कारक मनुष्य में अन्तर्निहित रहता है जिसे निखारना व पूर्ण करना औपचारिक शिक्षा का।

● गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा—“मैं शिक्षा के साहित्य पक्ष की अपेक्षा सांस्कृतिक पक्ष को अधिक महत्व देता हूँ।” स्पष्टतः रवीन्द्रनाथ टैगोर आदर्शवादी और अंतर्राष्ट्रीयवादी है। वे ग्रंथीय शिक्षा के बजाय राष्ट्रवादी-प्रकृतिवादी मूल्यों के समर्थक व साधक है।

● रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इन्हीं शैक्षिक मूल्यों की स्थापना हेतु कोलकाता के पास वर्द्धमान में शांति-निकेतन विद्यालय की स्थापना की जो कालांतर में विश्व भारती विश्वविद्यालय के रूप में विख्यात हुआ।

● ऐंग्लो ऑरियंटल कॉलेज, अलीगढ़ के संस्थापक सर सैय्यद अहमद खान थे।

● ऐंग्लो ओरियंटल का अर्थ आंग्ल प्राच्य होता है। आंग्ल प्राच्य पद का अर्थ अंग्रेजी-पूर्व है जिसका तात्पर्य पूर्वी सभ्यता-संस्कृति वाला अंग्रेजी कॉलेज।

● सैय्यद अहमद खान प्रारंभ में राष्ट्रवादी विचारक थे जो कालांतर में मुस्लिमों की शिक्षा संस्कृति जागरूकता के तौर पर ऐंग्लो ओरियंटल कॉलेज की स्थापना की जो अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के रूप में विख्यात हुआ।

● लक्ष्मीबाई नेशनल कॉलेज ऑफ फिजिकल एजुकेशन की स्थापना 1957 में ग्वालियर में की गई। यह शारीरिक शिक्षा का अग्रणी भारतीय संस्थान है।

● देश में खेल-कूद की प्रबोधित संस्कृति विकसित करने, प्रशिक्षित कोच की पीढ़ी तैयार करने, खेल-प्रतिभाओं को एशियन-ओलंपिक एवं राष्ट्रमण्डलीय खेलों हेतु तैयार करने में इस संस्था का अवर्णीय योगदान है।

● जिस सूची के विषय पर केन्द्र और राज्य दोनों कानून बनाकर विकास कार्य कर सकते हैं, वह समवर्ती सूची का विषय है।

● 1976 में शिक्षा समवर्ती सूची का विषय बना जो कि पहले राज्य सूची का विषय था।

● उदाहरणार्थ बहुचर्चित सर्वशिक्षा अभियान को सफल बनाने में केन्द्र और राज्यों की समान व सशक्त भागीदारी रही।

आधुनिक भारतीय शिक्षा प्रणाली

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन एक महान दार्शनिक एवं शिक्षाविद् थे। देश में शिक्षक दिवस उनकी ही जन्मतिथि (5 सितम्बर) के रूप में मनाया जाता है। उन्होंने अपने कैरियर की शुरुआत प्राइमरी, शिक्षक से शुरू की थी। वे देश के पहले उप-राष्ट्रपति थे। शैक्षिक एवं राष्ट्रीय सेवाओं में सराहनीय एवं अविस्मरणीय योगदान हेतु उन्हें भारत रत्न से भी नवाजा गया।

राधाकृष्णन आयोग (1948-49) वास्तव में विश्वविद्यालय आयोग था जिसका गठन भारत सरकार ने 1948 में डॉ. एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में किया था तथा जिसका मुख्य सरोकार विश्वविद्यालयी शिक्षा की समस्याओं पर विचार करना था।

राधाकृष्णन ने अपनी सिफारिशें एक वर्ष बाद 1949 में प्रस्तुत कर दी। यह इसलिए किया गया क्योंकि स्वतंत्र भारत को राष्ट्रीय विकास के लिए विभिन्न क्षेत्रों में युवा नेतृत्व की आवश्यकता थी और यह अपेक्षित था कि यह नेतृत्व शिक्षित नवयुवकों से प्राप्त होगा।

सिफारिशों का सम्बन्ध विश्वविद्यालय के संघटन (बनावट), नियंत्रण, कार्यों तथा कार्यक्षेत्रों से था। केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के उनके संबंधों से वित्त व प्रवेश संबंधी मानकों को जारी रखने से था।

राधाकृष्णन आयोग का विशेष बल अध्यापन परीक्षाओं पाठ्यचर्याओं, अध्ययन अवधि तथा शिक्षा के माध्यम से भारतीय संस्कृति, इतिहास, साहित्य, भाषाओं दर्शन, ललित कलाओं के संदर्भ में उच्च अध्ययन के प्रावधानों से था।

उच्चशिक्षा में नई शुरुआत के लिए एक उच्चधिकार प्राधिकार की स्थापना पर जोर दिया गया। फलस्वरूप देश में उच्च शिक्षा के समन्वयन के लिए इस आयोग ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (University Grant Commission- U.G.C) के गठन की सिफारिश की जिसकी स्थापना 1953 में कर दी गई।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (University Grant Commission- U.G.C) की स्थापना 28 दिसम्बर, 1953 में हुआ। सन् 1956 में भारत सरकार ने इसे सांविधिक दर्जा प्रदान किया। इसका मुख्यालय दिल्ली में है। इसके मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं—

- (1) विश्वविद्यालयों की आर्थिक सहायता की आवश्यकता को जानना और व्यवस्था करना
- (2) विश्वविद्यालयों के विकास एवं संचालन हेतु आर्थिक सहायता।
- (3) केन्द्र सरकार और राज्य सरकार को किसी भी विश्वविद्यालय के लिए आर्थिक सहायता तथा अनुदान के लिए धन निर्धारित करने का सुझाव देना।
- (4) नए विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए किसी संस्था या राज्य को परामर्श देना और पाँच वर्ष के संचालन का सम्पूर्ण व्यय वहन करना।
- (5) राज्य के विश्वविद्यालयों को विकास हेतु अनुदान।
- (6) उच्चस्तरीय अनुसन्धान कार्यों और शिक्षण को बढ़ावा देना और इसके लिए आर्थिक सहायता।
- (7) देश की उच्च शिक्षा के विकास हेतु जो वांछित कार्य हो उन्हें पूरा करना।

मुदालियर आयोग (1952)—मुदालियर आयोग वास्तव में माध्यमिक शिक्षा आयोग था जिसका गठन भारत सरकार ने सन् 1952 में किया।

● डॉ. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर इस आयोग के अध्यक्ष थे।

● इस आयोग का उद्देश्य देश में प्रचलित माध्यमिक शिक्षा की जाँच करना तथा माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों, संगठन इसका प्राथमिक और उच्च शिक्षा से सम्बन्ध एवं विभिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों के सह सम्बन्ध के सन्दर्भ में माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन तथा संशोधन के लिए उपाय सुझाना था।

● मुदालियर आयोग ने अध्यापकों की समस्याओं तथा अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों का विश्लेषण भी किया और संस्तुति की कि अध्यापक शिक्षा की दो प्रकार की संस्थाएँ होनी चाहिए। एक अलग बोर्ड के अधीन प्राथमिक अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाएँ जिनका उद्देश्य उन सभी अभ्यर्थियों को प्रशिक्षित करना था जिन्होंने मैट्रिकुलेशन या हायर सेकेंडरी कक्षा उत्तीर्ण की हो। यह कार्यक्रम 2 वर्ष का होगा।

● सन् 1954 के बाद भारत में बहुत सारी संस्थाओं की स्थापना की गई जैसे पाठ्य-पुस्तक अनुसंधान का केन्द्रीय ब्यूरो (1954), इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन एंड वोकेशनल गाइडेंस (1954), बेसिक

शिक्षा का राष्ट्रीय संस्थान (1956), नेशनल फाउंडेशन ऑफ एजुकेशन सेंटर (1959), ऑल इंडिया काउंसिल फॉर सेकेंडरी एजुकेशन (1959) तथा नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ ऑडियो विजुअल एजुकेशन (1959)। इन संस्थाओं की स्थापना अलग-अलग कार्यों के लिए की गई थी। राष्ट्रीय शैक्षिक एवं अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद-1961

● **राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति (1958)**—इसको दुर्गाबाई देशमुख समिति के नाम से भी जानते हैं। महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देने के उद्देश्य से दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई, जिसका उद्देश्य स्त्री शिक्षा की विभिन्न समस्याओं का समाधान करने के लिए सुझाव देना था। 1959 में समिति ने निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए—

- (i) कुछ वर्षों तक बालिका शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता तथा स्त्रियों के लिए अलग से प्रशासनिक व्यवस्था भी की जानी चाहिए।
- (ii) ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्री-शिक्षा के विकास हेतु सरलीकृत अनुदान किए जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- (iii) उपलब्ध धनराशि का उपयोग बालिकाओं के मिडिल तथा माध्यमिक स्तर के विद्यालयों, शिक्षक प्रशिक्षण, स्कूलों, छात्रावास तथा महिला अध्यापिकाओं हेतु छात्रावास बनाये जाने के लिए अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए।
- (iv) राज्यों में बालिकाओं एवं स्त्री शिक्षा की राज्य परिषदों का निर्माण किया जाए।
- (v) बालक तथा बालिका शिक्षा की विषमता को शीघ्र समाप्त किया जाए।

एक मनस्वी महिला होते के नाते उन्होंने शिक्षा में लैंगिक समानता पर बल दिया। इस समिति की रिपोर्ट सन् 1958 में प्रकाशित हुई जिसने अनुशंसा की कि लड़के और लड़कियों की शिक्षा में समानता लाने को उच्चतम प्राथमिकता दी जानी चाहिए। मिडिल स्कूल तक सहशिक्षा हाईस्कूल पर अलग बालिका स्कूल, शिशु सदन, महिला शिक्षकों के प्रशिक्षण पर जोर दिया गया।

ढेबर समिति के सुझाव—स्वतन्त्रता के पश्चात भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों की शिक्षा की वास्तविक स्थिति व समस्याओं को जाना। तभी श्री यू.एन. ढेबर की अध्यक्षता में सन् 1960-61 में ढेबर समिति का गठन किया गया। आयोग ने इनके समस्यात्मक कार्य-कलापों का अध्ययन कर हर प्रकार के साधनों तथा देश की विभिन्न संस्थाओं के द्वारा अथक परिश्रम कर यह पता लगाया कि अनुसूचित जाति की बालिकाओं की शिक्षा में किन सुविधाओं की व्यवस्था नहीं हो पा रही है। ढेबर समिति ने भारत की राज्य और केन्द्र सरकारों से आग्रह किया कि विशेष कार्यक्रम और निर्देशन में अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लोगों में परिवर्तन लाने के लिए इनमें प्राथमिक शिक्षा का विकास किया जाये। इसके अलावा समिति ने निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये—

एन.सी.ई.आर.टी. की भूमिका

सन् 1961 में भारत सरकार ने केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों को शिक्षा सम्बन्धी नीतियों को लागू करने में सहायता करने तथा सलाह देने के लिए एन.सी.ई.आर.टी. की स्थापना की। इसका विशेष उद्देश्य विद्यालयी शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाना तथा अध्यापक तैयार करना था। समय के साथ यह परिषद एक अद्वितीय रूप धारण कर चुकी है जिसमें निरंतर बढ़ते ऐसे क्रिया-कलाप संपादित किए जाते हैं जिनसे भारत में विद्यालयी शिक्षा प्रभावित हुई है।

केन्द्र सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा मंत्रालय और संस्कृति मंत्रालय संचालित किया जाता है। शिक्षा एवं संस्कृति द्वारा एक मानव मनुष्य रूपी संसाधन में परिवर्तित होता है और आर्थिक संसाधन का रूप ले लेता है। शिक्षा एवं संस्कृति के रूप में हमारे पास मौलिक अधिकार भी है।

एन.सी.ई.आर.टी. शैक्षिक अनुसंधान (शोध) कार्यक्रम संचालित करने, उनमें सहायता करने तथा विज्ञान में प्रशिक्षण आयोजित करने जैसे महत्वपूर्ण कार्य संपादित करती है। राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान के विभिन्न विभाग, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान (सी.आई.ई.टी.) तथा पंडित सुंदरलाल शर्मा केन्द्रीय व्यावसायिक शिक्षा संस्थान शिक्षा के विभिन्न पक्षों तथा अध्यापक शिक्षा पर शोध कार्यक्रमों का दायित्व लेते हैं।

केन्द्रीय शिक्षा संस्थान—नई दिल्ली में दिल्ली विश्वविद्यालय के अन्तर्गत कार्यरत है।

केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान—नई दिल्ली में स्थित है।

सुंदरलाल शर्मा केन्द्रीय व्यावसायिक शिक्षा संस्थान—मध्य प्रदेश की राजधानी शहर भोपाल में स्थित है।

एनसीईआरटी की पाँच क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान—भुवनेश्वर, भोपाल, शिलांग अजमेर मैसूर में स्थित है।

यह शैक्षिक सीढ़ी के विभिन्न स्तरों—पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, प्रारम्भिक, माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक और अन्य क्षेत्रों जैसे व्यावसायिक शिक्षा, शैक्षिक प्रौद्योगिकी निर्देशन तथा परामर्श तथा विशेष शिक्षा, में अध्यापकों के लिए सेवा-पूर्व व सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करती है।

ये शैक्षणिक प्रशिक्षण निम्नलिखित हैं—

- (i) पूर्व प्राथमिक शिक्षकों का प्रशिक्षण
- (ii) सेवा पूर्व शिक्षकों का प्रशिक्षण।
- (iii) प्राथमिक शिक्षकों का प्रशिक्षण।
- (iv) प्रारम्भिक शिक्षकों का प्रशिक्षण।
- (v) माध्यमिक शिक्षकों का प्रशिक्षण।
- (vi) उच्चतर माध्यमिक शिक्षकों का प्रशिक्षण।
- (vii) व्यावसायिक अभिवृत्ति हेतु प्रशिक्षण।
- (viii) शिक्षा में प्रौद्योगिकीय अभिवृत्ति विकसित करने हेतु प्रशिक्षण।
- (ix) विशिष्ट बालकों के शिक्षण हेतु शिक्षक प्रशिक्षण।
- (x) राज्य स्तर पर प्रारम्भिक शिक्षा की संगठनात्मक संरचना
- (xi) बी.एड पर कार्यरत दो मुख्य संस्थाएँ हैं—राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद—एस.सी.ई.आर.टी. (State Council of Educational Research and Training—SCERT) तथा राज्य शैक्षिक प्रबन्धन एवं प्रशिक्षण संस्थान—एस.आई.ई.एम.टी. (State Institute of Educational Management and Training—SIEMT)

राज्यों में एनसीईआरटी की प्रतिनिधि संस्था के तौर पर राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद कार्यरत है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है। यह राज्य में शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण सम्बन्धी गतिविधियों का सृजन, नियोजन, संगठन, निर्देशन एवं समन्वयन कर बेहतर प्रबन्धन का कार्य करती है। प्रशिक्षण के अभ्यर्थियों में प्राथमिक शिक्षण, प्रारम्भिक कक्षावाले शिक्षक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक कक्षावाले शिक्षक शामिल होते हैं।

एससीईआरटी मुख्यरूप से सूचना, संचार एवं प्रौद्योगिकी द्वारा शैक्षिक विकास सम्बन्धी परियोजनाओं को संचालित करती है जिसमें दृश्य-श्रव्य माध्यमों को वर्तमान आधुनिक दौर में ज्यादा महत्व दिया जाता है।

दूरस्थ या दूरवर्ती शिक्षा (Distance Education) का अर्थ— प्रो. होमबर्ग (1981) के अनुसार दूरवर्ती शिक्षा में खुले अधिगम को संचार माध्यमों अथवा शिक्षा तकनीकी से सम्पादित किया जाता है। संचार माध्यमों द्वारा शिक्षक का व्याख्यान छात्रों के घरों तक पहुँचाया जाता है। दूरदर्शन की सहायता से शिक्षक छात्रों के पास तक पहुँच कर शिक्षा देता है। शिक्षक-छात्र की अन्तःप्रक्रिया एकपक्षीय होती है। 'दूरवर्ती शिक्षा' में 'मुक्त अधिगम' के लिए परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं।

एनसीईआरटी में अध्यापक-शिक्षा विभाग के कार्य निम्नलिखित हैं—

- (1) सेवारत शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण एवं प्रसार की व्यवस्था।
- (2) प्राथमिक, माध्यमिक तथा विद्यालय की शिक्षा पर शोध कार्यों को बढ़ावा देना।
- (3) अभिविन्यास पाठ्यक्रमों (Orientation Courses) की व्यवस्था।
- (4) प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के कार्यशाला, सेमीनार, वार्षिक सम्मेलनों की व्यवस्था।
- (5) सेवारत शिक्षकों को प्रेरणा देना और नवीन आयामों से अवगत कराना तथा अभ्यास।
- (6) अध्यापक-शिक्षा की समस्याओं के लिए शोध कार्यों का सम्पादन करना और बढ़ावा देना।

बहुआयामी कार्यक्रम—शिक्षा नियोजन एवं प्रशासन के क्षेत्र में NCERT संस्थान के कार्यक्रम बहु-आयामी हैं। इसके द्वारा पत्रिकाओं एवं पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है। शोध सम्बन्धी रिपोर्ट प्रकाशित की जाती है। प्रकाशन द्वारा सिद्धान्त और उपयोग में समन्वय स्थापित किया जाता है। अन्य विकासशील देशों के नियोजन एवं प्रशासन सम्बन्धी शोध कार्यों की समीक्षा की जाती है। अपने देश की समस्याओं के समाधान का प्रयास किया जाता है।

नवीन ज्ञान के आधार पर नियोजन एवं प्रशासन सम्बन्धी सिद्धान्तों को विकसित किया जाता है। शिक्षा नियोजन एवं प्रशासन के विभिन्न पक्षों पर संस्थान के द्वारा पुस्तकों का प्रकाशन भी किया गया है। जिन सेमीनार तथा कार्यशालाओं की व्यवस्था की जाती है उनके निष्कर्षों का प्रकाशन भी किया जाता है। जिन नवीन प्रवर्तनों तथा आयोगों का प्रयोग किया जाता है उनका मूल्यांकन भी किया जाता है।

यह संस्थान नियोजकों तथा प्रशासकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करता है तथा नवीन ज्ञान से अवगत कराता है।

कोठारी आयोग (1964-60)

राष्ट्रव्यापी शिक्षा नीति निर्माण के लिए भारत सरकार ने दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एवं शिक्षाविद **डॉ. डी.एस. कोठारी** की अध्यक्षता में 1964 में आयोग बनाया। शिक्षा के सभी स्तरों (प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक, महाविद्यालय, एवं विश्वविद्यालय स्तर) और सभी सामाजिक पक्षों (अल्पसंख्यकों, पिछड़ों, वंचितों, विशिष्ट बालकों व विकलांगों, असहाय-आवारा बच्चों, बालिकाओं, परित्यक्त बच्चों) पर सामान्य नीतियाँ एवं सिद्धान्तों की रूपरेखा पर सरकार को सलाह देना था।

कोठारी आयोग की नजर में शिक्षा राष्ट्रीय विकास और सामाजिक पुनर्निर्माण का अचूक साधन है। यह विकास में सरकार एवं समाज की भागीदारी का प्रमुख माध्यम है। इसके लिए आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशों की थी जो इस प्रकार हैं—

- उत्पादकता वृद्धि के लिए शिक्षा
- त्वरित आधुनिकता के लिए शिक्षा
- सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता के लिए शिक्षा
- राष्ट्रीय मूल्यों के समावेशन हेतु शिक्षा

भारत सरकार द्वारा 1964 ई. में डॉ. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता में एक व्यापक शिक्षा अयोग का गठन किया गया जिसने प्राथमिक स्तर से लेकर उच्चतर स्तर तक के पाठ्यक्रमों में भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप व्यापक सुधार के लिए अनेक उपयोगी सुझाव दिये जिससे शिक्षा प्रक्रिया में क्रमबद्धता एवं निरन्तरता आ सके।

भारतीय शिक्षा आयोग के सुझावों का क्रियान्वयन

भारत सरकार ने शिक्षा आयोग के प्रतिवेदन को स्वीकार कर इसके क्रियान्वयन हेतु 1968 ई. में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की घोषणा की। इस शिक्षा नीति के प्रस्ताव में कहा गया कि शिक्षा व्यवस्था के

द्वारा ऐसे सद्चरित्र एवं सुयोग्य युवक एवं युवतियों का निर्माण होना चाहिए जो राष्ट्रीय सेवा एवं विकास के प्रति समर्पित हो। इस दृष्टि से शिक्षा नीति में पाँच लक्ष्यों को निर्धारित किया गया—

- (1) शिक्षा को समाज की आवश्यकताओं से जोड़ना।
- (2) राष्ट्रीय एकता की भावना का विकास।
- (3) समान शैक्षिक अवसरों की उपलब्ध कराना।
- (4) शिक्षा को राष्ट्रीय विकास एवं उत्पादन से जोड़ना।
- (5) सामाजिक परिवर्तन को तीव्र करना।

उत्पादकता वृद्धि के लिए शिक्षा के संदर्भ में कोठारी आयोग ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण सुझाव दिए थे—

- (क) शिक्षा एवं संस्कृति का मुख्य घटक 'विज्ञान' को बनाना
- (ख) सामाजिक रूप से सामान्य शिक्षा की अनिवार्यता
- (ग) औद्योगिक एवं कृषिगत आवश्यकताओं के लिए शिक्षा के व्यावसायीकरण पर जोर
- (घ) विश्वविद्यालयीय स्तर पर वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय शोध व शिक्षा में सुधार

त्वरित आधुनिक विकास के लिए कोठारी कमीशन ने निम्नलिखित सिफारिशों की थी—

- (a) अध्यापन की नयी विधियों को अपनाना
- (b) स्वाध्याय और वांछित कौशलों एवं मूल्यों को विकसित करना
- (c) समाज के सभी वर्गों के व्यक्तियों की शिक्षा (समावेशी शिक्षा)
- (d) राष्ट्रीय स्तर पर उत्कृष्ट विश्वविद्यालयों की स्थापना
सामाजिक एवं राष्ट्रीय एकता के प्रोत्साहन के लिए शिक्षा सम्बन्धी निम्नलिखित प्रावधानों पर जोर कोठारी आयोग ने दिया था—
- (a) सार्वजनिक शिक्षा की सामूहिक विद्यालय प्रणाली लागू करना
- (b) सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास
- (c) हिन्दी की समृद्धि पर तेजी से जोर
- (d) विद्यार्थियों की सामुदायिक जीवन में भागीदारी पर जोर दिया।
कोठारी कमीशन ने राष्ट्रीय मूल्यों के समावेशन के लिए निम्नलिखित सुझाव रखे थे—

- (a) नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्य को समाविष्ट करना
- (b) वैश्विक धर्मों के परिज्ञान वाले पाठ्यचर्या का निर्माण
- (c) मौन ध्यान हेतु विद्यार्थियों को समूह में बैठने हेतु प्रोत्साहित करना
- (4) विद्यार्थियों के समक्ष सामाजिक न्याय एवं समाज सेवा को उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करना
कोठारी आयोग पर आधारित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में शिक्षा के व्यावसायीकरण सम्बन्धी प्रावधानः

- (1) प्रस्तावित शिक्षा संगठन में व्यवस्थित, सुनियोजित तथा कठोर कदम व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम के लिए उठाने होंगे। ये कदम व्यक्ति को रोजगारपरक बनाने के लिए हैं, कुशल जनशक्ति की माँग और पूर्ति में सन्तुलन बनाये रखना होगा

और उन लोगों को विकल्प प्रदान करना होगा, जो बिना किसी लक्ष्य के उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

- (2) व्यावसायिक शिक्षा का एक विशेष शैक्षिक प्रवाह है, जिसके द्वारा गतिविधि (Activity) आधारित विस्तृत क्षेत्र में छात्रों को अपने व्यवसाय की पहचान बनानी है। ये पाठ्यक्रम माध्यमिक स्तर पर दिये जायेंगे, किन्तु इनमें लचीलापन अवश्य रखा गया है कि उन्हें आठवीं कक्षा में भी लिया जा सके। समेकित व्यावसायिक शिक्षा को उत्तम बनाने के लिए औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं का विकास व्यवसाय-प्रतिमान के आधार पर किया जायेगा।

- (3) स्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के माध्यमों से, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवा को समेकित करना होगा। स्वास्थ्य शिक्षा, जो प्राथमिक तथा मिडिल स्तर पर दी जायेगी, वह व्यक्ति तथा परिवार और फिर सामुदायिक स्वास्थ्य का रूप लेगी। माध्यमिक स्तर पर +2 में स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यावसायिक पाठ्यक्रम का रूप लेंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1968 में राष्ट्रीय एकता और वृहद सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए आमूल चूल पुनर्रचना और समान शैक्षिक अवसरों की आवश्यकता को महसूस किया गया। इसीलिए कोठारी आयोग के सिफारिश पर आधारित 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने शैक्षिक विकास का पथ तैयार किया।

इस नीति का उद्देश्य 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा के लक्ष्य को पूर्ण करना था। जैसा कि भारत के संविधान में व्यवस्था की गई थी। सभी भाषाओं एवं समान शिक्षा अवसरों का विकास सहित शारीरिक, स्वास्थ्य व क्रीड़ा-कौशल पर अतिरिक्त बल दिया गया था।

कोठारी आयोग द्वारा संस्तुत 10 + 2 + 3 प्रणाली को समान एवं व्यापक रूप से पूरे देश में लागू करने पर विचार किया गया। 10 + 2 + 3 प्रणाली का तात्पर्य 10 वर्षीय सामान्य शिक्षा के बाद 2 वर्ष की विभिन्नीकृत उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तथा उसके पश्चात् त्रिवर्षीय डिग्री-कोर्स से है।

पत्राचार विद्यालय की स्थापना राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1968 का परिणाम था। इसमें प्रवेश एवं पाठ्यक्रम चुनाव दोनों लचीला रखा गया है। इसे औपचारिक शिक्षा का एक क्रान्तिकारी कदम कहा गया है।

अंशकालिक शिक्षा तथा पत्राचार पाठ्यक्रम—बच्चों, विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा शिक्षाकर्मियों के लिए व्यापक स्तर, पर अंशकालिक शिक्षा तथा पत्राचार पाठ्यक्रमों का विकास करना जो उसी स्तर के हों जैसे पूर्णकालिक पाठ्यक्रम के हैं।

सभी शैक्षिक कार्यक्रमों को धर्मनिरपेक्ष मूल्यों के अनुरूप कार्यान्वित करने के लिए प्रस्तावित किया गया। राष्ट्रीय एकता, लोकतंत्र, पर्यावरण संरक्षण, लघु परिवार मानकों का पालन, वैज्ञानिक सोच, सामाजिक मूल्यों और लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करने के लिए यह आवश्यक था कि सभी के लिए समान अवसर प्रदान किए जाएं मात्र पहुँच या अभिगम्यता की दृष्टि से ही नहीं अपितु सफलता की अवस्थाओं की दृष्टि से भी।

1975 ई. में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (N.C.E.R.T) ने एक उपागम-पत्र (Approach Paper) के द्वारा कक्षा I से X तक के लिए प्रस्तावित आदर्श पाठ्यक्रम (Model Curriculum) की रूपरेखा प्रस्तुत की। इस पत्र पर राष्ट्रव्यापी विचार-विमर्श के उपरान्त 10 वर्षीय स्कूली शिक्षा का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। अनेक राज्यों में इस नवीन शिक्षा प्रणाली को लागू किया गया।

1977 ई. में भारत सरकार ने नई शिक्षा प्रणाली की समीक्षा हेतु ईश्वरभाई पटेल समिति नियुक्ति की जिसने पूर्व वर्षों में इस प्रणाली के अन्तर्गत किए गए कार्यों के आधार पर इसमें कुछ महत्वपूर्ण संशोधन करने की सिफारिश की। पाठ्यक्रम पुनर्संरचना के बारे में इस समिति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सुझाव समाजोपयोगी उत्पादक कार्य (Socially Useful Productive work) के संप्रत्यय को हाई-स्कूल-पाठ्यक्रम में स्थान प्रदान करना था।

1977 ई. में एक अन्य समिति 'प्लस 2 समिति' (Plus 2 Committee), मद्रास विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ. मैल्कम एस. आदिशिषैया (Dr. Malcolm S. Adiseshiah) की अध्यक्षता में नियुक्ति की गई जिसका कार्य +2 स्तर पर उपयोगी सुझाव प्रस्तुत करना था।

मध्याह्न भोजन योजना तथा इसका सर्व शिक्षा अभियान का योगदान: मध्याह्न भोजन (mid-day meal- MDM) योजना भारत में यह पर्याप्त रूप से लोकप्रिय स्कीम है जिसका आरम्भ 1986 में हुआ था। इस योजना के अनुसार सभी कार्य दिवसों पर बच्चों को निःशुल्क मध्याह्न भोजन दिया जाता है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है कि बच्चे विद्यालय में पोषक भोजन प्राप्त करें विद्यार्थियों के पंजीकरण में वृद्धि है तथा अधिक से अधिक बच्चे कक्षा में उपस्थित रहे।

इसके अतिरिक्त इस योजना के फलस्वरूप सभी जातियों के बच्चे एक साथ बैठकर एक ही प्रकार का भोजन खाएँगे जिससे उनके समाजीकरण में वृद्धि होगी, तथा कुपोषण से निपटने में सहायता मिलेगी। इस योजना का एक परोक्ष लाभ यह होगा कि भोजन पकाने के लिए महिलाओं को व्यवसाय मिलेगा जिससे उनका सामाजिक सशक्तिकरण भी होगा।

ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (Operation Blackboard)

प्राथमिक विद्यालयों में सुविधाओं को उन्नत करने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के पश्चात्) 1987 में ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड प्रारम्भ किया गया। ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के कार्यान्वयन के प्रयास और विस्तार की असमानता एक मुख्य समस्या है जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के तीन परस्पर निर्भर पहलू हैं—

- (1) दो बड़े-बड़े कमरों का भवन जिसमें चौड़ा बरामदा तथा लड़के व लड़कियों के लिए अलग-अलग प्रसाधन सुविधा भी हो।
- (2) प्रत्येक विद्यालय में कम से कम दो अध्यापक हों जिसमें एक स्त्री हो।
- (3) श्यामपट्ट, मानचित्र, चार्ट, खिलौने और कार्यानुभव के उपकरण आवश्यक शिक्षण, अधिगम सामग्री है।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (National Literacy Mission)—सन् 1988 में देश में पूर्ण साक्षरता प्राप्ति हेतु राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की स्थापना की गई और लक्ष्य रखा गया कि सन् 2005 तक निरक्षरता का पूर्णतः उन्मूलन कर दिया जाए। इसका उद्देश्य ऐसे निरक्षरों को साक्षर बनाना है, जो अनौपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत नहीं आते और जिनकी आयु 15 वर्ष से 35 वर्ष के बीच है। अनौपचारिक शिक्षा से वंचित 9-14 आयु वर्ग के बच्चे भी इसमें शामिल कर लिये जाते हैं।

सन् 1989 में अर्नाकुलम, केरल में पूर्ण साक्षरता ने इस मिशन के लिए आदर्श उपस्थित किया। इस समय देश में 561 जिलों में इस मिशन के अन्तर्गत साक्षरता कार्यक्रम चल रहे हैं और लगभग नौ करोड़ लोगों को साक्षर बनाया गया है।

जिला स्तर पर प्रारम्भिक शिक्षा की संगठनात्मक संरचना-डाइट (डी.आई.ई.टी.)

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान-डाइट (District Institute of Educational Training-DIET) की अवधारणा तथा इसका कार्यान्वयन राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के फलस्वरूप आया। जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान-डाइट, एक जिला स्तरीय एजेंसी है जो जिला स्तर पर शिक्षाशास्त्रीय क्रिया-कलाप का आयोजन, कार्यान्वयन तथा मॉनीटरिंग करती है।

डाइट की शाखाएँ निम्नलिखित हैं—

- शैक्षिक प्रौद्योगिकी शाखा
- प्रबन्धन एवं नियोजन शाखा
- सेवापूर्ण अध्यापक शिक्षा शाखा
- सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा शाखा
- पाठ्यचर्या, पाठ्य-पुस्तक एवं मूल्यांकन शाखा
- जिला रिसोर्स की शाखा

डाइट की संरचना—यह सेवाकालीन तथा सेवा पूर्व प्रशिक्षार्थियों को आवासीय सुविधाएँ प्रदान करती है। प्रत्येक डाइट में निम्नलिखित 7 शैक्षिक शाखाएँ होती हैं—

- सेवा पूर्व अध्यापक शिक्षा शाखा
- कार्यानुभव शाखा
- जिला संसाधन इकाई
- सेवाकालीन कार्यक्रम क्षेत्रीय अन्योन्यक्रिया तथा नवाचार समन्वय शाखा
- पाठ्यचर्या, पाठ्य सामग्री विकास तथा मूल्यांकन शाखा
- शैक्षिक प्रौद्योगिकी शाखा
- आयोजन तथा प्रबन्धन शाखा

डाइट के प्रकार्य

प्रत्येक डाइट को निम्नलिखित प्रकार्य करने पड़ते हैं—

- प्रारम्भिक विद्यालय अध्यापक (सेवाकालीन व सेवा-पूर्व, दोनों) समूहों का प्रशिक्षण तथा अभिमुखीकरण
- ब्लॉक स्तर पर शिक्षा विभाग के अधिकारियों का प्रशिक्षण/अभिमुखीकरण

- इंस्ट्रक्टर तथा पर्यवेक्षक—गैर-औपचारिक शिक्षा तथा प्रौढ़ शिक्षा का।

- जिला शिक्षा बोर्ड के सदस्यों तथा ग्राम शिक्षा समिति के सदस्यों, समुदाय के अग्रणी व्यक्तियों, नवयुवकों और अन्य स्वयंसेवियों का अभिमुखीकरण जो शैक्षिक क्रियाकलाप में कार्य करने की इच्छा रखते हैं।

यशपाल समिति (1992)—सन् 1992 में भारत सरकार ने प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय सलाहकार समिति का गठन किया जिसका कार्य, विद्यालयी बच्चों पर से शैक्षिक बोझ को कम करने के उपाय सुझाना था। क्योंकि समाज व अभिभावक वास्तविक योग्यता व सक्षमता के बजाय डिग्रियों को हासिल करने और सूचना-आँकड़ों के संग्रहण के पीछे पड़ा है।

यशपाल समिति का यह विचार रहा है कि पाठ्यचर्या निर्माण तथा पाठ्य-पुस्तकों के तैयार करने को इस प्रकार से विकेंद्रीकरण कर दिया जाए ताकि इस प्रक्रिया में अधिक अध्यापक, एजुकेटर तथा विशेषज्ञ अधिक स्वायत्तता के साथ सम्मिलित हो सकें।

डी.पी.ई.पी. (जिला प्राथमिक शिक्षा परियोजना)—डी.पी.ई.पी. विश्व में शिक्षा की सबसे बड़ी परियोजनाओं में से एक है, जिसे 1995 में आरम्भ किया गया। इसका उद्देश्य प्रारम्भिक शिक्षा का सार्विकीकरण है। इसके लिए सभी स्तरों पर जिला-विशिष्ट योजना, विकेंद्रीकृत प्रबन्धन, भागीदारी प्रविधियाँ, सशक्तिकरण तथा क्षमता निर्माण पर बल दिया जाता है।

जिला शिक्षा परियोजना के मुख्य घटक—इस परियोजना के मुख्य चार घटक हैं—

- (i) सिविल कार्य (आधारभूत संरचना)
- (ii) शैक्षिक कार्य (बालिका शिक्षा पर जोर)
- (iii) प्रबंधन एवं सूचना नेटवर्क
- (iv) विद्यालय मानचित्रण एवं माइक्रोप्लानिंग

जिला शिक्षा परियोजना की कार्यनीतियाँ तथा क्रियाकलाप—

- **अभिगम्यता**—जनजातीय सुदूर क्षेत्रों में नए अवर प्रारम्भिक विद्यालय खोलना, ऐसे इलाकों में बहुकक्षीय (श्रेणी) अधिगम केंद्र तथा वैकल्पिक विद्यालय खोलना जिससे प्राथमिक शिक्षा की सुलभता बढ़ सके।
- **जनजातीय तथा तटवर्ती वासियों के लिए शिक्षा**—पंचायत तथा स्वयंसेवी संस्थाओं व व्यक्तियों द्वारा पंजीयन अभियान, प्रबोधन कार्यक्रम तथा जनजातीय तथा तटवर्ती विद्यार्थियों को मुफ्त पाठ्यपुस्तकें देना।
- **गुणवत्ता सुधार**—क्रिया आधारित शिक्षण शास्त्र के द्वारा आवर्ती अध्यापक प्रशिक्षण।
- **समुदाय सक्रियण (Community Mobilization)**—ग्राम शिक्षा समिति का निर्माण तथा पंचायत मानीटरिंग कक्ष (PMC), उनको प्रशिक्षण तथा अभिभावकों का अभिमुखीकरण।

- **शोध तथा मूल्यांकन**—क्रियात्मक शोध, ब्लाक संसाधन केन्द्र तथा जिला स्तर पर अध्ययन करना।
 - **योजना तथा प्रबन्धन**—विद्यालय आधारित योजना के लिए योजना बनाना, वार्षिक योजना तैयार करना जिसके लिए ब्लॉक एडवाइजरी समिति, जिला एडवाइजरी समिति तथा जिला कार्यान्वयन समिति की बैठकें बुलाई जाए।
 - **विकलांग बच्चों की पहचान तथा उनकी शिक्षा (IEDC) का प्रबन्ध**—इसके लिए अध्यापकों को विशेष प्रशिक्षण, आवश्यक उपकरणों और अन्य सहायक सामग्री प्रदान करना, अभिभावकों का अभिमुखीकरण इत्यादि।
 - **प्राथमिकता**—निःशुल्क, पुस्तक प्रबोधन कार्यक्रम तथा अध्यापक सुग्राहीकरण कार्यक्रम आदि।
 - **प्रबन्धन सूचना प्रणाली (MIS)**—सभी डी.पी.ई.पी. के जिला केन्द्रों में कम्प्यूटर तथा डायल अप की आपूर्ति करना तथा इसके कम्प्यूटर प्रोग्रामों की नियुक्ति इत्यादि सम्मिलित है।
 - **विशेष वर्गों हेतु शिक्षा**—विशेष वर्गों की शिक्षा के लिए निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं—
 - (1) इनके क्षेत्रों में विशेष विद्यालय स्थापित किये जाएँ, जिनमें ऐसे अध्यापक नियुक्त किये जाएँ, जिन्हें पिछड़ी जातियों के जीवन तथा उनकी संस्कृति का अच्छा ज्ञान हो।
 - (2) इन जातियों में निःशुल्क शिक्षा मध्याह्न भोजन, पुस्तकें, वस्त्र एवं लेखन सामग्री आदि निःशुल्क व्यवस्था के रूप में दी जाये।
 - (3) इन जातियों की शिक्षा व्यवस्था में हस्तलिपि का विशेष ध्यान दिया जाये।
 - (4) इन विद्यालयों में शिक्षकों को आवास आदि की विशेष सुविधा दी जाये।
 - (5) प्राथमिक शिक्षा में आदिम जातियों की शिक्षा में उनकी भाषाओं का ही प्रयोग व विकास किया जाए एवं उनकी ही भाषाओं में पुस्तकें तैयार की जाएँ।
 - (6) इनकी भाषा और संस्कृति को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाये।
- आयोग ने अनुसूचित जाति तथा जनजाति की बालिकाओं के लिए आवासीय आश्रम स्कूल बनाने का प्रस्ताव किया जो कि इनकी शिक्षा के लिये उपयोगी साबित हो सके तथा इनकी सामाजिक तथा सांस्कृतिक शिक्षा को केन्द्रित कर सके।
- अनुच्छेद 21 का सम्बन्ध जीवन की सुरक्षा तथा वैयक्तिक स्वतंत्रता से है। अनुच्छेद 21 में अनुच्छेद 21ए जोड़ा गया। अनुच्छेद 21 ए में 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकारों की श्रेणी में सम्मिलित करता है। वर्ष 2002 में 86वें संशोधन अधिनियम के द्वारा अनुच्छेद 21ए को जोड़ा गया। इसके द्वारा प्राथमिक शिक्षा का अधिकार, स्वतंत्रता के अधिकार का भाग बन गया। जिसके अनुसार राज्य 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा।

संविधान के अनुच्छेद 45 के अनुसार 6 वर्ष की आयु से नीचे के बच्चों के लिए “पूर्व बाल्यकाल देखभाल और शिक्षा” का उत्तरदायित्व राज्य का होगा जब तक कि बच्चे 6 वर्ष के नहीं हो जाते।

अनुच्छेद 51(ए)—भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51(ए) में धारा (जे) के पश्चात् निम्नलिखित धारा जोड़ी गई है। संविधान के 86वें संशोधन को, जिसे 2002 में अनुमोदित किया गया और जिसके अंतर्गत 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान, है अधिसूचित किया जा चुका है।

26 अगस्त, 2009 को भारतीय संसद ने शिक्षा के सम्बन्ध में एक ऐतिहासिक अधिनियम पारित किया जिसे ‘शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009’ कहा जाता है। प्रारम्भिक शिक्षा के सार्विकीकरण के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु भारत सरकार की ओर से यह सर्वाधिक प्रतीक्षित कदम था। उल्लेखनीय है कि कोल्हापुर (महाराष्ट्र) में छत्रपति शाहूजी महाराज ने सन् 1902 में 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा सम्बन्धी अधिनियम पहले ही तैयार कर दिया था तथा लागू भी कर दिया गया था। सन् 1918 में वल्लभभाई पटेल ने सार्वभौमिक शिक्षा को एक अधिनियम पारित करवाकर बॉम्बे के सभी नगर परिषदों में निःशुल्क और अनिवार्य कर दिया था। ‘निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार’ अधिनियम जिसे भारतीय संसद ने 2009 में पारित किया, की अधिसूचना भी जारी कर दी गई है। ताकि 86वें संशोधन को लागू किया जा सके।

अनुच्छेद 51ए में नागरिकों के लिए 10 मूल कर्तव्यों को सम्मिलित किया गया है। इस संशोधन के माध्यम से 11वाँ मूल कर्तव्य जोड़ दिया गया है, जिसके अनुसार सभी माता-पिता या अभिभावकों का यह कर्तव्य है कि वे 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करें। अतः अपने बच्चों/आश्रितों को शिक्षा के अवसर प्रदान कराना अब प्रत्येक नागरिक का मूल कर्तव्य बन गया है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 45 में 6 वर्ष से 14 वर्ष के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान है। सन् 2002 में भारतीय संसद ने 86वाँ संविधान संशोधन किया जिसके फलस्वरूप 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की शिक्षा (प्रारम्भिक शिक्षा) को मूल अधिकारों की श्रेणी में डाल दिया गया। इसके लिए संविधान में अनुच्छेद 21ए जोड़ा गया।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (एन.सी.एफ. 2005)

राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली सामान्य पाठ्यचर्या प्रणाली पर आधारित होती है जिसका प्रारूप राष्ट्रीय आवश्यकताओं व अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर किया जाता है।

वर्ष 2005 में भारत में विभिन्न नीतियों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा का प्रारूप तैयार किया गया और उसे देशभर में लागू किया गया।

वर्ष 2005 में एक राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का विकास करने के साधन के रूप में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा को प्रस्तावित किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं प्रोग्राम ऑफ एक्शन (पीओए) ने 14 वर्ष तक के बच्चों के सार्वत्रिक पंजीयन, नामांकन तथा सार्वत्रिक अवधारणा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से तथा विद्यालयी शिक्षा में सार्थक सुधार लाने की दृष्टि से एक बाल केन्द्रित उपागम पर विचार किया था।

भारतीय शिक्षा प्रणाली : इतिहास एवं नीतियाँ

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा- 2005, मुदालियर आयोग-1952 तथा कोठारी आयोग- 1966 की संस्तुतियों का हवाला देता है तथा अन्य राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (1975, 1988 तथा 2000) का पुनरावलोकन या पुनरीक्षण करता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा- इसके निर्माण में अन्तिम रूप से सन् 1993 में प्रकाशित रिपोर्ट लर्निंग विदाउट बर्डन- बोझ मुक्त अधिगम, तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 से पर्याप्त सहायता ली गई है।

इन नीतियों तथा यशपाल समिति (1992) की अनुशंसाओं पर विचार करने के पश्चात् एक नए संशोधित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूप रेखा की 2005 में रचना की गई जो पूरे देश में आजकल लागू किया जा रहा है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा चार निर्देशक सिद्धांतों पर आधारित है—(क) विद्यालय को बाहरी ज्ञान से सम्बद्ध करना, (ख) सुनिश्चित करना कि अध्ययन रटत विधियों से दूर रहें, (ग) पाठ्यचर्या को इस प्रकार संवर्द्धित करना कि यह पाठ्य-पुस्तकों से आगे जा सकें तथा (घ) परीक्षाओं को अधिक लचीला बनाना।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा-2005 के अन्तर्गत स्कूली गृहकार्य के लिए आर्बिट वरग्वार समयावधि निम्नलिखित है:

कक्षा-II : कोई गृहकार्य नहीं

कक्षा-III से VIII : प्रतिसप्ताह 2 घण्टा

कक्षा-X तक : प्रतिदिन एक घण्टा (5-6 घंटे प्रति सप्ताह)

कक्षा-XII : प्रतिदिन 2 घण्टे (11-12 घण्टे प्रति सप्ताह) में बदलना लैंगिक विषयता, शहरी-ग्रामीण विषयता, क्षेत्रीय विषयता समाप्ति हेतु सफल प्रयास।

आठ वर्षीय प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली की संरचना

प्रारम्भिक अवस्था के अंतर्गत प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक या मिडिल अवस्थाएँ आती हैं। प्रारम्भिक स्तर में 5 वर्ष का प्राथमिक तथा 3 वर्ष का उच्च प्राथमिक इसके पश्चात् दो वर्ष का उच्च विद्यालय आता है। देखें—

- पूर्व प्राथमिक शिक्षा = नर्सरी (एलकेजी/ यूकेजी)
- निम्न प्राथमिक शिक्षा = कक्षा 1 से 5 तक
- उच्च प्राथमिक शिक्षा = कक्षा 6 से 8 तक
- प्रारम्भिक शिक्षा = कक्षा 1 से 8 तक

पूर्व प्राथमिक कक्षा अवस्था के अन्तर्गत नर्सरी, लोअर किंडरगार्टन, अपर किंडरगार्टन कक्षा शामिल है। इसे ही प्री-प्राइमरी कक्षा कहा जाता है जिसके अन्तर्गत पठन कौशल एवं लेखन कौशल विकास हेतु अभ्यास कराया जाता है।

प्राथमिक विद्यालय पाठ्यचर्या में सामान्य शिक्षा पर बल दिया जाता है जिसके अन्तर्गत बेसिक विषय जैसे पढ़ना-लिखना तथा अंकगणित आता है तथा अनुपूरक के रूप में इतिहास, नागरिक शास्त्र, तथा भूगोल एवं पर्यावरण विज्ञान आते हैं।

अधिकांश राज्यों में आयु वर्ग 6 से 11 वर्ष के बच्चे कक्षा 1 से 5 में पढ़ते हैं।

तथापि कुछ राज्यों में इस अवस्था में 1 से 4 तक की कक्षाएँ होती हैं। आयु वर्ग 6 से 11 वर्ष के बच्चे इस आयु में कक्षा 1 से 5 में पढ़ते हैं।

निम्न प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम प्रायः मातृभाषा होती है जो कि हिन्दी अथवा कोई अन्य क्षेत्रीय भाषा होती है।

उच्च प्राथमिक स्तर—इस स्तर पर कक्षा 6 से 8 तक पढ़ने वाले बच्चे आते हैं।

उच्च प्राथमिक स्तर से दूसरी भाषाएँ, अंग्रेजी और/या हिन्दी (यदि हिन्दी मातृभाषा नहीं हो तो) लागू कर दी जाती हैं।

कक्षा पाँचवीं के बाद अंग्रेजी भाषा को लागू कर दिया जाता है।

शिक्षा का अधिकार कानून-2009 के अनुसार, कक्षा 1 से 5 के लिए प्रत्येक शैक्षणिक सत्र में 800 अनुदेशात्मक कलांश और कक्षा 6 से 8 के लिए प्रत्येक शैक्षणिक सत्र में 1000 अनुदेशनात्मक कलांश, प्रत्येक विद्यालय के लिए निर्धारित किये गये हैं।

नई शिक्षा नीति-2020

नई शिक्षा नीति-2020 के लिए प्रयास 2015 में अत्यधिक भागीदारी वाली परामर्श एवं समावेशी प्रक्रिया द्वारा शुरू की गई।

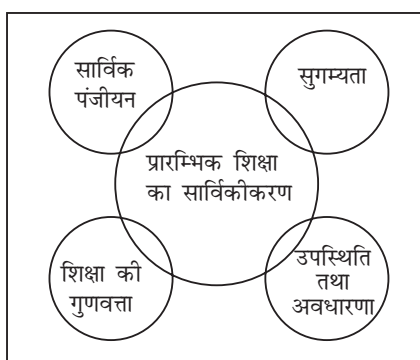
- कैबिनेट सचिव स्व. टी. एस. आर. सुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में नई शिक्षा नीति के विकास के लिए गठित समिति ने अपनी रिपोर्ट 2016 में प्रस्तुत की।
- 2017 में प्रख्यात वैज्ञानिक पद्मभूषण डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मसौदे के लिए एक समिति का गठन किया जिसमें 31 मई, 2019 को मानव संसाधन विकास मंत्री को मसौदा सौंपा जो नई शिक्षा नीति-2020 के रूप में सामने आया।

स्कूली शिक्षा के लिए नई पाठ्यचर्या और शिक्षाशास्त्रीय संरचना की रूपरेखा

- स्कूली शिक्षा की पाठ्यचर्यात्मक और शिक्षाशास्त्रीय रूपरेखा को 5+3+3+4 डिजाइन द्वारा निर्देशित करना
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा को 2020 के अंत तक पुनःरीक्षित और संशोधित किया जाएगा, और सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध करवाया जाएगा।
- माध्यमिक चरण में चार वर्षीय बहु विषयक अध्ययन शामिल होंगे। साथ ही इसमें विषयगहनता, आलोचनात्मक चिंतन, जीवन आकांक्षाओं के प्रति ध्यान पर बल होगा जिसमें विद्यार्थी की पसंद के अनुसार लचीलापन रहेगा।
- सभी विद्यार्थियों को भाषाओं में प्रवीणता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सौंदर्यबोध और कला की भावना, संप्रेषण, नैतिक तर्क, डिजिटल साक्षरता, भारत का ज्ञान और स्थानीय समुदायों, देश और दुनिया के सामने आने वाले जटिल मुद्दों का ज्ञान विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।

प्रारम्भिक शिक्षा का सार्विकीकरण तथा इसके पक्ष

प्रत्येक व्यक्ति को अपने आपको शिक्षित करने के लिए विद्यालयों की उपलब्धता तथा पढ़ने के समान अवसर। प्रारम्भिक शिक्षा के तीन पक्ष होते हैं जो नीचे आकृति में दर्शाए गए हैं :



सार्विक सुगम्यता (पहुँच) तथा पंजीयन—विद्यार्थियों के लिए विद्यालयों की सुगम्यता सुनिश्चित करने के लिए हाल में ही भारत सरकार ने प्रत्येक किलोमीटर की दूरी पर एक प्राथमिक विद्यालय स्थापित करने की योजना बनाई। विद्यालय के द्वारा वर्ष के आरम्भ में उसके अधिकार क्षेत्र में आने वाले परिवारों का सर्वेक्षण कर उन बच्चों की सूची तैयार की जाएगी जो विद्यालय जाने के योग्य हैं अथवा जो विद्यालय जाते ही नहीं हैं ताकि इन दोनों प्रकार के बच्चों को विद्यालय में लाया जा सके। जब विद्यालय आरम्भ हो तो एक पंजीयन सप्ताह मनाया जाए ताकि सभी विद्यालय जाने योग्य बच्चों का 100 प्रतिशत पंजीयन सुनिश्चित किया जा सके।

उपस्थिति तथा अवधारण—यह अधिकाधिक रूप में अनुभव किया जा रहा है कि विद्यालय में पंजीकृत सुविधा वंचित विद्यालय में पंजीकृत करने से अधिक चुनौतीपूर्ण कार्य है। अतः 14 वर्ष की

आयु तक सभी बच्चों को विद्यालय में रखना एक अनिवार्यता है। अतः बहुत से ऐसे परिवार हैं जिनके बच्चों को विद्यालय में बनाए रखने के लिए दैनिक उपस्थिति भत्ता, मुफ्त यात्रा पास, मुफ्त मध्याह्न भोजन जैसी सुविधाएँ दी जाती हैं तथा उनकी उपस्थिति में सुधार लाने के लिए नई अध्ययन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है।

सांस्थानिक क्षमता निर्माण—सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत एन.यू.ई.पी.ए., एन.सी.ई.आर.टी., एन.सी.टी.ई., एस.सी.ई.आर.टी., एस.आई.ई.एम.ए.टी./डाइट जैसे राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय संस्थाओं की क्षमता निर्माण में भूमिका काफी महत्वपूर्ण मानी जाती है।

गुणवत्ता में सुधार के लिए यह आवश्यक है कि विशेषज्ञों तथा संस्थाओं की एक अखंड सहायक प्रणाली विद्यमान हो।

मुख्यधारा शैक्षिक प्रबन्धन में सुधार लाना—इसके लिए आवश्यक है कि संस्थागत विकास हो, नए उपागम (प्रविधियाँ) लाए जाएँ जो भी विधियाँ प्रयोग में लाई जाएँ वे लागत प्रभावी तथा कुशल हो।

अविच्छिन्न निधीयन (Sustainable financing)— सर्व शिक्षा अभियान इस तर्क पर आधारित है कि प्रारम्भिक शिक्षा का निधीयन अविच्छिन्न या सतत रखा गया है। इसके लिए यह अनिवार्य है कि केन्द्र और राज्यों के मध्य वित्तीय भागीदारी में एक दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य हो। वर्तमान वित्तीयन में केन्द्र राज्य का अनुपात 50 : 50 है।

प्रारम्भिक शिक्षा राज्यों का उत्तरदायित्व तथा अधिकार क्षेत्र है। परंतु प्रारम्भिक शिक्षा का निधीयन केन्द्र सरकार भी करती है जिसके फलस्वरूप अब राज्य आधारभूत सुविधाओं के लिए, अध्यापकों की नियुक्ति के लिए, तथा अध्यापक प्रशिक्षण देने के लिए अतिरिक्त वित्तीय संसाधनों का प्रयोग कर सकते हैं। तथापि सर्व शिक्षा अभियान भौतिक तथा मानव संसाधन लक्ष्यों को, विशेषकर कक्षाकक्षों, पाठ्य-पुस्तकों के बंटन, अध्यापक नियुक्ति तथा अध्यापक प्रशिक्षण की दृष्टि से प्राप्त नहीं कर पाया है।

प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE) को मजबूत करने के उद्देश्य

- वर्ष 2025 तक 3-6 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क, सुरक्षित, उच्च गुणवत्तापूर्ण, विकासात्मक स्तर के अनुरूप देखभाल और शिक्षा तक पहुँच हो। नीति प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा की महत्ता और एक व्यक्ति के लिए जीवनपर्यन्त इसके लाभों की अटलता पर जोर देती है।
- बाल्यावस्था शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण विस्तार और सुविधाओं का सशक्तिकरण स्थानीय जरूरतों, भूगोल और मौजूदा बुनियादी ढाँचे पर एक बहु-आयामी दृष्टिकोण के माध्यम से होगा।
- सामाजिक-आर्थिक रूप से विशेष वंचित जिलों/स्थानों पर विशेष ध्यान और प्राथमिकता दी जाएगी। बाल्यावस्था शिक्षा पर शिक्षकों और माता पिता दोनों के लिए अभिप्रेत एक पाठ्यचर्यात्मक एवं शिक्षाशास्त्रीय रूपरेखा विकसित की जाएगी।

देश में हर बच्चे के लिए समान और समावेशी शिक्षा का उद्देश्य

- एक समावेशी और समान शिक्षा व्यवस्था स्थापित करना ताकि सभी बच्चों को सीखने और सफल होने का समान अवसर मिले, ताकि 2030 तक सभी लैंगिक और सामाजिक वर्गों की शिक्षा में भागीदारी और सीखने के प्रतिफलों के स्तर पर समानता हो।
- प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा, बुनियादी साक्षरता और संख्याज्ञान, स्कूल तक पहुँच, नामांकन और उपस्थिति से संबंधित नीतिगत कार्यवाही को कम प्रतिनिधित्व वाले समूहों के विद्यार्थियों के लिए लक्षित ध्यान और समर्थन प्राप्त होगा।
- पूरे देश में सुविधावर्चित क्षेत्रों में विशेष शिक्षा क्षेत्र स्थापित किए जाएँगे। राज्यों को इन क्षेत्रों को स्पष्ट सामाजिक विकास और सामाजिक-आर्थिक संकेतकों के आधार पर घोषित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा और केंद्र सरकार राज्य द्वारा खर्च की गई राशि के लिए 2:1 के अनुपात में वित्तीय सहायता प्रदान करेगी।

सभी बच्चों के बीच बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान सुनिश्चित करने का उद्देश्य

- 2025 तक, कक्षा 5 तक और उसके विद्यार्थी बुनियादी और संख्याज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। यह नीति प्रारंभिक भाषा और गणित के संबंध में सीखने के गंभीर संकट को मानती है और इसे सर्वोच्च प्राथमिकता देती है।
- पोषण और सीखने का अटूट संबंध है। मध्याह्न भोजन कार्यक्रम का विस्तार किया जाएगा। पूर्व-प्राथमिक और प्राथमिक विद्यालय के विद्यार्थियों को पोषित नाश्ता और मध्याह्न भोजन दोनों प्रदान किए जाएँगे।
- कक्षा 1-5 में बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान पर अधिक फोकस के साथ-साथ अनुकूलित मूल्यांकन और गुणवत्तापूर्ण सामग्री की उपलब्धता की एक मजबूत व्यवस्था पर ध्यान दिया जाएगा।
- शिक्षकों के लिए सहायक के रूप में सेवा करने के लिए तकनीकी हस्तक्षेप का संचालन किया जाएगा और सार्वजनिक और स्कूल पुस्तकालयों में पढ़ने और संप्रेक्षण की संस्कृति का निर्माण करने के लिए विस्तार किया जाएगा।

सभी स्तरों पर शिक्षा में सार्वभौमिक पहुँच और कक्षागत उपस्थिति सुनिश्चित करने का उद्देश्य

- 2030 तक 3-18 वर्ष की आयु समूह के सभी बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य गुणवत्तापूर्ण स्कूली शिक्षा तक पहुँच और भागीदारी प्राप्त करना। विभिन्न उपायों के माध्यम से पूर्व-विद्यालयी (प्री-स्कूल) से माध्यमिक विद्यालय तक 100% सकल नामांकन अनुपात को 2030 तक पूरा किया जाना है।

- सभी विद्यार्थियों, विशेषकर बालिकाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए, मौजूदा स्कूलों में इंटैक वृद्धि के माध्यम से, कम प्रदत्त/अप्रदत्त स्थानों पर नई सुविधाओं को विकसित करने और परिवहन और छात्रावास सुविधाओं के माध्यम से समर्थित स्कूल तर्कसंगतकरण द्वारा पहुँच अंतरालों को भरा जाएगा।
- सभी बच्चों की भागीदारी और अधिगम को नामांकित बच्चों की उपस्थिति एवं सीखने के प्रतिफलों पर नजर रखने, शिक्षकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और परामर्शदाताओं द्वारा ड्रॉप-आउट और आउट-ऑफ-स्कूल बच्चों पर नजर रखना, और स्कूल-बाहर के किशोरों के दीर्घकालिक कार्यक्रम के माध्यम से सुनिश्चित किया जाएगा।

स्कूल परिसरों के माध्यम से स्कूली शिक्षा में गवर्नेंस (अधिशासन)

- स्कूलों को स्कूल परिसर का रूप दिया जाना जिससे संसाधनों का साझा उपयोग सुगम बने और स्कूल गवर्नेंस (शासन) अधिक स्थानीय, प्रभावी और कुशल बने।
- स्कूल परिसरों की स्थापना से कई संसाधन कमी की समस्याओं को कम करने में मदद मिलेगी जिनका सामना वर्तमान में पब्लिक स्कूल, विशेष रूप से छोटे स्कूल करते हैं।
- जनसंख्या वितरण, संपर्क और अन्य स्थानीय महत्वों के अनुसार राज्य सरकारें 2023 तक स्कूलों को परिसरों में समूहन करेंगी। समूह अभ्यास में बहुत कम नामांकन वाले स्कूलों की समीक्षा और समेकन शामिल होगा।

प्रत्येक स्कूल परिसर एक अर्ध-स्वायत्त इकाई होगा जो प्रारंभिक आधारभूत स्तर से 12वीं कक्षा तक एक माध्यमिक विद्यालय (कक्षा 9-12) तक शिक्षा प्रदान करेंगे और सभी सार्वजनिक स्कूल अपने पड़ोस में बुनियादी/प्रारंभिक और मिडिल विद्यालय की शिक्षा प्रदान करेंगे।

स्कूल परिसरों में स्कूलों के समूहन के लिए विषय शिक्षकों, खेल, संगीत और कला शिक्षकों, काउंसिलर और सामाजिक कार्यकर्ताओं सहित स्कूलों में संसाधनों को साझा करने में सक्षम होंगे।

प्रत्येक परिसर के लिए एक व्यापक शिक्षक विकास योजना तैयार की जाएगी और साथी से सीखने वाले समुदायों को साप्ताहिक बैठकों, शिक्षक शिक्षण केंद्रों जैसी प्रक्रियाओं के माध्यम से सचेत रूप से विकसित और निरंतर बनाकर रखा जाएगा।

उच्च शिक्षा की नई संस्थागत संरचना के उद्देश्य

- उच्च शिक्षा व्यवस्था को सुधारना, देश भर में विश्व स्तर के संस्थाओं का निर्माण करना 2035 तक सकल नामांकन अनुपात को कम से कम 50% तक बढ़ाना।
- यह नई उच्च शिक्षा संरचना शिक्षण और अनुसंधान के लिए उच्च स्तरीय एवं बेहतर संसाधनों से युक्त, जीवंत और स्वायत्त बहुविषयक संस्थाओं का निर्माण करेगी, जो मजबूत शैक्षिक समुदायों का निर्माण करते हुए पहुँच और क्षमता में

- काफी विस्तार करेगी। फोकस में अंतर के आधार पर तीन तरह की संस्थाएँ होंगी।
- यह पुनः संरचना मौजूदा संस्थाओं को मजबूत और पुनर्गठित करके और नए निर्माण करके, व्यवस्थित और सोच-समझकर किया जाएगा।
 - इस नई संस्थागत वास्तुकला को उत्प्रेरित करने के लिए **मिशन नालंदा** और **मिशन तक्षशिला** का शुभारंभ किया जाएगा। सभी संस्थाएँ या तो विश्वविद्यालय होंगे या **डिग्री देने वाले स्वायत्त कॉलेज** होंगे।
 - संवैधानिक मूल्यों को विकसित करने के उद्देश्य से व्यापक बहु-विषयक अवसर के साथ उदार शिक्षा उच्च शिक्षा का आधार होगी। यह महत्वपूर्ण जीवन क्षमताओं, परिशुद्ध विषयक समझ और सामाजिक-नैतिक जुड़ाव के एक आचरण का विकास करेगा।
 - केंद्र सरकार भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों के मॉडल और मानकों पर दस भारतीय इंस्टीट्यूट ऑफ लिबरल आर्ट्स/बहुविषयक शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय स्थापित करेगी।
 - नयी शिक्षा नीति का उद्देश्य 2030 तक स्कूली शिक्षा में 100% जीईआर (ग्रॉस एनरोल्मेंट रेश्यो) के साथ पूर्व-विद्यालय से माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा के सार्वभौमिकरण करना है। इस प्रयास में स्कूल से दूर रह रहे 2 करोड़ बच्चों को भी शिक्षा की मुख्य धारा में लाया जाएगा।
 - नई शिक्षा नीति स्कूली और उच्च शिक्षा दोनों में बहुभाषावाद को बढ़ावा देती है। पाली, फारसी और प्राकृत के लिए राष्ट्रीय संस्थान, भारतीय अनुवाद एवं व्याख्या संस्थान की स्थापना की जाएगी।
 - नई शिक्षा नीति में विद्यार्थियों को पसंदीदा विषय चुनने के कई विकल्प दिए जाएंगे। व्यावसायिक एवं शैक्षिक विषयों के बीच सख्त रूप में कोई भिन्नता नहीं होगी। स्कूल में छोटे ग्रेड से ही व्यावसायिक शिक्षा शुरू हो जाएगी और इसमें इंटरशिप शामिल होगी।
 - **विद्यार्थियों को नई शिक्षा नीति-2020** के अनुसार पसंदीदा विषय चुनने के लिए कई विकल्प दिए जाएंगे यथा: कला और विज्ञान के बीच, पाठ्यक्रम और पाठ्येत्तर गतिविधियों के बीच, और व्यावसायिक एवं शैक्षणिक विषयों के बीच सख्त रूप से कोई भिन्नता नहीं होगी।
 - **नई शिक्षा नीति-2020** में ग्रेड 10 एवं 12 के लिए बोर्ड परीक्षाएं जारी रखी जाएगी लेकिन इनके समग्र विकास करने के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए इन्हें नया स्वरूप दिया जाएगा। इसी क्रम में एक नया राष्ट्रीय आकलन केन्द्र-परख (समग्र विकास के लिए कार्य-प्रदर्शन आकलन, समीक्षा और ज्ञान का विश्लेषण) एक मानक-निर्धारक निकाय स्वरूप स्थापित किया जाएगा।

- **एनईपी-2020** नीति निर्माण, विनियमन, प्रचालनों तथा अकादमिक मामलों के लिए एक पृथक एवं स्पष्ट प्रणाली की परिकल्पना करती है। राज्य/केन्द्र शासित प्रदेश स्टेट स्टैण्डर्ड अथॉरिटी का गठन करेंगे। एससीईआरटी सभी हितधारकों के परामर्श के जरिए एक स्कूल गुणवत्ता आकलन एवं प्रत्यायन संस्थान (SQAAF) का विकास करेगा।
- देश में वैश्विक मानकों के श्रेष्ठ बहुविषयक शिक्षा के मॉडलों के रूप में आई आई टी, आई आई एम के समकक्ष बहुविषयक शिक्षा और अनुसंधान विश्वविद्यालय (MRU) स्थापित किए जाएंगे। पूरी उच्च शिक्षा में एक मजबूत अनुसंधान संस्कृति और क्षमता को बढ़ावा देने हेतु एक शीर्ष निकाय के रूप में राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन का सृजन किया जाएगा।
- चिकित्सा और कानूनी शिक्षा को छोड़कर समस्त उच्च शिक्षा के लिए एक अति महत्वपूर्ण निकाय के रूप में भारत उच्च शिक्षा आयोग (एचईसीआई) का गठन किया जाएगा।
- नई शिक्षा नीति-2020 के अनुसार विश्वविद्यालय की परिभाषा में संस्थानों की एक विस्तृत श्रेणी होगी जिसमें स्वचालित तकनीकी विश्वविद्यालय, स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय, कानूनी एवं कृषि विश्वविद्यालय, अनुसंधान केन्द्रित विश्वविद्यालय से वाले। शिक्षण केन्द्रित विश्वविद्यालय भी शामिल होंगे।
- शिक्षण कार्य करने की न्यूनतम योग्यता वर्ष 2030 तक चार वर्षीय इंटीग्रेटेड बीएड डिग्री हो जाएगी। गुणवत्ता विहीन स्वचालित अध्यापक शिक्षण संस्थान के खिलाफ सख्त कार्रवाई करने का प्रावधान है।
- शतप्रतिशत युवा और प्रौढ़ स्वायत्तता हासिल करना नई शिक्षा नीति का लक्ष्य 2030 तक रखा गया है।
- 'लाभ' के बजाय 'व्यवहार' आधारित शिक्षा में केन्द्र राज्य निवेश का उद्देश्य शिक्षा नीति-2020 में रखा गया है ताकि सकल घरेलू उत्पादन में शिक्षा का योगदान 6% हो सके।

प्रारंभिक शिक्षा का सार्विकीकरण

(सर्व शिक्षा अभियान : 2000-2001)

अध्यापकों की भूमिका—सर्व शिक्षा अभियान का यह विश्वास है कि अध्यापकों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण और केन्द्रीय होती है। अतः उनकी विकासात्मक आवश्यकताओं पर बल दिया जाता है। इसके लिए खंड संसाधन केन्द्र, संकुल (कलस्टर) संसाधन केन्द्र, योग्य अध्यापकों की भर्ती, पाठ्यचर्या सम्बन्धित पदार्थ सामग्री के विकास में सम्मिलित करके और अध्यापकों के लिए अभिदर्शन (exposure) भ्रमणों का प्रबन्ध किया जाता है ताकि अध्यापकों का मानव संसाधन के रूप में विकास हो सके।

- सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत कुछ ऐसे नवाचारी कार्यक्रम चलाए जाते हैं जो बच्चों को विद्यालय की ओर खींचने, उन्हें वहाँ अध्ययन करते रहने में सहायक होते हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण योजनाएँ हैं: पूर्व बाल्यकाल देखभाल और शिक्षा (ECCE), लड़कियों की शिक्षा, अनुसूचित जाति और

भारतीय शिक्षा प्रणाली : इतिहास एवं नीतियाँ

अनुसूचित जनजाति की शिक्षा तथा कंप्यूटर शिक्षा आदि। ये सभी क्रियाकलाप प्रारम्भिक शिक्षा के सार्विकीकरण में उत्प्रेरक का कार्य करते हैं जिससे बच्चे अपनी शिक्षा में रूचि लेना आरम्भ कर देते हैं।

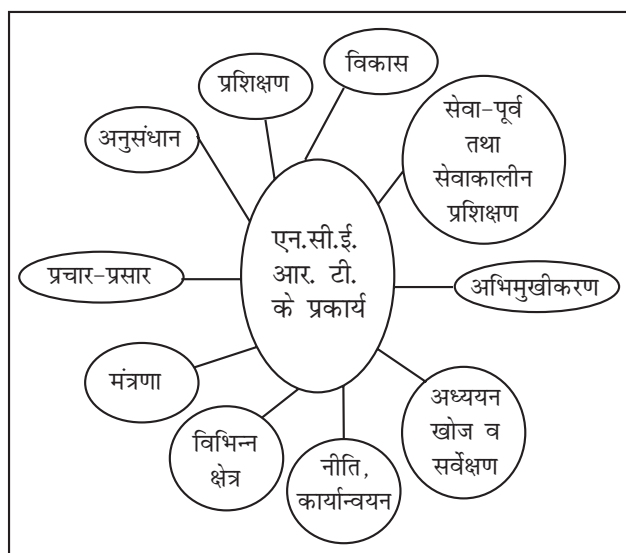
- प्रारम्भिक शिक्षा के सार्विकीकरण के प्रबन्धन के लिए सूचना तथा सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी.)—सूचना तथा सम्प्रेषण प्रौद्योगिकियाँ (आई.सी.टी.) वे प्रौद्योगिकियाँ हैं जिनका प्रयोग सर्व शिक्षा अभियान के प्रभावी हस्तांतरण के लिए सूचनाओं के संप्रेषित करने तथा उत्पन्न करने, संचय करने, प्रबन्ध करने तथा बाँटने के लिए उपयोग किया जाता है। स्कूल नेट के लिए उपभोक्ताओं की सूचनाओं को ऑन लाइन संप्रेषित करने, सहयोग करने तथा विनिमय करने (आदान-प्रदान करने) की योग्यता विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।
- सर्व शिक्षा अभियान के कार्यान्वयन (संचालन) के लिए भारत सरकार ने विश्व बैंक, यू.के. सरकार इत्यादि के विकास

सहायता प्राप्त की है। अतः विभिन्न परियोजनाओं को सहायता देने के लिए अनुदानों के वितरण में सभी कानूनी समझौतों का पालन करना पड़ेगा। इसका यह भी अर्थ निकलता है कि इन अंतर्राष्ट्रीय दाताओं से अनुदान की अगली किश्त प्राप्त करने के लिए विद्यालय स्तर, हैबिटेसन बस्ती, गाँव, प्रखंड, जिला तथा राज्य स्तर पर कार्य रिपोर्ट तथा खर्च की रिपोर्ट समय पर देनी होगी।

- सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम के अन्तर्गत वित्तीय सहायता खर्च बाँटने की व्यवस्था पर आधारित थी। केन्द्रीय और राज्य सरकारों के बीच यह आधार नौवीं पंचवर्षीय योजना में 85 : 15 था, दसवीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में 75 : 25 था और उसके पश्चात यह आधार 50 : 50 हो गया था। राज्य सरकारों से अब यह अपेक्षा है कि वे सर्व शिक्षा अभियान की वित्त व्यवस्था की और अधिक जिम्मेदारी लेंगी। राज्य सरकारों से लागत को बाँटने सम्बन्धी प्रतिबद्धता लिखित रूप में ली जाती है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा 1992 में संशोधित प्रोग्राम ऑफ एक्शन लागू हुआ। इसके अन्तर्गत केन्द्र सरकार ने सन् 1993-94 में निम्नलिखित दो योजनाएँ प्रारम्भ कीं—

- (1) अल्पसंख्यकों में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों के लिए क्षेत्रीय सघन कार्यक्रम (Area Intensive Programme for Educationally Backward Minorities)
 - (2) मदरसा शिक्षा के आधुनिकीकरण हेतु वित्तीय सहायता (Financial Assistance for Modernisation of Madarsa Education)
- एन.सी.ई.आर.टी. के इन शाखाओं-प्रकार्यों का निरूपण निम्न आकृति से स्पष्ट हो जाता है—



मुक्त अधिगम (Open Learning) का अर्थ : ‘मुक्त-अधिगम’ की परिभाषा इस प्रकार है, “इस प्रकार के अधिगम की परिस्थितियाँ लचीली तथा स्वतन्त्र व स्वच्छन्द होती हैं। छात्र अपनी इच्छा एवं आवश्यकताओं के अनुसार अपने नियोजन के अनुरूप अध्ययन कर सकते हैं। वे अपनी परिस्थितियों एवं सुविधाओं के अनुरूप अपने अध्ययन की व्यवस्था कर सकते हैं।” लचीली नामांकन अध्ययन एवं परीक्षा प्रणाली इसकी विशेषता है।

- प्रथम ओपेन युनिवर्सिटी-आंध्रओपेन युनिवर्सिटी (1983) हैदराबाद में खुला।
- सबसे बड़ी ओपेन युनिवर्सिटी-1985 में नई दिल्ली में IGNOU इंदिरा गांधी नेशनल ओपेन युनिवर्सिटी खुला।

अंतर विश्वविद्यालय बोर्ड (जिसे बाद में भारतीय विश्वविद्यालय संघ के नाम से जाना जाने लगा) को 1925 में स्थापित किया गया है।

जन शिक्षण संस्थान

यह संस्थान निरक्षरों को व्यवसायिक प्रशिक्षण देने हेतु स्थापित किए गए हैं इसके साथ-साथ ऐसे विद्यार्थियों को भी अपना कौशल पहचाने में मदद करते हैं जिन्होंने पढ़ाई छोड़ दी है। इसमें सम्मिलित हैं-

- उचित पाठ्यक्रम के अनुसार प्रशिक्षण मोड्यूल तैयार करना जिसमें व्यवसायिक घटक, सामान्य ज्ञान, जीवन समृद्ध घटक सम्मिलित हों।
- जहाँ संभव हो जन शिक्षा संस्थान को प्रोत्साहन दिया जाए।
- वयस्क शिक्षा, राष्ट्रीय मुक्त शिक्षा संस्थान और सामान्य रोजगार एवं प्रशिक्षण के समरूप प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तैयार करना।
- सरल परीक्षा और पुरस्कार, प्रमाण।
- उचित रोजगार प्राप्त करने हेतु नियोक्ता और उद्योगों के साथ संबंध

उड़ान

यह परियोजना सीबीएसई द्वारा मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा आरंभ की गई थी। जिसमें लड़कियों द्वारा इंजिनियरिंग संस्थानों में प्रवेश की कमी के बारे में बताया है। इसके लिए स्कूल में गणित और विज्ञान के शिक्षण और अधिगम को तीन आयामों से बढ़ाया है : पाठ्यक्रम तैयारी, व्यवहार और आकलन।

इसका उद्देश्य लड़कियों को ऐसा मंच प्रदान करना है जो लड़कियों का सशक्तिकरण करें, उनमें इंजिनियरिंग संस्थानों में भाग लेने हेतु अभिलाषा जगाए। ये देश के विकास और प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

सीबीएसई

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

इस बोर्ड के निर्माण और आज के वर्तमान स्तर तक पहुँचने में कई वर्षों के कई महत्वपूर्ण परिवर्तनों का प्रयोग हुआ। 1921 में पहला बोर्ड जो स्थापित किया गया वह उत्तर प्रदेश बोर्ड है। इस बोर्ड का विकास बहुत तेजी से हुआ और इसकी गुणवत्ता और स्तर में सुधार हुआ। परंतु राज्य विश्वविद्यालयों और राज्य बोर्ड के आगमन से यह अजमेर, भोपाल और विन्ध्य प्रदेश तक सीमित हो गया। परिणामस्वरूप 1952 में इस मंडल का कानून संशोधित हुआ और इसका अधिकार क्षेत्र भाग ग और घ तक फैलाकर इस बोर्ड को वर्तमान में सेंट्रल बोर्ड ऑफ स्केंडरी एजुकेशन कहा गया है। 1962 में फिर से इसका पुनर्गठन किया गया। इसके मुख्य उद्देश्य शैक्षिक संस्थानों को अधिक प्रभावी ढंग से प्रयोग में लाना है।

सीबीएसई के मुख्य उद्देश्य

- तनाव रहित, विद्यार्थी केंद्रित और गुणवत्ता के साथ समझौता किए बिना संपूर्ण शिक्षा
- शैक्षिक क्रियाओं की गुणवत्ता का विश्लेषण और देखरेख तथा फीडबैक प्राप्त करना

- विभिन्न शैक्षिक क्रियाओं जिसमें गुणवत्ता के मामले, विभिन्न शैक्षिक और प्रशिक्षण कार्यक्रम, शैक्षिक क्रियाओं का संगठन और इस प्रक्रिया में निरीक्षण हेतु अन्य एजेंसियाँ।
- शैक्षिक उत्कृष्टता को प्राप्त करने हेतु नवीन पद्धतियाँ।
- स्कूलों को विद्यार्थियों की प्रगति पत्र तैयार करने हेतु प्रोत्साहित करना
- राष्ट्रीय लक्ष्यों सहित शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार
- विभिन्न क्षमता और सशक्तीकरण कार्यक्रम बनाना।
- कक्षा दस और बारह के बाद परीक्षाओं का आयोजन करना।

केंद्रीय विद्यालय संगठन

इसके चार लक्ष्य हैं-

- (1) स्थानांतरणीय केंद्रीय सरकार के कार्मिकों के बच्चों की शैक्षिक जरूरतों को पूर्ण करना जिसमें रक्षा और अर्ध सैनिक विभाग सम्मिलित हैं।
- (2) उत्कृष्टता को प्रदान करना और स्कूली शिक्षा में प्रगति को स्थापित करना
- (3) अन्य निकायों जैसे सीबीएसई और एनसीईआरटी के साथ मिलकर परीक्षण की शुरुआत और संवर्धन करना।
- (4) राष्ट्रीय एकता की भावना और भारतीयता की भावना का विकास करना।

उन विद्यालयों की स्थापना, निरीक्षण, नियंत्रण प्रबंधन करना, जिन्हें केंद्रीय विद्यालय कहा जाता है जिसमें भारत सरकार के स्थानांतरणीय कर्मचारियों के बच्चे बढ़ते हैं, इसमें वे भी सम्मिलित हैं जो दूरस्थ और अविकसित स्थानों में ऐसे कार्य करते हैं जो इन स्कूलों के संवर्धन के लिए जरूरी है।

विशेषताएँ-

- केंद्रीय विद्यालय में समान पाठ्य पुस्तक और द्विभाषा का प्रयोग मिलता है।
- सभी केंद्रीय विद्यालय सीबीएसई से संबंध है।
- इसकी शिक्षा की गुणवत्ता ऊँची होती है।
- इसमें कक्षा आठ तक लड़कों के लिए और कक्षा बारह तथा अनुसूचित जाति और जनजाति और विद्यार्थियों हेतु कोई शुल्क नहीं लिया जाता।

शिक्षक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय परिषद (NCERT)

यह केंद्रीय और राज्य सरकार हेतु शिक्षक शिक्षा के लिए NCERT सहित परामर्श निकाय है। शिक्षा के क्षेत्र में इसके प्रशंसनीय कार्य के बावजूद यह मानकों के अनुसार और अवमानक शिक्षा संस्थानों से बचने के लिए अनिवार्य नियमन कार्यों को नहीं कर पाया। शिक्षा की राष्ट्रीय नीति, 1986 और कार्य कार्यक्रम शिक्षक शिक्षा हेतु यह राष्ट्रीय परिषद शिक्षक शिक्षा की जांच पड़ताल हेतु पहला चरण है। वैधानिक निकाय के रूप में 17 अगस्त, 1995, शिक्षक शिक्षण परिषद अस्तित्व में आया जो कि राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षण परिषद अधिनियम 1993, का अनुसरण करता है।

उद्देश्य

इसका मुख्य उद्देश्य शिक्षक शिक्षा प्रणाली का नियोजित और समायोजित विकास अर्जित करना है। इन शर्तों और मानकों का, उचित पालन करना है। इसे शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम हेतु व्यापक अधिकार दिया गया है जिसमें प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक स्तरों पर स्कूलों, गैर औपचारिक शिक्षा, अंश कालीन शिक्षा, वयस्क शिक्षा और दूरस्थ शैक्षिक पाठ्यक्रम हेतु लोगों का प्रशिक्षण और अनुसंधान सम्मिलित है।

परिषद के कार्य

यह परिषद का कार्य है कि ऐसे कदम उठाए जो कि शिक्षा शिक्षण और मानक तय करने व उनका निरीक्षण करने हेतु नियोजित और समायोजित विकास के लिए उचित है।

इस परिषद के लिए इसके अंतर्गत निम्न कार्य हैं-

(क) शिक्षक शिक्षा हेतु विभिन्न सर्वेक्षण और अध्ययन करना और परिणामों को प्रकाशित कराना।

(ख) केंद्रीय और राज्य सरकार, विश्वविद्यालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और पंजीकृत संस्थानों द्वारा उचित कार्य और योजनाएँ बनाना।

(ग) शिक्षक शिक्षा और इसके विकास हेतु सामंजस्य और निरीक्षण

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति

भारत सरकार ने अपनी इच्छा को 1985 में नई शिक्षा नीति बनाने के लिए व्यक्त किया था। विभिन्न जगहों से सुझावों को मिलने के बाद इस नीति को 1986 में घोषित किया गया और इन बातों पर बल दिया गया-

शिक्षा प्रणाली का सहज पुनर्गठन (2) सभी स्तरों पर शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता में सुधार (3) विज्ञान और तकनीक पर अधिक ध्यान देना। (4) नैतिक मूल्यों को संशोधित करना (5) एकीकरण को मजबूत बनाना (6) सामान्य नागरिकता और सभ्यता का विकास।

नीति के आवश्यक मापदंड

- (1) सरकार द्वारा सभी विद्यार्थियों को उनके लिंग, जाति और धर्म का भेदभाव किए बिना कोश योजनाओं का आरंभ।
- (2) देश में सामान्य शिक्षा संरचना 10+2+3 को स्वीकृत करना। पहले 10 वर्ष में पांच वर्ष प्राथमिक, तीन मध्य और दो उच्च शिक्षा हेतु हैं।
- (3) महिलाओं, अनुसूचित जाति, जनजाति, अल्पसंख्यक और विकलांगों को पढ़ने के समान अवसर देना।
- (4) राष्ट्र द्वारा स्रोत सहयोग प्रदान करने, असमानताओं को कम करने, आरंभिक शिक्षा की सर्वव्यापकता, वयस्क शिक्षा और तकनीकी रिसर्च प्रदान करने के उत्तरदायित्व की परिकल्पना करना।

- (5) वयस्क शिक्षा हेतु कार्यक्रम का कार्यान्वयन
- (6) व्यासायिक शिक्षा हेतु कार्यक्रम का कार्यान्वयन
- (7) उच्च शिक्षा के पतन के लिए आवश्यक कदम उठाना इसके लिए विशिष्टता को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम को दोबारा तैयार करना। विश्वविद्यालयों में अनुसंधान को अतिरिक्त सहयोग देना
- (8) मुक्त विश्वविद्यालय प्रणाली की शुरुआत
- (9) नौकरियों से डिग्रियों को अलग करना
- (10) ग्रामीण विश्वविद्यालय की नवीन रूपरेखा तैयार करना।
- (11) तकनीकी और प्रबंधन शिक्षा और ग्रामीण पॉलिटेक्नीक का सशक्तीकरण

सूचना तकनीक और सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट का राष्ट्रीय कार्य बल प्रधान मंत्री द्वारा जुलाई 1998 में विशेष सुझावों के साथ शिक्षा में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रवेश से आरंभ किया गया था। इसमें उन विद्यालयों को सम्मिलित किया जो विद्याभारती कम्प्यूटर योजना, शिक्षक कम्प्यूटर योजना और स्कूल कम्प्यूटर योजना के अंतर्गत कम्प्यूटर को मुहैया कराते हैं। आरंभ में प्रत्येक राज्य में स्मार्ट स्कूल के आयोजन का सुझाव दिया गया जिसका उद्देश्य डिजिटल कक्षाओं का प्रदर्शन करना था।

नवोदय विद्यालय योजना

शिक्षा की राष्ट्रीय नीति-1986 ने आवासीय विद्यालयों को परिकल्पित किया है, जिसे जवाहर नवोदय विद्यालय कहा जाता है जिनका उद्देश्य ग्रामीण बच्चों में से उनका सर्वश्रेष्ठ प्रतिभा को बाहर निकालना है।

ऐसा महसूस किया गया है कि प्रतिभावान बच्चों की प्रगति करने के लिए अवसर मिलने चाहिए। इसके लिए उनकी भुगतान करने की क्षमता न होने के बावजूद उन्हें उत्तम गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। ऐसी शिक्षा विद्यार्थी को शहरी बच्चों के समान लाएगी।

नवोदय विद्यालय प्रणाली एक अद्भुत परीक्षण के रूप में शुरू, हुआ है और इतिहास में एक अद्वितीय स्थान बनाता है। इसका महत्व प्रतिभावान बच्चों के चयन और उन्हें सर्वश्रेष्ठ आवासीय स्कूल प्रणाली के संदर्भ में उत्तम शिक्षा प्रदान कराने के संबंध में है।

स्मार्ट स्कूल

वर्तमान सूचना संप्रेषण तकनीक स्कूल योजना के अंतर्गत 150 स्मार्ट स्कूल खोलने का लक्ष्य लिया गया। मंत्रालय ने अभी 63 स्मार्ट स्कूल खोलने की अनुमति दे दी है। जिले में राज्य सरकार के एक स्कूल को मॉडल स्कूल में बदल कर आदर्श के रूप में व आसपास के स्कूलों के लिए प्रदर्शन हेतु तैयार किया गया है।

बहुविकल्पीय प्रश्नोत्तर

- भारतीय शिक्षा का महाधिकार पत्र किसे कहा जाता है?
 - (1) वुड का घोषणापत्र (1854)
 - (2) मैकाले का विवरणपत्र (1835)
 - (3) चार्टर एक्ट (1833)
 - (4) चार्टर एक्ट (1813)
- हण्टर आयोग का गठन किया गया था:
 - (1) 1904 में
 - (2) 1881 में
 - (3) 1882 में
 - (4) 1884 में
- हंटर आयोग (1882) ने मुख्यतः किस विशेष शिक्षा के संबंध में अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत की थीं?
 - (1) प्राथमिक शिक्षा
 - (2) बालिका शिक्षा
 - (3) मुस्लिम शिक्षा
 - (4) विशेष शिक्षा
- कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग, 1919 के एक सदस्य थे :
 - (1) सर सैयद अहमद खाँ
 - (2) सर आशुतोष मुखर्जी
 - (3) डॉ. आर.सी. मजूमदार
 - (4) सर यदुनाथ सरकार
- बुनियादी शिक्षा के लिए पहला शैक्षणिक सम्मेलन कब हुआ था?
 - (1) 1936 ई. में
 - (2) 1937 ई. में
 - (3) 1938 ई. में
 - (4) 1939 ई. में
- डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में काम करने वाले विश्वविद्यालय आयोग ने अपना प्रतिवेदन कब प्रस्तुत किया था?
 - (1) 1948 ई. में
 - (2) 1949 ई. में
 - (3) 1950 ई. में
 - (4) 1951 ई. में
- माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में कार्य अनुभव की संस्तुति की गयी थी :
 - (1) नरेन्द्र देव समिति (1953) द्वारा
 - (2) कोठारी आयोग (1964) द्वारा
 - (3) मुदालियर आयोग (1952) द्वारा
 - (4) राधाकृष्णन आयोग (1948) द्वारा
- स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री थे:
 - (1) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद
 - (2) सरदार बल्लभ भाई पटेल
 - (3) अबुल कलाम आजाद
 - (4) डॉ. एस. राधाकृष्णन्
- NUEPA मुख्यतः किससे संबंधित है?
 - (1) शैक्षिक पर्यवेक्षक से
 - (2) शैक्षिक सहयोग से
 - (3) शैक्षिक योजना से
 - (4) शैक्षिक मूल्यांकन से
- यशपाल समिति रिपोर्ट (1992) का संबंध है—
 - (1) शिक्षक विकास में आई. सी. टी.
 - (2) बिना बोझ के शिक्षा
 - (3) प्रसारण के द्वारा शिक्षा
 - (4) उपर्युक्त में से कोई नहीं
- NCF-2005 के अनुसार, शिक्षक की भूमिका एक की होती है।
 - (1) नेता
 - (2) मूल्यांकक
 - (3) प्रशिक्षक
 - (4) उपर्युक्त सभी
- नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट की स्थापना कब की गई थी?
 - (1) 1961
 - (2) 1962
 - (3) 1963
 - (4) 1964
- देश का पहला ओपेन युनिवर्सिटी कहाँ स्थापित किया गया है?
 - (1) हैदराबाद
 - (2) सिकंदराबाद
 - (3) अहमदाबाद
 - (4) औरंगाबाद
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा किस वर्ष लागू किया गया?
 - (1) 2001
 - (2) 2003
 - (3) 2005
 - (4) 2007
- राष्ट्रीय साक्षरता मिशन किस वर्ष शुरू किया गया?
 - (1) 1985
 - (2) 1987
 - (3) 1988
 - (4) 1989
- त्रिभाषा-सूत्र की सिफारिश निम्नलिखित में से किस आयोग ने की थी?
 - (1) कोठारी आयोग
 - (2) मुदालियर आयोग
 - (3) हंटर आयोग
 - (4) राधाकृष्णन आयोग
- निम्नलिखित में से किस संवैधानिक संशोधन के तहत शिक्षा का मौलिक अधिकार बनाया गया?
 - (1) 84 वाँ
 - (2) 86 वाँ
 - (3) 88 वाँ
 - (4) 90 वाँ
- शिक्षा के विषय में कोठारी आयोग द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट का शीर्षक था—
 - (1) शिक्षा और राष्ट्रीय विकास
 - (2) लर्निंग 'टू बी'
 - (3) शिक्षा का विविधिकरण
 - (4) सभी के लिए शिक्षा
- निम्नलिखित में से कौन-सा पाठ्यक्रम विकास का सही क्रम है?
 1. उद्देश्यों का मूल्यांकन
 2. उद्देश्यों का गठन
 3. शिक्षण-अधिगम अनुभवों को लागू करना
 4. शिक्षण-सीखने के अनुभव का चयन
- आधुनिक शिक्षा।
 - (1) 2, 1, 3, 4
 - (2) 2, 3, 4, 1
 - (3) 2, 1, 4, 3
 - (4) 2, 4, 3, 1
- अंतःक्रिया का विकास कर रहा है।
 - (1) केवल 1
 - (2) केवल 2

(3) 1 और 2 दोनों (4) ना ही 1 ना ही 2

21. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा (NCF), 2005 के अनुसार उच्च प्राथमिक स्तर पर इतिहास पढ़ाने के विषय में निम्नलिखित में से कौन-सा/से कथन सही है/हैं?

1. उच्च प्राथमिक स्तर में, इतिहास को भारत में विकास पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।
2. उच्च प्राथमिक स्तर पर, इतिहास भारत के विभिन्न हिस्सों में विकास के साथ विश्व के अन्य हिस्सों में विकास या कार्यक्रमों पर ध्यान देगा।
3. उच्च प्राथमिक स्तर पर, इतिहास केवल भारत के विभिन्न हिस्सों में विकास को ध्यान में रखेगा।

(1) 1, 2 तथा 3 (2) केवल 3
(3) केवल 2 (4) केवल 1

22. निम्नलिखित में से कौन शिक्षा के अवसर में समानता की महत्वपूर्ण बाधाएँ हैं?

- (a) शिक्षार्थी की आर्थिक स्थिति में अंतर
- (b) जेंडर असमानता (लिंग भेद)
- (c) सार्वजनिक विद्यालय प्रणाली
- (d) शैक्षिक संस्थानों के मानकों में अंतर

कूट :

(1) (a) और (d) (2) (a), (b) और (c)
(3) (a), (b) और (d) (4) (a), (b), (c) और (d)

23. व्यक्तिगत शिक्षा योजना (आई.ई.पी.) निम्न में से किस विचार पर आधारित नहीं है?

- (1) शिक्षार्थी की वर्तमान विशेषताएँ
- (2) प्राप्त किये जाने वाले व्यक्तिगत लक्ष्य
- (3) सहकारी अधिगम कार्यनीति का उपयोग
- (4) योग्यताधारिता समूहीकरण के आधार पर विद्यार्थियों का श्रेणीकरण करना

24. शैक्षिक सुधारों में प्रभावी विकेंद्रीकरण तभी सम्भव होगा

- A. जब खंड व संकुल सन्दर्भ केन्द्रों की भागीदारी बढ़े।
- B. स्थानीय सन्दर्भ व्यक्ति उपलब्ध हो।
- C. अध्यापकों के पास संसाधन और प्रासंगिक सामग्री भी मौजूद हो।

सही उत्तर चुनें—

(1) A और B (2) B और C
(3) A और C (4) A, B और C

25. मध्याह्न भोजन का उद्देश्य संबंधित है:

- (1) विद्यालय में पंजीयन-नामांकन
- (2) विद्यालय में नियमित पोषण
- (3) विद्यालय में नियमित शिक्षण
- (4) उपरोक्त सभी

संक्षिप्त उत्तरमाला

1.	(1)	2.	(1)	3.	(2)	4.	(2)	5.	(2)
6.	(2)	7.	(1)	8.	(3)	9.	(3)	10.	(2)
11.	(3)	12.	(1)	13.	(1)	14.	(3)	15.	(3)
16.	(1)	17.	(2)	18.	(1)	19.	(4)	20.	(3)
21.	(3)	22.	(3)	23.	(3)	24.	(4)	25.	(4)

उत्तर व्याख्या सहित

1. (1) चार्ल्स वुड का महाधिकार पत्र (मैग्नाकार्टा) ही घोषणा पत्र कहलाता है।

सन् 1854 में भारतीय शिक्षा पर क्रांतिकारी परिवर्तन की वकालत करने के कारण ही यह चर्चा में आया।

2. (1) हंटर आयोग की सिफारिश प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित थी। हंटर आयोग का गठन ब्रिटिश सरकार ने औपनिवेशिक भारत की प्राथमिक शिक्षा प्रणाली को नया आयाम देने के लिए 1882 में गठित किया था।

3. (2) स्त्री-शिक्षा व बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए कन्या पाठशाला की संस्तुति (1882) में की थी।

4. (2) कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग का गठन 1919 में हुआ। इस विश्वविद्यालय आयोग के शिक्षाविद् भारतीय सदस्य सर आशुतोष मुखर्जी और डॉ. जियाउद्दीन अहमद थे। आशुतोष मुखर्जी कलकत्ता विश्वविद्यालय के कुलपति भी बने।

5. (2) सन् 1937 के शिक्षा सम्मेलन में बुनियादी शिक्षा (बेसिक एजुकेशन) की रूपरेखा लिखित रूप से तैयार करने के लिए डॉ. जाकिर हुसैन की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई थी। वर्धा शिक्षा योजना की पृष्ठभूमि महात्मा गांधी के शिक्षा दर्शन पर आधारित थी।

6. (2) विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन 1948 में महान दार्शनिक और भारतवेत्ता डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में हुआ। इस आयोग ने अपना प्रतिवेदन सन् 1949 में भारत सरकार को सौंपा।

देश के उच्च शिक्षा और शोध का मानकीकृत विकास मार्ग प्रशस्त करने की दिशा में इसी आयोग ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) की स्थापना की सिफारिश की।

7. (1) प्रसिद्ध समाजवादी एवं राष्ट्रवादी विचारक आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में 1953 में समिति गठित की गई। इस समिति ने माध्यमिक स्तरीय पाठ्यक्रम में कार्य-अनुभव को प्राथमिकता देने की सिफारिश की थी।

8. (3) राष्ट्रवादी एवं स्वतंत्रता सेनानी मौलाना अबुल कलाम आजाद देश के पहले शिक्षामंत्री थे। वे इस्लाम के विद्वान एवं लेखन-सम्पादक भी थे।

9. (3) नेशनल युनिवर्सिटी फॉर एजुकेशनल प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन (NUEPA) देश में शैक्षिक नियोजन एवं प्रबंधन का शीर्ष राष्ट्रीय निकाय है। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है।

10. (2) 1992 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने यशपाल की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की थी जिसे यशपाल कमेटी कहते हैं, जिसे स्कूली छात्रों पर बढ़ते हुए बोझ के बारे में अपनी रिपोर्ट पेश करनी थी। इस रिपोर्ट को 'बिना बोझ के शिक्षा' नाम दिया।
11. (3) एन सी एफ-2005 के अनुसार, छात्रगत गलतियाँ इस कारण महत्वपूर्ण होती हैं कि, यह बच्चे के विचार को अन्तर्दृष्टि उपलब्ध कराती हैं तथा समाधानों को पहचानने में सहायता करती हैं।
इसके लिए शिक्षक को प्रशिक्षक- मूल्यांकन की भूमिका निभानी चाहिए कि वह अपने शिक्षार्थियों की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त करे और कक्षा में विविध मतों को प्रोत्साहित करें।
12. (1) NCERT की स्थापना 1961 में हुई। इसका संबंध Nursery से 12वीं तक के स्कूलों की शिक्षा से है। इसका कार्य पाठ्यक्रम निर्माण, पुस्तकें उपलब्ध करवाना, शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान करना, शिक्षण प्रशिक्षण देना है।
इसका देश के पाँच क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय चल रहे हैं : अजमेर, भोपाल, मैसूर, भुवनेश्वर, शिलांग।
13. (1) देश का पहला खुला विश्वविद्यालय (ओपेन युनिवर्सिटी) आन्ध्रा विश्वविद्यालय है। आन्ध्रा विश्वविद्यालय (हैदराबाद) की स्थापना-1983 में हुई थी जबकि सबसे बड़े ओपेन युनिवर्सिटी IGNOU (इंदिरा गांधी खुला विश्वविद्यालय) की स्थापना 1985 में हुई।
14. (3) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ) वर्ष 2005 में क्रियान्वित हुआ जो शैक्षणिक उद्देश्य, अनुभव संगठन और शिक्षार्थी का आकलन जैसे मुद्दों को संबोधित करता है। यह स्कूली शिक्षा ने रचनावाद जैसे-ज्ञान को स्कूल के बाहर के जीवन से जोड़ना। पढ़ाई रटने की तरह ना हो।
15. (3) राष्ट्रीय साक्षरता मिशन (National Literacy Mission) का उद्देश्य राष्ट्रव्यापी स्तर पर जन साक्षरता को बढ़ावा देना था। इसलिए भारत सरकार के इस महत्वाकांक्षी कार्यक्रम की शुरुआत 1988 में हुई। जिसमें तहत न्यूनतम अधिगम योग्यता (Minimum Learning Ability) को प्राप्त करना था।
16. (1) त्रिभाषा-सूत्र भाषायी माध्यम से संस्कृति व राष्ट्रवाद से जुड़े रहने के दर्शन पर आधारित विचार था।
त्रिभाषा-सूत्र की सिफारिश कोठारी आयोग (1964-66) द्वारा हुआ।
17. (2) संविधान के 86वां संशोधन अधिनियम (2002) के अनुसार 6-14 वर्षीय बच्चों की निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार शिक्षा को मौलिक अधिकार (अनुच्छेद 21-A) बनाया गया।
18. (1) डी.एस. कोठारी (दौलत सिंह कोठारी) की अध्यक्षता में गठित की (1964-66) नयी शिक्षा नीति का उद्देश्य शिक्षा में आमूल परिवर्तन हेतु सुझाव देना था।
- इस शिक्षा नीति ने 'शिक्षा और राष्ट्रीय विकास' नामक अपना रिपोर्ट तत्कालीन एम.सी. छागला के समक्ष 1966 में सौंपा गया।
19. (4) कोर्स में क्या पढ़ना (जानना) और क्यों पढ़ाया जाता और कोर्स द्वारा विद्यार्थियों की सफलता के लिए जरूरतें क्या होगी यह सब सिलेबस व पाठ्यक्रम में निहित होता है। अतः पाठ्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया एक अनुदेशक के लिए प्रतिबिंबित वह कार्य हो सकता है जिसमें शिक्षण के दर्शन की झलक मिल सकती है। इसमें उद्देश्यों का गठन, अधिगम-अनुभवों का चयन, अनुभवों का क्रियान्वयन एवं अन्ततः मूल्यांकन।
20. (3) आधुनिक शिक्षा शिक्षक-शिक्षार्थी का सम्यक अन्तराकर्षण प्रणाली द्वारा विद्यार्थी को संकल्पनाओं के प्रति समझ को बेहतर बनाती है। आधुनिक शिक्षा के अन्तर्गत अन्तर्संबंधों का विकास एवं आधिकारिक सिद्धान्तों एवं तथ्यों की उपलब्धता भी सुनिश्चित है।
21. (3) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा-2005 के अनुसार उच्चतर प्राथमिक स्तर पर इतिहास शिक्षण के क्रम में विषय के अन्य भागों के विकास के साथ-साथ भारत के विविध भागों में हुए विकास पर ध्यान केन्द्रित करेगा। इतिहास का उद्देश्य विद्यार्थियों में विद्यमान समकालीन लोगों की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थितियों की समझ पैदा करने में मदद करना है।
22. (3) समान एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अवसर प्रदान करने के लक्ष्य को प्राप्त करने में शिक्षार्थी के आर्थिक स्थिति लिंगभेद एवं भेदपूर्ण शैक्षिक मानक बाधा उत्पन्न करते हैं।
23. (3) आज की शिक्षा प्रणाली में व्यक्तिगत, शिक्षा योजना (आई. ई. पी) की मांग को समझते हुए, पूर्वानुमानित विश्लेषण समग्र छात्र अनुभव में सुधार करने के लिए जरूरी माना जाता है। इन विशेषताओं के अनुसार छात्रों को लक्षित करने और पहचानने के लिए एक उपकरण के रूप में इसका उपयोग किया जा सकता है। कुछ शिक्षक बजट की कमी के कारण इस दृष्टिकोण पर विचार नहीं करते हैं।
24. (4) शैक्षिक सुधारों का प्रभावी विकेन्द्रीकरण तभी संभव है जब
 1. खंड और संकुल केन्द्रों की संख्या और जन भागीदारी अधिक हो
 2. स्थानीय जानकारी रखने वाली व्यक्ति उपलब्ध हो।
 3. शिक्षकों के पास संसाधन और प्रासंगिक जानकारी उपलब्ध हो।
25. (4) भारत सरकार ने प्राथमिक विद्यालयों के लिए मध्याह्न भोजन योजना प्रारंभ की है। व्यवहारवादी अभिप्रेरणात्मक सिद्धान्त इस योजना का समर्थन करता है। यह योजना सुविधाहीन वर्गों से संबंधित बच्चों के विद्यालय में प्रवेश, पोषण, उनकी उपस्थिति व अध्ययन स्तरों में सुधार करके प्राथमिक शिक्षा के व्यापीकरण को बढ़ाने के लिए शुरु की गई। □□□